श्रीरायचन्द्र-जिनागमसंग्रहे

भगवत्सुधर्मस्वामिप्रणीतं

श्रीमद्भगवतीसूत्रम्

(च्याख्याप्रज्ञाप्तः)

पश्चमाङ्गे द्वितीयखण्डम्।

श्रीमद्-अभयदेवसूरिविरचितविवरणसहितम्।

श्रीयुत पुंजाभाइ हीराचन्दद्वारा संस्थापितायाः

श्रीजिनागमप्रकाशकसभाया मानदकार्यभारि-मनसुखलाल-रवजीभाई मेहता प्रेरितेन

न्याय-व्याकरणतीर्थेन

श्रीजीवराजतनुज-पण्डित-बेचरदासेन

अनुवादितम्, संशोधितं च।

राजकोटस्य सनातन जैनमुद्रणाख्ये मुद्रितम्

बि॰ सं॰ १९७९

मरुगम्-१२-०-०

श्री रायचंद्र-जिनागम संग्रहनी योजनामां प्रथम जैनधर्मने। सुप्रसिद्ध पूज्य ग्रंथ श्रीमद्भगवतीसूत्र प्रकट करवानुं ठर्युं हतुं. ते अनुसार भगवतीसूत्रने। प्रथम भाग आजश्री त्रण वर्ष उपर प्रगट थये। हता. जिनागम संग्रहनी योजनाना सर्व ग्रंथा सुबद्धना 'निर्णयसागर' मुद्रणालयमां छपाववानी कार्यवाहकानी इच्छा हती; परंतु एं मुद्रणालये प्रथम भाग छापी आप्या पछी बीजा भागा पोताने त्यां छापी आपवानी सवडताना अभाव दर्शाववाथी कार्यवाहकाने स्वतंत्र गे।ठवण करवी पडी. राजकाटमां एक स्वतंत्र मुद्रणालय स्थापतुं पड्युं; के जेनी अंदर भगवतीसूत्रने। आ वीजा भाग छपाइ बहार पडे छे.

आ भगवतीसूत्रने। आ विद्वताभर्ये। अनुवाद जैनधमना एक भूषणरूप पंडित बहेचरदास जीवराजे कर्यो छे. वे भाग बहार पड़ी चूक्या छे. वीजा त्रण भागा जेटली त्यराथी बनी शके तेटली त्यराथी बहार पाडवा सर्व प्रवत्ना करवामां आवशे. प्रथम भागमां पाछळ शब्दके। आपवामां आव्यो हते।, पण अनुभवथी एम जणायुं के, दरेक विभागने। जूदो जूदो केष आपवा करतां पांचे भागने। केष एकत्रीत आपवाथी एक उत्तम प्रकारने। साहित्य सहायक प्रथ तैयार थइ शकशे एटला माटे आ भागमां प्रथम भागनी जे। केष आप्यो नथी तो पण आ बीजा भागनुं कद प्रथम भाग जेटलंज राखवामां आव्यं छे. आ बीजा भागमां त्रणथी छ शतक आपवामां आव्यां छे.

अ। जिनागम संप्रहनी योजना मूळ पुरुष श्रीयुत पुंजाभाइ हीराचंदनी आ प्रंथी त्वराथी बहार पडेला जोवानी इच्छा छतां छापखानानी मुक्तेलीओथी विलंब थाय छे; जे मुक्तेलीओ अमारी सत्तानी बहार होइ अने लाचार छीए.

पंडित बेचरदासनी विद्वता माटे जैनसमाजे अवश्य अभिमान घरवा जेवुं छे ए वात आ वे बहार पडेला विभागीथी अवश्य प्रतीत थया विना नहीं रहे.

राजकोट, सनातनं जैनमुद्रणालय, आशाह शुकल द्वितीया १९८० हालारी.

मनसुखळाळ रवजीभाइ महेता.

शतक ३. उद्देशक १. पृ० १-४६.

मोडा नगरी.-नंदन वैद्या. श्रीमहावीर प्रभुतुं आगमन अने अप्तिभूतिनी पर्युपासना. विकुर्वणा (रूपो फेरववानी शक्ति). वमरेंद्र, त्रायित्रंशो, सामानिको अने प्रराणीओ. अप्तिभूति अने वायुभूति, वायुभूतिने संदेह. वायुभूति अने श्रीमहावीर.-संदेहनुं निवारण. वायुभृतिनी श्रीमभूति प्रत्ये क्षमानी याचना. वायुभृति, अप्तिभूति अने श्रीमहावीर दक्षिणेंद्रो अने अप्तिभूति, उत्तरेंद्रो अने वायुभूति. तिष्प्रकनी विकुर्वणा. अप्तिभूतिनो विहार. वायुभृति, ईशानेंद्र, कुरुदत्त अने विकुर्वणा. यावत् अच्युत देवलोक. श्रीमहावीर प्रभुनो विहार. राजगृहमां आगमन. उत्तरार्धना इंद्रने आगमन, देविंद दर्शन अने संहरण. देविंद संवेष प्रश्न. कृटाकार शाळानुं दर्शात. देविंदिनी प्राप्तिनो उपाय. मैंप्रेपुत्र तामली. प्राणामा प्रवज्या. वंद्र मादे बलिचंचामां देवोनुं संमेलन. देवोनो तामलीने पोताना वंद्र थवा माटे अत्यायह. नियाणु न करवाथी तामलीनुं ईशानेंद्रपणे थवुं. ते वातनी बलिचंचामां जाण. कोषेला बलिचंचावासीओए तामलीना शवनी करेली अवगणना. ईशानवासीओ द्वारा ईशानेंद्र (तामली)ने जाण. कोपेला ईशानेंद्र (तामली)नं मुक्तिस्थळ. उत्तरार्धना अने दक्षिणार्धना इंद्रोनो मेलाप, वार्तालाप, सह कार्यक्रम. विवाद सनत्कुमारनं स्वरण. निवेदो. सनत्कुमारनं भव्यपणं. उद्देशक समाप्ति अने विहार.

शतक ३. उद्देशक २. ए० ४७-७२.

राजगृह—पर्वत, महावीर अने गातम. असुरो क्यां रहे छे ? रत्नप्रमा पृथिवीनी वसे. असुरोनुं नीचली तृतीम (वालुकाप्रभा) पृथिवी सुधी थएलं गमन अने साते प्रथिवी सुधी असुरोनुं जवानुं सामर्थ्यः गमननो हेतुः पूर्वना वैरिने दुःखी करवो के पूर्वना मित्रने सुखी करवो. असुरोनु तिरहे नंदीश्वर द्वीप सुधी थएलं गमन अने तिरहे असंख्य द्वीप समुद्रो सुधी जवानुं सामर्थः तेओनी तिरछा गमननी हेतु. अरिहंतीना जन्मनी, निष्कमणनो, **इ**।नोत्पादनो अने परिनिर्दाणनो महिमा. असुरोतुं उंचे सै।धर्म देवलोक सुधी थएछं गमन अने उंचे अच्युत देवलोक सुधी जवातुं सामर्थ्य, अर्ध्वगमननो हेतु. देव अने असुरोनुं वैर. असुरोनुं चोरपणुं, असुरोने देवीए करेली सजा. असुरो अने अप्सराओ. असुरोनुं कथ्वगमन केटलो काळ वीखा पछी थाय छे ? अनंत उत्सर्विणी अने अनंत अवसर्विणी, शबर बर्बर, ढंकण, भत्तुअ, पण्ह, पुलिंद, अरिहंत विगेरेना **आशरायी ज असुरोनुं ऊर्ध्वमनः मृहर्द्धिक असुरोनुं** ऊर्ध्वमनन. ऊर्ध्वमन माटे चमरनी वात. चमरनो पूर्वजन्म. जम्बूद्वीप. भारतवर्दे. विध्य-गिरिपादमूळ. वेमेल संनिवेश. पूरण गृह्पति. सुंड थवुं. दानामा प्रमञ्या. चार खानावाळुं काष्ठपात्र. मळेल भिक्षावडे वटेमार्यु, कागडा, कृतरा अने माछला, काचवा वरोरेनुं आतिथ्य. पूरणनो अयतप. पूरणनुं पादपोपगमन अनशन. छश्चस्थ तरिके महावीरनां अग्यार वर्ष. सुसमारपुर नगर. रंद्र विनानी चमरचंचा नगरी. तपस्वी तरीके पूरणनां बार वर्ष. मासिक संखेखना. साठ टंक अनशन, चमरचंचामां इंद्र. चमर तरीके पूरणनी जन्म. चमरे करेली साधमें द्वेवलोकनी साक्षात्कार. मघवा, पाकशासन, शतकतु, सहस्राक्ष, वज्रपाणि अने पुरंदर. शकेंद्रना विलासी जोई चमरने थएली र्रच्या. शक प्रति चमरनुं गालिप्रदान, चमरनी भयावह ईर्ष्यानल, छदास्थ महावीरनी चमरे लीघेल आश्रय, परिघ **आयुधने छ**इने एकला चमरे साधर्म देवलाक (शक) प्रति करेछं प्रयाण. प्रयाण पूर्वे चमरे रचेलुं बीहामणुं ६ रीर. उपर जतां जतां चमरे करेल उत्पात. वानव्यंतर देवानी भागनाश. ज्ये तिषिकाना दिभाग. आत्मरक्षक देवानुं प्रकायन. चमरनुं शकपासे पहेांचवुं. शक्सा दरवाजा वसे रहेल इन्द्रकीलनुं चमरे करेल आकुटुन. शकाशित देवाने देखाडेल भयं. चमर उपर शकना काप. चमरनुं मागवुं. महावीरना पगमां पड्युं. वज्र मूक्या टछी शक्षने थएल विचार-पश्चात्ताप. वज्रनी पाद्यल थएल शक्त. शक्ते महावीरथी चार आंगळ छेटे रहेल वज्रने पकड्युं. शक्त महावीरने वंदन अने क्षमाप्रार्थन. महावीरना प्रभावे चम ने। बचाव. गै।तमप्रश्न. फेंकेल पुद्रलनी पाछळ जड्ने देव तेने पकडी शके ? पुहरुगतिविचार, शक्तनी, चमर्नी अने वजनी गमनशक्ति, तेनी परस्वर तुलना तथा तेनुं काळमान, चमरने। शोक, शोकना कारणने। चमरना देवाना प्रश्न. चमरनी महावीर प्रति भक्ति. चमरनी स्थिति अने सिद्धि.—

शतक ३. उद्देशक ३. ए० ७३-८४.

राजगृह- मंहितपुत्र गांतम. क्रिया. कायियी. आधिकरणिकी. प्राहेषिकी. पारितापनिकी. प्राणातियात. क्रियाप्रमेद. पैले अनुभव के पेलुं कर्म? पेली क्रिया पछी अनुभव अभणोने कर्म होय? होय. प्रमाद. योग. जीवनां एजन अने परिणमन विगेरे. जीवनी अंतिक्रया (मुक्ति). आरंभ. संरंभ. समारंभ. जीवनी अक्रियता. तृणपूलक अने अग्नि. जलबिंदु अने अग्नि. नाव अने तेनां छिदेा. अनगारनी सावधानता. प्रमत्तता अने अप्रमत्ततानी स्थितिनुं प्रमाण. विहार. गांतम. लवण समुद्रमां भरती आट थवानुं हुं कारण ? लेक स्थिति, विहार.—

शतक ३. उद्देशक ४. ए० ८५-९४.

अनगार यानरूपे जता देवने देवरूपे जूने के यानरूपे ? चतुर्भंगी. एवा देवी अने देव-देवी संबंधेना प्रश्नो. यक्षने जानारे। अनगार तेना अंदरना के बहारना भागने जुने ? चतुर्भंगी. ए रीते मूल, कंद स्कंध, छाल, डाल, पत्र, फुल, फल तथा बीजना प्रश्नो. पिरतालीश भांगा. माउप तिर्थंच, बाहन अने पताकाने आकारे बायु बाय ? मात्र पताकाने आकारे बाय. कारण. पताकाने आकारे अनेक ये। जन जाय ? हा., आत्मकृद्धि. परकृद्धि. आत्मप्रयोग. परप्रयोग. वायु पताका छे? ना. तेवे ज आकारे जनारी बादळीका. कारण. मरण पूर्वेनी लेश्यावाळी नैरियक. उद्योतिषिक तथा वैमानिकानी लेश्या, लेश्यादृष्ट्या. अनगार, बहारना पुद्रलेन लीवा विमारने ओळंगे ? ना. लड्ने ? हा. विकुर्वणा करनारे। मायी. कारण. प्रणीत भाजन. अप्रणीत भाजन. आहारपरिणाम-प्रणीत भाजनथी मांस अने लेहीनी प्रतनुता-अस्थिन क्षानी घनता. अप्रणीत भाजनथी मांस अने लेहीनी प्रतनुता-अस्थिन क्षानी घनता. अप्रणीत भाजनथी मांस अने लेहीनी प्रतनुता-अस्थिन

शतक ३. उद्देशक ५. ए० ९५-१००.

अनगार बाह्य पुद्र छोने छोधा विना की किरोरेनां रूपे। करे ? ना. छईने. हा. एवां रूपे।वडे जंबूई पते भरी देवातुं मात्र सामर्थ्यः युवक—युवति. असिचमेपात्रः एकतः पताकाः पर्यस्तिकाः पर्यकः अभियोगः घोडो, हाथी, सिंह, वाच, दरू, दी-डो, रींछ अने अष्टापद विगेरेने रूपे अनगारः पुद्र छप्यीदानः आत्मऋदिः परऋदि विगेरेः ध्य के साधु ? सांधुः विकुर्वणाः माीः तेनी गति—अधियोगिकः अमायोः तेनी गतिः अनामियोगिकः पाथाः—

शतक ३. उद्देशक ६. ए० १०१-१०८.

सिथ्यादृष्टि अनगारनुं विकुर्वण -वाराणसी. राजगृह, तथाभावने स्थाने अन्यथाभाव, राजगृहने बदले वाराणसी अने वाराणसीने बदले राजगृह समजन् वाना अम्म जनपद्वर्मनुं विकुर्वण, ते विकुर्वणने स्वाभाविक मानवाना अम सम्यग्द्षि अनगारनुं विकुर्वण, तथाभाव, अन्यथाभाव नहि, विर्विश्रह्म वैकियलिध, अविश्वानलिध, अने पुरुषकारपराक्रम, पुदूलनुं पर्यादान अने अपर्यादान, विकुर्वण, प्रामह्म, संविवेशह्म, युवक-युवति, चमर, आत्मरक्षक देवा, इंद्रोना आत्मरक्षक देवा, विहार.-

शतक ३. उद्देशक ७. ए० १०९-१२०.

राजगृह,-शकता छै।कपाछै। केटला १ चार-से।म. यम. वहण वैश्रवण. एमनां विमानो केटलां १ चार. संध्याप्रम. वरशिष्ट. स्वयंज्वल. वल्गु. से।मना दिमान दिगेरेनो पूर्ण परिचय. से।मना तावाना देवी. से।मना तावानी औहाति ह प्रवृि ओ. अपरयो. यमना विमान विगेरेनो परिचय. यमना तावाना तावाना रोणो दुःखा. यमनां आह्याः वहणना विमान विगेरेनो परिचय. वहणना तावाना देवी. वहणनां अपरयो. वैश्रवणना विमान विगेरेनो परिचय. वश्रवणना तावाना देवी. वैश्रवण-कुबेर-ने हस्तक रहेली स्थानी अने स्थानी विश्ववणनां अपरयो.

शतक ३. उद्देशक ८. ए० १२१-१२४.

राजगृह.—असुरकुमारना उपरि केटला? दश. नामनिदेंशः नागकुमारना उपरिओ. सुवर्णकुमारना, विद्युत्कुमारना, अग्निकुमारना, दीपकुमारना, उद्धि कुमारनी, दिक्कुमारना अने स्तनितकुमारना उपरिओ. पिशाचना-त्रानव्यंतरना उपरिओ. साधर्म-ईशानना उपरिओ. सर्व स्वर्गना उप रिओ. विहार

शतक ३. उद्देशक ९. ए० १२५-१२६.

राजगृह--इंदियविषयना केटला प्रकार १ पांच. जीवासिगम. विहार-

शतक ३. उद्देशक १०. ए० १२७-१२८.

राजगृह.- चमरनी सभाओ केटली? त्रण. शमिका, चण्डा, जाता, यावत् अच्युतसभा. विहार.

शतक ४. उद्देशक १-२-३-४-५-६-७-८. पृ० १२९-१३२.

संप्रह्माथा.-ईशानना लोकपालो केटला? सोम, यम, वरुण अने वैश्रमण. लोकपालोनां विमानो केटलां? सुमन, सर्वतोभद्र, वरुग अने सुवरुगु. सुमः क्यां आन्धुं ? ईशानावतंसकनी पूर्वे. चारे विमानना चार उद्देश. स्थितिभेद. राजधानी.

शतक ४, उद्देशक ९. ए० १३३-१३४.

नैरिवकोमां के पेदा थाय ते नैरियक के अनैरियक? प्रज्ञापनाना लेश्यापदना त्रीजा उद्देशनी बक्तव्यता.

शतक ४, उदेशक १०. ए० १३५-१४२.

कृष्णलेख्या नीललेख्याने पामीने तद्र्पपणे अने तद्वर्णपणे परिणमे ?—प्रज्ञापनाना लेख्यापदनो चतुर्थ उद्देशक.-लेख्यानां परिणास-वर्ण-रस-राध -सुद्ध-अप्रशस्त-पंक्षिष्ट-उष्ण-गति-परिणास-प्रदेश-अवगाह-वर्षणा-स्थान-कल्पबहुत्व, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे.

शतक ५. उदेशक १. ए० १४३--१५६.

विषयसंप्रह्माथा—चंपा. रवि. अनिल. मंथिका. शब्द. छदास्थ. आयु. एजन. निर्भेथ. राजगृह. चंपा. चंद्र. उद्देशकारंभ. पूर्णभद्रवेखा. सूर्येतुं उद्ग्र-मनादि. दिवस—रात्रिविचार. जंब्द्वीपनुं दक्षिणार्थ अने उत्तरार्थ. मंदर पर्येतनुं उत्तर दक्षिणा अढार मुहूर्तनो दिवस. बार मुहूर्तनी रात्री. दिवस अने रात्रीना मापमां वधघट. बार मुहूर्तनो दिवस. अढार मुहूर्तनी रात्री. वर्षाऋतु हेनंतऋतु विषरेना प्रथम सम्-यनो विचार. प्रथम समयादिकाल संख्या.

शतक ५. उदेशक २. ए० १५७--१६४.

राजगृह,-ईषरपुरोवात. पश्चारवात. मंदवात. मदावात. ए वायु संबंधे दिशाओंने आश्रीने एच्छा. द्वीपमां वाता वायु. समुद्रमां वाता वायु. ए वन्ने वायुओनो परस्पर व्याखास. ए वायुओने वावानां कारणो. वायुनी यथारीति गति. वायुनी उत्तरिक्षया. वायुकुमारादि द्वारा वायुकायनुं उदीरण, वायुओ श्वास प्रश्वास छे है हा. वायु मरी मरीने अनेक वार फरीधी वायुमां आवे ? हा. स्पृष्ट वायु मरे के अन्पृष्ट ? स्पृष्ट वायु. वायु शरिरसहित नीकळे के शरिररहित ? वन्ने रीते नीकळे. ओदन कुल्माय अने सुरामां अणुओ कोनां छरीर कहेनाय शिवेश वावार विवास अपितां वारीर कहेनाय. अय छोडं तांचं कलाई सीसं पाषाण अने कषदिका-काट-मां अणुओ कोनां शरीर कहेवाय ? पृथिवीनां अने अपिनां. हाडकं, बळेलं हाडकं, चामडं, बळेलं चामडं, शिगडं, बळेलं शिगडं, खरी, बळेले खरी, नखं अने बळेले नख ए वधानां अणुओ कोनां हरीर कहेवाय ? वसजीवनां अने अपिनां. अंगरो राख, ससी अने छाण कोनां शरीर कहेनाय ? एकेंद्रियनां यावत् पंचिद्रयनां अने अपिनां. लवणसमुद्रनो चक्षेत्राल किष्कंम केटले ? यावत् लोकस्थिते, विहार.

शतक ५. उदेशक ३. पृ० १६५--१६८.

अन्यतीर्थको.-जल्अंथिकानुं उदाहरण. एक समये आ भव अने परमवना आयुष्यनुं वेदन. ए विषे अन्यतीथिकोनो मत. ए मत मिल्या-भिन्न भिन्न समये ते बन्ने आयुष्योनुं वेदन एको जिनमत. नैरिथकोमां संक्रमवारो अयुष्यसिंदत संक्रमे के आयुष्यसिंदत संक्रमे शिव्यासिंदत संक्रमे. ए आयुष्य, एणे वयां करेलुं १ पूर्व भवमां. यावद वैमानिक, जीवनावने उदेशी योनि अने आयुष्य संबंधे विचार.

शतक ५. उदेशक ४. ए० १६९-१९२.

छद्मस्य मनुष्य, शब्दो सांभळे !-हा. शंख. शृंग. शंखिका. खरमुखी. पोता. परिपरिया. पणव. पडह. भंभा. होरंभ. मेरि. झहरी. इंदुमि. तत. वितत. धन. शुषिर. स्पर्शाएला शब्दो संभवाय के अस्पर्शाएला ? स्पर्शाएला. आरगत अवीरगत शब्दो संभवाय के पारमत शब्दो संभ-ळाय ? मनुष्ये ने आरगत शब्दो संभळ'य. केवळिने बधा शब्दो संभळाय. केवली मिन पण जाणे, अमित पण जाणे, सर्वत्र, मदा अने हवेथा केवळी सर्व भावोने जाणे. छद्यस्थ इसे १ उतावली थाय १ हा. केवळी हसे १ उतावळो थाय १ ना. इसवानुं कारण मोहनीयनी उदय. इसतां केटली कमंत्रकृति बंधाय ? सात के आठ. यावत् वैमानिक. छद्यस्थ उंघे ? उभो उभो उंघे? हा. निदा करतां केटलां कमें बंधाय ? सात के आठ. यावत् वैमानिक. हरिणेगमेषी शकदूत स्त्रीनो गर्म शी रीते अदलाबदल करें! योनि वाटे गर्भने बहार कार्ढाने वीजा गर्भाशयमां मुके. नख वाटे के रंवाडा वाटे गर्भने फेरवी शके? हा. गर्भने कांइ बाधा न थाय. गर्भने बदलनारी कांग्कून करे अने गर्भने सूक्ष्म करीने बदलावे. अतिमुक्तक श्रमणनी दृतांत. महावीर पासे आवेला ने देवो. महावीरना सातसी अंतेवासिओ सिद्ध थशे. गातम अने महावीर वच्चे अएली ए देवं ने लगती वातचीत. देवो संयत के असंयत कहेवाय? नोसंयत कहेवाय. देवोनी विशिष्ट भाषा अर्धभागधी, केवली अंतकरने जाणे ज्स है हा. छदास्थ अंतकरने जाणे जूए ? सांभळीने के प्रमाण द्वारा जाणे जूए. केवळिना श्रावक विगेरे. प्रमाण केटलां ? चार-प्रस्यक्ष, अनुसान, उपमा के आगम, केदळी, चरमकर्म अने चरमनिर्जराने जाणे जुए? हा. केवळी, प्रणीत एन अने वचनने धारे ? धारे, केवळिना ए मन अने वचनचे वैमानिको जाणे? कोइ जाणे कोइ न जाणे. वैमानिकोना बे मेद-मायी सिध्यादृष्टि, अमायी सम्यग्दृष्टि, अनन्तरोपपन्नक-परंपरोपपन्नक. पर्याप्त अपर्याप्त. उपयुक्त अनुपयुक्त. अनुनारै पपातिक देवो पोताने आसने रहा रहा केवळी साथे वातचित करे ? हा. अही रहेको केवळी जे कांइ कहे तेने त्यां रहेला अनुत्तरोपपातिको जाणे जूए १ हा. अनुत्तरोपपातिक देवो उपशांतमोइ क्षीणमोह. केवली आदक्को-इंद्रियो-द्वास जाणे जूए? ना. केवली जे आकासप्रदेशोमां स्थित होय पछी पण त्यां ज स्थित होय के केम? ना. सचीम सद्दव्यता. चैादप्यी एक घडामांथी हजार घडा करें ? हा. उत्करिका भेद. विहार.

शतक ५. उदेशक ५. ए० १९३-१९८.

मात्र संयमथी सिद्धि थाय ?-प्रथम शतक चतुर्थ उदेशक. अन्यतीर्थिकवक्तव्यता. ते मिथ्या. स्वमत. एवंभूत चेदना. अनेवंभूत चेदना. नैर्यकादि वैमान निक. संसारमंडळ. कुलकरो केटला ? सात. तीर्थिकरनी माताओ. पिताओ. शिष्याओ. चक्रतिनी माताओ. कीरतन, वरुदेवो. वासुदेवो, वासुदेवनी माताओ. पिताओ, प्रतिशत्रओ. विगेरी समवायसूत्र, विद्वार.

शतक ५. उदेशक ६. ए० १९९-२१२.

जीवेंभी अल्यायुष्यतानो हेतु.-हिंसा. मृषाबाद. श्रमण ब्राह्मणने अनुचित दान. जीवोनी दीघायुष्यतानो हेतु. अहिंसा. सत्य. उन्तित र दर्थतुं दान. अग्रुभ-दीघीयुष्यतानो हेतु. शुभदीघीयुष्यतानो हेतु. करियाणुं अने तेने लागती वेचनार छेनारने लगती किया. चार विकल्प. अग्निकायनी महाकिया विगेरे. पुरुष अने धनुष्यने लगती कियाओं. अन्यतीर्थियोनुं मत. तेनी असत्यता. जीवाभिगम आश्रावर्म दि आहार छेनारने धती हानि. कोतकृत. स्थापित. कान्तारमक्त. दुर्भिक्षभक्त. वादंलिकाभक्त. ग्लानभक्त. श्रत्यापिंड. राजिंड. आराधना अने विराधना. आचार्य अपाध्यायनी गति. खोटा बोलानां कर्मा. हे मगवन् ! ते ए प्रमाणे.

शतक ५. उदेशक ७. ए० २१३- २३०.

हे भगवन् ! परमाणु वंषे ? ते ते भावे परिणमे ? कदाच कंषे , परिणमे ; कदाच म वंषे , न परिणमे . ए प्रमाणे दिप्रदेशिक स्वंध . देशतः वंपन , अकंपण त्रिप्रदेशिक स्कंध, चतुःप्रदेशिक स्कंध, पंच प्रदेशिक स्कंध-यावत् अनंतप्रदेशिक स्कंध, देशाश्रित् विकल्पो, परमाणु अने असिधारा, परमाणु छेदाय ? ना. ए प्रमाणे यावत् असंस्यप्रदेशिक स्कंध. अनंत प्रदेशिक स्कंध अने असिवारा. ते हेदाय? हा, ना. ए प्रमाणे अप्ति अने प्रमाणु विगो. पुष्करसंवर्तक मेघ अने परमाणु विगेरे. गगा महानदी अने परमणु विगेरे. परमाणु अर्थ सहित छे? मध्य सहित छे? प्रदेश सहित छे ? तेम नथी. ए प्रमाणे दिप्रदेशिक र रंध. त्रिप्रदेशिक रकंध दिप्रदेशिक रकंधनी पेठे सम प्रदेशवाळा अने त्रिप्रदेशिक रकंधनी पेठे विषम प्रदेशवाला. संख्येय प्रदेशिक स्कंध. असंख्येय प्रदेशिक स्कंध अने अनंत प्रदेशिक स्कंध. प माणु परमाणुनी परस्पर स्पर्शना. नव विकल्प. पः माणु अने द्विप्रदेशिव नी स्टर्शनाः परमाणु अने त्रिप्देशिव नी स्पर्शनाः ए प्रमाणे यावरः परमाणु अने अनन्तप्रदेशिकनी स्पर्शनाः द्विप्रदे-शिक अने परमाणुनी स्पर्शनाः द्विप्रदेशिक अने द्विप्रदेशिकनी स्पर्शनाः द्विप्रदेशिक अने विप्रदेशिकनी स्पर्शनाः विप्रदेशिक अने परमाणुनी स्पर्शना. त्रिप्रदेशिक अने द्विप्रदेशिकनी स्पर्शना. त्रिप्रदेशिक अने त्रिप्रदेशिकनी र र्शना. ए प्रमाणे या त अनंत प्रदेशिकनी स्पर्शना. ॰परमाणु पुहलनी कालतः रिधति. एक समय अने असंख्य काल. सकंप एक प्रदेशादगाढ पुदूलनी कालतः स्थिति. एक समय अने आव-लिकानी असंख्य भाग. ए प्रमाणे यावत् असंख्य प्रदेशावगाढ. एक प्रदेशावगाढ निष्कंप पुद्रलनी कालत: स्थिति. एक समय अने असंख्य दाल. एक गुण काळा एद्रलनी कालतः स्थिति. एक समय अने असंस्य काल. ए प्रमाणे यावत् अनंत गुण काळुं पुद्रल. वर्ण, गंध, रस, स्पर्शे. सूक्ष्म परिणाम. बादर परिणाम. र वद परिणत. युद्रलनी कालतः थिति एक समय अने आविकानो असंस्य भाग. अशब्दपरिणत पुद्रलः परमाणु पुद्रसनी अंतरकाल, एक समय अने असंख्य काल. हिप्रदेशिक स्वंधनी अंतरकाल, एक समय अने अनंत काल, अनंतप्रदेशिक, एक प्रदेशावर ह र दंप रुद्र लगे अंतरकाल. एक समय अने असंख्य काल. ए रीते असंख्य प्रदेशादगाह. एक प्रदेशादगाह निष्कंप पुद्र-हमी अंतरकाल, एक समय अने आदिलकानी अरंख्य भाग. ए रीते असंख्य प्रदेशावगाढ, वर्णादिनी अंतरकाल, शब्दपरिणत पुद्रलनी अंतरकाल. एक समय अने असंस्थकाल. अशन्द परिणत पुरल. इत्यस्थानायु, क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु अने भावत्थानायुनी अल्प दहुता. के विको आरंभी अने परिप्रधी छे? हा. अ छुरोनो परिप्रह अने आरंभ. पृथिवीकायादिनो आरंभ. शरीर, वर्भ, भवन, देवो, देवाओ, समुख्यो, मनुष्णीको, तिर्थेचो, तिर्थेचणीओ, आसन, शयन, भांड-मात्र, उपकरण विगेरे. असरीनो विश्वह. वेइदियादिनो आरंभ क्षेत्र परिष्टह. पचिद्रियको परिम्नह, टंक कूट बापी अने वन विगेरे, देदकुल आश्रम प्रपा स्त्य अने गाँपुर विगेरे, प्रासाद गृह शरण लेण आपण संगाटक त्रिक चतुष्क अने महापथ विगेरे. शक्ट रथ यान अने मेना विगेरे. लोडी कड़ायुं अने कड़छी विगेरे, वानव्यंतरो. ज्योतिषिको. वम निको. पांच हेतु अने पांच अहेतु. हे भगवन्! ते ए प्रमाणे.

शतक ५. उदेशक ८. ए० २३१-२४४.

महावीरना अंतेवासी नारदपुत्र असे निर्धथी पुत्र. पुद्रला हुं सार्थ छे समध्य छे सप्तदेश छे नारदपुत्रना मते सर्व पुद्रला सार्थ समध्य अने सप्रदेश छे. ए नारदपुत्रना मत विषे निर्धथीपुत्रनी सविस्तर चर्चा. नारदपुत्रे क्यूटलुं ए विषेनुं पोतःनुं अजाणपणुं. तेनी सल्य जाणवानी इच्छा. निर्धथीपुत्र नारदपुत्रमे ए संबंध आपेली सविस्तर समजण. पुद्रले नुं जुदी जुदी अपेक्षाए न्यूनाधिकपणुं. नारदपुत्र निर्धथीपुत्र पासे पोताना अजाणपणाने लगती म गेली क्षमा. विहार, गैतम बोल्या-जीवा वधे छे हीणा थ य छे अवस्थित छे जीवा वधता नथी, घटता स्थी, अवस्थित छे. वैरियकेशिय यावत् वमानिका एपी पूर्वाक्त विचार. सिद्धोनी वधनण्ड स्थरता विवार. जीवानुं अअस्थान क्यां सुधी सर्व काल. नैरियकेशित वधनपणुं क्यां सुधी एक समय-आवलिकशेना असंख्य भाग, ए रीते घटनापणुं, नैरियकेशि अवस्थान क्यां सुधी एक समय-चोवीश मुहूर्त. एम साते नारको. तेन लगती विशेषता. ए रीते असुर-कुमारोनी, एकेंद्रियोनी, बैर्डियोनी यावत् चड्डियोनी, सेम्छिमेशिनी, रभीजीनी, वानव्यंतरोनी, उमेतिषकेशनी अने साथमे-ईशानादिनी वध-घट-स्थरतानी विचारणा. ए जातनी सिद्धोने लगती विचारणा. छुं जीवा सेपप्य छे सापच्य छे सेपपच्य-सापच्य छे निरुपच्य-निरपच्य छे जीवा निरुपच्य-निरपच्य छे ए प्रमाणे सिद्धोने लगती विचारणा. हे भगवन्। ते ए प्रमाणे.

शतक ५. उदेशक ९. ए० २४५--२५२.

राजगृह नगर ए हां कहेवाय ? पृथिवी विगेरे राजगृह नगर कहेवाय ? एना कारणनी नेांध. दिवसे प्रकाश अने रात्रे अंधारुं होय ? हा. एनं हां कारण ? हां पुदूल अने अहाभ पुदूल. नैरियकाने प्रकाश होय के अंधकार ! अंधकार. तेनुं कारण अहाभ पुदूल. असुग्छुमारे ने प्रकाश. १थिवीकाय यावत त्रेंदियोने अंधकार- चडरिंदियोने प्रकाश अने अंधकार ए राते बावत मनुष्याने, असुरकुमारनी पेठे विश्व मुक्तपदि विगेरे देवाने प्रकाश नारकिमां रहेला नैरियकाने 'काळ' ने। स्थाल हे।य ! ना, एम केम ! 'काळ' ने। स्थाल

अहीं मर्थेलेक्सां छं माटे ए रीते रावत् पंचेंद्रियतिर्थेचये।निका विषे पण आणतुं, मनुष्येने ते। काळने। ख्याल हे।य छे. देवे।ने काळने। ख्याल नथी है।ते। पार्थापत्य स्थविरे। अने श्रमण भगवंत महाद्वीर, असंख्य लेक्सां अनंत रात्री दिदले। श्री रीते? पुरुषा-दानीय पार्थ अर्दतनी सार्था, लेक्खल्य, पार्थापत्योने धएली श्रमण भगवंत महावीरनी 'सर्वेज्ञ अने सर्वेदशीं' तरीकेनी अल्लाण, चार यान मूकी पांच यामनी स्वीकार, सिद्धत्य प्राप्ति, देवलेकोनी गणत्री, संप्रह्माथा विहार,

शतक ५. उदेशक १०. ए० २५३-२५४.

चंपा. पंचम शतकना प्रथम उदेशक. चंद्रनिह्रपण. शतक समाप्ति.

शतक ६. उदेशक १. ए० २५५-२६०

वेदना. आहार, महाधव. सप्रदेश. तमस्काय. भव्य. श.लि. एथिनी. कर्म. अन्यतीर्थिक. महावेदनावाळो, महानिर्जरावाळो है के महानिर्जरावाळो, महावेदनावाळो है ए बेमां केल उत्तम है प्रश्नाति । एडिं राति मंसां रहेना । नैरियके। महावेदनावाळा छे है हा. ते नैरियके। प्रमणे। करतां मोटी निर्जरावाळा है ना. एना कारणमां चोकखा अने मेला वक्तनुं उदाहरण. कर्मराग. खंजनराग. नैरियके।नां पापा चीकणां. लेहारनी एरणने। दाखले। अभणे।नां कर्मा पोचां- स्की पूळो अने अग्नि. पाणीनुं टीपुं अने उन्नं धाधानुं लेहानुं कहायुं. करणे। केटलां? चार-मनकरण. वचनकरण. कायकरण. कर्मकरण. नैरियके।ने, पंचेदियोने ए चारे करण. एकेंद्रियोने ने करण-कायकरण. वर्मकरण. विकलेंद्रियोने ने परण-वचनकरण. कायकरण. कर्मकरण. करण अने शातावेदना. ए रीते असुरकुमार याचत स्नितनकाण. पृथिवंकाय बीदारिक शरीरयाळा अने देश विषे विचार महानेदना अने महानिर्जरा. महानेदना अने अल्पनिर्जरा. अल्पवेदना अने अल्पनिर्जरा. प्रतिमाधारक मुने महावेदनावायो अने महानिर्जरावाळो. छट्टी सातमीना नैरियके। महावेदना अने अल्पनिर्जरा. ईलिशावाळो अनगार अल्पवेदना अने महानिर्जरा. अनुत्ररागितिक देशे। अल्पवेदना अने अल्पनिर्जरा. ईसहगाथा. उदेशके समाप्ति.

शतक ६. उदेशक २. ए० २६१-२६८.

राजगृह, प्रज्ञापनानी आहार उदेशक. विहार.

शतक ६ उदेशक ३. ए० २६९-२८६.

बहुकर्म. बस्न. पुद्रल. प्रयोग. विस्त्सा. सादिक. कर्मिस्थिति. स्री. संयत सम्यग्हृष्टि. संज्ञी. मन्या. दर्शन. प्रशिप्त. भाषक. परित्त. ज्ञान. ये ग. उ ायाम. आहारक. सूक्ष्म. चरम. ६थ. अत्याद्धत्य. हे भगवन्! महाधर्मवाळाने सर्वतः पुरले चीटे ! सर्वतः पुद्रलेना चय थाय ! निरंतर पुद्रके। चें।टे? सावत् निरंतर पुद्रके।नो उपचय धाय ? अने एना आत्मा दूरूपणे, अ उभाणे अने अनिष्टपणे वारंवार परिणमे ? हा. तेना हेतु. अहत, धात अने तन्त्रोहत (ताजा) बल्लतं उदाहरण. अल्पकर्मनाजने सर्वतः पुत्रले। भेदाय ? यावतः परिविध्यंस पामे ? अने एना आतमा सुरूपपणे, शुभवणे अने इष्टपणे वारंबार परिणमें ? हा. तेना हेतु. जिल्लन, पहित, मिलन अने रजवाळा पण पाणीथी घेवाता वक्किना दाखला. वस अने पुदूलोना उपचय. प्रयेग. विश्सा. जीव अने कर्मीना उपचय. ए उपचय प्रयोगसा, पण विसस ए नहि. मनप्रयोग, वचनप्रयोग, कारप्रयोग, सर्व वंचेंद्रियोने ए त्रणे प्रयोग, पृथिवं यावत् वनस्वतिने एक (काय) प्रयोग, विकलें-दियोने बे प्रयोग, वचनप्रयोग अने काय ध्येग, देवीने त्रणे प्रयेग, वक्षने ठाती पुद्रलेगचय सादि सात ? सादि अनंत ? अनादि सांत ? के अनादि अंति ? ए ते। सादि सांत ए ज प्रकारे जीवाने लगता पुरुषापचय विषे एन्छा, ईवीपथवंचकनी कर्मपुरलोपचय सादि सांत. भन्यने। अनादि सांत, अमन्यने। अनंत, के। किमी क्रमी द्वेशपचय सादि अनंत नथी. हुं 'वस्र सर्वद सांत छे ? सादि अनंत छे ? अनादि सांत छे ? अनःदि अनंत छे १ वस्र ता सादि सांत छे १ ए प्रमाणे जीन विषे एच्छा, नैरियक विर्यंच मनुष्य अने देवा सादि सांत, सिद्धी सादि अनंत. भव्ये। अनंदि सांत अर्व्ये। अनंदि अनंत. कर्मप्रकृति केटली ? आठ शानावरणीय दर्शनावरणीय यावत् अंतराय. ए आहेनी अबाबाकाळसहित बंधस्थिति. ए कमं छ। बांधे १ पुरुष बांधे १ के नपुंसक बांधे १ ए त्रणे बांधे. जी स्त्री, पुरुष के नपुंसक न हे। य ते ए कमें। बांधे अते न बांधे अयुष्यकर्मने स्त्री पुरुष के नपुंपक बांधे शने न पण बांधे, संयत अनंगा अने संयवासंयतकृतिक ए कर्मे बंधने लगता प्रदलो. ए ज प्रमाणे सम्दरहिष्टि मिध्यादृष्टि सम्यरमिध्यादृष्टि संज्ञी असंज्ञी नोसंज्ञी असंज्ञी असंज्ञी असंज्ञी असंज्ञी सिबिकनोअभवसिबिक चक्षुर्दर्शनी अचक्षुर्दरीति अविविद्शति केवलदर्शती पर्याप्त अवर्याप्त नोवर्ध प्रतिविव्यक्ति भाषक अभाषक परित्त अपरित्त नोपरित्तनो अपरित्त मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी अवधिज्ञानी मनःपर्यायज्ञानी केवलज्ञानी मतिअज्ञानी श्रुतज्ञानी अवधिअज्ञानी (विभंगी) मनोये.गी वचोये.गी भाषये।गी अये।गी आ धारे।पये गी निराकारे।पये।गी आहारक अनाहारक स्कृत वादर नीस्क्षमतोबादर चरम अरम ए मधाने उद्शीन कर्मबंधने लगते। विचार, स्रीवेदक पुरुषवेदक नर्ंसकवेदक अने अवेदक जीवो । अत्रवहुना है भगवन्! ते ए प्रमाणे.

शतक ६. उदेशक ४. ए० २८७-३००.

हे भगवन्! शु जीव कालादेशथी सप्रदेश छे के अप्रदेश छे? नियमेन सप्रदेश र् े मणे नैत्यिक अने कालादेश. जीवो अने कालादेश. नैर्यिका अने कालादेश. ए रीते यावत स्तनितकुमारा. पृथिचीकायिका अने कालादेश ए रीते यावत् वनस्पतिकािकेः, वाकीना लिखो सुधीना जीवो नैर्यिकानी पेठे. आहारक अने कालादेश, भंगत्रय. अनाहारक अने कालादेश, भंगधट्स, सिंि अने कालादेश, भगत्रिक, भवसिद्धिक अभविष्ठिक अने कालादेश. शैषिकनी पेठे. नोभविष्ठिक नोअभविष्ठिक अने काल् देश. मंगितक. संभी अने कालादेश. मंगित्रक. निर्मिक देव मनुष्य. भंगवृद्धक. नोसंशी नोअसंशी. भंगित्रक. औषिकनी पेठे लेश्यावाला. कृष्णलेश्या नीएलेश्या कापातलेश्या तेनीलेश्या पद्मलेश्या शुक्ललेश्या अलेश्या सम्यारिष्ठ विकर्लेश्या माण्यारिष्ठ सम्यामिश्यारिष्ठ असंयत संयान संयत नोसंयत नोसंयत नोसंयत नोसंयत नोसंयत नासंयत सक्षायी एकेश्रिय कोषक्षायी देव मानकषायी मा याकषायी नैरियक देव लाभकषायी औषिक झान आभिनिवेषिक झान श्रतकान श्वतकान अविष्ठान मनःपर्यवक्षान केवल्कान औषिक आहान मतिक हान श्रतकान विभेणकान संयोगी मनयोगी वचनयोगी काययोगी अयोगी साकारीपयुक्त अनाकारीपयुक्त सेवेहक खीवेहक प्रह्मवेहक नपुंसकवेहक अवेहक सशरीरी औदारिक वैक्रिय आहारक तैजस कामण अशरीर आहारपर्याप्ति शारीरपर्याप्ति शिष्ठियपर्याप्ति आनप्राणपर्याप्ति माषा मनःपर्याप्ति आहार-अर्थाप्ति शारीरअपर्याप्ति शिष्ठियपर्याप्ति भागा मनअपर्याप्ति ए बधां हि से कालादेशथी विचारणा संप्रह्माथा सप्रदेश आहारक भव्य संशी लेश्या दृष्ट संयत कवाय येग उपयोग वृद्ध शारीर अने पर्याप्ति है मगवन् । श्रं जीवो प्रत्याख्यान छे अपर्याख्यानी छे के क्षेत्र जातना छे? बधा प्रकारना छे. ए ज प्रमाणे नैरियक यावत् चलित्रिय पंत्रियतिर्यं मिक अने मनुष्य ए वधा साथे प्रत्याख्यान विचारणा. जीवो प्रत्याख्यान अन्त स्वाख्यान अने ए बक्षेने जाणे छे? पंत्रह्मी जाणे छे अने बीजा नथी जाणता. जीवो प्रत्याख्यान अत्याख्यान अने ए बक्षेने करे छे पूर्व प्रमाणे, प्रत्याख्यान अने आयुष्य, ए विशे अने आयुष्य, ए रीते प्रत्याख्यान लेगता चार दंडक, हे भगवन् । ते ए प्रमाणे छे.

शतक ६. उद्देशक ५. ए० ३०१-३१४.

तमस्काय ए शुं प्रथिवी कहेवाय ? पाणी कहेवाय ? पाणी कहेवाय. तेतुं कारण ? तमस्काय अने पाणीनी समानसभावता. तमस्कायनी शरूआत क्यांथी? एनी समाप्ति वदां? अरुणोदय समुद्रथी एनी शहुआत. ब्रह्मलोकमा एनी समाप्ति. तमस्कायनो आकार केवी. नीचे रामपा तरना मूलनी जेवो अने उपर कुकडाना पांजरा जेवो. तमस्कायनो विष्कंभ अने परिक्षेप केटले। तमस्कायना वे प्रकार संख्येययोजन विस्तृत अने असंख्येयथोजन विस्तृत. तमस्काय केवडो मेाटा छे? शीघ्र गतिवाळो देव छ मास सुर्या चालता पण एना पारने न पहेंची शके एवडें। में।टें। तमस्कायमां घर, हाट, गाम के संनिवेशों छे? ना. तमस्कायमां में।टा मेंघे। संस्वेदे छे? संमूर्छ छे ! वरसे छे ? हा. ते देव करे ? असुर क^{रे} ? के नागु करे ? त्रणे पण करे, तमस्काय्यां बादर स्तनित अने बागर विद्युत् छे ? हा देवकृत छे. तमस्कायमां बादर पृथिवी अने बादर अग्नि छे ! ना विष्रहगतिने अशाप्त सिवाय. तमस्कायमां सूर्य चंद्र विगेरे छे ? ना. तेनी पडखे छे. तमस्वायमं सुर्यादिनी प्रभा छे ? ना अर्थात् ए प्रभा छे पण तमन्क यरूपे परिणमेली छे. तमस्कायनी वर्ण केवी छे ? काळी. काळ्यमां काळी. वधारेमां वधारे काळो. तमस्काय भयंकर छे. एथी देवो पण क्षेाभ भय थामे. तमस्कायना नाम केटलां ? तेर तम. तमस्काय. अंधकार. महांधकार लेकांधकार, लेकितमिल, देवारण्य, देवब्यूइ, देवपरिध, देवप्रतिक्षांभ, अरुणोदय (क) समुद्र, तमस्काय क्षेत्री परिणाम छे ! पृथिवीनो १ पाणीनो १ के जीव वा पुदलनो १ ए पाणीनो परिणाम छे. जीव अने पुदलनो परिणाम छे, पृथिवीनो परिणाम नथी. तमस्कायमां जीव मात्र अनेकवार पेदा थएला छे पण बादर पृथिवीपणे अने बादर अग्निपणे नहि. कृष्णराजिओ केटली कही छे? आठ. ए आठे क्यां छे? सनःकुमार अने माहेंद्रकल्पनी उपर, नीचे ब्रह्मछे।कना अरिष्ट विमानना पाथडामां. एनी आकार अखाडानी जेवा समचोरस छे. पूर्वमां बे पश्चिममां बे दक्षिणमां वे अने उत्तरमां बे ए बधी परस्पर स्पर्शेली छे. एना आयाम अने विष्कंभ विषे विचार. एनी मोटाई विषे प्रदम. ए कृष्णराजिओमां घर वगेरे छे के नहिं इस्वादि बधो तमस्कायनी जेवो ज विचार, विशेषमां देव करे. कृष्णराजिनां आठ नाम कृष्णराजि. मेघराजि. मघा. माघवती. वातपरिच वातप्रतिक्षामा. देवपरिचा. देवप्रतिक्षोमा. ए कृष्णराजि पृथिवीनी परिणाम छे, पाणीनी परिणाम नथा. एमां वादर पाणीपणे बादर अक्षिपणे अने बादर वनस्पतिषणे जीवो उत्पन्न थता नथी. बाकी बीजे केाइ पण प्रकारे उत्पन्न धएसा छे. कृष्णराजिओना आठ अदक शांतरोमां लेकांतिक विमानो अची अचिमाली वैरोचन प्रमेकर चंद्राम सर्थीम हुकाम सुप्रेतिष्ट म. ए अठे विमानोनी बचे रिष्टाभ विमान नवमुं. ए विमानोने लगती बीजी हकीकत. आठ लेकांतिक देवो सारस्वत आदित्य वरण गर्दतीय तुषित अव्याबाध आक्षेय वरिष्ठ ए आठे देवीने लगती सविस्तर हकीकत. एओनां विमानी शेनी उपर प्रतिष्ठित छे १ वायु उपर. जीवाभिगम. बधा जीवो, ए विमानोमां पण उत्पन्न थएला हे मात्र देवपणे नहि, हे।कांतिकनी रिथति, आठ सागीपम, लोकांतिक विमानोधी लोकनी छेडे। केटलो छेटे। छे? असंख्येय योजन.

शतक ६. उदेशक ६. ए० ३१५-३१८.

पृथिवीओं केटली ? सात. अनुत्तर विमानों केटलां ? पांच. मारणांतिक समुद्द्षात. रामप्रभामां उत्पन्न थवाने योग्य जीवा त्यां पहेंचिने ज आहार करे ? करीरनें रचे ? केटलाक त्यां पहेंचिने करे अने केटलाक त्यां पहेंची, त्यांथी पाछा फरी, फरी वार त्यां पहेंचीने तेम करे. ए र ते साते पृथिवी असुरकुमारावासमां अने पृथिकायावासमां उत्पन्न थवाने योग्य जीव विषे पण ए ज विचार. मंदर पर्वत. अंग्रल. वालाम. लिक्षा. यूका. यव. यावत् योजनकोटि ए रीते वधा एकेंद्रियो बेंद्रियो यावत् अनुत्तरदेवो. हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे.

शतक ६. उदेशक ७. पृ० ३१९-३२६.

शाहि-ब्रीहि गोधूम यव यवयव ए धान्योनी योनिनो नीजोत्पत्तिकाळ केटलो शाहि-ब्रीहित.-ब्रधारेमां वधारे त्रण वरस. कलाय मस्र तल मग अडद बाल कळ्यी चोळा तुवेर चणा ए धान्योनी योनिनो बीजोत्पत्तिकाळ केटलो शवधारेमां वधारे पांच वरस. ए प्रमाणे अळती कुसुंभक कोहवा कांग बंटी राळ कोद्सगृ शण सरसव अने मूलबीजनी योनि विषे प्रश्न. वधारेमां वधारे सात वरस. सुहूर्तना उच्छवास केटला १ ३७७३ श्चाविका उच्छ्वास निःश्वास प्राण स्तोक लव मुहूते अहोराध्र पश्च मास ऋतु अथन संवरसर युग वर्षशत वर्षसहस्र वर्षशतसहस्र पूर्वाय पूर्व बुदितांग बुदित अटटांग अटट अववांग अवव हुदूकांग हुदूक उत्पर्लांग उत्पर्ल पद्मांग पद्म निल्नांग निल्न अर्थनुपूर ग अर्थनुपूर अयुन्तांग अयुत प्रयुतांग प्रयुत नयुतांग नयुत चूलिकांग चूलिका शीर्षपहेलिकांग ए वधा काळ्नां अमाणोतुं स्वरूप. एटलो ज गणितनो विषय. औपिमककाळ पत्योपम. सागरोगम. परमाणनुं स्वरूप. उच्छलद्गाश्विकांका अक्ष्माश्विकांत अध्वतेषु प्रवरेणु वालाध्र लिक्षा युका यवमध्य अंगुल पाद वितस्ति—वेत—रित कुक्षि दं अनुष युग नालिका अश्च मुसल गञ्चूत योजन. ए वधातुं स्वरूप. पत्योपमतुं स्वरूप. सागरोपमनुं स्वरूप. सागरेप.

शतक ६. उद्देशक ८. पृ० ३२७-३३६.

श्वित्तीओं केटली ? आर. रत्नप्रभानी नीचे गृह प्राम वगेरे छे ? ना. त्यां उदार बलाइक अने स्तनितशब्द छे ? हा. तेने देव असुर के नाग करे. त्यां वादर अश्वकाय छे ? विश्वहगति सिवाय नवी. त्यां चन्द्र के चन्द्र वगेरेनी कान्ति छे ? ना. ए ज प्रकारना प्रश्लोचर वधी नरको संबंध, जीजीमां नग न करे. चोधीमां अने ते पर्छानी वधीमां एक थे देव ज करे. एवा ज प्रदन्ते सौधादि देवचीको संबंध, उत्तरी पण च्या ज. विशेषमां मात्र नाग न करे. सनत्तुमार दि स्वर्गोमां देव ज करे. संश्रहगाथा, अवसुष्यना बंधना प्रकार केटला ? छ. छण्ना नाम. ए प्रमाण यावत् वैमानिकों जीवो संबंध बंधनित्यक प्रदन्तो अने उत्तरी, लवण समुद्र संबंधी विचार, जीवाभिगम, असंख्यद्वीप समुद्रो, एनां नामो देव ? जे जेटलां श्रुम नामो होय ते वथां द्वीप समुद्रोनां जाणवां, विहार.

शतक ६. उदेशक ९. पृ० ३३७-३४२.

हानावरणीय कर्म बांधतां साथे बीजी केटली वर्सप्रकृति बंधाय १ सात आठ के छ. बंधे देशक प्रज्ञापना, महाँधेक देव बहारनां पुद्रलोने. लीवा सिवाय विकुर्वण करे १ ना. बहारनां पुद्र थेने लड़ने विकुर्वण करे १ हरात तत्रगा अभ्यत्रगत पुद्रलोमांना तत्रगत पुद्रलोने लड़ने विकुर्वण, एक वर्ण अने अनेक रूपना चार िकल्प. देव, काळा पुद्र को नीलक्ष्मे वा नीलपुद्रलने काळारूपे परिणत करे १ पुद्रलोने लड़ने तेवी परिणाम करे. ए रीते संघ रस अने स्पर्शनी एण परिणामांतर, वर्णना १० विकल्प. संघनी १ रसना १० अने स्पर्शना चार विकल्प. अविशुद्ध लेड्या बाळो देव असमबद्धत आत्मा द्वारा अविशुद्ध लेड्यावाळा देवने, देवीने के बेमांना कोइ एकने लाणे १ ना. ए त्रणे पदना बार विकल्प. आठमां न जाणे अने छेल्ला चारमां जाणे.

शतक ६. उदेशक १०. पृ० ३४३-३४८.

अन्यतीथिको. कोलास्थिकमात्र. निष्पावमात्र, कलममात्र. मायमात्र. मुद्रमात्र. यूकामात्र. निक्षामात्र. भगवान् महावीरनुं प्ररूपण. देवनुं अने गंधनां सूक्ष्मतम पुद्रलोनुं छदाहरण. जीव ए कैतन्य छे के कैतन्य ए जीव छे के जीव छे वे ने मानिको सुधी ए जातना विचार. जीवे छे ए जीव छे है के जीव छे ते जीवे छे है जीवे छे है तो जीव ज छे अने जीव तो जीवे पण अने न पण ज वे-प्राण धारण करे. सिंहजीव. वेमानिको सुधी ए दिचार. नैरियक अने भवां दिका वधा जीवो एकांत दु:खने वेदे छे एवो अन्यतीथिकमत. भगवान् महावीरनुं प्ररूपण. कोइ जीवो एकांत दु:खने, कोइ एकांत सुखने अने कोइ सुखदु:खिमेश्र वेदनाने वेदे छे. ते ते जीवोनो नामप्राह निर्देश. नैरियक अने तेनां आहारपुद्रलो. ए प्रम णे थावन्न वैमानिक. केवली आदानो --देदियो द्वारा जाणे जूए है ना. केवलीनुं अमित शान. निर्वृत दर्शन. सं ग्रहगाथा. १०० शतक समाप्त.

श्रीरायचन्द्र-जिनागमसंप्रह.

भगवत्सुधर्मस्वामित्रणीत भगवतीसूत्र.

श्रीअभयदेवसूरिविरचितवृत्तिसहित.

खण्ड २.

शतक ३.-उद्देशक-१.

मोका नगरी.-नंदन चैत्य.-श्रीमहावीर प्रभुनं आगमन अने अन्निभृतिनी पर्युपासना.-विकुर्वणा-(रूपो फेरववानी शक्ति).-चमरेंद्र, शायिक्षशो, सामानिको अने पट्ट-राणीओ.-छग्निमृति अने वायुभृति, वायुभृतिने संदेह.-वायुभृति अने श्रीमहावीर.-संदेहनुं निवारण.-वायुभृतिनी अग्निभृति प्रत्ये क्षमानी याचना.-वायुभृति, अग्निभृति अने श्रीमहावीर.-दक्षिणेंद्रो अने अग्निभृति, उत्तरेंद्रो अने वायुभृति.-तिष्यकनी विकुर्वणा.-अग्निभृतिनो विहार.-वायुभृति,-दंशानंद्र, कुरुद्त अने विकुर्वणा.-यावद्-अञ्चत देवलोक.-श्रीमहावीर प्रभुनो विहार.-राजगृहमां आगमन.-उत्तरार्थना इंद्रनुं आगमन, देविक्र-दर्शन अने संहरण.-देविक्र संवेषे प्रश्न ?-कृटाकार शाळानुं दृष्टांत.-देविक्रिनी प्राप्तिनो उपाय.-मीर्यपुत्र तामली.-प्राणामा प्रवच्या.-इंद्र माटे विक्रिचंचामां देविनुं संमेलन.-देविनो तामलीने पोताना इंद्र थवा माटे अत्याग्रह.-नियाणु न करवाथी तामलीनुं ईशानेंद्रपणे थवुं.-ते वातनी विल्चंचामां जाण.-कोषेष्ठा विल्चंचानवासीओए तामलीना शवनी करेली अवगणना.-ईशानवासीओ द्वारा ईशानेंद्र (तामली)ने जाण.-कोपेला ईशानेंद्रनी दृष्टिनो प्रभाव.-विल्चंचानुं वळवुं.-देवीनी नाशमाग.-ईशानेंद्रनी विल्चंचान्तसीओए करेली प्रार्थना.-दृष्टिनुं संहरण.-ईशानेंद्रनुं आयुः.-ईशानेंद्र (तामली)नं प्रव्यपणुं.-उद्देशक समाप्ति अने विहार.-

१.-गाहाः---

केरिसी विज्ञ्ञणा चमर किरिय जाणित्थि नगरपाला य, अहिवइ इंदिय परिसा ततिथाम्मि सए दस उद्देसा. १.—आ त्रिजा शतकमां दश उद्देशको छे. तेमां प्रथम उद्देशकमां चमरनी विकुर्वणा शक्ति विषे प्रश्नोत्तरो छे. चमरना उत्पात विषे हका कहेवा सारु बीजो उद्देशक छे. क्रिया संबंधे प्ररूपण करवा त्रिजो उद्देशक छे. 'देवे विकुर्वेल यानने साधु जाणे ?' इत्यादि वातना निर्णय माटे चोथो उद्देशक छे. 'साधु, वहारनां पुद्रलोनुं प्रहण करीने स्त्रीवगेरेनां रूपो करी शके छे' ए संबंधी निर्णय माटे पांचमो उद्देशक छे. नगर संबंधे छट्टो उद्देशक छे. लोकपालो विष सातमो उद्देशक छे. अधिपतिओ विष आठमो उद्देशक छे. इंद्रियो संबंधे नवमो उद्देशक छे अने चमरनी समा संबंधे दशमो उद्देशक छे.

१. मूलच्छायाः कीदशी विकुर्वणा चमरः किया जानीयाद् नगरपालाश्च, अधिपतिः इन्द्रियं पर्षत् तृतीये शते दश उद्देशाः अनु०

२.— १ते णं काले णं, ते णं समए णं, मोया नामं नयरी होत्था. वण्णओ. तीसे णं मोयाए नगरीए बहिया उत्तरपुरिथमे णं समए णं सामी समोसढे. परिसा निग्गच्छइ, पडिगया परिसा.

२. ते काळे, ते समये मोकः नामनी नगरी हती, वर्णक. ते मोका नगरीनी बहार उत्तर-पूर्वना दिग्भागमां नंदन नामनुं चैक्ष हतुं, दिसीभागे णंदणे नामं चेइए होत्था. वण्णओ. ते णं काले णं, ते वर्णक. ते काळे, ते समये श्रीमहावीर स्वामी पधार्या. सभा निकैळे के अने धर्म सांमळीने सभा पाछी चाली गई.

" 'चेइए'ति चितेर्लेप्यादिचयनस्य भावः, कर्म वा इति चैत्यम्; संज्ञा-शब्दलाद् देविबम्बम्, तदाऽऽश्रयत्वात् तद्गृहमपि चैत्यम्; तच इह व्यन्त- चितिपणुं, अथवा चितिनुं कर्म ते 'चैत्यः' ए मंज्ञाशब्द छे, माटे तेनो अर्थ राऽऽयतनम्, न तु भगवताम् अर्हताम् आयतनम्:-" (भ० खं०१,पृ०१९). देवनुं बिंब करवो, प्रतिमानुं आश्रयरूप होवाथी ते घर पण चैत्य; अर्ही चैखनो अर्थ व्यंतरतुं गृह करवौ, पण अर्हतोतुं आंयतंन न करवोः-" (भ० खं० १, पृ० १९).

'' 'चेइए'ति-लेप्य आदि पदार्थना चयने 'चिति ' कहे छे, चितिनुं

चैत्य अने कोशकारोः-श्रीहेमचंद्राचार्य (अभि० चि० य० ग्रं० प्र० ३९६ मां) आ प्रमाणे कहे छेः-" चैत्य-विहारौ जिनसदानि" 'चैख' अने 'विहार' जिनालय-(देरासर) अर्थमां वपराय छे. (अ० को० मुं० आ० पृ० ४७४ मां) श्रीअमरे तेने आवे अर्थे जणाव्यो छे:-" चैरयम्-आयतनं तुल्ये"-'बैत्य'ने 'आयतन समान अर्थे छे, आयतननो अर्थ यज्ञालय कर्यो छे. (२० म० क० आ० पृ० १८६ मां) तेनो अर्थाद आवे रूपे कह्यो छे:-" चित्याया इदम्"-(चितानुं आ.) आयतन, चितानी उपर रचेलुं चिन्हं, जनसभा, यहस्थान. भाणसोनुं विसामानुं स्थळ, देवस्थान. (११० चिं० पृ० ४७०) चैत्यनी " चित्याया इदम् " एवी व्युत्पत्ति करी, अर्थी आना जणात्या छेः-यइतुं स्थान, देवालय, देव राखवातुं स्थळ, जिनालय, जिन, वा बुद्धनी मूर्ति, सीमाडो देखाडनार पत्थर बगेरे निशान, गाम बगेरेनी पासेतुं महावृक्ष अने जित तरु. श्रीउववाईजीना मूळमां वैत्य संबंधे आवो उल्लेख छे, अने तेमां वैत्य अत्येनो छोकोनो प्रेम, बैत्य माटे उसित गणातुं स्थळ, बैत्यनी अंदरनी तथा बहारनी रचना, बैत्यमां थनारो लोकोनो भेटो, पूजानी सामग्रीओ, यागादिनुं महत्त्व आदि घणां महत्त्वना विषयोनी समावेश थाय छे:—

''तीसे णं चंपाए णयरीए बहिया उत्तरपुरिथमे दिसिभाए पुण्णभहे णामं चेइए होत्या ! चिराईए, पुव्वपुरिसपण्णत्ते, पोराणे, सिंहए, वित्तिए, कित्तिए, णाए, सच्छते, सज्झए, सघंटे, सपढागे, पढागाइपढागमंडिए, सलोमहत्थे, कयवैयदिए, लाउल्लोइयमंडिए, गोसीस-सरसरत्तचंदण-दद्रदिण्णपंचंगुलितले, उविचयचंदणकलसे, चंदणघडसुक्यतोरणपडिदुवारदेसभाए, आसत्तो-सत्त-विडल-वह-वग्घारियमह्नदामकल्ये, पंचवण्ण-सरस-सुरहिमुक्कपुष्फपुंजीवयार-क्रिए, कालगुरु-पवरकुंदुरक-तुरुकधूवमधमधंतगंधुद्याभिरामे, सुगंधवर-गंधगंधिए, गंधवद्यिभूए,णड-णडक-जल्ल-मल्ल-मुहिय-वेळंबय-पवग-कहक-लसक-आइक्खक-लंख-मंख-तूणइह्न-तुंबवीणय-मुयग-मागहपरिगए, बहुजण-जाणव-यस्स विस्सुयकित्तिए,बहुजणस्स आहु(य)स्स आहुणिजे, पाहुणिजे, अचिण्जे, वंदणिजे, नमंसणिजे, पूयणिजे, सक्कारणिजे, संमाणणिज्जे; कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं विणएणं पञ्जवासणिज्जे; दिग्वे, सच्चे, सच्चोवाए, सच्च्यभावे, सिणहियपाडिहेरे, जागसहरसभागपडिच्छिए, बहुजणे अचेद आगम्म पुष्णभद्दं चेइयं:-" (उव० क० आ० पृ० ९-१४).

"ते चंपा नगरीनी बहार उत्तर अने पूर्व दिशाना मध्य भागे-ईशान कोणमां-पूर्णभद्र नामनुं चैला हतुं. ते चैला चिरकाळ पूर्वे बनेलुं, पूर्वजो बडे जणाएछं, पुराणुं, शब्दित, आश्रय दाता, कीर्तिवाळुं अने ज्ञात हतुं. वळी छत्र, ध्वज, घंट, ध्वजा तथा नानी नानी पताकाओ वहे शणगारेलुं अने ह्वांवाळां प्रमार्जन युक्त हतुं. तेमां वेदिकानी रचना, गार अने घोळनी मंडना, गोशीर्ष, रक्तचंदन, दर्दर आदिना थापां अने चंदन कळशो वगेरे हतां. तेनो प्रतिद्वार भाग चंदन घटो अने सुरचित तोरणोवाळो हतो. तथा ते भोंयथी ऊंचे सुधी बांधेली, पहोळी, गोळाकार, स्टकती माळाओना समूहो, पंचवर्णी सारां सुगंधवाळां पुष्पोना पुंजो अने पूजननी सामप्रीओ युक्त हतुं. तथा काळो अगर, सार्व कुंदुरुक्ष, ने तगरना धूपनथी मधमघता-बहेकता-गंधना प्रसरथी अभिरामः, गंधवाळा पदार्थौना योगे सुगंधी तथा गंधना पिंड जेवुं हतुं. वळी त्यां नटो, नाचनारा, बजाणीआ, महो, मौष्टिको-मुठी वडे छडनारा. विदूषको, कूदनारा, दश्र्व, लासको-रास लेनारा, अथवा भांडो; आइक्ख-आख्यायिकाओ कहेनार, अस-बहिनंचा,

मंख-चित्रपट देखाडी मागनारा, तूण वायबाळा, बुंबडानी वीणावाळा, भोगीओ अने भद्वारको वगेरे भराता. ते वैत्य, ते देशना अने बीजा देशोना जनोमां ख्यातिपात्र हतुं. तेम ज आहूति आपनारा घणा लोकोनुं आहूति तथा प्राहूतिनुं स्थान हतुं. तथा तेओनी अर्चा, स्तुति, नमस्कार, पूजा, सत्कार अने सन्मानने योग्य इतुं. कल्याण तथा मंगळने करनारूं, दिव्य प्रभाववाळुं, इष्ट देवनी प्रतिमा युक्त, अने विनीत मावे पूजातुं; दिव्यता, सत्यता अने सत्य । उपायवाछुं, साचा प्रभाववाळुं, स्थपाएलां प्रातिहार्यवाळुं, इजारो यागोना भागोनी प्राप्तिवाळुं, ते बैत्य हतुं. अने तेने-पूर्णभद्र बैत्यने-घणां लोको आवीने उपासता:-" (उव० क० आ० प्र०९-१४):--अनु०

२. श्रमण भगवंत महावीर समोसर्या छे, ए वातनी जाण थता जनसमूह स्नानादि कृत्यो करी, चोक वगरे स्थळे साथे मळी, साथे प्रभु पासे आवे छे; आवी कया कया नियमो केवी रीतिए पाळे छे, वगेरे वर्णन माटे जूओ:-(भ० खं०१, पृ०२८ पे०११ मो अने पृ०३० तुं १ अंकवाळुं हिप्पण):-अनु०

१. मूलच्छायाः -- तिस्मन् काले, तिस्मन् समये मोका नाम नगरी अभवत्. वर्णकः. तस्या मोकाया नगर्याः बहिः उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे नन्दनं नाम चैत्यम् अभवत्. वर्णकः. तरिमन् काले, तरिमन् समये स्वामी समवस्तः, पर्षद् निर्गच्छति, प्रतिगता पर्षत्:-अनु०

१. परमात्मा श्रीमहावीर प्रभुनो घणी वार चेइय-चैत्य-मां समोसर्यांनो वर्णक अंगादिमां अवलोकाय छे, एथी 'चैत्य' ए शब्द कोना माटे वपरायो छे, एवा प्रश्ननुं उत्थान बुद्धिमानो माटे अस्थाने न गणाय. यद्यपि शब्दना कोश, जाति अने देशादिने आधारे अर्थी घणा थई शके, तो पण तेना मुख्य अने संगत अर्थो तरफ सौ कोईनुं दृष्टिबिंदु स्थिराय ए उचित छे. 'चैत्य ' शब्दनो व्युत्पित आदि वडे आवो अर्थ जणाय छे:- "चयनं चितिः, चितेर्विकार-श्रेलम् " चितिः-चिता-चे, तेनो विकार-तेनी उपर जे (स्तूपादिनी) आकृति-ए 'चैत्य.' परमात्मा आदिनी हैयातिनी यादी माटे आवी निशानीओ करवानी प्रथा पूर्वेथी आपणामां चाल हती, दष्टांत रूपे आजे पण मधुराना जैन-स्तूपो हैयाती घरावे छे. आवी रीति बौद्धोमां पण हती, एथी ज काशी-(सारनाथ पासे), गया वगेरे स्थळे बौद्ध-स्तूपो नीहाळाय छे. अने आवी पुराणी वस्तुओ ऐतिहासिक रीतिए महान् आत्माओनी हैयाती माटे अत्युपकारी गणायी छे. इवे 'नैस्य'ना जूदा जूदा अर्थो तरफ दृष्टि करीए, बैस्य अने श्रीअभयदेवसूरिः—" बैत्यं व्यन्तराऽऽयतनम्" बैत्य-व्यन्तरोतुं आयतन-घरः-(उव० टीका, क॰ सा० प्र० १०).

३. परमात्मा पासेथी धर्मनुं श्रवण करी केवी रीतिए पाछा फरी, यावत्-स्व ख स्थाने आवे छे, ते माटे पण जूओः-(म॰ खं॰ १, प्ट॰ ३३ पे॰ १३ मो):-अनु०

भगवती (अं॰ ५) मां चमरेंद्र माटे घणां खळो दर्शनीय छे. अने ते बधां खळो अवगाहतां ते संबंधेनो घणो वर्णक जणाय तेम छे. जेम के:--(श॰ २ उ॰ ८ थी) जंबूद्रीपना मंदर पर्वतथी चमरचंचा सुधीनो मार्ग अने चमरचंचाना किछा वगेरेनो. (श॰ ३ थी) चमरेंद्रनी ऋदि, द्युति, वैभव, विकुर्वणा-रूपो फेरववानी शक्ति, उपपात, किया; तथा त्रायिक्षेशो, सामानिको, पद्टराणीओनी विकुर्वणा, अने लोकपाल, सभा आदिनो. (श० १० उ० ५ थी) अप्रमहिषीओनो अने (श॰ १३ उ० ६ थी) चमरचंचा इत्यादिनो- श्रीप्रज्ञापना (उपा॰ ४) मां तेना स्थलादिनो अधिकार आ रीतिए उल्ले-स्रायो छेः—

"कहिं णं भंते! दाहिणिला णं असुरकुमारा देवा परिवसंति शोयमा! जंबूद्दीवे द्दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्यभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उबरि एगं जोयणसहस्सं उग्गाहिता, हेट्टा वि एगं जोयणसहस्सं विज्ञाताः; मज्झे अट्टहत्तरजोयणसयसहस्से एत्थ णं दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणां देवाणं, देवीण य चोत्तीसं भवणावाससयसहस्सा हवंति इति अक्खायं. ते णं भवणा बाहिं वटा, अंतो चउरंसा; सो चेव वण्णओ, जाव-पहिह्नवा. एतथ णं दाहिणिल्लाणं असुरकुमारदेवाणं पज्जत्ताप-नताणं ठाणा पण्णता. तिसु वि लोगस्स असंखेजहभागे, तत्थ णं बह्वे दाहिणिल्ला असुरकुमारदेवा, देवीओ परिवसंति. काला, लोहियक्खा, तहेव जाव-मुंजेमाणे विहरंति. एवं सञ्वत्थ भाणियव्वं भवणवासीणं. चमरे इत्थ असुरकुमारिंदे, असुरकुमारराया परिवसइ काले, महानीलसरिसे, जाव-पहासैमाणे. से णं तत्थ चउत्तीसाए भवणावाससयसहस्सीणं, चउसहीए सामाणियसाइस्सीणं, त्तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, पंचण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणि-याहिवईणं, चउण्हं च चउसद्वीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं; अन्नेसि बहुणं दाहिणिल्लाणं देवाणं, देवीण य आहवेचं, पोरेवचं, जाव-विहरंति:-" (क॰ आ० पृ० १०२–३.)

"हे भगवन् ! दाक्षिणात्य असुरकुमारो कये स्थळे वसे छे ? हे गीतम ! जंबूद्वीप नामना द्वीपना मेरू पर्वतनी दक्षिणे एक लाख, ऐंसी हजार योज-नना बाहल्यवाळी आ रत्नप्रभा पृथिवीना उपरनो एक हजार योजन साग अवगाही अने नीचेनो एक हजार योजन भाग छोडी, मध्यना एक लाख, अठ्योतेर हजार (१,७८०००) योजन प्रमाण भागनी मध्ये दाक्षिणात्य असुरकुमार देवोना अने देवीओना चोत्रीस लाख भवनो कह्यां छे. ते भवनो बहारथी गोळ अने अंदरथी चोखंडां छे. तेओनो प्रतिरूप सुधीनो वर्णक आ प्रमाणे छे:-(कमळनी कर्णिकाना आकारवाळां, तळे सांकडी अने मुखे पहोळी, विशाळ, गंभीर खाइओवाळां; अटारीओ, सतोरण शेरीना द्वारो, प्रतिद्वारो तथा कोटवाळां; यंत्रो, शतिक्वओ-महाशिलाओ. मुसंदिओ आदि अस्रोधी पूर्ण, शत्रुओधी नहीं लडाय तेवां, जयवाळां, बीजा-ओथी अजेयो, अडतालीस (अथवा सारा) कोठाओनी रचनावाळां, अड-तालीस (सारी) वनमाळाओ युक्त, क्षेम कुशळतावाळां, डंड-डांग-धारक रक्षक देवोथी रक्षाएलां, लींपण, उल्लेचो अने गोशीर्थ, तथा रक्त चंदनना थापा-वाळां, वंदन घटोए शोमता तोरण सहित प्रतिद्वारवाळां. अने नीचेथी उंचे सुधी बांधेळी पहोळी, गोळ, लटकती माळाओ, पंचरंगी सुगंधी पुष्पोना पुंजो, काळो अगर, किन्नर तथा तगरादि धूपोना महमहता उत्तम गंधथी

सुगंधवाळां; गंधना पिंडो जेवां छे. तेमां अप्सराओनी संकीर्णता अने दिव्य वाद्योना नादो छे. तेओनी रचना सर्व जातिना रत्नोवहे छे. तेओ खच्छ, चळ-कतां, कोमळ, संवाळां, घडेल, ओपेल, रज, मेल अने कचरा विनाना होवाथी खल्ली कांति, प्रभा अने शोभाए उद्योततां छे. यावत्-मनोहर, दर्शनीय, वधारे सोहामणां अने प्रतिरूपो छे:-पृ० ९४-९६.) आ वर्णक माटे बीजुं स्थळ आ-(स० क० आ० पृ० २०९-११) छे. त्यां प्रयीप्त, अपयीप्त दाक्षिणात्य असुरकुमार देवोना स्थानो छे. अने ते लोकना असंख्येय भागे छे. अहीं घणां दाक्षिणात्य असुरकुमार देवो अने देवीओ वसे छे. तेओ वर्णे काळां, राती आंखोनाळां, यानत्-(मोगोने) भोगवता विहरे छे. (तेओना शरीरना वर्णक माटे ज्ओः--भ० खं० १, प्र० २७, पहेलुं गुजराती टिप्पण.) तेओनो अवशेष वर्णक भवनवासीओना जेवो कहेवो. अहीं असुरकुमारोनो इंद्र, असुरराज चमर रहे छे. ते पण वर्णे काळो, महानीलमणी जेवो; यावत्-प्रका-शतो छे. ('यावत्' शब्दथी जाणी छेवा जणावेलो पाठ असुरकुमारोना बन्ने इंद्रोना समान वर्णनमां प्र० सू० क० आ० प्र० १०१–२ मां छे.) त्यां चमरेंद्र चोत्रीस लाख भवनोतुं, चोसट हजार सामानिकोतुं, तेत्रीस त्रायित्रक्षोतुं-('त्रायित्रक्षेशत्' शब्दनी सार्थकता घडवा माटे आ रीति छे:-'श्रीश्यामहस्ती ' अनगार चमरेंद्रना त्रायश्चिरातो संबंधे आ प्रमाणे पूछे छे:—हे भगवन् ! चमरेंद्रने त्रायश्चिरातो छे ! हे स्यामहस्ति ! जंबूद्वीपना भारत वर्षमां 'काकंदी ' नगरीमां तेत्रीस तत्त्वज्ञो, गृहस्थो-श्रमणोपासको-असाधारण मित्रो हता. तेओ पहेलां संविज्ञो-सारी रीतिने जाणनारा, संविज्ञविद्वारिओ-ज्ञानपूर्वक प्रवृत्ति करनारा हता; पण पाछळथी शिथिल परिणामवाळा, यावत्-स्वेच्छाचारीओ थया हता. तेथी तेओ बधा अडधा मासनी संलेखना करी चमरेंद्रना त्राय-क्षिंशो-३३, संख्याबाळा सद्दायक देवो-थया.) (भ० श० १०, उ० ४.) चार लोकपालोतुं, परिवार युक्त पांच पदराणीओतुं, त्रण परिषदोतुं, सात प्रकारनी सेनाओनुं, सात सेनापतिओनुं; वे लाख, छप्पन हजार आत्मरक्षकोनुं; अने बीजा घणा दाक्षिणात्य देव देवीओनुं आधिपत्य, तथा पालकत्वने करतो, यानत्-विहरे छे:-'' (क॰ आ॰ प्ट॰ १०२-३.) ज्यारे देवोने, के इंद्रने बीजे स्थळे जबुं होय त्यारे पहेला पोताना उपपात पर्वत उपर आवे छे, अने त्यां मूळ रूपनो बदलो करी बीजे रूपे इष्ट स्थाने जाय छे. तेथी ते ते पर्वतोना नामो साथे उपपात-(उप-सामे, पात-पडवुं-जवुं) शब्द योजाय छे. तेनो वर्णक स्थानांग (अं० ३) मां आ रीतिए छे:—

"चमरस्स असुरिंद्रस, असुरकुमाररहो तिगिच्छकूडे उप्पायपव्यए मूले दस-बावीसे जोयणसए विक्खंभेणं पण्णत्ते, चमरस्स णं असुरिंदस्स, असुरकुमाररत्रो सोमस्स महारण्णो सोमध्यभे उप्पायपन्वए दस जोयणसयाई उड्ढं उचतेणं, दस गाउय-सयाइं उन्देहेणं, मूले दस जोयणसयाइं विक्खंभेणं पण्णते. चमरस्य णं असुरिंदस्स जमस्स महारण्णो जमप्पभे उप्पायपव्वए एवं चेव. एवं वरुणस्स वि–,एवं वेसमणस्स विः–" (क० आ० पृ० ५४८-४९.) पर्वतोतुं माप पण ते ज प्रमाणे छे:-" (क॰ आ॰ प्ट॰ ५४८-४९.) त्यां तेनी पांच सभाओना नामो आ प्रमाणे छें:-

"'चमरचंचाषु राजधाणीषु पंच सभाओ पण्णता, तं जहाः—सभा सुहम्मा, उववायसभा, अभिसेयसभा, अलंकारियसभा, ववसायसभाः-" (क॰ आ॰ प्र॰ ४०६.) अने सेनापतिओ पांच कह्यां छे:---

"अयुरेंद्र, अयुरकुमारोना राजा चमरनो तिगिच्छक उपपात पर्वत दश सो वावीस (१०२२) योजन विष्कंमे कह्यो छे. असुरेंद्र, असुरकुमारना राजा चमरना लोकपाल सोम महाराजनो सोमप्रभ उपपात पर्वत उंचाइमां एक हजार योजन, उद्देधे एक हजार गाउ, अने मूळमां एक हजार योजननी पहोळाइवाळो छे. असुरेंद्र चमरना यम महाराजनो उपपात पर्वत यमप्रभ उक्त प्रमाणे कह्यों छे. तथा तेना छोकपाल दरण अने वैश्रमणना उपपात

" वमरेंद्रनी चमरचंचा राजधानीमां पांच सभाओं कही छे, ते आ छे:--सुधर्मी सभा, उपपात सभा, अभिषेक सभा, अर्लकारिका सभा अने व्यव-साय सभा:--" (क॰ आ॰ प्ट॰ ४०६.) ए अंगमां चमरेंद्रने लडायक सैन्यो

अदुत्तरं च णं गोयमा 🛭 प्रमू चमरे असुरिंदे, असुरराया तिरियमसंखेजे दीवसमुद्दे बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं, देवीहिं य आइण्णे, विति-किण्णे, उवत्थडे, संथडे, फुडे, अवगाढावगाढे करेत्तए; एस णं गोयमा ! चमरस्त असुरिदस्त, असुररण्णो अयमेयारूवे विसए, विसयमेत्ते बुइए, णो चेव णं संपत्तीए विकुर्विसु वा, विकुव्वति वा विकृत्विस्सति वा.

काकडा वाळेला होवाथी जेम ते बन्ने व्यक्तिओ संलग्न जणाय छे; अथवा जेम पैडानी धरीमां आराओ संलग्न-सुसंबद्ध-आयुक्त-होय, एवी ज रीते असुरेंद्र, असुरराज चमर घणा असुरकुमार देवो अने घणी असुरकुमार देवीओवडे आखा जंबूद्वीप नामना द्वीपने आकीर्ण करी शके छे, तेम ज व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, संस्तीर्ण, स्पृष्ट अने अवगाढावगाढ करे छे अर्थात् ते चमर बीजां रूपो एटलां बधां विकुर्वी शके छे, के जेने लड्ने पूर्वप्रमाणे आ आखो जंबूद्वीप पण भराइ जाय छे. वळी हे गौतम ! असुरेंद्र, असुरराज चमर घणा असुरकुमार देवो अने घणी असुरकुमार देवीओवडे आ तिरछा लोकमां पण असंख्य द्वीप अने समुद्र सुधीनुं स्थळ आकीर्ण करे छे, तथा व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, संस्तीर्ण, स्पृष्ट अने अवगाढावगाढ करी शके छे अर्थात् ते (चमर) एटलां बधां रूपो विकुर्वी शके छे के जेनाथी असंख्य द्वीप समुद्रो सुधीनुं स्थळ भराइ जाय छे. हे गौतम! पूर्वे कहा प्रमाणे एटलां रूपो करवानी असुरेंद्र, असुरराज चमरनी मात्र शक्ति छे-विषय छे-विषयमात्र छे, पण कोइ वखते ते चमरे पूर्व प्रमाणे (संप्राप्तिवडे) रूपो कर्यों नथी, करतो नथी अने करशे पण नहीं.

४. प्र०-जइ णं भंते ! चमरे असुरिदे, असुरराया एमहिडीूए, जाव-एवइयं च णं पम् विजिबत्तए, चमरस्स णं भंते ! असुरिं-दस्स, असुररण्णो, सामणिया देवा केमहिङ्कीया, जाव-केवइयं च णं पभू विडाव्वित्तए ?

४. प्र०-हे भगवन् ! जो असुरेंद्र, असुरराज चमर एवी मोटी ऋद्धिवाळो छे अने यावत्—ते एटछं बधुं विकुर्वण करी शके छे, तो हे भगवन् ! असुरेंद्र, असुरराज चमरना सामानिक देवो केवी मोटी ऋदिवाळा छे, यावत्-तेओनी विकुर्वणा शक्ति केटली छे?

" असुरेंद्र, असुरराज चमरने पांच लडायक अनीको–सैन्यो—अने

पांच लडायक सेनापतिओ कह्यां छे:-पदाति अनीक, घोडेखार अनीक,

कुंजरानीक, महिषानीक अने रथानीक. पायदळनो सेनापति हुम छे, घोडे-स्वारोनो अधिपति अश्वराज सौदामी छे, कुंजरानीकनो स्वामी वैकुंधु हस्ति-

राज छे, महिषानीकनो सेनापति लोहिताक्ष छे अने रथसैन्यनो सेनापति

"चमरस्स असुरिंदस्स, असुरकुमारत्रो पंच संगामिया अणिया, पंच संगामिया अणियाहिवई पण्णत्ताः-पायताणीए, पीढाणीए, कुंजराणीए, महिसाणीए, रहाणिए. दुमे पायत्ताणियाहिनई, सोदामी आसराया पीढाणी-याहिवई, वेकुंथुहित्थराया कुजराणीयाहिवई, लोहियक्खे महिसाणीयाहिवई, किंनरे रथाणीयाहिवई:---'' (क० आ० पृ० ३५७.)

कित्तर छे:-" (क॰ आ॰ पृ॰ ३५७.) ए अंगमां चमरेंद्रनी पांच पहराज्ञीओना नामोनो पाठ आ प्रमाणे छे:-

" चमरस्स णं असुरिंदस्स,असुरकुमाररन्नो पंच अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहाः--काली, राई, रयणी, विज्जू, मेहा":- (क० आ० पृ० ३५६.) जेम के:--

" असुरेंद्र, असुरकुमारोना राजा चमरने पांच अप्रमहिषीओ कही छे, ते आ प्रमाणे:--काली, रात्री, रत्नी, विद्युत् अने मेघा":- (क॰ आ॰ प्र॰ ३५६.) आ पांचे अप्रमहिषीओना पूर्वभवादि माटे ज्ञाताधर्मकथा (अं॰ ६) मां, श्रुतस्कंध बीजाना पहेला वर्गना पांच अध्ययनो दर्शनीय छे.

'' ते पं काटे पं, ते पं समए पं अज्ञसहम्मस्स अपगारस्स अंतेवासी अज्ञजंबू णामं अणगारे, जाव-पज्जुवासमाणे एवं वयासी:-जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं छहस्स अंगस्स पढमसुयखंधस्स अयं अहे पण्णते, दोचस्स णं भंते ! सुयखंधस्स××के अट्टे पण्णते? एवं खळु जंबु ! समणेणं भगवया महावीरेणं धम्मकहाणं दस वागा पण्णता x x चमरस्स णं अग्गमहिसीणं पढमे वग्गे पण्णते 🗙 🗙 पढमस्स वग्गस्स पंच अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहाः—काली, राई, रयणी, विज्जू, मेहा. "×× (क॰ आ॰ E0 1800-1400.)

" ते काळे, ते समये आर्थ श्रीसुधर्मसामी अनगारना अंतेवासी आर्य श्रीजंबू नामना अनगार पर्युपासता यावत्-आ प्रमाणे बोल्याः-जो हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीरे छट्टा अंगना पहेला श्रुतस्कंघनो ए अर्थ कह्यों छे, तो हे भगवन् ! बीजा श्रुतस्कंधनो 🗙 🗴 कयो अर्थ कह्यों छे ? हे जंबु । ए निश्चित छे, के श्रमण भगवान् महावीरे धर्मकथाना दश वर्गी कह्यां छे×× तेमां चमरेंद्रनी अम महिषीओनो पहेलो वर्ग कह्यो छे××अने ते पहेला वर्गमां आ प्रमाणे (अनुक्रमे) पांच अध्ययनो कह्यां छे:-काली, रात्री, रत्नी, विद्युत् अने मेघा." ×× आ पांचे अध्ययनोमां कमथी ते ते

महिषीनो पूर्व भव, ते भवना माता पिता, स्थळ, राजा वगेरे तथा तेनो बाळभाव, धर्मश्रवण, दीक्षा अने तपश्चर्याथी यावत्-चमरेंद्रनी पहराणीपणुं, ऋदि, परिवार, आयुः वगेरेनो वर्णक छेः—(क० आ० पृ० १४७८-१५०७):-अनु०

१. मूलच्छायाः--अथोत्तरं च गौतम ! अभुश्रमरः असुरेन्द्रः, असुरराजस्तिर्यग् असंख्येयान् द्वीप-समुद्रान् बहुभिः असुरकुमारैः देवैः, देवी-भिश्र आकीर्णान्, व्यतिकीर्णान्, उपसीर्णान्, संसीर्णान्, सृष्टान्, अवगाडावगाडान् कर्तुम्; एष गौतम ! चमरस्य असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य अयम् एतद्रूपो विषयः, विषयमात्रम् उदितम्, नो चैव संप्राप्त्या व्यकुर्वाद् वा, विकुर्वेति वा, विकुर्विष्यति वा. यदि भगवन् ! चमरः असुरेन्द्रः, असुरे-राजः एवं महर्दिकः, यावत् एतावच प्रमुः विकुर्वितुम्, चमरस्य भगवन् । अधुरेन्द्रस्य, अधुरराजस्य सामानिका देवाः किंमहर्दिकाः, यावत्-कियच प्रभुर्वि-कुर्वितुम् श—अनु०

४. उ०-गोयमा! चमरस्स असुरिंदस्स, असुररण्णो सामाणिया देवा महिड्रीया, जाव-महाणुभागा. ते णं तत्थ साणं साणं भव-णाणं, साणं साणं सामाणियाणं, साणं साणं अग्गमहिसीणं, जाव-दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहराति, एवं महिङ्घीया, जाव-एव-इयं च णं पभू विजन्वित्तए; से जहा नामए जुवतिं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेजा, चक्कस्स वा णामी अरयाउत्ता-सिया, एवामेव गो-यमा ! चमरस्त असुरिंदस्त, असुररण्णो एगमेगे सामाणियदेवे वेउन्वियसमुग्धायेणं समोहण्णइ, जाव-दोचं पि वेउन्वियसमुग्धा-वेणं समोहण्णइ, पभू णं गोयमा ! चमरस्स असुरिदस्स, असुर-रण्णो एगमेगे सामाणियदेवे केवलकप्पं जंवूदीवं बहूहिं असुरकुमा-रोहिं देवेहिं य, देवीहि य आइण्णं, वितिकिण्णं, उवत्थंडं, संथडं, फुडं अवगाढावगाढं करेत्तए; अदुत्तुरं च णं गोयमा ! पभू चमरस्स असुरिंदस्स, असुररण्णो एगमेगे सामाणियदेवे तिरियमसंखें ज्ञे दीव-समुद्दे बहू हिं असुरकुमारोहि देवेहिं, देवीहिं य आइण्णे, विति-किण्णे, उवत्थडे, संथडे, फुडे, अवगाढावगाढे करेत्तए, एस णं गोयमा ! चमरस्त असुरिंदस्त, असुररण्णो एगमेगस्त सामाणिय-देवस्स अयमेयारूवे विसये, विसयमेत्ते बुइए, णो चेव णं संपत्तीए विकुल्विस् वा, विकुल्वंति वा, विकुल्विस्संति वा.

५. प्र०—जइ णं मंते ! चमरस्स असुरिंदस्स, असुररण्णो सामा-णियदेवा एमहिड्विया, जाव-एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए, चम-रस्स णं मंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो तायत्तीसया देवा केमहिड्विया ?

५. उ०—तायत्तीसया जहा सामाणिया तहा णेयव्वा. लोयपाला तहेव, णवरं-संखेजा दीव-समुद्दा माणियव्वा. (बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं, देवीहिं य आइने, जाव-विकुव्विस्संति वा.)

 उ०—हे गौतम! असुरेंद्र, असुरराज चमरना सामानिक देवो मोटी ऋदिवाळा छे अने यावत्-महाप्रभाववाळा छे. तेओ त्यां पोत पोतानां भवनो उपर, पोत पोताना सामानिको उपर अने पोत पोतानी पद्दराणीओ उपर सत्ताधीशपणुं भोगवता, यावत्–दिव्य भोगोने भोगवता विहरे छे. अने एओ एवी मोटी ऋदिवाळा छे. तथा तेओनी विकुर्वणशक्ति आटळी छे. हे गौतम ! विकुर्वण करवा माटे तेओ-असुरेंद्र, असुरराज चमरना एक एक सामानिक देवो-वैक्रियसमुद्घातवडे समवहत थाय छे. अने यावत्-बीजी वार पण वैकियसमुद्घातवडे समवहत थाय छे. तथा हे गौतम ! जेम कोइ जुवान पुरुष पोताने हाथे जुवान स्त्रीना हाथने पकडे, अर्थात् परस्पर काकडा वाळेळा होवाथी जेम ते बन्ने व्यक्तिओ संलग्न जणाय छे; अथवा जेम पैडानी घरीमां आराओ संलग्न-सुसं-बद्ध-आयुक्त-होय एवी ज रीते असुरेंद्र, असुरराज चमरना सामा-निक देवो आखा जंबूद्वीपने घणा असुरकुमार देवो तथा घणी असुर-कुमार देवीओवडे आकीर्ण, व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, संस्तीर्ण, स्पृष्ट अने अवगाढावगाढ करी शके छे. वळी हे गौतम ! असुरेंद्र, असुरराज चमरनो एक एक सामानिक देव आ तिरछा छोकमां असंख्येय द्वीप समुद्रो सुधीनुं स्थळ घणा असुरकुमार देवो अने घणी असुरकुमार देवीओ वडे आकीर्ण, व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, संस्तीर्ण, स्पृष्ट अने अवगाढावगाढ करी शके छे. हे गौतम! असुरेंद्र, असुर-राज चमरना प्रत्येक सामानिकमां पूर्व प्रमाणे विकुर्वण करवानी शक्ति छे-विषय छे, विषयमात्र छे-पण तेओए संप्रातिवडे कोई बार विकुर्व्युं नथी, विकुर्वता नथी अने विकुर्वशे नहीं.

५. प्र०—हे भगवन् ! जो असुरेंद्र, असुरराज चमरना सामा-निक देवो एवी मोटी ऋद्धिवाळा छे अने यावत्—एटछं विकुर्वण करवा समर्थ छे तो हे भगवन् ! असुरेंद्र, असुरराज चमरना त्राय-स्त्रिंशक देवो केवी मोटी ऋद्धिवाळा छे ?

५. उ०—हे गौतम ! जेम सामानिको कह्या तेम त्रायिह्य स्को पण कहेवा. तथा छोकपाछो संबंधे पण एम कहेवुं. विशेष ए के, तेओ पोताना बनावेछ रूपोथी—अनेक असुरकुमार अने असुर-कुमारीओथी—संख्येय द्वीप समुद्रोने भरी शके छे. (ए तो मात्र तेनो विषय छे. पण यावत्—तेओ ए प्रमाणे विकुर्वशे नहीं.)

^{9.} मूलच्छायाः—गौतम! चमरस्य असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य सामानिका देवा महर्द्धिकाः, यावत्—महानुभागाः. ते तत्र स्वेषां स्वेषां मुवनानाम्, स्वेषां अप्रमहिषीणाम्, यावत्—दिव्यानि भोगभोग्यानि भुझाना विहरन्ति, एवं महर्द्धिकाः, यावत्—एतावच्च प्रभुविंकुविंतुम्, तद्यया नाम युविति. युवा हस्तेन हस्तं गृह्णीयात्, चकस्य वा नामी अरकायुक्ता (उत्तासिता) स्यात्, एवमेव गौतम! चमरस्य असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य एकैकः सामानिकदेवो वैकियसमुद्घातेन समवहन्ति, यावत्—द्वितीयमि वैकियसमुद्घातेन समवहन्ति, प्रभुगौतम! चमरस्य, असुरेन्द्रस्य असुरराजस्य एकैकः सामानिकदेवः केवलकल्पं जम्बूद्दीपं बहुभिरसुरकुमारैः देवैश्व, देवीभिश्व आकीर्णम्, ज्यतिकीर्णम्, संस्तीर्णम्, सृष्टम्, अवगाढावगाढं कर्तुम्, अथोत्तरं च गौतम! प्रभुचमरस्य असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य एकैकः सामानिकदेवः तिर्यगसंख्येयान् द्वीप-समुद्रान् बहुभिरसुरकुमारैः देवैश्व, देवीभिश्व आकीर्णान्, ज्यतिकीर्णान्, उपस्तीर्णान्, संसीर्णान्, सृष्टान्, अवगाढावगाढान् कर्तुम्, एष गौतम! चमरस्य असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य एकैकस्य सामानिकदेवस्य अयम् एतद्वृणे विषयः, विषयमात्रम् इदितम्, नो चैव संप्राप्ता व्यकुर्विवुर्वा, विक्वनिन्त वा, विक्वविंग्यन्ति वा, विक्वविंग

६. प्र०—जई णं भंते ! चमरस्स असुरिद्स्स, असुररण्णो लोगपाला देवा एमहिड्डीया, जाय-एवतियं च णं पभू विकुन्त्रित्तए, चमरस्स णं असुरिद्स्स, असुररण्णो अग्गमहिसीओ देवीओ केम-हिड्डीयाओ, जाव-केवइयं च णं पभू विकुन्तित्तए?

६. उ०—गोयमा! चमरस्त णं असुरिंदस्त, असुररण्णो अग्गम-हिसीओ महिड्डीयाउ, जान—महाणुभागाओ, ताओ णं तत्थ साणं साणं मनणाणं, साणं साणं सामाणियसाहस्तीणं, साणं साणं महत्त-रियाणं, साणं साणं परिसाणं, जान—एमहिड्डीयाओ; अण्णं जहा लोगपालाणं अपरिसेसं.

७. प्र०—सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति. भगवं दोचे गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ. जेणेव तचे गोयमे वायुभूती अण-गारे, तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छिता, तचं गोयमं वायुभूतिं अणगारं एवं वदासिः—

एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिंदे, असुरराया एवं
महिड्डीए, तं चेव एवं सव्वं अपृद्ववागरणं णेयव्वं अपिरसेसियं
जाव—अग्गमिहसीणं जाव—वत्तव्वया सम्मत्ता. तेणं से तचे गोयमे
वायुभूती अणगारे दोचस्स गोयमस्स अग्गिभूतिस्स अणगारस्स
एवमाइक्लमाणस्स, भासमाणस्स, पण्णवेमाणस्स, परूवेमाणस्स एयमहं नो सहहइ, नो पित्तयइ, नो रोएइ; एयमइं असहहमाणे,
अपित्रयमाणे, अरोएमाणे, उद्घाए उद्देह, उद्देहत्ता जेणेव समणे
भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, जाव—पज्जुवासमाणे एवं वयासी:—
एवं खलु भंते ! मम दोचे गोयमे अग्गिभूई अणगारे ममं एवमाइक्लइ, भासइ, पण्णवेइ, परूवेइ— एवं खलु गोयमा ! चमरे
असुरिंदे, असुरराया महिड्डीए, जाव—महाणुमागे, से णं तत्थ
चोत्तीसाए भवणावाससयसहस्साणं, एवं तं चेव सव्वं अपिरसेसं
भाणियव्वं, जाव—अग्गमिह्नशीणं वत्तव्वया सम्मत्ता, से कहमेयं
मंते ! एवं ?

ं ६. प्र०—हे भगवन् ! जो असुरेंद्र, असुरराज चमरना छोक-पाछ देवो एवी मोटी ऋद्विवाळा छे अने यावत्—तेओ एटछुं विकुर्वण् करी शके छे, तो असुरेंद्र, असुरराज चमरनी पट्टराणी देवीओ केवी मोटी ऋद्विवाळीओ छे अने तेओ केटछुं विकुर्वण करे छे?

६. उ०—हे गौतम! असुरेंद्र, असुरराज चमरनी पट्टराणी देवीओ मोटी ऋष्ट्रिवाळीओ छे अने यावत्—मोटा प्रभाववाळीओ छे. तेओ त्यां पोत पोताना भवनो उपर, पोत पोताना हजार सामानिक देवो उपर, पोत पोतानी मित्ररूप महत्तरिका देवीओ उपर अने पोत पोतानी समितिनुं स्वामिपणुं भोगवती रहे छे यावत्—ते पट्टराणीओ एवी मोटी ऋदिवाळीओ छे. ते संबंधनी बीजी बधी हकी-कत छोकपाछोनी पेठे कहेवी.

- ७. प्र०-हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे. एम कही द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगारे श्रमण भग-वंत महावीरने वांदी, नमी जे तरफ तृतीय गौतम वायुभूति अनगार हता ते तरफ जवानुं कर्युं अने त्यां जइने ते अग्निभूति अन-गारे वायुभूति अनगारने आ प्रमाणे कहुं के:-हे गौतम! ए प्रमाणे निश्चित छे के, असुरेंद्र असुरराज चमर, एवी मोटी ऋदिवाळो छे, इत्यादि बधुं चमरथी मांडीने तेनी पद्दराणीओ सुधीनुं अपृष्ट व्याकरण (अणपूछये उत्तर) रूप वृत्तांत अहीं कहेवुं. त्यार पछी अग्निभूति अनगारे पूर्व प्रमाणे कहेली, भाषेली, जणावेली अने प्ररूपेली ए वातमां ते तृतीय गौतम वायुभूति अन-गारने श्रद्धा बेसती नथी, विश्वास आवतो नथी अने ए वात तेओने रुचती नथी. हवे ए वातमां अश्रद्धा करता, अविश्वास आणता अने ए वात तरफ अणगमावाळा ते तृतीय गौतम वायु-भूति अनगार पोताना आसनधी उठी-उभा थइ-श्रमण भगवंत महावीर तरफ गया अने त्यां जइ तेओनी पर्श्वपासना करता आ रीते बोल्या के:-हे भगवन् ! द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगारे मने सामान्य प्रकारे कहां, विशेष प्रकारे कहां, जणाव्युं अने प्ररूप्युं के,-" असुरेंद्र, असुरराज चमर एवी मोटी ऋदिवाळी छे अने यावत्-एवा मोटा प्रभाववाळो छे के, ते त्यां चोत्रीश लाख भवना-वासो उपर स्वामिपणुं भोगने छे, इत्यादि बधुं पदृराणीओ सुधीनुं वृत्तांत अहीं पूरेपूरं कहेवुं. " तो हे भगवन् ! ते ए ते ज प्रमाणे केवी रीते छे ?

^{9.} मूलच्छायाः-यदि भगवन् ! चमरस्य अधुरेन्द्रस्य, अधुरराजस्य छोकपालाः देवा एवंमहर्द्धिकाः, यावत्-एतावच प्रभुविक्वितिन्न्, वमरस्य अधुरेन्द्रस्य, अधुरराजस्य अप्रमहिष्यो देन्यः किंमहर्द्धिकाः, यावत्-कियच प्रभुविक्वितिन् । गौतम ! चमरस्य अधुरेन्द्रस्य, अधुरराजस्य अप्रमहिष्यो महर्द्धिकाः,
सावत्-महानुभागाः, तास्तत्र खासां खासां भुवनानाम्, स्वासां स्वासां सामानिकसाहसीणाम्, स्वासां स्वासां महत्तरिकाणाम्, स्वासां स्वासां पर्वदाम्;
यावत्-एवंमहर्द्धिकाः, अन्यद् यथा लोकपालानाम् अपरिशेषम् . तदेवं भगवन् ! इति. भगवान् द्वितीयो गौतमः अमणं भगवन्तं महावीरं
नृन्दते, नमस्यति. येनैव तृतीयो गौतमो वायुभूतिरनगारस्तेनैव उपागच्छति, तेनैव उपागम्य तृतीयं गौतमं वायुभूतिरनगारम् एवम् अवादीतः-एवं खलु
नातम ! चमरः अधुरेन्द्रः, अधुरराजः एवंमहर्धिकः, तचैव एवं सर्वम् अपृष्टव्याकरणं ज्ञातन्यम् अपरिशेषं यावत्-अप्रमहिषीणां यावत्-वक्तव्यता समाप्ताः,
ततः स तृतीयो गौतमो वायुभृतिरनगारो द्वितीयस्य गौतमस्य अग्निभूतेः अनगारस्य एवम् आख्यातः, भाषमाणस्य, प्रज्ञापयतः, प्ररूपयत एतद्रथं नो
अद्धाति, नो प्रत्येति, नो रोचयति, एतद्रथम् अश्रद्दश्च, अप्रत्ययन्, अरोचयन्, उत्थया उत्तिष्ठति, उत्थय येनैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तेनैव
उपागच्छति, यावत्-पर्शुवासीनः एवम् अवादीतः—एवं खलु भगवन् ! मम द्वितीयो गौतमोऽग्निभूतिः अनगारो माम् एवम् आख्याति, भाषते, प्रज्ञापयति.
प्रस्त्यति-एवं खलु गौतम ! चमरः अधुरेन्द्रः, अधुरराजो महर्धिकः, यावत्—महानुभागः, स तत्र चतुक्तिशद्भवनावासशतसहस्राणाम्, एवं तचैव सर्वम्,
अपरिशेषं भणितन्त्यम्, यावत्—अप्रमहिषीणां वक्तव्यता समाप्ता, तत् कथमेतद् भगवन् ! एवम् १:-अनु०

७. उ०—गोर्यमादी !, समणे भगवं महावीरे तचं गोयमं वायुमूतिं अणगारं एवं वयासी:—जं णं गोयमा ! दोचे गोयमे अग्गि-मूई अणगारे तव एवमाइक्खइ, भासइ, पण्णवेइ, परूवेइ—''एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिंदे, असुरराया महिडूीए, एवं तं चेव सक्वं जाव—अग्गमहिसीणं वत्तव्यया सम्मत्ता'' सच्चे णं एसमहे, अहं पि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि, भासामि, पण्णवेमि, परूवेमि—एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिंदे, असुरराया, जाव—महिडूीए, सो चेव बीतिओ गमो भाणियव्वो, जाव—अग्गमहिसीओ, सच्चे णं एसमहे.

सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति तचे गोयमे वायुभूई \्यागारे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, जेणेव दोचे गोयमे आगि-भूई अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छइत्ता दोचं गोयमं अगि-भूइं अणगारं वंदइ, नमंसइ, एयमद्वं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेइ. ७. उ०—पछी 'हे गौतम! वगरे,' एम आमंत्री श्रमण भगवंत महावीरे ते त्रीजा गौतम वायुमूति अनगारने आ प्रमाणे कह्युं के:—हे गौतम! ते द्वितीय गौतम अग्निमूति अनगारे तने जे सामान्य प्रकारे कह्युं, विशेष प्रकारे कह्युं, जणाव्युं अने प्ररूप्युं के,—"हे गौतम! असुरेंद्र, असुरराज चमर मोटी ऋदिवाळो छे, इत्यादि वधुं तेनी पहराणीओ सुधीनुं वृत्तांत अहीं कहेन्नुं." (हे गौतम!) ए वात साची छे अने हे गौतम! हुं पण एम कहुं छुं, भाषु छुं, जणावुं छुं अने प्ररूपुं छुं के असुरेंद्र, असुरराज चमर मोटी ऋदिवाळो छे इत्यादि ते ज रीते यावत्—पहराणीओ सुधीनी हकीकतवाळो बीजो गम कहेवो. अने ए वात साची छे.

हे मगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे एम कही तृतीय गौतम वायुभूति अनगार श्रमण भगवंत महावीरने वांदे छे, नमे छे अने पछी जे तरफ बीजा गौतम अग्निभूति अनगार छे त्यां आवी, तेओने वांदी, नभी, 'तेओनी वातने न मानी ' ते माटे तेओनी पासे वारंवार विनयपूर्वक सारी रीते क्षमा मांगे छे.

- १. व्यास्यातं द्वितीयशतम्, अय तृतीयशतं व्याख्यायते, अस्य चायमिमसंबन्धः—अनन्तरशतेऽस्तिकाया उक्ताः, इह तु तद्दिशेषभूतस्य जीवास्तिकायस्य विविधधमी उच्यन्ते इत्येवं संबन्धस्यास्य तृतीयशतस्योद्देशकार्थसंप्रहायेयं गाथा—'केरिस' इत्यादि. तत्र 'केरिस
 विजव्यण' त्ति कीदशी चमरस्य विकुर्वणाशक्तिः ! इत्यादि प्रश्ननिर्वचनार्थः प्रथम उद्देशकः. 'चमर' ति चमरोत्पाताऽभिधानार्थो द्वितीयः.
 'किरिय' ति कायिक्यादि क्रियाद्यधीभिधानार्थः तृतीयः. 'जाण' ति यानं देवेन वैक्रियं कृतं जानाति साधुरित्याद्यधीनर्णयार्थश्चतुर्थः.
 'इिय' ति साधुर्बाह्यान् पुद्रलान् पर्यादाय प्रभुः स्थादिरूपाणि वैक्रियाणि कर्तुमित्याद्यर्थनिर्णयार्थः पञ्चमः. 'नगर' ति वाराणस्यां कृतसमुद्धातोऽनगारो राजगृहे रूपाणि जानातीत्याद्यर्थनिश्चयपरः षष्ठः. 'पालय' ति सोमादिलोकपालचतुष्टयस्करूपाभिधायकः सप्तमः. 'अहिवइ' ति अमुरादीनां कित देवा अधिपतयः ! इत्याद्यर्थपरोऽष्टमः. 'इंदिय' ति इन्द्रियविषयाभिधानार्थो नवमः. 'परिस' ति चमरपरिषदाभिधानार्थो दशमः. इति.
- १. बीजा शतकनी व्याख्या करी. हवे त्रिजा शतकनी व्याख्यानो प्रारंभ थाय छे. बीजा शतक अने त्रिजा शतकनो परस्पर संबंध आ रीते छे:—आगळना शतकमां सामान्य अस्तिकायो संबंध हकीकत कही छे अने हवे विशेष अस्तिकायो संबंध हकीकत जणावाय ए स्थानीचित छे, माटे आ शतकमां अस्तिकायोमां विशेषस्य जीवास्तिकायना विविध धर्मों कहेवाना छे. ए प्रमाणे बीजा अने त्रिजा शतकनो संकठनारूप संबंध छे. त्रिजा शतकना दशे उद्देशकमां कया क्या विषयो संबंध निरूपण थवानुं छे ते वातने सूचववा सारु आ संग्रह गाथा छे:—['केरिस' इत्यादि.] तेमां ['केरिस विउव्यण'ति] चमर नामना इंद्रमां विकुर्वणशक्ति—जूदां जूदां रूपों केरववानी शक्ति—केवी छे १ इत्यादि अस्तना निर्वचन माटे प्रथम उद्देशक छे. ['किरिस'ति] चमरनो उत्पात जणाववा बीजो उद्देशक छे. ['किरिस'ति] कायिकी (शरीरथी थती) वगेरे कियाओने जणाववा त्रिजो उद्देशक छे. ['जाण 'ति] 'देवे विकुर्वेठ यानने साधु जाणे १' इत्यादि अर्थना निर्णय सारु चोथो उद्देशक छे. ['इत्थि'ति] 'साधु बहारनां पुद्भठोंने ठइने स्त्री वंगेरेना वैकियरूपो करी शके १' इत्यादि अर्थना निर्णय सारु पांचमो उद्देशक छे. ['नगर 'ति] जेण वाराणसी (बनारस) शहरमां समुद्धात कर्यों छे एवो साधु, राजगृह नगरमां रहेठां स्थोंने जाणे छे १ इत्यादि वातना निश्रय माटे छट्टो उद्देशक छे. ['पाठय 'ति] सोम वगेरे चार छोक-पाठोना स्वस्थन कहेनारो सातमो उद्देशक छे. ['अहिवह 'ति] 'असुर वगेरेना इंद्रो केटला छे १' ए वातने जणाववा माटे आठमो उद्देशक छे. ['इंदिय'ति] इंद्रियोना विषयो संबंधे नवमो उद्देशक छे अने ['परिस'ति] चमरनी समा संबंधी हकीकत जणाववा दशमो उद्देशक छे.
- २. तत्र कीदशी विकुर्वणा ? इस्राद्यर्थस्य प्रथमोदेशकस्य इदं आदि सूत्रम्—'ते णं काले णं ' इस्रादि सुगमम्. नवरम्—' केमहि-डूीए ' ति केन रूपेण महर्धिकः, किरूपा वा महर्धिरस्थेति किंमहर्धिकः, "कियन्महर्धिकः " इस्रन्ये. 'सामाणियसाहस्सीणं ' ति

१. मूळ्च्छायाः गौतमादे ! श्रमणो भगवान् महावीरस्तृतीयं गौतमं वायुभूतिम् अनगारम् एवम् अवादीतः -यद् गौतम !, द्वितीयो गौतमः अग्निभूतिः अनगारः त्वाम् एवम् आख्याति, भाषते, प्रज्ञापयति, प्ररूपयति - "एवं खळ गौतम ! चमरः अग्रुरेन्दः, अग्रुरराजो महर्दिकः, एवं तचैव सर्व यावत् - अप्रमहिषीणां वक्तव्यता समाप्ता" सलः एषोऽर्थः, अहमि गौतम ! एवम् आख्यामि, भाषे, प्रज्ञापयामि, प्ररूपयामि एवं खळ गौतम ! चमरः अग्रुरेन्दः, अग्रुरराजो यावत् - महर्दिकः, स एव द्वितीयो गमो भिणतव्यः, यावत् - अप्रमहिष्यः, सलः एषोऽर्थः तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इति तृतीयो गौतमो वायुभूतिः अनगारः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति येनैव द्वितीयो गौतमोऽग्निभूतिः अनगारः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति येनैव द्वितीयो गौतमो अग्निभूतिः अनगारं वन्दते, नमस्यति एतदर्थं सम्यग् विनयेन भूयो भूयः क्षमयतेः - अनु ।

समानया इन्द्रतुल्यया ऋद्या चरन्ति इति सामानिकाः. 'तायत्तीसाएं ति त्रयिविशतः, 'तायत्तीसगाणं' ति मन्त्रिकल्पानाम्, यावत्करणाद् इदं दृश्यम्:—''चैंउण्हं लोगपालाणं, पंचण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियान ्हिवईणं, चेउण्हं चउसद्वीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अन्नेसिं च वहूणं चमरचंचारायहाणिवत्थव्वाणं देवाणं य, देवीणं य आहेवचं, पोरेवचं, सामित्तं, भट्टितं, आणा-ईसर-सेणावचं कारेमाणे, पालेमाणे महयाहयनट्ट-गीअ-वाइय-र्तती-तल-ताल-तुडिअ-धणमुइंगपडुप्प-वाइयरवेणं दिव्याइं भोगभोगाइं मुंबेमाणे. "ते तत्र आधिपत्यम्-अधिपतिकर्म, पुरोवर्तित्वम्-अप्रगामित्वम्, स्वामित्वम्-स्वस्वामिभावम्, अर्तृत्वम्-पोषकत्वम्, आङ्गश्चरस्य आज्ञाप्रधानस्य सतो यत्सेनापत्यं तत्त्वधा तत्कारयन्, अन्यैः पालयन् स्वयमितिः, तथा महता रवेणेति योगः. 'आहय' त्ति—''आख्यानकप्रतिबद्धानि '' इति वृद्धाः. अथवा 'अहय' त्ति—अहतानि-अव्याहतानि नाट्य-गीत-वादितानि, तथा तन्त्री-चीणा, तलतालाः-हस्ततालाः, तला वा हस्ताः, तालाः-कंसिकाः; 'तुडय'त्ति-शेषतूर्याणि, तथा घनाकारो ध्वनिसाधर्माद् यो मृदङ्गोः-मर्दलः पद्भना दक्षपुरुषेण प्रवादितः इति, एतेषां द्वन्द्वः, अत एषां यो रवः स तथा तेन. 'भोगभोगाइं' ति—भोगार्हान् शब्दादीन् 'एवं महिड्डीए' ति एवं महर्द्धिक इव महर्द्धिक:, "इयन्महर्द्धिक:" इखन्ये. 'से जहां नामए' त्ति इत्यादि. यथा युवर्ति युवा हस्तेन हस्ते गृह्वाति—कामवशाद् गाढतरप्रहणतो निरन्तरहस्ताङ्गुलितयेखर्थः. दष्टान्तान्तरमाहः—'चक्कस्त' इत्यादि. चक्रस्य वा नाभिः, किंभूता ? 'अरगाउत्त' ति अरकैरायुक्ता-अभिविधिनाऽन्विता अरकायुक्ता, 'सिय' ति स्यात्-भवेत् , अथवा अरका उत्तासिता-आस्फालिता यस्यां न्सा अरकोत्तासिता. 'एवमेव' ति निरन्तरतयेखर्थः, प्रभुर्जम्बूद्वीपं बहुभिर्देवादिभिराकीर्णं कर्तुमिति योगः, बृद्धैस्तु व्याख्यातम्:-"यथा यात्रा-दिषु युवतिर्यूनो हस्तेन लग्ना प्रतिबद्धा गच्छति बहुलोकप्रचिते देशे, एवं यानि रूपाणि विकुर्वितानि तानि एकस्मिन् कर्तरि प्रतिबद्धानि, यथा वा चक्रस्य नाभिरेका बहुभिररकैः प्रतिबद्धा घना निश्छिदा, एवमात्मश्ररीरप्रतिबद्धैरसुरदेवैर्देवीभिश्च पूरयेदिति. 'वेजिव्वयसमुन्घाएणं' ति वैक्रियकरणाय प्रयत्नविशेषेण, 'समोहण्णइ' ति समुपहन्यते—समुपहतो भवति, समुपहन्ति वा प्रदेशान् विक्षिपतीतिः, 'संखेजाइं' इत्यादि. तत्त्वरूपमेवाहः—दण्ड इव दण्डः—ऊर्ध्वाऽधः आयतः शरीरबाह्ल्यो जीवप्रदेशः—कर्मपुद्गलसमूहः, तत्र च विविधपुद्गलान् आ-्दत्ते इति दर्शयन्नाह, तद्यथा:–रत्नानां कर्केतनादीनाम् , इह च यद्यपि रत्नादिपुद्गला औदारिकाः, वैक्रियसमुद्घाते च वैक्रिया एव प्राह्या भवन्ति, तथापीह तेषां रत्नादिपुद्गलानामिव सारताप्रतिपादनाय रत्नानामित्याचुक्तम् , तच 'रत्नानामिव' इत्यादि व्याख्येयम्. अन्ये त्वाहु:— " औदारिका अपि ते गृंहीताः सन्तो वैकियतया परिणमन्ति " इति.

२. हवं 'विकुर्वणा शक्ति केवी छे ?' ए वातने स्चवनार प्रथम उद्देशकर्तुं आ स्च छे:-['ते णं काले णं' इत्यादि.] ए बधु सुनम छे. विशेष ए के, कि के हिंदी ए'ति] ते चमर, केवे कि भोटी ऋदिवालों छे, अथवा ते चमरनी केवी मोटी ऋदि छे ? "ते चमर, केवें मोटो ऋदिवालों छे १" ए प्रमाणे वीजाओं अर्थ करे छे. ['सामाणिअसाहस्सीणं'ति] सामानिक एटले सरखाइवाला-इंद्रनी सरखी ऋदिवले चरनार (रहेनार) ते सामानिक तेओ उपर, ['तायत्तीसाए'ति] तेत्रीस ['तायत्तीसगाणं'ति] त्रायि वायां प्रहर्माणीओं उपर, त्रण सभाओं उपर, सात सेनाओं उपर, सात सेनाथिपतिओं उपर, वे लाख, छप्पन हजार (२, ५६०००) आत्मरक्षक देवो उपर अने बीजा घणा चमरचंचामां रहेनारा देवो तथा देवीओं उपर अधिपतिपणुं, पुरपतिपणुं, स्तामिपणुं, भर्तृपणुं-पालकपणुं अने आज्ञानी प्रधानतापणे सेनाधिपतिपणुं करावतो, बीजा द्वारा पोते प्रधावतो तथां मोटा अवाजपूर्वक अहत—अखंड—निरंतर थतां नाटको, गीतो तथा वाजांओंना शब्दो वहे, वीणा, तालोटा, हाथो, कांसिओं अने बीजां अनेक चातिनां वाजांओंना शब्दोवें तथा डाह्या पुरुष द्वारा वगाडाता अने मेच जेवा गभीर मृदंगना श्रुद्वलें दिव्य—मोगववा योग्य शब्द वगेरे भोगोने भोगवतो त इंद्र विहरे छे. ['एवं महिङ्कीए'ति] एटले मोटा ऋदिवालानी जेवो. बीजा पुरुषोए आ शब्दनो "एटलो मोटो ऋदिवालो" ए प्रमाणे अर्थ कर्यो छे. ['से जहा नामए' इत्यादि.] जेम कोई एक जुवान पुरुष, कामने वश्वती रहीने जुवान खीना हाथने पोताना हाथवें जोरथी कृतिकावाल्या पूर्वक पकडे. बीजुं उदाहरण कहे छे:-['चक्रस्स' इत्यादि.] पेहानी धरी, केवी धरी ? तो कहे छे के, ['अरगाउत्त'ति] जे धरी क्षी बाजुए आराओथी युक्त ['सिय'ति] होय. अथवा ने धरीमां आराओं अफळाएली होय ते. ['एवामेव'ति] एवी रीते ज निरंतरपणे जंबू-क्रीमें व्यादिकवंड आर्कीण (भरी देवा) करवा ते समर्थ छे, एम संबंध करवी. वृद्ध पुरुषोए तो आ प्रमाणे व्याख्या करी छे:-"लेम यात्रा बंगरेनी धराम्यमं ज्यां छणां लोकोनो मेळो जानेलो होय एवा भागमां जुवान पुरुष हिथे वलगेली जुवान बाह (श्री) गति करे छे:-"लेम यात्रा बंगरेनी धराम्यमं ज्यां छणां लोकोनो मेळो जानेलो होय एवा भागमां जुवान पुरुष वलगेली जुवान बाह (श्री) गति करे छे:-"लेम यात्रा बंगरेनी धराम्यमं ज्यां छणां लोकोनो मेळो जानेलो होय एवा भागमां जुवान पुरुष वलगेली जुवान वाह (श्री) गति करे छे:-"लेम यात्रा जुवान पुरुष विवालिक व्याहित्री विवालिक विवालिक विवालिक विवालि

चमरेंद्रनी

दिव्य-भोगः अन्यमतः विकुर्वणाना

बृद्धो.

१. प्र० छायाः चतुर्णं लोकपाळानाम्, पञ्चानाम् अग्रमिह्वीणां सपरिवाराणाम्, तिस्णां पर्षदाम्, सप्तानाम् अनीकानाम्, सप्तानाम् अनी-काऽधिपतीनाम्, चतस्णां चतुष्पर्धनाम् आत्मरक्षकदेवसहस्रीणाम्, अन्येषां च बहूनां चमरचञ्चाराजधानीवास्तव्यानां देवानां च, देवीनां चाधिपत्यम्, विरायसम्, खामिलम्, भर्तृलम्, आह्रै-श्वर-सेनापत्यं कारयम्, पाळयम् महताहत-नाव्य-गीत-वादित्र-तन्त्री-तळ-ताळ-त्रुटित-धनमृद्रप्तपटुप्रवादितरवेण रिव्यानि भोगभोगानि भुज्ञान इतिः—अन०

^{9.} अहीं श्रीटीकाकारे 'यावत्' शब्दथी जणावेलो 'पोरेवचं' सुधीनो वधो पाठ "प्रज्ञापना-" (उपा० ४ ना क० आ० पृ० १०३) मां असुरराज चमरेंद्रना अधिकारमां छे, ते अहीं चमरेंद्रना (भ० खं० २, पृ० १३ ना) टिप्पणमां उद्धरेल छे. पण टिप्पणमांनो 'जाव' शब्दथी अध्याहार्य पाठ बन्ने इंद्रो-चमर, बलि-ना सह वर्णनमां आ स्थळे (प्रज्ञा० क० आ० पृ० १००-१) छे:--अनु०

^{ी,} रुद्ध पुरुषी 'अहत 'ने वदले 'आहय'-'आल्यात' एवी अर्थ करे छे अने आल्यात एटले जेमां वार्ताओ पण वाली रही छे एवां नाटको कोरे:-श्रीअमय॰

ते सी, जुनान पुरुषने हाथे वळगेळी पण जूदी देखाय छे तेम जे रूपो ते देवे विकुर्वेळां छे ते रूपो एक मूळ पुरुष (रूपोने विकुर्वनार पुरुष) मां वळगेळां पण जूदां देखाय छे; अथवा जेम घणी आराओथी प्रतिबद्ध एवी पैडानी घरी धन-जरा पण पोळाण विनानी-काणां विनानी-जणाय छे तेम (ते देव,) पोताना शरीर साथे प्रतिबद्ध अनेक असुरदेव अने असुरदेवीओ वडे जंब्द्धीपने भरी दे छे. " ['वेडिव्वयंससुन्धाएणं 'ति] वैकिय रूपो करवा माटे एक' जातनो प्रयत्न ते वैकियसमुद्धात-ते वडे ['समोहन्नइ 'ति] समुपहत थाय छे, अथवा प्रदेशोने फेंके छे. तेनुं ज सहूप कहे छे:-['संखेजाइं' इत्यादि.] जे दंडनी जेवो होय ते 'दंड' कहेवाय उंच, नीचे-ठांबो अने शरीरनी जेटली जाडाइवाळो जीवप्रदेशोनो तथा कर्म-पुद्रलोनो समूह ते दंड. ते वखते विविध-जूदी जूदी जातिनां-पुद्रलोनुं ग्रहण करे छे. ते वातने दर्शावतां कहे छे के, कर्केतन वगेरे रत्नोनां पुद्रलोनुं ग्रहण करे छे. शं०-रत्न वगेरेनां पुद्रलो औदारिक होय छे. अने वैकियसमुद्धातमां तो ते ज पुद्रलो काम आवे छे जे पुद्रलो वैकिय होय छे. ज्यारे एम छे त्यारे अहीं रत्नादि पुद्रलोनुं ग्रहण शा माटे कर्यु ? समा०-जे पुद्रलो वैकियसमुद्धातमां लेवाय छे ते पुद्रलो रत्नो जेवां सारवाळां छे ए बातने जणाववां अहीं रत्न वगेरेनुं ग्रहण कर्यु छे. माटे 'रत्न पुद्रलो'नो अर्थ 'रत्ननी जेवां पुद्रलो' करवो अने एम करवाधी कांइ हरकत नथी. बीजाओ तो कहे छे के,—''ज्यारे वैकियसमुद्धात द्वारा औदारिक पुद्रलोनुं ग्रहण थाय छे त्यारे ते औदारिक पुद्रलो पण वैकिय पुद्दलो बनी जाय छे.''

३. यावत् करणादिदं दरयमः—"वर्राणं, वेरालियाणं, लोहियक्साणं, मसारगल्लाणं, हंसगब्भाणं, पुलयाणं, सोगंधियाणं, जोती-रसाणं, अंकाणं, अंजणाणं, रयणाणं; जायरूवाणं, अंजणपुलयाणं, फिलहाणं" ति. किम् १ अत आहः—'अहाबायरे' ति यथाबादरान् असारान् पुद्गलान् परिशातयति दण्डिनिसर्गगृहीतान्, यचोक्तं प्रज्ञापनाटीकायामः—''यथास्थूलान् वैकियशरीरनामकर्मपुद्गलान् प्राग्वद्वान् शातयति" इति, तत् समुद्घातशब्दसमर्थनार्थमनाभोगिकं वैकियशरीरकर्मनिर्जरणमाश्रिस्य इति. 'अहासुहुमे' ति यथासूक्ष्मान् सारान् 'परियाएइ' ति पर्यादत्ते—दण्डिनसर्गगृहीतान् सामस्थेनादत्ते इसर्थः. 'दोचं पि' ति द्वितीयमिप वारं समुद्घातं करोति चिकीिर्पतरूपनिर्माणार्थम्, ततस्थ 'पभु' ति समर्थः, 'केवलकणं' ति केवलः—परिपूर्णः, कल्पत इति कल्पः—स्कार्यकरणसामध्योपेतः, ततः कर्मधारयः, अथवा केवलक्तरूपः—केवलज्ञानसदृशः परिपूर्णतासाधर्म्यात्, संपूर्णपर्यायो वा केवलशब्द इति. 'आइवं' इत्यादय एकार्था असन्तव्यापिद्रश्नायोक्ताःः 'अदुत्तरं च णं' ति अथापरं च, इदं च सामर्घ्यातिशयवर्णनम्, 'विसए' ति गोचरो वैकियकरणशक्तेः, अयं च तत्करणयुक्तोऽपि स्थात्, इस्रत् आहः—'विसयमेत्ते' ति विषय एव विषयमात्रं कियाशृन्यम् 'बुङ्गए' ति उक्तम्, एतदेवाहः—'संपत्तीए' ति यथोक्तार्थसंपादनेन 'विकुव्विसु वा' विकुर्वितवान् वा; विकुर्विति वा, विकुर्विश्वति वा, 'विकुर्व' इस्रयं धातुः सामियकोऽस्ति, 'विकुर्वणा' इस्रादिप्रयोगदर्शनाद् इति. 'नवरं संखेज्ञा दीव-समुह' ति लोकपाल्यः. 'सामानिकेष्ट्रयोऽल्यतर्धिकत्वेनाल्यतरस्याद् वैकियकरणल्ङ्घोरिति. 'अपुष्ट्रवगरणं' ति अपृष्टे सित प्रतिपादनम्,

३. अहीं 'यावत्' शब्द मूक्यों छे माटे आ प्रमाणे जाणवुं:—'वर्जनां, वैद्धर्यनां, लोहिताक्षनां, मसारगञ्जनां, हंसगर्भनां, पुलकनां, सौगंधि-कनां, ज्योतिरसनां, अंकोनां, अंजनोनां, रत्नोनां, जातरूपोनां, अंजनपुलकोनां अने स्कटिकोनां 'एथी शुं ? तो कहे छे के, ['अहाबायरे 'ति] दंडना निसर्ग द्वारा लीधेलां असार पुद्रलोने खंखेरी नाखे छे. शं०—आ ठेकाणे एम कह्युं छे के, 'दंडना निसर्ग द्वारा लीधेलां असार पुद्रलोने खंखेरी नाखे छे अने प्रज्ञापना सूत्रनी टीकामां कह्युं छे के, 'पूर्व बांधेलां वैकियशरीरनामकर्मनां यथास्थूल पुद्रलोने खंखेरी नाखे छे अर्थात्

^{9. &#}x27;बैकियसमुद्धात'नी ओळख माटे उपयोगी रीति आ छे:—नैरियको, देवो, पवन, केटलाक मनुष्यो अने पंचेंद्रिय तिर्यंचो पोताना शरीरने दंकुं, लांबुं, जांबुं, पातळुं, उंचुं, नींचुं अने सुंदर करवाने जे किया करे छे तेने जैन परिभाषा 'विकिया' कहे छे, अने ते वढे तैयार यता शरीरने 'बैकिय-शरीर' कहे छे. आत्माए पोताना आत्मप्रदेशोने कार्य विशेष माटे शरीरथी बहार प्रसारी पाछां संकोचवां तेनुं नाम ए शैलीए 'समुद्धात' छे. आवा समुद्धातीनी गणना श्रीसमदायांगमां आ प्रमाणे छे:—

[&]quot;सत्त समुग्धाया पण्णता, तं जहाः—वेयणासमुग्धाए, कसायसमुग्धाए, समुद्धातो सात कह्या छे, ते आ प्रमाणेः—वेदनासमुद्धात, कषायमारणांतियसमुग्धाए, वेउविवयसमुग्धाए, तेयससमुग्धाए, आहारअसमुग्धाए, समुद्धात, मारणांतिकसमुद्धात, 'वैक्तियसमुद्धात,' तैजससमुद्धात,
केविलसमुग्धाएः—" (क० आ० पृ० १९).
आ सात समुद्धातोगांगो चोथो समुद्धात ज्यारे ज्नां अने स्थूल पुद्गलोबाळा शरीरने, नवां अने सूक्ष्म पुद्गलो युक्त करवुं होय लारे योजवामां आवे छे.
ओमः—पक्षी पोतानी उपर जामेली धुळीने तूर करवा पांखो पहोळी करी धुळीने खंखेरी पाछी संकोचे छे, तेम उक्त आत्माओ पण कहेल कारण माटे
आत्मप्रदेशोनो जाडाइ अने पहोळाइमां देह जेवो अने लंबाइमां असंख्येय योजन लंबाणवाळो दण्डाकार दंड रचे छे. आ स्थिति अंतर्मुहूर्त मात्र होय छे,
अने तेटला हंका समयमां पण आत्मा पोताने लागेलां पुद्गलोमां इष्टपणे फेरफार करे छे. आ समुद्धातनी उत्पत्ति वैकियशरीरनामकर्मथी थाय छे. आ
संबंधेना विशेष झान माटे (भ० ख० १, पृ० २६२ तुं १ अंकवालुं गुजराती टिप्पण गवेषतुं.) अने तेथी पण वधारे ज्ञानार्थाओए तेमां जणावेलां स्थळो जोवां:—अनु०

१. प्र॰ छायाः —वज्राणाम्, वैद्धर्याणाम्, लोहिताक्षाणाम्, मसारगञ्जानाम्, हंसगर्माणाम्, पुलकानाम्, सौगन्धिकानाम्, ज्योतीरसानाम्, अङ्गा-नाम्, अञ्जनानाम्, रत्नानाम्, जातरूपाणाम्, अञ्जनपुलकानाम्, स्फटिकानाम् इतिः—अतुः

१. आ पाठने मळतो पाठ श्रीरायपसेणी-राजप्रश्लीय-नामना बीजा उपांगमां सूर्याम देवना अधिकारमां (क॰ आ॰ पृ॰ २९ मां) छे. २. श्रीप्रह्मा-पना-पत्रवणाजी-उपांगनो टीका गत पाठ अने तेनो अर्थ आ प्रमाणे छे:—अनु॰

इसे ठेकाण कहेलां खंखेरी नाखवानां पुद्रलो जूदां जूदां छे तथी परस्पर विरुद्धता केम न आवे ? समा०-ए वसे वातो जूदी जूदी छे माटे कोइ पण जातिनी विरुद्धतानो अवकाश नथी. कारण के प्रज्ञापना सूत्रनी टीकामां जे हकीकत कही छे ते, समुद्धात शब्दनं समर्थन करवा अनाभोगिक (अजा-णतां थनारा) वैक्रियशरीरनामकर्मनां पुद्रलोना निर्जरणने आश्रीने कही छे. ['अहासुहुमे 'त्ति] सारवाळां पुद्रलोनुं ['परियाएइ 'ति] ग्रहण करे छे; अर्थात् दंडना निसर्ग द्वारा ग्रहण करेल पुद्रलोने सर्व प्रकारे ले छे. ['दोचं पि'ति] इच्छेल रूपोने बनाववा सारु बीजी वार पण समुद्धात करे छे. अने तेथी तं, ['पमु'ति] अनेक रूपोने बनाववा समर्थ छे. ['केवलकणं'ति] केवल-पूरेपूरो, कल्प-पोतानुं कार्य करवाने शक्तिमान्; केवलकल्य-पोतानुं कार्य करवाने पूरेपूरो शक्तिमान्; अथवा केवलकल्प-केवलज्ञाननी जेवो संपूर्ण, अथवा केवलकल्प-संपूर्ण ['आइन्नं'] इत्यादि अनेक शब्दो सरखा अर्थवाळा छे अने अहीं 'अत्यंत भरावों ' जणाय ते माटे तेनो प्रयोग कर्यों छे. ['अदुत्तरं च णं'ति] आ वधुं जे कह्युं छे ते, सामर्थ्यना अतिशयनुं वर्णन छे-सामर्थ्यना गौरवनुं सूचक छे. ['विसए'ति] वैक्रियशक्तिनो विषय छे-बैक्रियशक्तिथी बहु बहु तो एटलां रूपो बनाबी शकाय छे. आटलुं कहेवाथी 'ते देव, एटलां वधां रूपो बनाबी शकतो पण होय' एवं जणाय माटे कहे छे के, िवसयमेत्ते 'ति '] एटलां वधां रूपो करवां ए विषयमात्र छे, अर्थात् एटलां वधां रूपो बनी शकतां नथी, पण ते किया विनानुं विषयमात्र छे, एम ['बुइए 'ति] कह्युं छे. ['संपत्तीए 'ति] पूर्वें कहेली वातने करवा वडे. ['विक्वैविंयस वा'] विक्विंणा करी, विकुर्वे छे अने विक्विंशे. [---नवरं संखेजा दीव-समुद्द 'ति] विशेष ए के, संख्येय द्वीप अने संख्येय समुद्रोने. सामानिक देवो करतां लोकपालो वगेरे ओली ऋद्विवाळा होय छे माटे तेओनी वैकिय करवानी शक्ति पण ओछी होय छे. एथी ज पूर्व प्रमाणे कह्युं छे. ['अपुटुवागरणं 'ति] जे, प्छ्या सिवाय कहेवामां आवे ते अपृष्टव्याकरण.

वैरोचनराज बलि-

८. प्र०—तए णं से तचे गोयमे वायुमूती अणगारे दोचेणं गोय-मेणं अग्गिभूइणामेणं अणगारेणं सिंदं जेणेव समणे भगवं महावीरे, जाव-पज्जवासमाणे एवं वयासीः-जइ णं भंते ! चमरे असुरिंदे, असुरराया एवं माहिङ्कीए, जाय-एवतियं च णं पम् विकुव्वित्तए, बली णं भंते ! वहरोयणिंदे, वहरोयणराया केमहिडूीए, जाव-केवइयं च णं पम् विकुवित्तए ?

८. प्र०--त्यार पछी ते त्रीजा गौतम वायुभूति अनगार, बीजा गौतम अग्निभूति नामना अनगारनी साथे ज्यां श्रमण भगवंत महावीर छे त्यां आव्या; अने त्यां तेओनी पर्युपासना करता आ प्रमाणे बोल्या के:-हे भगवन् ! जो असुरेंद्र, असुरराज चमर एवी मोटी ऋदियाळो छे अने यावत्—एटलुं विकुर्वण करी शके छे, तो हे भगवन्! वैरोचनेंद्र, वैरोचनराज बेलि, केवी मोटी ऋद्विवाळो छे, यावत्—ते केटलुं विकुर्वण करवा समर्थ छे ?

"वैक्रियसमुद्घातगतः पुनर्जावः प्रदेशान् बहिर्निष्काष्य शरीरविष्कम्भन बाह्ल्यमानम्, आयामतः संख्येययोजनप्रमाणं दण्डं निःस्जति, निस्स्ज्य च यथास्थ्लान् वैकियशरीरनामकर्मपुद्गलान् प्राग्वच्छातयति, तथा च उक्तम्:-" वेउव्वियसमुग्वाएणं समोहणइ, समोहणिता संखेळाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ, निसिरेत्ता अहाबायरे पुग्गले परिसाडेइः"--(क० आ० प्र० ७९३–९४).

"वैकिय समुद्धातने करतो जीव पुद्गलोने बहार काढी, तेनो पहोळा-इमां शरीर प्रमाणे अने लंबाइमां संख्येय योजनो प्रमाणे दंड रचे छे, रचीने वैकियशरीरनामकर्मोना स्थूल पुद्गलोनो पूर्व प्रमाणे नाश करे छे. ते प्रमाणे कह्युं छे के:-" वैकिय समुद्घातवडे समबहत थाय छे, समवहत थइने संख्येय योजनो सुधी दंडने रचे छे, रचीने यथाबादर पुद्गलोनुं परि-शाटन करे छे:-(क० आ० पृ० ७९३-९४). उपरोक्त स्थळ जेवुं श्रीस्था-नांग, अंग त्रिजानुं (क॰ आ॰ पृ॰ ४६९ नुं) ''वेउब्वियसमुग्घाए'' परनुं श्रीअभयदेवसूरिनुं अक्षरशः तेनुं विवरण ए बीजुं स्थळ छे, तेथी ते माटे

पण उक्त समाधान जाणवुः--अनु० १. आ कियापदोमां 'विकुर्व' एवो अखंड घातु छे अने ते मात्र आगममां प्रसिद्ध छे. 'विकुर्वणा' वगेरे प्रयोगो, ए घातु होवानुं पुष्ट प्रमाण

- १. मूलच्छायाः—ततः स तृतीयो गौतमो वायुभूतिरनगारो द्वितीयेन गौतमेन अग्निभूतिनाम्ना अनगारेण सार्धं येनैव श्रमणो भगवान् महावीरः, यावत्-पर्युपासीन एवम् अवादीतः—यदि भगवन् ! चमरः असुरेन्दः, असुरराज एवंमहर्दिकः, यावत्—एतावच प्रभुविकुर्वितुम्, विलेभगवन् ! वैरोचनेन्द्रः, बैरोचनराजः किंमहर्द्धिकः, यावत्–कियच प्रभुविकुर्वितुम् ?--अनु०
- १. बायुम्तिः —काश्यपगोत्रीय श्रमण भगवंत महावीरना त्रीजा गणधर हता. तेओनी जन्म खाति नक्षत्रमां, मगभ देशना गोवर गामना विष्र श्रीबसुभूतिनां पत्नी पृथिवी देवीनी कुखे थयो हतो, अर्थात्-—तेओ पहेला तथा बीजा गणधरना सहोदर भाई हता. तेओ वेद संबंधेनी चौदे विद्याना निधान हता, पण ' शुं आ देह ज आत्मा छे ? ' एवा संशयाछ हता. तेओनो शिष्यगण पांचसे (५००) नो हतो. एक समये तेओ आर्य श्रीसोसिङ बाह्मणना अपापाना यहस्थळे पोताना भाइओ तथा शिष्यो वगेरे साथे आव्या हता. त्यांथी, पराजित थएला पोताना भाइओने मूकावचा साटोप शिष्यो साये भनवंत महावीर पासे आव्या; पण अहीं भगवंत द्वारा पोतानो संशय नष्ट थवाथी तेमना शिष्य थया. आ समये तेमनुं वय बेंतालीस (४२) वर्षतुं हतुं. लार वाद दश (१०) वर्ष छद्मस्थ अने अढार (१८) वर्ष केवळीपणे हता. तेओतुं पूरूं आयुष्य (४२×१०×१८=७०) सितेर वर्षतुं 🐮 वेओतं निर्वाण राजगृहमां प्रभुनी हैयातीए थयुं हतुं. आ संबंधेना विशेष ज्ञान माटे (अभि० रा० पृ० ८१६–८१८.) 'विशेषावश्यक भाष्यं (य॰ ग्रं॰ प्र॰ ७७५-८३४.) 'आवश्यक सूत्र '(आ॰ स॰ प्र॰ २४५-२५७.) अने (२० खं॰-१. प्र॰ १६ टि॰ १ छं) वगेरे स्थळो गवेषवां; तथा श्रीसमदाय नामना चोथा अंगमां श्रीवायुभूतिनी त्रीजा गणधर तरीकेनी ओळख आ प्रमाणे छे:---

समणस्य भगवओ महावीरस्य एकारस गणा, एकारस गणहरा होत्था, "श्रमण भगवंत महावीरने अगियार गणो अने अगियार गणवरी हता. तं बहा:-इंदम्ई, अग्गिम्ई, 'वायुम्ई" ×× (क॰ आ॰ १०३१). जेम के:-इंद्रभ्ति, अप्रिभृति, 'वायुभूति' वगेरे" (क॰ आ॰ पृ॰ ३१.):-अनु०

२. बैरोचनेन्द्रः---(बिह)-(वि-विशिष्टम् , रोचनम्-दीपनं येषां वे वैरोचनाः, तेषाम् इन्द्रः.) दाक्षिणात्य असुरकुमारो करतां जेओनी कांवि अधिक

विकुर्वणा-विषय

छे:--श्रीअभय०

८. उ०—गोयमौ ! बली णं वहरोयणिंदे, वहरोयणराया महि-**ड्रीए, जाव-महाणुभागे; से णं** तत्थ तीसाए भवणावाससयसह-स्साणं, सद्टीए सामाणियसाहस्सीणं, सेसं जहा चमरस्स तहा बिलस्स वि णेयव्यं, नयरं-सातिरेगं केवलकपं जंबुद्दीवं भाणियव्यं, सेसं तं चेव णिरवसेसं णेयव्वं, नवरं नाणत्तं जाणियव्वं भवणेहिं, सामाणि-एहिं य.

सेवं मंते !, सेवं मंते ! ति तचे गोयमे वायुमूई जाव-विहरइ.

८. उ०-हे गौतम ! वैरोचनेंद्र, वैरोचनराज बलि मोटी ऋदिवाळो छे. यावत्—महानुभाग छे; वळी ते त्यां त्रीस छाख भवनोनो, तथा साठ हजार सामनिकोनो अधिपति छे. जेम चमर संबंधे हकीकत कही तेम बिल विषे पण जाणवुं. विशेष ए के, 'ते पोतानी विकुर्वण शक्तिथी आखा जंबुद्दीप करतां वधारे भागमां पोतानां रूपो भरी शके छे 'बाकी बधुं ते ज प्रमाणे कहेवुं. विशेष ए के, भवनो अने सामानिको विषे जूदाई जाणवी.

हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे; एम कही यावत्-त्रीजा गौतम वायुभूति अनगार विहरे छे.

द्वोय तेओ वैरोचनो, अने तेओनो इंद्र ते वैरोचनेंद्र. तेमना निवास, उपपात पर्वतो, पांच लडायक सैन्यो, पांच अप्रमहिषीओ-नो उपयोगी अधिकार आ प्रमाणे छेः—

"कहिं णं भंते! उत्तरिहा असुरकुमारा देवा परिवसंति ? गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पन्वयस्स उत्तरे णं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए 🗙 एत्थ णं उत्तरिह्नाणं असुरकुमाराणं देवाणं, देवीण य तीसं भवणावाससयसहस्सा भवंति ति अक्खायं. ते णं भवणा बाहि वद्या, अंतो चउरंसा; सेसं जहा दाहिणिहाणं जाव-विहरंति. बली इत्थ वहरोयणिंदे, वहरोयणराया परिवसह काले, महानीलसरीसे, जाव-पभासेमाणे. से णं तत्थ तीसाए भवणावास-स्यसहस्साणं, सहीए सामाणियसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, पंचण्हं अग्ममहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहीवईणं, चउण्हं सद्वीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अण्णेसि च बहूणं उत्तरिक्षाणं असुरकुमाराणं देवाण य, देवीण य आहेनचं, पोरेवचं, जाव-कुव्वेमाणे बिहरतिः " (प्र० क० आ० प्र० १०३). घोडेखार, इस्ती, रथ, पाडा, नाव्य, गांधर्व,-अनीकोना; सात-महाद्रुम, सेनापतिओनाः वे लाख, चालीस हजार आत्मरक्षकोना अने बीजा घणा उत्तर दिशावासी असुरकुमार देवो, तथा देवीओना आधिपत्यने, पुर-पतिपणाने, यावत्-करतो विहरे छेः '' (क॰ आ० पृ० १०३).

"बलिस्स बहरोयणिंदस्स, बहरोयणरन्नो स्यपिंदे उप्पायपन्वए मूळे दस बावीसे जोयणसए विक्खंभेणं पन्नत्ते, बलिस्स णं वहरोयणस्त्रो सोमस्स एवं चेव, जहा चमरस्स लोगपालाणं तं चेव वलिस्स वि''(स्था०क०आ०पृ०५५०). बलीना लोकपालोना पण जाणवा." (स्था० क० बा० पृ० ५५०).

"बलिस्स णं वहरोयणिंदस्स, वहरोयणरन्नो पंच संगामिया अणिया, पंच संगामिया अणियाहिवई पण्णता, तं जहाः-पायत्ताणिए, जाव-रह्, णेए. महदुमे पायत्ताणियाहिवई, महासोदामे आसराया पीढाणियाहिवई, म. :-करें हिल्थराया कुंजराणियाहिवई, महालोहिअक्ख़े महिसाणियाहिवई, किंपु-रिसे रहाणियाहिवई:" (स्था० क० आ० ए० ३५७).

''बलिस्स णं वइरोयणिंद्स्स, वइरोयणरत्रो पंच अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहाः--सुंभा, णिसुंभा, रंभा, णिरंभा, भयणा." (स्था०क०आ०पृ०३५७). नामे पांच अध्ययनो छे:-

"×× बलिस्स वइरोयाणंदस्स, वइरोयणरण्णो अग्गमहिसीणं बीइए वागे." (क॰ आ॰ प्र॰ १४७९.) ××× "जइ णं मंते ! समणेणं भग-वया महावीरेणं जाव-संपत्तेणं, दोचस्स वग्गस्स उवक्खेवओ ? एवं जाव-संपत्तेणं दोबस्स वग्गस्स १ ६ अज्झयणा पण्णता, तं जहाः-सुंभा, णिसुंभा, रंमा, णिरभा, मदणा." अ क (क० आ० प्र० १५११-१३).

अने बधा असुर्कुमारो रक्त वस्त्रोने धारे छे:-अनु०

" हे भगवन् ! उत्तर दिशाना असुरकुमारो देवो कये स्थळे वसे छे ? हे गौतम ! जंब्द्वीप नामना द्वीपना मंदर-मेरू-पर्वतनी उत्तरे आ रत्नप्रभा पृथिवीमां (दाक्षिणात्य असुरकुमारोनां भवनोनी उत्तरे) अहीं, उत्तर दिशाना असुरकुमार देवो अने देवीओना त्रीस लाख (३०,००,०००) भवनो कहां छे. तेओनो आकार बहारथी गोळ अने अंदरथी चोखंडो छे. बाकीनो 'यावत्-विहरति ' सुधीनो बधो वर्णक दाक्षिणात्य असुरकुमारोनी समान छे. अहीं वैरोचन इंद्र, वैरोचन राजा बली पण वसे छे. ते वर्षे काळो, महानीलमणीना जेवो, यावत्-प्रकाशतो छे. त्यां ते बलि राजा त्रीस लाख मवनोना, साठ हजार सामानिकोना, वेत्रीस त्रायस्त्रिशोना, चार-सोम, यम, वरुण, कुबेर-लोकपालोना, सपरिवार पांच-शुंभा, निशुंभा, रंमा, निरंभा, मदना-अप्रमहिषीओना, त्रण पर्षदोना, सात-पदाति, महासौदाम, मार्ख्यंकर, महालोहिताक्ष, किंपुरुष, महारिष्ट, गीतयशा⊸

"वैरोचन इंद्र, वैरोचन राज बळीनो उपपात पर्वत रुचकेंद्र मूळमां दस सो बावीस योजन पहोळो कहेलो छे, वैरोचनराज बलीना सोमनो उपपात पर्वत एवो ज छे. जे प्रमाणे चमरेंद्रना लोकपालोना उपपात पर्वती कह्या तेम

"वैरोचन इंद्र, वैरोचन राज वलीने पांच संघाम करनारां सैन्यो अने पांच सांग्रामिक सेनाध्यक्षो कह्यां छेः, ते आ प्रमाणे:-पायदा, यावत्-रथानीक. पायदा-पाळा-सैन्यनो अधिपति महाहुम, पीठानीकनो नायक अश्वराज महा-सौदाम, इस्ती सैन्यनी नायक इस्तिराज माल्यंकर, महीष सेनानी खामी महा-लोहिताक्ष अने रथानीकनो अप्रगामी किंपुरुष छेः" (स्था० क०आ० पृ०३५७).

" वैरोचन इंद्र, वैरोचन राज बलीने पांच अग्रमहिषीओ कही छे, ते आ प्रमाणे:-शुंभा, निशुंभा, रंभा, निरंभा अने मदना."(खा॰क॰ आ॰पृ०३५७). आ पांचे अत्रमहिषीओना पूर्व भवथी आरंभी चाछ जीवनना अंत सुधीना वर्णक माटे 'ज्ञातायमैकथा' (अं० ६, श्रुत० २) ना बीजा वर्गमां पांच महिषीओने

"वैरोचन इंद्र, वैरोचन राज बलीनी अप्रमहिषीओनो बीजो वर्ग कह्यो छे. " (क व आ व पृष्ट १४७९.) " हे भगवन् ! श्रमण भगवंत महा-वीरे, यावत्-संप्राप्ते, बीजा वर्गनो केवी रीतीए प्रारंभ कर्यों छे १ ए प्रमाणे निर्श्वित छे के, श्रमण भगवंत महावीरे, यावत्-संप्राप्ते बीजा वर्गना पांच अध्ययनो कह्यां छे, ते आ प्रमाणेः — ग्रुंभा, निशुंभा, रंभा, निरंभा अने मदना." (कुळ आ॰ प्रकार १९१८). तेर ज बली इंद्रनो पांच सभाओ आदि बाकीनो वधी वर्णक लगभग चमरेंद्रनी तुस्य छे. तथा आ बन्ने इंद्रो

9. मूलच्छिप्याः—गौतम ! बिल्वैरोचनेन्द्रः, वैरोचनराजो महर्दिकः, यावत्-महानुभागः; स तत्र त्रिंशतां भवनावासशतसहस्राणाम्, षष्टीनां सामानिकसहसीणाम्, शेषं यथा चमरस्य तथा बलेरपि नेतव्यम्, नवरम्-'सातिरेकं केवलकर्णं जम्बूद्वीपम्' (इति) भणितव्यम्, शेषं तुक्तैन् निरवशेषं नेतव्यम्, नस्रम्-नानारवं हातव्यं भुवनैः, सामानिकैश्व. तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इति तृतीयो गौतमो वायुभृतिर्यावत्-विहर्षि

- ४. 'नइरोयणिंदे 'ति दाक्षिणात्याऽसुरकुमारेम्यः सकाशाद् विशिष्टं रोचनं दीपनं येषामस्ति ते वैरोचना औदीच्याऽसुराः, तेषु मध्ये इन्द्रः परमेश्वरो वैरोचनेन्द्रः. 'साइरेगं केवलकपं 'ति औदीच्येन्द्रत्वेन बलेविशिष्टतरलन्धिकत्वाद् इति.
- 8. ['वइरोयणिंदे'ित] दाक्षिणात्य असुरकुमारो करतां जेओनं विरोचन (कांति) वधारे छे ते वैरोचन, अर्थात् जेओ दाक्षिणात्य असुरकुमारो करतां विशेष प्रकारे दीपे छे ते वैरोचन-उत्तर दिशामां रहेनारा असुरकुमारो, ते वैरोचन असुरकुमारोनो जे इंद्र ते वैरोचनेन्द्र. ['साइरेगं केवलकणं'ित] वैरोचनेंद्र, उत्तर दिशामां वसता असुरोनो इंद्र छे माटे चमरेंद्र करता ते इंद्रनी लिब्ध विशेष होय छे.

नागराज धरणेंद्र.

९. प्र०—मंते³! ति, भगवं दोचे गोयमे अग्गिभूई अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, नमंसित्ता एवं वयासीः—जइ णं मंते! वली वइरोयणिंदे, वइरोयणराया एमहिङ्कीए, जाव → एवइयं च णं पमू विज्ञित्वत्तए; धरणे णं मंते! नागकुमारिंदे, नागकुमारराया केमहिङ्कीए, जाव—केवइयं च णंपमू विकुञ्चित्तए?

९. प्र० त्यार बाद ते बीजा गौतम अग्निमूति अनगार श्रमण भगवंत महावीरने वांदे छे, नमे छे, नमीने तेओ आ प्रमाणे बोल्या के:—हे भगवन् ! जो वैरोचन इंद्र, वैरोचन राज बिल एवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—एटलुं विकुर्वण करवा शक्त छे तो नागकुमारनो इंद्र अने नागकुमारनो राजा धरेण केवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—ते केटलुं विकुर्वण करी शके छे ?

"कहिं णं भंते ! दाहिणिहा णं नागकुमारदेवा परिवसंति ? गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणे णं इमीसे रयणप्यभाए, पुढवीए असी-उत्तरजोयणसयसहस्सबाह्हाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं उग्गाहिता. हेट्रा एगं जोयणसहस्तं विज्ञता, मञ्झे अट्टहत्तरिजोयणसयसहस्ते एत्थ णं दाहि-णिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं चोयालीसं भवणावाससयसहस्सा इवंति ति अवखारं. ते णं भवणा बाहिं वद्टा, जाव-पंडिरूवा. एत्य णं दाहिणिलाणं नागकुमाराणं पज्जतापज्जताणं ठाणा पण्णता, तिसु वि लोगस्स असंखेजए भागे; एत्थ णं बहवे दाहिणिल्ला णं नागकुमारा देवा परिवसंति महिद्वीया, 'जाव-विहरंति. धरणे एत्थ नागकुमारिंदे, नागकुमारराया परिवसति महि-द्वीए, जाव-पभासेमाणे. से णं तत्थ चोयालीसाए भवणावाससयसहस्साणं, छण्हं सामाणियसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, छण्हं अगगमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं, अणियाहिवईणं, चउवीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अनेसिं च बहुणं दाहि-णिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं य, देवीणं य आहेवचं, पोरेवचं, जाव-कुब्वे-माणे विहरति." (प्र० क० आ० प्र० १०५-६). आ० ५० १०५-६).

"धरणस्स णं नागकुमारिद्स्स, नागकुमारित्रो घरणप्पमे उप्पायपन्वए "दस जोयणस्याई उन्हें उच्चतेणं, दस गाउयसयाई उन्हेंहेणं, मूले दस जोयण उंचाइ स्याई विक्खंमेणं. धरणस्स णं जाव-नागकुमारित्रो कालवालस्स महारशो मूळ कालप्पमे उप्पायपन्वए दस जोयणस्याई उन्हें उच्चतेणं एवं चेव, एवं जाव- धरणें, संखवालस्स, एवं भूयाणंदस्स वि, एवं लोगपालाणं वि से जहा धरणस्स" उंचाइ ××(स्था० क० आ० पृ० ५५०). धरणेंद्रना उपपात पर्वतनी प्रमाणे छेः ××" (स्था० क० आ० पृ० ५५०).

"धरणस्स णं नागिदस्स, नागकुमाररण्णो पंच संगामिक्षा अणीक्षा, पच संगामिक्षा अणीयाहिवई पण्णता, तं जहाः-पायत्ताणीए, जाव-रहा-णीए मंद्रसेणे पायत्ताणीयाहिवई, जसोधरे आसराया पीढाणीयाहिवई, सुदं- स्रणे हित्यराया कुंजराणीयाहिवई, नीठकंठे महिसाणीयाहिवई, आणंदे रहाणीयाहिवई." (स्था० क० आ० पृ० ३५७).

"धरणस्स णं णागकुमारिदस्स, णागकुमाररण्णो छ अगमहिसीओ पण्णताओ, तं जहाः-अल्ला, सक्का, सर्वेरा, सोदामिणी, इंदा, घणविज्या," (स्था॰ क॰ आ॰ पृ॰ ४१८).

"हे भगवन् ! दाक्षिणाख नागकुमार देवो कये स्थळे वसे छे ? हे गौतम ! जंबुद्वीप नामना द्वीपना मंदर पर्वतनी दक्षिणे आ एक लाख, ऐसी हजार योजनमा बाहत्यवाळी स्तनप्रभा पृथिवीनो उपरनो एक हजार योजन प्रमाण भाग अवगाही अने नीचेनो एक हजार योजन भाग वर्जा, वाकी रहेल मध्यना एक लाख, अह्योतेर हजार योजन जेटला भागमां. अहीं दाक्षिणाख नागकुमार देवोना चुमालीस लाख भवनो कह्यां छे. ते भवनो बहारथी गोळ, यावत्—प्रतिरूप छे. अहीं जे स्थानमां दाक्षिणाख पर्याप्तापर्याप्त नागकुमारोना भवनो कह्यां छे, ते स्थान लोकना असंख्येय भागमां छे; तेमां घणां महर्ष्टिक नागकुमार देवो वसे छे, यावत्—विहरे छे. अने अहीं नागकुमार इंद्र, नागकुमार राजा धरणेंद्र मोटी ऋदिवाळो, यावत्—प्रकाशतो परिवसे छे. ते घरणेंद्र लां चुमालीस लाख भवनोना, छ हजार सामानिकोना, तेत्रीस त्रायक्रियोना, चार लोकपालोना, परिवार सहित छ अप्रमहिषोओना, त्रण सभाओना, सात प्रकारना सैन्योना, सात सेनापतिओना, चोवीस हजार आत्मसक्षक देवोना अने बीजा पण घणा दाक्षिणाख नागकुमार देवो तथा देवीओना आधिपखने, पालकपणाने यावत्—करतो विहेरे छेः" (प्र० क०

"नागकुमार इंद्र, नागकुमार राजा धरणेंद्रनो उपपात पर्वत 'धरणप्रभ' उंचाइमां एक हजार योजन अने घेरावमां एक हजार गाउ छे. पण तेना मूळ भागनो घेरावो एक हजार योजननो छे. अने यावत्—नागकुमारराज धरणेंद्रना छोकपाल कालवाल महाराजनो 'कालप्रभ' नामनो उपपात पर्वत उंचाइमां एक हजार योजन छे, यावत्—पूर्व प्रमाणे छे. एम ज छोकपाल संखपाल, तथा भूतानंद अने यावत्—वधा छोकपालोना उपपात पर्वतो

"नार्गेद्र, नागकुमारराज धर्णेद्रने पांच युद्ध करनारां सैन्यो अने पांच लडनारा सेनापतिओ कह्यां छे, ते आ प्रमाणे:—पायदळ सैन्य, यावत्—रथानीक. पदाति सेनानो नायक भद्रसेन, घोडेखार सेनानो नेता अश्वराज यशोधर, हस्ती सेनानो खामी हस्तीराज सुदर्शन, महिष सेनानो सेनापति नीलकंठ अने रथानीकनो अधिपति आनंद छे."(स्था० क० आ० ए० ३५७).

"नागकुमारेंद्र, नागकुमारराज धरणेंद्रने छ अप्र महिषीक्षो कही छे, ते आ छे:-अझा, शका, सतेरा, सौदामिनी, इंद्रा अने धनविद्युता." (स्था॰ क॰ आ॰ पृ॰ ४१८):-अनु॰

^{9.} मूलच्छायाः—भगवन् ! इति, भगवान् द्वितीयो गौतमोऽन्निभूतिः अनगारः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति, नमस्यत्वा एवम् अवादीतः – यदि भगवन् ! बलिः वैरोचनेन्द्रः, वैरोचनराज एवंमहर्द्धिकः, यावत् –एतावच प्रभुविंकुर्वितुम्; धरणो भगवन् ! नागकुमारेन्द्रः, नागकुमारराजः किंमहर्द्धिकः, यावत् –कियच प्रभुविंकुर्वितुम् !—अनु०

^{9.} नागकुमारोना इंद्र धरणेंद्रना निवास, लोकपालोना उपपात पर्वतो, पांच लडायक सैन्यो, पांच सेनापतिओ, छ अग्रमहिषीओ आदिनो वर्णक आ रीतिए छे:—

२. उ०—गोयमी ! घरणे णं नागकुमारिंदे, नागकुमारराया मिह द्वीए, जाव—से णं तत्थ चोयाठीसाए भवणावाससयसहस्साणं, छण्हं सामाणियसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोग-पालाणं, छण्हं अग्गमिहसीणं सपिरवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, चउव्वीसाए आयरक्खदेवसाह-स्सीणं, अबोसं च जाव—विहरइ. एवतियं च णं पमू विडिव्वत्तए, से जहा नाम ए जुवइं जुवाणे जाव—पमू केवलकपं जंबूदीवं, जाव—तिरियं संखेळे दीव-समुद्दे बहूहिं नागकुमारीहिं जाव—विउिव्यस्तिते वा, सामाणिया, तायत्तीस—लोगपाला, अग्गमिहसीओ य. तद्देव जहा चमरस्स, नवरं-संखेळे दीवे समुद्दे भाणियव्वे, एवं जाव—थाणियकुमारा, वाणमंतरा, जोईसिया वि, नवरं—दाहिणिले सव्वे अगिगमुई पुच्छइ, उत्तरिले सव्वे वायुमुई पुच्छइ.

९. उ० - हे गौतम ! ते नागकुमारोनो इंद्र, नागकुमारोनो राजा धरण मोटी ऋदिवाळो छे, अने ते यावत्-त्यां चुमा-ळीस छाख भवनावासो उपर, छ हजार सामानिक देवो उपर तेत्रीस त्रायिक्षशक देवो उपर, चार छोकपाछो उपर, परी-वारवाळी छ पद्दराणीओ उपर, त्रण सभाओ उपर, सात सेना उपर, सात सेनाविपति उपर अने चोवीस हजार आत्मरक्षक देवो, तथा बीजाओ उपर स्वामिपणुं भोगवतो यावत्-विहरे छे. तथा तेनी विकुर्वणा शक्ति आटली छे:--जेम कोइ जुवान पुरुष जुवान स्त्रीना हाथने पकड़े, अर्थात् परस्पर काकडा वाळेळा होवाथी जेम ते बंते व्यक्तिओ संलग्न जणाय छे तेम ते यावत्-पोताना रूपोवडे-घणां नागकुमार अने घणी नागकुमारीओवडे—आखा जंबृद्वीपने, अने तिरछे संख्येय द्वीप समुद्रोने भरी शके छे. पण यावत्-ते तेवुं कोई दिवस करशे नहीं. तेना सामानिको, त्रायिक्वाक देवो, छोक-पालो अने अग्रमहिषीओ विषे चमरनी पेठे कहेतुं. विशेष ए के, तेओनी विकुर्वणा शक्ति माटे संख्येय द्वीप, समुद्रो कहेवा. अने ए प्रमाणे यावत्-स्तानितकुमारो, वानसंतरो तथा ज्योतिषिको पण जाणवा. विशेष ए के, दक्षिण दिशाना बधा इंद्रो विषे अग्निभृति पूछे छे अने उत्तर दिशाना बधा इंद्रो विषे वायुभूति पूछे छे.

५. 'एवं जाव-यणियकुमार 'ति धरणप्रकरणिय भूतानन्दादि-महाधोपान्तभवनपतीन्द्रप्रकरणानि अध्येयानि, तेषु च इन्द्रनामानि एतद्गाथाऽनुसारतो वाच्यानि—'' चैमरे घरणे तह वेणुदेव-हरिकंत-अगिमसीहें य, पुण्णे जलकंते वि य अमिय-विलंबे (विलंबे) य घोसे य. '' एते दक्षिणानिकायेन्द्राः, इतरे तु ''विल-भूयाणंदे वेणुदालि-हरिस्सहे अगिमाणव—विसिहे, जलप्यमे अमियवाहणे पहंजणे महाधोसे.'' एतेषां च भवनसंस्थाः—'चउत्तीसा, चउचता' इत्यादि पूर्वोक्तगाथाद्वयादवसेयाः सामानिकात्मरक्षसंस्था चैवम्ः—''चउत्तिद्वी सहीं खलु छच सहस्साओ असुरवज्ञाणं, सामाणियाओ एए चउग्गुणा आयरक्या उ'' अप्रमहिष्यस्तु प्रत्येकं घरणादीनां षट्, सूत्रामिलापस्त धरणसूत्रवत् कार्यः 'वाणवंतर-जोइसिया वि' ति व्यन्तरेन्द्रा अपि धरणेन्द्रवत् सपरिवारा वाच्याः, एतेषु च प्रतिनिकायं दक्षिणोत्तरभेदेन द्वी हो इन्द्री स्थाताम्, तद्यथाः—''कीले य महाकाले सुस्व-पाढिस्त्व-पुण्णमहे य, अमरवइमाणिमहे भीमे य तहा महामामिः'' किनर—किपुरिसे खलु सप्पुरिसे चेव तह महापुरिसे, अइकाय—महाकाए गीयरई चेव गीयजसे.'' एतेषाम्, ज्योतिष्काणां च त्रायिखिशाः, लोकपालश्च न सन्ति, इति ते न वाच्याः, सामानिकास्तु चतुःसहस्रसंख्याः, एतचतुर्गुणाश्चात्मरक्षाः, अप्रमहिष्यश्चतस्त्र इति, एतेषु च सर्वेष्विप दाक्षिणात्मान् इन्द्रान्, आदित्यं च अग्निभूतिः पृच्छित, उदीच्यान्, चन्नं च वाद्यम्, यचेहाधिक्रतवाचनायामस्चित्तमिय व्याख्यातम्, तद्वाचनान्तरमुपजीव्य इति भावनीयमितिः तत्र कालेन्द्रसूत्राभिलाप एवमः—''कीले णं भंते ! पिसायइंदे, पिसायराया के—महिड्डीए, केवइयं च णं पम् विज्ञित्वत्तए १ गोयमा ! काले णं महिड्डीए, से णं तत्य असंसेजाणं नगरावाससयसहस्साणं, चउण्हं सामाणिय-

^{9.} मूलच्छायाः — भौतम ! धरणो नागकुमारेन्द्रः, नागकुमारराजो महर्द्धिकः, यावत् –स तत्र चतुश्चरवारिशतां भवनावासशतसहसाणाम्, षण्णां सामानिकसहस्रीणाम्, त्रयिव्यातः त्रायिव्याकानाम्, चतुर्णा छोकपाछानाम्, षण्णाम् अत्रमहिषीणां सपरिवाराणाम्, तिस्णां पर्षदाम्, सप्तानाम् अनीकानाम्, सप्तानाम् अनीकाधिपतीनाम्, चतुर्विद्यातेः आत्मरक्षदेवसहस्रीणाम्, अन्येषां च यावत् –विहरति. एतावच प्रभुविकुर्वितुम्, तद्यशा नाम युवति युवा यावत् –प्रभुकेवलकल्पं जम्बूदीपम्, यावत् –तिर्थक् संख्येयान् द्वीपान् समुद्रान् बह्वीभिनीगकुमारीभिः यावत् –विकुर्विष्यन्ति वा, सामानिकाः, त्रायिव्याः, छोक्पालाः, अप्रमहिष्यश्च तथैव यथा चमरस्य, नवरम् – संख्येयान् द्वीपान्, समुद्रान् मणितव्यम्, एवं यावत् –स्तिनतकुमाराः, वानव्यन्तराः, ज्योतिष्का अपि, नवरम् –दाक्षिणात्यान् सर्वान् अप्रिभृतिः प्रच्छति, उत्तरीयान् सर्वान् वायुभृतिः प्रच्छतिः –अनु०

^{9.} प्र० छायाः चमरो धरणस्वथा वेणुदेवो हरिकान्तोऽप्रिशिखश्च, पूर्णो जलकान्तोऽपि च अमितो विलम्बः (विलेबः) च घोषश्च. २. बिलेभूतानन्दो वेणुदालिः हरिस्सहोऽप्रिमाणवो विशिष्टः, जलप्रभोऽमितवाहनः प्रभन्ननो महाघोषः. ३. चतुःषष्टिः षष्टिः खल्च पट्-च सहक्योऽसुरवर्जानाम्, सामानिका एते चतुर्गुणा आत्मरक्षास्तु. ४. कालश्च महाकालः सुरूपः प्रतिरूपः पूर्णमदश्च, अमरपितमाणिमद्रो भीमश्च तथा महाभीमश्च. ५. कालो भगवन् ! पिशाचेन्द्रः, पिशाचराजः किंमहर्दिकः, कियच प्रभुविकुर्वितुम् १ गौतम ! कालो महर्दिकः, स तत्र असंख्येयानां नगरावासशतसहस्राणाम्, चतुर्णौ सामानिकसान्हस्रीणाम्, षोडशाम् आत्मरक्षदेवसाहसीणाम्, चतस्याम् अप्रमहिषीणां सपरिवाराणाम्, अन्येषां च बहूनां पिशाचानां देवानाम्, देवीनां चाऽऽधिपत्मम्, यावत्–विहरति. एवं महर्दिकः, एतावच प्रभुविकुर्वितुम्, यावत्–केवलकल्पं जम्बूद्वीपं द्वीपम्, यावत्–तिर्यक् संख्येयान् द्वीपसमुद्वान्ः–अनु०

साहरतीणं, सोलसण्हं आयरक्लदेवसाहरसीणं, चउण्हं अग्गमाहिसीणं सपरिवाराणं, अण्णेसि च बहूणं पिसायाणं देवाणं, देवीणं य आहेवचं, जाव—विहरइ; एवं महिडीए, एवइयं च णं पमू विउवित्तए जाव—केवलकपं जंबूदीवं दीवं जाव—तिरियं संखेजे दीव— समुद्दे" इत्यादिः

५. ['एवं जाव-यणियकुमार'ति] घरणना प्रकरणनी पेठे भूतानंदयी मांडी महाघोष सुधीना मवनपतिना इंद्रो संबंधी प्रकरणो कहेवां तेमां उद्दोनां नामो आ गाथाने अनुसारे कहेवानां छे:-- "चमैर, धरण, वेणुदेव, हरिकांत, अग्निशिख, पूर्ण, जलकांत, अमित, विलंब-(विलेब) जाने घोष. " ए (दशे) बघा दक्षिणनिकायना इंद्रो छे. अने " बेलि, भूतानंद, वेणुदालि, हरिस्सह, अमिमाणव, विशेष्ट, जलप्रम, अमितवाहन, प्रमंजन अने महींघोष "ए (दशे) बधा उत्तरनिकायना इंद्रो छे। एओनी भवन संख्या 'चउत्तीसा चउचत्ता' इत्यादि आगळ कहेली व गाथाओथी जाणवी. तथा एओना सामानिकोनी अने अंगरक्षकोनी संख्या आ प्रमाणे छे:—"चमरेंद्रनों चोसठ हजार सामानिको छे, बिल इंद्रना साठ हजार सामानिको छे अने असुर सिवाय बीजा बधाना छ हजार सामानिको छे. जेटला सामानिको छे एनाथी चार गणा दरेकने अंगरक्षको हो.'' धरण बगेरे दरेकने छ छ पष्टराणीओ छे. पष्टराणी विषेना सूत्रनो अभिलाप तो धरणसूत्रनी पेठे करवो. ['वाणवंतर-जोइसिआ वि'सि] धरणेंद्रनी षेठे व्यंतरेंद्रो पण परिवारसहित कहेवा. ए व्यंतरोमां प्रत्येक निकाये-एक दक्षिणनो अने एक उत्तरनो-एम ने वे इंद्रो होय छे. ते आ प्रमाणे:- ''काल अने महाकाल, सुरूप अने प्रतिरूप, पूर्णमद्र अने अमरपति-(इंद्र) मणिभद्र, भीम अने महामीम, किंनर अने किंपुरुष, सत्पुरुष अने महापुरुष, अतिकाय अने महाकाय, गीतरति अने गीतर्यंश "ए व्यंतरोने अने ज्योतिषिकोने त्रायिक्षशो तथा छोकपाछो नथी होता, माटे ते अहीं न कहेवा. तेओने चार हजार (१०००) सामानिक देवो होय छे, अने एनाथी चारगणा (१६०००) आत्मरक्षक देवो होय छे. दरेकने चार चार पहराणीओ होय छे. ए नधाओमां दक्षिणना इंद्रो संबंधे अने सूर्य संबंधे अप्रिमृति पूछे छे; तथा उत्तरना इंद्रो संबंधे अने चंद्र संबंधे वायुमृति पूछे छे. तेमां दक्षिणना देवो अने सूर्य संपूर्ण जंब्द्धीपने पोतानां रूपोथी भरी शके छे अने उत्तरना देवो तथा चंद्र आखा जंब्द्धीप करतां वधारे भागने पोतानां रूपोथी भरी शके छे, एम कहेतुं. आ वाचनामां जे वातनी सूचना करवामां आवी नथी ते वातनी पण टीका-व्याख्या-करवामां आवी छे तो ते भाग, बीजी वाचनानो आश्रय लईने कह्यों छे एम समजवुं. तेमां कार्लेंद्रना सूत्रनो अभिलाप आ प्रमाणे छे:- "काँले णं मंते ! पिसायइंदे, पिसायराया केमहिद्धीए, (इत्यादि अने) केवइअं च णं पम् विउच्चित्तए ? गोयमा ! काळे णं महिङ्कीए, (इत्यादि) से णं तत्थ असंखेजाणं नगरावाससयसहस्साणं, चउण्हं सामाणिअसा-हस्सीणं, सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं, चउण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, अन्नेसिं च बहूणं पिसायाणं देवाणं, देवीण य आहेवचं, जाव-विहरइ-प्वं महिङ्कीए. (इत्यादि) एवइयं च णं पभू विउव्वित्तए, जाव-केवलकणं जंबुद्दीवं दीवं जाव-तिरियं संखेजे दीव-समुद्दे" इत्यादि.

देवराज शकेंद्र.

१०. प्र०—'भंते !'त्ति भगवं दोचे गोयमे अग्गिभूई अणगारे समणं मगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, नमंसित्ता एवं वयासी:—जइ णं भंते ! जोइसिंदे, जोइसराया एमहिड्डीए, जाव—एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए, सक्के णं भंते ! देविंदे, देवराया केमहिड्डीए, जाव—केवितयं च णं पभू विकुव्वित्तए?

१०. प्र०—'हे भगवन्!' एम कही भगवान् गौतम बीजा अग्निभृति अनगार श्रमण भगवंत महावीरने वांदे छे, नमे छे अने नमीने तेओ आ प्रमाणे बोल्या के:—हे भगवन्! जो ज्योतिषिन केंद्र, ज्योतिषिक राजा एवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—एटछं विकुर्वण करी शके छे, तो देवंद्र, देवराज शक्ते केवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—केटछं विकुर्वण करी शके छे?

धरण आदि परिवार.

ਕੀਤੀ ਕਾਤ

१. तत्त्वार्थाधिगमसूत्रमां चोधा अध्यायना छट्टा सूत्रमां आ नामो आवी रीते छे:-चमर, धरण, हरि, वेणुदेव, अग्निशिख, वेलंब, सुधोष, जलकांत, पूर्ण, अने अमित. २. तथा बलि, भूतानंद, हरिसह, वेणुदारी, अग्निमाणव, प्रभंजन, महाचोष, जलप्रम, विशिष्ट अने अमितवाहन. ३. आ बन्ने गाथाओं असुरादिना इंद्रोनी गणनामां (प्र० सू० क० आ० पृ० १०८ मां) छे. ४. आ गाथा पण प्रज्ञापना सूत्रना ए ज स्थळे छे, अने आ त्रणे गाथाओं अनुक्रम खां आ रीतिए छे. (६, ७, ५). ५. तत्त्वार्थाधिगमसूत्रमां चोथा अध्यायना छट्टा सूत्रमां आ नामो आवी रीते छे:-किंनर-किंपुरुष, सत्पुरुष-महापुरुष, अतिकाय-महाकाय, गीतरित-गीतयश, पूर्णभद-मिणभद्र, भीम-महाभीम, प्रतिरूप-अतिरूप अने काल-महाकाय. ६. आ वे संग्रह गाथाओं व्यंतरोनी वर्णनाना अधिकारमां (प्र० सू० मू० क० आ० प्र० ९१ मां) समनताए जोबामां आवे छे. ७. आने समान पाठ-(प्र० क० आ० प्र० ९१ मां) ए स्थळे पिशाचेंद्रना चाछ अधिकारमां छे:-अनु०

^{ी.} मूलच्छायाः— भगवन् ! इति, भगवान् द्वितीयो गौतमोऽप्तिभूतिरनगरः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति, नमस्यत्वा एवम् अवादीत्ः— नहें भगवन् ! ज्योतिषेन्द्रः, ज्योतिषराजः, एवंमहर्द्धिकः, यावत्–एतावच प्रभुर्विकुर्वितुम्, शको भगवन् ! देवेन्द्रः, देवराजः किंमहर्द्धिकः, यावत्–कियच प्रभुविकुर्वितुम् ?—अनु०

^{9.} शकेंद्र:—ए सौधर्म देवलोकनो इंद्र छे. सौधर्म देवलोक जैन गणनाए एटले उंचे छे:—अंबूद्वीपना मेह पर्वतनी पासेनी समतला भूमिथी ८०० बोजनो उपर सूर्यदेवनी राजधानी, एथी ८० योजनो उपर चंद्र देवनी राजधानी, एथी २० योजना अंतरमां प्रहो, नक्षत्रो, अने ताराओनां विमानो; अने तेथी असंख्य योजनो उपर सौधर्म देवलोक छे; तेनी स्थिति धनोद्धिने आधारे छे, लांनां विमानोनी संख्या बत्रीस लाखनी छे. (जी० सू० का० प्र० ९२६ थी तेनो वर्णक आवो छे.) "तेओमांना 'आविलकामां रहेलां विमानो—गोळ, त्रिकोण ने समचीरस छे; लारे बीजांओ नानां आकरनां, बर्ण-काळां, नीलां, लोहितो, हालिहो अने धोळां; गंधे—सुगंधो, अने स्वर्श-अत्यंत कीमळो छे. लांना वतनीओने वैमानिक देवो कहे छे. तेओने भव-भारणीय ने उत्तरवैकिय वे शरीरो होय छे, तेमांतुं भवधारणीय:—आंमळना असंख्याता भागथी यावत्—सात हाथतुं, कांतिपूर्ण अने छए संघयणो, साते बातुओ, तथा बस्न-आभूषणो विनानुं; प्राकृत, दिव्य शोभाए शोभतुं होय छे. अने उत्तरवैकिय:—आंगळना असंख्यातमां भागथी यावत्—लाख योजनो बेबाई; समचोरस, के नानां संस्थानोवाछं, कनकवर्णा, सुगंधी ने कोमळ होय छे. तेओनां श्वासोच्छ्वासमां अने आहारमां इष्ट, कांत अने त्रिय अणुओ होय छे; तेओने—केवळ तेजोलेख्या; सम्यक्, मिथ्या ने सम्यग्नियथा भावो; वे, के त्रण ज्ञानो; त्रण अज्ञानो; साकार अने निराकार उपयोगो; वेदना,

१०. उ०-गोयमी ! सक्के णं देविंदे, देवराया माहिडीए, रासीए सामाणियसाहस्सीणं, जाव-चउण्हं चउरासीणं आयरक्ल-साहस्सीणं, अन्नेसिं जाव-विहरइ, एवंमहिङ्टीए, जाव-एवतियं च

१०, उ०-हे गौतम ! देवेंद्र, देवराज शक्त मोटी ऋडि-जाव-महाणुभागे, से णं वत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं, चंड- वाळो छे अने यावत् मोटो प्रभावशाळी छे. ते त्यां बत्रीस लाख विमानावासो उपर, चौरासी हजार सामानिक देवो उपर, यावत-चार चोरासी हजार-(३,३६०००) आत्मरक्षक देवो उपर अने णं पमृ विजन्तित्तए, एवं जहेव चमरस्स तहेव भाणियव्वं, नवरं-दो बीजाओ उपर सत्ताधीशपणुं भोगवतो यावत्-विहरे छे. अर्थात्

कषाय, मारणांतिक, वैक्रिय तथा तेज:-समुद्घातो; एक पल्योपमधी वे सागरोपम प्रमाणे आयुष्य वगेरे होय छे. तेओने मध्ये 'सौधर्मावतंसक' नामना अवतंसकमां शक्रेंद्र निवसे छे. तेनो प्रासाट अत्यंत उन्नत, सोहामणो अने सुखनां दिव्य साधनोथी परिपूर्ण छे. शक्रेंद्रनो ब्युत्पत्तिए अर्थ आवो छे:-'' शक्र-लंट्-राक्तौ ' ए शक्ति-सामर्थ्य-अर्थवाळा धातु उपरथी 'शक्नोति इति शकः' एवी न्युत्पत्तिए 'शक 'शब्द उपजे छे. तथा 'इदु-परमैश्वर्थे ' एथी 'इन्द-नाद् इन्द्रः ' एवी व्युत्पत्तिए 'इंद्र ' शब्द बने छे. एथी:-असुरेंद्रो, देवो, तथा सामानिको वगेरे करता परम सामर्थ्य अने ऐश्वर्यवाळो ते शक्षेद्र." शकेंद्र माटे श्रीपन्नवणा (उ० ४) मां आवो उल्लेख छे:---

"×× सक्के इतथ देविंदे, देवराया परिवसइ वज्जपाणी, पुरंदरें, सयक्कऊ, सहस्सक्खे, मधवं, पाकसासणे, दाहिणलोगाहिवई, वत्तीसविमाणावाससय-सहस्साहिवई, एरावणवाहणे, सुरिंदे, अरयंबरवर्थघरे, आंल्ड्यमालमउडे, नवहेमचार-चित्त-वंचलकुंडलविलिहिज्ञमाणगंडे, महिद्वीए, जाव-पभासेमाणे. से णं तत्य वत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं, चउरासीए सामाणियसाह-स्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तिसगाणं, चडण्हं लोगपालाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, चडण्हं चडरासीणं आयरक्खदेवसाह्स्सीणं; अन्नोसं च बहुणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणियाणं देवाण य, देवीण य आहेवचं, पोरेवचं कुव्वेमाणे, जाव-विहरइ." (क० आ० पृ० १२०-१). त्रायिक्षिशोना, चार-सोम, यम, वरुण, कुबेर-लोकपालोना, सात सैन्योना, सात सेनापतिओना, त्रण लाख, छत्रीस हजार आत्मरक्षक देवोना अने बीजा अनेक सौधर्मवासी देवो तथा देवीओना अधिपतिपणाने, पुरपतिपणाने यावत्-करतो (सुखे) विहरे छे. (क॰ आ॰ पृ॰ १२०-१). ए सिवायना वीजां पण अंगादिनां घणां स्थळो तेना वर्णक माटे रोकाएलां छे. तेमांनां थोडां उपयोगी स्थळोनो सार आ प्रमाणे छे:–ते अयोनिज छे. तेतुं आयुः

"×× देवेंद्र, देवराज 'शक' अहीं वसे छे. ते-वज्रने धारनार, पुरंदर-(शत्रुना पुरने दारनार), शतकतु-(कार्तिक शेठवाळा पोताना पूर्व भवे शत-सो, कतु-प्रतिमाओ-ने वहनार), सहस्राक्ष-(पांचसे मंत्रिओ होवाथी हजार आंखोवाळो), पाकशासन-(पाक नामना शत्रुने शिक्षा करनार), दक्षिण(अर्ध)लोकनो खामी, बत्रीस लाख विमानोनो अधिपति, ऐरावण वाहनवाळो, देवोनो इंद्र छे. वळी ते निर्मळ दिव्य बस्रोने पहेरे छे, मनोहर देव संबंधी माळा तथा मुकुटने धारे छे, नवा सुवर्णना सुंदर, जडाऊ, चालता कुंडलोवडे गंडस्थलने आलेखे छे; मोटी ऋदिवालो, यावत्-प्रभासतो छे. बळी ते खांना बन्नीस लाख विमानोना, बोरासी हजार सामानिकोना, तेत्रीस बे सागरोपमतुं छे. तने घणां परिवारवाळी पद्मा, शिवा, सेवा, अंजू, अमला, अप्सरा, नवमिका अने रोहिणी नामे आठ पटराणीओ-इंद्राणीओ-छे. तेनी सुधर्मा नगरी चार दिग्नायकोना हाथ नीचे चार विभागे वहेंचाएली छे. तेना नामादि आ प्रमाणे छे:—

दिशा.	स्रोकपाल.	नगरी.	मुख्यविमान,	आयुः.
पूर्व.	सोम.	सोमा.	सांध्यप्रभः	एक पत्योपम.
दक्षिण.	यम.	यमा.	वरश्रेष्ठ.	एक पल्योपम त्रिभाग अधिक.
पश्चिम.	बहण.	वारूणी.	खयंज्यल.	कांइक ऊणां वे पल्योपम.
उत्तर.	वैश्रमण.	वैश्रमणी.	वल्गु.	वे पल्योपम.

तेनुं सैन्य सात विभागे वहेंचाएछं छे; तेमांनुं पांच प्रकारनुं लडायक छे. ते पांचे सैन्योना तथा तेना नायकोना नामो अनुकमे आ प्रमाणे छे:-पदाति-पायदळ, पीठानीक-घोडेखार, गजसैन्य, वृषभ-वळद-सैन्य अने रथानीक. इरिणेगमेषी, (अश्वराज) वायु, ऐरावण, (वृषभराज) दामास्ति अने माढर. बाकीना बे-नाट्यानीक, गांधर्वाऽनीक-सैन्यो अने तेना वन्ने-श्वेत, तुंबर-नायको मोज शोख माटे छे. ते असुरराज चमरेंद्र वगरे करतां स्थिति प्रभाव, सुख, कांति, लेश्या (शुद्धि), इंदियो (नी तृप्तिमां) तथा अवधि-(अमृक हद सुधीनी वस्तुओने जणावनारा)-ज्ञानमां वधतो छे. अने गति (नीचेनी), शरीर, परिश्रह तथा अभिमानमां ऊणपवाळो छे. तेनुं कियालाघव अद्भूत प्रकारनुं छे:-कोइ एक माणसना मस्तकने छेदी, यावत्-चूरेचूरा करी पाछुं पूर्व प्रमाणे गोठवी आपे, तो पण ते माणस दुःखना लेशमात्रने पण न वेदे वर्षा वर्षाववी ए तेने आधीन छे, ज्यारे शकेंद्र वर्षा कराववा इच्छे लारे अंतर सभावासीओने आदेशे, तेओ मध्यम सभावासीओने, तेओ बाह्य सभाना सभ्योने, (तेनी मुख्य सभा त्रण विभागे वहेंचाएडी छे.) तेओ ते कार्यने करनाराओना अधिपतिओने अने यावत्-तेओ पोताना किंकर वर्गोंने आदेश करे छे. अने ते रीतिए इंद्रनी आज्ञा पूर्ण याय छे. कोइक वार देवोनो अने असुरोनो, अथवा तेओना नायकोनो महा संमाम थाय छे. तेमां देवो तृण, काष्ठ, पत्थर वगरे जे जे वस्तुओने प्रहे छे ते ते हथियाररूपे थाय छे; त्यारे असुरोने ते ते वलुओ शस्त्ररूपे थती नथी, पण तेओनां शस्त्रो हम्मेशाने माटे विकुर्वेळां ज होय छे, तेनो उपयोग करे छे:–अनु०

१. मूलच्छायाः--गौतम ! शको देवेन्द्रः, देवराजो महर्द्धिकः, यावत्-महानुभागः, स द्वात्रिंशतो विमानावासशतसहस्राणाम्, चतुरशीतेः सामा-निकसाहसीणाम्, यावत्-चतुर्णां चतुरशीखाः आत्मरक्षसाहसीणाम्, अन्येषां यावत्-विहरति, एवंमहर्द्धिकः; यावत्-एतावच प्रभुविंकुर्वितुम्, एवं यथेव चमरस्य तथेव भणितव्यम्, नवरम्-द्वौः--अनु०

केंबैलकप्ये जंबूदीवे दीवे, अवसेसं तं चेव; एस णं गोयमा ! सकस्स देविदस्स, देवरण्णो इमेयारूवे विसए, विसयमेत्ते णं बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विकुर्विसु वा, विकुर्वित वा, विकुर्व्विस्संति वा.

११. प्र०-जइ णं मंते ! सक्के देविंदे, देवराया एवंमहि-ड्रीए, जाव-एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए, एवं खलु देवाणुण्य-याणं अंतेवासी तीसए नामं अणगारे पगइभद्दए, जाव-विणीए, छद्वछद्वेणं अणिक्सित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपाडि-भुष्णाइं अ*इ संवच्छरां*इं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाएँ संले-. इणाए अत्ताणं झूसेता, सिंह भत्ताइं अणसणाए छेंदेता, आलो-इयपडिकंते, समाहिपत्ते, कालमासे कालं किचा सोहम्मे कप्पे संयांसि विमाणांसि, उववायसभाए देवसयणिजांसि देवद्संतरिए अंगु-इस्त असंखेज्जइभागमेत्ताए ओगाहणाए सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो सामाणियदेवत्ताए उववनो, तए णं से तीसए देवे अहुणोववनमेत्ते समाणे पंचिवहाए पज्जतीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, तं जहाः—आहारपज्ज-त्तीए, सरीर-इंदिय-आण-पाणपज्जतीए, मासा-मणपज्जतीए; तए णं तं तीसयं देवं पंचिवहाए पज्जतीए पजितावं गयं समाणं सामा-णियपरिसोववन्नया देवा करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजिल कडु जएणं, विजएणं वदाविंति, वदावित्ता एवं वयासी:--'अहो !! णं देवाणुप्पियेहिं दिव्वा देविडूी, दिव्वा देवज्जुई, दिव्वे देवाणुमावे लब्दे, पत्ते, अभिसमण्णागएं, जारिसिया णं देवाणुप्पि-येहिं दिव्या देविडूी, दिव्वा देवजुई, दिव्वे देवाणुभावे लखे, पत्ते, अभिसमण्णागए तारिसिया णं सक्केण नि देनिंदेण, देनरण्णा दिन्ना देविड्डी, जाव-अभिसमण्णागया जारिसिया णं सक्रेणं देविंदेणं, देवरण्णा दिञ्चा देविड्डी, जाव-अभिसमण्णागया, तारिसिया णं देनाणुप्यियेहिं नि दिव्या देनिङ्की, जान-अभिसमण्णागया; से णं मंते ! तीसए देवे केमहिडूीए, जाव-केवतियं च णं पम् विकु-व्यित्तए ?

शक्त इंद्र एवी मोटी ऋदिवाळो छे. (ते शक्त केटलुं विकुर्वण करी शक्ते छे ? तो कहे छे के,) तेनी विकुर्वणा शक्ति संबंधे चमरनी पेठे कहेबुं. विशेष ए के, ते एटलां बधां रूपो विकुर्वी शक्ते छे, के जे रूपोथी आखा बे जंबुद्दीप भराइ शके छे. बाकी बधुं ते ज प्रमाणे जाणबुं. बळी हे गौतम ! देवेंद्र, देवराज शक्तनो मात्र ए विषय छे, विषयमात्र छे अर्थात् पूर्वे जणावेली विकुर्वणा शक्ति ते मात्र शक्तिरूप ज छे; पण संप्राप्तिवडे तेणे तेम विकुर्व्यं नथी, विकुर्वतो नथी अने विकुर्वशे पण नहीं; अर्थात् पूर्वे बतावेली विकुर्वणा शक्तिनी अजमायश नथी.

११. प्र०- हे भगवन् ! जो देवेंद्र, देवराज शक्र एवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्-एट छं विकुर्वण करवा शक्त छे तो स्व-भाने भद्र अने यावत्-विनीत, तथा निरंतर छड छडना तपस्कर्मपूर्वक आत्माने भावतो, पूरेपूरां आठ वर्ष सुधी साधुपणुं पाळीने मासिक संलेखनावडे आत्माने संयोजीने तथा साठ टंक सुधीनुं अनशन पाळीने, आलोचन तथा प्रतिक्रमण करीने, समाधि पामीने, काळ-मासे काळ करीने आप देवानुप्रियनो शिष्य तिष्यक नामनो अन-गार, सौधर्म कल्पमां पोताना विमानमां, उपपात सभाना देवश-यनीयमां-देवनी पथारीमां, देवदूष्य-देववस्व-धी ढंकाएल अने आंगळना असंख्य भागमात्र जेटली अवगाहनामां (ते तिष्यक अन-गार) देवेंद्र, देवराजना सामानिकपणे उत्पन्न थयो छे. पछी ताजो उत्पन्न थएलो ते तिष्यक देव पांच प्रकारनी पर्यातिवडे पर्याप्तपणाने पाने छे अर्थात् ते आहारपर्यातिवडे, शरीरपर्यातिवडे, इंदियपर्या-सिवडे, आनप्राणपर्याप्तिवडे अने भाषामनःपर्याप्तिवडे पोताना शरी-रने संपूर्णपणे रचे छे. ज्यारे ते तिष्यक देव पूर्वोक्त पांच पर्याप्ति-वडे पोताना शरीरनी बनावट पूरेपूरी करी ले छे त्यारे सामानिक-समितिना देवो तेनी पासे आवी, हाथ जोडवापूर्वक दशे नखने भेगा करी माथे अडाडी, माथे अंजली करीने जय अने विजयथी वधावे छे अने पछी आ प्रमाणे कहे छे के:-अहो !! आप देवा-नुप्रिये दिव्य देवऋदि, दिव्य देवकांति, अने दिव्य देवप्रभाव छब्ध क्यों छे, प्राप्त कर्यों छे अने सामे आण्यो छे. वळी जेवी दिव्य देव-ऋद्भि, दिव्य देवकांति, दिव्य देवप्रभाव आप देवानुप्रिये छन्ध कर्यी छे, प्राप्त कर्यों छे अने सामे आण्यो छे तेवी दिव्य देव-ऋजि, दिव्य देवकांति देवेंद्र, देवराज शक्ते पण यावत्-सामी

^{9.} मूलच्छायाः —केवलकत्यो जम्बूद्वीयो द्वीयो, अवशेषं तच्चव; एष गौतम! शकस देवेन्द्रस्य, देवराजस अयम् एतद्वूयो विषयः, विषयमात्रम् उदितम्, नो चैव संप्राह्या व्यक्विवेदाँ, विकुर्वेन्ति वा, विकुर्वेन्धित वा. यदि भगवन्! शक्तो देवेन्द्रः, देवराजः एवंमहर्द्धिकः, यावत्—एतावच प्रभुर्वि- कुर्विद्वम्, एवं खल्छ देवाऽजुित्रयाणाम् अन्तेवासी तिष्यको नाम अनगारः प्रकृतिभद्दकः, यावत्—विनीतः षष्ठंषष्ठेन अनिक्षिप्तेन तप्रकर्मणा आत्मानं भावयन् बहुप्रतिपूर्णानि अष्ट संवत्सराणि श्रामण्यपर्यायं पालयिला मासिक्या संवेद्धवाया आत्मानं जूषित्वा, षष्टि भक्तानि अनशनेन छित्त्वा, आलोचितप्रतिकान्तः, समाधिप्राप्तः कालमासे कालं कृत्वा सौधमं कत्ये स्वस्मिन् विमाने उपपातसभायां देवशयनीये देवदृष्याऽन्तरितोऽङ्गुलस्य असंख्येयभागमात्रायाम् अवगाहनायां शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सामानिकदेवतया उत्पन्नः, ततः स तिष्यको देवोऽधुनोपपन्नमात्रः सन् पश्चविधया पर्याप्त्या पर्याप्तिमावं गन्छित,
तयथाः—आहारपर्याप्त्या, शरीर-इन्द्रिय-आन-प्राणपर्याप्त्या, भाषा-मनःपर्याप्त्या, ततस्तं तिष्यकं देवं पञ्चविधया पर्याप्तिमावं गतं सन्तं सामानिकपर्षदुपपन्नका देवाः करतलपरिगृहीतदशनलं शीर्षाऽऽवर्तं मस्तके अञ्चितं कृत्वा जयेन, विजयेन वर्षाप्यन्ति, वर्षापित्ता एवम् अवादिषुः—अहो ॥ देवानुप्रियैः
दिव्या देवर्द्धः, दिव्या देवयुतिः, दिव्या देवानुभावो लब्धः, प्राप्तः, अभिसमन्वागतः; यादिक्ति देवानुप्रियैः दिव्या देवर्द्धः, दिव्या देवर्द्धः, दिव्या देवर्द्धः, यावत्—अभिसमन्वागता तादिशकी देवानुप्रियैरिपि दिव्या देवर्द्धः, यावत्—अभिसमन्वागता; स भगवन् । तिष्यको देवः किंमहर्द्धिकः, यावत्—अभिसमन्वागता तादिक्वः देवः किंमहर्द्धिकः, यावत्—अभिसमन्वागता; स भगवन् । तिष्यको देवः किंमहर्द्धिकः, यावत्—अभिसमन्वागताः स भगवन् । तिष्यको देवः किंमहर्द्धिकः, यावत्—अभिसमन्वागताः स भगवन् । तिष्यको देवः किंमहर्द्धिकः, यावत्—अभिसमन्वागताः स भगवन् ।

आणी छे; अने जेवी दिव्य देवऋदि देवेंद्र, देवराज शक्ते छव्य करी छे, प्राप्त करी छे, यावत्—सामी आणी छे तेवी दिव्य देवऋदि आप, देवानुप्रिये यावत्—सामी आणी छे; तो हे भगवन्! ते तिष्यक देव केवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—केटलं विकुर्वण करी शके छे?

११. उ०—गोयमी! महिड्युंए, जाव—महाणुभागे; से णं तत्थ सयस्स विमाणस्स, चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं, चउण्हं अग्ग-महिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अण्णेसिं च बहुणं वेमाणियाणं देवाणं, देवीणं य जाव—विहरइ; एवंमहिड्युंए, जाव—एवतियं च णं पमू विकुव्वित्तए, से जहा णामए जुवइं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेजा; जहेव सकस्स तहेव जाव—एस णं गोयमा! तीसयस्स देवस्स अयमेयारूवे विसये, विसयमेत्ते बुइए, णो चेव णं संपत्तीए विकुव्विसु वा, विकुव्विति वा, विकुव्विस्संति वा.

११. ड०—हे गौतम! ते तिष्यक देव मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—मोटा प्रभाववाळो छे. ते त्यां पोताना विमान उपर, चार हजार सामानिक देवो उपर, परिवारवाळी चार पट्टराणीओ उपर त्रण समाओ उपर, सात सेना उपर, सात सेना धिपति उपर, सोळ हजार आत्मरक्षक देवो उपर अने बीजा घणां वैमानिक देवो तथा देवीओ उपर सत्ताधीशपणुं भोगवतो, यावत्—विहरे छे. ते एवी मोटी ऋदिवाळो छे अने यावत्—ते आटलुं विकुर्वण करी शके छे:—जेम कोई खुवान पुरुष, खुवान खीने हाथे काकडा वाळी पकडे, अर्थात् ते बने जेम संलग्न जेवा लागे छे तेम ते बीजां रूपो करी शके छे; ते यावत्—शक्रनी जेटली विकुर्वणा शक्तिवाळो छे. वळी हे गौतम! तिष्यक देवनी जे विकुर्वणा शक्ति कही छे ते तेनो विषय छे, विध्यमात्र छे, पण तेणे संप्राप्तिवडे विकुर्व्यं नथी, विकुर्वतो नथी अने विकुर्वशे पण नहीं.

?२. प्र०—जइ णं भंते ! तीसए देवे महिडीए, जाव-एव-इयं च णं पमू विकुव्वित्तए, सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स, देवरण्णो अवसेसा सामाणिया देवा कंमहिडीया ? १२ प्र०—हे भगवन् ! जो तिष्यक देव एटली मोटी ऋदि-वाळो छे अने यावत्—एटलुं बधुं विकुर्वण करी शके छे तो देवेंद्र, देवराज शक्तना बाकीना—बीजा बधा सामानिक देवो केवी मोटी ऋदिवाळा छे ! (इत्यादि पूछवुं.)

१२. उ०—तहेव सन्वं, जाव—एस णं गोयमा! सक्कस्स देविंदस्स, देवरणो एगमेगस्स सामाणियस्स देवस्स इमेयारूवे विसये, विसयमेत्ते बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विकुन्विंसु वा, विकुन्विंति वा, विकुन्विंसिंति वा, तायत्तीसा य, लोगपाल—अग्गम-हिसी णं जहेव चमरस्स, नवरं—दो केवलकप्ये जंबूदीवे दीवे, अण्णं तं चेव.

१२. उ० — हे गौतम ! ते ज प्रमाणे बधुं जाणबुं, यावत् — हे गौतम ! देवंद्र, देवराज शक्तना प्रस्थेक सामानिक देवनो ए विषय छे, विषयमात्र छे, पण संप्राप्तिथी कोइए विकुर्व्युं नथी, विकुर्वतो नथी अने विकुर्वशे पण नहीं. शक्तना त्रायिश्वशक देवो विषे, छोकपाछो विषे अने पट्टराणीओ विषे चमरनी पेठे कहेवुं. विशेष ए के, तेओनी विकुर्वणा शक्ति आखा बे जंबुद्दीप जेटली कहेवी अने बाकी बीजुं बधुं ते ज प्रमाणे कहेवुं.

सेवं मंते !, संवे भंते ! ति दोचे गोयमे जाव-विहरइ.

हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे एम कही बीजा गौतम यावत्-विहार करे छे.

^{9.} मूलच्छायाः—गौतम! महर्द्धिकः, यावत्—महानुभागः, स तत्र खकस्य विमानस्य, चतुर्णां सामानिकसाहसीणाम्, चतस्याम् अप्रमहिषीणां सपरिवाराणाम्, तिस्यां पर्धदाम्, सप्तानाम् अनीकानाम्, सप्तानाम् अनीकाऽधिपतीनाम्, वोडशीनाम् आत्मरक्षदेवसाहसीणाम्, अन्येषां च बहूनां वैमानिकानां
देवानाम्, देवीनां च यावत्—विहरतिः एवंमहर्द्धिकः, यावत्—एतावच प्रभुविंकुर्वितुम्, तद्यथा नाम युवतिं युवा हस्तेन हस्ते गृह्णियात्, यथैव शकस्य तथैव
यावत्—एप गौतम! तिष्यकस्य देवस्य अयम् एतदूपो विषयः, विषयमात्रम् उदितम्, नो चैव संप्राप्त्या व्यकुर्विषुर्वा, विकुर्विन्त वा. विकुर्विष्यन्ति वा. वर्षि
भगवन्! तिष्यको देवो महर्द्धिकः, यावत्—एतावच प्रभुविंकुर्वितुम्, शकस्य भगवन्! देवेन्द्रस्य, देवराजस्य अवशेषाः सामानिका देवाः किंमहर्द्धिकाः ? तथैव
सर्वम्, यावत्—एष गौतम ! शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य एकैकस्य, सामानिकस्य देवस्य अयम् एतद्रूपो विषयः, विषयमात्रम् उदितम्, नो चैव संप्राप्त्या
व्यक्विंषुर्वा, विकुर्वेन्ति वा, विकुर्विष्यन्ति वाः त्रायिक्षशाक्ष्य, छोकपाला-ऽप्रमहिष्यो यथैव चमरस्य, नवरम्—द्दी केवलकल्यौ जम्बूद्वीपौ द्वीपौ, अन्यत्
तथैव. तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इति द्वितीयो गौतमो यावत्—विहरतिः—अनु०

६. शक्तस्य प्रकरणे 'जाव-चउण्हं चउरासीणं ' इत्यत्र यावत्-करणादिदं दश्यमः-''अद्वण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, चउण्हं लोगपालाणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं '' ति. शक्तस्य विकुर्वणा उत्ता, अथ तत्सामानिकानां सा बृत्तव्या, तत्र च स्वप्रतीतं सामानिकविशेषमाश्रित्य तचरितानुवादतस्तां प्रश्नयन् आहः-'एवं खलुं ' इत्यादि, एविमिति वक्ष्यमाणन्यायेन सामानिकदेवतयोत्पन्न इति योगः. 'तीसए' ति तिष्यकाभिधानः, 'सयंसि' ति स्वके विमाने 'पंचिवहाए पज्जतीए' ति पर्याप्तः-आहार-शरीरादीनामभिनिवृत्तिः, सा चान्यत्र षोढा उत्ताः इह तु पञ्चधाः-भाषा-मनःपर्याप्त्योबंहुश्रुताऽभिमतेन केनाऽपि कारणेन एकत्वविवक्षणात्. 'लद्धे' ति जन्मान्तरे तदुपार्जनापेक्षया, 'पत्ते ' ति प्राप्ता देवमवाऽपेक्षया, 'अभिसमन्नागए' ति तद्भोगाऽपेक्षया, 'जहेव चमरस्स' ति अनेन लोकपाला-ऽप्रमहिषीणां 'तिरियं संखेजे दीवसमुद्दे' ति वाच्यम् इति सूचितम्.

६. शक्रना प्रकरणमां ['जाव-चउण्हं चउरासीणं'] ए ठेकाणे जे यावत्-शब्द मूक्यों छे तेथी आम जाणतुं:—"अहण्हं अगगमिहिसीणं सपरिवा-राणं, चउण्हं लोगपालाणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं ''ति. आगळ शक्रनी विकुर्वणा कही छे अने ह्वे तेना सामानिक देवोनी विकुर्वणा कहेवी ए प्रसंगप्राप्त छे. तो हवे पूछनार पुरुष पोताना ओळखिता एक कोइ सामानिकने आश्रीने तेना चिरतानुवादपूर्वक तेनी विकुर्वणा संबंध प्रश्न करतां कहे छे के:—['एवं खलु' इत्यादि.] 'जे रीति हमणां कहेवानी छे ते रीतिवल्डे सामानिक देवपणे उत्पन्न थएलो' ए प्रमाणे संबंध करतो. ['तीसए'ति] तिष्यक नामनो, ['सयंसि'ति] पोताना विमानमां, ['पंचविहाए पर्जनीए'ति] पांच प्रकारनी पर्याप्तिवल्डे; पर्याप्ति एटेले आहार तथा शरीर वगेरेनी पूरेपूरी बनावट. शं०—बीजे स्थले पर्याप्तिना छ प्रकार कह्या छे तो आ स्थले तेना पांच प्रकार केम कह्या ! समा०—बहुश्रुत पुरुषोने इष्ट कोइ पण कारणथी भाषापर्याप्ति अने मनःपर्याप्ति ए बन्ने जूदी जूदी नथी गणी, किंतु ते बन्ने एक ज गणी छे मोटे अहीं पांच पर्याप्तिओं कही छे. ['लेडे'ति] बीजा जन्ममां तेनुं उपार्जन कर्यु छे माटे मेळवी—लामी—छे. ['पत्ते'ति] देव भवनी अपेक्षाए प्राप्त करेली, ['अभिसमन्नागए'ति] प्राप्त करेल भोगादिकना अनुभववले सामे आणेली. ['जहेव चमरस्स'] आ सूत्रथी एम सूचव्युं के, लोकपाल अने पहुराणीओनी विकुर्वणा शक्ति माटे ['तिरियं संखेंको दीव-समुद्दे'ति] एम कहेवुं.

9. समस्त विश्वहप रंग उपरनां आ वे पात्रो—आतमा, शरीर-देह—मुख्य छे. तेमानुं पहेलुं पात्र अजर, अमर, अविनाशी आदि गुणोबालुं छे; बीजुं नाशवंत—रूपांतर पामनारूं-छे. तेनो विद्वानोए अर्थ आदो कर्यों छे:—"शीर्यते इति शरीरः, श्रू-इर=शरीरः" जे, उत्पत्तिनी अनंतर शीर्ण-जीर्ण-थाय ते शरीर. शरीरनी आवी अवस्था विश्वने विदित छे. अने संसारनुं होवापणुं शरीरने आभारी छे. कारण के "शरीर छे लां संसार छे अने शरीर नथी त्यां संसार पण नथी." आम छे, तो पण तेनी रचनाना संबंध विद्वानोमां घणां मतो छे; कोइ:—देहने पांच महाभूतोना—पृथिवी, पाणी, तेजः, वायु, आकाशना—अमूक प्रमाणना मेळाप मात्रथी रचानुं गणे छे. कोइ:—पांच महाभूतो साथे ईश्वरी लीलाने पण कारणरूपे जणावे छे; सारे जैनमहर्षिओ तेने कर्मो वडे बद्ध आत्मा तेवां प्रकारनी पुद्गलो द्वारा रचे छे एम जणावे छे. तेनुं पोषण अनुकूळ आहारवडे थाय छे. एटले आहारनी लोही, मांस, यावत्—शुक्रपणे परिणाम थाय छे, अने तेनो अंतिम विकास इंदियोरूपे थाय छे. आम थवामां कोइ:—शरीरनी एवा प्रकारनी यंत्र—रचनाने ज मान आपे छे. तो बीजाओ ते माटे शक्ति विशेषना महत्त्वने स्वीकारे छे. त्यारे जैन महर्षिओ तेम थवामां खास एक पुद्गलजा शक्तिने स्वीकारे छे, अने तेने 'पर्याप्ति' कहें छे. ते आ रीतिए:—"परिराश्वाप्ति" कि छे. तेनो सामान्य अर्थ संपूर्ण निर्माण थाय छे, तो पण तेनो विशेष अर्थ तेओए आ प्रमाणे कर्यों छे:—"पुद्रलोपचयजः पुद्रलप्रहण-परिणमनहेतुः शक्तिविशेषः"—'पुद्रलोना समूह्यी थनार, अने पुद्रलोने लेवामां तथा परिणामनवामां हेतुभूत शक्ति विशेष वे 'पर्याप्ति' तेनी संख्या अहीं पांचनी छे. एटके:—भाषा, तथा मनःपर्याप्तिने भेगी गणेली छे. पण कर्मप्रंथ चोथामां (भा० सा० ए० ९६ मो) तेनी गणना छनी छे. ए गणना, अने तेना अर्थादि आ प्रमाणे छे:—

"सा च विषयभेदात् षोढाः-आहारपर्याप्तः, शरीरपर्याप्तः, इन्दिय-पर्याप्तः, उच्छ्वासपर्याप्तः, भाषापर्याप्तः, मनःपर्याप्तिश्च इति. तत्र यया बाह्यम् आहारम् आदाय खलरसह्त्पतया परिणमयति साऽऽहारपर्याप्तः, यया रसीभूतम् आहारं रसा-ऽत्तग्-मांस-मेदो-ऽस्थि-मज्जा-गुक्कलक्षणसप्तधातुरूप-तया परिणमयति सा शरीरपर्याप्तः, यया धातुरूपतया परिणमितम् आहा-रम् इन्द्रियह्तपतया परिणमयति सा इन्द्रियपर्याप्तः, यया पुनरङ्कासप्रायोग्य-वर्गणादिलकम् आदाय उच्छ्वासह्त्यतया परिणमय्य, आलम्ब्य च मुखति सा उछ्वासपर्याप्तिः, यया तु भाषाप्रायोग्यवर्गणाद्व्यं गृहीला भाषात्वेन परिणमय्य, अवलम्ब्य च मुखति सा भाषापर्याप्तः, यया पुनर्मनोयोग्यवर्ग-णादिलकं गृहीत्वा मनस्त्वेन परिणमय्य, अवलम्ब्य च मुखति सा मनः-पर्याप्तिः." "ते (पर्याप्ति) विषयोना भेदवडे छ प्रकारनी छे:-आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इंदियपर्याप्ति, उच्छ्वासपर्याप्ति, माधापर्याप्ति अने मनःपर्याप्ति, जेना द्वारा बहारना आहारने ठइने खल रसपणुं पमाडाय ते आहारपर्याप्ति; रसहप थएलो आहार जेना वडे रसा, रक्त, मांस, वरबी, हाडकां, मजा—हाडकानी चरबी-रस, वीर्यहप एम साते धातुपणुं पमाडाय ते शरीरपर्याप्ति; धातुपणुं पामेलो आहार जेनाथी इंद्रियो ह्वे थाय ते इंद्रियपर्याप्ति; वळी जेनी सहायथी उच्छ्वासने योग्य वर्गणा दिलको-अणुओना समुदाय-ने प्रही, उच्छ्वासहपने पमाडी, धारीने मुकाय ते उछ्वासपर्याप्ति; तथा जेना बळ-वडे भाषाना हपने पामवाने योग्य वर्गणा-द्रव्यो-ने छेवाय, अने तेने भाषा-हपे रची, भारी, भाषाह्वे मुकाय-बोलाय-ते भाषापर्याप्ति; तेम ज जेनी सहाये सननी रचनाने योग्य अणुओना-वर्गणाओना-समूहने मनोभाव आपी,

ते रूपे धारी, मूकाय ते मनःपर्याप्ति." आ बधी पर्याप्तिओ-पुद्रलोशी उपजनारी शक्तिओ-जड छे, तो पण आत्माने ते ते कार्योमां सहायिकाओ धइ देहतंत्रने निमाने छे. शरीरना-(इन्द्रियोना नधारारूप)-विकास प्रमाणे पर्याप्तिओनो पण विकास कमे होय छे; जेमः---

" आहार-सरीरिं-दिय-पञ्चत्ती आणपाण-भास-मणे, चत्तारिः पंच छप्पि य एपिंदिय-विगल-संनीणं." ''आ छ पर्याप्तिओमांथी एकेंद्रियोने-पृथिची, जळ, अग्नि, वायु, चन-स्पतिओना देहधारीओने, चार-आहार, शरीर, इन्द्रिय, उच्छ्वास-पर्याप्तिओ माडी, यावद-शरीररूपे घडे छे. तथा श्वासोच्छवासने धारे छे.) अने विकल

होय छे. (एटले तेओ आहार लड् तेने रसहपे रची, पुनः तेने विशेष हपांतरे पमाडी, यावत्-शरीरहपे घडे छे, तथा श्वासोच्छ्वासने धारे छे.) अने विकल •ऊणी-वे, त्रण, चार-इंद्रियोबाळाने एक माषापर्याप्ति वधारे होय छे. (एटले तेओ तेओना करता बोलवातुं काम वधारे करे छे.) अने संज्ञीओ-मनुष्यो, तिर्यचो, नारकीओ, असुरो, देवो-ने पूर्व करतां एक वधारे-छए-होय छे. (एटले पूर्वना देहधारीओ करता आ आत्माओ मान सज्ञानने वधारामां

ईशानेंद्रनी विकुर्वणा.

? र. प्र०—'भंते'!' ति, भगवं तचे गोयमे वायुभूई अण-गारे समणं भगवं जाव-एवं बदासी:-जइ णं भंते! सके देविदे, देवराया महिडीूए, जाव-एवइयं च णं पभू विज्ञिक्वत्तए; ईसाणे णं भंते! देविदे, देवराया केमहिडीूए?

१३. उ०-एवं तहेव, नवरं-साहिए दो केवलकप्पे जंबूदीवे द्रीवे; अवसेसं तहेव एवं. १३. प्र०—'हे भगवन्!,' एम कही भगवान् त्रिजा गौतमः वायुभूति अनगार श्रमण भगवंत महावीरने नमीने यावत्—आ प्रमाणे बोल्या के:—हे भगवन्! जो देवेंद्र, देवराज शक्त यावत्—एवी मोटी ऋद्विवाळो छे अने यावत्—एटलुं विकुर्वण करी शके छे; तो हे भगवन्! देवेंद्र, देवराज ईशाने केवी मोटी ऋद्विवाळो छे १ (इत्यादि पूछवुं.)

१३. उ०—हें गौतम ां ते संबंधे बधुं तेम ज जाणवुं. विशेष ए कें, तेनी विकुर्वणा शक्ति आखा वे जंबुद्दीप करतां पण वधारे जाणवी अने बाकी बधुं पूर्व प्रमाणे ज जाणवुं.

"वळी जेओ पोताने योग्य पर्याप्तिओनी पूर्णतामां विकलो होय तेओ

'अपर्याप्तको,' तेओ 'लब्धि' अने 'करण ' नडे वे प्रकारनां छे. तेमां जेओ

अपर्याप्तो ज थईने मरे, पण पोताने योग्य बधी पर्याप्तिओने न भोगवे तेओ 'लब्धि-अपर्याप्तको.' तथा जेओ करण-शरीर, इदियादि-पर्याप्तिओनी पूरी

बनावटने न करे, अथवा अवश्य भविष्यमां बनावशे तेओ 'करण-अपर्या-

प्तको. ' एमां भागम आम जणावे छे:-लब्धि-अपर्याप्तको पण नियमधी

आहार, शरीर, अने इदिय-पर्याप्तिओनी पूर्णतामां ज मरे छे, नहीं के पहेलां;

धारे छे.) एम; योग्यता प्रमाणेनी वधी पर्याप्तिओने केटलाक आत्माओ पूरी करीने मरे छे, लारे केटलाको तेम करता नथी. एमांथी पहेलाओने 'पर्याप्तको,' अने वाकीनाओने 'अपर्याप्तको ' कहे छे. 'अपर्याप्तको ' वे प्रकारनां छे, जेम के:---

"×× ये पुनः खयोग्यपर्शितिपरिसमितिविकलास्तेऽपर्याप्तकाः, ते च द्विधाः-लब्ध्या, करणैश्च. तत्र येऽपर्याप्तका एव सन्तो न्नियन्ते, न पुनः खयोग्यपर्याप्तीः सर्वा अपि समर्थयन्ते ते लब्ध्यपर्याप्तकाः; ये पुनः कर-णानि-शरीरे-न्द्रियादीनि-न तावद् निर्वर्तयन्ति, अथवा अवश्यं पुरस्ताद् निर्वर्ते-यिध्यन्ति ते करणाऽपर्याप्तकाः. इह च एवम् आगमः-"लब्ध्यपर्याप्तका अपि नियमाद् आहार-शरीरे-न्द्रियपर्याप्तिपरिसमाप्तौ एव न्नियन्ते, नाऽवांग्; यसाद् आगामिभवाऽऽयुर्वद्वा न्नियन्ते सर्वे एव देहिनः, तन्नाऽऽहार-शरीरे-न्द्रियपर्याप्तिपर्याप्तानाम् एव बध्यते इति."

शरीरे-न्द्रियपर्योप्तिपर्याप्तानाम् एव बध्यते इति." कारण के, आवता भवतुं आयुः बांधीने ज देहीओ मरे छे. (जो आम न थाय तो बधा आत्मा मुक्त थाय.) अने ते-भवांतरनुं आयुः-आहार, शरीर, अने इंद्रियपर्याप्तिओनी पूरणतामां बंधाय छे." (आधी एम स्पष्ट जणाय छे के, देहीओ 'लब्धि-अपर्याप्तको' होय छे, पण 'करण-अपर्याप्तको' होतां नथीः—अनु॰

9. मूलच्छायाः—'भगवन्!' इति, भगवान् तृतीयो गौतमो वायुभूतिरनगारः श्रमणं भगवन्तं यावत्–एवम् अवादीत्ः-यदि भगवन्! शको देवेन्दः, देवराजो महार्द्धिकः, यावत्–एतावच प्रभुविंकुर्वितुम्, ईशानो भगवन्! देवेन्द्रः, देवराजः किंमहर्द्धिकः? एवं तथैव, नवरम्–साधिकौ द्वौ केंचलकल्पौ जम्बृद्धीपौ द्वीपौ, अवशेषं तथैव एवम्ः—अनु०

9. जे स्थळे 'सौधर्म' देवलोक छे, तेनी सम रेखाए बीजो 'ईशान' नामनो देवावास छे. ते स्थिति वगेरेमां सौधर्मने मळतो छे. ए पूर्वधी पिश्वममां लांबो, अने उत्तरथी दक्षिणमां पहोळो; मेरू पर्वतनी उत्तरे पूर्ण चंद्रमंडळने आकारे छे. तेमां बधी आतिनां स्फिटिकोथी रचाएलां अहावीस लाख विमानो छे. तेमां तुं प्रत्येक विमान अपूर्व शोभावालुं, रचना पूर्ण; सुखविहारो, वनो, उपवनो, किडाशैलो, वापिकाओ आदिथी पूर्ण छे. तेमांनां बधां विमानोनी सुखादिमां विषमता छे. तेमां योग्यता प्रमाणे देवो पोताना बधा परिवारो साथे रहे छे. तेनी मध्ये वधारे उंचां अने सोहमणां चार-अंक, स्फिटिक, रत्न, सुरूप-अवतंसको छे. ए बधानी मध्ये सौथी वधारे उन्नत, विशेष रचना पूर्ण, कांतिपूंज जेवो ईशान नामनो महा अवतंसक छे. एमां ईशानवासीओनो इंद्र-ईशानेंद्र-वसे छे:-"ईश×शानच्=ईशानः, स चासौ इन्द्रख-ईशानेंद्रः" समर्थ, किंवा स्वामित्ववाळो जे इंद्र ते-ईशानेंद्र. प्रज्ञापना (क० आ० पृ० १२२) मां ते संबंधे वर्णक आ प्रमाणे छे:—

"× × तेसि णं बहुमज्झदेसभाए पंच विध्या पण्णताः-अंकविध्यए, फिलिहविध्यए, रयणविध्यए, जातहवविध्यए; मज्झे इत्थ ईसाणविध्यए. ते णं विध्यया सन्वरयणामया, जाव-पिहरूवा. एत्थणं ईसाणाणं पज्जताऽ-पज्जताणं ठाणा पण्णता. तिसु वि लोगस्स असंखेज्जहमागे, सेसं जहा सोह-म्मणदेवाणं, जाव-विहरति. ईसाणे अत्थ देविदे, देवराया परिवसति सूल-पाणी, वसभवाहणे, उत्तरद्वलोगाहिवई, अद्वावीसविमाणावाससयसहस्साहि-वई, अरयंवरवत्थधरे; सेसं जहा सक्स्स, जाव-पभासेमाणे. तत्थ अद्वावीसाए विमाणावाससयसहस्साणं, असीतीए सामाणियसाहस्सीणं, तायतीसाए तायतीसगणं, चडण्हं लोगपालाणं, अट्टण्हं अगमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तर्वं अणीयाणं, सत्तर्वं अणीयाणं, चडण्हं अभीतीणं आयरक्खदेवसाहस्तीणं; अत्रेसिं च बहुणं ईसाणकृष्णवासीणं वेमाणियाणं देवाण य, देवीण य आहेवचं, पोरेवचं कुळ्वेमाणे जाव-विहरइ."

"×× तेना बहुमध्यदेशे पांच अवतंसको कह्यां छे:-(ईशानावतंसकनी पूर्वे) अंकावतंसक, (दक्षिणे) स्फटिकावतंसक, (पश्चिमे) रत्नावतंसक, यावत्-(उत्तरे) जातरूपावतंसक; तेओनी वचे ईशानावतंसक छे. ते अवतंसको बधी जातिनां रत्नोवडे रचाएलां, यावत्-प्रतिरूपो छे. अहीं पर्याप्तो अने अपर्याप्तो ईशानवासी देवोना स्थानो कह्यां छे. ते लोकना असंख्येय भागे छे. बाकीनो यावत्-विहरे छे, सुधीनो वर्णक सौधर्मवासी देवोनी समान जाणवो. ए स्थळे देवेंद्र, देवराज ईशान हाथमां त्रिश्ळूळने धारनार, बळदना वाहनवाळो, उत्तरार्थ लोकनो अधिपति, अट्टावीस लाख विमानोनो खामी, निर्मळ दिव्य वस्नोने पहेरनार वसे छे. तेनो बाकीनो यावत्-प्रभासतो सुधीनो सर्व वर्णक शक्तेंद्रनी तुल्य जाणवो. त्यां ते अट्टावीस लाख विमानोना, ऐसी हजार सामानिकोना, तेत्रीस त्रायाञ्चिशोना, चार-सोम-यम, वरुण, कुबेर-लोकपालोना, परिवार साथे आठ-कृष्णा, कृष्णराजी, रामा,

रामरक्षिता, वसू, वसुग्राा, वसुमित्रा, वसुंधरा-महाराणीओना; त्रण-अंतर, मध्य, बाह्य-सभाओना, सात-पायदळ, खार, गज, बळद, रथ, बाद्य, गांधर्व-सैन्योना, सात-लघुपराक्रम, महावायु, पुष्पदंत, महादामास्थी, महामाहर, महासेन, नारद-सेनानायकोना, त्रण लाख, बत्रीस हजार आतमरक्षक देवोना; अने बीजा पण अनेक ईशान देवलोकमां वसता वैमानिक देवोना, तथा देवीओना आधिपत्यने, पुरपतिपणाने करतो, यावत्-(सुखे) विचरे छे." ईशानेंद्रनी राज्य-व्यवस्था, सेना-विभाग, वगेरे वगेरेनी वर्णनाओमां शकेंद्रनी समानता जाणवी. पण ईशान इंद्रना अन्य वर्णक माटे 'रायपसेणी' सूत्रमांनो सूर्याभदेवनो अधिकार, तथा भगवतीनो चाल उद्देशक वगेरे दर्शनीय छे:—अन्

•

ृष्ठ, प्रo—जैइ णं भंते ! ईसाणे देविदे, देवराया एमहिद्वीए, जाव-एवतियं च णं पम् विकुव्वित्तए, एवं खलु देवाणुष्पयाणं अंतेवासी कुरुदत्तपृत्ते नामं पगतिमद्दए, जाव-विणीए, अद्वमंअद्वमेणं अणिनिखत्तेणं, पारणए आयंबिलपरिग्गहिएणं तबोकम्मेणं
उद्धृं बाहाओ पगिन्झिय पगिन्झिय सूरामिमुहे आयावणमूमिए
आयावेमाणे बहुपिंडपुण्णे छम्मासे सामण्णपरियागं पाठाणित्ता, अद्धमासिआए संलेहणाए अत्ताणं झूसेत्ता, तीसं भत्ताइं अणसणाई छेदेता,
आलोइयपिं कंते, समाहिपत्ते कालमासे कालं किचा ईसाणे कप्पे
संसंसि विमाणांसि; जा तीसए वत्तव्वया सा सव्वेव अपरिसेसा कुरुदत्तपुत्ते० ?

१४. उ०—नवरं—सातिरेगे दो केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे, अव-सेसं तं चेव, एवं सामाणिय-त्तायत्तीसग-लोगपाल-अग्गमिद्दिसीणं, जाव—एस णं गोयमा! ईसाणस्स देविंदस्स, देवरण्णो एवं एगमेगाए अग्गमिद्दिशीए देवीए अथमेथारूवे विसये, विसयमेत्ते बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विकुर्विसु वा, विकुर्व्वति वा, विकुर्व्वस्संति वा.

एवं सणंकुमारे वि, नवरं—चत्तारि केवलकपे जंबूदीवे दीवे, अदुत्तरं च णं तिरियमसंखेळो, एवं सामाणिय-त्तायत्तीस-लोगपाल-अग्गमहिसीणं असंखेळो दीव-समुद्दे सन्ने विकुन्वंति, सणंकुमाराओ आरखा उपरिल्ला लोगपाला सन्ने वि असंखेळो दीव-समुद्दे विकुन्वंति, एवं माहिंदे वि, नवरं—सातिरेगे चत्तारि केवलकपे जंबूदीवे दीवे, एवं बंगकोए वि, नवरं—अह केवलकपे, एवं लंतए वि, नवरं—सातिरेगे अह केवलकपे, महासुके सोलस केवलकपे, सहस्सारे सातिरेगे सोलस, एवं पाणए वि, नवरं—बत्तीसं केवलकपे, एवं अचुए वि, नवरं सातिरेगे बत्तीसं केवलकपे जंबूदीवे दीवे, अण्णं तं चेव.

१४. प्र०—हे भगवान्! जो देवेंद्र, देवराज ईशान, एवी मोटी ऋदिवाळो होय अने एटछं विकुर्वण करी शकतो होय तो स्वमावे भद्र, यावत्—विनीत, तथा निरंतर अहम अहम अने उपर—पारणे—आंबिल, एवा आकरा तपवडे आत्माने भावतो, उंचे हाथ राखी, सूर्यनी सामे उभो रही आतापनभूमिमां आतापना लेतो—तडकाने सहतो, पूरेपूरा छ मास साधुपणुं पाळी, पन्नर दिवसनी संलेखना-वडे आत्माने संयोजी, त्रीस टंक सुधी अनशन पाळी, आलोचन अने प्रतिक्रमण करी, समाधि पामी, काळमासे काळ करी आप देवानुप्रियनो शिष्य-कुरुदत्तपुत्र नामनो अनगार-ईशान कल्पमां, पोताना विमानमां ईशानेंद्रना सामानिकपणे देव थयो छे. जे वक्त-व्यता तिष्यक देव संबंधे आगळ कही छे ते बधी अहीं कुरुदत्तपुत्र देव विषे पण कहेवी. तो ते कुरुदत्तपुत्र देव केवी मोटी ऋदिनवाळो छे ? (इसादि पूछवं.)

१४. उ०—(हे गौतम! ते संबंधे बधुं पूर्व प्रमाणे ज जाणवुं.) विशेष ए के, कुरुदत्तपुत्रनी विकुर्वणा शक्ति आखा बे जंबुद्वीप जेटली छे अने बाकी बधुं ते ज प्रमाणे जाणवुं. ए प्रमाणे बीजा सामानिक देवो, त्रायिक्षंशक देवो, छोकपाछो तथा पट्टराणीओ संबंधे पण समजवुं. वळी हे गौतम! देवेंद्र, देवराज ईशाननी प्रत्येक पट्टराणीनी ए विकुर्वणा शक्ति, ते विषयरूप छे अने विषय मात्र छे, पण कोइए संप्राप्तिवडें विकुर्व्युं नथी, विकुर्वता नथी अने विकुर्वशे पण नहीं.

ए प्रमाणे सनत्कुमार देवलोक संबंधे पण जाणवुं. विशेष ए के, तेनी विकुर्वणा शक्ति आखा चार जंबुद्दीप जेटली छे. अने तिरछे तेनी विकुर्वणा शक्ति असंख्येय (द्वीप समुद्र सुधी) छे. ए प्रमाणे साम्रानिक देवो, त्रायिह्मंशक देवो, लोकपालो अने पट्टराणीओ; ए बधा असंख्येय द्वीप, समुद्रो सुधी विकुर्वी शके छे. सनत्कुमार-धी मांडीने उपरना बधाय लोकपालो असंख्येय द्वीप समुद्रो सुधी विकुर्वण करी शके छे. ए प्रमाणे माहेंद्रमां पण जाणवुं. विशेष ए के, आखा चार जंबुद्दीप करतां पण वधारे विकुर्वण शक्ति छे. ए प्रमाणे ब्रह्मले शक्ति छे. ए प्रमाणे लोककां पण स्वार्थे हिशेष ए के, तेओनी विकुर्वणा शक्ति आखा आठ जंबुद्दीप जेटली छे. ए प्रमाणे लातकमां पण समजवुं, विशेष ए के, आखा आठ जंबुद्दीप करतां पण वधारे विकुर्वणा शक्ति छे. महाशुक्रना देवोनी विकुर्वणा शक्ति सोळ जंबुद्दीप जेटली छे. सहस्रारना देवोनी विकुर्वणा शक्ति सोळ जंबुद्दीप जेटली छे. सहस्रारना देवोनी विकुर्वणा शक्ति सोळ जंबुद्दीप जेटली छे. सहस्रारना देवोनी विकुर्वणा शक्ति सोळ जंबुद्दीप

^{9.} मूळच्छायाः—यदि भगवन् ! ईशानो देवेन्द्रः, देवराजः एवंमहर्दिकः, यावत्—एतावच प्रभुविकुर्वितुम्, एवं खल्छ देवानुप्रियाणाम् अन्तेवासी कृददत्तपुत्रो नाम प्रकृतिभद्रकः, यावत्—विनीतः, अष्टममष्टमेन अनिक्षिप्तेन, पारणके आचामळपरिप्रहेण तप्रकर्मणा ऊर्ध्वे बाह्न प्रगृत्त प्रमुख्य आतापनभूमो आतापयन् बहुप्रतिपूर्णान् षण्मासान् श्रामण्यपर्यायं पाळियत्वा, अर्धमासिक्या संठेखनया आत्मानं ज्रित्वा, त्रिशद् भक्तानि अनशनानि छित्त्वा, आलोचितप्रतिकान्तः, समाधिप्राप्तः काळमासे काळं कृत्वा ईशाने कर्षे खीये विमानेः या तिष्यके वक्तव्यता सा सर्वा एव अपरिशेषा कृदत्तपुत्रेः नवरम्—सातिरेको हो केवळकल्पो जम्बूहीपो हीपो, अवशेषं तचेव, एवं सामानिक-त्रायश्चिशकः लोकपाळ-अप्रमहिषीणाम्, यावत्—एव गौतम ! ईशानस देवेन्द्रस्य, देवराजस्य एवम् एकैकस्या अप्रमहिष्या देव्या अयम् एतद्रूपो विषयः, विषयमात्रम् उदितम्, नो चेव संप्राप्त्या व्यकुर्विषुर्वा, विकुर्वेन्ति वा, विकुर्वेव्यन्ति वाः एवं सनत्कुमारेऽपि, नवरम्—चत्वारः केवळकल्पाः जम्बूहीपाः द्वीपाः, अधीत्तरं च तिर्यगसंख्येयान्, एवं सामानिक-त्रायश्चिशक् लोकपाळ-अप्रमहिषीणाम् असंख्येयान् द्वीप-समुद्रान् सर्वात्वेवित्ते, सन्तुमाराद् आरब्धाः उपरितनाः लोकपाळः सर्वेऽपि असंख्येयान् द्वीप-समुद्रान् विकुर्वेन्ति, एवं माहेन्देऽपि, नवरम्—सातिरेकाः चत्वारः केवळकल्पाः जम्बूहीपाः द्वीपाः, एवं ब्रह्मलोकेऽपि, नवरम्—ख्रात्रेशतः केवळकल्पाः, सहस्रारे सातिरेकाः योवशः, एवं प्राणतेऽपि, नवरम्—द्वार्तिशतः केवळकल्पाः, सहस्रारे सातिरेकाः योवशः, एवं प्राणतेऽपि, नवरम्—द्वार्तिशतः केवळकल्पाः, प्रवस्त अच्यत् तदेवः—अनुः

करतां पण वधारे छे. प्राणतना देवोनी विकुर्वणा शक्ति बत्रीस जंबूद्वीप जेटली छे. अने अच्युतना देवोनी विकुर्वणा शक्ति आखा बत्रीस जंबूदीप करतां पण कांइक वधारे छे. बाकी बधुं ते ज प्रमाणे जाणवं.

सेवं भंते 1, सेवं भंते ! ति तच्चे गोयमे वायुभूई अणगारे समणं मगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, जाव-विहरइ.

हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे एम कही त्रिजा गौतम वायुभूति अनगार श्रमण भगवंत महावीरने वांदे छे, नमे छे अने यावत्-विहरे छे.

७. 'ईसाणे णं मंते !' इत्यादि. ईशानेन्द्रस्य प्रकरणम्. इह च 'एवं तहेव' त्ति अनेन यद्यपि शक्रसमानवक्तव्यम् ईशा-नेन्द्रप्रकरणं सूचितम्, तथाऽपि विशेषोऽस्ति, उभयसाधारणपदापेक्षत्वादतिदेशस्येति, स चायम्:-'' से णं अङ्गावीसाए विमाणावास-सयसहस्साणं, असीईए सामाणियसाहस्सीणं, जाव-चउण्हं असीईणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं '' ति ईशानवक्तव्यताऽनन्तरं तत्सामा-निकवक्तव्यतायां स्वप्रतीतं तद्विशेषम् आश्रित्य तचरिताऽनुवादतः प्रश्नयन्नाहः-'एवं खलु' इत्यादि. 'उढ्ं वाहाओ पंगि व्यिय ' त्ति प्रगृह्य विधाय इत्यर्थ:. 'एवं सणंकुमारे वि 'ति अनेनेदं सूचितम्:-''सणंकुमारे णं भंते ! देविंदे, देवराया केमहिडूीए, केवइयं च णं पम् विजन्नित्तए ? गोयमा ! सर्णंकुमारे णं देविंदे, देवराया महिड्ढीए, से णं बारसण्हं विमाणावाससयसाहस्सीणं, बावत्तरीए सामा-णियसाहस्सीणं ति, जाव-चउण्हं बावत्तरीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं " इत्यादि इति. 'अग्गमहिसीणं ' ति यद्यपि सनत्कुमारे स्त्री-णामुत्पत्तिर्नास्ति, तथापि याः सौधर्मोत्पन्नाः समयाधिकपल्योपमादिदश्चपल्योपमान्तस्थितयोऽपरिगृहीतदेन्यः, ताः सनत्कुमारदेवानां भोगाय संपद्यन्त इति कृत्वा अग्रमहिष्य इत्युक्तमिति. एवं माहेन्द्रादिसूत्राण्यपि गायानुसारेण विमानमानम्, सामानिकादिमानं च विज्ञाय अनुसंधा-नीयानि, गाथाश्वेवम्:-'' बत्तीसै अहावीसा बारस अह चउरो सयसहस्सा, आरणे बंगलोया विमाणसंखा भवे एसा. पत्रासं चत्त छ-चेव सहस्सा लंतक-सुक-सहस्सारे, सय चलरो आणय-पाणएसु तिण्णि आरण्ण-चुयओ.'' सामानिकपरिमाणगाथाः—''र्वेलरासीई असीई बावत्तरी सत्तरी य सड़ी य, पचा चत्तालीसा तीसा वीसा दस सहस्सा,'' इह च शक्रादिकान् पञ्जैकान्तरितान् अग्निभूतिः पृच्छति, ईशानादींश्व तथैव वायुभूतिरिति.

७. ['ईसाणे णं मंते !' इत्यादि.] ए ईशानेंद्रनुं प्रकरण छे. जो के अहीं ['एवं तहेव 'त्ति] ए सूत्रथी एम सूचव्युं छे के, ईशानेंद्रनुं प्रकरण

शकनी पेठे वक्तव्यतावाळुं छे. तो पण आ ईशानेंद्रना प्रकरणमां शकना प्रकरण करतां कांइक विशेषता छे. शं०-ज्यारे ए बन्ने प्रकरणोमां समानपणुं

नथी, तो अहीं ते बन्नेने समान शा माटे कहां ? समा०-केटलांक प्रकरणो केटलाक भागमां मळतां होय छे अने केटलाक भागमां जुदां होय छे तो पण ते प्रकरणो कोइ रीते समान कहेवाय छे; ए रीते अहीं पण पूर्वीक्त बन्ने प्रकरणनी समानता गणी छे. कारण के, अतिदेश-सरखाइनुं सूचक-वाक्य बन्ने प्रकरणोनी साधारण बाबत लड्ने वापरी शकाय छे. जे विशेष छे ते आ छे:-"अडीवीस लाख विमानो उपर, एंशी हजार सामानिक देवो उपर

अने यावत्-चार एंशी हजार-(३,२००००)-अंगरक्षक देवो उपर ते ईशानेंद्र स्वामिपणुं भोगवे छे.'' ईशान इंद्रनी वक्तव्यता पछी तेना सामानिक देवनी वक्तव्यता स्थानापन्न छे अने ते कहेवा माटे पूछनार पोताना ओळखिता कोइ सामानिकने आश्रीने तेना चरितानुवादपूर्वक पूछता कहे छे के:--

['एवं खलु' इत्यादि.] ['उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय'ति] अर्थात् बन्ने हाथने उंचा राखीने. ['एवं सणंकुमारे वि'ति] आ सूत्रथी आ प्रमाणे सूचव्युं छे:-''सणंकुमारे णं मंते ! देविंदे, देवराया केमहिङ्कीए, (इत्यादि) केवइअं च णं पभू विउब्बित्तए ? गोयमा ! सणंकुमारे णं देविंदे, देवराया महिङ्कीए, (इत्यादि) से णं बारसण्हं विमाणावाससयसाहस्सीणं, बावत्तरीए सामाणियसाहस्सीणं ति, जाव-चउण्हं बावत्तरीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं?

ईशाननं साम्य.

ड़ों मेद.

ता माटे

देवीओनो तेग.

इत्यादिः ['अग्गमहिसीणं'ति] जो के सनत्कुमार देवलोकमां स्त्रीओनी उत्पत्ति नथी, तो पण समयाधिक पल्योपमथी मांडी दस पल्योपम सुधीनी आवरदावाळी अने कोइने पण नहीं परणेली जे स्त्रीओ सौधर्म देवलोकमां थाय छे ते स्त्रीओ सनत्कुमारोना भोग माटे काममां आवे छे, माटे 'अग्र-महिषी ' एम कह्युं छे. ए प्रमाण माहेंद्रादि संबंधी सूत्रो पण, नीचली गाथाने अनुसारे तेना विमानीनुं मान अने सामानिकादिकनी संख्या जाणीने ी संख्या. अनुसंघानीय छे. ते गाथाओ आ छे:-" सौधर्ममां बैत्रीस लाख, ईशानमां अद्वावीसं लाख, सनत्कुमारमां बार लाख, माहेंद्रमां आठ लाख अने

मूळच्छायाः—तदेवं भगवन्!, तदेवं भगवन्! इति तृतीयो गौतमो वायुभृतिरनगारः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति, यावत्-विहरतिः-अनु॰

^{9.} प्र॰ छायाः— सोऽष्टार्विशतेर्विमानाऽऽवासशतसहस्राणाम् , अशीतेः सामानिकसाहस्रोणाम् , यावत्-चतुर्णाम् अशीतीनाम् आत्मरक्षकदेवसाहस्रीणाम् इति. २. सनत्कुमारो भगवन्। देवेन्द्रः, देवराजः किंमहर्द्धिकः, कियच प्रभुविंकुर्वितुम्? गौतम! सनत्कुमारो देवेन्द्रः, देवराजो महर्द्धिकः, स द्वादशानां विमा-नाऽऽवाससाहसीणाम्, द्वासप्ततीनां सामानिकसाहसीणाम् इति; यावत्-चतुर्णां द्वासप्ततीनां आत्मरक्षकदेवसाहसीणाम्. ३. द्वात्रिंशद् अष्टाविंशतिः द्वादश अष्ठ बत्वारि शतसद्त्राणि, आरणे ब्रह्मलोके. विमानसंख्या भवेद् एषा. पश्चाशत् बत्वारिंशत् षद् चैव सद्त्राणि लान्तक-शुक-सहस्रारे, शतं चत्वारि आनत-प्राणतयोः त्रीणि आरणा-ऽच्युतयोः. ४. चतुरशीति-रशीतिः द्वासप्ततिः सप्ततिश्र षष्टिश्व, पश्चाशत् चत्वारिंशत् त्रिंशद् द्वादशः दश सहस्राणिः—अनु०

१. आ पाठने मळतो पाठ ईशानेंद्रना वर्णकमां प्रह्मापना (क॰ आ॰ पृ॰ १२२) मां पुरो छे. ते प्रथमना 'ईशानेंद्र' ना टिप्पनमां उद्धरेलो छे. २. आ पाठना 'सर्णकुमारे णं देविंदे' भागने मळतो पाठ प्रज्ञापना (क॰ आ॰ प्ट॰ १२३) मां छे. २. आ वे गाथाओना सरखा भाववाळी वे गाथाओ

हहारोकमां चार लाख विमानो छे. अर्थात् ब्रह्मलोक सुधी पूर्व प्रमाणेनी संख्याबाळां विमानो छे. लांतकमां पचास हजार, महाशुक्रमां चाळीस हजार, महस्रक्षारमां छ हजार, आनत, प्राणत, आरण अने अच्युतमां सातसें; अर्थात् आनत अने प्राणतमां चारसें अने आरण तथा अच्युतमां त्रणसें विमानो हो." सामानिकोनी संख्या सूचक आ गाथा छे:—"चोराँसी हजार, एंसी हजार, बहाँतिर हजार, सित्तेर हजार, साठ हजार, पचास हजार, चाळीस हजार, त्रीस हजार, वीस हजार अने दश हजार सामानिक देवो छे." अहीं शक वंगेरे एकांतरित पांच इंद्रो संबंधे अग्निभूति पूछे छे अने ईशान वंगेरे इंद्रो संबंधे वायुभूति पूछे छे.

सामानिको गणनाः

ईशानेंद्रनी दिव्य देव-ऋद्धि.

२५. प्र०—तैए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइं ं नंदणाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पार्ड मोयाओ नयरीओ ते णं काले निक्लमइत्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ. णं. ते णं समये णं रायगिहे नामं नगरे होत्था. (वण्णओ०) जाव—परिसा पज्जुवासइ. ते णं काले णं, ते णं समये णं ईसाणे देविंदे, देवराया, मूलपाणी, वसहवाहणे, उत्तरडुलोगा-हिवई, अट्टावीसविमाणावाससयसहस्साहिवई, अरयंबरवत्थघरे, आलइयमालमउडे, नवहेमचारुचित्तचंचलकुंडलविलिहिज्जमाणगंडे, जाव-दस दिसाओ उज्जोवेमाणे, पाभासेमाणे, ईसाणे कप्पे, ईसाणवर्डिसए विमाणे, जहेव रायप्पसेणइज्जे जाव-दिन्वं देविङ्विं जांव-जामेव दिसिं पाउच्मूए, तामेव दिसिं पाडिगए, 'भंते !' ति, भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, एवं वदासी:-अहो 11 णं भंते ! ईसाणे देविंदे, देवराया महिड्डीए, ईसाणस्स ण मंते ! सा दिव्या देविडी काहीं गया, काहीं अणुपविद्वा ?

१५. उ०-गोयमा ! सरीरं गया.

१६. प्र०-से केणहेणं एवं वुचइ-सरीरं गया ?

१६. उ०—गोयमा! से जहा नामए कूडागारसाला सिया दुंहओ लित्ता, गुत्ता, गुत्तदुवारा, णिवाया, णिवायगंभीरा, तीसे णं कूडागारसालाए दिइंतो भाणिअञ्बो.

१५. प्र०--सार पछी कोइ एक दिवसे श्रमण भगवंत महावीर मोका नगरीना नंदन नामना चैत्यथी बहार नीकळी जनपदविहारे विहरे छे. ते काळे, ते समये राजगृह नामनुं नगर हतुं. (वैर्णक०) यावत्-सभा पर्युपासे छे. ते काळे, ते समये देवेंद्र, देवराज, हाथमां शूळने धारण करनार, बळदना वाहनवाळो, छोकना उत्त-रार्धनो धणी, अहावीस लाख विमाननो उपरी ईशान इंद्र, आकाश जेवा निर्मळ वस्त्रने पहेरी, माळाथी शणगारेळा मुकुटने माथे म्की, नवा सोनाना सुंदर, विचित्र अने चंचळ कुंडळोथी गालोने झग-झगावतो, यावत्-दशे दिशाओने प्रकाशित करतो ते (ईशानेंद्र) ईशानकरुपमां, ईशानावतंसक विमानमां राजप्रश्नीय-रायपसेणीय-उपांगमां कह्या मुजब यावत्-दिव्य देवऋद्भिने अनुभवतो, यावत्-जे दिशामांथी प्रकट्यो हतो, ते ज दिशामां पाछो चाल्यो गयो. हवे 'हे भगवन् !', एम कही भगवान् गौतम श्रमण भगवंत महावीरने वांदे छे, नमे छे अने तेओ (नमीने) आ प्रमाणे बोल्या के:--हे भगवन् ! अहो !! देवेंद्र, देवराज ईशान मोटी ऋद्विवाळो छे. हे भगवन् ! ईशानेंद्रनी ते दिव्य देवऋद्धि क्यां गई अने क्यां पेसी गई ?

१५. उ०—हे गौतम! ते दिव्य देवऋदि शरीरमां गई अने शरीरमां पेसी गई.

१६. प्र०—हे भगवन् ! 'ते दिव्य देवऋदि शरीरमां गई' एम कहेवानुं हुं कारण ?

१६. उ०—हे गौतम! जेम कोइ एक कूटाकार-शिखरना आकारनं-घर होय, अने ते बन्ने बाजुथी लिंपेलुं होय, गुप्त होय, गुप्त बारणावाळुं होय, पवन विनानुं होय, जेमां पवन न पेसे एवं उंडुं होय; एवा कूटाकारशाळानुं दृष्टांत कहेवुं.

प्रकापना (क॰ आ॰ पृ॰ १२८) मां आवे आकारे अवलोकाय छे:-"बत्तीस-ऽहावीसा बारसा-ऽह-चडरो सयसहस्सा, पत्रा-चतालीसा छच सहस्सा सह-स्सारे. आणय-पायणकप्पे चत्तारि सया आरणा-ऽच्चुए तिण्णि, सत्त विमाणसयाई चडमु वि एएमु कप्पेमु." ४. सामानिकोनी गणनाने गणनारी आ गाथानी तुल्य गाथा प्रज्ञापना (क॰ आ॰ पृ॰ १२८) मां छे:-अनु॰

^{9.} मूलच्छायाः—ततः श्रमणो भगवान् महावीरोऽन्यदा कदाचिद् मोकाया नगर्याः नन्दनात् चैत्यात् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्कम्य वहिर्जनपद-विहारं विहरति. तस्मिन् काले, तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरम् अभवत्. (वर्णकः) यावत्—पर्वत् पर्युपास्ते. तस्मिन् काले, तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरम् अभवत्. (वर्णकः) यावत्—पर्वत् पर्युपास्ते. तस्मिन् काले, तस्मिन् समये देशाने देवेन्द्रः, देवराजः, शूलपाणिः, वृषभवाहनः, उत्तरार्घलोकाऽधिपतिः, अष्टाविश्वतिनानाऽऽवासशतसहस्राधिपतिः, अराजोऽम्बरवस्रधरः, आलिन्तिनालमुकुटः, नवहेमचाक्वित्रच्यलकुण्डलविलिख्यमानगण्डः, यावत्—दश्च दिशाः उद्योतयन्, प्रभासयन्, ईशाने कल्पे ईशानावतंसके विमाने, यथैव राजप्रश्लीये यावत्—दिव्यां देवर्धिम्, यावत्—यामेव दिशं प्रादुर्भूतः, तामेव दिशं प्रतिगतः; 'भगवन् !' इति, भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं मन्दते, नमस्यति, एवम् अवावीतः—अहो !! भगवन् ! ईशानो देवेन्द्रो देवराजो महर्धिकः, ईशानस्य भगवन् ! सा दिव्या देवर्धिः कुत्र गता, कुत्र अनुप्रविद्या शौतम ! शरीरं गता. तत् केनाऽर्थेन एवम् उच्यते—शरीरं गता ! गौतम ! तद्यशा नाम कूटाकारशाला स्याद् द्विथा लिप्ता, गुप्ता, गुप्तद्वारा, निर्वाता, निर्वातगम्भीरा, तस्याः कूटाकारशालायाः दृशन्तो भणितन्यः—अनु०

१. ए संबंधेना वर्णक माटे (भ० खं० १, पृ० १३ तथा १९ ना १ ने ७ अंकवाळां टिप्पणो गवेषो):--अनु०

१७. प्र०—ईसीणेणं भंते ! देविंदेणं, देवरण्णा सा दिन्वा देविड्डी, दिन्ना देवजुई, दिन्ने देवाणुभागे किण्णा लखे, किण्णा पत्ते, किण्णा अभिसमण्णागये ? के वा एस आसि पुन्नभवे, किंणामए वा; किंगोत्ते वा, कयरंसि वा गामंसि वा, नगरंसि वा, जाव—संनिवेसंसि वा, किं वा सोचा, किं वा दचा, किं वा भोचा, किं वा किचा, किं वा समायरित्ता, कस्स वा तहारू वस्स वा समणस्स वा, माहणस्स वा अतिए एगमवि आयरिअं, धम्मियं सुन्यणं सोचा, निसम्म जं णं ईसाणेणं देविंदेणं, देवरण्णा सा दिन्ना देविड्डी, जाव—अभिसमन्नागया ?

१७. उ०-एवं खलु गोयमा! ते णं काले णं, ते णं समए णं इहेव जंबूदीवे दीवे, भारहे वासे, तामिलत्ती नामं नयरी होत्था. (वण्णओ०) तत्थ णं तामिलत्तीए नयरीए तामली नामं १७. प्र०—हे भगवन् । देवेंद्र, देवराज ईशाने ते दिव्य देवऋदि, दिव्य देवकांति अने दिव्य देवप्रभाव केवी रीते लब्ध कर्यों, केवी रीते प्राप्त कर्यों अने केवी रीते सामे आण्यों ! तथा ते (ईशानेंद्र) पूर्वभवमां कोण हतो ! तेनुं नाम अने गोत्र शुं हतुं ! अने ते कया गाममां, कया नगरमां, तथा यावत्—कया संनिवेशमां रहेतो हतो ! तथा तेणे शुं सांभळ्युं हतुं, शुं दीधुं हतुं, शुं खाधुं हतुं, शुं कर्युं हतुं, शुं आच्युं हतुं अने तथा प्रकारना कया श्रमण या बाह्यणनी पासे एवं एक पण कर्युं आर्य अने धार्मिक वचन सांभळी अवधार्युं हतुं के जेने ल्ड्ने देवेंद्र, देवराज ईशाने ते दिव्य देवऋदि यावत्—सामे आणी !

१७. उ०—हे गौतम ! ते काळे, ते समये आ ज जंबूद्दीप नामना द्वीपमां भारत वर्षमां ताम्रीलिप्ती नामनी नगरी हती. (वर्णक्) ते ताम्रलिप्ती नगरीमां तामली नामनो मौर्यपुत्र—(मौर्यना वंशमां

"चंदग्रत्तपपुत्तो उ विंदुसारस्स नत्तुओ, असोगसिरिणो पुत्तो अंघो जायइ कागाणी." × × "पाटलीपुत्रनगरे चाणाक्यप्रतिष्ठितो मौर्यः, प्रथमं किल चन्द्रगुप्तो राजा वभूव, ततस्तत्पुत्रो विन्दुसारः समभूत, तद्वन्तरं तु तत्पुत्रोऽशोकश्रीजीतः, तस्य चाऽन्धोऽसो कुणालः पुत्रः. एवं च सल्येष चन्द्रगुप्तस्य प्रपौत्रः, विन्दुसारस्य तु नपृकः-पौत्रः, अशोकश्रीभूपित्तेस्तु पुत्रः, 'काकणि'-क्षित्रयभाषया राज्यं याचते इति. ततो यवनि-काऽपगमं कारियला किश्चित् सकौतुकेन राज्ञा सविशेषं पृष्टः, सर्वमिष खन्यतिकरं कुणालः कथयामास. ततः पृथिवीपितना पृष्टः-अन्धः, त्वं राज्येन कि करिष्यसि शतेन प्रोक्तम्-देव!, मम राज्याऽईः पुत्र उत्पन्नो वर्तते.

"चंद्रगुप्तनो प्रपोत्र, विंदुसारनो पौत्र, अशोकश्रीनो पुत्र अंध-(कुणाल) कागणि-राज्य-ने याचे छे." ×× "पूर्वे पाटलीपुत्र नगरमां चाणाक्य प्रतिष्ठित 'मौर्य' वंश हतो. तेनो आदि राजा चंद्रगुप्त थयो, तेनो पुत्र विंदुसार हतो. त्यार बाद तेनो पुत्र अशोकश्री-(गादीए) आन्यो. कुणाल, ए तेनो अंधपुत्र हतो. (तेना अंधापानं कारण ते स्थळेथी जाणवं.) आधी कुणाल ए, चंद्रगुप्तनो प्रपोत्र-पौत्रनो पुत्र, विंदुसारनो पौत्र अने अशोकश्री राजानो पुत्र थाय. ते अंध कुणाल क्षत्रिय भाषाए काकणि-राज्य-ने याचे छे. ए बाताथी राजाना मनमां कौतुक थवाथी पडदाने दूर करावी तेनो संपूर्ण दत्तांत पूछ्यो. कुणाले पातानो बधो सत्य बनाव कह्यो.

१. मूलच्छायाः—ईशानेन भगवन् ! देवेन्द्रेण, देवराजेन सा दिन्या देविद्धेः, दिन्या देवद्युतिः, दिन्यो देवाऽनुभावः केन रुक्षः, केन प्राप्तः, केन अभिसमन्वागतः ? को वा एष आसीत् पूर्वभवे, किनामको वा, किंगोत्रो वा, कतरस्मिन् वा प्रामे वा, नगरे वा, यावत्—संनिवेशे वा; कि वा श्रुला, किं वा दत्त्वा, किं वा भुक्तवा, किं वा कृत्वा किं वा समाचर्य, कस्य वा तथारूपस्य वा श्रमणस्य वा, माहनस्य वा अन्तिके एकमिप आर्थम्, धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा, निश्नम्य यद् ईशानेन देवेन्द्रेण, देवराजेन सा दिन्या देविद्धः, यावत्—अभिसमन्वागता ? एवं खलु गौतम ! तिस्मन् काले, तिस्मन् समये इहैव जम्बूद्दीपे द्वीपे भारते वर्षे ताझिलिती नाम नगरी अभवत्. (वर्णकः) तत्र ताझिलित्यां नगर्या तामली (ताझिलितो) नामः—अनु •

^{9. &#}x27;तात्रिलिति':—ए बंग-(बंगाळ)—देशनी मुख्य राज्यधानी तरीके श्रीमहाबीर प्रभुनी पूर्वे पण जाणिती हती, एम अहीं मूळमां वालतो गृहपति तामलीनो अधिकार जणावे छे. वळी जे समये आ नगरी ते देशनी राजधानी हती, त्यारे पण ते देशनुं गौरव पूर्ण अवस्थामां पहोचेलुं हतुं. 'बंग'नो, 'अंग ' अने 'कलिंग ' देशोनी साथे घणो घाडो संबंध हतो, एथी ए त्रणे देशोनी त्रिपुटी इतिहासमां गणाएली छे. ते पूर्वे पण उन्नतिनी पराकाष्टाए पहोंचेलो हतो, तेतुं कारण ए ज के, तेना विकास माटे जळमार्ग तथा स्थळमार्ग, एम बन्ने मार्गो खुळां हतां, एथी तेनो लाभ ते देशना अने अन्य देशोना व्यापारीओ वगेरे अत्साहे लेतां. ते समयनी देशनी अने राज्यधानीनी रसाळता, धन, धान्य पूर्णता, फळदरूपता आदिनी झांखप माटे श्रीअववाइ-जीथी मळतो चंपानो वर्णक उपयोगी छे. जे भगवती-(खं० १, १० १९) मां आपेलो छे. अत्यारे पण आ देश 'बंगाळ'ने नामे प्रसिद्ध छे, पण तेनी राजधानी 'तान्नलिती'ने बदले ते देशनुं गंगाने किनारे बसेलुं पाट नगर 'कलकत्ता' छे. श्रीपन्नवणा-प्रज्ञापना-(प ०१) मां आर्थ-अनार्यना भेदना प्रसंगमां क्रमे प्राप्त क्षेत्रार्यनी गणनामां तेने आर्थ देश बंगनी राजयधानी गणावी छे:—

[&]quot;से किं तं खेतारिया ? अद्भुवनीसितिविहा पण्णता, तं जहाः—राय "हे भगवन् ! क्षत्र-आयों कोण छे ? हे गौतम ! क्षेत्र-आयों साडी गिह मगह चंपा अंगा तह 'तामलित्ती' वंगा य ॰ " – (आ ॰ स ॰ पृ॰ ५५). पश्चीस कह्यां छे, ते आ प्रमाणेः –राजगृह मगधदेश, चंपा अंगदेश अने 'ताम्रलिप्ती' वंगदेश (वगेरेना)" ॰ – (आ ॰ स ॰ पृ॰ ५५):—अनु ॰

र. 'मीर्थपुत्र तामली':—एमां मीर्थपुत्र ए विशेषण छे. जे बंग देशनी प्रसिद्ध राजधानी ताम्रलिप्तीना गृहपितओमां ख्याती पामेला मीर्थवंश हारा अपाएछं जणाय छे. त्यों तामली ए नाम छे, ते तेनी उत्पत्ति नगरी ताम्रलिप्तीने आधारे अपाएछं जणाय छे. एथी श्रीमहानीर प्रभुनी पूर्वेथी बंगाळनी राजधानी ताम्रलिप्तीना गृहपितओमां ए बंश घणो प्रसिद्ध हतो एवं अहींना कथानकथी स्पष्ट जणाय छे, त्यारे बीजा साहित्यो तरफ हिन्यात करतां तेनो प्रतिष्ठापक चाणावय, ते वंशनो आदि महाराजा चंद्रगुप्त; अने तेतुं उत्पत्ति स्थळ पाटलीपुत्र, एम बधुंए जुदुं ज जणाय छे. (वळी, ए वंशनी उत्पत्ति माटे इतिहासक्तोनी आवी आवी तर्कणाओ पण छे:—महाराजा चंद्रगुप्तनी मातानुं नाम श्रीमुरादेवी हतुं, जेने आधारे ए वंश मीर्थना नामथी प्रसिद्धि पाम्योः अथवा ग्रर नामनी पूर्वे प्रसिद्ध जाति हती जेने आधारे ए वंश मीर्थने नामे इतिहासमां गनायोः) मौर्थ वंशनी उत्पत्तिनुं स्थळ- 'पाटलीपुत्र' पूर्वे घणुं प्रसिद्धि पामेखं शहेर हतुं. अने ते पूर्वे देशमां गंगा नदीने किनारे लंबाणे वसेला 'पटणा' नी आसपासमां हतुं एवी मान्यता छे; तेनी सलता पुराणा खोदकामथी ते शहेरनां थोडां घणां मळेलां चिह्नो—खंडेरो, पायाओ, जूनी वस्तुओ, ते समयना सिक्काओ अने कारिगरी—जणावे छे. आ वंशनी उत्पत्ति माटे श्रीविशेषावश्यक माष्य—(य० मं० १० ४०९—१०) मां आवो उल्लेख छे:—

मोरियेपुत्ते गाहावई होत्था, अडूे, दित्ते, जाव-बहुजणस्स अपरि-नुष्ट्या वि होतथा, तए णं तस्स मोरियपुत्तस्स तामिलत्तस्स गाहा-**बह्**रस अन्नया क्रयाइं पुञ्चरत्तावरत्तकालसमयांसि कुटुंबजागरियं जाग-रमाणस्त इमेयारूवे अन्झित्थए, जाद-समुप्पजित्था, अत्थि ता मे पुरा पोराणाणं, सुचिण्णाणं, सुपरकंताणं, सुमाणं, कलाणाणं, कलाणं कम्माणं कल्लाणफलावित्तिविसेसो, जेणाहं हिरण्णेणं वडूामि, सुव-ज्योमं बङ्कामि, **घणे**णं वङ्कामि, घण्णेणं बङ्कामि, पुत्तेहिं बङ्कामि, वसृहिं वड्ढामि, विपुलधण-ऋणग-स्यण-मणि-मोत्तिय-संख-सिल-प्पवा-ल-रत्तरयणसंतसारसावएज्जेणं अईव अईव अभिवड्यामि, तं किंणं अहं पुरा पोराणाणं, साचिण्णाणं, जाव-कडाणं कम्माणं एगंतसो खयं उवेहमाणे विहरामि, तं जाव-ताव अहं हिरण्णेणं वडा़ामि, . जाव-अतीव अतीव अभिवड्यामि, जावं च णं मे मित्त-नाइ-नियग-संबंधि-परियणो आढाति, परियाणाइ, सकारेइ; सम्माणेइ, कलाणं, मंगलं, देवयं, विणएणं चेइयं पञ्जुवासइ, तावता मे सेयं कहं पाउ-पुमायाए रयणीए जाव-जलंते, सयमेव दारुमयं पडिग्गहं करेता, विउलं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं उवक्खडावेता , मित्त-णाइ-नियग-सयण-संबंधि-परियणं आमंतेत्ता, तं मित्त-गाइ-नियग-संबंधि-परियणं विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं, वत्थ-गंध-मल्ला-लं-कारेणं य सकारेता, सम्माणेता तस्सेव भित्त-णाइ-नियग-संबंधि-परियणस्स पुरओ जेहुपुत्तं कुटुंबे ठावेत्ता, तं मित्त-णाइ-नियग-संबंधि-परियणं, जेंद्वपुत्तं च आपुाच्छित्ता सयमेव दारुमयं पडिग्गहं गहाय

थएलो) गृहपति रहेतो हतो. ते तामळी गृहपति धनाट्य अने दीप्तिवाळो हतो, तथा यावत्—घणा माणसोधी पण ते गांज्यो जाय तेवो न हतो. हवे एक दिवसे ते मौर्यपुत्र तामली गृहपतिने रात्रीना आगळना अने पाछळना भागमां-मधराते-जागता जागता कुटुंबनी चिंता करता एवा प्रकारनो संकल्प उत्पन्न थयो के पूर्वे करेलां, ज्नां, सारी रीते आचरेलां, सुपराक्रमयुक्त, छुम अने कल्याणरूप मारा कर्मीनो कल्याणफळरूप प्रभाव हजु सुधी जागतो छे के जेथी मारे घरे हिरण्य वधे छे, सुवर्ण वधे छे, रोकड नाणुं वधे छे, धान्यो वधे छे, पुत्रो वधे छे, पशुओ वधे छे, अने पुष्कळ धन, कनक, रत, मणि, मोती, शंख, चंदकांत वगेरे पत्थर, प्रवाळां, तथा माणेकरूप सारवाळुं धन मारे घरे घणुं घणुं वधे छे. तो छुं हुं पूर्वे करेळां, सारी रीते आचरेळां, यावत्-ज्नां कर्मोनो तद्दन नाश थाय ते जोइ रहुं-ते नाशनी उपेक्षा करतो रहुं, अर्थात् मने आटलुं सुख वगेरे छे एटले बस छे एम मानी भविष्यत्—भाविलाम— तरफ उदासीन रहुं ? (ए रीते उदासीन रहेवुं ठीक नथी) पण हुं ज्यां सुधी हिरण्यथी वधु छुं अने यावत्–मारे घरे घणुं घणुं वधे छे, तथा ज्यां सुधी मारा मित्रो, मारी नात, मारा पित्राइओ, मारा मोसाळिआ के मारा सासरिआ अने मारो नोकरवर्ग मारो आदर करें छे, मने खामी तरीके जाणे छे, मारो सत्कार करें छे, मारुं सन्मान करें छे अने मने कल्याणरूप, मंगळरूप अने देवरूप जाणी चैत्यनी पेठे विनयपूर्वक मारी सेवा करे छे त्यां सुधी मारे मारुं कल्याण करी लेवानी जरूर छे; अर्थात् आवती काले प्रकाशवाळी रात्री थया पछी-मळसकूं थया पछी--यावत्-सूर्य उग्या पछी मारे मारी पोतानी ज मेळे लाकडानुं पातरं करी, पुष्कळ खाणुं, पीणुं,

राज्ञा प्रोक्तम्—कदा १ कुणालः प्राह्म-संप्रति. तत् 'संप्रतिः' इत्येव तस्य त्यारे पृथिवीनाथे कह्यं—हे अंध !-(पुत्र कुणाल !), तुं राज्यने छुं नाम प्रतिष्ठितम्. राज्यं च तस्यै प्रदत्तम् इति." करीश १ तेणे कह्यं—हे देव ! (बापु !) मारे राज्यने योग्य पुत्र थयो छे. राजाए पूछ्यं-(पुत्र कुणाल !) तने पुत्र क्यारे थयो १ कुणाले संप्रति-हमणां—थयो छे एम कह्यं. एथी कुणालना पुत्रतुं नाम 'संप्रति' प्रसिद्ध थयुं. राजाए तेने पोतानुं राज्य आप्युं." आ गणनाने आधारे मौर्य वंशमां थएला राजाओनी गणना आवी छेः—

चंद्रगुप्त. | | विंदुसार. | अञ्चोकश्री. | संप्रति.

(संप्रति ए अशोकश्री राजानो पौत्र हतो, तेना पुत्रो कुणाल वगेरे हता; तेमां कुणाल अंघ होवाशी गादीए न आव्यो. पण कुणालने वचन आपवाशी अशोकश्रीनी गादीए बीजो पुत्र न आवता पौत्र आव्यो):—अनु॰

9. मूलच्छायाः—मौर्यपुत्रो गृहपतिरभवत्; आद्यः, वीप्तः, यावत्—बहुजनैरपिरभृत्थापि अभवत्, ततस्तस्य मौर्यपुत्रस्य ताम्रिस्स गृहपतेः अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्राऽपररात्रकालसमये कुदुम्बजागरिकां जावतः अयम् एतद्भूपः आध्यात्मिकः, यावत्—समुद्दपद्यत्, अस्ति तावद् मम पुरा पुराणानां सुचीणानाम्, सुपराक्तान्तानाम्, सुभानाम्, कस्याणानाम्, कृतानां कर्मणां कस्याणफलनृतिविशेषः, येनाऽहं हिरण्येन वर्धयामि, सुवर्णेन वर्धयामि, धनेन वर्धयामि, धान्येन वर्धयामि, पृत्रौः वर्धयामि, पश्चिमवर्धयामि, विपुल-धन-कनक-रत्न-मणि-मौक्तिक-शङ्ख-शिला-प्रवाल-रक्तरत्नसत्सारखापतेयेन अतीव अतिव अभि-वर्धयामि, तत् किम् अहं पुरा पुराणानां सुचीणानाम्, यावत्—कृतानां कर्मणाम् एकान्तशः क्षयम् उपेक्षमाणो विह्रसमि, तद् यावत्—तावद् अहं हिरण्येन वर्धयामि, तत् किम् अहं पुरा पुराणानां सुचीणानाम्, यावत्—कृतानां कर्मणाम् एकान्तशः क्षयम् उपेक्षमाणो विह्रसमि, तद् यावत्—तावद् अहं हिरण्येन वर्धयामि, यावत्—अतीव अतीव अभिवर्धयामि, यावत्—कृतीव अतीव अभिवर्धयामि, यावत्—कृतीव अतीव अभिवर्धयामि, यावत्—वर्षति अतिवर्धयामि, यावत्—कृति विनयेन चैत्यं पर्युपास्ते, तावद् मम श्रेयः कत्यं प्रादुष्त्रभातायां रजन्यां यावत्—ज्वलिते, खयम् एव दादम्यं प्रतिग्रं कृत्वा, विपुलम् अशनम्, पानम्, खादिमम्, खादिमम्, स्वात्मिम् उपस्कार्य, सित्र-ज्ञाति-निजक-स्वन्ध-परिजनम्, अयः कर्यः स्वाद्यत्यान्तः तिम्त्र-ज्ञाति-निजक-संवन्ध-परिजनम्, अयः कृत्यः स्वाद्यत्याः, तं मित्र-ज्ञाति-निजक-संवन्ध-परिजनम्, उपेष्ठपुतं च कुदुस्ये स्वापयित्वा, तं मित्र-ज्ञाति-निजक-संवन्ध-परिजनम्, उपेष्ठपुतं च अपुच्छ्य स्वयमेव दादम्यं प्रतिपदं गृहीत्वाः—अतु॰

मुंडे भवित्ता, पाणामाए पव्यजाए पव्यइत्तए, पव्यइए वि य णं समाणे इमं एयारुवं अभिग्गहं अभिगिण्हिस्साभिः-'कप्पइ मे जावजीवाए छद्वंछद्वेणं आणिक्सित्तेणं तनोकम्मेणं उड्हं बाहाओ पगिन्सिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स विहरित्तए, छद्वस्स वि य णं पारणंसि आयावणभूमीओ पचोरुभित्ता सयमेव दारुमयं पडिग्गहयं गहाय तामलित्तीए नयरीए उच-नीअ-मिब्समाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए, अडित्ता सुद्धोदणं पडिगाहेत्ता, तं तिसत्तक्खुत्तो उदएणं पक्लालेत्ता तओ पच्छा आहारं आहरित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता, कल्लं पाउप्पभायाए जाव-जलंते, सयमेव दारुमयं पडिग्गहयं करेइ, करित्ता विउलं असण-पाण-लाइम-साइमं उवक्लडावेइ, विउलं असण-पाण-खाइम-साइमं उव-क्खडावेत्ता, ततो पच्छा ण्हाए, कयबलिकम्मे, कयकोउय-मंगल्ल-पा-यन्छित्ते, सुद्धपावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिए, अप्पमह-ग्घाभरणालंकियसरीरे, भोयणवेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए, तए णं भित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परिजणेणं सिद्धं तं विउलं असण-पाण-खाइम-साइमं आसाएमाणे, वीसाएमाणे, परिभाएमाणे, परिभुंजेमाणे विहरइ, जिमियभुत्तुत्तरागए वि य णं समाणे आयंते, चोक्खे, परमसुइब्भूए, तं मित्तं जाव-परियणं विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइम-पुष्फ-बत्थ-गंघ-मल्ला-ऽलंकारेण य सकारेइ, सम्माणेइ, तस्सेव मित्त-णाइ-जाव-परियणस्स पुरओ जेइपुत्तं कुटुंबे ठांवेइ, ठावेत्ता तं मित्त-नाइ-जाव-परियणस्स, जेट्टं पुत्तं च आपुच्छइ, आपुच्छित्ता, मुंडे भवित्ता, पाणामाए पव्वजाए पव्वइए.

मेवा, मिठाइ अने मशाळा वगेरे तैयार करावी, मारा मित्र, नातं, ·पित्राइ, मोसाळिआ के सासरिआ अने मारा नोकर चाकरने नोतरी, ते मित्र, नात, पित्राइ, मोसाळिआ के सासरिआ तथा नोकर चाकरने ते पुष्कळ खाणुं, पीणुं, मेवा, मिठाइ अने मशाला वगेरेने जमाडीने, कपडां, अत्तर वगेरे सुगंधी वस्तु, माळाओ अने घरेणां वडे तेओनो सत्कार करीने, तेओनुं सन्मान करीने तथा ते ज मित्र, झाति, पित्राइ, मोसाळिआ के सासरिक्षा अने नोकर चाक-रोनी समक्ष मारा मोटा पुत्रने कुटुंबमां स्थापीने-तेना उपर कुटुं-बनो भार मूकीने-ते मित्र, नात, पित्राइ, मोसाळिआ के सास-रिक्षा अने नोकर वर्गने पूछीने मारी पोतानी मेळे ज लाकडानुं पातरुं लड्ने, मुंड थड्ने, 'प्राणामा' नामनी दीक्षावडे दीक्षित थाउं. वळी हुं दीक्षित थयो के तुरत ज आ अभिग्रह धारण करीश के,-'हुं जीवुं त्यां सुधी निरंतर छह छह-वे वे उपवास-करीश, तथा सूर्यनी सामे उंचा हाथ राखी तडको सहन करतो रहीश-आता-पना छइश, वळी छडना पारणाने दिवसे ते आतापना छेबानी जग्याथी नीचे उत्तरी पोतानी मेळे ज लाकडानुं पात्र लड् ताम्रलिसी नगरीमां उंच, नीच अने मध्यम कुळोमांथी मिक्षा लेवानी विधि-पूर्वक शुद्ध ओदन-डाळ, शाक वगेरे विनाना एकला चोखा-लावी तेने पाणीवडे एकवीस वार घोइ लार पछी तेने खाईश' (ए प्रमाणेनो अभिग्रह क्रवानो तेणे विचार राख्यो छे.) ए प्रमाणे विचारी काले मळसकूं थया पछी यावत्-सूर्य जळहळतो थया पछी पोतानी मेळ ज लाकडानुं पात्र करावीने, पुष्कळ खाणुं, पीणुं, मेवा, मिठाई अने मशाला वगेरेने तैयार करावीने, पछी स्नान करी, बलिकर्म करी, कौतुक, मंगळ अने प्रायश्चित्त करी, शुद्ध अने पहे-रवा योग्य मांगलिक उत्तम वस्त्रोने सारी रीते पहेरी, वजन विनाना अने महामूल्य घरेणांओधी शरीरने शणगारी भोजननी वेळाए ते तामली गृहपति भोजनना मंडपमां आवी सारा आसन उपर सारी रीते बेठो. त्यार पछी मित्र, नात, पित्राइ, सासरिआ के मोसा-ळिआ अने नोकर चाकरोनी साथे (बेसी) ते पुष्कळ खाणुं, पीणुं, मेवा मिठाई अने मशाला बगेरेने चाखतो, वधारे खाद लेतो, परस्पर देतो-जमाडतो-अने जमतो ते तामली गृहपति विहरे छे-रहे छे. ते तामली गृहपति जम्यो अने जम्या पछी तुरत ज तेणे कोगळा कर्या, चोक्खो थयो अने ते परम शुद्ध बन्यो. पछी तेणे पोताना मित्र यावत्-नोकर चाकरने पुष्कळ वस्त्र, अत्तर वगेरे सुगंधी द्रव्य,

^{9.} मूलच्छायाः— मुण्डो भूत्वा, प्राणामिक्या प्रवज्यया प्रविज्ञिम्, प्रविज्ञितिष्ठ सन् इमम् एतद्भूषम् अभिष्रहम् अभिष्रहिष्यामिः कल्यते मम यावज्ञीवं षष्ठंषष्ठेन अनिक्षित्तेन तपस्कर्मणा ऊर्घ्वं वाहू प्रगृह्य प्रगृह्य प्रगृह्य प्रशृह्य आतापनभूमो आतापयतो विहर्तुम्, षष्ठस्थाऽपि च पारणे आतापनभूमोः प्रत्यवरुद्य खयमेव दारुमयं प्रतिष्रहकं गृहीत्वा ताम्रिह्यां नगर्याम् उच्च-नीच-मध्यमानि कुलानि गृहसमुदानस्य भिक्षाचर्यया अदित्वा शुद्धीद्वं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं प्रतिगृह्यं करोति, कृत्वा विपुलम् अश्वन-पान-खादिम-खादिमम् उपस्कार्यं, ततः पश्चात् स्नातः, कृतविलक्षमां, कृतकोतुक-महल-प्रायिश्वतः, शुद्धप्रवेश्यानि मङ्गल्यानि वस्नाणि प्रवर्षादिहितः अल्पमहर्घाऽऽभरणाऽलंक्नतशरीरो भोजनवेलायां भोजनमण्डपे सुखासनवरगतः, ततो मित्र-ह्याति-निजक-खजन-संवन्धि-परिजनेन सार्थं तं विपुलम् अश्वन-पान-खादिम-खादिमम् आखा-द्यन्, विखादयन्, परिभोगयन्, परिभुद्यानो विहरतिः जिमित्वा भुक्तोतराऽऽगतोऽपि च सन् आचान्तः, चोक्षः, परमञ्जिस्त्वातिम्, यावत्-परिजनं विपुलेन अश्वन-पान-खादिम-खादिम-प्रप्य-सन्न-गान्त्य-परिजनं विपुलेन अश्वन-पान-खादिम-खादिम-स्वातिम्, यावत्-परिजनं विपुलेन अश्वन-पान-खादिम-खादिम-प्रप्य-सन्न-गान्त्य-परिजनं विपुलेन अश्वन-पान-खादिम-स्वादिम-स्वातिम्, यावत्-परिजनम्, ज्येष्ठं पुत्रं च आपुच्छिते, आपुच्छ्य, मुण्डो भूत्वा प्राणा-सिक्या प्रवज्ञा प्रवज्ञितः—अनु॰

पैव्यहए वि य णं समाणे इमं एयारूवं अभिगाहं अभिगिण्हइ:—'कप्पइ मे जावजीवाए छट्ठंछडेणं, जाव—आहारि-त्तए ति कहु' इमं एयारूवं अभिगाहं अभिगिण्हइ, अभि-गिण्हित्ता जावजीवाए छट्ठंछडेणं अणिक्सित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पिगिन्झिय पिगिन्झिय सूराभिमुहे आयावणमूमीए आयावेमाणे विहरइ, छहस्त वि य णं पारणयंति आयावणमूमीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सयमेव दारुमयं पिडिग्गहं गहाय तामिनिलीए नयरीए उच्च-नीअ-मिन्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्त भिक्लायरियाए अडइ, सुद्धोयणं पिडिग्गाहइ, तिसत्तवखुत्तो उदएणं पक्लालेइ, तओ पच्छा आहारं आहरेइ.

१७. प्र०—से केणहेणं भंते ! एवं वुचइ पाणामा पव्यजा ?

१७. उ०—गोयमा! पाणामाए णं पव्यज्ञाए पव्यइए समाणे जं जत्थ पासइ-इंदं वा, खंदं वा, रुदं वा, सिवं वा, वेसमणं वा, अज्ञं वा, कोडिकिरियं वा, रायं वा, जाव—सत्थवाहं वा, काकं वा, साणं वा, पाणं वा उच्चं पासइ उच्चं पणामं करेइ, नीयं पासइ नीअं पणामं करेइ, जं जहा पासइ, तं तहा पणामं करेइ, से तेणहेणं गोयमा! एवं पुचइ पाणामा पव्यज्ञा.

तए णं से तामली मोरियपुत्ते तेणं ओरालेणं, विपुलेणं, पयत्तेणं, पग्गहिएणं बालतवोक्तम्मेणं सुक्के, लुक्खे, जाव-धमणि-संतए जाए यावि होत्था, तए णं तस्स तामिलस्स बालतविस्स अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अणिचजागरियं जागर-माणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, जाव-समुप्पज्जित्था, एवं खलु अहं इमेणं ओरालेणं, विपुलेणं, जाव-उदग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं, महाणुभागेणं तवोकम्मेणं सुक्के, लुक्खे, जाव-धमणिसंतए जाए, तं अत्थि जा मे उद्वाणे, कम्मे, बले, वीरिये, पुरिसक्कारपरक्कमे

माळा अने घरेणांओथी सत्कारी तथा ते मित्र, नात यावत्—नोकर चाकरनी समक्ष पोताना मोटा पुत्रने कुटुंबमां स्थापी अने ते मित्र, नात यावत्—नोकर चाकरने तथा पोताना मोटा पुत्रने पूछी ते तामली गृहपति मुंड थइ 'प्राणामा' नामनी दीक्षावडें दीक्षित थयो.

हवे ते तामली गृहपतिए 'प्राणामा' नामनी दीक्षा लिधी अने साथे ज तेने आवो अभिग्रह कर्यों के:—'हुं ज्यां सुधी जीवुं त्यां सुधी छड़ छड़नुं तप करीश अने यावत्—पूर्व प्रमाणेनो आहार करीश.' ए प्रमाणे अभिग्रह करी यावजीव निरंतर छड़ छड़ना तप-कर्मपूर्वक उंचे हाथ राखी सूर्यनी सामे उभा रही तडकाने सहता ते तामली तपस्वी विहरे छे. छड़ना पारणाने दिवसे आतापन-भूमिथी नीचे उतरी, पोतानी मेळे ज ते लाकडानुं पातरुं लड़, ताम्रलिती नगरीमां उच्च, नीच अने वच्छावर्गना कुळोमांथी भिक्षा लेवानी विधिपूर्वक मिक्षा माटे फरी ते, एकला चोखाने लड़ आवे छे अने ते चोखाने एकवीस वार धोइ पछी तेनो आहार करे छे.

१७. प्र०—हे भगवन् ! तामलिए लीधेली प्रव्रज्या 'प्राणामा' कहेवाय तेनुं द्युं कारण ?

१७. उ०—हे गौतम! जेणे 'प्राणामा' प्रवज्या लीधी होय ते, जेने ज्यां जोवे तेने अर्थात् इंद्रने, स्कंद्रने, रुद्रने, शिवने, कुबेरने, आर्या—पार्वती-ने, महिषासुरने कुटती चंडिकाने, राजाने, यावत्—सार्थवाहने; कागडाने, कुतराने तथा चांडाळने प्रणाम करे छे— उंचाने जोइने उंची रीते प्रणाम करे छे, नीचाने जोइने नीची रीते प्रणाम करे छे—जेने जेवी रीते जूए छे तेने तेवी रीते प्रणाम करे छे. ते कारणथी ते प्रवज्यानुं नाम 'प्राणामा' प्रवज्या छे.

लार पछी ते मौर्यपुत्र तामली ते उदार, विपुल, प्रदत्त अने प्रगृहीत बालतपकर्मवहें सुकाइ गया, छुला थया, यावत्—तेनी बधी नाडीओ बहार तरी आवी एवा ते दुबळा थया. लार पछी कोई एक दिवसे मधराते जागता जागता अनिस्ता संबंधे विचार करतां ते तामली बालतपित्वने आ ए प्रकारनो यावत्—विकल्प उत्पन्न थयो के:—हुं आ उदार, विपुल, यावत्—उद्ग्र, उदात्त, उत्तम अने महाप्रभावशालि तपकर्मवहें सुकाइ गयो छुं, रुक्ष थयो छुं अने यावत्—मारी बधी नसो शरीर उपर देखाइ आवी छे.

१. मूलच्छायाः—प्रत्नितोऽिष च सन् इमम् एतद्रूपम् अभिग्रहम् अभिग्रहातिः—'कल्पति मम यावजीवं षष्ठंषष्ठेन, यावत्—आहर्तुम् इति कृरवा,' इमम् एतद्रूपम् अभिग्रहम् अभिग्रहाति, अभिग्रह्म यावजीवं षष्ठंषष्ठेन अनिक्षित्तेन तपस्कर्मणा उर्ध्वं बाह् प्रग्रह्म प्रयह्म प्रयामिमुख आतापन् नभूमो आतापयन् विहरति, षष्ठस्याऽपि च पारणके आतापनभूमितः प्रस्ववरोहति, प्रत्यवरुद्य स्वयम् एव दारुमयं प्रतिप्रहं गृहीला ताम्रलिस्या नगर्याः उद्य-नीच-मध्यमानि कुलानि गृहसमुदानस्य भिक्षाचर्यया अटति, गुद्धौदनं प्रतिग्रहाति, त्रिसमकृतः उदकेन प्रक्षालयित, ततः प्रथाद् आहारम् आहारयति. तत् केनाऽर्थेन भगवन् । एवम् उच्यते प्रणामी प्रवज्या ? गौतम । प्राणामिक्या प्रवज्ञतः सन् यं यत्र पर्यति—इन्हं वा, स्कन्दं वा, दिवं वा, विश्वमणं वा, आर्यां वा, कुट्टनिक्यां वा, राजानं वा, यावत्—सार्थवाहं वा; काकं वा, श्वानं वा, प्राणं वा उचं पर्यति उचं प्रणामं करोति, नीचं पर्यति नीचं प्रणामं करोति, यं यथा पर्यति तं तथा प्रणामं करोति, तत्त् तेनाऽर्थेन गौतम । एवम् उच्यते प्राणामी प्रवज्याः ततः स्र तामिलिमौर्यपुत्रः तेन उदारेण, विपुलेन, प्रयत्नेन प्रगृहीतेन वालतपस्कर्मणा शुष्कः, रूक्षः, यावत्—धमनीसन्ततो जातश्चाऽपि अभवत्, ततसस्य ताम्रलिसस्य वालतपस्तिः अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रा ऽपररात्रकालसमये अनिस्यजागरिकं जात्रतः अयम् एतद्भुतः आध्यात्मिकः, चिन्तितः, यावत्—समुद्रपदाः, एवं खन्न अस्त वावद् मम उत्थानम्, कर्म, वलम्, वीर्यम्, पुरुषकारपराक्रमः—अनु०

तावता में सेयं, कलं जाव—जलंते, तामिलत्तीए नगरीए दिद्वाभडें य, पासंडत्थे य, गिहत्थे य, पुञ्चसंगतिए य, पञ्छासंगितए य, पिरियायसंगितिए य आपुिन्छत्ता तामिलत्तीए नगरीए मञ्झंगञ्झेणं निग्गिन्छत्ता पाउगं, कुंडियामादीयं उवगरणं, दारुमयं च पिडिग्गिनिगरीए उत्तरपुरित्थमे दिसिभाए णियन्तिण्यं मंडलं आलिहित्ता संलेहणा-जूसणाजूसिअस्स भत्त-पाणपिडिन्याइिक्अस्स, पाओवगयस्स कालं अणवकंत्यमाणस्स विहरित्तए ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता कलं जाव—जलंते, जाव—आपु-च्छइ, आपुिन्छत्ता तामिलत्तीए एगंते जाव—एडेइ, जाव—मत्त-पाणपिडियाइिक्सए पाओवगमणं निवण्णे.

ते णं काले णं, ते णं समये णं बलिचंचा रायहाणी अणिंदा, अपुरोहिया या वि होस्था, तए णं ते बलिचंचा-रायहाणिषत्थव्यया बहुवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य तामिल बालतवस्ति ओहिणा आमोएंति, अण्णमण्णं सद्दावेति, अण्ण-मण्णं सद्दावेत्ता एवं वयासिः-एवं खलु देवाणुप्पिया ! बलिजंचा रायहाणी अणिदा, अपुरोहिआ, अम्हे य णं देवाण्पिया ! इंदा-धीणा, इंदाधिष्टिया, इंदाधीणकजा, अयं च देवाणुाव्यया ! तामली बालतवस्सी तामलित्तीए नगरीए बहिया उत्तरपुरिश्यमे · दिसिभागे नियत्तणियमंडलं आलिहित्ता संलेहणाजूसणाजूसिए, भत्त-पाणपडियाइक्खिए, पाओवगमणं णिवण्णे, तं सेयं खलु अम्हं देवाणु-प्यिया! तामिलं बालतवस्सि बिलचंचाए रायहाणीए ठिति पकरावेत्तए त्ति कड् अण्णमण्णस्स आंतिए एयमहं पडिसुणेति, बलिचंचारायहा-णीए मञ्झंमञ्झेणं निग्गच्छइ, जेणेव रुयगिंदे उप्पायपव्वए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वेउव्वियसमुग्धायेणं समोहण्णंति, जाव— उत्तरवेउन्वियाइं रूवाइं विकुव्यंति, ताए उक्किट्टाए, तुरियाए, चवलाए, चंडाए, जइणाए, छेयाए, सीहाए, सिग्घाए, उद्भुयाए, दिव्वाए देवगईए तिरियं असंखेजाणं दीव-समुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जेणेव जंबूदीवे दीवे, जेणेव भारहे वासे, जेणेव तामिलती नगरी, माटे ज्यां सुधी मने उत्थान छे, कर्म छे, बळ छे, वीर्य छे अने पुरुषकारपराक्रम छे त्यां सुधी मारुं श्रेय एमां छे के, हुं काले यावत्—ज्वलंत सूर्यनो उदय थया पछी ताम्रलिसी नगरीमां जह में देखीने बोलावेला पुरुषोने, पाखंडस्थोने, गृहस्थोने, मारा आगळना ओळिखिताओंने, तपस्वी थया पछीना मारा जाणिताओंने मारी जेटला दीक्षापर्यायवाळाओंने पूछीने, ताम्रलिसी नगरीनी वचीवच नीकळींने, चाखडी, कुंडी वगेरे उपकरणोने अने लाकडाना पातराने एकांते मूकी ताम्रलिसी नगरीना उत्तरपूर्वना दिग्मागमां—ईशान खूणामां, निर्वर्तनिक मंडळने आळेखी संलेखनातपवडे आत्माने सेवी, खावा पीवानो त्याग करी, दूक्षनी पेठे स्थिर रही, काळनी अवकांक्षा सिवाय विहरतुं ए उचित छे. एम विचारी काले यावत्—ज्वलंत सूर्यनो उदय थया पछी, यावत्—पूछे छे, तेओने पूछी ते तामली तपित्रए पोतानां उपकरणोने एकांते मूक्यां, यावत्—तेणे आहार पाणीनो त्याग करीं अने पादपोपगमन नामनुं अनशन कर्युं.

ते काळे, ते समये बर्लिंचचा राजधानी इंद्र अने पुरोहित रहित हती. त्यारे ते बलिचंचा राजधानीमां वसनारा घणा असुरकुमार देवोए अने देवीओए ते तामली बालतपस्वीने अवधि वडे जोयो, जोया पछी तेओए एक बीजाने बोळावी आ प्रमाणे कहां के, हे देवानुप्रियो ! अत्यारे बलिचंचा राजधानी इंद्र अने पुरोहित विनानी छे. तथा हे देवानुप्रियो ! आएणे बधा इंद्रने ताबे रहेनारा तथा अधिष्ठित छीए, आपणुं बधुं कार्य इंदने ताबे छे अने हे देवानुप्रियो ! आ तामली बालतपस्वी ताम्रलिसी नगरीनी बहार ईशान खूणामां निर्वर्तनिक मंडळने आळेखी, संलेखनावडे आत्माने जोषी-सेवी, खावा पीवानो त्याग करी अने पादपोपगमन अनशनने धारण करीने रह्यों छे. तो आपणे ए श्रेयरूप छे के, हे देवानुप्रियों ! ते तामली बालतपस्विने बलिचंचा राजधानीमां इंद्र तरीके आववानी संकल्प करावीए, एम करीने-(विचारीने) परस्पर एक बीजानी पासे ए वातने मनावीने ते बधा असुरकुमारो बलिचंचा राजधानीनी वचोवच नीकळी जे तरफ रुचकेंद्र उत्पातपर्वत छे ते तरफ आवे छे,,आवी वैक्रियसमुद्घातवडे समवहणीने यावत् उत्तरवैक्रिय रूपोने विकुर्वी उत्कृष्ट, त्वरित, चपल, चंड, जयवती, निपुण, सिंह जेवी, शीघ्र, उद्भूत अने दिव्य देवगतिवडे तिरछा असंख्येय द्वीप समुद्रोनी वचोवच जे

^{1.} मूलच्छायाः—तावद् मम श्रेयः, कल्यं यावत्—ज्वलित, ताप्निलिश्या नगर्याः दृष्टभाषितांत्र, पाखण्डस्थांत्र, गृहस्थांत्र, पृवैसंगतिकांत्र, प्रशास-क्षितिकांत्र, पर्यायसक्षितिकांत्र आप्टच्छय ताप्निलिश्या नगर्याः मध्यंमध्येन निर्गेल पाइकाम्, कृण्डिकादिकम् उपकरणम्, दारुमयं च प्रतिप्रहक्षम् एकान्ते एढ-यित्वा ताप्निलिनिनगर्याः उत्तरपौरस्त्ये दिग्मागे निर्वतिनिकं मण्डलम् आलिख्य संलेखना-जूषणाजूषितस्य मक्त-पानप्रलाख्यातस्य, पादपोपगत्यस्य कालम् अन-वकाङ्कृतो विहर्तुम् इति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य कल्यं यावत्—ज्वलित्, यावत्—आप्टच्छित, आप्टच्छ्य ताप्निलिश्याः एकान्ते यावत्—एडयित, यावत्—मक्त-पानप्रलाख्यातः पादपोपगमनं निष्पत्रः. तस्सिन् काले, तस्सिन् समये बिल्च्या राजधानी अनिन्द्रा, अपुरोहिता चाऽपि अभवत्, ततस्ते बिल्च्याराजधानी-वास्तव्याः बह्वोऽप्ररुक्तमाराः देवाञ्च, देव्यश्च तामिलं बालतपित्वनम् अवधिना आभोगयन्ति, अन्योन्यं शब्दयन्ति, अन्योन्यं शब्दयित्वा एवम् अवादीत्ः— एवं खल्च देवानुप्रियाः । बिल्च्या राजधानी अनिन्द्रा, अपुरोहिता, वयं च देवानुप्रियाः । इन्द्राधीनाः, इन्द्राधिष्ठताः, इन्द्राधीनकार्याः, अयं च देवानुप्रियाः । तामिलः बालतपस्त्री ताम्रलित्या नगर्याः बहिः उत्तरपौरस्त्ये दिगमागे निर्वतिनकमण्डलम् आलिख्य संलेखना-जूषणाजूषितः प्रलाख्यातमक्तपानः, पादपोपगमनं निष्पत्रः, तत् श्रेयः खल्च अस्ताकं देवानुप्रियाः । तामिलं बालतपित्रनं बिल्च्यायां राजधान्यां स्थिति प्रकारियतुम् इति कृत्वा अन्योत्यस्य अन्तिके इमम् अर्थ प्रतिश्वलित्ते, बिल्च्याराजधान्याः मध्यंमध्येन निर्गच्छन्ति, येनैव रचकेन्द्रः उत्पातपर्वतस्तिनेव उपागच्छन्ति, उपागम्य वैकिय-समुद्द्यातेन समवप्नित, यावत्—उत्तरवैक्रियाणि स्पाणि विक्वनित, तया उत्कृष्ट्या, लरित्या, चपल्या, तथन्या, लेक्ष्या, सिह(तुल्य)या, शीप्रया, उद्यातिया दिव्यया देवगत्या तिर्येग् असंख्येयानां द्वीप-समुद्राणां मध्यंमध्येन येनैव जम्बद्रीपो द्वीपः, येनैव भारतं वर्यम्, येनैव ताप्रिक्री नगरीः—अन्तव्य

कंगेर्य तामली मोरियपुत्ते तेणेव उवागच्छाति, तेणेव उवागच्छेत्ता ग्नामिलस्स बालतवस्सिस्स उप्पि,सपर्विख, सपडिदिसिं ठिचा दिव्वं देविट्टिं, दिव्यं देवज्युतिं, दिव्यं देवाणुमागं, दिव्यं बत्तीसविहं मद्दिः उवदंसेति, तामलि बालतवस्सि तिक्खुत्तो आयाहिण-पवाहिणं करेंति, वंदंति, नमंसंति, एवं वयासीः-एवं खलु देवाणु-पिया ! अम्हे बलिचंचारायहाणीवत्थव्यया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य देवाणुप्पियं वंदामो, नमंसामो, जाव-पज्जु-वासामो; अम्हाणं देवाणुप्पिया ! बिलचंचा रायहाणी अणिदा, अपु-रोहिआ, अन्हे वि य णं देवाणुप्पिया ! इंदाहीणा, इंदाहिडिआ, इंदाहीणकज्जा, तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! बलिचंचारायहाणि आढाह, परियाणह, सुमरह, अहं वंघह, निदाणं पकरेह, ठिति-पक्षणं पकरेह, तए णं तुब्भे कालमासे कालं किया बलियंचाराय-हाणीए उनवजिस्सह, तए णं तुच्ने अन्हं इंदा भविस्सह, तए णं तुच्मे अम्हेहिं सिद्धं दिव्वाई भोगमोगाई भुंजमाणा विहरिस्सह, तए णं से तामली बालतवस्सी तेहिं बलिचंचारायहाणिवत्थव्वेहिं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं, देवीहिं य एवं वृत्ते समाणे एयमहं नो आढाई, नो परियाणेइ, तुसिणीए संचिद्वइ, तए णं ते बलिचंचारा-यहाणिवत्थव्यया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य तामिं मोरियपुत्तं दोचं पि, तचं पि, तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति, जांव-अहां च णं देवाणुपिया ! बलिचंचारायहाणी अणिंदा, जाव-ठितिपकप्पं पकरेह, जाव-दोचं पि, तचं पि, एवं वुत्ते समाणे जान-तुसिणीए संचिष्ठइ; तए णं से बलिचंचारायहाणिवत्थ-व्वया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य तामिलिणा बालतव-स्सिणा अणाढाइज्जमाणा, अपरियाणिज्जमाणा, जामेव दिसिं पाउ-च्मूआ तामेव दिसिं पडिगया. ते णं काले णं, ते णं समये णं ईसाणे कप्पे अणिंदे, अपुरोहिये या वि होत्था, तए णं से तामिली बालतवस्सी बहुपडिपुण्णाइं सिट्टं वाससहस्साइं परियागं पाउणित्ता, दोमासियाए संलेहणाए अत्ताणं जूसित्ता, सवीसं भत्तसयं अणसणाए छेदित्ता, कालमासे कालं किचा ईसाणे कप्पे, ईसाणविंसए विमाणे, उववायसभाए देवसयणिकांसि, देवदूसंतरिए अंगुलस्स असंस्रेज्जभा-गमेत्तीए ओगाहणाए ईसाणे देविंदविरहकालसमयंसि ईसाणे

तरफ जंबूदीप नामें द्वीप छे, जे तरफ भारत वर्ष छे, जे तरफ ताम्र-लिसी नगरी छे अने जे तरफ मौर्यपुत्र तामली बालतपस्ती छे ते तरफ आव्या,आवी तामली बालतपस्विनी उपर,सपक्ष अने सप्रतिदिशे अर्थात् तामली बालतपस्विनी बराबर सामे उभा रही दिव्य देवऋद्धिने, दिव्य देवकांतिने, दिव्य देवप्रभावने अने बत्रीस जातिना दिव्य नाटकविधिने देखाडी, तामली बालतपस्तिने त्रण वार प्रदक्षिणा करी, वांदी अने नमी ते असुरकुमार देवो आ प्रमाणे बोल्या के:-हे देवानुप्रिय ! अमे बलिचंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने घणी असुरकुमारदेवीओ आपने वांदीए छीए, नमीए छीए अने यावत्-आपनी पर्युपासना करीए छीए. हे देवानुप्रियो ! हाल अमारी बलिचंचा राजधानी इंद्र अने पुरोहित विनानी छे अने है देवानुप्रिय ! अमे बधा इंद्रने ताबे रहेनारा अधिष्ठितो छीए अने अमारं कार्य पण इंद्रने ताबे छे. तो हे देवानुप्रिय ! तमे बलिचंचा राजधानीनो आदर करो, तेनुं स्वामिपणुं स्वीकारो, तेने मनमां छावो, ते संबंधे निश्चय करो, निदान (नियाणुं) करो अने बलिचंचा राजधानीना खामी थवानो संकल्प करो. जो तमे अमे कहां तेम करशो तो अहींथी कालमासे काळ करी तमे बलिचंचा राजधानीमां उत्पन्न थशो, त्यां उत्पन्न थया पछी तमे अमारा इंद्र थशो, तथा अमारी साथे दिव्य भोग्यभोगने भोगवता तमे आनंद अनु-भवशो. ज्यारे ते बलिचंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने देवीओए ते तामठी बाळतपस्विने पूर्व प्रमाणे कहां अने ते वातने ते बालतपस्विए आदरी नहीं, स्वीकारी नहीं, पण तेणे चुपकी पकडी, त्यारे ते बिलचंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने देवीओए ते तामळी मौर्यपुत्रने बीजी वार अने त्रीजी वार पण त्रण वार प्रदक्षिणा करीने पूर्वनी वात कही. अर्थात् हे देवानुप्रिय ! हाल अमारी बलिचंचा राजधानी इंद्र अने पुरोहित विनानी छे अने यावत्-तमें तेना खामी थवानुं खीकारो. ते असुरकुमारोए पूर्व प्रमाणे बे, त्रण वार यावत्-कक्षुं तो पण ते तामली मौर्यपुत्रे कांङ् पण जवाब न दीघो अने मौन धारण कर्युं. पछी छेवटे ज्यारे तामली बालतपखिए ते बलिचंचा राजधा-नींमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवोनो अने देवीओनो अनादर

^{9.} मूलच्छायाः—येनैव तामिलिमीयेपुत्रः तेनैव उपागच्छिन्त, तेनैव उपागस्य तामछेः बालतपित्वनः उपित, सपक्षम्, सप्रतिदिशि स्थितवा दिन्यां देवर्द्धिम्, दिन्यां देवसुतिम्, दिन्यं देवानुभागम्, दिन्यं द्वानित्राद्विषं नाव्यविधम् उपदर्शयन्तिः, तामिल बालतपित्वनं तिकृतः आद्विणप्रदक्षिणां कुर्वन्ति, वन्दन्ते, नमस्यन्ति, एवम् अवादिषुः—एवं खलु देवानुप्रियाः! विलेन्धाराजधानीवास्त्व्याः बह्वोऽधुरकुमाराः देवाश्व, देव्यश्व देवानुप्रियं बन्दामहे, नमस्यामः, यावत्—पर्युपास्यहेः अस्याकं देवानुप्रियाः! बिलेन्धाराजधानी अनिन्द्रा, अपुरोहिता, वयम् अपि च देवानुप्रियाः! इन्द्राऽधीनाः, इन्द्राधिवताः, इन्द्राधीनकार्याः, तद् यूयं देवानुप्रियाः! बिलेन्धाराजधानीम् आद्वियध्वम्, परिजानीत, सरत, अर्थ वप्रीत, निदानं प्रकुरत, स्थितिप्रकर्त्यं प्रकुरत, ततो यूयं कालमासे कालं कुला बिलेन्धाराजधान्याम् उत्परस्य, ततो यूयम् अस्याकम् इन्द्रा भविष्यय, ततो यूयम् अस्याक्षः सह दिव्यानि भोग्यभोगानि भुजाना विद्विय्यथः, ततः स तामिलः वालतपस्वी तैः बिलेन्धाराजधानीवास्त्रव्याः बहुनिः अमुरकुमारेः देवैः, देवीभिश्व एवम् उक्तः सन् इममर्थं नी आद्रियते, नो परिजानाति, तुष्णिकः संतिष्ठते, ततस्ते बिलेन्धाराजधानीवास्तव्याः बहुनी- अमुरकुमारा देवाश्व, देव्यश्व तामिलं मीर्यपुत्रं द्वितीयमिष, तृतीयमिष, त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां कुर्वन्ति, यावत्—अस्याकं देवानुप्रियाः! बिलेन्धाराजधानीवास्तव्याः वहने अनित्रकृतः स्थान्ति स्वत्यः प्रकृतः, यावत्—स्थितिप्रकर्णं प्रकृतत्, यावत्—द्वियामिष्रकर्णं प्रकृतः, यावत्—द्वियामिष्रकर्णं प्रकृतः, यावत्—द्वियामिष्रकर्णं प्रकृतः, यावत्—हित्याम् परित्रकर्णं प्रकृतः, यावत्—हित्याम् देवाश्वः, देवान्दि वर्षः प्रकृतित्वाः तिस्य क्रित्रकर्णं प्रकृत्वः, अपुरोहितश्वाद्यपे अभवत्, ततः स तामिलः वालतपत्वा बहुद्रतिपूर्णानि वर्षिवेवह्वाणि पर्यायकं पालयित्वा, द्विमासिक्या संक्रेक्तया भात्मानं जृत्वित्वा, सर्वियं मान्तान्वान्तम् वर्वान्ति स्रक्ति वर्वान्ति अञ्चलस्य असंव्यममानान्त्रवाम् वर्वान्ति स्रक्ति वर्वान्ति वर्वान्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति वर्वान्ति

देविंदैत्ताए उवंबण्णें, तए णं से ईसांणे देविंदे, देवराया अहुणोव-वने पंचिवहाए पज्जतीए पज्जतीभावं गच्छइ, तं जहाः—आहारपज्ज-त्तीए, जाव—भासा-मणपज्जतीए.

तए णं ते बिलचंचारायहाणिवत्थव्यया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य तामिलं बालतवस्ति कालगतं जाणिता, ईसाणे य कपे देविंदत्ताए उववण्णं पासित्ता महया आसु-रुत्ता, कुविया, चंडिक्या, मिसिमिसेमाणा बलिचंचारायहाणीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छंति, ताए उक्किद्वाए, जान-जेणेन भारहे बासे, जेणेव तामिलत्ती(ए) (नयरीए), जेणेव तामिलस्स बालतव-स्सिस्स सरीरए तेणेव उवागच्छंति, वामे पाए सुंवेण बंधइ, तिक्खुत्तो मुहे उहुहंति, तामिलत्तीए नगरीए सिंघाडग-तिग-चउक-चचर-चउम्मुहमहापहेसु आकडू-विकड्ढिं करेमाणा, महया महया सद्देणं उन्धोसेमाणा उन्घोसेमाणा एवं वयासिः-के स णं भो ! से तामली वालतवस्सी सयंगहियलिंगे, पाणामाए पञ्चकाए पञ्चइए ? के स णं से ईसाणे कप्पे ईसाणे देविंदे, देवराया ति कडू तामिलस्स बालतवस्सिस्स सरीरयं हीलांति, निदांति, खिसंति, गरिहांति, अयमचंति, तज्जंति, तालंति, परिवहेंति, पन्वहेंति, आकडू-विकडिं करेंति, हीलेत्ता जान-आकडू-विकडिं करेता एगंते एडंति, जा-मेव दिसिं पाउच्मूया तामेव दिसिं पिंडिंगया. तए णं ते ईसाणक-प्पवासी बहवे वेमाणिया देवा य, देवीओ य बलिचंचारायहाणिव-त्थव्यएहिं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं, देवीहिं य तामलिस्स वाल-तबस्सिस्स सरीरयं हीलिजमाणं, निंदिजमाणं जाव--आकडू-िवकडिं कीरमाणं पासंति, पासित्ता आसुरुत्ता, जाव-मिसिमिसेमाणा जेणेव ईसाणे देविंदे, देवराया तेणेव उवागच्छंति, करयलपरिग्गहियं दस-

कर्यों, तेओ नं कर्यन मान्युं नहीं खारे ते देवो जे दिशामांथी प्रकट्या हता ते ज दिशामां पाछा चाल्या गया. ते काळे, ते समये ईशान कल्प इंद्र अने पुरोहित विनानो हतो. ते वखते तामली बालतपित्वए पूरेपूरां साठ हजार वर्ष सुधी साधु पर्यायने पाळीने, वे मास सुधीनी संलेखनावडे आत्माने सेवाने, एकसोने वीस टंक अनशन पाळीने काळमासे काळ करी ईशान कल्पमां, ईशानावतं-सक विमानमां, उपपात समामां, देवशय्यामां, देवबद्धथी ढंकाएळ अने आंगळनी असंख्येय भाग जेटली अवगाहनामां ईशान कल्पमां देवेंद्रनी गेरहाजरीमां ईशान देवेंद्र पणे जन्म धारण कर्यों. हवे ते ताजा उत्पन्न थएळ देवेंद्र, देवराज ईशान पांच प्रकारनी पर्याप्तिवडे पर्या-ितपणाने पामे छे. अर्थात् आहारपर्याप्तिवडे अने यावत्—भाषा-मनःपर्याप्तिवडे ते देवेंद्र, देवराज ईशान पर्याप्तपणाने पामे छे.

हवे, बलिचंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने देवीओए एम जाण्युं के, तामली बालतपस्वी काळधर्मने पाम्यो, अने ते, ईशान कल्पमां देवेंद्रपणे उत्पन्न थयो. तेथी तेओए घणो क्रोध कर्यो, कोप कर्यो, भयंकर आकार धारण कर्यो अने तेओ बहु गुस्से भराणा. पछी तेओ बधा बलिचंचा राजधा-नीनी बचोबच नीकळ्या अने ते यावत्—उत्क्रष्ट गतिबडे जे तरफ भारत वर्ष छे, जे तरफ ताम्रलिधी नगरी छे अने जे तरफ तामली बालतपिखनुं शरीर छे ते तरफ आवीने ते देवो ते तामली मौर्य-पुत्रना मुंडदाने डाबे पगे दोरडी बांधी, पछी तेना मोढामां त्रण वार थुंकी. अने ताम्रलिती नगरीमां सिंगोडाना घाटवाळा मार्गमां, त्रण शेरी भेगी थाय तेवा मार्गमां-त्रिकमां, चोकमां, चतुर्भुख-मार्गमां, मार्गमां अने महामार्गमां, अर्थात् ताम्रलिती नगरीना बधी जातिना मार्गो उपर ते मुखदाने ढसडता ढसडता अने मोटा अवाजे उद्घोषणा करता ते देवो आ प्रमाणे बोल्या के:-हे!, पोतानी मेळे तपिखनो वेष पहेरनार अने 'प्राणामा' नामनी दीक्षाथी दीक्षित थनार ते तामली बालतपस्ती कोण ? तथा ईशान कल्पमां थएल देवेंद्र, देवराज ईशान कोण ? एम करीने तामली बालतपखिना शरीरनी हीलना करें छे, निंदा करे छे, खिंसा करे छे, गर्ही करे छे, अपमान करे छे, तर्जना करे छे, मार मारे छे, कदर्थना करे छे, तेने हेरान करे छे अने आडुं अवळुं जेम फावे तेम दसडे छे तथा तेम करीने तेना शरीरने एकांते

^{9.} मूलच्छायाः—देवेन्द्रतया उपपन्नः, ततः स ईशानो देवेन्द्रः, देवराजोऽधुनोपपनः पश्चविधया पर्याप्त्या पर्याप्तिभावं गच्छति, तद्यथाः—अहारपर्याप्त्या, यावत्—भाषा-मनःपर्याप्त्याः ततः विलयशाराजधानीवास्तव्याः बह्वोऽधुरकुमाराः देवाश्व, देव्यश्च तामिल बालतपितनं कालगतं ज्ञात्वा, ईशाने च कल्पे देवेन्द्रतया उपपनं दृष्ट्वा महता आधुरुताः, कृषिताः, चण्डिकताः, मिसमिसयन्तो बिलवश्चाराजधान्याः मध्यंमध्येन निर्मच्छिन्ति, तया उरकृष्टया, यावत्—येनैव भारतं वर्षम्, येनैव तामलेः वालतपित्तनः शरीरकं तेनैव उपागच्छिन्ति, वामं पादं धुम्बेन बप्तन्ति, त्रिकृत्वो मुखे अवश्रीव्यन्ति, ताप्रिलिप्तया नगर्याः व्यव्यक्त-विक्र-चतुष्क-चलर-चतुर्ष्वमहापयेषु आकर्षविकिष्कां कुर्वन्तः, महता महता शब्देन उद्घोषयन्तः एवम् अवादिषुः—कः एष मोः ! स तामिलः वालतपित्तं खयंगृहीतिलिङ्गः, प्राणामिक्या प्रत्रज्ञया प्रत्रजितः, कः एष स ईशाने कल्पे ईशानो देवेन्द्रः, देवराज इति कृत्वा तामलेः बालतपित्तनः शरीरकं हीलयन्ति, निन्दन्ति, कृत्सन्ति, गर्हन्ते, अवमन्यन्ते, तर्जयन्ति, ताडयन्ति, परिव्यथन्ते, प्रव्यथन्ते, आकर्षविकिषिकां कुर्वन्ति, हीलयिला यावत्—आकर्षविकिषिकां कृत्वा एकान्ते एडयन्ति, याम् एव दिशि प्रादुर्मृताः तामेव दिशि प्रतिगताः ततस्ते ईशानकल्पवासिनो बहवो वेमानिका देवाश्च, देवश्च बलिचश्चाराजधानीवास्तव्येः अधुरकुमारैः देवैः, देवीभिश्च तामलेः बालतपित्तनः शरीरकं हील्यमानम्, निन्दमानं यावत्—आकर्यविकर्षकं कियमाणं पर्यन्ति, हृद्वा आधुरुप्ताः, यावत्—मिसमिसयन्तो येनैव ईशानो देवेन्द्रो देवराजस्त्रनेव उपाच्छन्ति, करतलपरिग्रहीतं दशनखम् —अतु०

नहं सिरसौवत्तं मत्थए अंजिलं कट्टू जएणं, विजएणं वदावेंति, एवं वयासीः-एवं खलु देवाणुप्पिया ! बलिनंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य देवाणुप्पिये कालगए जाणिता ईसाणे कृप्पे इंदत्ताए उववने पासेत्ता आसुरुत्ता, जाव-एगंते एडेंति, जामेव दिसिं पाउच्मूआ तामेव दिसिं पिंडगया; तए णं से ईसाणे देविंदे, देवराया तेसिं ईसाणकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाण य, देवीण य अंतिए एयमहं सोचा, निसम्म आसुरुत्ते, जाव-मिसिमिसेमाणे तत्थेव सयणिज्जवरगये तिवलियं भिउडिं नि-डाले साहट्ट् बलिचंचारायहाणि अहे, सपिंख, सपिडिदिसिं सम-भिलोएइ. तए णं सा बलिचंचा रायहाणी ईसाणेणं देविंदेणं देव-रण्णा अहे, सपक्लि, सपिडिदिसिं समभिलोइआ समाणी तेणं दिव्व-पमावेणं इंगालब्भूआ, मुम्मुरब्भूआ, छारियब्भूआ, तत्तकवेल्लक-च्मुआ, तत्ता समजोइब्मूआ जाया या वि होत्था; तए णं ते बलि-चंचारायहाणिवत्थव्वया बहुवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य तं बिलचंचारायहाणि इंगालन्भूयं, जाव-समजोइन्भूअं पासंति, पासित्ता भीजा, उत्तत्था, सुसिआ, उन्विग्गा, संजायभया, सन्वओ समंता आधार्वेति, परिधार्वेति, अनमन्नस्स कार्यं समतुरंगेमाणा चिट्ठंति, तए णं ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य ईसाणं देविंदं, देवरायं परिकुव्वियं जाणित्ता, ईसाणस्स देविंदस्स, देवरण्णो तं दिव्वं देविङ्गिं, दिव्वं देवजुइं, दिव्वं देवाणुभागं, दिव्वं तेयलेस्सं असहमाणा सब्वे सपविस सपिडिदिसं ठिचा करयलपरिगाहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजर्लि कडू जएणं, विजएणं वद्धाविति, एवं वयासी:-अहो ! णं देवाणुष्पिएहिं दिन्वा देविड्डी, जाव-अभिसमण्णागया, तं दिन्वा णं देवाणुप्पियाणं दिन्वा देविडूी, जाव-लब्दा, पत्ता, अभिसमण्णा-गया, तं सामेमो देवाणुष्पिया !, समंतु देवाणुष्पिया !, समंतुमरिं-हंतु णं देवाणुष्पिया !, णाइं भुज्जो भुज्जो एवं करणयाए णं ति कट्ट एयम इं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जी खामेंति, तए णं से ईसाणे देविंदे, देवराया तेहिं बिलिचंचारायहांणिवत्थव्वेहिं बहूहिं असुर-कुमारोहिं देवेहिं, देवीहि य एयमद्वं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो लामिए समाणे तं दिन्वं देविङ्कि, जाव-तेयलेस्सं पडिसाहरइ,

नाखी जे दिशामांथी ते देवी प्रकट्या हता ते ज दिशामां पाछा ते देवो चाल्या गया. हवे ते ईशान कल्पमां रहे-नारा घणा वैमानिक देवो अने देवीओए आ प्रमाणे जोयुं के, बलिचंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने देवीओ बालतपस्वी तामलिना शरीरने हीले छे, निंदे छे, खिंसे छे अने यावत्-तेना शरीरंने आडुं अवळुं जेम फावे तेम दसडे छे. त्यारे ते वैमानिक देवो पूर्व प्रमाणे जोवाथी अतिशय गुस्से भराणा अने यावत्-कोधथी मिसमीसाट करता ते (वैमानिक) देवीए देवेंद्र, देवराज ईशाननी पासे जइने बंने हाथ जोडवापूर्वक दशे नखने भेगा करी-शिरसावर्त करी-माथे अंजलि करी ते इंद्रने जय अने विजयथी वधाव्यो. पछी तेओ आ प्रमाणे बोल्या के:-हे देवानुप्रिय !, बलिचंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने देवीओ, आप देवानुप्रियने काळने प्राप्त थएठा जाणी, तथा ईशान कल्पमां इंद्रपणे उत्पन्न थएळा जोइ ते असुरकुमारो घणा गुस्से भराणा अने यावत्-तेओए आपना मृतक शरीरने इसडीने एकां-तमां मृक्युं. पछी तेओ ज्यांथी आव्या हता, पाछा त्यां चाल्या गया. ज्यारे देवेंद्र, देवराज ईशाने ते ईशानकल्पमां रहेनारा बहु वैमानिक देवो अने देवीओ द्वारा एवातने सांमळी अने अवधारी, त्यारे तेने घणो गुस्सो थयो अने यावत्-क्रोधधी मिसमिसाट करतो, त्यां ज देवशय्यामां सारी रीते रहेला ते ईशान इंद्रे कपाळमां त्रण आड पड़े तेम भवां चडावी, ते बलिचंचा राजधानीनी बराबर सामे-नीचे-सपक्षे अने सप्रतिदिशे जोयुं. जे समये देवेंद्र, देवराज ईशाने पूर्व प्रमाणे बलिचंचा राजधानीनी बराबर सामे-नीचे-सपक्षे अने सप्रतिदिशे जोयुं ते ज समये ते दिव्य प्रभाववडे बिल-चंचा राजधानी अंगारा जेवी थइ गई, आगना कणिया जेवी थइ गई, राख जेवी थइ गई, तपेली वेळुना कणिया जेवी थइ गई अने खूब तपेली छाय जेवी थइ गई. हवे ज्यारे ते बिल्चंचा राज-धानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवो अने देवीओए ते बलि-चंचा राजधानीने अंगारा जेवी थएली अने यावत्-खूब तपेली लाय जेवी थएली जोइ, तेवी जोइने अंसुरकुमारो भय पाम्या, त्रास पाम्या, सुकाइ गया उद्देगवाळा थया अने भयथी व्यापी गया

^{9.} गूलच्छायाः—शीर्षावर्तं मस्तके अल्लिं कृतवा जयेन, विजयेन वर्षापयन्ति, एवम् अवादिषुः-एवं ल्लु देवानुप्रियाः! विलच्छाराजधानीवास्तव्याः वहवीऽधुरकुमाराः देवाश्च, देव्यश्च देवानुप्रियं कालकृतं शात्वा ईशाने कल्पे इन्द्रत्या उत्पन्नं दृष्ट्वा आद्धुरुप्ताः, यावत्—एकान्ते एडयन्ति, यामेव दिश्चें प्रादुर्भृतास्ताम् एव दिश्चें प्रतिगताः; ततः स ईशानो देवेन्द्रः, देवराजस्तेषाम् ईशानकल्पवासिनां वहूनां वैमानिकानां देवानां च, देवीनां च अन्तिके इमम् अर्थ श्वरत्ता, निश्चन्य आद्धुरुप्ताः, यावत्—सिसिस्तयन् तत्रेव शयनीयवरगतिष्ठविल्कां मृकुर्टी छलाटे संहत्य बिलच्छाराजधानीम् अधः, सपक्षम्, सप्रतिदिश्चिं समिमलोकयति. ततः सा बिलच्छार राजधानी ईशानेन देवेन्द्रंण, देवराजेन अधः, सपक्षम्, सप्रतिदिश्चें समिमलोकिता सती तेन दिव्यप्रभावेण अक्षारभूता, मृम्सुरभूता, मस्सीभूता, तप्तकटाहकभूता, तप्ता समज्योतिर्भृता जाता वाऽपि अभवतः; ततस्ते बिलच्छाराजधानीवास्तव्या बहवोऽप्रसुक्ताराः देवाश्च, देव्यश्च तां बिलच्छाराजधानीम् अक्षारभूताम्, यावत्—समज्योतिर्भृतां पर्यन्ति, दृष्ट्वा भीताः, उत्रस्ताः, गुष्ट्वाः, संजातमयाः, सर्वतः समन्ततः आधावन्ति, परिधावन्ति, अन्योन्यस्य कायं समालिष्ट्यन्तिस्तिष्ट्वित्, ततस्ते बिलच्छाराजधानीवास्तव्याः बहवः अधुरकुमारा देवाश्च, देवराञं समन्ततः विद्याः देवर्यः विद्याः देवर्यः देवराजं परिकुषितं झात्वा, ईशानस्य देवन्द्रस्य, देवराजस्य तां दिव्यां देवर्द्धम्, दिव्यां देवस्यां परिकुषितं झात्वा, ईशानस्य देवन्द्रस्य, देवराजस्य तां दिव्यां देवर्द्धम्, दिव्यां देवर्द्धः, यावत्—अभित्तमन्ताता, सा दिव्या देवानुप्रियाः। सम्मत्ते अखित्रं सस्त्रके अखित्रं स्वत्याः दिव्या देवर्द्धः, यावत्—अभित्रमन्ति, ततः स्वर्यामा देवानुप्रियाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षमयानो देवानुप्रयाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षमन्तां देवानुप्रयाः!, क्षम्याने देवन्द्रः, देवराजः तैः बिलच्चाराजधानीवास्तव्यैः बहुभिः अधुरकुमारैः देवैः, देवीभिश्च एतम् अर्थं सम्यग् विनयेन भूयो भूयः क्षमितः सन्त तां देवर्वां देवर्वः, देवराजः तैः वित्यः प्रतिसंद्रिः—अनु०

तैष्पभिइं च णं गोयमा ! ते विलचंचारायहाणिवत्थव्वा बहवे असुरकुमारा देवा य, देवीओ य ईसाणं देविंदं, देवरायं आढंति, जाव-पज्जुवासंति, ईसाणस्त देविंदस्त, देवरण्णो आणा-उववाय-वयण-निद्देसे चिद्वंति, एवं खलु गोयमा ! ईसाणेणं देविंदेणं, देव-रण्णा सा दिव्वा देविङ्की जाव-अभिसमण्णागया.

१८. प्र०—ईसाणस्स भंते ! देविंदस्स, देवरण्णो केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?

१८. उ०—गोयमा ! सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता.

१९. प्र०—ईसाणे णं मंते ! देविंदे, देवराया ताओ देवलो-गाओ आउक्सएणं, जाव-किहं गच्छिहिति, किहं उवविज्ञिहिति ?

१९. उ०--गोयमा ! महाविदेहे नासे सिन्झिहिति, जान-अंतं काहिइ.

तथा तेओ बधा चारे बाजु दोडवा लाग्या, भागवा लाग्या, अने एक बीजानी सोडमां भरावा लाग्या. ज्यारे ते बलिचंचा राजधानीमां रहेनारा असुरकुमार देवो अने देवीओए 'देवेंद्र, देवराज ईशान कोप्यो छे' एम जाण्युं लारे तेओ-(ते बधा असुरकुमारो) देवेंद्र, देवराज ईशाननी ते दिव्य देवऋद्धि, दिव्य देवकांति, दिव्य देव-प्रभाव अने दिव्य तेजोलेश्याने नहीं सहता, बराबर देवेंद्र, देवराज ईशाननी सामे, उपर, सपक्षे अने सप्रतिदिशे बेसी, दशे नख भेगा थाय तेम बन्ने हाथ जोडवापूर्वक शिरसावर्तयुक्त माथे अंजलि करी ते ईशान इंद्रने जय अने विजयवडे वधामणी आपी आ प्रमाणे बोल्या के:-अहो ! आप देवानुप्रिये दिव्य देवऋद्धि यावत्-प्राप्त करेली, अने आप देवानुप्रिये लब्ध करेली; प्राप्त करेली अने सामे आणेली एवी दिव्य देवऋदि अमे जोई. हे देवानुप्रिय! अमे आपनी पासे क्षमा मागीए छीए, हे देवानुत्रिय ! आप अमने क्षमा आपो, हे देवानुप्रिय ! तमे क्षमा करवाने योग्य छो; वारंवार-फरी बार-अमे ए प्रमाणे नहीं करीए, एम करी ए अपराध बदल तेनी पासे विनयपूर्वक सारी रीते क्षमा मागे छे. हवे ज्यारे ते बलि-चंचा राजधानीमां रहेनारा घणा असुरकुमार देवों अने देवीओए पोताना अपराध बदल ते देवेंद्र, देवराज ईशाननी पासे विनय-पूर्वक सारी रीते वारंवार क्षमा मागी त्यारे ते ईशान इंद्रे ते दिव्य देवऋद्भिने अने यावत्-म्केली तेजोलेश्याने पाछी खेंची लीधी. अने हे गौतम ! त्यारथी ज मांडीने ते बलिचंचा राजधानीमां रहे-नारा अनेक असुरकुमार देवो अने देवीओ ते देवेंद्र, देवराज ईशा-ननो आदर करे छे, यावत्-तेनी सेवा करे छे, तथा त्यारथी ज देवेंद्र, देवराज ईशाननी आज्ञामां, सेवामां, आदेशमां अने निर्दे-शमां ते असुरकुमार देवो तथा देवीओ रहे छे. हे गौतम ! देवेंद्र; देवराज ईशाने ते दिव्य देवऋद्धि यावत्-ए प्रमाणे मेळवी.

१८. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज ईशाननी स्थिति केटला काळ सुधी कही छे !

१८. उ० —हे गौतम! तेनी स्थिति बे सागरोपम करतां कांइक अधिक कही छे.

१९. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज ईशान पोताना आयु-ष्यनो क्षय-पोतानी आवरदा पूरी-थया पछी ते देवलोकथी च्यवीने क्यां जशे अने क्यां उत्पन्न थशे !

१९. उ० — हे गौतम ! ते, महाविदेह क्षेत्रमां जइने सिद्ध थशे अने यावत्—पोताना समस्त दुःखोनो अंत करशे.

^{9.} मूलच्छायाः—तत्प्रभति च गौतम! ते बिलच्छाराजधानीवास्तव्याः बहवोऽप्ररक्तमाराः देवाक्ष, देव्यक्ष ईशानं देवेन्द्रम् देवराजम् आद्रियन्ते, यावत्-पर्युपासते, ईशानस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य आज्ञा-उपपात-वचनिर्देशे तिष्ठन्ति, एवं खल्ल गौतम। ईशानेन देवेन्द्रेण, देवराजेन सा दिव्या देविद्धिः यावत्-अभिसमन्वागताः ईशानस्य भगवन् ! देवेन्द्रस्यं, देवराजस्य कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ताः शौतम। सातिरेके द्वे सागरोपमे स्थितिः प्रज्ञप्ताः ईशानो भगवन् ! देवेन्द्रः, देवराजस्यसाद् देवलोकाद् आयुःक्षयेण, यावत्-कुत्रं गमिष्यति इति, कुत्र उत्पत्स्यते इति ! गौतम। महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति इति, यावत्-अन्तं करिष्यतिः—अनु०

२०. प्र०—सैक्स्स णं भंते ! देविदस्स, देवरण्णो विमाणे-हिंतो ईसाणस्स देविंदस्स, देवरण्णो विमाणा ईसिं उच्चयरा चेव, ईसिं उच्चयतरा चेव, ईसाणस्स वां देविंदस्स, देवरण्णो विमाणे-हिंतो सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो विमाणा ईसिं णीययरा चेव, ईसिं निण्णयरा चेव ?

२०. उ०-हंता, गोयमा ! सकस्स तं चेव सन्यं नेयन्वं.

२१. प्र०—से केणहेणं ?

२१. उ०—गोयमा ! से जहा नाम ए करयले सिया-देसे उचे, देसे उत्रए, देसे णीए, देसे निण्णे ; से तेणद्वेणं गोयमा ! सक्कस्स देविंदस्स, देवरण्णो जाव-ईसिं निण्णयरा चेव.

२२. प्र०-पमू णं भंते ! सके देविंदे, देवराया ईसाणस्स देविंदस्स, देवरण्णो अंतिअं पाउच्मवित्तए ?

२२. उ०--हन्ता, पभू.

२३. प्रo—से णं भंते ! किं आढायमाणे पमू, अणाढाय-माणे पम् ?

२३. उ०-गोयमा ! आढायमाणे पभू, नो अणाढायमाणे पभू.

२४. प्र०—पभू णं भंते ! ईसाणे देविंदे, देवराया सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतिअं पाउच्मवित्तए ?

२४. उ०-हन्ता, पमू.

२५. प्र०—से णं मंते ! कि आढायमाणे पमू, अणाढायमाणे पम् ?

२५. उ० — गोयमा ! आढायमागे वि पभू, अणाढायमाणे वि पभू.

२६. प्र०—पभू णं भंते ! सके देविंदे, देवराया ईसाणं देविंदं, देवरायं सपविखं, सपडिदिसिं समभिलोइत्तए ?

२६. उ०—जहा पादुच्मवणा, तहा दो वि आलावगा नेयव्वा.

२७. ४० — पमू णं भंते ! सक्के देविंदे, देवराया ईसाणेणं देविंदेणं, देवरण्णा सिद्धं आलावं वा, संलावं वा करेत्तए ? २०. प्र०—हे भगवन्! छुं देवेंद्र, देवराज शक्तनां विमानो करतां देवेंद्र, देवराज ईशाननां विमानो जराक उंचां छे, जराक उन्नत छे? अने देवेंद्र, देवराज ईशाननां विमानो करतां देवेंद्र, देवराज ईशाननां विमानो करतां देवेंद्र, देवराज शक्तां हेमानो करतां देवेंद्र, देवराज शक्तां विमानो जराक नीचां छे, जराक निम्न छे?

२०. उ०—हे गौतम! हा, ते ज प्रमाणे छे—अहीं उपरना सूत्रनो पाठ उत्तरहरे समजवो.

२१. प्र०-हे भगवन् ! तेम कहेवानं क्यं कारण ?

२१. उ०—हे गौतम ! जेम कोइ एक हाथनुं तळिउं— हथेळी-एक भागमां उंचुं होय, एक भागमां उन्नत होय तथा एक भागमां नीचुं होय अने एक भागमां निम्न होय ते ज रीते विमानो संबंधे पण समजवुं अने ए ज कारणधी पूर्व प्रमाणे कहां छे.

२२. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज शक्त देवेंद्र, देवराज ईशाननी पासे प्रकट थवाने-पासे आववाने-समर्थ छे ?

२२. उ०-हे गौतम! हा.

२३. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे ते, तेनी पासे आवे त्यारे तेनो आदर करतो आवे के अनादर करतो आवे ?

२३. उ०—हे गौतम! ज्यारे ते (शक), ईशाननी पासे आवे त्यारे तेनो आदर करतो आवे पण अनादर करतो न आंवे.

२४. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज ईशान देवेंद्र, देव-राज शक्रनी पासे आववाने समर्थ छे ?

२४. उ०-हे गौतम ! हा.

२५. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे ते-(ईशानेंद्र), तेनी पासे आवे त्यारे ते (शकेंद्र) नो आदर करतो आवे के अनादर करतो आवे ?

२५. उ०—हे गौतम ! ज्यारे ते-(ईशानेंद्र), शकेंद्रनी पासे. आवे त्यारे ते, तेनो आदर करतो आवे अने अनादर करतो पण आवे.

२६. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज शक देवेंद्र, देवराज ईशाननी सपक्षे (चारे बाजुए) सप्रतिदिशे (बधी तरफ) जोवाने समर्थ छे?

२६. ड०—हे गौतम ! जेम पासे आववा संबंधे के आलापक कहा, तेम जीवा संबंधे पण वे आलापक कहेवा.

२७. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज शक्त, देवेंद्र, देव-राज ईशाननी साथे आळाप संळाप-वातचित-करवा माटें समर्थ छे!

१. मूळच्छायाः—शक्तस्य भगवन् ! देवेन्द्रस्य, देवराजस्य विमानेभ्य ईशानस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य विमानानि ईषद् उच्चतराणि एव, ईषद् उनततराणि एव; ईशानस्य वा देवेन्द्रस्य, देवराजस्य विमानेभ्यः शक्तस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य विमानानि ईषद् नोचतराणि चैव, ईषद् निम्नतराणि एव ? हन्त,
गौतम ! शक्तस्य तचैव सब झातव्यम्, तत् केनाऽर्थेन? गौतम! तद्यथा नाम करतलं स्याद्—देशे उच्चम्, देशे जवतम्, देशे नीचम्, देशे निम्नं तत् तेनाऽर्थेन
गौतम ! शक्तस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य यावत्—ईषद् निम्नतराणि चैव. प्रभुभेगवन् ! शको देवेन्द्रः, देवराजः ईशानस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य अन्तिकं प्रार्दुभेन्वितुम् १ हन्त, प्रभुः, स भगवन् ! किम् आद्रियमाणः प्रभुः, अनाद्रियमाणः प्रभुः, अनाद्रियमाणः प्रभुः, अनाद्रियमाणः प्रभुः, स्वराजः शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य अन्तिकं प्रार्दुभेवितुम् १ हन्त, प्रभुः, स भगवन् ! किम् आद्रियमाणः प्रभुः, अनाद्रियमाणः प्रभुः ? गौतम ! आदियमाणोऽपि प्रभुः, अनाद्रियमाणोऽपि प्रभुः, प्रभुभेगवन् ! शको देवेन्द्रः, देवराजः ईशाने देवेन्द्रम्, देवराजं सपक्षं सप्रतिदिशं समिनिजेकयितुम् ? यथा प्रार्द्रभोवना, तथा द्वौ अपि आलापकौ झातव्यौः प्रभुभेगवन् ! शको देवेन्द्रो देवराजः ईशानेन देवेन्द्रेण देवराजेन सार्थम् आलापं वा, संखापं वा क्रुंम् ?:—अनु०

२७. उ० हन्ती, गोयमा ! (पभू) बहा पादुच्मवी.

२८. प्र०--अस्थि णं भंते ! तेसिं सक्की-साणाणं देविंदाणं, देवराईणं किचाइं, करणिजाइं समुप्पजंति ?

२८. उ०--हन्ता, अस्थि.

२९. प्र० —से कहमिदाणि पकरेंति ?

२९. उ०—गोयमा ! ताहे चेंचें णं से सक्के देविंदे, देवराया ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतिअं पाउन्भवइ, ईसाणे वा देविंदे, देवराया सक्कस्स देविंदस्स, देवरण्णो अंतिअं पाउन्भवइ—इति भो ! सक्का ! देविंदा ! देवराया ! दाहिणडूलोगाहिवई !; इति भो ! ईसाणा ! देविंदा ! देवराया ! उत्तरडूलोगाहिवई !. इति भो ! इति भो ! ति ते अण्णमण्णस्स किचाई, करणिजाई पचणुव्भव-माणा विहरंति.

३०. प्र०-अत्थि णं भंते ! तेसिं सक्की-साणाणं देविंदाणं, देवराईणं विवादा समुप्पज्ञंति ?

₹०. उ०—हंता, अस्थि.

३१. प्र०—से कहमिदाणि पकरैति ?

३१. उ०—गोयमा ! ताहे चेव णं ते सक्की-साणा देविंदा, देवरायाणो सणंकुमारं देविंदं, देवरायं मणसी—करेंति, तए णं से सणंकुमारे देविंदे, देवराया तेहिं सक्की-साणेहिं देविंदेहिं, देवराईहिं मणसी—कए समाणे खिप्पामेव सक्कीसाणाणं देविंदाणं, देवराईणं अंतिअं पाउन्भवइ, जं से वदइ तस्स आणा-उववाय-वयण-निदेसे चिद्वन्ति.

३२. प्र०—संणंकुमारे णं भंते ! देविंदे, देवराया किं भव-सिद्धिए, अभवसिद्धिए ? सम्मिद्दिडी, मिच्छिदिडी ? परित्तसंसारए, अणंतसंसारए ? सुलभबोहिए, दुल्लभबोहिए ? आराहए, विराहए? चिरमे, अचिरमे ?

३२. उ०-गोयमा! सणंकुमारे णं देविंदे देवराया भवसिद्धिए,

२७. उ०—हे गौतम ! हा, ते वातचित करवा माटे समर्थ छे—जेम पासे आववा संबंधे जणाव्युं तेम वातचित करवा संबंधे पण समजवुं.

२८. प्र०—हे भगवन् ! ते देवेंद्र, देवराज शक्त अने ईशा-न वचे प्रयोजन के विधेय-कार्य-होय छे ?

२८. उ०-हे गौतम ! हा, हाय छे.

२९. प्र०—हे भगवन् ! हमणां तेओ पोतपोताना कार्यने केवी रीते करे छे ?

२९. उ०—हे गौतम ! ज्यारे देवेंद्र, देवराज शक्तने कार्य होय खारे ते देवेंद्र, देवराज ईशाननी पासे प्रादुर्भने छे—आवे छे अने, ज्यारे देवेंद्र, देवराज ईशानने कार्य होय खारे ते देवेंद्र, देवराज शक्तनी पासे प्रादुर्भने छे. तेओनी परस्पर बोळवानी रीति आवी छे:—हे दक्षिण लोकार्थना धणी देवेंद्र देवराज शक्त ! अने हे उत्तर लोकार्थना धणी देवेंद्र देवराज शक्त ! अने हे उत्तर लोकार्थना धणी देवेंद्र देवराज ईशान !—ए प्रमाणे संवोधनें संबोधी तेओ पोतपोतानुं कार्य करता रहे छे.

३०. प्र०—हे भगवन् ! ते बन्ने—देवेंद्र, देवराज शक्त अने देवेंद्र, देवराज ईशान—वच्चे विवादो थाय छे ?

३०. उ० हे गौतम ! हा, ते बन्ने वचे विवादो थाय छे.

३१. प्रo—हे भगवन् ! ज्यारे ते बे वचे विवाद थाय छे त्यारे तेओ शुं करे छे ?

३१. उ०—हे गौतम! ज्यारे ते बे बच्चे विवाद थाय छे त्यारे तेओ, देवेंद्र देवराज सनत्कुमारने संभारे छे अने संभारतां ज ते देवेंद्र, देवराज सनत्कुमार, देवेंद्र देवराज शक्त अने ईशाननी पासे आवे छे. तथा ते आवीने जे कहे छे तेने तेओ माने छे—ते बन्ने इंद्रो तेनी आज्ञामां, सेवामां, आदेशमां अने निर्देशमां रहे छे.

३२. प्र०—हे भगवन् ! शुं देवेंद्र, देवराज सनत्कुमार भव-सिद्धिक छे, अभवसिद्धिक छे, सम्यग्दृष्टि छे, मिथ्यादृष्टि छे, मित संसारी छे, अमित—अनंत—संसारी छे, सुलम बोधिवाळो छे, दुर्लभ बोधिवाळो छे, आराधक छे, विराधक छे, चरम छे के अचरम छे?

३२. उ०—हे गौतम ! देवेंद्र देवराज सनःकुमार भवसिद्धिक

^{9.} मूळच्छायाः—हन्त, गौतम! (प्रमुः)यथा प्रादुर्भवः अस्ति भगवन्! तयोः शके-शानयोः देवेन्द्रयोः देवराजयोः कृत्यानि, करणीयानि समुत्यद्यन्ते ? हन्त, अस्ति. तत् कथम् इदानी प्रकुरुतः ? गौतम! तदैव स शको देवेन्द्रो देवराजः ईशानस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य अन्तिकं प्रादुर्भविति, ईशानो विदेन्द्रो देवराजः शकस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य अन्तिकं प्रादुर्भविति—इति भोः शकः! देवेन्द्र! देवराज! दक्षिणार्थलोकाधिपते!. इति भोः! इति भोः शकः विदेन्द्र! देवराज! व्रत्याचित्र प्रस्ति भोः! इति भोः! इति तौ अन्योन्यस्य कृत्यानि, करणीयानि प्रस्तनुभवन्तौ विहरतः. अस्ति भगवन्! तयोः शके-शानयोः देवेन्द्रयोः, देवराजयोः विवादाः समुत्यद्यन्ते ? हन्त, अस्ति. तत् कथम् इदानीं प्रकुरुतः ? गौतम! तदैव तौ शके-शानौ देवेन्द्रो देवराजौ सनकुत्मारं देवेन्द्रमः, देवराजं मनसि कृतः, ततः स सनस्कुमारो देवेन्द्रो देवराजस्याम्यां शके-शानाभ्यां देवेन्द्राभ्यां देवराजभ्यां मनसि कृतः सन् क्षिप्रम् एव शके-शानयोः देवेन्द्रयोः देवराजयोः अन्तिकं प्रादुर्भवित, यत् स वदति तस्य आज्ञा—उपपात-वचन-निर्देशे तिष्ठतः. सनत्कुमारो भगवन्। देवेन्द्रो देवराजः कि भवसिद्रिकः, अभवसिद्रिकः ? सम्यग्दिष्टः, मिथ्यादिष्टः ? परीतसंसारकः, अनन्तसंसारकः ? सुक्रभवोधिकः, दुर्शभवोधिकः ? आराधकः, विराधकः ? वरसः, अचरमः ? गौतम! सनत्कुमारो देवन्द्रो देवराजो नवसिद्रिकः—अनु०

नो अभवसिद्धिए. एवं सम्मिद्दिन्नी, परित्तसंसारए, सुलभवोहिए, आराहए, चरमे–पसत्थं नेयन्वं.

२२. प्र०—से केणडेणं भन्ते ! ?

३३. उ० —गोयमा ! सणंकुमारे देविंदे देवराया बहूणं सम-णाणं, बहूणं, समणीणं; बहूणं सावयाणं, बहूणं साविआणं हिअ-कामए, सुहकामए, पत्थकामए, आणुकंपिए, निस्सेयिसए, हिअ-सुह-(निस्सेयिसए निस्सेसकामए.) से तेणहेणं गोयमा ! सणंकुमारे णं भवसिद्धिए, जाव−नो अचिरमे.

३४. प्र०—सणंद्रुमारस्स णं भंते ! देविंदस्स, देवरण्णो केवइयं कालं डिई (ती) पण्णत्ता ?

३४. उ०-गोयमा! सत्त सागरोवमाणि डिई पण्णत्ता.

३५. प्र०—से णं भंते ! ताओ देवलोगाओ आउक्खयेणं जाव—कहिं उववज्जिहिइ ?

३५. उ०—गोयमा ! महाविदेहे वासे सिन्झिहिइ, जाव-संतं करेहिइ.

सेवं मंते !, सेवं मंते !. गाहाओः—

छट्ठ-द्वम मासो उ अद्धमासो वासाइं अट्ठ छम्मासा, तीसग-कुरुदत्ताणं तव-भत्तपरिण्णा-परियाओ. उचत्त विमाणाणं पाउच्भव पेच्छणा य संलावे, किचि विवादुप्पत्ती सणंकुमारे य भवियत्तं (व्वं)

मोया सम्मत्ता.

छे, पण अभवसिद्धिक नथी. ए रीते ते सम्यग्दृष्टि छे, मिथ्यादृष्टि नथी. मित संसारी छे, अनंत संसारी नथी. सुरुभ बोधिवाळो छे, दुर्छभ बोधिवाळो नथी. आराधक छे, विराधक नथी. चरम छे अने अचरम नथी-अर्थात् ते संबंधे बधुं प्रशस्त जाणवुं.

३३. प्र०-हे भगवन् ! तेम कहेवानुं हुं कारण ?

३३. उ०—हे गौतम ! देवेंद्र, देवराज सनत्कुमार घणा श्रमण, घणी श्रमणीओ—साध्वीओ, घणा श्रावक अने घणी श्राविकाओनो हितेच्छु छे, सुखेच्छु छे, पथ्येच्छु छे, तेओना उपर अनुकंपा करनार छे, तेओनुं निःश्रेयस इच्छनार छे तथा तेओना हितनो, सुखनो अने निःश्रेयसनो अर्थात् ए बधांनो इच्छुक छे, माटे हे गौतम ! ते सन-कुमार इंद्र भवसिद्धिक छे यावत्—ते चरम छे, पण अचरम नथी.

३४. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज सनत्कुमारनी स्थिति केटला काळ सुधीनी कही छे ?

३४. उ० हे गौतम! तेनी स्थिति सात सागरोपमनी कही छे

३५. प्र०—भगवन् ! तेनी आवरदा पूरी थया पछी ते, देवलोकथी च्यवी यावत्-क्यां उत्पन्न थशे ?

३५. उ०—हे गौतम! ते महाविदेह क्षेत्रमां सिद्ध थशे, यावत् तेनां सर्व दु:खोनो नाश करशे.

हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे. (एम कही यावत्—विचरे छे.)

गाधाः—तिष्यक श्रमणनो तप छह अने एक मासनुं अनशन छे. कुरुदत्त श्रमणनो तप अहम अने अडधा मासनुं अनशन छे. तिष्यक श्रमणनो साधुपर्याय आठ वर्षनो अने कुरुदत्त श्रमणनो साधुपर्याय आठ वर्षनो अने कुरुदत्त श्रमणनो साधुपर्याय छ मासनो छे अर्थात् ए वे श्रमणोने छगती बीना आ उद्देशकमां आवी छे अने बीजी बीना—विमानोनी उंचाई, इंद्रनुं इंद्रनी पासे जवुं, जोवुं, संछाप, कार्य, विवादनी उत्पत्ति, तेनो निवेडो अने सनकुमारमां भव्यपणुं; ए बीनाओ पण आ उद्देश-कमां कही छे.

³मोका समाप्त.

भगवंत-अजसुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुत्ते ततिअसथे पढमो मोआ-उद्देशी सम्मत्तो.

८. इन्द्राणां वैक्रियशक्तिप्ररूपणप्रक्रमाद् ईशानेन्द्रेण प्रकाशितस्य आत्मीयस्य वैक्रियरूपकरणसामर्थ्यस्य, तेजोलेस्यासामर्थ्यस्य चोपदर्शनाय इदमाहः—'ते णं' इत्यादि, 'जहेव रायप्यसेणइज्जे'ित यथैव राजप्रश्लीयाख्येऽध्ययने सूरियामदेवस्य वक्तव्यता, तथैव चेह ईशानेन्द्रस्य. किमन्ता १ इत्याहः—'जाव दिव्वं देविट्टिं'ित, सा चेयमर्थसंक्षेपतः—समायां सुधर्मायाम्, ईशाने सिंहासने अशीत्या सामानिक-

१. मूलच्छायाः—नो अभवसिद्धिकः, एवं समयग्रहिः, परीतसंसारकः, सुलभवोधिकः, आराधकः, चरमः—प्रशस्तं ज्ञातव्यम्. तत् केनार्थेन भगवन् !? गौतम ! सनःकुमारो देवेन्द्रो देवराजो बहूनां श्रमणानाम्, बह्वीनां श्रमणीनाम्; बहूनां श्रावकाणाम्, बह्वीनां श्राविकाणां हितकामुकः, सुलकामकः पथ्य-कामुकः, अनुकम्पितः, नैश्रेयसिकः, हित-सुल-(नैश्रेयसिकः) निःश्रेयसकामुकः, तत् तेनार्थेन गौतम ! सनःकुमारो भवसिद्धिकः, यावत्—नो अवरमः. सनःकुमारस्य भगवन् ! देवेन्द्रस्य देवराजस्य कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञसा ? गौतम ! सप्त सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञसा. स भगवन् ! तसाद् देवलोकाद् आयुः—क्षयेण यावत—कुत्र उत्परस्यते ? गौतम ! महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति, यावत्—अन्तं करिष्यति. तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् !. गाथाः—पष्टा-प्रयमे आर्ख्य अर्थमासो वर्षाणि अष्ट षण्मासाः, तिष्यकन्कुरुदत्तयोः तपो—भक्तपरिज्ञा—पर्यायः. उच्यत्वं विमानानां प्रादुर्भवः प्रेक्षणा च संलापः, कृत्यं विवादोत्पत्तिः सनःकुमारे च भव्यत्वम् (भवितव्यम्). मोका समाप्ताः—अनु०

৭. आ वास (उद्देशक) मोका नगरीमां कहेवाएल होवाथी चाल उद्देशकतुं नाम पण मोका राख्युं छः-अनु॰

सहस्नै:, चतुर्भिर्छोकपाछैः, अष्टाभिः सपरिवाराभिरप्रमहिषीभिः, सप्तिभरनीकैः, सप्तिभरनीकाधिपतिभिः, चतस्यिश्वाशीतिभिरात्मरक्षदेवसह-स्राणाम्, अन्येश्व बहुभिर्देवैः, देवीभिश्व परिवृतो महता आहतनाट्यादिरवेण दिव्यान् भोगभोगान् भुञ्जानो विहरति स्म. इतश्च जम्बूद्वीपमव-धिनाऽऽछोकयन् भगवन्तं महावीरं राजगृहे ददर्श, दृष्ट्वा च ससंभ्रममासनादुत्तस्यौ, उत्थाय च सप्ताष्टानि पदानि तीर्थकराभिमुखमाजगाम. ततो छछाटतटघटितकरकुड्मछो ववन्दे, विद्या चाभियोगिकदेवान् शब्दयांचकार. एवं च तानवादीत्ः—गच्छत भो राजगृहं नगरम्, महावीरं भगवन्तं वन्दध्वम्, योजनपरिमण्डछं च क्षेत्रं शोधयत, कृत्वा चैत्रं मम निवेदयत. तेऽि तथैव चकुः. ततोऽसौ पदात्यनीकाधिनितं देवमेवमवादीत्ः—भोः! मोः! देवानां प्रिय! ईशानावतंसके विमाने घण्टामास्प्तालयन् घोषणां कुरु—'यदुत गच्छिति भोः! ईशानेन्द्रो महावीरस्य वन्दनाय, ततो य्यं शीव्रं महद्ध्यां तस्यान्तिकमागच्छत'. कृतायां च तेन तस्यां बहवो देवाः कुत्रह्छोदिभः तत्समीपमुपा—गताः. तथि परिवृतोऽसौ योजनछक्षप्रमाणयानविमानारूढोऽनेकदेवगणपरिवृतः, नन्दीश्वरे द्वीपे कृतविमानसंक्षेपो राजगृहनगरमाजगाम. ततो भगवन्तं विः प्रदक्षिणीकुस्य चतुर्भिरक्षुर्छर्भुवमप्रातं विमानं विमुच्य भगवस्तमीपमागत्य भगवन्तं विन्दत्वा पर्युपास्ते स्म.

८. आ चालु प्रकरण इंद्रोनी वैकियशक्तिना प्ररूपण परत्वे छे, तो हवे इंद्रे प्रकाशेल-पोतानां वैकियरूपो करवाना सामर्थ्यने तथा तेना तेजो-छेश्या संबंधी सामर्थ्यने देखाडवा आ सूत्र कहे छे:-['ते णं' इत्यादि.] ['जहेव रायणसेणइच्चे'ित] रीजप्रश्लीय (रायपसेणी) नामना अध्य-

"अज्ञानि द्वादश, उपाङ्गानि अपि अङ्गेकदेशप्रपञ्चहपाणि प्रायः प्रत्यङ्ग- अंगो वार छे अने एक मेकेकभावात् तावन्ति एवः तत्र अङ्गानि आचाराङ्गादीनि प्रतीतानि, बार छे. ते आ प्रमाणे:— तेपाम् –उपाङ्गानि क्रमेण अमूनि :—

१. आचाराङ्गस्य आपपातिकम् २ सूत्रकृदङ्गस्य राजप्रश्नीयम्, ३ स्थानाङ्गस्य जीवा (जीवा) भिगमः ४ समवायाङ्गस्य प्रज्ञापनाः ५ भगवत्याः सूर्यप्रज्ञितः ६ ज्ञाताधर्मकथाङ्गस्य जम्बूद्वीपप्रज्ञितिः ७ उपासकद्याङ्गस्य चन्द्रप्रज्ञितः ८ अन्तकृद्शाङ्गस्य किष्पकाः ९ अनुत्तरीपपातिकस्य कल्पवतं सिकाः १० प्रश्नव्याकरणस्य पुष्पिता(का)ः ११ विपाकश्चतस्य पुष्पचूलिकाः १२ दृष्टिवादस्य वृष्णिदशा-विष्टदशाः (अन्धकवृष्णिदशाः)

अंगो बार छे अने एक एक अंगतुं उपांग एक एक होवाथी उपांगो पण बार छे. ते आ प्रमाणे:—

अंगसूत्र---उपांगस्त्र.

आचारांग—आपपातिक. सत्रकृतांग—राजप्रश्नीय (१) रायपसेणी. स्थानांग—जीवाजीवाभिगम. समवायांग—प्रज्ञापना—पन्नवणा. भग-वती—सर्थप्रज्ञाप्त. ज्ञाताधर्म—जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति. उपासकद्शा—चन्द्रप्रज्ञप्ति. अंतकृह्शा—किपका. अनुत्तरीपपातिक—कल्पवतंत्तिका. प्रश्नव्याकरण—पुष्पिता(का). विपाक—पुष्पपृत्विका. दृष्टिवाद—वण्हिदशा.

—(जंबूदीपप्रज्ञप्ति १० १ बा०)

उपर जणावेलो अंग अने उपांगोनो आनुक्रमिक उल्लेख कोई प्राचीन प्रंथमां मळी शकतो नथी. नंदीसूत्रना मूळमां छत्ञानना विभागो दर्शावतां आ जातनो क्रमिक उल्लेख दर्शांच्यो नथी. जो के तें उल्लेखमां आ १२ उपांगोनो नामनिर्देश करेलो छे, परंतु उपांग तरीके नहि, तेम अमुक अंगनुं अमुक उपांग छे ए रीते पण नहि अर्थात् नंदीसूत्रना मूळमां तेम टीकामां कोई प्रकारे उपांगनो तेम तेना क्रमनो उल्लेख मळी शकतो नथी. तेमां जे उल्लेख मळे छे ते आ प्रमाणे छे:—

" तं समासओ दुविहं पण्णतं, तं जहा:-अंगपविद्वं, अंगबाहिरं. से किं तं अंगबाहिरं ? अंगवाहिरं दुविहं पण्णतं, तं जहाः-आवस्सयं, आवस्सय-बइरितं च. से कि तं आवस्सयं ? आवस्सयं छिवहं पण्णतं, तं जहाः-सा-माइअं, चउवीसत्थओ, वंदणयं, पिकक्षमणं, काउस्सग्गो, पचक्खाणं. से कि तं आवस्सयवहरितं ? आवस्सयवहरितं दुविहं पण्णतं, तं जहाः—कालिअं च, उक्कालिअं च. से किं तं उक्कालिअं ? उक्कालिअं अणेगविहं पण्णत्तं, तं जहाः-दसवेआलिअं, किप्याकिपअं, चुलकप्पसुअं, महाकप्पसुअं, उदेवा-इअं, रायेंपसेणिअं, जीवाभिगमो, पर्णेणवणा, महापण्णवणा, पमायप्पमायं, नंदी, अणुओगदाराई, देविंदत्थओ, तंदुछवेआलिअं, चंदाविज्झयं, सूर्पण्णसी, पोरिसिमंडलं, मंडलपवेसो, विज्ञाचरणविनिच्छओ, गणिविज्ञा, शाणविभत्ती, मरणविभत्ती, आयविसोही, वीयरागसुअं, संलेहणासुअं, विहारकप्नो, चर-णविही, आउरपचक्खाणं, महापचक्खाणं-एवमाई.x से किं तं कालिअं? कालिअं अणेगविहं पण्णतं, तं जहाः --- उत्तरज्झयणाइं, दसाओ, कप्यो, ववहारो, निसीहं, महानिसीहं, इसिभासिआइं, जंर्ब्हीवपन्नत्ती, दीवसागरपन्नती, चंदैपन्नती, खुिआ विमाणपविभत्ती, महलिआ विमाणविभत्ती, अंगचूलिआ, बग्गचूलिआ, विवाहचूलिआ, अस्णोवबाए, गस्लोवबाए, धरणोवबाए, वेस-मणीववाए, वेलंघरीववाए, देविंदोववाए, उद्घाणसुए, समुद्वाणसुए, नागप-रिआवणिआओ, निरयवालियाओ, किर्पंआओ, कर्पंबिंडिसिआओ, पुर्फिं-आओ, पुष्केंचूलिआओ, वण्हीदैसाओ-एवमाइयःं."

" संक्षेपथी विचारीए तो अतज्ञान चे प्रकारतुं छे:--अंगरूप अने अंग सिवायनुं, अंग सिवायनुं अतज्ञान वे प्रकारनुं छे:--आवस्यक अने आव-रयक सिवायनुं आवस्यकना छ प्रकार छे:--सामायिक, चतुर्विशतिस्तव, वंदनक, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग, अने पचक्खाण. आवश्यक सिवायनुं अत-ज्ञान वे प्रकारतुं छेः--कालिक अने उत्कालिक × उत्कालिक श्रुत अनेक प्रकारनं छे:--दशनैकालिक, कल्पिताकल्पित (,कल्पाकल्प), क्षुद्र कल्पश्चत, महाकल्पश्चत, भीषपातिक, राजेप्रश्नीय (१), जीवाभिगम, प्रज्ञापना, महा-प्रज्ञापना, प्रमादाप्रमाद, नंदी, अनुयोगद्वार, देवेंद्रस्तव, तंदुलवैचारिक, चंद्रवेध्यक (?) सूर्यप्रज्ञप्ति, पौरुपीमंडल, मंडलप्रवेश, विद्याचरणविनिश्चय, गणिविद्या, ध्यानविभित्तत, मरणविभित्तत, आत्मविशोधि, वीतरागश्चत, संले-खनाश्रुत, विहारकल्प, चरणविधि, आतुरप्रखाख्यान, महाप्रखाख्यान— इलादि. × कालिक श्रत अनेक प्रकारनुं छे:--उत्तराध्ययको, दशा, कल्प, व्यवहार, निशीथ, महानिशीथ, ऋषिमाषित, जंबूदीपप्रज्ञप्ति, द्वीपसागरप्र-इप्ति, चंद्रँप्रइप्ति, क्षुद्रिका विमानप्रविभवित, महती विमानप्रविभवित, अंग-मूलिका, वर्गचूलिका, व्याख्याचूलिका, (व्याख्याप्रज्ञसिचूलिका), अरुणोप-पात, महडोपपात, घरणोपपात, वैश्रमणोपपात, वैलंघरोपपात, देवेंद्रोपपात, उत्थानश्चत, समुत्थानश्चत, नागपरिज्ञा (नागपरिज्ञापनिका) निरयाविल, र्कल्पका, कल्पीदतीसिका, गुर्ष्पिका, पुर्षे चूलिका अने बृष्णिदेशा (अंधकन्न िणदशा) इत्यादि.

—नंदीसूत्र प्र॰ २०२ (स)

आ 'राजप्रश्नीय ' नामनुं एक सूत्र छे, जे उपांगरूप छे. अने बार उपांगोमां तेनुं स्थान बीजुं आवे छे. जैन संप्रदायमां १२ अंगसूत्रो छे अने १२ उपांग सूत्रो छे-कर्नुं सूत्र कथा अंगनुं उपांगरूप छे, ते विषे नीचे प्रमाणे समजवानुं छे:—

अनमा नेग सूर्यामदेवनी वक्तव्यता कही छे तेम ज अहीं ईशान इंद्रनी वक्तव्यता कहेवी. ते वक्तव्यता क्यां सुधी कहेवी? तो कहे छे के, ['जाव-दिंब्बं दियां हुँ इति] ते वक्तव्यतानो दुंको अर्थ आवो छे:-सुधर्मा समामां, ईशान नामना सिंहासनमां बेसी देवेंद्र देवराज ईशान, मोटा अखंड नाटको वगरेना शब्दंबडे दिव्य अने भोगववा योग्य भोगोने भोगवतो विहरे छे. ते ईशानेंद्र त्यां एकलो नथी पण परिवारसहित बेठो छे. तेनो

उपर जणावेला नंदीसत्रवाळा उक्केखमां बराबर कमवार ए बारे सत्रोनां नामो आपेलां छे, परंतु तेमांना केटलांक कालिक धत तरीके अने केटलांक ष्टरकालिक अत तरीके, उपांग तरीके तो नहि ज.⁴[ए नामोना विशेष विवेचन माटे नंदीमूलने जोई हैवानी जरूर छे.] जे जे नामो उपर अंको छगाड्या 🕏 ते ए उपांगनां नामो छे. वळी समवायांग (ज्ओ० भ० प्र० खं० प्र० ९-१०) स्त्रमां ज्यां वारमा समवायनी उहेस करेलो छे त्यां घणा खरा बार बार पदार्थी 4! नोंध करी छे, किंतु आ बार उपांगीनुं नाम पण लीवुं नथी. मात्र जाणवानी खातर ज लांनी नोंधनी केटलीक भाग नीचे आपेली छे:—

" १ बारस भिवखपडिमाओ पण्णत्ताओ. २ दुवालसविहे संभोगे पण्णते. दुवालस नानधेचा पण्णता. ५ तेसि णं देवाणं वारसिंह वाससहस्सेहिं देवोने बार हजार वर्ष पछी खावानो अभिलाप थाय छे. आहारदे समुप्यज्ञइ.—समयायांग पृ० २१ (स)

१ मिक्षुओनी प्रतिमाओ बार छे. २ संभोग बार प्रकारनो छे. ३ कृति-१ हुवालसावते कितिकम्मे पण्णते. ××× ४ ईसिपब्भाराए णं पुढवीए कर्म बार आवर्तवाछं छे. ४ ईपत्प्राग्भारा पृथिवीनां बार नाम छे. ५ ते

आ प्रकारे आ बारमा समयायना प्रकरणमां घणा घणा बार वार पदायोंनी नोंध करी छे, पण क्यांय 'उपांगो वार छे' एम जणाव्युं नथी. किंतु ए सत्रमां घण अन्यत्र आ प्रमाणे तो स्वष्टपणे सूचव्युं छे के:---

'' द्रुवालसंगे गणिपिडगे पण्यते, तं जहाः—आयारे, स्वगडे, ठाणे, स-मवाए, बिवाहपनची, णायाधम्मकहाओ, उवासगदसाओ, अंतगडदसाओ, अणुत्तरोववाइयद्साओ, पण्हावागरणाई, विवागसुए, दिहिवाए ''--समवाय पृ० १०६ (स)

" गणिपिटक, द्वादश अंगरूप छे, जैम के:--आचार, स्त्रकृत, स्थान, समवाय, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञाताधर्मकथा, उपासकद्शा, अंतकृद्शा, अनुत्त-रै।पपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण, विपाकश्रुत अने दृष्टिवाद."

नार्थात् समवायांग सत्रमां पण प्रसंग होवा छतां उपांगोनी संख्या तेम ज तेनो पूर्वोक्त अनुक्रम जणाव्यो नथी. वळी कुमारपाळना समसमयी अने हेमना गुर श्रीहेमचंद्रजीए पोताना कोशमां अग्यारे अंगोनां अने चौदे पूर्वनां नामो तथा अर्थो आप्या छे (जुओ--देवकाण्ड श्लोक--१५५-१५८-१५९-१६१-१६१ । अंतु आ उपांगीना क्रमिक उल्लेखने तेमां संभारवामां आव्यो नथी. जो के मूळमां अने टीकामां "साङ्गोपाङ्गानि अङ्गानि" मूळ-'' सह डपारैं:--अंपपातिकादिभिवंदीन्ते-सोपाङ्गानि ''-टीका एवी सामान्य नें।य करी छे, किंतु 'उपांगी बार छे, अने तेनां नामो अनुक्रमे आ छे ' एवो स्पष्ट उहेल तो कर्यो ज नथी—समवायांग स्त्रमां उपांगो वा तेनी संख्यानी नेंाध करी नथी. मात्र अंगो, तेनी संख्या अने तेमां आवेला विषयो त्रर्णवेटर छे. नंदीस्त्रमां पण तेम ज छे, मात्र तेमां उपांग तरीके जणावाता ए वारे प्रंथीनां नामो नें।घेलां छे, पण उपांग तरीके नहि. एथी इतिहास एम कल्पी शके खरो के, ए वारे प्रथोनी उपांग तरीकेनी अने तेनी कमिक संख्यानी कल्पना प्रायः अवीचीन होय. कारण के, ए प्रथोने उपांगरूपे स्चवता जे उछेस्रो मळे छे ते अर्वाचीन जणाय छे (एवा उछेस्रोमां एक श्रीहेमचंद्रजीनो, बीजो तत्त्वार्थवृत्तिनो (पृ० ६४-अमदाबाद) अने त्रीजो प्रथम जणावेस्रो जंबूदीपपत्रत्तिनी टीकानो श्रीहीरविजयस्रिजीना समयनो-एम त्रण उङ्केखो मळे छे) जे बीजो उङ्केख तत्त्वार्थवृत्तिमां नोंधाएलो छे तेमां तो "राजप्रसेन-कीय-आपपातिक-आदीनि '' एम लखेलुं छे एटले आगळ जणावेला आनुक्रमिक उल्लेखमां जे उपांगनुं नाम सौथी प्रथम जणान्युं छे, तेने आ दृत्ति, बीलुं जणावे छे अने बीजा नामने पहेलुं जणावे छे. ए पण कमिक उल्लेखनी चोक्कस कल्पनाने शिथिल पाडवा जैसुं छे. वली दिगंबर संप्रदायमां (राजवार्तिक पृ० ४९ थी ५४ ए० २०) ज्यां श्रतज्ञान अने तेना भेद प्रभेगोनो सविस्तर निदेश करेलो छे त्यां उपांग नामक भेदनो वा तेनी संख्यानो छेश पण उछेल नथी मळतो. तेम ज तेओना शतस्कंध नामना बीजा प्रथमां सबिस्तर नोंध होवा छतां, उपर जणावेलो उपांगोनो वा तेना अनुक्रमनो उहेस्स नथी मळतो. अने आ रीते आगळ जणावेली इतिहासनी कल्पना कदाच खेरी पण पडी शके.

' राजप्रक्षीय ' नुं प्राकृत नाम 'रायपसेणीय' छे. इवे व्याकरणनी दृष्टिए विचार करतां 'प्रश्नीय' नुं तद्दन सीधी रीते, 'पसेणीय' थवुं अशक्य छागे छे. प्राकृतमां 'प्रश्न 'शब्दनां 'पण्ह 'अने 'पिसण 'एवा बे रूपो बने छे तेथी 'राजप्रद्नीय 'शब्दनुं प्राकृत रूप 'रायपण्हीय 'वा 'रायपिसणीय ' थवुं शक्य लागे छे. वळी तत्त्वार्थवृत्तिना उछेखानुसार आगळ जणाव्या प्रमाणे आतुं संस्कृत नाम 'राजप्रसेनकीय 'माल्ग पडे छे अने ए नामनुं बरावर प्राकृत 'रायपसेणईअ 'थवा जाय छे. आ प्रकारे वे जातने। नामोहेख मळवाथी एत्रो चोकसं निर्णय थई शकतो नथी के, राजप्रशीय वरावर छे के राजप्रसेनकीय बराबर छे. ए उन्नमां राजा प्रदेशीने लगती हकीकत आवे छे एथी कदाच 'राजप्रश्नमधिकृत्य कृतं शास्त्रं राजप्रश्नीयम् 'एवी ब्युत्पत्तिने आधारे 'राजश्रनीय 'नाम वरावर होय. आ संबंधे विचार करता एक जर्मन पंडित श्रीयुत वेवर महाशय जणावे छे के, 'राजप्रश्नीय 'नामने वद्छे 'राजप्रदेशीय ' नाम आ सूत्रने वरावर लागु थाय छे. कारण के, ए नाम, एना विषयने अनुकूळ होवाथी अन्वर्ध–नाम छे. आथी कदाच एम पण कल्पी शकाय खरुं के, 'राजप्रदेशीय' ना प्राकृतरूप 'रायपएतीय' ने बदले अमवशे 'रायपसेणीय' थई गयुं होय अने परापूर्वेथी एतं ए ज चाल्युं आवतुं होय.

आचार्य श्रीहरिभद्र जैवा प्रामाणिकप्रकांड पुरुषोए एवं एक चोकस घोरण घडी राख्युं छे के, अंगसूत्रो गणधरप्रणीत हतां अने उपांगसूत्रो स्थविरप्रणीत छे. ए विषे तेओए आवश्यकदृतिमां जणाब्युं छे के:---

अङ्गप्रविष्टं गणधरकृतम्-—आचारादि. अनङ्गप्रविष्टं तु स्थविरकृतम्''— '' जे श्रुत अंगप्रविष्ट छे ते गणधरकृत छे अने जे, ते सिवायनुं छे ते आवश्यकादि.—(आ॰ वृ॰ पृ॰ २५ स॰) स्थविरकृत छे.

उपरनी हकीकतने आचार्य श्रीमलयगिरि अने आचार्य श्रीमलधारी विगेरे पण टेको आपे छे. ए विषे तेओ आ प्रमाणे जणावे छे के :—

"यद् गणधरदेवकृतं तद् अङ्गप्रविष्टम्-मूलभूतमिसर्थः× यत् पुनः श्रत-" जे युत गगधरहत छे ते अंगप्रविष्ट छे-अने जे, स्थविरहत छे ते स्थविरैः + विरचितं तद् अनङ्गप्रविष्टम्''—(नन्दीटीका, मलयगिरीया पृ॰ अंग सिवायनुं छे." २०३ स०)

"गणहर-थेरकयं वा"-(५५०)-(विशेषाषश्यकटीका मलधारीया-" अंगगत श्रुत गणधरकृत छे अने ते सिवायनुं स्थविरकृत छे." श्रुतज्ञानभिचार)

Jain Education International

परिवार, महा बीर.

परिवार आ प्रमाण छे:-एंशी हजार सामानिक देवो, चार लोकपालो, परिवारवाळी आठ पहराणीओ, सात सेनाओ, सात सेनाधिपतिओ, ३, ३२००० अंगरक्षक देवो अने बीजा अनेक वैमानिक देवो तथा देवीओ। हवे ते ईशानेंद्रे जंब्द्वीपने अवधिज्ञानवर्डे जोयो अने तेने जोतां राजगृह नगरमां पधारेल भगवंत महावीरने पण जोया। भगवंतने जोइने ते इंद्र एकाएक आसनधी उमो थयो अने आसनधी उठी सात आठ पगलां
तीर्थेकरनी सामे गयो। पछी कपाळमां पद्मना कोशनी पेठे हाथ जोडी तेणे श्रमण भगवंतने वांद्या। अने त्यार बाद पोताना आभियोगिक देवोने तेणे

राजप्रश्नीय सत्र उपांगरूप होवाथी तेना कर्ता के हैं स्थिवर (साधु) होय तेम उपरना वधा उछेखो सप्टरणे स्चित करे छे. एथी आपणे पण ते ज उडेखोना संवादने प्रामाणिक मानवानो छे. राजप्रश्नीय सत्र, बीजा अंग-सत्रकृतांग-नं उपांग छे, तेथी ए वे वचे रहेलो अंगे।पांगीभाव तपासवो जरूरनो छे. सूत्रकृतांगमां जे जे विषया अविला छे ते विषे आगळ (प्र०ख०५०९-१०) आपेल निरूपण जोई छैवानुं छे. जे सत्रकृतांग वर्तमानमां मळे छे तेमां कुछ २३ अध्ययनो छे. तेनां नाम अने तेमां आवेला विषया आ प्रमाणे छे:—

१ ला समय नामना अध्ययनमां वीतराग्रना संतव्यतुं स्वरूप छे. २ जा वैतालीय अध्ययनमां-वैराग्यनो सर्व साधारण उपदेश छे अने ते वैतालीय छंदमां गवाएलो छे. निर्शुक्तिकारे ए उपदेशने "आदीश्वरे आपेलो उपदेश" कहेलो छे. ३ जा उपसर्गपरिहा अध्ययनमां अने ४ था स्त्रीपरिहा अध्ययनमां संयमनी साधनामां आडे आवती अनुकूळता अने प्रतिकूळतानुं खरू। दशाव्यं छे. ५ मा निरयविभक्तिमां नरकोना विभागी बताव्या छे. ६ द्वा वीरस्तुतिमां स्तुतिद्वारा श्रीवीरनी चर्या नोंधेली छे. ७ मा कुशीलपरिभाषामां कुशीलोनी हिथति -दशा-जणावी छे. ८ मा वीर्थ, ९ मा धर्भ, १० मां समाधि, ११ मा मार्ग, १२ मा समवसरण (दार्शनिकोनी सभा,) १३ मा याथातथ्य, १४ मा ग्रंथ १५ मा आदान अने १६ मा गाथा अध्ययनमां संयमने लगता साधारण विषये। निरूपे आ छे अने मात्र एक बारमा अध्ययनमां मतवादिओना विनयवादादिनी चर्चा करी छे. १७ मा अध्ययनमां पण उपनयनी पद्धतिए बारमा अध्ययन जेवी चर्चा करेली छे. १८ मा कियास्थान, १९ मा आहारपरिज्ञा, २० मा प्रत्याख्यान अने २१ मा अनाचारश्रुतमां अनुक्रमे काथिकी विगेरे कियाओनं, आहारनं, प्रखाख्यान (पचक्खाण)नं अने अनाचारनं वर्णन आपेलं छे. २२ मा आईकीय अध्ययनमां हस्तितापस, गांशालक अने बुद्ध विगेरेने आईकुमारनी साथे शास्त्रार्थमां जोडीने उपहासपूर्वक पाछा पाड्या छे. अने छेला २३ मा नालंदीय अध्ययनमां गैतिम अने पार्श्वापत्य उदक वचे नालंदामां थएली चर्चाने नोंधेली छे. आ प्रकारे वर्तमान स्त्रकृतांग सूत्रमां मळता विषयोमां राजा प्रदेशी के तेने लगती हकीकतनं नीशान सुद्धां जणातुं नथी अने आ सूत्रना उपांगभूत कहेवाता 'राजप्रश्नीय' सूत्रमां तो राजा प्रदेशीना सूर्याभ देव तरीकेनो अवतार, तेनी देवऋदि, देवधुति अने दिव्य भोगविलासो तथा तेणे करेलुं दिव्यनाटक विगेरे वर्णवाएलां छे अने निर्प्रथन्नमण साथे थएला राजा प्रदेशीना जीवविषयक प्रश्नो तथा गातम अने पार्श्वपञ्च केशीना आलाप संलाप पण सूचवाएलो छे. आ रीते ए बन्ने सूत्रोनो विषय जोतां स्त्रकृतांग अने राजधरनीय वच्चे जणावेले। अंगोपांगीमाव घटी शकता हाय एम मने लागतुं नथी. कदाच एम कहेवामां आवे के, सूत्रकृतांग अने राजधरनीयमां आवती जीवविषयक चर्चा एक सरखी जणाय छे, एने लीघे ए बन्ने वचे रहेला अंगापांगीभाव शा माटे न घटी शके ? आना समाधानमां जणाववातुं के, एनी (राजप्रश्नीयनी) ए चर्चा जेटली सूत्रकृतांगगत चर्चा साथे मळती आवे छे तेटली ज आचारांगादिगत चर्चा साथे मळती आवे छे, एथी ए चर्चा ते वे वचेना अंगापांगीभावनी नियासक है।ई शके निह—शकती नथी. छेवट आ तपासना परिणामे लभ्यमान सूत्रकृतांग अने लभ्यमान राजप्रह्नीयना संबंध माटे जणावातो " सूत्रकृताङ्गस्य राजप्रश्तीयम् " ए जातनो उहेस विघटता जणाय छे. आ जातनी काई आ एक ज उहेस नथी. परंतु एवा बीजा अनेक उहेखोने हुं तो प्रत्यक्ष करी रखो छउं. जेमके; " उपासकदशाङ्गस्य चंद्रप्रज्ञितः " " बौताधर्मकथाङ्गस्य जम्बूद्रीपप्रज्ञितः" " दृष्टिवादस्य वृष्णिदशा " -- उपासकद्शांग सूत्रमां वर्धमानना दश श्रमणोपासकोनो वृत्तांत आवे छे अने चंद्रपन्नत्ति सूत्रमां चंद्रने लगतुं सविस्तर ज्वातिष आवे छे. ज्ञाताधर्म कथा सूत्रमां केवळ कथाओं आवे हे अने जंबूद्रीपपन्नत्तिमां जंबूद्रीपने लगती ए जातनी हकीकत आवे हे, जे प्रायः वाचकोने माटे तहन परोक्ष जेवी हे, दृष्टिया-दमां दर्शनशास्त्रनी चर्चा आवे छे अने वृष्णिदशामां अंधकवृष्णिवंशनी कथाओ भरेली छे-ए रीते १ ला, २ जा अने वीजा उहेखमां जणावेला ते ते उपासक दशा, ज्ञाताथमैकथा अने दृष्टिवाद-सूत्रोनो अनुकमपूर्वक चंद्रप्रज्ञप्ति, जंबूदीयप्रज्ञप्ति अने दृष्टिणदशा साथे जणावेला अंगापांगीभाव पण शी रीते घटी शके हैं. ए राजप्रश्नीयमांथी जे हकीकतने अहीं जाणवानी छे, देने खयं टीकाकारे संक्षेपपूर्वक टीकामां जणावेली होवाथी अहीं तेनो मूळ पाठ आपवो अनावश्यक जणाय छे. ए हकी कतनो मूळ पाठ अर्थात् सर्थाभदेवनो अधिकार राजप्रश्नीय सत्रमां (क॰आ॰प्ट॰१८ थी २०५) सुधी छे.

प्रस्तुत टिप्पण लखाइ रह्या पछी जैनधर्मना एक पेटा संप्रदायना (मूर्तिने निह माननारा संप्रदायना) अंग अने उपांगना कम विषे जे विचारों जणाया छे तेने पण अहीं दर्शाववानी जहर जणाय छे. जे स्थळे जंबूद्रीपप्रक्षित्तमां (पृ०१) अंग अने उपांगना कमनो उल्लेख कर्यों छे त्यां ज एम जणाब्युं छे के:—'' अत्र च उपाङ्गकमे सामाचार्यादौ कश्चिद् मेदोऽप्यस्ति '' अर्थात् अहीं जणावेला उपांगना कमथी कोइ संप्रदाय जुदो पण पडे छे एटले बीजों कोई जैन संप्रदाय उपांगनों कम जुदी रीते पण जणावे छे. एम धारी शकाय छे के, आ उल्लेख, ए मृर्तिने निह माननार जैन-संप्रदायने उद्शीने पण करायों होय. कारण के, ते ने निचे प्रमाणे उपांगनों कम जणावे छे (जे अहीं जणावेला कमथी जुदो पडे छे.):—

	अंग.	उषांग.
ч.	भगवती	जंबृद्वीपप्रज्ञप्ति,
ę.	इति।	चंद्रप्रज्ञित अने सूर्यप्रज्ञितः.
ن .	उपासकदशा	निरयावलिका.
۷.	अंतकुर्शा	कल्पवतंसिका.
٩.	अ नुत्तर ौपपातिक	पुष्पिका
90.	प्रश्नव्याकरण	पुष्पचूलिका.
٤٤.	विपाकश्चत	वस्णिदशः.

आ लोको दृष्टिवाद के तेना उपांगनो निर्देश करता नथी. ए सिवायनो बीजो कम तो प्रं प्रमाणे छे. आवी नांहे जेवी वाबतमां जे आ जातनो संप्रदाय-भेद छे ते पण उपांगना सुनिश्चित कमनुं शैथिल्य जणावे छे:-अनु॰

१. आ विषयनी सविस्तर हकीकत प्रज्ञापना सूत्रना स्थान पदमां अने जीवाजीवाभिगम सूत्रना देववर्णनाविकारमां आवेली छे :-अनु

बीठाब्याः तेओने बोठावीने तेंगे आ प्रमाण कधुं के:—हे देवो ! तमे राजगृह नगरमां जाओ अने मगवंत महावीरने वांदोः तथा एक योजन जेटलुं विशाळ क्षेत्र (जमीत) साफ करों अने ए प्रमाणे कितने मने तुरत जणायोः पछी ते देवोए तेम करीने पोताना धणी इंद्रने जणाव्युं. त्यार बाद ते इंद्रे पोताना सेनाधिपतिने (देवने) आ प्रमाणे कधुं के, हे देवोने वलम ! तुं आ ईशानावतंसक नामना विमानमां घंटाने वगाल अने वधा देव तथा देवी शोने ए प्रमाणे जाहेर कर के, हे देवो ! ईशानेंद्र, श्री महावीर भगवंतने बांदवा माटे जाय छे माटे तमे शीव्र तमारी महार्द्विवेह तैयार बाद तेनी पासे जाओं तेवुं जाहेर कर्या पछी अनेक देवो कुत्हलादि कारणने लहने ते ईशानेंद्रनी पासे गयाः ते बधा देवोधी परिवरेलो, अनेक देवोधी युक्त थरलो अने लाख योजनना प्रमाणवाला यान-विमान-मां बेठेलो ते ईशान इंद्र श्रीमहावीरने वांदवा निकल्योः रस्तामां आवता नंदीश्वर द्वीयां तेंगे पोतानुं मोटुं विमान दुंकुं कर्युः अने पछी ते राजगृह नगरमां गयोः भगवंतने त्रण प्रदक्षिणा करी, पोताना विमानने जमीनथी चार आंगळ उंचुं राखी, भगवंतनी पासे जइ, भगवंतने वांदी तेनी पर्युपासना करे छेः

पर्श्वपान

इंड्नो

९. ततो धर्म श्रुत्वा एवमवादीत्:—भदन्त ! यूयं सर्वं जानीय, पश्यथ. केव चं गौतमादीनां महर्षाणां दिव्यं नाट्यविधिमुपदर्शयितुभिन्छामि—इस्यमिश्राय दिव्यं मण्डपं विकुर्वितवान्. तन्मध्ये मणिपीठिकाम्, तत्र च सिंहासनम्. तत्रश्च भगवन्तं प्रणम्य तत्रोपविवेश. तत्रश्च तस्य दक्षिणाद् मुजाद् अष्टोत्तरं शतं देवकुमाराणाम्, वामाब देवकुमारीणां निर्गच्छित स्म. तत्रश्च विविधातोय (वर) रवगीतध्वनिरिक्षितजनमानसं द्वातिशिद्वियं नाट्यविधिमुपदर्शयामास—इति. 'तए णं से ईसाणे देविदे, देवराया तं दिव्यं देविष्टुं' पावत्—करणाद् इदमपरं वाच्यम्,
यद्भुत—''दिव्यं देवजुइं, दिव्यं देवणुभावं पिडसाहरह्, पिडसाहरित्ता त्यणेणं जाए एगभूए. तए णं ईसाणे देविदे देवराया समणं भगवं
महावीरं वंदित्ता, नमंसित्ता णियगपरियालसंपरिवुडे'' ति. 'परियाल' ति—परिवारः, 'कूडागारसालादिवृतो ' ति क्टाकारेण शिखराऽऽक्रत्या उपलक्षिता शाला या सा तथा—तया दृष्टान्तो यः स तथा. स 'चैवम्:—भगवन्तं गौतम एवमवादीत्:—ईशानेन्द्रस्य सा दिव्या
देविद्धेः क्व गता ? क्व अनुपविद्य ? गौतम ! शरीरं गता—शरीरकमनुप्रविद्या. अय केनार्थेन एवम् उच्यते ? गौतम ! यथा नाम
कूटाकारशाला स्थात्, तस्याक्षाऽदूरे महान् जनसम्हित्तिष्ठति, स च महाभादिकमागच्छन्तं पश्यित, दृष्ट्वा च तां कूटाकारशालामनुप्रविश्वात,
एवमीशानेन्द्रस्य सा दिव्या देविद्धेः शरीरं गता—शरीरकाननुप्रविद्या इति. 'किण्णा' इति केन हेतुना ? 'किं वा दचा' इति. इह दत्त्वा
अश्चाति, भुक्त्वा अन्त-प्रान्तादि, कृत्वा तपः—शुमध्यानादि, समाचर्य च प्रखुपेक्षा-प्रमार्जनादि. 'कस्स वा' इत्यादिवाक्यस्य चान्ते
'पृण्यमुपार्जितम्' इति वाक्यशेषो दृश्यः. 'जं णं'ति यस्मात् पुण्यात् 'णं' इति वाक्यालंकारे. 'अरिय ता मे पुरा पोराणाणं'
इत्यादि पुरा-पूर्वम् 'कृतानाम्' इति योगः. अत एव 'पोराणाणं'ति पुराणानाम्, 'सुचिण्गाणं'ति दानादिसुचरितरूपाणाम्, 'सुपरक्रातां दृश्याहः—'जेणाहं' इत्यादि.

९. त्यार पछी भगवंतनी पासेथी धर्म सांभळी ते इंद्र आ प्रमाणे बोल्यों के:-हे भगवन्! तमे तो बधुं जाणों छो अने जूओं छो. मात्र गौतमादिक महार्षिओंने दिव्य नाट्यविधिने देखाडवा इच्छुं छुं. एम कहींने ते इंद्रे दिव्य मंडप (मांडवा) नी विकुर्वणा करी. ते मंडपनी वचे मणिपीठिका तथा सिंहासननी पण विकुर्वणा करी. पछी भगवंतने प्रणाम करी ते इंद्र ते सिंहासन उपर बेडो. त्यार बाद तेना जमणा हाथथी एकसोने आठ देवकुमारो नीकळी. पछी अनेक जातिनां वाजांओना अने गीतोना शब्दथी माणसोना मनने खुश करनारं, बत्रीश जातिनुं नाटक ते इंद्रे श्रीगौतमादिने देखाड्युं. ['तए णं से ईसाणे देविंदे, देवराया तं दिन्वं देविह्यिं'] अहीं 'यावत्' शब्द मूक्यों छे माटे बीजुं आ प्रमाणे जाणबुं—दिव्य देवकांतिने, दिव्य देवप्रभावने संकेली छे छे अने एक क्षणमां ते हतो तेवो एकछो थइ जाय छे. पछी पोताना परिवार सिंहत देवेंद्र, देवराज ईशाने श्रमण भगवंत महावीरने वांचा अने नमस्कार कर्यों तथा ज्यांथी ते आव्यो हतो त्यां ते पाछो चाल्यो गयो. ['कूडागारसालादिइंतो 'ति] शिखरना आकारवाळुं घर ते कूटाकारशाला, तेनुं दृष्टांत कहेंनुं. ते दृष्टांत आ प्रमाणे छे:--गौतमे भगवंतने आ प्रमाणे कह्युं के, ईशानेंद्रे देखाडेली ते दिव्य देवऋदि क्यां गई ? (भगवंते कह्युं

गौतमा देखाडवा

> एकसो टेब

क्टाकार

^{9.} जैन आगम साहित्यमां ठेक ठेकाणे इंद्रो (इंद्रादिदेवो) पासे आ जातनी अनेक आज्ञाओं अपायेली छे. ए प्रकारे वैद्ध साहित्यमां पण बनतुं आब्युं-आये-छे. जो के ए जातना अनेक उल्लेखो सर्वथा सुलम अने स्वष्ट छे तो पण अहीं तो मात्र जाणवानी खातर तेमांना एकाद उल्लेखथी ज चलवी छेनानं छे. जेमके:—

[&]quot; अथ भिक्षवः! शको देवानाभिन्द्रो देवांस्त्रयःस्त्रिशान् आभन्त्रयते स्म, अद्य भार्षाः! बोधिसत्त्वोऽभिनिध्किमिष्यति । तत्र युष्मःभिः पूजाकर्मणे औरसुक्येन्द्रभवेतव्यम् "—(ललितविस्तर ४० २४८)

[&]quot;हे भिक्षुओ! हचे देवोनो इन्द्र शक, प्रयक्षिश (आ शब्द, जैन शब्द— त्रायिश्वश—साथे मळतो आवे छे.) देवोने आमंत्रण आपे छे के, हे मार्षी (हे आर्यो!) आजे बोधिसत्त्वनुं अभिनिष्क्रमण थनार छे, ते ठेकाणे तमारे पूजा माटे उत्सुक थन्नं जोइए'' तात्पर्य ए छे के,

उपरना उंदेशकां भगवान् बुद्धना अभिनिष्क्रतण-दीक्षा-नो निर्देश करी ते अर्थे इंद्र अने देवोना आगमननी एजना करी छे. ज्यारे भगवान् महाँ वीरनो दीक्षा दि त्रस हतो त्यारे इंद्रो अने देवोए अहीं आवीने ए उत्सवमां विशेष भाग लीबो हतो, ए हकीकतथी कोई जैन शिशु पण अपरिचित नथी. आगळ जणावेली ईशान इंद्रना अहीं आगमनना उद्धेख साथे आ उठेखनुं साम्य एटछं ज छे के, जेम श्रीमहाबीर पासे ए इंद्र आवतो हतो, तेम श्रीबुद्ध पासे पण आवती हतो:—अनुः

१. प्र० छंष्०—दिव्यां देवसुतिम्, दिव्यं देवाऽनुभावं प्रतिसंहरति, प्रतिसंहत्य क्षणेन जातः-एकभूतः. तदा ईशानः देवेन्दः, देवराजः श्रमणं भगवन्तं महावीरं ।वन्दित्वा, नमस्यित्वा निजकपरिवारसंपरिवृत इतिः⊤अनु•

शुं दीधं?

पुण्य.

के,) हे गौतम ! ते तेना शरीरमां मळी गई. हे भगवन् ! तेम कहेवानुं छुं कारण १ हे गौतम ! जेम कोइ एक शिखरना आकारवाळ घर (कूबो) होय, अने ते घरनी पासे घणा माणसो उभा रहेला होय. एटलामां जो खूब वरसाद चडेलो के आवतो तेओना जोवामां आवे तो जेम ते बधा माणसो पेला कूबामां पेसी जाय छे. ए प्रमाणे ईशान इंद्रनी ते दिव्य देवऋदि तेना शरीरमां मळी गई. ['किण्णा' इति] कया कारणथी. ['किं वा दचा' इत्यादि.] आ स्थळे 'दइने 'एटले खान, पान दइने, 'खाइने ' एटले लुखुं सुखुं खाइने, 'करीने ' एटले तप तथा शुभध्यान बगेरेने करीने, 'आचरीने ' एटले पडिलेहण के प्रमार्जन बगेरेने आचरीने. ['कस्स वा ' इत्यादि.] ए आखा वाक्यने छेडे 'पुण्यनुं उपार्जन कर्युं'एटलो अध्याहार छेर ['जं णं^³'ति] जे पुण्यथीर ['अध्यि ता मे पुरा पोराणाणं' इत्यादिर] 'पूर्वे करेलां पुण्योनो 'एम संबंध करवो. पूर्वे करेलां छे माटे ज ['पोराणाणं 'ति] जूनां, ['सुचिण्णाणं 'ति] दान वगेरे सुचरितरूप, ['सुपरक्वंताणं 'ति] सारा तप वगेरेथी युक्त, अर्थावह होवाथी शुभ, अनर्थने शमाववामां कारणरूप होवाथी कल्याणरूप. एम शाथी छे ? तो कहे छे के, ['जेणाहं ' इत्यादि.]

१०. पूर्वोक्तमेव किञ्चित् सविशेषमाहः--'विउलघण-ऋणग-रयण-माणि-मोत्तिअ-संख-सिल-प्यवाल-रत्तरयणसंतसारसावएज्जेणं'ति धनं गणिमादि, रत्नानि कर्केतनादीनि, मगयश्चन्द्रकान्ताद्याः, शिलाप्रवालानि विदुमाणि, अन्ये त्वाहुः—''शिलाः राजपञ्चादिरूपाः, प्रवाछं विद्रुमम्" रक्तरत्नानि पदारागादीनि, एतदूपं यत्, "संत"ित विद्यमानम् सारं प्रधानम्, स्वापतेयं द्रव्यं तत् तथा तेन. 'एगंतसो क्लयं'ति एकान्तेन क्षयम्—नवानां शुभकर्मणामनुपार्जनेन. 'मित्त-' इत्यादिः तत्र मित्राणि सुहृदः, ज्ञातयः सजातीयाः. निजका गोत्रजाः, संवन्धिनो मातृपक्षीयाः, श्रशुरकुलीना वा, परिजनो दासादिः, 'आढाइ' ति आदियते, 'परिजाणइ'ति परिजानाति स्वामितया, 'पाणामाए' ति प्रणामोऽस्ति विधेयतया यस्यां सा प्राणामा, तया 'सुद्धोअणं' ति सूप-शाकादिवर्जितं कूरम्, 'तिसत्तवस्वत्तो' ति त्रि:सप्तकुत्व:—एकविंशतिवारान् इसर्थः 'आसाएमाणे' ति ईषत् सादयन् , 'विसाएमाणे' ति विशेषेण सादयन् साद्यविशेषम् , 'पारिमाए-माणें 'ति ददत्, 'परिमुंजेमाणें 'ति भोज्यं परिमुङ्कानः, 'जिमिय मुत्तुत्तरागए' ति 'जिमिय' ति प्रथमैकवचनलोपाद् जिमितः – मुक्तवान्, 'भुत्तृतर' त्ति भुक्तोत्तरम्–भोजनोत्तरकालम् , 'आगए'ति आगतः–उपवेशनस्थाने, भुक्तोत्तरागतः. किंभूतः सन् ? इत्याहः–'आयंते'त्ति आचान्त:-शुद्धोदक्योगेन, 'चोक्सें'ति चोक्ष:-लेपसिक्थाद्यपनयनेन अत एव परमशुचिभूत: इति.

१०. आगळ कहेळी वातने ज जराक विशेषता साथे कहे छे के, ['विउलघण-कणग-रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिल-प्याल-रत्तरयणसंतसारसावएजोणं 'ति] गणवामां आवे ते धैन, कर्नेतन वेगेरे रैंतन, चंद्रकांत वेगेरे मणिँको, परवाळां ते शिलाप्रवाल, बीजाओ तो कहे छे के:-'' राजपद्द बगेरे ते शिला अने परवाळां ते प्रवाल '' माणेक बगेरे ते रक्तरत्न; एवा प्रकारनं प्रधान जे द्रव्य-तेवडे, ['एगं-तसो क्खयं 'ति वि नवां शुभ कर्मीने मेळव्या विना जूनां सत्कर्मीनो सर्वथा नाश थाय तेनी दरकार न करवी. ['मित्त ' इत्यादि.] मित्रो एटले भाइबंधो, जाति एटले नातीला, निजक एटले पित्राइ-एक गोत्रमां थएला, संबंधी एटले मोसाळिआं के सासरिआं, परिजन एटले नोकर चाकर बगेरे. ['आढाइ'ित] आदर करे छे, ['परिजाणइ'ित] धणी-मालीक-तरीके जाणे छे. ['पाणामाए'ित] जेमां वारंबार प्रणाम करवानो होय ते 'प्राणामा '-तेवडे. ['सुद्रोअणं ' ति] डाळ अने शाक विनाना एकला चोखा-भात-ने, ['तिसत्तख्तो'त्ति] एक-

" धनना चार प्रकार छ, ते आ प्रमाणे:--गणिम, धरिम, सेय अने परिच्छंदा. गणिन एटले गणवा थोग्य-जाईफल अने फोफल (सोपारी) विगेरे. धरिम एटले धरी राखवा लायक-कंकु अने गोळ विगेरे. मेन एटले मापवा लायक चोप्पड (१) अने लवण विगेरे अने परिच्छेश एउले परिच्छेड करवा लायक-रत्नो अने बस्नो विगेरे :--कल्प० सु० च० क्ष० ए० ११२-१२३:--अनु०

३. रत्नोनी जूदी जूदी जातो नीचे प्रमाणे समजवानी छे:--" कर्केतन, वज्र, बैड्ड ४, लोहिताक्ष, मसारगळ, इंसगर्भ, पुलक, सागित्य ह, उनातारम, अंजन, अज्ञनपुलक, रजत, जातहप, अङ्ग, स्फटिक, अने रिष्ट-जीशजीवाभिगम (स॰पृ०२४४)

वाराही चंहितामां-बृहत्संहितामां रत्नोनं। २२ जातो आ प्रमाणे गणावी छे:---

" वज्रे-न्द्रनीळ-मरकत-कर्वेतर-पद्मराग-हिंदाख्याः । वैद्र्य-पुल ऱ-विमलक-राजमणि-स्फटिक-सशिकान्ताः ॥ ४ सामन्धक-गोमेदक-शह-महानील-पुष्परागाख्याः । व्रह्ममणि-ज्योतीरस-सस्यक-मुक्ता-प्रवालानि"॥ ५

वज्र, इन्द्रनील, भरकत, कर्केतर (जैनस्त्रमां कर्केतन) पद्मसग, रुधिन, वैदुर्थ, पुलक, विमलक, राजमणि, स्फटिक, राशिकान्त, सौगन्धिक, गोमे-दक, शक्क, महानील, पुष्पराग, ब्रह्ममणि, ज्येतीरस, सस्यक, सुक्ता-मोती. अने प्रवाल ":--अध्याय-७९ ५०९८४:--अनु ०

४. प्रज्ञापना स्त्रमां मणिना जुदा जूदा प्रकारो आ प्रमाणे जणाव्या छे:-"मणिविहाणाः—गोमेजए य हयए, अंके, फलिहे, य लोहियक्खे य। मरगय, मसारगहे, मुत्रमीयग, इंदनीले य ॥ ३ चंदण, गेइय, इंसगब्म, पुलए, सोगंधिए य बोद्ध व्ये। चन्दप्पम, वेरुलिए, जलंकते, सरकंते य॥ ४

" गोमेजक, रुवक, अंक, स्कटिक, लोहिताक्ष, सरकत, समार्गह, भुजनोवक, इन्द्रनीळ, चन्द्रन, गैरिक, हंसगर्भ, पुलक, सौपिट्टिक, चंद्रप्रभ, वैहूर्य, जलकान्त अने सूर्यकान्तः—प्रज्ञा०१०२७ (स) इ

प्रज्ञापनामी जणावेलां मणिओनां नामोमां केटलांक नामो रत्नोनां आवे छे. एथी एम जणाय छे के, मणि अने रतन-ए कोई वे जूरा जुदा पशर्थ

नथी. अमरकोशमां पण " रत्नं मणिः" (द्विव्हा० ९३) एम कहीने मणि अने रत्ननी एकता जणावी छे:--अनु०

 वर्तमान समयमां पण वैदिक लोको 'प्राणामा 'दीक्षानी जेवं वत लेता जगाय छे. ए वतमां दीक्षित अएला एक जग विषे नीचे प्रमाणिनीः बीना प्रकट थई छे:--

(त्न-मणि.

।ति-विगेरे.

प्राणामा.

१. 'पं 'आ अलंकारसचक छे: -- श्रीअभय०

२. आगममां ज्यां ज्यां 'धन 'शब्दनो प्रयोग थएजो छे लां लां प्रायः करीने तेनो व्याल्या आ प्रमाणे समजवानो छे :—

[&]quot; धनं गणिम-धारेम-मेय-परिच्छेद्यभेदाचतुर्विधम् . तदुक्तम्—" ग-णिमं जाईफळ-पुपफलाई, धरिमं तु कुंकुम-गुडाई। मिन्नं चोप्पड-लोगाई, रयण—वस्थाइ परिच्छिजं ''॥—कल्यस्यसुबोधिनी, चतुर्थे क्षण, पृ० **१**२२-११३

बार वार, ['आसाएमाणे 'ति] थोडं चाखतो, ['वीसाएमाणे 'ति] कोइ पण चाखवानी वस्तुने विशेष चाखतो, ['परिमाएमाणे 'ति] द्वेतो, ['परिभुंजेमाणे'ित्त] खावानी वस्तुने खातो, ['जिमिअ भुतुत्तरागए'ित] जम्यो अने ['मुत्तोत्तर'िन] जम्या पछी तुरत ज । 'आगए 'ति] बेसवाने ठेकाणे आच्यो. ते केयो ? तो कहे छे के, ['आयंते 'ति] चोक्खा पागीथी तेगे आचमन (कोगळा) कर्युं अने आचात. पछी ते ['चोक्खें 'ति] मोढामां लागेली चिकाश अने एठुं बंगरेने दूर करी तद्दन चोक्खो थयो.

११. 'जं जत्थ पासइ'ति यमिन्द्रादिकम्, यत्र देशे काले वा पश्यति, 'तस्य तत्र प्रणामं करोति' इति वाक्यशेषो दृश्यः. 'खंदं व' त्ति स्कन्दं वा कार्तिकेयम्, 'रुइं वा' रुद्रं वा महादेवम्, 'सिवं व'त्ति व्यन्तरविशेषम्, आकारविशेषधरं वा रुद्रमेव, 'वेसमणं व' ति उत्तरदिक्पालम् , 'अज्ञं व'ति आर्याम्-प्रशान्तरूपां चिण्डकाम् , 'कोट्टकिरियं व'ति चिण्डिकामेव रौद्ररूपां महिष-कुटनिक्रियात्रतीमित्यर्थः. 'रायं वा' इत्यत्र यात्रत्—करणाद् इदं दृश्यम्:—'ईसरं वा, तलवरं वा, माडंबियं वा, कोडुंबियं वा, सेट्टिं वा'इति. 'पाणं व' ति चण्डालम्, 'उचं'ति पूज्यम्, 'उचं पणामं'ति अतिशयेन प्रणमतीत्यर्थः. 'नीअं'ति अपूज्यम् 'नीअं पणामं'ति अनत्यर्थं प्रणमतीत्यर्थः. एतदेव निगमयन्नाह—'जं जहा' इत्यादि. यं पुरुष-पश्तादिकम्, यथा यत्प्रकारं—पूज्यापूज्यस्वभावम्—तस्य पुरुवादेः तथा—पूज्यापूज्योचिततया. 'अणिचजागरियं' ति अनिखचिन्ताम् , 'दिहाऽऽभट्टे य' त्ति दृष्टाभाषितान् , 'पुष्यसंगतिए' ति पूर्व-संगतिकान्-गृहस्थत्वे परिचितान् 'निअत्तणियमंडलं' ति निवर्तनं क्षेत्रमानविशेषः, तत्परिमाणं निवर्तनिकम्, ''निजतनुप्रमाणम्'' इसन्ये. 'पाओवगमणं निवण्णे' ति पादपोपगमनम्–निष्पनः–उपसंपन आश्रित इसर्थः. 'अणिद' ति इन्द्राऽभावात् , 'अपुरोहिअ' ति शान्तिकर्मकाररहिता अनिन्द्रत्यादेव, पुरोहितो हि इन्द्रस्य भवति, तदभावे तु नासाविति. 'इंदाहीण' त्ति इन्द्राधीना इन्द्रवश्यत्वात् , 'इंदाहिष्टिअ' ति इन्द्राधिष्ठिता तयुक्तत्वात्—अत एवाह—'इंदाहीणकज्ज' ति इन्द्राधीनकार्या. 'ठितिपकप्पं' ति स्थितौ अवस्थाने बलि-चञ्चाविषये, प्रकल्पः—संकल्पः—स्थितिप्रकल्पः, तम् . 'ताए उकिहाए' इत्यादि. तया—विवक्षितया उत्क्रष्टया उत्कर्षवया—देवगत्या—इतियोगः. खरितया आकुळया—न स्वभावजयेखर्थः. अन्तराक्त्ततोऽप्येषा स्यात् , इस्यत आह—चपळया-कायचापलोपेतया, चण्डया—रौद्रया तथा— विधोत्कर्षयोगेन, जिपन्या-गत्यन्तरजेतृत्वात्, छेकया निपुणया-उपायप्रदृतितः, सिंहया-सिंहगतिसमानया श्रमामावेन, शीव्रया-वेगवत्या, दिव्यया प्रधानया, उद्भूतया-बल्लादीनामुद्भूतत्वेन, उद्भतया वा सदर्पया. 'सपनिसं' ति समाः सर्वे, पक्षाः पार्थाः-पूर्वापरदक्षिणोत्तरा यत्र स्थाने तत् सपक्षम् , इकारः प्राक्रतप्रभवः. समाः सर्वाः, प्रतिदिशो यत्र तत्सप्रतिदिक्. 'वत्तीसइविहं नहविहिं' ति द्वातिंशद्विधम् नाट्यविधि—नाट्यविषयवस्तुनो द्वात्रिंशद्विधत्वात्, तच यथा राजप्रश्नीपाऽध्ययने तथाऽत्रसेयम्-इति. 'अहं बंधह' ति प्रयोजननिश्चयं कुरुतेत्यर्थः. निदानम् -प्रार्थनाविशेषम् , एतदेवाह-िंइपकप्पं ' ति प्राग्वत् .

१९. ['जं जत्थ पासइ'ति] जे ठेकाणे के जे समये इंद्र बंगेरेने जूए, 'तेने त्यां प्रणाम करें' एटलो अध्याहार जाणवो. ['स्रंदं वें' त्ति] कार्तिकेयने, ['हैंद्रं वा '] महादेवने, ['सिवं व 'ति] एक जातना व्यंतरने, अथवा अमुक जातना आकारने धारण करनार रुद्रने ज,

कार्तिकेयः महःसेनः, शरजन्मा षडाननः । पार्वतीनन्दनः स्कन्दः सत्तर नाम स्कन्दनां छेः—१ कार्तिकेयः २ महासेनः ३ शरजन्मः सेनानीरिममूर्णेहः ॥ ३९ ॥ बाहुळेयस्तारकजिद्विशाखः शिखियाहनः । ४ षडामन. ५ पार्वतीनन्दन. ६ स्कन्द. ७ सेनानी. ८ अमिमू ९ गुह. १० बाहुलेय. ११ तारकजित् १२ विशाख. १३ शिखिवाहन. १४ षाण्मानुरः शक्तिधरः कुमारः कौश्चदारंणः ॥ ४० ॥ षाण्मातुर. १५ शक्तिधर. १६-१७ कुमार अने कौझदारण. —अमस्कोशे प्र० का०

पण 'शिव' शब्द उपरनुं टिप्पण विचारतां स्पष्ट जणाय छे के, ज्यारे 'स्कन्द'ना पिता तरिके शिवनामक कोइ वास्तविक व्यक्तिनी ह्याती जणाती नथी खारे तेनी माता पार्वतीनी हयाती शी रीते होय ? जे कांइ अलारे स्कन्दनां अने पार्वतीनां आख्यानो ते मात्र पुराणोना चमकार छे. ए चमकारने लीचे स्कन्दनी पूजा प्रचरी अने 'स्कन्द' शब्द 'स्कन्द'नी मूर्तिनो सूचक बन्योः अहीं भगवतीजीना मूलमां जणावेल 'स्कन्द' शब्द 'स्कन्द'नी मूर्तिने सूचवे छे एम श्रीअमयदेव (टीकाकार) पण जणावे छे:—अनु०

२. 'रुद्र' शब्द 'रुद् रोवुं' धातु उपरथी आवेळ छे एटले 'रुद्र' नो खरो भाव-मूळ आशय-रोवानी कियानां-छे—जे द्वारा रोणुं आवे वा जे रोबरावे ते 'रुद्र' छे-रोवरायनारनुं नाम 'रुद्र' छे अर्थात् भयोत्पादक-रोदनोत्पादक-शक्तिनुं नाम वैदिक आर्थीए गुगानुसारे 'रुद्र' पाडयुं छे. 'रुद्र' संबंधे उहेख करतां शतपथत्राह्मणमां जणाव्युं छे के:--

" कतमे रहाः ? इति दश इमे पुरुषे प्राणाः, आत्मा एकादशः, ते यदा अस्माद् मत्र्यात् शरीराद् उतकानन्ति, अथ रोदयन्ति-तद् यद् रोद-यन्ति तस्माद् इदा इतिः"-(शतपथत्राह्मणे अजमेर-आवृत्तौ पृ० ४८४).

" हदो केंद्रला छे ? (अग्यार छे.) पुरुषमां रहेला दश प्राणी अने अन्यारमो आत्मा ते अन्यार रुद्र छे. (पुरुषना दश प्राण अने अन्यारमो आत्मा, ए बघाने हद कहेवातुं शुं कारण ?) ज्यारे आ मनुष्यना देहथी

प्रणाम करना शुरू किया । जिस प्राणी को आप आगे देखते उसी के सामने उस के पैरों पर आप जमीन पर छेट जाते ! इस प्रकार बाह्मण से छे कर चाण्डाल तक और मौ से के कर मधे तकको आप साष्टांग नमस्कार करने लगे:—(सरस्वती मासिक, भाग-१३-अंक-१ ५० १८०) उपर जणावेली 'प्राणामा 'दीक्षा (मरखानो विनयनाद) अने आ प्रकट थएली वीना ए बन्ने सरखा जणाय छे:--अनुः

१. ' जिमिय ' ए शब्दमां प्रथमा विभक्तिना एक वचननो लोप थयो छे, तेथी तेनो अर्थः-' जिमितः '-' जमे ओ ' करवोः -श्रीअमय ०

२. शिव शब्दनो मूल भाव अने पौराणिक भाव 'शिव' शब्द उपाना (हवे पछीना) दिप्पणमां सूचव्यो छे एटले 'शिव'नी एक व्यक्ति तरिकेनी इयाती, कविकल्पना सिवाय बीजं कांइ न होय एम स्पष्ट जणाय छे. पुराणोमां 'स्कंद'ने शिवना पुत्रको कलोल छे, ए उपस्थी कोशकारोए पोत्योताना कोशमां स्कन्दने शिवनो आत्मज अने पार्वतीनो तनय वर्णव्यो छे-स्कन्द्रनां नामो अमरकोशमां आ प्रमाणे छे:---

त्रे **श्रम**ण्• चंडाळ.

उचितता.

निवर्तनिक.

['वेसमणं व'ति] उत्तर दिशाना पालकने—वैश्रमणने—कुवेरने, ['अजं व'ति] प्रशांतरूप आर्याने—चंडिकाने, ['कोट्टकिरियं व'ति] महि— षासुरने कुटती भयंकर चंडिकाने ज, ['रायं वा'] अथवा राजाने. ए स्थळे 'यावत्' शब्द मूकवाथी आ प्रमाणे जाणवुः-' युवराजने, तलवरने, माडंबिकने, कौदुंबिकने, शेठने, ['पाणं व'ित्त] चांडाळने, ['उच्चं'] पूज्यने, ['उचपणामं'ित] अतिशयपूर्वक प्रणाम करे छे, ['नीअं 'ति] अपूज्यने, ['नीअं पणामं 'ति] वधारे नहीं पण साधारण रीते प्रणाम करे छे. ए ज वातनो उपसंहार करतां कहे छे के, ['जं जहा ' इत्यादि.] पूज्य अने अपूज्य स्वभाववाळा पुरुष पशु वगेरेने जेवी रीते उचित लागे तेम-पूज्य अने अपूज्यने उचित लागे ते-प्रणाम करे छे. ['अणिचजागरिअं'ति] अनित्य संबंधी चिंताने. ['दिट्ठाभट्टे य'त्ति] देखेला एवा बोलावेला तथा ['पुय्यसंगतिए'त्ति] जूनी ओळखाणवाळाओने -गृहस्थपणामां परिचित थएला जूना मित्रोने, ['निअँत्तणिअमंडलं'ति] 'निवर्तन' एटले एक जातनुं क्षेत्रनुं माप, तेनी जेटला परिमाणवाळुं ते निवर्तनिक. ''पोताना शरीर जेटली जग्या ते निवर्तनिक" एम बीजाओ कहे छे. ['पाओवगमणं निवण्णे 'ति] तेणे पादपोप-

पुरुषना दश प्राणो अने अग्यारमो आत्मा उत्क्रमे छे-जूदा थाय छे--खारे ते एकादशगण-(अग्यारनो जत्थो) मरनारना ममत्विओने रोवरात्रे छे माटे ते अग्यारनुं अन्वर्थ नाम 'हद्द' होवुं सुघटित छे. (श० त्रा० अ० आवृ० पृ० ४८४).

वैदिक संप्रदायमां दश प्राणनी गणनामां दश वायुओ गोठव्या छे ते आ छे :---

" प्राणो-Sपानः समानश्रो-दान-व्यानौ च वायवः, प्राणाख्याः पञ्च कर्णादौ मुख्या वेदे प्रकीर्तिताः-(१३९). नागकूमेस्तथा देव-दत्तश्वाऽथ धनंजयः, क्रकलश्चेति विज्ञेया-स्तथा पश्चोपवायवः" (१४०)-(वेदान्तसिद्धान्ता-SSदर्शगतसंज्ञादशंप्रकरणे).

जैन संप्रदायनी अपेक्षाए अग्यारनी व्याख्या आ रीतिए संभवे छे:-

''पञ्चेन्द्रियाणि त्रिवित्रं बर्छ च उछु।स-निःश्वासमथाऽन्यदायुः, प्राणा दशैते भगवद्भिरुक्ता-स्तेषां वियोगीकरणं तु हिंसा"-(जीवविचारवृत्तौ). (प×३×१×१=१०). एम कुल दश प्राण छे अने तेमां तेनो संचालक आत्मा भेळववाथी अग्यारनो गण थाय छे:"-(जी० वृ०).

ते पुराणोना आख्यानने अवलंबीने ज अमरकोशमां हद संबंधे अमरसिंह आ प्रमाणे जणावे छे:--

''आदित्य-विश्व-वसवस्तुषिता भास्त्रराऽनिलाः, महाराजिक-साध्याश्व रुदाश्च गणदेवताः'' १० आदित्यादयः प्रत्येकं गणदेवताः-समुदायचारिण्यो देवताः. ''आदिला द्वादश प्रोक्ता विश्वदेवा दश स्मृताः, वसवश्राष्ट्र-संख्याकाः षद्त्रिंशत् तुषिता मताः. आभाखराश्रतुष्पष्टिनीताः पञ्चाशदूनकाः, महाराजिकनामानो द्वे शते विंशतिस्तथा. साध्या द्वादश विख्याता रुद्राध-कादश स्मृताः"-(अमर-प्र॰ काण्ड).

''नव देवगणो छे, एडले ताराना समुदायनी जैम देवोना पण नव ससुदायो छे: —आदिखनो, विश्वदेवनो, वसुनो, तुषितनो, भास्तरनो, अनि-लनो, महाराजिकनो, साध्यनो अने रुद्रनो. ते प्रत्येक समुदायमां देशोनी संख्या अनुक्रमे आ रीतिए छे:-बार आदिला, दश विश्वदेव, आठ वसु, छत्रीश तुषित, चोसठ आभास्तर, पचासथी ओछा वात-वायु, वसेंने वीश महाराजिक, वार साध्य अने 'अग्यार रुद्र' छे''-(एटले नवे देवगणनी संख्या ४२२ नी थाय छे).

" शरीरमां कर्ण वगेरे इंद्रियोगां संचरनारा मुख्य पांच वायुओ नाम-

वार आ छे:-प्राण, अपान, समान, उदान अने व्यान. आ वात वेदमां गवाएली छे. तेम ज बीजा पांच उपवायुओ पण छे, जेओ शरीरना बीजा

भागमां संचरे छे. तेनां नामः-नाग, कूर्म, देवदत्त, धनंजय अने कृकल छे.

"पांच इंद्रियो-(स्पर्शन, रसन, ब्राण, चक्षु अने श्रोत्र). त्रण बळ-

(मनोबळ, वचनबळ अने शरीरबळ). श्वासोच्छ्वास अने आयुष्य

आ वायु ते दश प्राण अने अग्यारमो आत्मा, ए मळी अग्यार 'हद् ' छे.

ए अग्यार रुद्रने रूपकरूपे बनावी पुराणी लोकोए-अग्यार देवना रूपमां गोठव्या छे-तेनां सरस आख्यानो घडी शतपथबाह्मणनी सादी वातने मोटुं रूप आपी विचित्र पण आलंकारिक वर्णन आप्युं छे. आ पुराणनी ज वर्णनाने लोकोए टेको आपेल होवाथी संसारमां रहपूत्रा पण प्रवर्ती छे अने एने लड़ने भगवतीजीनां आवेल आ रुद्र शब्द 'रुद्र'नी मूर्तिनो सूचक बन्यो छे. कालान्तरे पुराणनी मान्यता विशेष हढीभूत थवाथी 'रुद्रे' 'शिव'ने सूच-ववानुं पण कार्य स्वीकारी एक ईश्वरतिरके प्रसिद्धि मेलवी छे. आ ज कारणथी रसशास्त्रिओए पोताना रसप्रन्थोमां 'हद्र'ने राद्र(सनो अधिष्ठाता बनाव्यो छे-आ बघानुं मूळ शतपथबाहाणनो ज रुद्र छे.

४. श्रीयास्क्रमुनिजी शिव शब्दने 'सुख'ना पर्यायरूपे निषंदुमां आ प्रमाणे जणावे छे:—

'' शिंबाता, शतरा, शातपंता, शर्म, स्यूमकम्, शेवृधम्, मयः, सुरम्य-म्, सुदिनम्, ऋषम्, शुनम्, शग्मम्, भेषजम्, जलाशम्, स्योनम्, सुन्नम्, शेवम्, शिवम्, शम्, ऋम्, इति विंशतिः सुखनामानिः"-निघण्टुः प्र॰ २१५).

''वैदिक आर्योए नीचेना वीश शब्दो 'सुख'ना पर्याय तरीके सूचव्या छे:--शिवाता, शतरा, शातपंता, समी, स्यूमक, शेवृध, मय, सुगम्य, सुदिन, श्रुव, श्रुन, श्रुम, भेषज, जलाश, स्थोन, सुन्न, शेव, शिव, श अमे क; ए नामोमां शिव शब्द पण आवे छे:"-(नि॰ पृ॰ २९५).

पुराणकारों जैने अवताररूपे खीकारी, 'शिवपुराण' जेवा प्रंथने रची, जगतमां खुहो मूके छे ते कोइ व्यक्ति तरीके विश्वमां थएछ नथी, एण सवै कोइने इष्ट एवा 'सुख'नो विशेष महिमा दर्शाववा 'सुख'ने ईश्वरात्मक सूचवनारुं ते जातनुं वर्णन पौराणिक होवाथी ते शिवावतारना शिव, काल्पनिक पात्र छे-एवं निरुक्तकार श्रीयास्क्रजीतं मत छे. अहीं मूळमां जणावेल 'शिव' शब्द ए शिवावतारनी मूर्तिने सूचवे छे. जैनोमां तेवुं (शिवावतारनी जेवुं) आख्यान 'सत्यकि' नामना विद्याधरनुं छे, जे भावी चोविशीमां तीर्थंकर धशे :-- अनु ॰

१. 'प्रस्तुत स्त्रना पुनः संकलन समये शाक्त संप्रदायनी हयाती हती 'एम आ हकीकत स्चवे छे.

२. गणितशास्त्रमां सो हाथना मापने 'निवर्तन 'कहुं छे, एथी निवर्तनिक शब्दनो अर्थ, एटला मापवाळी अमीन थाय छे:--(अमारी प्रति)संभव छे के, प्रस्तुतप्रकरण^मं तेनो ए अर्थ न घटी शकतो होय. कारण के, ज्यारे तामली तपस्वी तद्दन अंतिम अनशननो स्वीकार करे छे लारे ते पोताना स्थान माटे अमुक परिमाणवाळी जम्यानुं मंडळ आळेखे छे. जेम अत्यारे पण घणा तपस्वीओ अमुक प्रमाणनुं कुंडाछं काढीने तेमा ज स्थिर बेसवानो मर्यादित संकल्प करे छे तेम ए तामली तपस्वीए ते आळेखेला मंडळमां रहीने (अर्थात् ए मंडळथी क्यांय बहार न जईने) पोतानो अंत आणवानो निश्चय कर्यों छे. एथी कदाच एने सो हाथ जमीननी जहर न होय-िंतु पोतानं शरीर जेटलामा माई शके तेटली ज जग्यानी जहर होय-ए कल्पना विशेष संभवित लागे छ अने एम होवाथी 'निवर्तनिक 'शब्दनो पूर्वोक्त अर्थ अहीं न पण घटेः—अनु०

Jain Education International

गमन नामना अनराननों आश्रय कर्यों ['अणिंद 'ति] इंद्र विनानी होवाथी अनिंद्र, ['अपुरोहिअ'ति] शांतिकमें करे ते पुरोहित, ज्यां इंद्र होय त्यां पुरोहित होय छे अने अहीं इंद्र नथी माटे ज पुरोहित नथी अने एयुं छे माटे अपुरोहित, ['इंदाहीण 'ति] इंद्रने ताबे छे माटे इंद्राधीन, ['इंदाहिष्ठ 'ति] इंद्रचे ताबे छे एवी. ['ठितिपकप्पं'ति] बिलेचंचा राजधानीमां रहेवा माटेनों संकल्प ते स्थितिप्रकल्प-तेने. ['ताए उक्किद्वाए 'ति] 'उत्कर्षवाळी ते देवगतिबडे' एम संबंध करवी, आकुळता होवाथी उतावळी, परंतु स्वाभाविक उतावळी नहीं. एवी गतिमां मानसिक चपळतानो संभव छे माटे कहे छे के, चपळ गतिबडे अर्थात् शरीरनी चंचळतावाळी गतिबडे, चंड-रौद-भयानक-गतिबडे, एवा प्रकारना उत्कर्षवाळी छे माटे जियनी (वीजी गतिओने जिती छेनार) गतिबडे, उपायमां प्रष्टृत्ति करनारी होवाथी निपुण गतिबडे, श्रम रहित होवाथी सिंहनी जेवी गतिबडे, वेगवती गतिबडे, दिश्य गतिबडे, चाळतां चाळतां वस्त्र वगेरे उडतां होवाथी उद्धृत गतिबडे अथवा उद्धत—दर्शवाळी—गतिबडे. ['सपिक्सें 'ति] जे स्थळे उत्तर, दक्षिण, पूर्व अने पश्चिमनां बधां पडखां सरखां होय ते सपक्ष, जे स्थळे बधी प्रतिदिशाओ सरखी होय ते सप्रतिदिक् ['बत्तीसइविहं नहविहंं 'ति] नाटकने लगती वस्तु बत्तीश जातनी होवाथी बत्रीश जातनां नाटक. जेम राजपश्चीय (रायपसेणी) नामे अध्ययनमां नाटक-संबंधे जे कह्युं छे तेम ज अहीं जाणतुं. ['अटुं बंधह 'ति] प्रयोजन संबंधे निर्णय करो. निदान एउछे एक जातनी प्रार्थना. ए ज वातने कहे छे के, ['ठिइपकप्पं 'ति] ए वधुं पूर्वनी पेठे समजवं.

स्थिति प्रकार

अपुरे।हिता.

बत्रीश्चजातः नाटकः — राजप्रदनीः

- १. प्राकृतशैलीने लीघे अहीं 'इ'कार लागेलों छे अने तेथी ज 'सपक्खं'ने बद्छे 'सपर्विख' थयुं छे :—-श्रीअभय०
- र राजप्रश्नीय (रायपसेणी) सूत्रमां नाटकना वत्रीशे प्रकारनं सिवस्तर वर्णन आपेलुं छे अने ते (क०आ०) ४० ८५ थी ९५ सुधीमां तेमां वर्णवाएलुं छे. ए वर्णनने मळतुं वर्णन, जीवाजीवाभिगम सूत्रमां ३ जी प्रतिपत्तिमां विजयदेवना अधिकारमां पण विस्तारपूर्वक आवेलुं छे—(१० २४६— २४७ समिति०) विस्तारना भयथी ते बधुं अहीं न जणावतां मात्र तेनां ३२ नामाने ज जणावीए छीएः—[अहीं जणावेला अभिनयोमांना जे जे अभिनयो महर्षिभरतना नाळ्यास्त्र साथे मळता आवे छे ते, नाम अने स्वरूप साथे सामेनी वाजुमां जण्याच्या छे.]

रायपसेणीः---

भरतनुं नाव्यशास्त्रः---

भरते पोताना नाट्यशास्त्रमां अभिनयना चार प्रकार जणात्या छैः आंगिक, वाचिक, आहार्थ, अने सात्विक. (" आक्तिको वाचिकवैव आहार्थः सात्वि-कस्तथा। हीयस्लिभिनयो विप्राश्चतुर्था परिकित्पतः—" ९। अध्याय-८) आंगिक एटले अंगनो अभिनय. वाचिक एटले वाचानो अभिनय. आहार्य एटले वेषनो अभिनय. सात्विक एटले सामान्य अभिनय.

३ अष्ट संगळना आकारोनो अभिनय.

- (१) खस्तिकाभिनय.
- (२) श्रीवत्साभिनय.
- (३) नन्दावर्ताभिनय.
- (४) वर्धमानक-अभिनयः
- (५) भद्रासनाभिनय.
- (६) कलशाभिनय.
- (७) मत्स्याभिनय.
- (८) दर्पणाभिनयः
- २. आवर्त, प्रसावते, श्रेणि, प्रतिश्रेणि, खिल्तिक, पुष्प, माणवक, वर्धमा-नक, मत्स्याण्डक, मकराण्डक, जार, मार, पुष्पावली, पद्मपत्र, सागरतरंग, वासंतीलता अने पद्मलताना चित्रनो अभिनय.
- ३. ईहामृग, ऋषभ, तुरग, नर, मकर, बिहग,व्यास, किन्नर, रुर, शरभ, चमर, कुंजर, बनलता अने पद्मस्ताना चित्रनो अभिनय.
- ४. एकतश्रक, द्विधा चक, एकतश्रकवाल, दिधा चक्रवाल, चक्रार्थ अने चक्रवालनो अभिनय.
- ५. चंद्राविष्ठप्रविभाग, स्थाविष्ठप्रविभाग, वलयाविष्ठविभाग, हंसावि -प्रविभाग, ताराविष्ठप्रविभाग, मुक्ताविष्ठप्रविभाग, रत्नाविष्ठप्रविभाग अने पुष्पाविष्ठप्रविभागनो अभिनय.

नाट्यशास्त्रमां समंयुत हस्तनो अभिनय तेर प्रकारनो द्र्शाव्यो छे. तेमां नोथो अभिनय स्वस्तिक छे अने तेरमो अभिनय वर्धमान छे. ते बन्नेतुं ख-रूप आ प्रमाणे छे:—" ज्यारे स्त्री, पोताना बने हाथोने वांका अने उंचा राखीने तथा डाबा पडखामां ठई जई मणिबंधमां विन्यस्त करे छे ते जातना शारीरिक अभिनयतुं नाम स्वस्तिक अभिनय छे." १२८ (भ०ना०अ०९) "पराइमुख एवा वे हंसपक्षोना आकारतुं नाम वर्धमान-अभिनय छे. ज्यारे जाळीयातुं के झहसानुं विघाटन करतुं होय छे ह्यारे ए अभिनय करवामां आवे छे." १४३ (भ० ना० अ०९)

सामे जणावेला खिलाक अने वर्धमान-ए वजेतुं खहूप उपर आवी गएछं छे. नाट्यशास्त्रमां मकर अने पद्म-नामक-हस्ताभिनयनो उछेख छे. कदाच नामसाम्यने लीधे सामे जणावेला मकराण्डक अने पद्मलताना अभिनय साथे ते मळता होय एवं वारी अहीं तेतुं खहूप आपीए छीए:—" नीचे नमेला, उंचा अंगुठावाळा, उपरा उपर विन्यस्त अने प्रलंबित थएला वजे हाथने—ए जातना हस्ताकारनुं नाम मकराभिनय छे." (१३७ भ०ना०अ०९) "पडखे पड़ले आवेली, छूटी रहेली अने हाथना तळियामां फरती आंगळी-ओने—ए जातना हस्ताकारनुं नाम पद्माभिनय छे.' ८७-(भ०ना०अ०९)

नाट्यशास्त्रमां गजदंत नामक कराभिनयनो उहेस हे, कदाच ए सामैना 'कुंजर' ना आंभनय साथे मळतो होय. एतुं स्वरूप आ प्रमाणे छे:— ''सर्पना माथा जेवा एटले फेणना घाटना? अने कोणी सुधी संचित थएला वने हाथने-ए जातना कराभिनयने 'गजदंत' कहेवामां आवे छे.'' १३६ (स० ना० अ० ९)

एक हंसवकत्र अने वीजो हंसपक्ष-ए बन्ने कराभिनय छे. सामे आपेला 'हंसानलि 'साथे कदाच ते मळता होय. तेनुं स्वरूप आ प्रमाणे छे:— " तर्जनी अने वचली आंगळी तथा अंगुठो निरंतर अग्निस्थित होय अने १२. 'आसुरुत्त'ति आसुरुत्ता:-शीघ्रं कोपविमृद्धुद्धयः, अथवा स्फुरितकोपचिहाः, 'कुविअ'ति जातकोपोदयाः 'चंडिकिअ'ति प्रकटितरीद्ररूपाः, 'मिसमिसेमाण'ति देदीप्यमानाः-कोधज्यव्यनेति. 'सुंबेण'ति रज्ज्या 'उष्टुहांति'ति अवधीव्यन्ति-निष्ठीवनं कुर्वन्ति, 'आकड्ड्विकार्ड्ढ्रें'ति आकर्षविकार्षिकाम्, 'हीलैंति'ति जात्यायुद्धाटनतः कुत्सन्ति, 'निन्दंति'ति चेतसा कुत्सन्ति, 'खिसंति'ति स्वसमक्षं वचनैः कुत्सन्ति, 'गरहंति'ति लोकसमक्षं कुत्सन्त्येव, 'अवमचंति'ति अवमन्यन्ते-अवश्रास्पदं मन्यन्ते, 'तिज्ञंति'ति अङ्कुली-शिरश्रालनेन, 'तालेंति'ति ताडयन्ति हस्तादिना, 'परिव्वहाति'ति सर्वतो व्यथन्ते-कदर्थयन्ति, 'पव्यहंति'ति प्रव्यथन्ते-प्रकृष्टव्यथामिवोत्पादयन्ति. 'तत्थेव सयणिज्ञवरगए'ति तत्रैव शयनीयवरे स्थित इत्यर्थः. 'तिविलेअं'ति त्रिविलकाम्-मृकुटि-दृष्टिविन्यासिवेशेषम्, 'समजोहमूअ'ति समा ज्योतिवाऽग्रिना भूता समज्योतिर्भूताः, 'मीअ'ति जातभयाः, 'उत्तर्थ'ति उत्त्रस्ता-भयाज्ञातोत्कन्पादिभयभावाः, 'सुसिय'ति ग्रुषिता-ऽऽनन्दरसाः, 'उिव्यन्ग'ति तत्त्यागमानसाः किमुक्तं भवतीत्याह—संजातभया आधावन्ति—ईषद् धावन्ति, परिधावन्ति—सर्वतो धावन्ति, 'समतुरंगमाणे'ति समाश्चिष्यन्तः, ''अन्योन्यमनुप्रविश्वन्तः'' इति वृद्धाः. 'णाइं मुज्जो मुज्जो एवं करणयाए'ति नैव मूयः, एवं करणाय 'संपरस्वामहे' इति शेषः, 'आणा-उववाय-वयण-निहेसे'ति आङ्गा 'कर्तव्यमेवेदम्'इत्याद्यादेशः, उपपातः सेवा, वचनममियोगपूर्वक आदेशः, प्रिक्ते कार्ये नियतार्थमुत्तरम्, तत एषा इन्द्रस्ततस्तत्र.

बाकीनी बन्ने आंगळीओ फेळाएली होय-ए जातना कराभिनयनुं नाम ' हंसवक्त्र ' छे" १०० (भ० ना० अ० ९) " बधी आंगळीओ फेळाएली होय, कनिष्ठा उंची होय तथा अंगुठो कुंचित (वळेळो) होय-ए जातना कराभिनयनुं नाम हंसपक्ष छे " १०२-(भ० ना० अ० ९)

- ६. उद्गमनोद्गमनप्रविभाग.
- ७. आगमनागमनप्रविभाग.
- ८. आवरणावरणप्रविभाग.
- ९. अस्तगमनास्तगमनप्रविभागः
- ९०. मंडलप्रविभागः
- ११ इतिविलंबित.
- १२. सागर-नागप्रविभाग.
- ३३. नंदा-चंपाप्रविभागः
- १४. मत्स्याण्डक-मकराण्डक-जार्-गार्प्रविभाग.
- १५. कवर्गप्रविभाग-(कप्रविभाग, खप्रविभाग, गप्रविभाग, घप्रविभाग अने डप्रविभाग)
- १६. चवर्गप्रविभाग.
- १७. टबर्गप्रविभाग.
- १८. तबर्गप्रविभाग.
- १९. पवर्गप्रविभाग.
- २०. पहावप्रविभाग.
- २१. लताप्रविभाग.
- २२. द्वतः
- २३. विलंबित.
- २४. द्वतिवर्लवतः
- ३५. अंचित.

नाट्यशास्त्रमां मंडलना २० प्रकार दशिब्या छे, ते आ प्रमाणे:—"अति-कांत, विचित्र, लिलतसंवर, सूचीविद्ध, दण्ड, परिवृत, अलातक, वामविद्ध, सलिति, कांत, आकाशगामी, भ्रमर, आस्कंदित, समोसरित, एलकाकीडित अण्डित, शकटास्य, अध्यर्थ, पिष्ठकुट, चाषगत. ए वीशेनुं सहप ११ मा अध्यायमां सविस्तर आपेलुं छे. संमवित छे के, मंडलप्रविभागमां आ मंडलो आवतां होय.

नाट्यशास्त्रमां 'हुत-़े' नामनो 'लय ' अने हुता नामनी गति (चाल) जणावी छे. '' ५९-३२-(भ० ना० अ० १२)

माथाने लगता कुल १३ अभिनयो छे, तेमां आ 'अंचित 'अभिनय आठमो आवे छे. ' कोई वितांतुर मनुष्य, हाथ उपर हडपची टेकवीने पोतानुं माथुं नमतुं राखे-ए जातना मस्तकाकारनुं नाम 'अंचित ' अभिनय छे." आ अभिनय व्याधिना, मूर्छाना अने दुःखनी चिंताना प्रसंगे करवामां आवे छे. २९-(भ० ना० अ० ८) तथा पगना छ अभिनयोमां पण आ अंचित अभिनय चोथो आवे छे. एनुं स्वरूप आ प्रमाणे छे:—जे पगनी वधी आंगळीओ अंचित (उंची) होय तेनुं नाम 'अंचित पाद' छे" २४२ (भ० ना० अ० ९)

शुब.

(नदा.

शय नी य

त्रिविक व

त्रंगमाः

अरश्रा.

9२. ['आसुरुत्त 'ति] शीव कोघ करवार्थी मुंझाएठ बुद्धियाळा अथवा जेओमां कोपनां निशानो स्फुर्यों छे तेआ, ['कुविय 'ति] जेओने कोपनो उदय थयो छे ते, ['चंडिक्क अंति] जेओए भयानक रूपने प्रकट्युं छे ते, ['मिसमिसे'ित] कोघना मडकार्थी देदीप्यमान. ['सुंनेणं ति] दोरडीवडे. ['उहुह्ति 'ति] युंके छे, ['आकड्ढिकडिंढूं 'ति] जेम फावे तेम आहुं अवळुं खेंचे छे, ['हीठेंति'ित] एती जानि वेगेरेने उघाडी पाडी तेनी मिंदा करे छे, ['निदंति 'ति] मनवडे निंदा करे छे, ['खंसित 'ति] पोतानी समक्ष बचनोवडे निंदा करे छे, ['गरहंति ति] छोकोनी समक्ष निंदा करे छे, ['आकडित 'ति] तेने अपमाननुं पात्र माने छे, ['तिजिति 'ति] आंगळी अने माथुं वेगेरे शिराना अवयवोने हळावी तेनी तर्जना करे छे, ['तालेंति'ित्त] हाथ वेगेरेवडे मारे छे, ['पिटव्वहेंति 'ति] चारे बाजुशी कदर्थना करे छे, ['पव्वहेंति 'ति] जाणे ख्व व्यथा उत्पन्न करे छे, ['तालेंति'ित्त] हाथ वेगेरेवडे मारे छे, ['पिटवहेंति 'ति] चारे बाजुशी कदर्थना करे छे, ['पव्वहेंति 'ति] जाणे ख्व व्यथा उत्पन्न करे छे. ['तत्वेव सथिणज्ञवरगए 'ति] त्यां ज उत्तम शय्यामां रहेलो, ['तिविल्जं 'ति] कपळमां त्रण वळी-आड-पडे तेम भवां चडाववां ते त्रिविलका-तेने. ['समजोहभूअ 'ति] अग्रिनी समान थएली. ['भीअ 'ति] भयवाळा थएला, ['उत्तत्थ 'ति] मयथी कंप वगेरेने पामेला—त्रासेला, ['सुसिय 'ति] जेओनो आनंदरस सुकाइ गयो छे एवा ['उव्विग्ग 'ति] पोतानुं रहेलाण छोडी देखुं एवी इच्छावाळा— उद्देगने पामेला, ताल्पर्य शुं है तो कहे छे के, भयने पामेला तेओ थोडुं दोडे छे, वथारे दोडे छे, ['समतुरंगेमाण 'ति] एक बीजानी चोंटता, ''एक बीजामां मराइ जता—एक बीजानी सोडमां मराता'' ए प्रमाणे गुद्धोए अर्थ कर्यों छे. ['णाई मुज्जो एवं करणयाए'ित] वारं वार एम करवा माटे 'अमे तैयार नहीं थाइए' एटलो अध्याहार छे. ['आणी—उववाय—वयण—निहेसे'ित] 'आ करवानुं ज छे ' ए प्रमाणेनो आदेश ते आज्ञा, उपपात एटले सेवा, आज्ञार्वक आदेश ते बचन, पृछेला कार्य संबंधे नियमित जवाव ते निर्देश अर्थात् इंदनी आज्ञा वगेरेमां ते देवो रहे छे.

१३. ईशानेन्द्रवक्तव्यताप्रस्तावात् तद्वक्तव्यतासंबद्धमेवोदेशकसमाप्तिं यावत् सूत्रवृन्दमाहः—'सक्रस्त' इसादि. 'उचतरा चेव'त्ति उच्चतं प्रमाणतः, 'उन्नयतरा चेव'त्ति उन्नतत्वं गुणतः, अथवा उच्चतं प्रासाद्योक्षंम्, उन्नतत्वं तु प्रासाद्यीठापेक्षमिति. यचोच्यते—''पं च-सय उच्चतेणं आइमकप्पेसु होंति विमाण''त्ति, तत् परिस्थूलन्यायमङ्गीक्रसावसेयम्, तेन किञ्चिदुच्चतरत्वेऽिप तेषां न विरोध इति. 'देसे उच्चे देसे उच्चे देसे उच्चे ति प्रमाणतः, गुणतश्च. 'आलावं वा, संलावं व'त्ति आलापः संभाषणम्, संलापः तदेव पुनः पुनः, 'किचाइं'ति प्रयोजनानि, 'करणिज्ञाइं'ति विधयानि, 'से कहं इआणिं पकरंति'त्ति अथ कथम् इदानीम्—अस्मिन् काले कार्यावसरलक्षणे प्रकुरुतः 'कार्याणि' इति गम्यम्. 'इति मो'त्ति इति-एतत् कार्यमस्ति, मोः—शब्दश्चामन्नणे. 'इति मो ति दिते परस्परालापानुकरणम् . 'जं से वयइ तस्स आणा-उवचाय-वयण-निदेस'ति यत्—आज्ञादिकम्, असौ वदति, तत्र आज्ञादिके तिष्ठत इति वाक्यार्थः, तत्र आज्ञाद्य पूर्वं व्याख्याता एवेति. 'आराहए'ति ज्ञानादीनामाराधियता, 'चरमे'त्ति चरम एव भवो यस्याप्राप्तसिष्ठिति, देवभवो वा चरमो यस्य सः, चरमभवो वा मत्वेष्यति यस्य स चरमः. 'हिअकामए'त्ति हितं सुखनिवन्धनं वस्त, 'सुहकामए'त्ति सुखं शर्म, 'परथकामए'त्ति

३० आस्मट भसोल (१)

Jain Education International

नाट्यशास्त्रमां वे प्रकारे 'रेचित 'अभिनयनो उक्षेस छे. एक तो भवांना अभिनयमां अने वीजो कटीना अभिनयमां. " सुंदरता पूर्वक कोई एक भवांना उरक्षेपने रेचित कहेवाय छे " ११६-(भ०ना०अ०८) " चारे बाजुथी नमी गएठी कटी-कड-ने 'रेचित कटी कहेवाय छे " २१७-(भ० ना ०अ ९)

३२. चरमचरम अने अनिवद्ध नाम.

[बत्रीशमी ' चरमचरम ' नामनी अभिनय करतां ए स्थाभदेवे जे अभिनयो खेल्या हता, तेनुं वर्णन आ प्रमाणे छे:—वर्धमाननो आगळनो कोई छेक्षो मनुष्य भव-एमां एणे एमना ए आखा भवनी चर्याओ जूदा जूदा वेषो छईने बतावी हतीं. ए ज प्रकारे एमनो छेक्षो देवभव, एमनुं च्यवन, गर्भसंहरण, जन्माभिषेक, बाळकीडा, यावनदशा, कामभोगदशा, प्रवच्या, तपश्चरण, ज्ञानीत्याद, तीर्थप्रवर्तन अने निर्वाणगमन ए बधा भावोने खेली बताच्या हता.—(जीवाजीवाभिगम, १०२४७ स॰)अहीं जे जे अभिनयोनो, भरतनाट्य शास्त्रनी साथे तुलनात्मक उक्षेत्र करेलो छे ते ते अभिनयो विषेनी विशेष हकीकत ए ज शास्त्रना ते ते अध्यायो उपरथी जाणी लेवानी छे. ए विषे जैननंथोमां कोई जाणवा जोग उक्षेत्र मळतो जणायो—तो—नथी. स्त्रोक्त बत्रीश प्रकारमां केटलाक प्रकारो एवा छे के, जे, समजमां आवी शक्ता नथी, कारण के, तेमां केटलाक नामो तो अशुद्ध ज लखाएलां लागे छे. परंतु साधनाभावने लीधे तेनो निर्णय थई शके तेम नथी. टीकाकारोए पण एवां ज नामो लखी दीधां छे अने स्वरूप के विवेचन तो आप्या ज नथी]:—अनु०

For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. रिभित,

२७. अंचितारेभित.

२८, आरभंट

२९. भसोल(१) [भसल]

३१ १ उत्पात, (२) निपात, (६) प्रसक्त, (४) संकुचित, (५) प्रसारित, (६) रेक, (७) रचित (१) [रेचित] (८) भ्रान्त अने (९] संभ्रान्ताभिनयः

नाट्यशास्त्रमां " एक प्रकारनी वृत्तिने 'आरमटी' कही छै " १४ (भ०ना०अ०२०)

^{&#}x27;श्रमर' शब्दनुं प्राकृतरूप 'ससल' थाय छे एथी नाट्यशास्त्रमां ज्णावेली 'श्रमर ' अभिनयनी हकीकत, कदाच 'ससल' अभिनयनी जेवी होय. (सामे आपेलुं 'भसोल' रूप अशुद्ध लागे छे.) एक प्रकारना इस्ताभिन्यनुं जनाम 'श्रमर' अभिनय छे. " वचली आंगेळी अने अंगुठानो संदेश होय, प्रदेशिनी वांकी हीय अने बोजी वे उंची तथा प्रकीण होय-ए जातना हस्ताभिनयनुं नाम श्रमर छे" ९७ (भ० ना० अ०९)

१. अहीं द्वंद्व समास करवानो छे:-श्रीअभय०

विमानीनां

वे रहे छे.

हितेषी.

स्प**न्प**र्याय.

भाका.

माप.

पथ्यं दु:खत्राणम्. कस्मादेवम् १ इत्यत आह—'आणुकंपिए'त्ति कृपावान्, अत एवाह—'निस्तेयितए'ति निश्रेयसं मोक्षः, तत्र नियुक्त इव नैश्रेयसिकः, 'हिअ-सुह-निस्तेसकामए'ति हितं यत् सुखम्-अदुःखानुबन्धमित्यर्थः, तिन्नःशेषाणां सर्वेषां कामयते वाञ्छति यः स तथा. पूर्वो-कार्थसंग्रहाय गाथे—'छट्ठ' इत्यादि. इह आद्यगाथायां पूर्वार्घपदानां पश्चार्घपदैः सह यथासंख्यं संबन्धः कार्यः. तथाहि—तिञ्यक-कुरुदत्त-साध्वोः क्रमेण षष्ठम्, अष्टमं च तपः. तथा मासः, अर्धमासश्च 'भत्तपरिण्ण'त्ति अनशनविधिः—एकस्य मासिकमनशनम्, अन्यस्य चार्धमासिक्कमिति भावः. तथैकस्याष्टवर्षाणि पर्यायः, अन्यस्य च षण्मासा इति. द्वितीया गाथा गतार्थाः 'मोया सम्मत्त'ति मोकाऽभिधाननगर्यो-मस्योदशेकार्थस्य 'किदशी विकुर्वणा' इत्येतावद्रपस्योक्तत्वात् 'मोका' एवायमुदेशक उच्यते इति.

भगवत्सुधर्मस्वामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे तृतीयशते प्रथम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

१२. अत्यार सुधी ईशानेंद्र संबंधी वक्तव्यता कही छे अने हवे एण आखा उद्देशक सुधी ते ज संबंधे कहेवानुं छे तो ते माटे सुत्रवृंदने कहे छे:-['सक्करस' इत्यादि.] ['उच्चतरा चेव 'त्ति] प्रमाणथी उंचा, ['उन्नयतरा चेव 'त्ति] गुणथी उन्नत अथवा प्रासादनी अपेक्षाए उच्चपणुं अने प्रासादना पीठनी अपेक्षाए उन्नतपणुं. जे कहेवार्य छे के, "पेला कल्पोमां रहेलां विमानोनी उंचाइ पांचसे योजन छे" ते स्थूलपणे कहेवायुं छे एम जाणवुं. तेथी जणावेल प्रमाण करतां जराक वधारे उंचाइ होय तो पण कांइ विरोध जेवुं नथी. ['देसे उचे, देसे उन्नए'ित] प्रमाणथी अने गुणथी. ['आठावं वा संठावं व'ति] आठाप एटले संभाषण अने संठाप एटले वारंवार संभाषण. ['किचाई 'ति] कृत्य एटले प्रयोजनो, ['करणिजाइं 'ति] करणीय एटले कार्योः ['से कहमिआणि पकरेंति'ति] हवे ज्यारे कार्यनो प्रसंग पढे त्यारे तेओ केवी रीते कार्य करे छे. ि 'इति भो !'ति] ए कार्य छे, ['भो ! इति भो ! ति 'ति] ए शब्दो एक बीजाना आळापना अनुकरणरूप छे. ['जं से वयह तस्स आणा-उववाय-वयण-निद्देस 'ति] जे कांइ आज्ञादिक ए करे, तेने तेओ ताबे रहे छे, ए प्रमाणे वान्यनो अर्थ छे. तेमां 'आज्ञा ' बगेरे शब्दोनी व्याख्या आगळ उपर थइ गइ छे. ['आराहए 'ित] ज्ञान बगेरेनो आराधक छे ['चरमे'ित] जेने हवे मात्र छेल्लो एक ज भव वाकी छे ते, अथवा जे चालु भव-देवनो भव-छे ते ज जेनो छेलो भव छे ते, अथवा जेनो चरम भन्न छे ते चरम. ['हिअकामए 'ति] सुखना कारणरूप वस्तु ते हित, ['सहकामए 'ति] सुख एटले सुख, ['पत्थकामए 'ति] दुःखथी बचवुं ते पथ्य. एम शा माटे तो कहे छे के, ['आणुकंपिए 'ति] कृपाळु एवो छे माटे ज कहे छे के, ['निस्सेयसिए 'ति] जाणे निश्रेयस−मोक्ष-मां नियुक्त न होय एवी, ['हिअ-सुह-निस्सेसकामए 'ति] जेमां दुःखनो संबंध न होय ते सुख हित, सुख वगेरे वधाने इच्छनार ते. आगळ कहेला अर्थने संक्षेपथी सूचवनारी वे गाथा कहे छे:-['छट्ट ' इत्यादि.] अहीं पहेली गाथामां आवेल पूर्वार्घनां पदोनो उत्तरार्घनां पदो साथे अनुक्रमे संबंध करवोः तिष्यक अनगारनुं छट्ठ तप अने कुरुद्त्त अनगारनुं अहुम तप समजबुं. वळी ['भत्तपरिण्ण 'ति] एटले अणसणनो विधि, ते एकनो मास सुधी अने बीजा अनगारनो पखवाडिया सुधी जाणवो अर्थात् तिष्यकनो मास सुधी अने कुरुद्त्तनो पखवाडिया सुधी अणसण विधि जाणवो. तथा एकनो-तिष्यकनो-आठ वरसनो अने बीजानो-कुरुद्त्तनो-छ मासनो (दीक्षा) पर्याय जाणवो. बीजी गाथानो अर्थ स्पष्ट छे. ['मोया सम्मत्त 'ति] 'विकुर्वणा केवा प्रकारनी छे ' ए संबंधेनी बधी हिकिकत 'मोका ' नगरीमां कहेवाएली होवाथी ए हिककतने जणावनार प्रकरण (उद्देशक) पण (मोका) ना नामे कहेवाय छे-ओळखाय छे.

वेडारूपः समुद्रेऽखिळजळचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् द्रायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्योः—दद्यात् श्रीवीरदेवः सकळशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

^{9.} जीवाजीवाभिगम सत्रनी वृत्तिमां (स ० पृ ० ३९७) वेमानिक उद्देशकमां आवेळी देववर्णनामां कह्युं े के, " प्रथमना वे कलामां—सीधर्म (जुओ म ० प्र ० खं ० पृ ० २९६) ईशान कल्पमां-आवेळा विमानो पांचसें योजन उंवां छे " अधीत एथी ए बन्ने कल्पनां विमानोनी उंचाई एक सरखा जणाय छे अने अहीं मूळखूत्रमां जणाव्या प्रमाणे तो साधर्म कल्प करतां ईशान कल्पनां विमानो उचां लागे छे अने ईशान कल्प करतां सीधर्म कल्पनां विमानो नीचां लागे छे-ए रीते आ सूत्र साथे उपर जणावेळा प्रयांतरना वचननो विरोध आवे छे तेनुं केम ! समा०—प्रथांतरमां जणावेळुं विमाननी उंचाईनुं माप साधारण छे तेथी ए विमानो परस्पर थोडां घणां उंचां नीचां होय, तो पण तेनो वाध गणातो नथी अधीत् एक विमान तो प्रां पांचसें योजन उंचुं होय अने बीजुं तेथी चार छ आंगळ वधारे होय, तो पण ए विमानो उंचाईमां सरखां गणाय छे. एथी प्रथांतरनुं ए वचन अने प्रस्तुत सूत्रनुं आ कथन परस्पर विरोधी थई शकतुं नथी, कारण के, ए बन्ने कथनो भिन्न भिन्न अपेक्षाए जणावेळां छे—एक कथन साधारण अपेक्षाए छे अने बीजुं कथन विशिष्ट अपेक्षाए छे:—अनु०

[.]२ आ शब्द आमंत्रण सूचक छेः-श्रीअभय०

शतक ३.-उद्देशक-२.

राजगृह.--पर्वत.-महावीर अने गौतम.-असुरो क्यां रहे छ १-रत्नप्रभा पृथिवीनी वचे.--असुरोतुं नीचली तृतीय-(वासकाप्रमा)-पृथिवी सुधी थएलुं गमन अने ं. जवानुं सामर्थ्य गमननो हेतु.-पूर्वना वैरिने दुःखी करवो के पूर्वना मित्रने सुखी करवो,-असुरोनुं तिरछे नंदीश्वर द्वी सुधी थएछं गमन अने तिर्ह्ने असंख्य द्वीप समुद्रो सुधी जवानु सामर्थ्य .-तेथोनो तिर्छा गमननो हेतु .-अरिहंनोना जन्मनो, निष्क्रमणनो, झानोत्पादनो अने परिनिर्वाणनो महिमा.-असुरोनु उंचे सौधर्म देवलोक सुधी थएलुं गवन अने उंचे अच्युत देवलोक सुधी जवानुं सामर्थ्य.-ऊर्ध्वगमननो हेतु.-देव अने असुरोनुं वेर.-असुरोनुं चोरपणुं -असुरोने देवीए करेळी सजा.-असुरो अने अप्सराओ.-असुरोनुं ऊर्ध्वगमन केटली काळ वीत्या पछी थाय हे ? अनंत उत्मर्थिणी अने अनंत अवसर्पिणी.-शवर.-वर्षर.-वर्षण.-भुत्तुअ.-पण्ह.-पुलिंद.-अरिहंत विगेरेना आशराधी ज असुरोनुं ऊर्ध्वणमन -महिद्धिक असुरोनुं ऊर्ध्वगमन.-उर्ध्वगमन माटे चमरनी वात.-चमरनो पूर्वजन्म.-जम्बूद्रोग.-भारतवर्ष.-विध्यगिरिपादमूळ.-वेभेल संनिवेश.--पूरण गृहपति.-मुंड थवुं.-दानामा प्रत्रज्या.-चार खानावाञ्चं काष्ठपात्र.-मळेल भिक्षावेडे बटेमागुं, कागडा, कूतरा अने माछला, काचवा वगेरेनुं आतिथ्य.-पूरणनो उग्रतप.-पूरणनुं पादपोपगमन अनशन,-छदास्थ तरिके महाकीरनां अग्यार वर्ष.-सुसमारपुर नगर.-इंद्र विनानी चमरचंचा नगरी.~तपस्त्री तरीके पूरणनां वार वर्ष.-मःसिक संटेखना.-साठ टंक अनशन.-चमरचंचामां इंद्र-चमर-तरीके पूरणनो जन्म.-चमरे करेलो सौधर्म देवलोकनो साक्षास्कार.-मघवा, पाकशासन, शतकतु, सहस्राक्ष, वज्रपाणि अने पुरंदर.-शकेंद्रना विलासी जोई चमरने थएली ईंध्यां.-शक प्रति चमरनुं गालिप्रदान.-चमरनो भयावह ईर्ध्यानळ.-छद्मस्य महावीरनो चमरे लीधेर आश्रय.-प्रध्य आयुधने रुईने एकरा चमरे सौधर्म देवलोक (शक्र) प्रति करेलुं प्रयाण.-प्रयाण पूर्व चमरे रचेलुं वीहामणुं शरीर.–उपर जतां जठां चमरे करेल उत्पात.–वानव्यंतर देवोनी भागनाश.–ज्योतिषिकोनाः विभाग.–आत्मरक्षक देवोनुं पलायन – चमरनुं शक्रपासे पहोंचबुं.-शक्रमा दरवाजा बचे रहेल इन्द्रकीलनुं चमरे करेल आकुट्टन--शक्राश्रित देवोने देखाडेल भय.-चमर उपर शक्रनो कोप.-चमरनुं भागवुं.-महावीरना पगमां पडवुं.-वन्त्र मूनया पछी शक्रने थएल विचार-पश्चात्ताप.-वन्त्रनी पाछळ थएल शक्र.-शक्रे महावीर्थी चार आंगळ छेटे रहेल क्ज़ने पकट्युं.–शकतुं मह।बीरने बंदन अने क्षमाप्रार्थन.–मह बीरना प्रभावे चमरनो बचाव –गौतमप्रक्ष.–फेंकेल पुद्रलनी पाछळ जइने देव तेने प्कडी शके १-पुद्रलगतिबचार.-शक्रनी, चमरनी अने बज़नी गमनशक्ति, तेनी प्रस्पर तुलना तथा तेनुं काळ्मान.-चमरनी शोक.-ञोकना कारणनो चमरना देवोनो प्रश्न.-चमरनी महाबीर प्रति भक्ति.-चमरनी स्थिति अने सिद्धि.---

?. प्र०—ते णं काले णं, ते णं समए णं रायागिहे नामं नगरे होत्था, जाव—परिसा पज्ज्वासइ. ते णं काले णं, ते णं समए णं चमरे असुरिंदे असुरराया चमरचंचाए रायहाणीए, सभाए सुह-म्माए, चमरंसि सीहासणंसि, चउसट्टीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव-नद्दविहिं उवदंसेत्ता, जामेव दिसं (सिं) पाउच्मूए तामेव दिसिं पडिगए.

१. प्र०—ते काळे, ते समये राजगृह नामनुं नगर हतुं. यावत्—सभा पर्युपासना करे छे. ते काळे, ते समये चोसठ हजार सामानिक देवोधी विंटाएळो अने चमर नामना सिंहासनमां बेठेळो असुरेंद्र, असुरराज चमर, चमरचंचा नामनी राजधानीमां, सुधर्मी सभामां, यावत्—नाट्यविधिने देखाडीने जे दिशामांथी आव्यो हतो ते दिशामां पाछो चाल्यो गयो.

^{ा.} मूलच्छायाः—तिस्मन् काले, तिस्मन् समये राजगृहं नाम नगरम् अभवत्, यावत्-पर्षेत् पर्युपास्ते. तिस्मन् काले, तिस्मन् समये चमरो सुरेन्द्रः, असुरराजश्रमरच्छाया राजधान्याः, सभायाः सुधर्मायाः, न्मरे सिंहासने, चतुःषष्ट्या सामानिकसाहस्रीभिः यावत् नाट्यविधिम् उपदर्श्यं, यामेव दिशं प्रादुर्भूतः तामेव दिशं प्रतिगतः—असु०

' मंते' !'त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ (ति), नमंसइ (ति), एवं वया (दा) सी:-अत्थि णं भन्ते ! इमीसे रयणप्यभाए पुढवीए अहे असुरकुमारा देवा परिवसंति ?

- ?. उ०—गोयमा ! णो इणहे समृष्टे एवं जाव—अहेसत्तमाए पुढवीए, सोहम्मस्स कप्पस्स अहे जाव.
- २. प्र०—अस्थि णं भन्ते ! ईसिप्पन्भाराए पुढवीए अहे असुरकुमारा देवा परिवसंति ?
 - २. उ०—नो इणहे समहे.
- ३, प्र०—से काहिं खाइ णं मंते ! असुरकुमारा देवा परिव-संति ?
- ३. उ० गोयमा ! इमीसे रयणपमाए पुढवीए असीओ-(उ)त्तरजोयणसयसहस्सबाहह्राए, एवं असुरकुमारदेववत्तव्वया, जाव-दिव्वाइं मोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति.
- 8. प्रo-अत्थि णं भन्ते ! असुरकुमाराणं देवाणं अहेगीत-विसये ?
 - ८, उ०-हंता, अत्थि.

- ' हे भगवन् !' एम कही भगवान् गौतम, श्रमण भगवंत म-हावीरने वांदे छे. नमे छे अने वांदी, नमी तेओ आ प्रमाणे वोल्याः—हे भगवन् ! आ रत्नप्रभा पृथिवीनी नीचे असुरकुमारदेवो रहे छे ?
- १. उ०—हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नथी-एम नथी.-ए प्र-माणे यावत्—सातमी पृथिवीनी नीचे पण असुरकुमारदेवो रहेता नथी. तथा ए ज रीते सौधर्मकल्पनी अने यावत्—बीजा कल्पोनी पण नीचे असुरकुमारदेवो रहेता नथी.
- २. प्रo—हे भगवन् ! ईषत्प्राग्भारा पृथिवीनी नीचे असुर-कुमारदेवो रहे छे ?
 - २. उ०-हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नथी-एम नथी.
- ३. प्र०—हे भगवन् ! त्यारे कयुं एवुं प्रसिद्ध स्थान छे के, ज्यां असुरकुमारदेवो निवास करे छे ?
- ३. उ०—हे गौतम ! एक लाख अने एंशी हजार योजननी जाडाई वाळी आ रत्नप्रमा पृथिवीनी वचगाळे ते असुरकुमारदेवो रहे छे. अहीं असुरकुमारो संबंधी बधी वक्तव्यता कहेवी अने यावत तेओ दिव्यभोगोने भोगवता विहरे छे.
- ४. प्र०—हे भगवन् ! ते असुरकुमारोमां एवं सामर्थ्य छे के तेओ पोताना स्थानथी नीचे जइ शके ?
- ४. उ०—हे गौतम ! हा, तेओमां पोताना स्थानथी नीचे जवानुं सामर्थ्य छे.
- १. मूलच्छायाः—'भगवन्!' इति भगवान् गैातमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति, एवम् अवादीतः—अस्ति भगवन्! अस्या रतनप्रभायाः पृथिव्याः अधोऽसुरकुमारा देवाः परिवसन्ति १ गातम! नाऽयम् अर्थः समर्थः, एवं यावत्—अधः सप्तम्याः पृथिव्याः तैष्धमस्य कल्पस्य अधो यावत्, अस्ति भगवन्! ईषत्प्राग्भारायाः पृथिव्याः अधोऽसुरकुमाराः देवाः परिवसन्ति १ नाऽयम् अर्थः समर्थः, अय कुत्र पुनर्भगवन्! असुरकुमाराः देवाः परिवसन्ति १ गीतम । अस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्याः अशीत्युत्तरयोजनशतसहस्रबाहल्यायाः—एवम् असुरकुमारदेववक्तव्यता, यावत्—दिव्यानि भोगभोग्यानि भुष्ठाना विहरन्ति, अस्ति भगवन्! असुरकुमाराणां देवानाम् अधोगतिविषयः १ हन्त, अस्ति :—अनु०
- २. उपरना सूत्रमां आवेली चर्चा असुरकुमारोने लगती छे. एमां आवेलो ' असुर ' शब्द विशेष विचारणीय छे. ए शब्दनो प्रयोग पाराणिक कवि-ओए ' दानव ' अर्थमां करेलो छे तेम अहीं पण ए, ए ज अर्थने सूचवे छे. आ चर्चामां आगळ जतां एवं पण जणाव्युं छे के, असुरकुमारो अने उपरना (सौधमीदि) सुरो वच्चे अहिनकुलनी जेवुं जातिवैर छे (१) अने ते मात्र एक कारणने लीधे ज तेओ उपर जईने तोफान करे छे-चोरी करे छे अने उपरनी सुरप्रजाने त्रास आप छे. पैराणिक साहिल्यमां प्रसिद्धि पामेलो सुराऽसुरनो संत्राम, आ चर्चा साथे मळनो आवे छे. महिषे यास्के सुराऽसुरना संत्राम विषे जणावतां पोताना निक्कमां नीचे प्रमाणे जणाव्युं छे:—

"अयां च ज्योतिषश्च मिश्रीभावकर्मणाः वर्षकर्म जायते, तत्रोपमाथेन युद्ध-वर्णा भवन्ति "-(निरुक्तमूळ.) " अयां च मेघोदरान्तर्गतानाम्, ज्योतिषश्च वद्युतस्य उद्भूतवृत्तेः, मिश्रीभावकर्मणो वर्षकर्म जायते-तेन हि वेषुतेन ज्यो-तिषा वाय्वावेष्टितेन इन्द्राख्येन उपताच्चमाना आयः प्रस्यन्दन्ते-वर्षभावाय कल्प्यन्ते, तत्र एवं सति उदक-तेजसे।रितरेतरप्रतिद्वन्द्वभूतयोः उपमार्थेन रूपकल्पनया युद्धवर्णा भवन्ति-युद्धे रूपकाणि इत्यर्थः । न हि अत्र यथाभूतं युद्धमस्ति, न हि इन्द्रस्य शत्रयः केचन सन्ति " इत्यादि (निरुक्तभाष्य-५० १४४-१४५)

"वादळांनां पेटमां रहेळां पाणो त्यारे ज झरे छे, ज्यारे ते पाणी वायुथी विटाएळां वहात (विजळीना) प्रकाशयी उपताडित याय छे. आ रीते पाणी अने प्रकाशनी प्रतिद्वन्द्वितायी यती कियाने वर्षकर्म-वरसाद-कहेवामां आवे छे. ए ज प्रतिद्वन्द्विताने रूपकनी कल्पनामां ढाळी युद्धरूपे वर्णवी छे. वस्तुतः ते जातनुं (देवासुरनुं) युद्ध नथी, तेम इन्द्रना कोई शत्रुओं नथी " इत्यादि (निहक्तमा॰ पृ० १४४-१४५)

निरुक्तना आ अभिप्राययी आपणे कही सकीए छीए के. वरसादने प्रसंगे थता गडगडाट अने झबकारानी बीनाने पौराणिक किबओए सुरासुरसंप्रामना रूपकमां ढाळीने वर्णवेली छे. आ रूपक घणुं प्राचीन थएछं होवाथी हवे तो एक इतिहासरूपं पण प्रसिद्धि पाम्युं छे. मने लागे छे ते प्रमाणे आ प्रस्तुत सत्रमां आवेली असुरचर्चानुं मूळ पण आ ज रूपक छे अने हुं धारुं छउं तेम तो ए रूपक जैनसाहित्यमां आवीने विशेष पुष्ट बन्युं छे—जैनऋषिओए तो एक प्रजानी व्यवस्थानी जैम असुरोनां घरो, खीओ, सरसामान, घरेणां गाठां, जघन्य अने उत्कृष्ट आयुष्यो, विलासकीडा, वैषियकविशेद, सेना, सेनाधिपतिओ अने छंटफाट विगेरेनं रीतसर अने आवेहब संगठन करी ते रूपकात्मकभावने ऐतिहासिक थवानो विशेष प्रसंग आप्यो छे. यास्कनुं निरुक्त हुं धारुं छउं

५. प्र० — केवतियं च णं पमू ते असुरकुमाराणं देवाणं अहेग-तिविसए पण्णत्ते ?

५. उ०--गोयमा । जाव-अहे सत्तमाए पुढवीए, तर्च पुण पुढावें गया य, गमिस्संति य.

६. प्र०--किंपत्तियं णं भंते ! असुरकुमार। देवा तचं पुढिवं गया य, गमिस्संति य ?

अ. प्र०--हे भगवन् ! ते असुरकुमारो पोताना स्थानथी केटला भाग सुवी नीचे जइ शके छे ?

५. उ० —हे गौतम ! ते अँसुरकुमारो पोताना स्थानधी नीचे यावत्-सात री पृथिवी सुवी नी वे जइ शके छे. तेओनी नी वे जवानी मात्र आटळी शक्ति छे. परंतु तेओ त्यां सुधी कोइ बार गया नथी, जरो नहीं अने जता पण नथी. किंतु त्रीजी पृथिवी सुबी जाय छे, गया छे अने जरो पग खरा.

६. प्र०-हे भगवन् ! ते असुरकुमारा त्रीजी पृथिवी सुधी जाय छे, गया छे अने जशे तेनुं झूं कारण ?

तेम विशेष प्राचीन छे. वर्धमानना समयनं साहित्य वर्णश्तां घमे स्थळे जे निवक्त शब्दनी उहेख आरेखे छे ते आने ज छमतो होय ते पण संभव हुं छे. ('निरुक्त 'ना उड़ेख माटे जूओ भगवती सूत्र प्रथमखंड, द्वितीयसतक, प्रथम उद्देशक प्र० २३१ अने टीका ए० २४६) एमां 'असुर 'सब्दनी अर्थ आपतां जणान्युं छे के;

''अद्रिः, प्रावा, गोत्रः, वलः, अस्तः, पुरुभोज्ञाः, बलिगानः, अस्ता, पर्वतः,

मेवनां त्रीश नामो छे. ते आ प्रमाणे छे:--अदि, प्रावा, होत्र, बल, गिरिः, त्रजः, चरः, वराहः, शंबरः, शैहिणः, शैवतः, फलिगः, उपरः, उपलः, अश्व, पुरुभोजा, बलिशान, अश्वा, पर्वत, गिरि, त्रज, चर, वराह, शंबर, चमसः, अहिः, अभ्रम्, वलाहकः, मेघः, ओदनः, द्रान्धिः, द्वनः, असुरः, ौाहिण, रैवत, फिक्कि, उपर, उपल, चमस, अहि, अभ्र, वलाहक, मेघ, कोशः, इति त्रिंगद् मेघनामानि "।।१। १०।-निहक्ते निघण्डुकाण्डे पृ०१५४) ओदन, तृपन्धि, तृत्र, अमुर अने कोश-(निहक्त निघण्डुकांड पृ०१५४)

आमां 'असुर 'शब्दने ' मेघ 'अर्थमां थोजेछो छे अने तेनो ए अर्थं बराबर होय, ए तेनी ब्युत्मति उपरथी पण जाणी शकाय छेः —" असून् प्राणान्, राति ददाति-इति असरः" अर्थःत् प्राणोने आपे ते असर. मेधमां रहेली प्राणदात्री शक्ति तो सबै प्रतीत छे, एथी 'असुर 'अने 'मेच 'ए बनेनी समानार्थकता, उपर प्रमाणे निरुक्तमां जणावेली हे ते विशेष दृढ धती जणाय है :--अनु०

१. मूलच्छायाः — कियच प्रभुस्तेषाम् असुरकुमाराणां देवानाम् अधोगतिविषयः प्रइतः १ गौतम ! यावत्-अधः स प्रम्यां पृथिव्याम्, तृतीयां पुन पृथिवीं गताश्च, गमिष्यन्ति च. किंपलयं भगवन् ! असुरकुमाराः देवास्तृतीयां पृथिवीं गताश्च, गमिष्यन्ति च ? : —अनु०

२. एक लाख, एंशी हजार योजनना दळवाळी रतनप्रभा पृथिवीना, उत्तर अने नीचेना एक एक हजार योजनप्रमाण भागने बाद करतां बाकी रहेला स्थळनी अंदर भुवनपति भेनां अने वानव्यंतरानां रहेठाणो छे. तेमां भुवनपतिओना दश भेद छे. तेमांना प्रथम भेदने 'असुरकुमारावास ' कहेवामां आवे छे. ते आवास दक्षिणे अने उत्तरे एम वे दिशामां आवेलो छे. तेमां एकमां 'चमर' अने बीजामां 'बजी' ए नामना वे इन्द्रो छे. चनरनी राजधानीने चमरचंचा अने विलगी राजधानीने विलचंचा कहेतामां आवे छे. चमरचंचामां चीत्रीतळाख घर (असुरक्कतारावास) छे अने विलचंचामां ३० लाख छे-बनेमां मधीने ६४ लाख असुरकुमारावासो छे. तेमां रहेनाराओनी आवरदा, ओछामां ओडी दश हजार वर्षनी अने वधारेमां वधारे एक सागरे।पमयी अधिक होय छे. उपर आवेला त्रीजा प्रतिवच :-सूत्रमां असुरकुमारोनी वक्तव्यता विषे जे भलागण यएली छे तेनो सुविस्तर वर्णनात्मक परिचय 'प्रज्ञापना' उपांगमां (आ० स० ५० ८९-९१) आ प्रमाणे छे:---

"कहिं णं भंते ! असुरकुनारा देवा परिवसंति ? गोयमा ! इनीसे रयणप्यभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्तवाहस्राए उवरि एगं जोयण-सहस्यं ओगाहिता, हेट्ठा चेगं जोयणसहस्यं विज्ञता, मज्झे अद्वहत्तरे जोयणसयसहस्से; एत्य णं अनुरकुनाराणं देवाणं चउसद्विं भत्रणावाससय-सहस्सा भवंति--ति अवखायं, ते णं भवणा वाहिं वटा, अंतो चउरंसा, अहे पुत्रवरकिणयासंटाणसंठिया, उक्किंततरविउत्र-गंभीरखाइयफलिहा, षागार•द्वालय-कवाड-जे(ण-पडिदुवारदेसभागा, जंत–सयग्घि–मुसल–सुसंढि• परियारिया, अउज्झा, सदाजया, सदागुत्ता, अडयालकोहगरङ्या, अड-यालकयवणमाला, खेमा, तिवा, किंकरामरदंडीवरिक्खा, ला(इय)उहा-इयमहिया, गासीरा-सरस-रत्तनंदणदहरदिन्नपंचेतुितला, उवचितचंदण-कलसा, चंदणघडसुकयतोरणपिडदुवारदेसभागा, आसत्तो-सित्त-विउल-वह-वग्घारियमलदामकलावा, पंचवन-सरस-सुरभिमुक्कपुष्कपुञ्जोवयारकलिया, कालागुरु-पवरकुंद्रकइडज्झेतधूवमधमधंतगंधुद्धुयानिरामा, सुनंधवरनंधिया, गंधवट्टिभूया, अच्छरगणसंघतंविगित्रा, दिव्वतुडियसद्संपणादिया, सन्बर-यणामया, अच्छा, सण्हा, रुण्हा, घट्टा, मह्रा, णीरया, निम्मला, निष्पंका, निक्कंकडच्छाया, सप्पभा, सरिसरीया, समिरीया, सङ्जीया, पासादीया, दरिसणिजा, अभिरूवा, पिडरूवा; एत्थ णं असुरकुमाराणं देवाणं पजता-ऽपजताणं ठाणा पत्रता, तत्थ णं बहवे असुरकुमारा देवा परिवर्षति-काला, लोहियक्ख-विंबोट्टा, धवलपुष्फदंता, असियकेसा, वामे एगकुंडलधरा, अद्वंदणाणुलित्तगत्ता, ईसीसिलिंधपुण्कपगासाई, असंकिलि-हाई, ग्रहुमाई, वत्थाई, पवरपरिहिया; वयं च पढमं समइछंता-बिइयं वयं

" हे भगवन् ! असुरकुमार देवो कये स्थळे रहे छे १ हे गौतम ! एक लाख, एंशी हजार योजन जाड़ी रतनप्रभा पृथिवीनो, एक एक हजार यो-जननो उपरनो अने नीचेनो भाग बाद करी, बाकि रहेला-मध्यना एक लाख अने अठ्योतेर हजार योजन प्रमाणना-भागमां अपुरक्तमार देवोना ६४ लाख आवासो आवेला छे, ते आवासा, बहारथी गोळ, वचे चोखंडा अने पुष्कर-क्रमळ-नी कर्णिकाना घाटना छे, प्रत्येक आवासोनी फरती एक खाई अने परिखा, जे चोवखी (गाळ विनागी) उंडी अने वचे पहोळी छे, प्रति आवास, एक गढ अने तेमां आयेळी अटारी, बारणां, तोरण तथा बारीओ संयुक्त छे. ते भवनो (आवासो), यंत्र, शतन्नी, मूसळ अने सुदुंढी विगेरे शस्त्रीयी परिवेष्टित छे. एवां मजबूत होवाथी ज ए, अवीध्य छे, अजय्य छे, भने सुरक्षित रहेळां छे. तेमां अउताळीश कोठा छे, अडताळीश जातनां तोरणो-वनमाळा-छे. तथा ते निहादव अने मंगळहा छे. रंडधारी किंकर देवो, ते भवनोनी चोकी करे छे, तेमां गोनयादि द्वारा गार छिंपेली छे, खडी ६िगेरेथी घोळ करेलो छे अने मोशीर्ष चंदन तथा छाल चंदनना थापा मारेला छे, तेना शिखर उपर मंगल कळशो स्थापेला छे अो वारणा उ र पण चंदनकलशोनां तोरणो शोभी रह्यां छे, तेमां वांघेळा चंदरवाधी ते नीचे (भोव तळीया) सुधी लटकती मोळाकार नाटाओनी श्रेणी झूली रही छे, संदर, सुर्वथी अने पंचवर्णा पुष्ती वेराएला छे, काळो अगर, उत्तम किन्नद अने सेठारसनो सुगंबी धूर मधनधी रक्षो छे, चोमेर सुगंब फेलाई रह्यों छे अने जाणे गंधनी गुटिका न होय? एवां ए भवनो बहेंकी रह्यां छे. एमां अप्सराओनो समूह रहेतो होवाथी घणी संकडाश जणाय छे, दिन्य

६. उ०—गीयमा ! पुन्ववेरियस्स वा वेदणउदीरणयाए, पुन्वसंगइस्स वा वेदणउवसामणयाए, एवं खलु असुरकुमारा देवा तचं पुडविं गया य, गमिस्संति य.

६. उ०—हे गौतम! पोताना जूना शत्रुने दुःख देवा, पो-ताना जूना मित्रने सुखी करवा—ए कारणधी असुरकुमार देवो त्रीजी पृथिवी सुधी गया छे, जाय छे तथा जशे.

असंपत्ता, भद्दे जोद्वण्ये बटमाणा, तलभंगय-तुल्विय-पवरभूसण-निम्मल-गणि-स्यणमंडितभुया, दसमुद्दामंडिय-गाहत्था, चूडामणिविचित्तचिंधगया, स्रवा,महिक्तिया, महज्द्रया, महायसा, महन्वला, महाणुभागा, महासोक्ला, हारविराइयवन्छी, कडय-तुडियथंभियभुया, अंगय-कुंडलगद्वगंडयल-कन्नपी-ठधारी, विचित्तहत्थाभरणा, विचित्तमाळामउठी, कहाणग-पवर्षत्थपरिहिय, कल्लाणगमहाऽणुळेवणधरा, भासुरवोंदी, पलंबमाणवणमाहधरा, दिव्वेणं वित्रेणं, दिबेणं गंधेणं, दिबेण फासेणं, दिबेणं संघयणेणं, दिबेणं संटाणेणं, दिवाए इब्हीए, दिवाए जुईए, दिवाए पभाए, दिवाए छायाए, दिवाए अचीए, दिव्वेगं तेएणं, दिन्त्राए छेस्साए दस दिसाओ उज्जोनेमाणा, पमासेमाणा, ते णं तत्य सार्थं सार्णं भवणावाससयसहस्ताणं, सार्णं सार्णं सामाणियसाहस्त्रीणं, सार्ग सार्ग तायचीसमार्ग, सार्ग सार्ग छोगपालार्ग, सार्ग सार्ग अग्गमहि-सीणं, साणं साणं परिसाणं, साणं साणं अणियाणं, साणं साणं अणियाहि-वईणं, साणं साणं आयस्यखदेवसाहस्सीणं, अनेति च बहूनं भगणवासीणं देवाण य, देवीण य आहेवचं, पोरेवचं, सामितं, महित्तं महत्तरमतं, आणा-ईसर-सेणावचं कारेमाणा, पालेगाणा ; महताऽऽहतनष्ट-गीत-त्राइय-तंती-तल-ताल तुब्यि-धणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं मुंज-माणा विहरंति.

बाजाओना नादो गाजी रहेला छे, सर्व जातनां रत्नो भरेलां छे तेथी ए भवनो स्वच्छ अने छंवाळां छे, चयचकतां (चीकणां) अने ओपेलां छे, मार्जित अने नीरज छे, निर्मेळ अने निष्पंक छे, एमां आदती प्रभा अनावृत छे, ए प्रभावाळां, श्रीवाळां, सगमगतां, उद्योतवाळां, प्रसन्नता पगाडे तेवां, दर्भनीय, अभिक्ष अने प्रतिक्ष छे. एवा ए भवनोमां पर्याप्त अने अपर्याप्त अग्ररकुमार देवोनां स्थानो वह्यां छे. ××× तेमां घणा अग्रुरकुमार देवो रहे छे, तेओ वर्ण काळा, सोहिताक्ष अने बिंबसम होठवाळा छे, तेओना दांत इंदनी कळी जैवा घोळा छे अने केश काळा छे. तेओ डाबा कानमां एक क़ंडल पहेरे छे, शरीरे भीतुं चंदन चोपडे छे, विविधना पुष्पनी जेवी प्रभावाळां, आछां, रातां, कोमळ, सूक्ष्म अने हरुकां (बजन विनानां) तथा उत्तम बस्नोने पहेरे छे, तेओनी खुवानी हमेशा खीलती रहे छे. तलमंगक, गहेरसां अने बीजां पण घरेणामां अडेला मणि अने रत्नोधी तेओना हाथो शोभी रहा छे, दशे आंगळी लेमां पहेरेली वींटीओथी देओना पाँचा सुशो-सित छे, चूडामणि नामना विचित्र रत्नना विन्हथी तेओनो **मुकुट दी**पी रखो छे, तेओ सुरूप, महर्थिक, महायुतिक, महायसस्वी, महावळवाळा, महाप्रभाववाळा अने महासुखवाळा छे, तेओवां हृदयो हारवडे विराजित छे, कडां अने बहेरखांथी तेओनी भुजाओ सोमी रही छे, अंगद अने कुंडळ पहेरेलां छे, तेओना गालो कर्णपीठनामना आभरणधी झगमगी रखा छे, अनेक प्रकारनां घरेणांथी तेओना हाथो चळकी एका छे, तेओना माथा उपर माळा अने मुकुट एण विचित्र छे, तेओ कंल्याणकर वस्नने पहेरे छे, माला अने विलेपनने वापरे छे, शरीरे भास्तर छे, झ्लती माळा पहेरे छे अने दिव्य एवा वर्षे, रांधे, स्पर्के, संहनने, संस्थाने, ऋदिए, द्युतिए, प्रभाए, छायाए, तेजे अने शरीरना झगमगाटे तथा छैश्याए करीने दशे दिशाओने उद्योतित करे छे-प्रभासित करे छे. तथा तेओ पोत पोताना लाखो भवनावासी उपर, त्रायार्श्वश देवी उपर, लोकपाली उपर, पहराणीओ उपरा समाओं उपर, सेनाओं उपर, सेनाधिपतिओं उपर, आरक्षक देवो उपर अने बीजा पण भवनवासी देवो तथा देवीओ उपर अधिपतिवणुं, पुरपतिपणुं खामिपणुं, मर्रुपणुं अने विडलपणुं मोगवे छे, तेओने आज्ञामां राखे छे, सरदारी भोगवे छे अने धीजाओ पासे पण पोताना उपरिपणातुं पालन कराने छे तथा तेओं निख चालता नाट्य, गीत, वाजां-वीणा, हथेली, कांसी, हिटित अने मेघ जेवों मंभीर मृदंग ए बधाना दिव्यनाद वडे दिव्य अने भोग्य भोगोने भोगदतां लहेर करे छे.

[उपर आपेला अग्रुर-परिचयमां जणावेली केटलीक हुकीकता तो मानवी कियाओंने मळती आवे तेम छे, जेमके, त्यां ह्थीयारी होवानुं, चोकीदारों होवानुं, छाण विगेरेथी लिंपवानुं, खडी विगेरेथी घोळके हो अने ग्रुपंथी घूर बळतो होवानुं जणाव्युं छे तथा तेओने कपडा पहेरवानुं, शरीरे चंदन चोपडवानुं अने हाथ अने कानमां घरेणां पहेरवानुं जणाव्युं छे आ वधी रीतो मानवसमाजमां प्रचलित छे ते वात प्रत्यक्ष सिद्ध छे. आ विषे आवा प्रत्नो थाय छे के किर्ने त्यां-अग्रुरलेकमां-सांप्रदायिक रीते हाडपान वृथी, धानुनी खाणो नथी, अपि नथी तेम नशीओ नथी, तो पछी त्यां हथीयारी होनां बन्यां है केणे पद्यां है आण क्यांथी आव्युं है खडी क्यांथी आवी? हती खेती थया विना करणां होना थयां है केणे पच्यां शानुनां यन्त्रों क्यांथी आव्यां है केणे प्रचारों है केणे प्रवार है केणे प्रचार है केणे प्रवार है केणे केणे केणे प्रवार है केणे प्रवार है केणे है केणे है केणे है केणे है केणे प्रवार है केणे प्रवार है केणे है केणे है केणे प्रवार है केणे प्रवार है केणे प्रवार है केणे है है केणे है केणे

१. मूलच्छायाः—गौतम ! पूर्ववैरिवस्य वा वेदनोदीरणतया, पूर्वसंगतस्य दा वेदनोपरामगर्या, एवं खळ असुरकुमाराः देवास्तृतीयां पृथिवीं गताश, गमिष्यन्ति च :—अनु॰

- ७. प्र०—अंत्थि णं मंते ! असुरकुमाराणं देवाणं तिरियगाति-विसएं पण्णत्ते ?
 - ७. उ० हंता, अस्थि.
- ८. प्र०—केवइ(ति)यं च णं भन्ते ! असुरकुमाराणं देवाणं ''तिरियं गइविसए पण्णत्ते ?'
- ८. उ० गोयमा ! जाव-असंखेजा दीव-समुहा, नंदिस्स-वररं पुण दीवं गया य, गमिस्सन्ति य.
- ९. ४०—िकंपात्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा नंदिस्तरवरं दीवं गया य, गमिस्संति य ?
- ९. उ०—-गोयमा! जे इमे अर(रि)हंता मगवंता, एएसि णं जम्मणमहेसु वा, निक्समणमहेसु वा, णाणुष्पायमहिमासु वा, परिनिच्वाणमहिमासु वा, एवं खलु असुरकुमारा देवा नंदीसरवरं दीवं गया य, गमिस्संति य.
 - १०. प्र०-अत्थि णं असुरनुमाराणं देवाणं उर्दू गतिविसए ?
 - १०. उ०—हंता, अत्थि.
- ११. प्र०—केवइ(ति)यं च णं भन्ते ! असुरकुमाराणं देवाणं उद्दं गतिविसए ?
- ११. उ० गोयमा ! जावऽचुए कप्पे, सोहम्मं पुण कप्पं गया य, गमिस्सति य.
- १२. प्रo—किंपत्तियं णं भन्ते ! असुरकुमारा देवा सोहम्मं कप्पं गया य, गमिस्संति य ?
- १२. उ०—गोयमा ! तेास णं देवाणं भवपच्चइअवेराणुवंधे, ते णं देवा विकुट्येमाणा, परियारेमाणा, वा आयरवखे देवे वित्ता-सेंति, अहालहुसगाइं रयणाइं गहाय आगए एगंतमंतं अवक-(का)मंति.
- १२. प्र०--- आस्थि णं मंते ! तेसिं देवाणं अहालहुसगाइं रयणाइं ?

- ७. प्र०—हे भगवन् ! ते असुरकुमारीमां एवं सामर्थ्य छे के तेओ, पोताना स्थानथी तिरछे जह शके ?
- ७. उ०—हे गौतम! हा, तेओमां पोताना स्थानथी तिरछे जवानुं सामर्थ्य छे.
- ८. प्रं०—हे भगवन् ! ते असुरकुमारो पोताना स्थानथी के-टला भाग सुधी तिरछा जइ शके छे?
- ८. उ०—हे गौतम ! पोताना स्थानधी यावत्—असंख्य द्वीप समुद्रो सुधी तिरछा जवानुं तेओनुं मात्र सामर्थ्य छे. पण तेओ नंदीधर द्वीप सुधी तो गया छे, जाय छे अने जशे पण खरा.
- ९. प्र०—हे भगवन्! ते असुरकुमारो नंदीधर द्वीर सुधी जाय छे, गया छे अने जशे तेनुं शुं कारण?
- ९. उ०—हे गौतम! जे आ आरहंत भगवंतो छे, एओना जन्म-उत्सवमां, दीक्षा-उत्सवमां, झानोत्पत्तिमहोत्सवमां अने परिनिर्वे जना उत्सवमां ए असुरकुमार देवो नंदीश्वर द्वीप सुधी जाय छे, गया छे अने जशे-अरहंतना जन्म वगेरेना उत्सवो, असुरकुगार देवोने नंदीश्वर द्वीप जवानुं कारण छे.
- १०. प्र०—हे भगवन् ! ते असुरकुमारामां एवं सामर्थ्य छे के तेओ, पोताना स्थानथी उंचे जइ शके ?
- १०. उ०—हे गौतम! हा, तेओमां पोताना स्थानधी उंचे जवानुं सामर्थ्य छे.
- ११. प्र०—हे भगवन्! ते असुरकुमारो पोताना स्थानथी केटटा भाग सुधी उंचे जइ शके छे?
- ११. उ०—हे गौतम! तेओ पोताना स्थानधी यावत्—अच्युत कल्प सुधी उपर जइ शके छे—तेओनी उंचे जवानी मात्र आटली शक्ति छे. परंतु तेओ त्यांसुधी कोईवार गया नथी, जशे नहीं अने जता पण नथी. किंतु सौधर्म कल्प सुधी तो तेओ जाय छे, गया छे अने जशे पण खरा.
- १२. प्र०—हे भगवन् ! ते असुरकुमारो उंचे सौधर्मकल्प सुधी जाय छे, गया छे अने जशे तेनुं शुं कारण ?
- १२. उ०—हे गौतम ! ते देवोने जन्मधी ज वैरानुबंध (भव-प्रत्यिक वैर) छे. बैक्षियरूपोने बनावता तथा भोगोने भोगवता ते देवो आत्मरक्षक देवोने त्रास उपजावे छे तथा यथोचित नानां नानां रानोने छई पोते उज्जड भागमां चाल्या जाय छे.
- १२. प्र॰—हे भगवन्! ते देवो कने यथोचित नानां नान रत्नो होय छे ?

^{9.} मूळच्छायाः—अस्ति भगवन् ! असुरकुमाराणां देवानां तिर्यम्भतिविषयः प्रह्नतः ? हन्त, अस्तिः कि ।च भगवन् ! असुरकुमाराणां देवानां तिर्यग्न-तिनिषयः प्रह्मतः ? गातम ! यावत्—असंख्येया द्वीप-समुद्राः, नन्दीश्वरवरं पुनर्शुं गताश्च, गमिष्यन्ति च. किंग्रस्यं भगवन् ! असुरकुमाराः देवाः नन्दीश्वरवरं द्वीपं गताश्च, गमिष्यन्ति च ? गातम ! ये इमे अईन्तो भगवन्तः, एतेषां जन्ममहेषु दा, निष्कमणमहेषु दा, हानोत्यादमहिमासु दा, परिनिद्राणमिष्ठासु वा, एवं खछ असुरकुमाराः देवाः नन्दीश्वरवरं द्वीपं गताश्च, गमिष्यन्ति च. अस्ति असुरकुमाराणां देवानाम् ऊर्ध्व गतिविषयः ? हन्त, अस्ति. किवच भगवन् ! असुरकुमाराणां देवानाम् ऊर्ध्व गतिविषयः ? गातम ! यावत्—अच्युतः कल्पः, सै।धर्म पुतः कल्पं गताश्च, गमिष्यन्ति च. किंप्रत्ययं भगवन् ! अपुरकुमाराः देवाः सौधर्म कल्पं गताश्च, गमिष्यन्ति च ? गातम ! तेषां देवानां भवप्रश्चयवानुबन्धः, ते देवाः विकुर्वन्तः, परिचारयन्तो वा आत्मरक्षकान् देवान् वित्राः स्वयन्ति, यथाल्युसकानि रज्ञानि रहीरवा आरमना एकान्तम् अन्तम् अवकामन्ति. सन्ति भगवन् ! तेषां देवानाम् यथाल्युसकानि रत्नानि ?:—अनु•

१३. उ० — हंती, अस्थि.

१४. प्र०—से कहमिआणि पकरेंति ?

१४. उ०-(तओ) से पच्छा कायं पव्यहांति.

१५. प्र०-पमू णं भंते ! असुरकुमारा देवा तत्थ गया चेव समाणा ताहिं अच्छराहिं सर्खि दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरित्तए.

१५. उ०-णो इणहे समहे, से (ते) णं तओ पिडनियत्तंति, ततो पाडिनियत्तित्ता इहमागच्छंति, जइ णं ताओ अच्छराओ आढायंति, परियाणंति, पभू णं ते असुरकुमारा देवा ताहिं अ-च्छराहिं सिद्धं दिव्याइं भोगभोगाइं मुंजमाणा विहरित्तए ; अह णं ताओं अच्छराओं नो आढायंति, नो परियाणंति, णो णं पमू ते असुरकुमारा देवा ताहिं अच्छराहिं सिद्धं दिव्वाई भोगभोगाई भुंजमाणा विहरित्तए; एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा सो-हम्मं कप्पं गया य, गमिस्सांति य.

१६. ४० — केवइअकालस्स णं मंते । असुरकुमारा देवा उडुं उपयंति, जाव-सोहम्मं कणं गया य, गमिस्संति य ?

१६. उ०—गोयमा ! अणंताहिं उस्तिष्णीहिं, अणंताहि अवसापिणीहिं समतिकंताहिं, अत्थि णं एस भावे लोयच्छेरयभूए समुप्पज्ञइ, जं णं असुरकुमारा देवा उडूं उप्पयंति, जाव-सोहम्मी

१७. प्र०-किं णिस्साए णं मंते ! असुरकुमारा देवा उड्डं उपयन्ति, जाव-सोहम्मो कथो ?

१७, उ०-गोयमा! से जहा नाम ए सबरा इ वा, बब्बरा इ वा, ढं (टं) कणा इ वा, भुत्तुआ इ वा, पण्हया (पल्ह्या) इ वा, पुर्लिदा इ वा एगं महं रण्यं वा, ख (ग) हुं वा, दुग्गं वा,

Jain Education International

१३. उ०-- हे गौतम! हा, तेओनी पासे नानां नानां रत्नो होय छे.

१४. प्र० — हे भगवन् ! ज्यारे ते असुरो, वैमानिकोनां रानो उपाडी जाय त्यारे वैमानिको तेओने छुं करे ?

१४. उ० — हे गौतम! रत्नो लीघा पछी ते असुरोने (वै-मानिको द्वारा) शारीरिक व्यथा भोगववी पडे छे.

१५. प्र० — हे भगवन् ! उपर गया एवा ज ते असुरकुमार देवो त्यां रहेळी अप्सराओ साथे दिव्य अने भोगववा योग्य भोगोने भोगवी शके खरा-भोगवता रही-विहरी शके खरा ?

१५. उ० - हे गौतम ! ए प्रमाणे करवाने ते असुरकुमार देवो सनर्थ नथी. किंतु तेओ लांधी पाछा वळे छे अने अहीं (पोताने स्थाने) आवे छे. जो कदाच ते अप्सराओ तेओनो आदर करे, तेओने खामी तरीके स्वीकारे तो ते असुरकुमार देवो, ते-त्यां रहेटी-उपरनी-अप्सराओं साथे दिव्य अने भोगववा योग्य भोगोने भोगवी शके छे-भोगवता रही-विहरी-शके छे. हवे क-दाच ते अप्तराओं तेओनो आदर न करें तथा तेओने स्वामी तरीके न स्वीकारे तो ते असुरकुमार देवो, ते अप्सराओ साथे दिव्य अने भोगववा योग्य भोगोने भोगवी शकता नथी. हे गौतम ! िअसुरकुमार देवो, सौधर्म कल्प सुधी गया छे, जाय छे अने जहां ने तेनुं पूर्व प्रमाणे कारण छे.

१६. प्र०--हे भगवन् ! केटले समये-केटलो समय वील्या पछी-असुरकुमार देवो उंचे उत्पत्ते छे-जाय छे तथा यावत्-सौधर्म करुर सुधी-गया छे अने जशे ?

१६. उ० — हे गौतम! अनंत उत्सर्पिणी अने अनंत अव-सर्पिणी वीत्या पछी लोकमां अचंबो पमाङनार ए भाव उत्पन्न थाय छे के, असुरकुमार देवों उंचे उत्तों छे अने यावत्-सौधर्म कल्प सुधी जाय छे.

१७. प्र० — हे भगवन् ! कइ निश्रावडे - कोनो आश्रय करीने --ते असुरकुमार देवो यावत्-सौधर्म कल्प सुधी जाय छे ?

१७. उट - हे गीतम ! जेम कोइ एक शैंबरजातिना छोको, बन्बरजातिना छोको, ढंकणजातिना छोको, भुत्तुअजातिना (१) छोको, पण्हजाति (१) ना छोको अने पुर्छिद छोको एक मेाटा जंगछनो, दरिं वा, विसमं वा, पन्वयं वा णीसाए सुमहल्लमवि आसवलं खाडानो, जलदुर्गनो के स्थलदुर्गनो, गुफानो, खाडा अने वृक्षोथी

१. मूलच्छायाः हन्त, सन्ति. अथ कथम् इदानीं प्रकुर्वन्ति ? तेषां पश्चात् कायं प्रव्ययन्ते. प्रभी भगवन्! असुरकुमारा देवास्तत्र गताश्चेव समानास्तामिरप्सरोमिः सार्थं दिव्यानि भोगभोग्यानि भुजाना विहर्तुम् १ नाऽयम् अर्थः समर्थः. अथ ततः प्रतिनिवर्तन्ते, ततः प्रतिनिवृत्त्य अत्राऽश-च्छन्ति, यदि ता अप्सरसः आदियन्ते, परिजानन्ति, प्रभवस्ते असुरक्कमाराः देवास्ताभिरप्सरोभिः सार्धं दिव्यानि भागभोग्यानि भुजाना विहर्तुम्, अथ ताः अप्सरसो नो आदियन्ते, नो परिजानन्ति नो प्रभवस्ते असुग्कुमारा देवास्ताभिः-अप्सरोभिः सार्थं दिव्यानि भोगभोज्यानि मुझानाः विहर्तुम्, एवं सस् गौतम ! अषुरकुमाराः देवा सै।धर्मं कल्पं गताश्व, गमिष्यन्ति च. कियत्कालेन भगवन् ! असुरकुमाराः देवाः अर्ध्वम् उतातन्ति, यावत् सौ।धर्मं कल्पं मताश्च, गमिष्यन्ति च ? गातम ! अनन्ताभिः उत्सर्पिणीभिः, अनन्ताभिः अवसर्पिणिभीः समतिकान्ताभिः, अस्ति एष भावो लोकाश्चर्यभूतः समुत्यसते, यद् असुरकुमारा देवाः ऊर्ध्वम् उत्पतन्ति, यावत्-साधर्मः कल्पः. कि निश्राय भगवन् । असुरकुमारा देवा ऊर्ध्वम् उत्पतन्ति, यावत्-साधर्मः कल्पः ? गैतिम ! स यथा नाम शवरा वा, वर्बरा वा, ढरकणा वा, भुत्तुका वा, प्रश्नका वा, पुलिन्दा वा, एकं महद् अरण्यं वा, गर्ता वा, दुर्ग वा, द्री वा, विषमं वा पर्वतं वा निश्राय सुमहद् अपि अश्ववलम्:---अनुः

१. शबर, बबर, ढंकण, मुत्तुअ, पल्ह अने पुलिंद-ए छ ए शब्दे। जूदी जूदी अनाय जातिना सूचक छे. एमांनां केटलाक शब्दे। तो अमार्थ देशना पण बाबक छे. अनार्य देशे:नी अने अनार्य जातिनी गणशीने प्रसंगे ए विषे सूत्रकृतांग, प्रश्तन्याकरण अने प्रधापना उपागमां नीचे प्रमाणे जणान्धु हो:---

वी, हस्थिबलं वा, जोहबलं वा धणुबलं वा आगलेंति, एवामेव असुरकुमारा वि देवा णण्णत्थ अरिहंते वा, अरिहंतचेइआणि वा, अणगारे वा भाविअपणो निस्ताए उडूं उप्पयंति, जाव-सोहम्मो क्यो.

१८. प्र०—सन्वे नि णं भंते! असुरकुमारा देवा उड्ढं उ-प्ययंति, जाव सोहम्मो कपोे?

१८. उ०—गोयमा! णो इणहे समहे, महिब्दिया णं असु-रकुमारा देवा उडूं उप्पयंति, जाव-सोहम्मो कप्पो.

१९. प्र०--एस वि णं भंते! चमरे असुरिंदे, असुरकुमार-राया उर्डू उपाइअपुर्वि जाव-सोहम्मो कप्पो!

१९. उ०- हंता, गोयमा!.

२०. प्र०—अहो णं भंते! चमरे, असुरिदे, असुरकुमारराया महिन्द्रीए, महज्जुईए, जाव-काहिं पविद्वा?

" सग-जवण-सबर-बब्बर-काय-मुरुंडी-दुगे।ण-पक्षणया । अवखाग-हूण-रे।मस-पारस-खस-खासिया चेव ॥ १ दुविल-यल-वे।स-वे।कस-भिलं-Sद-पुलिंद-कोंच-समर-क्या । कोंबे।य-चीण-चंचुय-मालय-दिमल-कुलक्खा य ॥ २ स्त्रकृतांग पृ० १२३.

"सक-जवण-सबर-बब्बर-गाय-मुरुंड-उद-भडग-तित्तिय-पक्षणिय-कुरुक्ख-गोड-सीहरू-पारस-कोंच-अंद-दिवरु-बिहरू-पुष्टिंद-अरोस-डोंब-पोक्षण-गंधहा-रग-बहर्लय-जह-रोम-मास-बउस-मरुया-चुंचुया य चूलिया कोंकणगा मेत्त-पण्हत-मारुव महुर-आभासिय-अणक-चीण-रुहासिय-खस-खासिया नेहुर-भरहट्ट-मुट्ठिअ-आरब-डोबिलग कुहण-केक्य-हूण-रोमग-रुह-मुरुग चिलायदि-स्यवासी य "—प्रश्नव्याकरण १० १४.

"सगा जवणा चिलाया सबर बब्बर-मुरंड-उष्ट-भडग-निण्णग-पक्षणिया कुलक्ख-गोड-सिंहल-पारस-गोवा कोंच अंवडइ-दिमल-चिलल-पुलिंद-हार-ओस-दोब-वोक्कण अणग अंधा हारवा पहिलय अज्झल-रोम मास बउसा मलया य बंधुया य सूयिल-कोंकणग-मेय-पल्टव-मालव-मग्गर-आभासिआ कणबीर ल्हिसिय-खसा खासिय- णेहूर-मोंड-डेंग्विल.गलओस-पओस-ककेयग-हण-रोमग-हण-रोमग-भर मरुय-चिलायितसयवासी य"—प्रज्ञ पना उपांग ए० ५५.

गीच थएड भागनो अने पर्वतनो आश्रय करी एक सारा अने मोटा पण घोडाना उदकरने, हाथिना उदकरने, योघाओना उदकरने रने, धनुष्य (धनुष्यधारी) ना उदकरने हंफाववानी हिंमत करें छे, ए ज प्रमाणे असुरकुमार देवो पण अरिहंतोनो, अरिहंतनां चैस्योनो अने भावित आत्मा साधुओनो आश्रय करी उंचे यावत्-सौधर्भ करुप सुधी उत्पते—जाय—छे. पण ते सिवाय (अरिहंत विगेरेना आश्रय सिवाय) जता नथी.

१८. प्र०—हे भगवन्। छुं बधा य असुरकुमारो यावत्— सौधर्म करा सुधी उंचे उत्पते—जाय-छे?

१८. उ०—हे गौतम! ए अर्थ समर्थ नथी—बधा य असुर-कुमार देवो उंचे जता नथी. किंतु मोटी ऋदिवाळा असुरकुमार देवो उंचे यावत्—सौधर्म कल्प सुधी जाय छे.

१९. प्र०—हे भगवन्! शुं ए असुरेंद्र, असुरराज चमर पण कोइ वार पूर्वे उपर यात्रत्—सोधर्म कल्प सुधी गएलो छे?

१९. उ०-हे गौतम! हा, (पूर्वे ए चमर पण उपर गएलो छे.)

२०. प्र० — हे भगवन् ! नीचे रहेतो असुरेंद्र, असुरराज चमर केवो मोटो ऋदिवाळो छे, केवो मोटो कांतिवाळो छे अने यावत्— तेनी ते ऋदि क्यां गइ !

"शक, यवन, शबर, वर्बर, काय, मुरंड, दुगोळ (१) पक्वणक, शा. ख्याक, हूण, रोमस, पारस, खस, खासिक, दुविल, यल, (१) वोस (१) बोक्स, भिह, अंध्र, पुलिंद, केंग्न, अमर, ह्य, यांबोज, चीन, चुंचुक, मालय (१) इमिल अने कुलाक्ष " ए वधा अनार्यदेशो छे:—मूत्रकृ० ५० १२३.

'शंक, यवन, शंबर, बर्बर, काय, मुरंड, उद, भड़क, तिलक, पक्षिक, कुलाक्ष, गाँड, सिंहल, पारस कौंच, अंध्र, (अंध) द्राविड, बिल्वल, पुलिन्द, अरोष, डेंग्ब, पोक्षण, गंधहारक, बहलीक, कल, रोम माष, बकुश, मल्य, चुंचुक, चुलिक (चोल?), कोंकण, भेद, पहन, मालवा, महुरा, आभाषिक, अनक (अनकी), चीन, त्हासिक, खस, लाखिय, मेहर, महाराष्ट्र, मांधिक, आरब डोबिलक, कुहण, केंकय, हूण, रोमक, रुह, महक, अने किरात देशना रहीश "-ए बधी अनार्य प्रजा छे:—- प्रदनव्या० पृ० १४.

"शक, यवन, किरात, शबर, वर्बर, मुरंड, उद्दं, भडक, निम्नक पक्षणिक, कुलाक्ष, गाँड, सिंहल, पारस, गोध, केंग्च, अंवड (१) द्रमिल, चिल्लल, पुलिंद, हार (१), ओस (१), डोंब, बोक्षण, अनक, अंव (घ्र), हारव-पहलिक, अध्यल-अध्वर, रोम, भाष, वकुश, मलय, वंधुक, सूयलि (१) केंग्कण, मेद, पल्हव, मालव, मग्गर (१), आमाविक, कणवीर, ल्हासिक, खस, खासिक, नेहूर, मृढ, डेंगिवल, गलओस (१) प्रदेष, क्येंतक, हण, रोमक, हूण, रोमक (१) भरु, गरुक, अने किरात ए बधी धनार्यजातिओं छे:—प्रज्ञापना० पृ० ५५.

भा वधा नामोमां पाठ-वैषम्यने लीधे खरां नामोतुं प्रथक्तरण थई शकतुं नथी. तो पण उत्तर भावेलां (शबर, वर्वर पल्हय वा पण्हय, पुर्लद्) ए चार नामो तो ए त्रणे पानोमां नेंाधाएलां छे—अनु०

9. मूलच्छायाः—वा, हस्तिवलम् वा, योधवलम् वा, धनुर्वलं वा आकलयन्ति, एवमेव असुरकुमारा अपि देवाः नान्यत्र (नन्वत्र) अर्हतो वा, अर्ह्वस्थानि वा, अनगारान् वा भ वितारमनो निश्राय अर्ध्वम् उत्पतन्ति, यावत्—सै।धर्मः कल्पः सर्वेऽपि भगवन् । असुरकुमाराः देवा अर्ध्वम् उत्पतन्ति यावत्—सै।धर्मः कल्पः १ गातमः । नाऽयम् अर्थः समर्थः, महिंदाः असुरकुमाराः देवा अर्ध्वम् उत्पतन्ति, यावत्—सै।धर्मः कल्पः १ गातमः । नाऽयम् अर्थः समर्थः, महिंदाः असुरकुमाराः वेदा अर्थम् उत्पतन्ति, यावत्—सै।धर्मः कल्पः । वमरोऽस्रेन्द्रः, असुरकुमारराजो सहिंदाः, महाद्युतिकः यावत्—कुत्र प्रविद्याः असुरकुमारराजो सहिंदाः, महाद्युतिकः यावत्—कुत्र प्रविद्याः —अनुष्

२०. उ०—क्रुंडागारसालादिइन्तो भाणिअन्वो.

२०. उ०—हे गौतम! पूर्वे वहा प्रमाणे कूटाकार शालानुं उदाहरण कहेवुं.

- १. प्रथमोदेशके देवानां विकुर्वणा उक्ता, द्वितीये तु तिव्विशेषाणामेवाऽसुरकुमाराणां गतिशक्तिप्ररूपणाय इदमाहः 'ते णं' इसादि. 'एवं असुरकुमार'-इसादि. एवमनेन स्त्रक्रनेणेति, स वैवमः—''उविरि एमं ओयणसहरसं ओगाहिता, हुन्न नेमं जोयणसहरसं वजेता, मज्ये अन्नहत्तरे, जोयणसयसहरसे, एत्थ णं असुरकुमाराणं देवाणं चउसाई भवणावाससयसहरसा भवतीति अवस्थायं'' इसादि. 'वेउव्वेमाणा व' ति संरम्भेण महद् वैकियशरीरं कुर्वन्तः, 'परियारेमाणा व' ति परिचारयन्तः—'रक्षीयदेवीनां भोगं कर्तुकामा इत्यर्थः. 'अहालहुस्सगाइं' ति यथा-उचितानि, लघुस्वकानि अमहास्वरूपणि, महतां हि तेषां नेतुम्, गोपियतुं वा अशक्यत्वादिति यथालघुस्वकानि, 'अश्य अलघूनि—महान्ति—वरिष्डानि'' इति वृद्धाः. 'आयाए' ति आत्मना स्वयमित्पर्यः. 'एगंत' ति विजनम्, 'अतं' ति देशम्, 'से कहं इआणि पकरोति' अथ किम् इदानीम्—रत्नप्रहणानन्तरसेकान्तापक्रमणकाले प्रकुर्वन्ति वैमानिका रत्नाऽऽदातृणामिति. 'तओ से पच्छा कायं पव्यहंति' ति ततो रत्नादानात्, 'पच्छ' ति अनन्तरम्, 'से' ति एतेषां रत्नादातृगम्—असुराणां कायम्—देहम्, प्रव्यथन्ते—प्रहारे-र्मधनिति वैमानिका देवाः. तेषां च प्रव्यथितानां वेदना भवति जघन्येनान्तर्मुहर्तम्, जत्कृष्टतः षण्मासान् यावत्, 'सवरा इ वा' इत्यादौ शवरादयोऽनार्यविशेषाः. 'साइं व' ति गर्ताम्, 'दुग्गं व' ति जल्दुर्गादि, 'दरि व' ति दरीम्—पर्यतकन्दराम्, 'विसमं व' ति विषम्भ—गर्ता--तर्यविशेषाः. 'साइं व' ति गर्तिमार' ति निश्रया--आश्रिय, 'धणुवले व' ति घनुर्घरत्वम्, 'आगलेति' ति आकळयन्ति 'जेष्यामः' इत्यध्यवस्यन्ति—इति 'नण्णस्थ' ति ननु निश्चितम् 'अरिहंते वा-निस्साए उद्धुं उप्ययंति' अत्र इहरूोके, अथवा नान्यत्र तद् निश्चाय अन्वत्र न तां विनेत्यर्थः.
- १. प्रथम उद्देशकमां देवोनी विकुर्वणा--शक्ति संबंधे हकीकत कहेवाई. आ बीजा उद्देशकमां पण देवोनी-असुरकुमारोनी--ज गतिशक्ति **असु**रकुमार .— संबंधे प्ररूपण थरो. अने ते माटे कहे छ के, ['ते णं' इत्यादि.] ['एवं असुरकुमार'-इत्यादि.] आ सूत्रक्रमवंडे कहेवुं. ते आ प्रमाणे:—''उपर एक हजार योजन अवगाहीने अन नीचे एक हजार योजन छोडी दइन वचे एक लाख अने अहुयोतेर हजार योजन जटला भागमां असुरकुमार परिचारणा. देवोना चोसठ लाख भवनावासो छे, एम कह्युं छे-इत्यादि. " [' वेउच्येमाणा व ' ति] संरंभ पूर्वक मोटा वैकिय शरीरने करता. ['परियारेमाणा व'ति] परिचारणा करता-बीजानी देवीओ साथ भोग करवानी इच्छावाळा. [' अहाल हुरसगाई ति] यथोचितपणे नाना स्वस्त्पवाळां अर्थात् नानां. ते असुरो नानां रत्नोने ज उपाडी जाय है, कारण के, तेओ मोटा रत्नोने छई जई शकता नथी तेम तेओने संताडी पण शकता नथी माटे बोन् असामर्थः उपर नानां नानां रत्नो कहां छे. ['अहाऽलहुस्सगाइं'] आ सन्दनो बृढ पुरुषोए आ प्रमाणे अर्थ कर्यो छे:-अथाऽलघु-स्वकानि अर्थात् नानां नहीं पण मोटां एटले उत्तम जातनां रत्नो. " [' आयाए ' ति] पोतानी जाते. [' एगंतं ' ति] निर्जन-उजड ['अंतं'ति] भागमां. ['से कह इआणि पकरेंति '] हवे-रत्नोतुं ग्रहण कर्या पछी-एकांत जग्याए जवाने समये ते रत्नोने छेनार असुरोने वैमानिको शुं करे छे ? ['तओ से पच्छा कार्य पव्यहेंति 'ति] रत्नोनुं ग्रहण कर्या [' पच्छ ' ति] पछी रत्नोने लेनारा अथवा रत्नोने पाछां नहि देनारा एवा असुरोना शरीर उपर प्रहार द्वारा वैमानिको पीडा उत्पन्न करे छे. पीडा पामेला असुरोने वेदना थाय छ अने ते वेदना ओछामां ओछुं अंतर्मुहुर्त सुधी अने वधारेमां मार अने पीडा. वधारे छ महिना सुधी रहे-थाय छे. ['सबा इ वा '] इत्यादि सूत्रमां शबर वेगरे एक प्रकारना अनायों छे. ['खडुं व ' ति] खाडानी, श्वरादि. [' दुग्गं व ' ति] जळदुर्ग के स्थळदुर्गनो, [' दिरं व ' ति] पर्वतनी गुफानो, [' विसमं व ' ति] खाडा अने बृक्षोथी गीच जमीननो, ['निस्साए' ति] आशरो लहने ['धणुवल व'ति] धनुर्धरना लक्करने, ['आगलेंति 'ति] आकळे छे अर्थात् 'अमे तेने जीती लेशुं' एवो निश्य करे छे. ['नण्णस्थ : ति] नन्दत्र-आ लोकमां अरिहंतनो ज आश्रय-आशरो-लइने (असुरो) उंचे जाय छे अथवा नान्यत्र-अरिहंतनो आशरो लीघा अरिइंतोनी विना तेओ उंचे जइ शकता ज नथी. निश्रा.
 - २१. प्र०—चैमरेणं भंते ! असुरिंदेणं असुररण्णा सा दिव्या देविड्डी, तं चेव जाव–किण्णा लडा, पत्ता, अभिसमण्णागया ?
 - २१. उ०-एवं खलु गोयमा ! ते णं काले णं, ते णं समए णं इहेन जंबूदीने दीने, भारहे नासे निंझगिरिपायमूले नेभेले नामं
- २१. प्र० हे भगवन् ! असुरेंद्र, असुरराज चमरे ते दिव्य देवऋदि अने क्षवत् ते बधुं केवी रीते लब्ध कर्युं, केवी रीते प्राप्त कर्युं अने केवी रीते सामे आण्युं ?
- २१. उ० हे गौतम ! ते काळे, ते समये आ ज जंबूद्वीप नामना द्वीपमां, भारत वर्षमां विंध्य नामे पहाडनी तळेटीमां

१. मूलच्छायाः--कूटाकारशालाइष्टान्तो भणितव्य :- अनु०

२. प्र॰ छायाः—उपर्येकं योजनसहस्रम् अवगाह्य, अध्येकं योजनसहस्रं वर्जियत्वा, मध्येऽष्टसप्तितियाजनशतसङ्ख्र णि, अत्राऽसुरकुमाराणां देवानां चतुष्षिर्भवनाऽऽवासशतसहस्राणि भवन्ति इति आख्यातम्. ३. अस्य सूत्रस्य अवचूर्णो अयं पाठः—अनु ०

९. आने मळते। पाठ असुरकुमारोना वर्णकमां प्रज्ञापना (क॰ आ० ए० ९९) मां छे. २, अवचूर्णिकार महाशयोपः—अनु०

र. मृहच्छायाः—समरेण भगवन् । असुरेन्द्रेण असुरराजेन सा दिव्या देवधिः, तसैव यावत्-केन हस्था, प्राप्ता, अभिसमन्दागता? एवं खळु गुन्तम ! सहिमन् काले, तस्मिन् समये इहैव जम्मूद्रीये द्वीपे, भारते वर्षे विमध्यगिरिपादमूले वेमेला नाम—अनु०

सांनिवेसे होतथा. व-णओ. तत्थ णं वेभेले सांनिवेसे पूरणे नामं गाहावई परिवसइ- अड्डे, दित्ते, जहा ताम छिस्स वत्तव्या तहा नेयव्वा, नवरं–चउप्पुडयं दारुमयं पडिग्गहिअं करेत्ता, जाव– विपुलं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं जाव-सयमेव चउप्पुडयं दारुमयं पिंडरगहिअं गहाय मुंड भिवत्ता दाणामःए पव्यज्ज ए पट्वइए वि य णं समाणे तं चेव जाव-आयावणम्मीओ पचोरु-ित्ता सयेभेव चउणुडयं दारुमयं पडिग्गहिअं गहाय वेभेले सं-निवेसे उच-नीअ माज्झिमाइं कुलाइं घरममुदाणस्स निवसायारियाए अडेता, जं में पुढमें पुढये पडड़ कप्पइ में तं ५ंधे पाहे आणं दल-इत्तए, जं मे दोचे पुडए पडड़ कष्मइ मे तं काग-सुणयाणं दलइ-त्तए, जं मे तचे पुडये पडइ कप्पइ मे तं मच्छ-कच्छमाणं दल-इतए, जं मे चडरथे पुडये पडइ मे कपड़ तं अपणा अहारेत्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेड, कहां पाख्यमाए रयणीए तं चेच निरवसेसं जाय-जं मे चउत्थे पुडये पडइ तं अप्पणा आहारं आहारेइ. तए णं से पूरणे बल्तवस्सी तेणं ओरालेणं, विउलेणं, पयत्तेणं परग-हिएणं, बालतवोकम्मेणं तं चेव जाव-वेभेलस्स सचिवेसस्स मञ्झं-मज्झेणं निग्गच्छति, पाउअ-कुंडिअमादीअं उवकरणं, चउप्पुडयं दारुमयं पडिग्गहियं एगंतमंते एडेइ, वेभेलस्स संनिवेसस्स दाहिण-पुरिक्षमे दिसीमाने अद्धिनयत्तिणयमंडलं आलि.हित्ता संलेहणाजूस-णाजूसिए, भत्तपाणपिडियाइविखए पाउवगमणं निवण्णे.

वेभेल नामनो संनिवेश हतो. वर्णक. ते वेभेल नामे संनिवे-शमां पूरण नामनो गृहपति रहेतो हतो. ते आद्य अने दीन्त हतो. ब्रामल्टितपस्वीनी पेठे आ पूरणनी पण वक्तव्यता कहेबी. विशेष ए के, चार खानावाळुं टाकडानुं पात्र करीने यावत्—विपुल खान, पान, खादिम-मेवा वगेरे अने स्वा-दिन-मशाला वगेरे (भात भातना पदार्थें। शातिने भोजन आपी) यावत्—पोतानी मेळे ज ते चार खानावाळुं लाक-डानुं पात्र लड्डने, मुंड थड्डने 'दानामा' नामनी प्रष्रज्य बडे ते पूरण गृहपति प्रमंजित थयो. (अहीं बधुं पूर्व प्रमाणे ज कहेतुं.) यावत्-ते पूरण तपस्वी आतापन भूभिधी नीचे आवी, पोतानी मेळे त ते चार खानावाळुं लाकडानुं पात्र लई ते वेमेल नामना सन्निवेशमां उंचा नीचा अने मध्यम कुळोशां भिक्षा लेवानी विधि पूर्वक भिक्षा माटे फर्यो. अने भिक्षाना नीचे प्रमाणे चार भागो कर्या-जे कांइ मारा पात्रना पेला खानामां आने ते मारे वाटमां मळता वटेमार्गुओने देवुं पण खावुं नहीं, जे काइ मारा पात्रना बीजा खानामां आवे ते मारे कामडा अने कुतराओने खवरावतुं, जे कांइ मारा पात्रना बीजा खानामां पडे ते मारे माछलांओने अने काचबाओने खबराबी देवुं अने जे कांइ मारा चेथा पानामां पडे ते मारे खावाने माटे कल्प छे. एम करीने, एम विचारीने काले प्रकाशवाळी रात्री थया पछी—अहीं बधुं पूर्व प्रमाणे ज कहेतुं. यावत्—जे मारा चौथा खानामां पडे छे तेना पौते आहार करे छे. पछी पूरण नामे बालतपस्वी, ते उदार, विपुल, प्रदत्त अने प्रगृहीत बालतपङ्कर्मवडे अहीं बधुं पूर्व प्रमाणे ज कहेतुं यावत्-ते वेभेल नामना संनिवेशनी वचीवच नीकळे छे, नीकळी पावडी तथा कुंडी वगेरे उपकरणने तथा चार खानाबाळा लाकडाना पात्रने एकांते मुकी ते वेभेल संनिवेशथी अग्निख्णे अर्धनिवर्तनिक मंडळने आळेखे छे. आळेखी, संरेखना ज्षणाधी ज्षित धइ, खान तथा पाननो त्याग करी ते पूरण तपस्वी पादपोपगमन नामनुं अनञ्चन स्वीकारी 'देवगत शया.

^{9.} मूलच्छायाः—संनिवेशोऽभवत्. वर्णकः तत्र वेमेले संनिवेशे पूरणा नाम गृहपतिः परिवसति-आल्डाः, दीन्तः, यथा तामलेः वक्तव्यता तथा हात्या, नवरम्-चंतुष्पुटकं दारमयं प्रतिप्रदं गृहत्वा, यावत्-विपुलम् अश्नम्, पानम्, खादिमम्, खादिमं यावत्—खयमेव चतुष्पुटकं दारमयं प्रतिप्रदं गृहीत्वा मुण्डो भूत्वा दानमय्या प्रव्रज्यया प्रविज्ञतेऽपि च सन् तत् चेव यावत्—आतापनभूमितः प्रत्यवरुद्ध खयमेव चतुष्पुटकं दारमयं प्रतिप्रदं गृहीत्वा वेमेले संनिवेशे उच नीचः मध्यमानि कुलानि गृहसमुदानस्य भिक्षाचर्यया अहित्वा यद् मम प्रथमे पुटके पति कल्पते मम तत् पिथ पिथकानां दातुम्, यद् मम द्वित्ये पुटके पति कल्पते मम तत् पिथ पिथकानां दातुम्, यद् मम वर्त्वाये पुटके पति कल्पते सम तद् मत्या—कन्त्रभानां दातुम्, यद् मम चतुर्थे पुटके पति सम कल्पते तद् आत्मनः आहर्तुम्—इति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां तच्चेव निरवशेषं यावत—यद् मम चतुर्थे पुटके पति तद् आत्मनः आहर्त्वम् आहर्यति. ततः स पूरणो बालतपस्यी तेन उदारेण, विपुलेन, प्रयत्नेन प्रगृहीतेन वालनपस्कर्मणा तच्चेव यावत—वेमेलस्य सिववेशस्य मध्ममध्येन विभिन्छति, पादुका-कृण्डिकादिकम् उपकरणम्, चतुष्पुटकं दारमयं प्रतिप्रहम् एकान्तम् अन्तं स्थापयित, वेमेलस्य सिववेशस्य दक्षिण—पारस्ये दिग्भागे अर्थनिवर्तनिकमण्डलम् आलिह्य संलेखना—जूष्णाज्यितः, प्रसाहयातगक्त-पानः पादपोपगमनं निपन्नः—अनुर्वादक्षमः चतुष्यातगक्त-पानः पादपोपगमनं निपन्नः—अनुर्वादक्षमः चतुष्यातगक्ति।

^{9.} बेहिना पिटक बंधेमां बुद्धदेवना समसमयी छ धमाँपदेशकीना (तीर्थकरीना) नामबाह उहेख मळी आवे छे. जेनां नाम आ छे:—पूरण काइयप, मस्करी गेशालक (मस्करी एटले साधु, जुओ अमरकेश्य-जैनभाषामां मंखली गेश्याल) अजित केशकंबल, प्रकुद काल्यायन, संजय वेलारिधपुत्र अने विर्धेध नातपुत्र (जैनभाषामां-ज्ञातपुत्र-महावीर). सूत्रनी उपर लखेली वात उपरथी आ पूरण तपस्वी महावीरना समसमयी जणाय छे एटले (तेओ) बुद्धना पण समसमयी होय ए समित छे. माटे आ पूरण तपस्वी अने बैद्ध यंथेमां निर्देशेला तपस्वी पूरण काइयप-ए बने एक ज व्यक्ति छे के जूदी जूदी छे? ए विषे तपास करवानी जहर छे. मिल्झमनिकाय (मध्यमनिकाय) मंग ए विषे जणाव्युं छे:—

[&]quot; एवं मे सुतं । साविध्यं...अथ को विगरकोच्छो बाह्यणो येन भगवा " में आ प्रमाणे सांभव्यं छः—धावस्ती (सावस्थी) नगरीमां, तेतुपसंक्रमि, उपसंकमिरवा भगवता सद्धि एकमन्तं निसिन्नो खो विगरु- विगरुकौरस्य नामनी ब्राह्मण भगवान् बुद्धनी पार्से आव्या अने एणे आवीने

ते णं काले णं, ते णं समए णं अहं गोयमा! छउमत्थकातिआए एकारसवासपरियाए छडंछडेणं अणिविखत्तेणं तवे।क्रम्मेणं
संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे, पुष्वाणुपृविं चरमाणे, गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव सुंसुमान्पुरे नगरं जेणेव असोयवणसं छे
उज्जाणे, जेणेव असोयवरपायवे, जेणेव पुढवीसिलापष्टओ तेणेव
उवागच्छामि, असोगवरपायवस्स हेड्डा पुढवीसिलावष्ट्यंसि अद्वमभत्तं पारीगिण्हांभि, दो वि पाए साहट्ड वम्घारियपाणी, एगपोग्गलिनिद्वादिडी, अणिमिसणयणे ईसिपच्मारगएणं काएणं, अहापणिहिएहिं गत्तेहिं, (सच्वादिएहिं) गुत्ते एगराइअं महापिडमं
उपसंपज्ञेता णं विह्रामि. ते णं काले णं, ते णं समये णं,
चमरचंचा रायहाणी अणिदा, अपुरोहिआ या वि होत्था. तर्
णं से पूरणे बालतवस्सी वहुपिडपुण्णाइं दुवालसवासाइं परियाणं
पाउणित्ता मासिआए संलेहणाए अत्ताणं जूसेत्ता साईं भत्ताइं
अणसणाए छेदेत्ता कालमासे कालं किचा चमरचंचाए रायहाणीए

(हवे श्रीमहावीर, पोतानी हकीकत माटे कहे छे)—हे गौतम! ते काळे, ते समये हुं छक्रस्थावस्थामां हते। अने मने दीक्षा लीधां अगीयार वर्ष थयां हतां. तथ हुं निरंतर छष्ट छष्टना तपकर्मपूर्वक संयम अने तपबडे आत्माने भावतो, पूर्वानुपूर्वीए चरतो अने गामे गाम फरतो जे तरफ सुंसमार (सुंसुमार) पुर नगर छे, जे तरफ अशोकवनखंड छे, जे तरफ उत्तम अशोकनुं झाड छे अने जे तरफ पृथिवीशिलापृहक छे ते तरफ आव्यो अने पछी ते अशोकना उत्तम वृक्षनी हेठळ पृथिवीशिलापृहक उपर में अहमनो तप आदर्थो. तथा हुं बन्ने पगने मेळा करीने, हाथने नीचे नमता छांबा-करीने अने मात्र एक पुद्रल उपर नजर मांडीने, आंखोने फफडाच्या सिवाय, जरा ह शरीरने आगळना भागमां नमतुं मेलीने, यथास्थित गात्रोवडे (सर्व इंद्रियोथी) गुष्त थइने, एक रात्रीनी मोटी प्रतिमाने स्वीकारीने विहरतो हतो. ते काळे, ते समये चमरचंचा राजधानीमां इंद्र न हतो, पुरोहित न हतो, हने ते पूरण नामे बालतपस्वी, पूरेपूरां बार वर्ष सुधी पर्यायने पाळीने, मासिक संटेखनावडे आत्माने सेवीने, साठ टंक सुधी अनशन राखीने, काळमासे काळ करी चमरचंचा

को च्छो भगवतं एतदवीचः — ये इमे भो गोतम! समणवाद्यणा संघिने।, गणिने।, गणाचिया, वाता, यसिस्सने।, तित्थकरा, साधु, सम्मता बहुवनस्स-सेय्यथीदं – प्रणो कस्सपो, मक्खिलेगोसाळो, अजितो केसकंवली, पकुधो कवायनो, संजयो वेलद्वपुत्तो निगंठो नातपुत्तो." — चूळसारोपमसुत्त ३० – प्र० १३९)

"पूरणं कस्सपं, × मनखालं × गोसालं, अजितं केसकंबलं, × पकुधं कच्चायनं, × संजयं वेलद्वपुत्तं, × निगंठं नातपुत्तं-(महासचकसुत्त १६-प० १७२) भगवानी साथे संमोद कथीं. पछी ते, एक ठेकाणे बेसीने आ प्रमाणे बोल्यो: —हे गं तम ! जे प्रसिद्ध सीर्थकरों छे ते आटला छे:—पूरण काइयप, मस्करि गोशालक, अजित केशवंबल, पकुध कालायन, संजय बेलारिथपुत्र अने निर्धिय ज्ञातपुत्र. ए बधा संधी, गणी, गणाचार्य, साधु अने बहुजन-संमत यशस्वी श्रमणबाह्मणा छे." ए ज शंथमां बीजे ठेकाणे महासत्यक सूत्रमां—पण पूरण काइयपनुं नाम आवे छे ए नामवाळो पाली उहेख भा सामे ज आप्यो छे.

तथा वैद्भिष्व नामक मराठी संधमां 'पूरणकारयप ' विषे लखतां आ प्रमाणे जणाच्युं छे केः---

"पूरणकाश्यप—आ एक प्रतिष्ठित गृहरथनो पुत्र हतो. एना मालिके एने एक दिवसे द्वारपालनुं काम सेंप्युं तथी पोतामी मान-हानी थएली समजी ते विरक्त थयो. अने खांथी ते तुरत कीघो अरण्यमा गयो. रस्तामां चोरोए तेनां छगडां विगेरे छुंटी लीधुं, खारथी ते नम रहेवा लाग्यो. पछी ते एकबार गाममां गयो खारे लोकोए तेने पहेरवा माटे वक्तो आप्यां. पण तेणे कह्युं के, 'वस्ननुं प्रयोजन लक्षा निवारवानुं छे अने लजानुं मूळ पापमय प्रवृत्ति छे, में तो पापमय प्रवृत्तिने दूर करी छे एथी मारे वक्तोनुं छुं काम होय?' तेनी ए प्रकारनी निस्पृहता अने असंगता जोईने लोको तेना अनुयायी थया अने बहेवामां आवे छे के, एना ८० हजार शिष्यो हता—(बाद्यपर्व प्र० १० ५० १२७):—अनु०

१. मूलच्छायाः— तस्मिन् काले, तस्मिन् समये अई गांतम! छद्मस्थकालिकायाम् एकादशवर्षत्रयायः षष्ठंषष्ठेन अनिक्षिप्तेन तपस्यमंणा संयमेन तपसा धात्मानं भावयन्, पूर्वे। इतुपूर्वे चरन्, प्रामानुप्रामं हवन् येनैव संसुमारपुरं नगरम्, येनैव अशोकवनखण्डमुद्यानम्, येनैव अशोकवरपादपः, येनैव प्रिमितिकापहकः तेनैव उपागच्छामि, अशोकवरपादपस्य अधः पृथिवीशिलापहके अष्टमभवतं परिगृह्णामे, द्वा अपि पादा संह्रा प्रत्मिवत्याणिः एकपुद्रलिविष्टिष्टिः अनिमिषितनयनः, ईष्त्प्रामभारगतेन कायेन, यथा प्रणिहितैः गात्रः (सर्वेन्द्रियः) पुष्तः, एकरात्रिकी महाप्रतिमाम् उपसंपद्य विद्रामि, तिसन् काले, तिमन् समये चमरचञ्चा राजधानी अनिन्ता, अपुरोहिता चाऽपि अभवत्, ततःस पूरणो बालतपस्वी बहुप्रतिपूर्णाने द्वादशवर्षाण पर्याणं प्राप्य-पालयित्या-मासिक्या संलेखनया आत्मानं जूषित्या पृष्टे भक्तानि अनशनेन छित्वा कालमासे कालं कृत्वा चमरच्छाया राजधान्याः—अनु०

- १. बैद्धोना पिटक प्रंथोमां धुंसुमारपुरनो निह, पण 'सुंसुमारगिरि '-नो उल्लेख मळी आवे छे. ए उहेख उपरथी जाणी शकाय छे के, 'सुंसुमार-गिरि' 'भरग ' देश कयो छे अने वयां आवेलो छे ! 'सुंसुमार-गिरि' नी साथे आ सूत्रमां आवेलां 'सुंसुमारपुरि 'नी साथे आ सूत्रमां आवेला 'सुंसुमारपुर 'नुं विशेष साम्य होवाथी कदाच सुंसुमारपुर अने गिरि बन्ने पासे पासे आवेलां होय अने 'भरग ' देशमां आवेलां होय. मिन्सिमिनकायमां 'सुंसुमारगिरि' ने लगता बे उल्लेखो मळी आवे छे, जे आ प्रमाणे छे:—
- १. " एवं मे सुतं । एकं समयं आयस्मा महामोग्गल्लानी भग्गेसु विहरति इंसुमारिपरे मेसकळावने मिगदाये "—(अनुमानसृत्त १५-५० ७०)
 - " १. में आ प्रमाणे सांभळ्युं छे:— एक वखत आयुष्मान् महामाद्ग-ल्यायन भरग देशमां आवेला हुंसुमारगिरिनी पासे रहेला मिगदाय मेस-कळावनमां विहरे छे. "
- " २. एवं मे सुतं । एकं समयं आयस्मा महामोश्गञ्जानो भग्गेस विहरति संसमारियरे मेसकळावने मिगदाये " (मारतक्रनियसुत ५० ६० २२४)

२. बीजा उछेखनो अनुवाद पण एवो ज छे:--अनु०

जैववायसभाए जान-इंदत्ताए उववण्णे. तए णं से चमरे असुरिंदे, जहा:-आहारपजनीए, जाव-भात-मणपजनीए. तए णं से चमेरे असुरिंदे, असुरराया पंचविहाए पज्जतीए पज्जतिभावं गए समाणे उडूं वीससाए ओहिणा आभोएइ जाव-सोहम्मो कपी, पासइ य तत्थ सकं देविंदं, देवरायं, मधवं, पाकसासणं, सयक्दं, सहस्सक्खं, वज्जपाणिं, पुरंदरं, जाव-दस दिसाओ उज्जोवेमाणं, पभासे-माणं सौहम्मे कथे सोहम्मे विदेसए विमाणे सर्वःसि सीहासणंसि, जाव-दिव्याइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासइ, इमेयारूपे अन्झत्थिए, चितिए, परिथए, मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था:-के स णं एस अपरिथअपरथए, दुरंतपंतलबखणे, हरिसिरिपरिवज्जिए, हीणपुण्ण-चाउद्दसे जं णं ममं इमाए एयारूयाए दिव्वाए देवडीए, जाव-दिव्ये देवाणुभावे लखे, पत्ते, अभिसमण्णागए उपि अप्पुस्तुए दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ, एवं संपेहेइ, संपेहिता क्षामाणिअपरिसोनवचए देवे सहावेह, एवं वयासी:-के स णं ेरस देवाणुष्पिया ! अपत्थिअपत्थए, जाव-भुंजमाणे विहरइ ? तए णं ते सामाणिअपरिसोववनगा देवा चमरेणं असुरिदेणं असुर-रण्णा एषं वृत्ता समाणा हट्ट-तट्ट जाव-हयहियया करयलपरिग्ग-हियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजालिं कट्टू जएणं, विजएणं वद्धावेंति, एवं वयासी:-एस णं देवाणुष्पिया ! सके देविंदे, देवराया जाव-विहरह. तए णं से चमरे असुरिदे असुरराया ते।सं

राजधानीमां उपपात सभामां यावत्-इंद्रपणे उत्पन्न धयो. हवे ते असुरराया अहुणोवक्के पंचिवहाए पज्जतीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, तं ताजो ज उत्पन्न थएलो असुरेंद्र, असुरराज चमर पांच प्रकारनी पर्यातिवडे पर्याप्तपणाने पामे छे. ते पांच प्रकारनी पर्याप्ति आ छे:-आहारपर्याप्ति अने यावत्-भाषा-मनःपर्याप्ति. हवे ते असुरेंद्र, असुरराज चमर,पांच प्रकारनी पर्याप्तिथी पर्याप्तपणाने पाम्या पछी अवधिज्ञानवडे स्वामाविक रीते उंचे यावत्-साैर्धमकल्पमां देवेंद्र, देवराज, मैंचवा, पाकशासन, शतऋतु, सहस्राक्ष-हजार आंख्वाळा, वज्रपाणि-हाथमां वजने धारण करनार, पुरंदर शकने यावत दशे दिशाओंने अजवाळतो तथा प्रकाशित करतो अने सौधर्मकल्पमां, सौधर्मावतंसक नामना विमानमां, शक्र नामना सिंहासन उपर्वेसी यावत्-दिव्य अने भोगववा योग्य भोगोने भोगवतो जूए छे. तेने ते प्रकारे जोइ ते चमरना मनमां आ ए प्रकारनी अध्यात्मिक, चितित, प्रार्थित मनोगत संकल्प थयोः-अरे ए मरणनो इच्छुक, नठारां रुक्षणवाळो, राज अने शोभा विनानो तथा हीणी पुण्य चौदशने दहाडे जनमेल (ए) कोण छे ? जे, मारी पासे आ ए प्रकारनी दिव्य देवऋद्धि यावत्-दिव्य देवानुभाव होवा छतां-में दिव्य देवऋद्धि यावत्-दिव्य देवानुमाव छन्ध, प्राप्त अने अभिस-मन्वागत क्यों छतां-पण मारी उपर विना गभराटे-ओडी उताबळे-दिव्य अने भोगववा योग्य भोगोने भोगवतो विहरे छे. ९म विचारी ते चमरे सामानिकसभामां उत्पन्न थएल देवोने बोलावी आंप्रमाणे कहुं:-हे देवानुप्रियो! अरे ए मरणनो इच्छुक यावत्-भोगोने भोगवतो कोण छे? ज्यारे असुरेंद्र, असुरराज चमरे, ते देवोने पूर्व प्रमाणे कहां त्यारे ते सामानिकसभामां उत्पन्न थएल देवो ते चमरनुं कथन सांमळी हर्षवाळा, तोषवाळा यावत्-हतं हृदयवाळा थया अने बन्ने हाथने जोडवापूर्वक दशे नखने मेळा करी शिरसावर्ते सहित माथामां अंजिल करी ते देवोए ते चमरने जयं अने विज-यथी वधाव्यो, पछी तेओ आ प्रमाणे बोल्या के:--हे देवानुप्रियं! ए देवेंद्र, देवराज शक्र यावत्-भोगोने भोगवतो विहरे छे. पछी असुरेंद्र, असुरराज चमर, ते सामानिकसमामां उत्पन्न थएळ देवीना

१. मूलच्छायाः— उपपातसभायां यावत्–इन्द्रतया उपपन्नः. ततः स चमरोऽसुरेन्द्रः, असुरराजः अधुनीपपन्नः पञ्चविधया पर्याप्त्या पर्याप्तिमावं मच्छति, तद्यथाः-आहारपर्याप्त्या, यावत्-भाषा-मनःपर्याप्त्या, ततः स चमरोऽसुरेन्द्रः, असुरराजः पश्चविधया पर्याप्त्या पर्याप्तिभावं गतः सन् ऊर्ध्वं विस्तसया अविधना आभोगमृति यानत्-साधर्मः कलाः, पश्यति च तत्र शकं देवेन्द्रम् , देवराजम् , मघवानम् , पाकशासनम् , शतकतुम् ,सहस्राक्षम् , वञ्जपाणिम् , पुरंद्रम् यावत्-दश दिशाः उद्बोतयन्तम् , प्रभासयन्तं सौधर्मे कल्ये सौधर्भे ऽवतंसके विमाने शके सिंहासने, यावत्-दिव्यानि भोग्यभोगानि भुञ्जानं पर्याते , अयम् एत-द्रपः आध्यात्मिकः, विन्तितः, प्रार्थितः, मनोगतः संबर्षः समुद्पयतः कः स एष अप्रार्थितप्रार्थकः, दुरन्तप्रान्तलक्षणः, हीश्रीपरिवर्जितः, हीनपुण्यचातु -र्देशो यद् मम अस्याम् एतद्रूपायां दिव्यायां देवधा, यावत्-दिव्ये देवानुभागे लब्धे, प्राप्ते, अभिसमन्वागते उपरि अल्पीत्सुक्यो दिव्यागि मोगयभोगानि भुजानी विहरति, एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य, सामानिकपर्षदुपपन्नकान् देवान् शब्दायते, एवम् अवादीत्ः-कः स एष देवानुप्रियाः! अवार्थितप्रार्थकः, यावत्-सुजानी बिहरति ? ततस्ते सामानिकपषेदुपपन्नका देवाश्वमरेण असुरेन्द्रेण, असुरराजेन एवम् उक्ताः समानाः हृष्ठ-तुष्टाः, यावत्-हृतहृद्याः, करतलपरिगृहीतं दशनखं शीर्धावर्त मस्तकेऽज्ञाल कृत्वा जयेन, विजयेन वर्धापयन्ति, एवम् अवादिषु:- एव देवानुश्रियाः ! शको देवेन्द्रः, देवराजः, यावत्-विहरति. ततः स चमरः असुरेन्द्रः, असुरराजस्तेषाम्ः-अनु०

१. प्रस्तुत सूत्रमां आवेला इन्द्र, मघवन, पावशासन, शतकतु, सहस्राक्ष, वज्रपाणि अने पुरंदर शब्दो खास विचारवा जैवा छे. मारा धारवा प्रमाणे कविओए, कोशकारोए अने पाराणिकोए करेलो अने तदनुसार अहीं घटावेलो ए शब्दोनो अर्थ लाक्षणिक, औपचारिक वा आलंकारिक छे. इं धार्र छउं तेम ए शब्दोना खास अर्थमां विशेष घालमेल थवाथी रजनुं गज थवा पाम्युं छे अने एथी साहित्य अने तत्त्वज्ञानमां भीषण गोटाळी उभी थयो-थएलो-छे. वर्तमानमा तो आज घणा समयथी ए ज गोटाळो इतिहासने नामे पूजाई रह्यो छे. आ विषेना स्पष्टीकरण माटे यास्कना निरुक्तनो विश्लेष मननपूर्वक अभ्यास करवो अगखनो छे. एमां एमणे आवा अनेक शब्दोना अर्थ विषे सप्रमाण अने विगतवार खुलासा आपेळा छे. आ जातमा ' असुर ' क्षस्य विवे एक टिप्पण भागळ आपी गयो छढं, ते, आ क्षन्दोने पण ळाड प्राही शकाय तेहें छे:—अतः

र्भांगं अवक्रमेइ, वेउन्विअसमुग्घाएणं समोहणति, जान-दोशं पि वेउव्विअस्युग्धाएणं समोहणइ, एगं, महं, घोरं, घोरागारं, भीमं, भीमागारं, भासुरं, भयाणीयं, गंभीरं, उत्तासणयं, कालडूरत्त-मास-रासिसंकासं जोयणसयसाहस्सीयं महाचोदिं विखन्वइ, विउन्वित्ता अप्मोडेइ, वग्गइ, गज्जइ, हयहेसिअं करेइ, हत्थिगुलगुलाइअं करेइ, रहघणघणाइअं करेइ, पायदद्दरगं करेइ, भूमिचवेडयं दलयइ, सीहणादं नदइ, उच्छोलेइ, पच्छोलेइ, तिवइं छिंदइ, वामं भुअं **जसवेइ, दाहिणह**त्थपदेसिणीए अंगुद्वणहेण य नि तिरिच्छमुहं विडंबेइ, महया महया सद्देण कलकलरवं करेइ, एगे, अवीए फालिहर्यणमायाय उडूं वेहासं उप्पइए. खोमंते चेव अहोलोअं, बं.पेमाणे च मेइणीयलं, आकडूंते व तिरियलोअं, फोडेमाणे व अंबरतलं, कत्थइ गज्जंते, कत्थइ विजुयायन्ते, कत्थइ वासं वास-माणे, कत्थइ रयुग्घायं पकरेमाणे, कत्थइ तमुक्कायं पकरेमाणे, वाणमंतरे देवे वित्तासमाणे, जोइसिए देवे दुहा विमयमाणे, आयर-क्खे देवे विपलायमाणे, फालिहरयणं अंबरतलंसि वियद्दमाणे, वि-यदृमाणे, विउन्भाएमाणे, विउन्भाएमाणे ताए उक्तिद्वाए जाव-तिरियमसंखेजाणं दीव-समुद्दाणं मञ्झंमज्झेण वीइवयमाणे जेणेव सोहम्मे कप्पे, जेणेव सोहम्मवडेंसये विमाणे, जेणेव समा सुहम्मा तेणेव उवागच्छइ, एगं पायं पउमवरवेइआए करेइ, एगं पायं सभाए सुहम्माए करेइ, फालिहरयणेणं महया महया सद्देणं ति-क्खुत्तो इंदकीलं आउडेए, एवं वयासी:-काहि णं भो ! सके देविंदे देवराया ? काह णं ताओ चउरासीइसामाणि असाहस्सीओ ? जाव-कृष्टि णं ताओ चत्तारि चउरासीईओ आयरक्खदेवसाहस्सीओ ? कहि णं ताओ अणेगाओ अच्छराकोडीओ ? अज हणामि, अज वहेमि, अज ममं अवसाओ अच्छराओ वसमुवणमंतु ति कट्ट तं अणिष्ठं अकंतं, अपियं, असुभं, अमणुण्णं, अमणामं, फरुसं

करीने ते चमर उत्तरपूर्वना दिग्भाग तरफ चाल्यो गयो. पर्छ, तेने वैकियसमुद्धात कर्ये। यावत्-करी बार पण ते वैकि ससमुद्धातथी समग्रहत थयो. तेम करी ते चमरे एक मोटुं, घोर, घोर आकारव छुं, भयंकर, भयंकर आकारबाळुं, भाखर, भयानक, गंभीर, ब्रःस उपजाने एवं, काळी अडधी रात्री अने अडदना ढगळा जेवुं काळुं तथा एक टाख योजन उंचुं मोटुं शरीर बनाव्युं. तेम करी ते चमर पोताना हाथने पछाडे छे, कूदे छे, मेधनी पेठे गाजे छे, घोडानी पेठे हणहणे छे, हाथीनी पेठे किलकिलाट करे छे, रथनी पेठे घणघणे छे, भें।य उपर पाग पछाडे छे, भोंय उपर पाटु (चोटा) लगावे छे, सिंहनी पेठे अवाज करे छे, उछळे छे, पछाडा मारे छे, त्रिपदीनो छेद करे छे, डाबा हाथने उंचो करे छे, जमणा हाथनी तर्जनी आंगळीवडे अने अंगुठाना नखवडे पण पोताना मुखने विडंबे छे-बांकुं पहोळुं करे छे अने मोटा मोटा कलकलरवरूप शब्दे।ने करे छे. एम करतो ते चमर, एकछो, कोइने साथे छीधा विना परिघ रतने लइने उंचे आकाशमां उत्पत्यो-उड्यो-गयो. जाणे अधोलोकने खळभळावतो न होय, भूमितळने कंपावतो न होय, तिरछा छोकने खेंचतो न होय, गगनतळने फोडतो न होय ए प्रमाणे करतो ते चमर, क्यांय गाजे छे, क्यांय विज्ञ ठीनी पेठे झबके छे, क्यांय वरसादनी पेठे बरसे छे, क्यांय धूळनो वरसाद वरसावे छे, क्यांय अंधकारने करे छे, एम करतो करतो ते चमर उपर चाल्यो जाय छे. जतां जतां तेणे वानव्यंतर देवोमां त्रास उपजाव्यो, ज्योतिषिक देवोना तो वे भाग करी नाख्या अने आत्मरक्षक देवोने पण भगाडी मूक्या, एम करतो ते चमर, परिध रतने आकाशमां फेरवतो, शोभावतो ते उत्कृष्ट गतिवडे यावत्-तिरछे असंस्य द्वीप अने समुद्रोनी वचोषच नीकळ्ये. नीकळीने ज्यां सौधर्मकल्प छे, ज्यां सौधर्मावतंसक नामे विमान छे अने ज्यां सुधर्मा सभा छे त्यां आव्यो. आवीने तेणे पोतानो एक पग पद्मवर-वेदिका उपर मूक्यो अने बीजो एक पग सुधर्मा सभामां मूक्यो. तथा पोताना परिघ रत्नवडे मोटा मोटा होकारापूर्वक तेणे इंद्रकीलने त्रण वार कुट्यो. त्यार बाद ते चमर आ प्रमाणे बोल्यो के:---भो! देवेंद्र, देवराज शक्र क्यां छे ? ते चोराशी हजार सामानिक देवो क्यां छे १ यावत्-ते चार चोराशी हजार (३,३६०००)

^{9.} मूलच्छायाः—भागम् अपक्रास्ति, वैकियसमुद्धातेन समवहन्ति, यावत्- क्षितीयमिष वैकियसमुद्धातेन समवहन्ति, एकाम् महतीम्, घोराम्, घोराम्, भीमाम्, भीमाकाराम्, भास्तराम्, भयानीकाम्, गम्भीराम्, उत्त्रासिनकां कालाधरात्र-माधराशिसंकाशां योजनशतसाहिकां महाबोन्दीं विकुर्वति, प्रद्याति, सिहनादं नदिति, अच्छलति, प्रचलति, विपर्वति छिनति, वामं भुजं उच्छ्रेयति, दक्षिणहस्तप्रदेशिकया अच्छाष्ठनकेन चापि तिर्यग् खं विद्यास्तरात्ति, सिहनादं नदिति, अच्छलति, प्रचलति, विद्यास्तरा अच्छाप्रति विद्यास्तरात्ति करोति, एकः, अद्वितीयः परिघरत्तम् औदाय कर्ष्वं विद्यासः अपतितः क्षोभयन् चैव अधोलोकम्, कम्पयंश्वः मेदिनीतलम्, आक्षयन् इव तिर्यग्लोकम्, स्पोटयन् इव अम्बरतलम्, कुत्रचिद् गिर्जन्, कुत्रचिद् विद्यासानः, कुत्रचिद् वर्षा वर्षन्, कुत्रचिद् रज्ञद्धातं प्रकुर्वन्, आक्षयन् इव तिर्यग्लोकम्, स्पोटयन् इव अम्बरतलम्, कुत्रचिद् गिर्जन्, कुत्रचिद् विद्यासानः, कुत्रचिद् वर्षा वर्षन्, कुत्रचिद् रज्ञद्धातं प्रकुर्वन्, अपन्यत्तयम्, विद्यास्तरान् देवान् विद्यासयम्, अपनिकान् देवान् दिधा विभाजन्, आत्रति वर्षन् वर्षन्ति, पर्वस्तरान् वर्षान् वर्षान् वर्षान्, विभाजयन्, तया उत्कृष्टया यावत्—तिर्यगसंख्येयानो द्वीप—समुद्राणां मध्यमध्येन व्यतित्रजन् येनैव सम्पाद्यास्तरान् वर्षन्ति, एकं पादं समायां सुधमीयां करोति, पर्वपद्यासं करोति, एकं पादं समायां सुधमीयां करोति, पर्वपद्याने महता महता शब्देन त्रिवारम् इन्द्रकीलम् आकुष्टयति, एवम् अवादीतः—कुत्र भोः! शको देवन्द्रो देवराजः? कुत्र ताश्वतुरशिति-सामानिक्तसंद्यः? यावत्—कुत्र ताश्वतः चतुरशीलः आत्मरक्षदेवसाहरुयः? कुत्र ता अनेकाः अप्तरसाम्, भवामाम्, परवामः—भादः—भादः अधिकान् वर्षानः—भादः वर्षानः—भादः सम्यास्त भावानः—भादः अधिकानः अधिकानः, अधिवामः, अधिवामः, अधनामामः, परवामः, अध्वामः, अधनामामः, परवामः—भादः वर्षाः, अधनामामः, अधनामामः, अधनामामः, परवामः—भादः वर्षानः—भादः वर्षानः—भादः वर्षानः—भादः वर्षानः—भादः वर्षानः—भादः वर्षानः वर्षानः वर्षानः वर्षानः वर्षानः अधिकानः वर्षानः वर्षानः वर्षानः भादः वर्षानः वर्षान

भौगं अवक्रमेइ, वेङ्विअसमुग्धाएणं समोहणति, जाव-दोचं पि वेउव्यिथसमुग्धाएणं समोहणइ, एगं, महं, घोरं, घोरागारं, भीमं, भीमागारं, भासुरं, भयाणीयं, गंभीरं, उत्तासणयं, कालडूरत्त-मास-रासिसंकासं जोयणसयसाहस्सीयं महावोदिं विउच्वइ, विउव्वित्ता अप्फोडेइ, वन्गइ, गज्जइ, हयहेसिअं करेइ, हत्थिगुलगुलाइअं करेइ, रहघणघणाइअं करेइ, पायदद्दरगं करेइ, भूमिचवेडयं दलयइ, सीहणादं नदइ, उच्छोलेइ, पच्छोलेइ, तिवइं छिंदइ, वामं मुअं जसवेह, दाहिणहत्थपदेसिणीए अंगुड्डणहेण य वि तिरिच्छमुहं विडंबेइ, महया महया सद्देण कलकलरवं करेइ, एगे, अवीए फालिहरयणमायाय उडूं वेहासं उप्पइए. खोभंते चेव अहोलोअं, कंपेमाणे च मेइणीयलं, आकडूंते व तिरियलोअं, फोडेमाणे व अंबरतलं, कत्थइ गज्जंते, कत्थइ विज्यायन्ते, कत्थइ वासं चास-माणे, कत्थइ रयुग्घायं पकरेमाणे, कत्थइ तमुद्धायं पकरेमाणे, वाणमंतरे देवे वित्तासमाणे, जोइसिए देवे दुहा विभयमाणे, आयर-क्से देवे विपलायमाणे, फालिहरयणं अंवरतलंसि वियष्टमाणे, वि-यद्रमाणे. विजन्भाएमाणे, विजन्भाएमाणे ताए उक्तिहाए जान-तिरियमसंखेजाणं दीव-समुदाणं मर्ज्झमज्झेण वीइवयमाणे जेणेव सोहम्मे कप्पे, जेणेव सोहम्मवडेंसये विमाणे, जेणेय समा सुहम्मा तेणेव उवागच्छइ, एगं पायं पउमवरवेइआए करेइ, एगं पायं सभाए सुहम्माए करेइ, फालिहरयणेणं महया महया सद्देणं ति-क्खुत्तो इंदकीलं आउडेए, एवं वयासी:-काहि णं भो ! सक्ते देविंदे देवराया ? कहि णं ताओ चउरासीइसामाणिअसाहस्सीओ ? जाव-कहि णं ताओ चत्तारि चउरासीईओ आयरक्लदेवसाहस्सीओ ? कहि णं ताओ अणेगाओ अच्छराकोडीओ ? अज हणामि, अज वहेमि, अज ममं अवसाओ अच्छराओ वसमुवणमंतु ति कट्ट तं अणिष्टं अकंतं, अप्पियं, असुमं, अमणुष्णं, अमणामं, फरुसं

करीने ते चमर उत्तरपूर्वना दिग्भाग तरफ चाल्यो गयो. पर्छ। तेने वैकियसमुद्वात कर्ये। यावत्-फरी वार पण ते वैकि ससमुद्वातथी समबहत थयो. तेम करी ते चगरे एक मोढुं, घोर, घोर आकारव छुं, भयंकर, भयंकर आकारवाळुं, भाखर, भयानक, गंभीर, त्रःस उपजाने एवं, काळी अडधी रात्री अने अडदना ढगला जेवं काळुं तथा एक टाख योजन उंचुं मोटुं शरीर बनाव्युं. तेम करी ते चमर पोताना हाथने पछाडे छे, कूदे छे, मेघनी पेठे गाने छे, घोडानी पेठे हणहणे छे, हाथीनी पेठे किलकिलाट करे छे, रथनी पेठे वणवणे छे, भीय उपर पग पछाडे छे, भीय उपर पाटु (चोटा) लगावे छे, सिंहनी पेठे अवाज करे छे, उछळे छे, पछाडा मारे छे, त्रिपदीनो छेद करे छे, डाबा हाथने उंचो करे छे, जमणा हाथनी तर्जनी आंगळीवडे अने अंगुठाना नखनडे पण पोताना मुखने विडंबे छे-बांकुं पहोळुं करे छे अने मोटा मोटा कलकलरवरूप शब्दोने करे छे. एम करतो ते चमर, एकलो, कोइने साथे लीघा विना परिघ रतने लइने उंचे आकाशमां उललो-उड्यो-गयो. जाणे अधोलोकने खळभळावतो न होय, भूमितळने कंपावतो न होय, तिरछा छोकने खेंचतो न होय, गगनतळने फोडतो न होय ए प्रमाणे करतो ते चमर, क्यांय गाजे छे, क्यांय विज ठीनी पेठे झबके छे, क्यांय वरसादनी पेठे वरसे छे, क्यांय धूळनो वरसाद चरसावे छे, क्यांय अंधकारने करे छे, एम करतो करतो ते चमर उपर चाल्यो जाय छे. जतां जतां तेणे वानव्यंतर देवोमां त्रास उपजाच्यो, ज्योतिषिक देवोना तो बे भाग करी नाख्या अने आत्मरक्षक देवोने पण भगाडी मूक्या, एम करतो ते चमर, परिघ रतने आकाशमां फेरवतो, शोभावतो ते उत्कृष्ट गंतिवडे यावत्-तिरछे असंख्य द्वीप अने समुद्रोनी वद्योवच नीकळ्यो. नीकळीने ज्यां सौधर्मकल्प छे, ज्यां सौधर्मावतसंक नामे विमान छे अने ज्यां सुधर्मा सभा छे लां आच्यो. आवीने तेणे पोतानो एक पग पद्मवर-वेदिका उपर मूक्यो अने बीजो एक पग सुधर्मा सभामां मूक्यो. तथा पोताना परिघ रतवडे मोटा मोटा होकारापूर्वक तेणे इंद्रकीलने त्रण वार कुट्यो. त्यार बाद ते चमर आ प्रमाणे बोल्यो के:-भो! देवेंद्र, देवराज शक्र क्यां छे ? ते चोराशी हजार सामानिक देवो क्यां छे १ यावत्-ते चार चोराशी हजार (३,३६०००)

^{9.} मूलच्छायाः—भागम् अपकास्ति, वैकियससुद्धातेन समवहन्ति, यावत् दितीयमि वैकियससुद्धातेन समवहन्ति, एकाम् महतीम्, घोराम्, धोराकाराम्, भीमाम्, भीमाकाराम्, भारवराम्, भयानीकाम्, गम्भीराम्, उरत्रासनिकां कालाधरात्र-माषराशिसंकाशां योजनशतसाहिककां महावोन्दीं विकुर्वति, विकृर्व्य आस्फोटयति, वलाति, गर्जति, ह्यहेषितं करोति, हरितगुलगुलायितं करोति, रथधनघनायितं करोति, पाददर्दरकं करोति, भूमिचपेटां ददाति, सिहनादं नदति, इच्छलति, प्रचलति, त्रापदीं ज्ञिनति, वामं भुजं उच्छूँयति, दक्षिणहस्तप्रदेशिकया अच्यष्ठनखेन चापि तिर्थग्रुखं विडम्बयति, महता महता शब्देन कलकल्ल्लं करोति, एकः, अद्वितीयः परिचरत्नम् आदाय कर्ष्वं विहायः उत्पतितः क्षोभयन् चैव अधोलोकम्, कम्पयंथ्,मेदिनीतलम्, आकर्षयन् इव तिर्यग्लोकम्, स्फोटयन् इव अम्बरतलम्, कुत्रचिद् गर्जन्तं, कुत्रचिद् विद्यायानः, कुत्रचिद् वर्षान् प्रकृति, रक्षान् वर्षान् प्रकृति, वानव्यन्तरान् देवान् वित्रासयन्, ज्योतिषिकान् देवान् द्विभा विभन्न, आत्मरक्षकान् देवान् विपलाययमानः, परिचरतम् अम्पत्तले व्यावर्तयन्, विश्राजयन्, विश्राजयन्, तथा उत्कृष्ट्या यावत्—तिर्यगसंख्येयानां द्वीप—समुद्राणां मध्यमध्येन व्यतित्रकन् यैनैय सौधर्मः कल्पः, येनैव सौधर्माऽवतंसकं विमानम्, येनैव सभा सुधर्मा तेनैव उपागच्छति, एकं पादं पद्मरचेदिकायां करोति, एकं पादं सभायां सुधर्मायां करोति, परिचरतेन महता महता महता शब्देन त्रिवारम् इन्द्रकीलम् आकुद्यति, एवम् अवादीतः—इत्र भोः। शक्षे देवेन्द्रो देवराजः १ कृत्र ताथनुरशिति

गिरं निसिरइ. तए णं से सक्के देविंदे, देवराया तं अणिहं जाय-अमणामं असुअपुर्वं फरुसं गिरं सोचा, निसम्म आसुरुत्ते, जान-भिसिमिसेमाणे तिवलिअं भिउाडिं निडाले साहट्ट चमरं अस्रिदं, असुररायं एवं वदा।सिः -- हं भो ! चमरा !, असुरिंदा !, असुर-राया !, अपत्थिअपत्थआ ! जाव-हीणपुण्णचाउद्सा ! अज न भवास, न हि ते सुहमत्थीति कडू तत्थेव सीहांसणवरगए वज्ञं परामुसइ, तं जलंत, फुडंतं, तडतडन्तं, उकासहस्साइं विणिमु-भुमाणं, जालासहस्साइं पमुंचंमाणं, इंगालसहस्साइं पविक्लिस्माणं पविविखरमाणं, फुलिंगजालामालासहंस्से हिं चवंखु विवस्वेवदिडिप-बिचायंः पि पकरमाणं, हुअवहअइरेगतेअदिणंतं, जइणवेगं, पुलक्षितुअसमाणं, महन्भयं, भयंकरं चमरस्त असुरिंदस्त असुररण्णो वहाए वर्ज निक्षिरइ. तए णं से असुरिदे, असुर-राया तं जलंतं, जाय भयं ४.रं वज्जमिमुहं अ.वयमाणं पासइ, क्षियाइ, पिहाइ; विहाइ, ज्ञियाइ; श्रियाचित्ता पिहाइता तहेव रांभरगमउडविडए, सालंबहत्थाभरणे, उड्डंपाए, अहोतिरे, कषसागयसेअं पित्र विणिम्मु अमाणे ताए उक्किट्टाए, जाय-तिरियम-संस्थेजाणं दीव-समुद्दाणं मञ्जंमज्ह्षेगं वीईवयमाणे जेणेय जंबदीये, धात्र-जेणेव असीगवरपायत्रे, जेजेव मम अंतिए तेणेव उवागच्छइ, भीए भयगग्गरसरे 'भगवं सरणं ' इति बुयमाणे ममं दोण्ह वि पायाणं अंतरंक्षि झात्ति वेगेण समोवडिए. तए णं तस्स सकस्स देवि-दस्स देग्रण्णो इभेआरूवे अज्झतिथए, जाव-समुप्पानितथा:-नो खलु पमू चमरे असुरिंदे असुरराया, नो खलु समत्थे चमरे असु-रिंदे असुरराया, नो खलु विंसए चमररस असुरिंदरस, असुररण्णो अ-प्पणो निस्साए उडुं उपाइत्ता जाव-सोहम्मो कप्पो, णण्णत्थ अरिहंते वा, अरिहंतचेइआणि वा, अणगारे वा भाविअपणो णीसाए उड़ू

धंगरक्षक देवी क्यां छे? तथा ते क्रोडो अप्सराओ क्यां छे? आजे हणुं हुं, आजे वध करं छुं, ते बधी अप्सराओ, जेओ मारे ताबे नथा, आजे तावे थइ जाओ, एन करीने तेवा प्रकारना अनेट, अक्षांत अप्रिय, अशुम, अंतुद्रर, मनने न गमे तेवां क्षेन कानमा खटके तेयां वचनो ते चमरे काट्यां. हवे ते देवेंद्र, देवराज शक तेव। प्रकारनी अनिष्ट यावन्-मनने अगममती तथा कोई बार नहीं सांमळेली अने कानमां खटके एवी ते चमरनी वाणी सांमळी, अवधारी रोते भराणी अने यावत्-क्रोधधी धमधम्यो, तथा कपाळमां त्रण आइ पड़े तेन भवां खड़ावीने ते शक्ते असुरेंद्र, असुरराज चमरने आ प्रमाणे वह्युं के:--हं भो! मरणना इच्छुक अने यावत्- हीणी पुण्य चौदशने दिवसे जन्मेल असुरेंद्र, असुरराज चमर ! आजे तुं न हइश आजे तुं हतो न हतो थइ जइश, आज तने मुख नधी, एम व.री, त्यां ज उत्तम हिंहासनमां देठां देठां ते शक इंदे वजनुं प्रहण वर्धुं, अने जळहळतुं, स्फुटतुं, तदतहाट करतुं, हजारो उल्कापातने मूकतुं, हजारो (आगनी) जाळोने छोडतुं, हजारो अंगारोने खेरवतुं, आनना कणिआ अने जाळाओनी माळाओथी भगावतुं तथा आंखोने अंजःवी देतुं, आग करतां पण घणुं वधारे तेजथी दीपतुं, सौथी सारा वेगवाळुं, फुलेला केसुडा जेवुं लाल, मोटा भयने उत्तन करनारुं अने भयंकर वज्र, असुरेंद्र, असुरराज चमरना वय माटे मूक्युं. हवे ते जळहळता यात्रत्-भयंकर वजने सामे आवतुं जोइ, ते असुरेंद्र, असुरराज चमर, आ हां ? एम चिंतन करे छे तथा 'आवुं शस्त्र मारे होत तो केवुं ठीक थात र एम स्पृहा करे छे, फरीने पण पूर्व प्रमाणे स्पृदा करे छे अने । चिंतन करे छे. एम करीने तुरत ज ते,, मुकुटथी खरी गएछ छोगावाळो, आलंब-वाळां हाथनां घरेणांत्राळो, असुरेंद्र असुरराज चमर, पगने उंचा राखीने, माथाने नीचुं करीने, जाणे काखमां परसेवी न वळयो होय एम परसेवाने झरावतो झरावतो, ते उत्कृष्ट गतिवडे यावत्-तिरछे असंख्य द्वीप तथा समुद्रोनी बच्चोवच जतो जतो जे तरफ जंबुद्वीप छे अने यावत्-जे तरफ उत्तम अशोकनुं झाड छे तथा जे तरफ हुं (श्रीमहावीर) छुं ते तरफ आवी बीने छो अने भयथी गगळा स्वरवाळो 'हे भगवन्! तमे मारुं शरण छो 'एम बोलतो ते चमर

१. मूलच्छायाः — गिरं निःस्जति. ततः स शको देवेन्दः, देवराजस्ताम् अनिष्टां यावत् —अमनामाम् अश्वतपूर्वा परपा गिरं श्ररता, निशम्य आसुरतः, यावत् -सिसिसयन् त्रिवलकां म्छूटी लेलाटे संहृत्य चमरम् असुरेन्द्रम्, अद्धरराजम् एवम् अवादीतः — हं भोः ! चमर ! असुरेन्द्र ! असुरराज ! अप्रार्थितप्रायैक ! यावत् -हीनपुण्यचीतुर्वा ! अस्यन भवसि, न हि ते सुखमस्ति इति कृत्वा तत्रैव सिहासनवरगतो वन्नं पराम्छति, तत् ज्वलन्तम्, स्कुटन्तम् तहत्वजन्तम् उन्हास्त विनिस्त विन्ते स्वत्ते त्रिवलक्ष्यान् अप्रार्थित प्रति विनिस्त विनि

उंणयइ जाव-सोहम्मो कप्पो, तं महादुक्ख खलु तहारूवाणं अ-रहंताणं भगवंताणं, अगगाराण य अासायणाए ति कट्ट ओहिं पउंजइ, ममं ओहिणा अभोएइ, हा ! हा ! अहो ! हतो अह-मंसि ति कहु ताए उक्किहाए जाव-दिव्याए देवगईए वज्जस्स वीहिं अणुगच्छमाणे तिरियमसंखेजाणं दीव -समुहाणं मज्झंमज्झेणं, जाव-भेणेव असोगवरपायवे, जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवागच्छइ, ममं चउरंगुलमसंपत्तं वज्जं पिडसाहरइ, अवि या इं मे गोयमा ! मुद्विवाएणं केसग्गे वीइत्था. तए णं से सक्के देविंदे देवराया वज्जं पिडसाहरित्ता ममं िक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करइ, चंदइ, नमंसइ, एवं वयासि:— एवं खलु मंते ! अहं तुन्मं नीसाए चमरेणं असुरिंदेणं, असुररण्णा सयमेव अचासाइए, तए णं मए पित्नुविएणं समाणेणं चमरस्स असुरिदस्त, असुररण्णो वहाए वज्जे निसेष्ठ, तए णं ममं इमेआरूवे अज्झित्थए जाव-समुप्पाजित्था:—नो खलु पमू चमरे असुरिंदे अंसु-रराया, तहेव जाव-ओहिं पर्जजामि, देवाणुप्पए ओहिणा आभो-एमि, हा ! हा ! अहो ! हओ म्हि ति कटु ताए उक्किहाए जाव—

मारा बन्ने पगर्ना वचे शीष्रपणे वेगपूर्वक पंडयो. हवे आ वखते ते देवेंद्र, देवराज शक्तने आ ए प्रकारनी यावत्-संकला उत्पन्न थयो के, अमुरेंद्र, अमुरराज चगर, प्रमु-शक्तिवाळो-नधीं, अमुरेंद्र असुरराजं चंगर, 'समर्थ नथी तेम असुरेंद्र, असुरराज चमरनो विषय पण नथी के, ते पोताना बळथी यावत्-सौधर्मकला सुधी उंचे आवी शके. परंतु हा, जो तेणे अरिहंत, अरिहंतमां चैत्यो के भावित-आतमा अनगारोनो आशरो लीघो होय तो ते उपर आवी शके छे, पण ते सिवाय उपर : आववा तेनुं सामर्थ्य नधी. जो ते चमर कोइ तथारूप अरहंत भगवंत के भावित-आत्मा अनगार-महापुरुषनी आशरो लड्ने उपर आव्यो होय तो तो मारा फेंकेल वज दर्श ते अरहंत भगवंत के महापुरुषनी आशातना थरो, अने एम ४ वुं ते मने मोटा दु:खरूप छ, एम विचारी ते देवेंद्र, देवराज शक्ने पोताना अवधिज्ञाननो प्रयोग कर्यो अने ते द्वारा तेणे मने (श्रीमहावीरेन) जोयो, मने जोइने तुरत ज 'अरे! रे! अहो!!! हुं मराइ गयो ' एम करी ते उत्कृष्ट यावत्-दिव्य देवगतिवडे (वज्रने लड् लेवाने) वजनी पाछळ नीकळ्यो, ते शक्त इंद्रे तिरछे असंस्थ द्वीप अने समुद्रोनी वचे यावत्-जे तरफ उत्तम अशोकनुं झाड हतुं अने जे तरफ हुं (श्रीमहाबीर) हतो ते तरफ आवीने माराधी मात्र चार

" कृत्वा नवं सुरवधूभयरोमहर्षे दैखाथिपः शतमुखश्रकृटीवितानः। स्वत्पादशान्तिगृहर्षश्रयरुधचेता रुजातनुश्रुति हरेः कुलिशं चकार-॥ ३॥ भा श्लोक द्वारा दिवाकरजीए श्रीमहावीरनी स्तुति करी छे:-

"कोषे करीने जेना कपाळमां भवांओनी शतमुख रेखाओ-करचलीओ पडी मएली छे एवा दैलाधिपे (नमर इन्द्रे) पोतानी बीहामणी आकृतिथी देववधूओने बीबराववानो अपराध कर्ये। हतो, परंतु फक्त एने तारा

चरणस्य शांतिस्थाननो आश्रय मळवाथी जरा पण आंच आवी न हती अने उलढुं एणे इंद्रना (ईशान इंद्रना) वजने पण शरमावी दीधुं हतुं. " ३.

नेमिनंद सूरिए (११४० विकासो) रचेला 'सहावीर चरिय 'मां १०५० थी ५३ सुधीमां चमरोत्पात वर्णवाएलो छे— (आत्मानंदसभा०) भने कुमारपालना समसमयी हेमचंद्रसूरिए रचेला 'महावीरचरित्र 'मां १०५४ यी ५७ सुधीमां ए ज हकीकत नौंघाएली छे. ए बने सरिलोना ए उहेखमां एक वात एवी पण आवेली छे, जे, प्रस्तुत सल्लमां जणावेली हकीकतथी तहन जूदी पढे छे. आ भगवती सल्लमां जणावेष्ठं छे के, ," ए पूरण गृहपतिए दानामा नामनी दीक्षा लीधी हती "अने ए बनेना चहेखमां एम जणावेषुं छे के, " ए पूरण गृहपतिए 'प्राणामा '(पाणायाम-प्राकृत) नामनी दीक्षा क्षीधी हती "ते उछेखो आ प्रमाणे छे:—

" पडिवन्नो पब्बजं पाणायामं अभिग्गहं गेण्हे" ९२ (नेमि॰ पृ॰ ५१) "'पाणायाम' नामनी प्रवर्ज्या (अभिमहः) छीधी " ९२

" स्वयं हु नाम्ना प्राणामं तापसनतमाददे " ३८० (हेम० १०५४) "पोते तो 'प्राणाम 'नामनुं तापसनत लीधुं " ३८०

मने तो आ बने सूरिओनो आ उछेख तहन विपर्यस्त लागे छे. सूत्रोक्त 'दानामा 'प्रवज्यानो अर्थ दानमयी वा दानिमा (दानेन निर्दृत्ता) याय छे अर्थात् जे प्रवज्यामां दान देवानी किया मुख्य होय तेतुं ज नाम 'दानामा' छे अने 'पूरण' नी प्रवृत्तिमां दाननो ज भाग विशेष आवतो होवायी तेनी 'प्राणामा 'प्रवज्या संभवी शकती नथी. ए (प्राणामा) तो आगळ आवेला 'तामली 'तापसे लीधी हती. एना प्रकरणमां 'प्राणामा 'नो अर्थ तथा करूप आपेलां छे ए उपरथी स्पष्ट जाणी शकाय छे के, ए प्रवज्याने लगतुं कोई अनुष्ठान आ पूरणे कर्युं नथी. दली, ए यहे सरिओए पूरणनी चर्यानं करतां पण 'दानामा ' तुं ज अनुष्ठान वर्णन्युं छे, किंतु तेमां 'प्राणामा ' तुं एक पण अनुष्ठान जणान्युं नथी. तेम छतां मने छागे छे के, तामली तापस्रनी 'प्राणामा ' प्रवण्यानं स्मरण यहं चवाणी एओए ए जातनो विपर्यस्त उछेस करेलो होयः—अनु०

^{9.} मूळच्छाया:—उत्पतित यावत्-सीधमैः कल्पः, तद् महादुःखं खछ तथाक्ष्पाणाम् अर्हतां भगवताम्, अनगराणां च अखाशातनया इति कृत्व अवाधि प्रयुक्ते, माम् अविधना आभोगयित, हा! हा! अहो हतोऽहम् अस्म इति कृता तया उत्कृष्टया यावत्—दिव्यया देवगव्या वज्रस्य वीथिम् अनुगच्छन् तिर्यग्रं छवेयानां द्वीप—समुद्राणां मध्यमध्येन, यावत्—येनेव अशोकवरपादपः,येनेव मम् अन्तिकरतेनेव उपागच्छति, मम चतुरहुलम् असंप्राप्तं वज्रं प्रतिसंहर् रित, अपि च मम् गौतम! मुष्टिवातेन केशाशाणि वीजितवान्, ततः स शको देवेन्द्रः, देवराजो वज्रं प्रतिसंहृत्य मम त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति, वन्दते,नमस्यति, एवम् अवादीतः—एवं खछ भगवन् ! अहं त्वां निश्राय चमरेण असुरेन्द्रेण, असुरराजेन खयमेव अस्याशातितः, ततो मया परिकृपितेन समानेन चमरस्य असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य वधाय वज्रं निस्ष्यम्, ततो मम् अयम् एतद्रूपः आध्यात्मकः, यावत्—समुद्रव्यतः—नो खछ प्रभुश्चम-रोऽसुरेन्द्रः, असुरराजस्तथेव यावत्—अवधि प्रयुक्ते, देवानुप्रियान् अवधिना आभोगयामि, हा ! हा ! अहो हो हतोऽस्मि इति कृत्वा तया उत्कृष्टयन् यावतः—अतु०

१. आ चमरना उत्पात विषेनो उल्लेख, सिद्धसेन दिवाकरजीए पोतानी बीजी द्वात्रिंशिकामां, नेमिचंद्रसूरिए अने हेमचंद्रसूरिए पोतपोताना महाबीर चरितमां पण आपेलो ले अने ते आ प्रमाणे छे:—

जेणेन देनाणुष्पिए तेणेन खनाम्छामि. देनाणुष्पियाणं चउरंगुलमसपतं नज्जं पिडसाहरामि, नज्जपिदसाहरणष्ट्रयाए णं इहमागए,
इह समोसढे, इह संपत्ते, इहेन अज्ञ उनसंपिज्ञिता णं निहरामि, तं
स्वामेमि णं देनाणुष्पिया!, समंतु मं देनाणुष्पिया!—स्वंमतुमरहं ति
णं देनाणुष्पिया!, णाह मुज्जो एवं पकरणयाए ति कट्ट ममं नंदइ,
नमंसइ, उत्तरपुरिथमयं दिसीभागं अघक्षमइ, वामेणं पादेणं तिमुन्तो भूमिं दलेइ, चमरं असुरिंदं असुररायं एवं नदासिः—मुन्नो
सि णं भो चमरा! असुरिंदा! असुरराया! समणस्स भगनओ
महानीरस्स प्रभानेणं—न हि ते इदाणिं ममाओ भयं अरिथ ति
कट्ट जामेन दिसिं पाउच्भूए तामेन दिसं पिडिगए.

भांगळ छेटे रहेलुं वज्र लइ लीधुं अने हे गौतम। ज्यारे ते शक्ते वज लीधुं त्यारे तेणे एवा वेगधी मुठि वाळी हती के ते मुठिना वायुथी मारां केशाप्र वीजायां. हवे देवेंद्र, देवराज शक्ने वज्रने छड्ने, मने त्रण प्रदक्षिण करी. पछी तेणे मने नमन करी आ प्रमाणे क वुं के: -- हे भगवन्! तमारीं आशरो छड्ने असुरेंद्र, असुरराज चमरे मने मारी शोभाथी अष्ट करवी धार्यो हतो. तथी में कुषित थइ असुरेंद्र अनुरराज चमरने मारवा तेनी पाछळ बज्र मून्युं. त्यार पछी मने आ ए प्रकारनो आध्यात्मिक यावन् — संकल्प उत्पन्न थयो के, अधुरेंद्र, असुरराज चमर पोताना बळथी उपर न आची शके (इत्यादि वधुं पूर्व प्रमाणे जाणवुं) यावत्-पछी में अवधि-ज्ञाननो प्रयोग कर्यो अने ते द्वारा में आप देवानुप्रियने जोया. जोया के तुरत ज 'हा! हा! अहो!! हुं मराइ गयो ' एम विचारी ते उत्कृष्ट दिव्यगतिवडे ज्यां साप देवानुप्रिय विराजो छो सां भाव्यो अने आप देवानुप्रियथी चार आंगळ छेटे रहेलुं वज्र में छड टीधुं. वक्रने लेंबा माटे अहीं आब्यों छुं, अहीं समवसर्यों छुं, सहीं संप्राप्त थयो छुं अने अहीं ज उपसंपन्न थइने विहरं छुं. तो हे देवानुप्रिय ! हुं क्षमा मागुं. हे देवानुप्रिय ! आप क्षमा आपो, हे देवानुप्रिय ! आप क्षमा करवाने योग्य छो. हुं वार्वार एम नहीं करं-एम करीने मने वादी, नमी ते शक्त इंद्र उत्तरपूर्वना दिग्भागमा चाल्यो गयो. त्यां जइने तेणे (शक्ते) पृथ्वी उपर त्रण बार डाबो पग पछ।इयो अने असुरेंद्र असुरराज चमरने आ प्रमाणे कहां के:--हे असुरेंद्र, असुरराज, चनर! श्रमण भगवंत महावीरना प्रभावधी तुं बची गयों छे, अत्यारे माराथी तने जरा पण भय नथी, एम करी ते शक, जे दिशामांथी आव्यो हतो ते ज दिशामां पाछो चाल्यो गयो.

२. 'दाणमाए 'ति दानमय्या, 'छउमत्थकाछिआए 'ति छमस्थकाछ एव छमस्थकाछिता, तस्याम्. 'दो वि पाए साहट्टु 'ति संह्रस्य संहृती कृत्वा—जिनमुद्रया इत्यर्थः. 'वग्वारियपाणि 'ति प्रछम्बितमुजः, 'ईसिंपब्मारगएणं 'ति प्राग्भारः—अप्रतो मुखम्—अवनतत्वम्. 'अहापणिहिएहिं गतीहिं 'ति यथाप्रणिहितैः—यथास्थितैः. 'वीससाए 'ति स्वभावत एव. 'पासइ य तत्थ 'ति पश्यित च तत्र सौधमें कल्पे 'मधवं 'ति मधा महामेघाः, ते यस्य वशे सन्त्यसौ मधवान्, अतस्तम्, 'पाकसासणं 'ति पाको नाम बळवान् रिष्ठः, तं यः शास्ति निराकरोति, असौ पाकशासनः, अतस्तम्, 'सयक्वं 'ति शतं क्रत्नां प्रतिमानाम्—अभिप्रहिवशेषाणाम्, श्रमणोपास-कपश्रमप्रतिमास्त्रपाणां वा कार्तिकश्रेष्ठिभवापेक्षया यस्यासौ शतकतुः, अतस्तम्, 'सहस्तवलं 'ति सहस्रमक्षणां यस्यासौ सहस्राक्षः, अतस्तम्—इन्द्रस्य किळ मन्त्रिणां पश्च शतानि सन्ति, तदीयानां चाक्ष्णां इन्द्रप्रयोजनव्यापृततया इन्द्रसंबन्धिक्वेत विवक्षणात् तस्य सहस्राक्षक्विमिति, 'पुरंदरं ' ति असुरादिपुराणां दारणात् पुरंदरः—तम् 'जाव—दस दिसाओ 'ति इह 'यावत् ' करणात्—'' दौहिण-खूलोगाहिवहं, बचीसविमाणसयसहरसाहिवहं, एरावणवाहणं, सुरिदं, अरयंवरवत्यवरं '' अरजांसि च तानि अम्बरवस्त्राणि च स्वच्छितपाऽऽकाशकत्यवस्तानि—अरजोऽन्वरवस्त्राणि, तानि धारपति यः सः, तथा तम्, ''औरउङ्भमालमउखं ''—आछिङ्गितमाञं मुकुठं यस्य सः, तथा तम्, '' नैवहेमचारुवित्तचञ्चलकुण्डलवितिहज्जमाणगण्डम् ''—नवाम्यामिव हेम्नः सत्काम्यां चारुचित्राभ्यां चञ्चलम्यां कुण्डलभ्यां विळिख्यमानौ गण्डौ यस्य सः, तथा तम्, इसादि तावद् वाच्यम्, यावत्—दिव्येण तेएणं, दिव्याए ठेसाए ति अथ यत्र

१. मूलच्छायाः —येनैव देवानुत्रियस्तेनैव जपापच्छामि. देवानुत्रियाणां चतुरहुलम् असंत्राप्तं वलं प्रतिसंहरामि, वलप्रतिसंहरणार्थं (तया) म् इह सागतः, इह समवस्तः, इह संप्राप्तः, इहेव अद्य जपसंपद्य विहरामि, तत् क्षमयामि देवानुत्रिय!, क्षमन्तां मां देवानुत्रिय!, क्षमितुम् अहंन्ति देवानुत्रिय!, नैव भूयः एवं प्रकरणतायाम् इति कृत्वा मां वन्दते, नमस्यति, उत्तरपौरस्त्यं दिग्भागम् अपकामित, वामेन पादेन त्रिकृत्वो भूमिं दलयित, चमरम् असुरेन्द्रम्, असुरराजम् एवम् अवादीतः - मुक्तोऽसि भोः चमरा असुरेन्द्रा असुरराज! श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य प्रभावेण-न हि तव इदानी मम
भगम् अस्ति इति कृत्वा यामेव दिशं प्रावृभूतस्तामेव दिशं प्रतिगतः - अनु०

१, प्र॰ छायाः-दक्षिणार्घलोकाऽधिपतिम्, द्वार्त्रिशद्विमानशतसहस्राधिपतिम्, ऐतावणवाहनम्, सुरेन्द्रम्, अरजोऽम्बरवस्रधरम्,रे. आलिहि । मानमुक्दम् - ३. नबहेमचारुविवचहचलकुण्डलविलिङ्गमानगण्डम् :---अतु

यस्परिवारम्, यस्तुर्वाणं च तं पश्यित तथा दर्शयितुमाह—'सोहम्मे ' इत्यादि. 'अपस्थिअपस्थए 'ति अप्राधितं प्रार्थयते यः स तथा, 'दुरंतपंतलक्खणे 'ति दुरन्तानि दुष्टावसानानि, अत एव प्रान्तानि अमनोज्ञानि रुक्षणानि यस्य स तथा 'हीणपुण्णचाउद्दे 'ति हीनायां पुण्यचतुर्दश्यां जातो हीनपुण्यवातुर्दशः, किल चतुर्दशी तिथिः पुण्या जन्माश्रित्य भवति, सा च पूर्णा अत्यन्तभाग्यवतो जन्मनि भवति, अत आक्षोशत उक्तम्—' हीणपुण्णचाउद्दे 'ति 'जं णं ममं ' इत्यादि. ममं अस्याम् एतद्रूपायाम् दिव्यायां देवधीं सत्याम्, तथा दिव्ये देवानुभागे रुब्धे, प्राप्ते, अभिसमन्वागते सति 'उंध्यं 'ति ममैव 'अष्पुस्सुए 'ति अल्पौत्सुक्यः, 'अचासाइत्तए 'चि अत्याशातियतुम्—छायाया श्रंशयितुमिति. 'उसिणे 'ति उष्णः कोपसंतापात्, कोपसंतापजं चोष्णत्वं कत्यचित् स्वभावतोऽपि स्यात्, इत्याह—'उसिणच्णूए 'ति अत्वाभाविकमौष्ययं प्राप्त इत्यर्थः. 'एगे ' ति सहायाभावात्, एकत्वं च बहुपरिवारमांवेऽि विविद्यतसहायाभावाद् व्यवहारतो भवति, इत्यत आह—'अवीए 'ति अद्वितीयः, डिम्भरूपमात्रस्याऽि द्वितीयस्याभावादिति. 'एगं यहं 'ति एकाम् महतीम्, बोन्दीमिति योगः.

२. ['दाणामाए 'ति] दानमय-जेमां दाननुं प्रधानपणुं छे तेवी दीशा-तेवडे. ['छउमत्थकालिआए 'ति] छत्रस्य अवस्थावाळां समये ['दो वि पाए साह्यु'ित] बन्ने पगने भेगा करीने-जिनसुद्रापूर्वक रहीने-['बम्घारिअपाणि'ित] बन्ने हाथने नमता मूकीने. ['ईसिंपब्सारग-एगं 'ति] प्रान्भार एटले आगळ अवनतपणुं. ['अहापणिहिएहिं गत्तोहिं 'ति] यथास्थित गात्रोवडे. ['तीससाए 'ति] स्वगावे ज. ['पासइ य तत्थ 'ति | त्यां सौधर्मकल्पमां जूए छे. ['मधवं 'ति | मोटा मेघोने धश राखनार ते मघवा-तेने, ['पाकसासणं 'ति] पाक नामना बळुका शत्रुने शिक्षा करनार ते पाकशासन-तेने, ['सयक्कडं 'ति] जेणे कार्तिक शेठना जीवनमां (पोताना आगळना जीवनमां] एक जातना अभिमहरूप सो प्रतिमाओने (कतुओने) अथवा श्रावकनी पांचमी प्रतिमारूप सो प्रतिमाओने (कतुओने) वही हती ते शतकतु तेने, ['सहरसनखं रित] इजार आंखवाळो ते सहस्राक्ष-तेन, इंद्रने पांचसे मंत्रिओ छे अने पांचसे य मंत्रिओनां नेत्रो इंद्रना काममां वपराय छे माटे ते नेत्रो, औपचारिक रीते इंद्रनां पण कहेवाय छे अने तेने छड़ने इंद्रने हजार आंखो छे एम कल्पाय छे. ['पुरंदरं'ति] असुरादिकना नगरोनो नाश करनार ते पुरंदर-तेने, [' जाव दस दिसाओ 'ति] अहीं 'यावत्' शब्द मूक्यों छे माटे '' दक्षिणार्घ लोकनो घणी, बत्रीश लाख विमाननो उपरी, ऐरावण हाथिना बाहनवालो, सुरोनो इंद्र, रज विनानां अने आकाश जेवां निर्मळ बस्रोने पहेरनार, माळावाळा सुकुटने माथे मूकनार, जाणे नवां ज न होय एवां सुंदर अने विचित्र तथा चंचळ सुवर्ण कुंडळो द्वारा जेना गालो चळके छे एवो, '' इत्यादि-अर्थात् एवा प्रकारना इंद्रने चमरराज जूए छे. ए बधी हकीकत '' दिव्य तेजवडे, दिव्य लेक्यावडे " आ अर्थ मुधी कहेंची. हवे, ज्यारे चमरराजे इंद्रने जोयो त्यारे सौधर्मकल्पमां इंद्र, केटला परिवार साथे बेठो छे अने छुं करे छे, ते वातने दर्शाववा कहे छे के, ['सोहम्मे ' इत्यादि.] ['अपत्थिअपत्थओ 'ति] अपार्थित-अनिष्ट-वस्तुनी प्रार्थना करनार-मरणनो इच्छुक, ['दुरंतपंतलक्खणे 'ति] एनां लक्षणो नठारां परिणामवाळां छे माटे ज ते खराब लक्षणोत्राळो कहेवाय. ['हीणपुन्नचाउद्देसे 'ति] हीणी पुण्य चाद-शने दिवसे जन्मेल-जन्मने माटे चौदश तिथि पवित्र मनाय छे, अने अत्यंत माग्यवंतना जन्म समये ज ते चौदश पूर्ण होय छे. अहीं चमरराज शक इंद्रने 'हीणी पुण्य चौदशने दिवसे जन्मेल' एवं विशेषण आपवाधी ते उपर ए विशेषण द्वारा पोतानी आक्रोश दर्शाव्यो छे. ['जं णं ममं 'इत्यादि.] मारे आ आवी जातनी दिव्य देवऋदि होवा छतां तथा में दिव्य देव प्रभावने लब्ध, प्राप्त अने सामे आण्या छतां, ['अप्पिं 'ति] मारा ज उपर, ['अप्पुस्सुत् 'ति] गमराट विना-शांतिपूर्वक-ओछी उतावळे. ['अच्चासाइत्तत् 'ति]शोमाथी भ्रष्ट करवाने. ['उसिणे 'ति]कोपना संतापथी उनो थयो, कोपसंताप जन्य उनापणुं कोइने स्वाभाविक पण होय माटे कहे छे के, ['उसिणब्भूए 'ति] अस्वाभाविक उकळाटने पामेलो . ['एमे 'ति] कोइनी सहाय न होवाथी एकलो, घणो परिवार होय, पण जो जोइए तेवी सहायता न होय तो कार्य करनार मनुष्य, व्यवहार्थी एकलो ज गणाय छे माटे कह्युं छे के, ['अबीए 'ति] एक बाळक पण जेनी साथे नथी एवो अर्थात् एकलो ज. ['एगं महं 'ति] एक मोटा ' शरीरने ' एम संबंध करवो.

३. 'घोरं ' हिंसाम्, कथम्?, यतो घोराकारां हिंसाक्रितम्, 'भीमं 'ति भीमाम्—विकराळवेन भयजनिकाम्, कथम्!, यतो भीमाकारां भयजनकाक्रतिम्, 'भासुरं 'ति भास्तराम्, 'भयाणीजं 'ति भयम्—आनीतं यया सा भयानीता, अतस्ताम्, अथवा भयं भाहे गुःवार्, अति तम् तरा रेवारम् तम्, उटका-स्फुळिङ्गादिसैन्यं यस्याः सा भयानीका, अतस्ताम् ' गंभीरं 'ति गम्भीराम्-विकीणीवयवत्वात् ' उत्तासणयं 'ति उत्तासनिकाम्, ' असी उद्देगे ' इति वचनात् स्मरणेनाप्युदेगजनिकाम्, ' महाबाँदिं 'ति महाप्रभावतन्तम् ' अप्कोडहं 'ति वरास्कीटं करोति, ' पायदहरगं 'ति भूमेः पादेन आस्कोटनम्, ' उच्छोळेइ 'ति अप्रतो मुखां चपेटां ददाति ' पच्छोळेइ 'ति पृष्ठतो मुखां चपेटां ददाति, ' तिवइं ।छिंदइ 'ति मछ इव रङ्गम्भी त्रिपदीच्छेदं करोति, ' अत्यवेइ 'ति उच्छृतं करोति, ' विद्वेद्दे 'ति ववृत करोति, ' आकष्ट्रन्ते व 'ति समाकर्षयन्त्रित, ' विद्वःभाएमाणे 'ति च्युद्दाजमानः शोममानः, विजृत्भमाणो वा, व्युद्धाजयन् वाऽम्वरत्वले परिघरत्निति योगः. ' इंदकीलं 'ति गोपुरकपाटयुगसंधिनिवेशस्थानम्, ' निह ते 'ति नेव तव ' फुर्लिगजाला-' इत्यादि. स्कुळिङ्गानाम्, ज्वालानां च या मालाः तासां यानि सहस्राणि तानि, तथा तैः, चक्षुविक्षेपश्च चक्षुर्वमः, दृष्टिप्रतिघातम् दर्शनाभावः, चित्रविक्षातम्, तद्रपि कुर्वत्—अपि विशेषणसमुचये. ' हुअवह '—इत्यादि. हुतवहातिरेकेण यत् तेजः, तेन दीप्यमानं यत् तत् तथा, ' जङ्गवेगं 'ति जयी शेषवेगवद्देगजयी वेगो यस्य तत् तथा, ' महन्त्रयं ति महतां भयमस्मादिति महद्रयम्, कस्मादेवम् शिवाह्म-भयकरं भयकर्तः, ' क्षियाह्म' विष्वाद्विक्षत्र तद्रभिळपति, स्वयावि—किमेतत् श्वति चित्रवर्वति, तथा ' पिहाह 'ति स्पृह्मिति—ययेवविष्यं प्रहरणं मम अपि स्वादिस्येव तद्रभिळपति, स्वयानमनं वाऽभिळपति, अथवा ' पिहाह 'ति अक्षिणी पिषते निमीळ्यति, ' पिहाह क्षियाह्म' ति पूर्वोक्तमेव क्रियाह्म व्यत्वेद्वेद वर्ह्याद्वेद वर्ह्याद्व कर्ह्याद्व कर्ह्याद्व वर्ह्याद्व कर्ह्याद्व कर्ह्याद्व

मवया--

दा ।मा

*सन श्नक्ष

प्रदर.

वे 'ति संभगी मुकुटिवटपः शेखरकितितारी यस्य स-तथा 'सालंबहृत्थाभरणे 'ति सह आलम्बेन प्रलम्बेन वर्तन्ते सालम्बानि तानि हत्ताभरणानि यस्य अधोमुखगमनवशादती सालम्बह्ताभरणः, 'कम्खागयसेअं पिव 'ति भयाऽतिरेकात् कक्षागतस्वेदिमय मुखयन्, देवानां किल खेदो न भवतितिसंदर्शनार्थः 'पिव' शब्दः. 'झात्ते वेगेण'ति वेगेन समवपिततः. कथम् ! झागीते झिटिति कृत्वा, 'पमु'ति शक्तः, 'सगत्ये' ति संगतप्रयोजनः, 'हा हा ' इत्यादेः संस्कारोऽथम्—हा ! हा ! अहो ! हतोऽहमस्म, इति कृत्वा व्यक्तं चैतत्. 'अवि या इं 'जि, 'अपिच 'इति अभ्युखये 'आ ' इति वाक्यालंकारे. 'मुङ्गिंगएणं 'ति अतिवेगेन वन्नप्रहणाय यो मुष्टिवन्धने वात उत्पन्नोऽसी मुष्टिवातस्तेन मुष्टिवातने, 'केसग्गे 'ति केशाप्राणि 'विहत्या' वीजितवान् 'इहमागए' ति तिर्यग्लोके, 'इह समोसिढे 'ति मुस्मारपुरे 'हह संपत्ते 'ति उद्याने 'इहेच 'ति इहैवोद्याने 'अज्ञे 'ति अद्य अस्मिनहिन अथवा हे आर्य ! पापकर्मविहिर्मूत!, अर्य ! वा स्वाभिन् ! 'उवसंपाजिता णं 'ति उपसंपद्य उपसंपन्नो मूत्वा, विहरामि वर्ते, 'नाइ मुज्जो 'ति नैव भूयः, 'पकरण्याए' ति एवं प्रकरणतायां वर्तिष्ये इति शेषः. 'इदाणिं ' ति इदानीम्—(संप्रति इत्यर्थः) सांप्रतम् इत्यर्थः

नो उत्पात.

क्रिनुं वज्रः

अक्टिका

३. शरीर केंबुं छे ? तो कहे छे-['घोरं 'ति] हिंस-कूर, एवुं कम ? तो कहे छे के, घोर आकारवाळुं छे माटे. वळी ['भीमं 'ति] विकराळ होवाथी भय उत्पन्न करनारुं, एवं केम? तो कहे छे के, भयंकर आकारवाळुं छे माटे. ['भासुरं 'ति] भास्वर, ['भयाणीअं 'ति] भयने आणनारुं अथवा भयमां कारणरूप परिवार (उस्का अने अभिना कणियारूप सैन्य) वाळुं, ['गंभीरं 'ति] विकीर्ण अवयवीवाळुं होवाथी गंभीर, ['उत्तास-णीयं ' ति] संसारवाशी पग उद्वेग पेदा करनारं, ['महाबोंदिं 'ति] मोटा प्रभाववाळा शरीरने. ['अफोडेइ 'ति] हाथ पछाडे छे, ['पायदद्रसं ' ति] जमीन उपर पग पछाडे हे, ['उच्छोलेइ 'ति] आगळना भागमां पादु मारे छे-उछळे छे, ['पच्छोलेइ 'ति] पाछळना मागमां पादु मारे छे-पछडाय छे, ['तिवइं छिंदइ' ति] मछनी पेठे रंगभूभि-मेदान-मां त्रिपदीमो छेद करे छे, ['ऊसवेइ'ति] उंची करे छे, [['विडंबेइ'ति] मुखने पहोळुं करे छे, ['आकडूंते ब'त्ति] जाणे खेंचतो न होय, ['विउन्माएमाणे व'त्ति] शोमतो अथवा 'आकाशमां परिघ रत्नेन ' उलाळतो एम संबंध करवो. ['इंद्रकीलं 'ति] दरवाजाना (वे कमाडना) संधिने राखवातुं स्थान ते इंद्रकील अर्थात् दरवाजी-वे कमाड-बंध थतां तेने अटका वनारों जमीन वचे खोडेलो खीलो. ['नहि ते'ित] तने (सुख) नथी ज. ['फुलिंगजाला ' -इत्यादि.] अधिना तणखाओनी अने जालोनी हुंजारें माळा-तेवडे आं मां अमने करतुं अने ['दिद्विपडिधायं 'पिरें] आंखने अंजायी नाखतुं-आंखनी जोवानी शक्तिनो नाश करतुं. ['द्वुअवह 'इत्यादि. अभि करतां वधारे तेजवडे दीपतुं, ['जइणवेगं 'ति] बधी वेगवाळी वस्तुओना वेगने जीतनारुं तथा ['महन्मयं 'ति] मोटा मनुष्योने बीवरावनारु एवं केम ? तो कहें छे के, सर्वकर छे माटे. ['झियाइ 'ति] ' आ शुं ? 'एम चिंतवे छे तथा ['पिहाइ 'ति] ' जो आवी जातनं हथियार मारी पासे होत तो केंबुं सार्क यात ' ए प्रमाण तेनी स्पृहा करे छे अथवा पोताने ठेकाणे जवानी अभिलाषा राखे छे, अथवा ['पिहाइ 'ति] आंखोने मीची जाय छे, ['पिहाइ, झियाइ'ित] आगळ कहेली बन्ने कियाओने पूर्व करतां उलटी रीते करे छे. आ वात कहेवाथी ते चगरनी घणी व्याकुळता जणा-वाय छे. ['तहेव' ति] जे समये चिंतव्युं ते ज समये. ['संगम्गमउडिविडवे' ति]जेना मुकुटनुं छोगुं भांगी गयुं छे-ते, [' सालंबहत्थामर्ण ' ति] जेना हाथनां घरेणां साळंब-लटकतां-छे ते, तेम थवानुं कॉरण-ते नीचे मुख राखीने गति करे छे ए छे. ['कक्खागयेसअं पिर्वे 'ति] जाणे काखमां आवेश परसेवारे न मूकतो होय. ['झत्ति वेगेणं' ति] वेगपूर्वक पड्यो, केवी रीते ? तो कहे छे के, शीवतानी ['पसु 'ति] शक्तिवाळी ['समत्थे 'ति] संगत प्रयोजनवाळी. ['हा हा '] इत्यादिनो संस्कार आ छे-' हा! हा! अहो ! हतोऽहम् अस्मि ' हाय! हाय! आहो ! हुं हणाइ गयो छुं ' एम करीने. ए पाठनो अर्थ स्पष्ट छे. [' अंति या इं 'ति] [' मुहिबाएणं 'ति] घणा वेगथी वज्रने ब्रहण करवा माटे मुिठ वाळता उत्पन्न थएल पवन ते मुष्टिवात-तेवडे-['केसगो 'ति] केशना आगळना भागोने-वाळनी टोचोने ['वीइत्था '] वींज्या. ['इहमागए 'ति] अही तिर्यग्लोकमां आव्यो, ['इह सगोसढे 'ति] आ सुसमार पुरमां समवसर्यो, ['इह संपत्ते 'ति] आ हबानमां आव्यो, ['इहेच 'ति] आ ज उद्यान-मां ['अजो 'ति] आज-दिवसे-अथवा हे आर्थ!-पापकर्मरहित पुरुष ! अथवा हे स्वामिन् ! [' उवसं। जित्ताणं 'ति] उपसंपन्न यहने वर्तुं छुं. [नाइ भुजा 'ति] वारंत्रार ['पकरणयाए 'ति] एम करवाने वर्तीश नहीं-वारंवार एम नहीं करुं. ['इदाणिं 'ति] हमणां-आ वखते.

ऽ बीजः**य**ः.

२२. प्र०—''भंते !' ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ एवं बदासी:-देवे णं भंते ! महिड्डीए, जाव-महाणुभागे पुन्तामेव पोग्गलं खिवित्ता पभू तमेव अणुपरि-यहिता णं गेण्डित्तए ?

२२. उ० — हंता, पभू.

२३. प्र०--से केणहेणं जाव-गिण्हित्तए ?

२२. प्र०—' हे भगवन् !' एम कही भगवान् गौतमे श्रमण भगवंत महावीरने वांद्या, नमस्कार कर्यो अने तेओए आ प्रमाणे, कहुं के:—हे भगवन् ! देव मोटी ऋदिवाळो छे, मोटी कांतिवाळों छे अने यावत्—मोटा प्रभावयाळो छे के, जेथी ते पूर्वे—पहेलां—ज पुद्रलने फेंकीने पछी तेनी पाछळ जइने तेने प्रहण करवा समर्थ छे।

२२. उ०-हे गौतम! हा, देव तेम करवा समर्थ छे.

२१. प०—हे भगवन् । पहेलां फेंकेल पुद्रलने, देव, पाछवं जइने लइ शके छे, तेनुं छुं कारण ?

Jain Education International

१. १ त्रस् 'धातु ' उदेग ' अर्थवाळो छे. २ आ शब्द, विशेषणना समुचयनो दर्शक छे. १. 'अभिच ' ए शब्द समुचयदर्शक छे. अने ' आ आ शब्द बाक्यमां अरुकारहत छे. ४. देवोने परसेवो नथी होतो. ए वातनो दर्शक ए शब्द छे:—श्रीअभय०

१ मूलच्छायाः—ागवन् ! इति भगवान् गौतमः श्रम्णं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नगस्यति एवम् अवादीतः-देवो भगवन् ! महाधिकः, यावतः महातुभागः पूर्वमे । पुर्वते शिण्वा प्रभुस्तमे । अनुपर्यहृत महीतुम् ! हन्त, प्रभुः, तद् केनाधेन ग्रावद्-प्रद्वीतुम् !:—अनुक

२२. उ०— १गोयमा! पोग्गले णं विक्लिते समाणे पुव्वासेव सिग्वगई भवित्ता ततो पच्छा मंदगती भवति, देवे णं महिड्डीए पुवित्रं पि य, पच्छा वि सीहे, साहगई चेव, तुरिए तुरिअगई चेव, से तेणहेणं जाव-पभू गेण्हित्तए.

२४. प्र०—जइ णं भंते ! देवे महिड्डीए, जाव-अणुपरिय-दित्ता णं गेण्हित्तए, कम्हा णं भंते ! सकेणं देविंदेण देवरण्णा चमरे असुरिंदे असुरराया नो संचाइए साहित्थं गेण्हित्तए ?

२४. उ० — गोयमा! असुरकुमाराणं देवाणं अहे गइविसए सीहे सीहे चेव, तुरिए तुरिअगई चेव; उडूं गइविसए अप्पे अप्पे चेव, मंदे मंदे चेव; वेमाणिआणं उडूं गइविसए सीहे सीहे चेव, तुरिए तुरिए चेव; अहे गइविसए अप्पे अप्पे चेव, मंदे मंदे चेव-जावित्यं खेत्तं सके देविंदे, देवराया उडूं उप्पयइ एकेणं समएणं, तं वज्जे दोहिं; जं वज्जे दोहिं, तं चमरे तिहिं; सन्वत्थोवे सकस्स देविंदस्स देवरण्णो उडूलोअकंडए, अहोलोअकंडए संखेज्जगुणे. जावातियं खेत्तं चमरे असुरिंदे असुरराया अहे उवयइ एकेणं समयेणं, तं सके दोहिं; जं सके दोहिं, तं वज्जे तीहिं, सन्वत्थोवे चमरस्स असुरिंदस्स, असुररण्णो अहेलोगकंडए, उडूलोअकंडए संखेजगुणे; एवं खलु गोयमा! सकेणं देविंदेणं, देवरण्णा चमरे असुरिंदे, असुरराया नो संचाइए साहिंथ गेण्हित्तए.

२५. प्र० —सक्सस्स णं भंते! देविंदस्स देवरण्णो उडूं, अहे, तिरियं च गइविसयस्स कयरे कयरेहिंतो अप्पे वा, बहुए वा, तुल्ले चा, विसेसाहिए वा ?

२५. उ०—सञ्वत्थोवं खेत्तं सके देविंदे, देवराया अहे उवयह एकेणं समएणं, तिरियं संखेळे भागे गच्छह, उड्ढं संखेळे भागे गच्छह. २३. उ०—हे गौतम! ज्यारे पुद्रल फेंकवामां आवे छे खारे तेनामां शरुआतमां ज शीधगात होय छे अने पछी ते मंदगतिवाळुं थइ जाय छे. तथा मोटी ऋदिवाळो देव तो पहेलां पण अने पछी पण शीध होय छे, शीध्र गतिवाळो होय छे, त्वरित होय छे अने खिरत गतिवाळो होय छे, माटे—ए कारणधी ज यावत्—देव, फेंकेल पुद्रलने पण तेनी पाछळ जइने लइ शके छे.

२४. प्र०—हे भगवन्! जो मोटी ऋदिवाळो देव, यावत्— पाछळ जइने छइ शके छे तो पछी हे भगवन्! देवेंद्र, देवराज शक्र, पोताना हाथे असुरेंद्र, असुरराज चमरने पकंडवा केंग न समर्थ निवड्यो?

२४. उ० — हे गौतम! असुरकुमार देवोनो नाचे जवानो विषय शीव्र, शीव्र तथा त्वरित,त्वरित होय छे अने उंचे जवानो विषय अल्प, अल्प तथा मंद, मंद होय छे. वैमानिक देवोनो उचे जवानो विषय शीघ, शीघ तथा त्वरित, त्वरित होय छे अने नीचे जवानो विषय अल्प, अल्प तथा मंद, मंद होय छे-एक समयमा देवेंद्र देवराज शक्र, जेटलो भाग उपर जइ शके छे तेटलुं ज उपर जवाने वजने बे समय लागे छे अने तेट छं ज उपर जवाने चमरने त्रण समय छागे छे अर्थात् देवेंद्र देवराज शक्तनुं ऊर्ध्व होकर्कंडक-उंचे जयाने थतुं काळमान-सौथी थोडुं छे अने अघोटोककंडक तेना करतां संख्येयगणुं छे. एक समयमां अमुरेंद्र असुरराज चमर, जेटलो भाग नीचे जइ शके छे तेटलुं ज नीचे जवाने शक्रने बे समय लागे छे अने तेटलुं नीचे जवाने वज्ञते त्रण समय लागे छे अर्थात् असुरेंद्र असुरराज चमरनुं अधोलोककंडक सौधी थोडुं छे अने ऊर्ध्वलोककंडक तेना करतां संख्येयगणुं छे. हे गौतम! ए कारणने लड्ने देवेंद्र, देवराज शक्र पीताना हाथे असुरेंद्र, असुरराज चमरने पकडवा समध न निवड्यो.

२५. प्र०—हे भगवन्! देवेंद्र, देवराज शक्तनो ऊर्ध्वगतिविषय, अधोगतिविषय अने तिर्थगतिविषय; ए बधामां कयो विषय कया विषयथी अल्प छे, बहु छे, सरखो छे के विशेषाधिक छे?

२५. ड०—हे गौतम! एक समये देवेंद्र, देवराज शक सौथी थोडो भाग नीचे जाय छे, तिरहुं, ते करतां संख्येय भाग जाय छे अने उपर पण संख्येय भाग जाय छे.

^{9.} मूलच्छायाः—गैतम ! पुद्र विक्षिप्तं सत् पूर्वमेव शीव्रगति भूत्वा ततः पश्चाद् मन्दगति भवति, देवो महर्षितः पूर्वमिष च, पश्चाद्षि शीव्रः शीव्रगतिश्वेव, त्वरितः, त्वरितगतिश्वेव, तत् तेनार्थेन शावत्-प्रमुप्रहीतुम्, यदि भगवन् ! देवो महर्षितः, यावत्-अनुपर्यः प्रशित्रम्, करमाद् भगवन् ! शक्केय देवेन्द्रेण देवराजेन वमरोऽपुरेन्द्रः, अपुरराओ नो शिक्ताः स्वहस्तेन प्रशित्तम् ! अपुरकुमाराणां देवानाम् अधोगितिविषयः शीव्रः शिव्रः एव, त्वरितः त्वरितगतिश्वेव; अध्योगितिविषयः शिव्रः, अस्यश्वेव, मन्दः, मन्दश्वेव, वमानिकानां देवानाम् अध्यं गितिविषयः शीव्रः, शीव्रश्वेव, त्वरितः त्वरितश्वेव; अधोगितिविषयः अल्पः अल्पश्चेव मन्दः, मन्दश्वेव—यावत्तं सेत्रं शको देवेन्द्रः, देवराजः अर्ध्वम् उत्पति एकेन समयेन, तद् वजं द्वाभ्याम् , यद् वजं द्वाभ्यां तत् चमरश्चितिः; सर्वेतोकं शकस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य अर्ध्वेठोककाण्डकम्, अधोठीककाण्डकं संख्येयगुणम्; यावत्कं क्षेत्रं चमरोऽसुरं-न्द्रः, अपुरराजः अधोऽत्रपति एकेन समयेन, तत् शको द्वाभ्याम्; यत् शको द्वाभ्याम् तद् वजं त्रिभिः, सर्वस्तांकं चमरस्य अपुरेन्द्रस्य, अपुरराजस्य अधोठोककाण्डकम्, अर्थतेशेककाण्डकम्, संख्येयगुणम्; एवं खलु गीतम ! शकेण देवेन्द्रण्, देवराजेन नो चमरः अपुरराजः शकितो इस्तेन महीतुम्, शक्ता समयन् ! देवेन्द्रस्य देवराजस्य अर्थते, तिर्थक् च गतिविषयस्य कतरः कतरेभ्यः अल्पो वा बहुवा, तुल्यो वा, विशेषाऽधिको वा ! सर्वस्तोकं क्षित्रं सक्तो देवेन्द्रः, देवराजः अर्थोऽद्वरतिः—अतु०

२६. प्र०—चमरस्स णं भंते । असुरिंदस्स, असुररण्णो उडूं, अहे तिरियं च गइविसयस्स कयरे कयरेहिंतो अप्पे वा, बहुए वा, तुल्ले वा, विसेसाहिए वा ?

२६. उ०—ंगीयमा ! सन्वत्थोवं खेत्तं चमरे असुरिंदे, असुर-राया उडूं उप्यद एक्केणं समएणं, तिरियं संखेळे भागे गच्छइ, अहे संखेळो भागे गच्छइ.

—वजां जहा सकस्स तहेव, नवरं-विसेसाहिअं कायव्वं.

२७. प्र०—सद्यस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो उवयण-कालस्स य, उप्पयणकालस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा, बहुआ वा, तुल्ला वा, विसेसाहिआ वा ?

२७. उ—गोयमा ! सन्वत्थोवे सक्सस देविंदस्स देवरण्णो उड्ढूं उप्पय काले, उवयणकाले संखेळागुणे.

—चमरस्स वि जहा सक्स्स, नवरं-सव्वत्थोवे उवयणकाले, उप्पयणकाले संखेळगुणे.

२८. प्र०--वजस्स पुच्छा ?

२८. उ०— गोयमा ! सन्वत्थोवे उप्पयणकाले, उवयणकाले विसेसाहिए.

२९. प्र० — एयस्स णं भंते ! वज्जस्स, वज्जाहिवइस्स, चम-रस्स य, असुरिंदस्स असुररण्णो उवयणकालस्स य, उप्पयणका-लस्सं य कयरे कयरेहिंतो अपा वा, बहुआ वा, तुल्ला वा विसे-साहिआ वा ?

२२. उ० — गोयमा ! सकस्स य उप्पयणकाले, चमरस्स य उवयणकाले, एए णं दोाण्ण चि तुला सन्वत्थोवा; सकस्स य उवयणकाले, वज्जस्स य उप्पयणकाले एस णं दोण्ह वि तुले संखेजगुणे; चमरस्स य उप्पयणकाले, वज्जस्स य उवयणकाले एस दोण्ह वि तुले एस दोण्ह वि तुले विसेसाहिए.

४. इह लेष्ट्वादिकं पुद्गलं क्षितं गच्छन्तं क्षेपकमनुष्यस्तावद् प्रहीतुं न शक्नोतीति दृश्यते, देवस्तु किं शक्नोति? येन शक्तेण वज्रं क्षितं संद्वतं च, तथा वज्रं चेद् गृहीतम्, चमरः कस्मान गृहीतः? इत्यिमप्रायतः प्रस्तावनोपेतं प्रश्नोत्तरमाह—'मंते' इत्यादि. 'सीहे' चि शीव्रो वेगवान्, स च शीव्रगमनशक्तिमात्रापेक्षयाऽपि स्थात् अत आह-'सिहगई चेव' ति शीव्रगतिरेव-नाऽशीव्रगतिरिव, एवंभूतश्च कायापेक्षयाऽपि स्थात्, अत आह—'तुरिथगइ'ति व्वरितः.—त्वरावान्, स च गतेरन्यत्राऽपि स्थात्, इत्यत आह—'तुरिथगइ'ति व्वरितगतिः, मानसौत्सुक्यप्र-

२६. प्र०—हें भगवन् ! असुरेंद्र, असुरराज चमरनो ऊर्ध्वगति-विषय, अधोगतिविषय अने तिर्थगातिविषय; ए बधामां कयो विषय कया विषयथी अल्प छे, बहु छे, सरखो छे के विशेषाधिक छे?

२६. उ०—हे गौतम! असुरेंद्र, असुरराज चमर, एक समये सौथी थोडो भाग उपर जाय छे, तिरछुं, ते करतां संख्येय भाग जाय छे अने नीचे पण संख्येय भाग जाय छे.

—वज्र संबंधी गतिनो विषय शक्तनी पेटे जाणवी. विशेष ए के गतिनो विषय विशेषाधिक करवी.

२७. प्र०—हे भगवन्। देवेंद्र, देवराज शक्तनो नीचे जवानो काळ अने उपर जवानो काळ; ए वे काळमां कयो काळ कोनाथी थोडो छे, ववारे छे, सरखो छे अने विशेषाधिक छे!

२७. ड०--हे गौतम! देवेंद्र, देवराज शक्तनो उपर जवानो काळ साँधी थोडो छे अने नीचे जवानो काळ संख्येयगुण छे.

—चमर संबंधे पण शक्रनी पठे जाणबुं. विशेष ए के, तेनो नीचे जवानो काळ सौधी थोडो छे अने उपर जवानो काळ संख्येयगुण छे.

२८. प्र०-भगवन् ! वजना ए बने काळमां कयो काळ थोडो छे, वधारे छे, सरखो छे अने विशेषाधिक छे?

२८. उ० — हे गौतम! वज्रनी उंचे जवानी काळ सौथी थोडो छे अने नीचे जवानी काळ विशेषाधिक छे.

२९. प्र॰—हे भगवन् ! ए वज्र, वज्रानिपति—इंद्र-अने असुरेंद्र असुरराज चमर; ए वधानो नीचे जवानो काळ अने उंचे जवानो काळ; ए बेमां कयो कोनाथी अल्प छे, वधारे छे, सरखो छे के विशेषाधिक छे?

२९. उ०—हे गौतम! शक्रनो उपर जवानो काळ अने चमरनो नीचे जवानो काळ, ए बन्ने सरखा छे अने सौथी थोडा छे. शक्रनो नीचे जवानो काळ अने बन्ननो उपर जवानो काळ, ए बन्ने सरखा छे अने संख्येयगणा छे. चमरनो उंचे जवानो काळ अने वन्ननो नीचे जवानो काळ, ए बन्ने सरखा अने विशेषाधिक छे.

www.jainelibrary.org

^{&#}x27; १. मूलच्छायाः — चमरस्य भगवन् ! असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्थेक् च गतिविषयः कतरः कतरेभ्यः अल्शे वा, बहुको वा तुल्यो बा, विशेषाऽधिको वा ? भातम ! सर्वस्तोकं क्षेत्रं चमरोऽस्ररेन्द्रः, असुरराज ऊर्ध्वम् उत्पत्ति एकेन समयेन, तिर्थक् संख्येयान् भागान् गच्छति, अधः संख्येयाम् भागान् गच्छति. वश्रं यथा शकस्य तथेय, नवरम्-विशेषाऽधिकं वर्तव्यम्, शकस्य भगवन् ! देवेन्द्रस्य देवराजस्य अवपत्तनकालस्य च, उत्पत्तनकालस्य च कतरे कतरेभ्ये ऽत्या वा, बहुका वा, तुल्या वा, विशेषाधिका वा ? भातम ! सर्वरतोकः शक्स्य देवन्द्रस्यः देवराजस्य अवपत्तनकालः, अवपत्तनकालः संख्येयगुणः, चमरस्याऽपि-यथा शकस्य, नवरम्—सर्वस्तोकोऽवपत्तनकालः, उत्पत्तनकालः संख्येयगुणः, दल्रस्य पृच्छा, भातम ! सर्वस्तोकः उत्पत्तनकालः, अवपत्तनकालो विशेषाधिकः एतस्य भगवन् ! विश्वस्य, वजाऽधिपस्य, चमरस्य च असुरेद्रस्य, असुरराजस्य अवपत्तनकालः, एते। द्वा अपि तुल्या सर्वस्तोकोः, शकस्य च अवपत्तनकालः, वृत्रस्य च अवपत्तनकालः एते। द्वा अपि तुल्या सर्वस्तोकोः, शकस्य च अवपत्तनकालः, वृत्रस्य च अवपत्तनकालः एते। द्वा अपि तुल्या सर्वस्तोकोः, चक्रस्य च अवपत्तनकालः वृत्रस्य च अवपत्तनकालः एते। द्वा अपि तुल्या सर्वस्ताकोः, विशेषाऽभिकोः —अतु०

वर्तितवेगवद्गतिरिति, एकार्था चैते शब्दाः. 'संचाइए 'ति शिकतः 'साहित्थं 'ति स्वहस्तेन. ' गइविसए 'ति इह यदापि गतिगोचरभूतं क्षेत्रं गतिविषयशब्देनोच्यते, तथापि गतिरेव इह गृह्यते, शीघादिविशेषणानां क्षेत्रेऽयुज्यमानत्वाद् इति. 'सीहे' ति शीघो वेगवान् , स चाऽनैकान्तिकोऽपि स्यात्, अत आह—'सीहे चेव' ति शीव एव. एतदेव प्रक्षवृत्तिप्रतिपादनाय पर्यायान्तरेणाह-त्वरितः विरितश्चेतिः 'अप्पे अप्पे चेव' त्ति अतिशयेन अल्पोऽतिस्तोक इत्पर्थः. 'मंदे मंदे चेव' ति अत्यन्तमन्दः. एतेन च देवानां गतिसक्रपमात्रमुक्तम्, एतसिंध गतिसक्षे सति शक्र-वज-चमराणामेकमाने ऊर्ध्वादौ क्षेत्रे गन्तव्ये यः कालभेदो भवति, तं प्रत्येकं दर्शयनाह-'नावइयं' इयादि. अथेन्द्रस्य ऊर्ध्वा-ऽधःक्षेत्रगमने कालभेदमाह-' सन्वत्थोवे सकस्स ' इत्यादि. सर्वस्तोकं खल्पम् ,शक्रस्य ऊर्ध्वलोकगमने कण्डकं कालखण्डम्-ऊर्घ्यलोककण्डकम्, ऊर्व्यलोकगमनेऽतिशीन्नत्वात् तस्य. अधोलोकगमने कण्डकं कालखण्डम्-अधोलोककण्डकं संख्या-तगुणम्-ऊर्व्वलोककण्डकापेक्षया द्विगुणमिलार्थः, अघोलोकगमने शकस्य मन्दगतित्वाद्, द्विगुणात्वं च 'सकस्स उप्पर्णकाले, चमरस्स य उवयणकाले एए णं दोण्णि वि तुला ' तथा ' जावातियं खेत्तं चमरे असुरिंदे असुरराया अहे उवयह इक्केंग समयेणं तं सके दोहिं'ति वक्ष्यमाणवचनद्वयसामर्थ्याल् लभ्यमिति. 'जावइयं' इत्यादिसूत्रद्वयमधःक्षेत्रापेक्षं पूर्ववद् व्याख्येयम्. 'एवं खलु 'इत्यादि च निम्मदम्. अथ शकादीनां प्रत्येकं गतिक्षेत्रस्य अल्प-बहुत्वोपदर्शनाय सूत्रत्रयमाह-'सक्स्स ' इत्यादि. तत्र-ऊर्वम्, अधः, तिर्यक् च यो गतिविषय:-गतिविषयभूतं क्षेत्रमनेकविधम्, तस्य मध्ये कतरो गतिविषयः कतरस्माद् गतिविषयात् सकाशात् अल्यादिरिति प्रश्नः. उत्तरं तु-सर्वस्तोकमभःक्षेत्रम् समयेनाववतति-अधोमन्दगतित्वात् शक्रस्य. 'तिरियं संखेजे भागे गच्छइ' ति वहपनयां किल एकेन समयेन योजनमधो गच्छति शकः, तत्र च योजने द्विधाक्तते ह्रौ भागा भवतः, तयोश्वैकस्मिन् द्विभागे नीलिते त्रयः .संख्येयाः भागा भवन्ति, अतस्तान् तिर्थग् गच्छति—सार्थं योजनमिसर्थः—तिर्थगातौ तस्य शीव्रगतित्वात् . 'उड्ढं संसेजे भागे गच्छइ 'ति यान् , किछ कल्पनया त्रीन् द्विभागांस्तिर्थम् गच्छति, तेषु चतुर्थेऽप्यस्मिन् द्विभागे मीलिते चलारो द्विभागरूपाः संख्यातभागाः संभवन्ति, अतस्तान् कर्ध्व गच्छति.

8. ' कोइ पुरुष ढेफुं के दड़ा बगरेने फेंकी, पछी ते जता ढेफा के दड़ानी पाछळ जड़, तेने पकड़ी शकतो नथ़ी 'ए प्रमाण जगतमां देखाय छे अर्थात् ए रीते मनुष्योमां देखाय छे. तो शुं देशमां पणस्ए ज रीत छे ? के शुं देश, फेंकेळ वस्तुने, तेनी पाछळ जइ पकडी शके छे? जेथी शक इंद्रे केंक्रें वजनी पाछळ जह तेने पकडी लीधुं तथा जो इंद्र वज्रनुं ग्रहण करवा समर्थ हतो तो, तेणे चारने शामाटे न पकडवो? ए ,अभिप्रायथी प्रस्ता-वनावाळुं प्रश्न अने उत्तर सुत्र कड़े छे -['मंते ! 'इत्यादि .] ['सीहे 'ति] वेगवाळो 'कोइ वेगवाळो एवो पण होय के जेनामां मात्र सत्ता तरीके शीव गमनशक्ति ज होय, माटे कई छ के, ['सीइगई चेक' ति] ए शीव गतिवाळो ज छे, पम अशीवगतिवाळो नथी. कोइ शीव गतिवाळो शरीरनी अपेक्षाए पण होय माटे कहे छ के, ['तुरिअ 'ति] त्वरावाळो, कोइ अवस्वाळो गति सिवाय बीने ठेकाणे पण होय माटे कहे छे के, ['तुरिअगइ'ित] त्वरावाळी गतिवाळो-मानसिक उत्सुकतापूर्वक प्रवर्तेळी लेगवाळी गतिवाळो-ए वधा शब्दो सरखा अर्थवाळा छे. ['संचाइए' त्ति] सर्मध थयो, [" साहित्यं 'ति] पोताने हाथे. ['गड़िनसए 'ति] जो के आ स्थळे 'गतिनिषय' ए शब्दनो अर्थ 'गतिनु क्षेत्र ' थाय छे तो पण 'गतिनुं क्षेत्र'एवो अर्थ करतां 'शीत्र' 'त्यरित' वगेरे विशेषणो फोकटनां यह जाय छे, कारण के ए विशेषणो गतिना क्षेत्रने लागी शकतां नथी, माटे ए विशेष में सफळ थाय ते सारु 'गतिविषय' शब्दनों अर्थ 'गति' ज करवों अने एम अर्थ करवाथी ए बधां विशेषणों 'गति' ने सारी रीते लागी शक छे. ['सीहें 'ति] वेगवाळो, कोइनुं वेगवाळापणुं अनिर्णीत पण होय माटे कहे छे के, ['सीहे चेव 'ति] ते वेगवाळो ज छे. ए ज वातने प्रक्रमेपूर्वक कहेवा माटे वीजी रीते कहे छे, के ते त्वरित छे-त्वरावाळो छे. ['अप्पे, अप्पे, चैव 'त्ति] घणो थोडो छे. ['मंदे मंदे चेव ' ति] घणो ज मंद. ए सुत्रथी मात्र देवोनी मतिओनुं स्वरूप कह्युं. हवे ज्यारे द्वेवोनी मतिओनुं स्वरूप आवुं छे त्यारे एक सरखा मापवाळा उंचा, मीचा के तिरछा क्षेत्र तरफ जतां शक, वज अने चमरने जे जूरो जूरो काळ लागे छे ते प्रत्येक काळने दर्शावतां कहे छे के-['जीवईअं ' इत्यादि.] हुने ईंद्रने उंचे अने नीचे क्षेत्र जतां जे जूदो जूदो काळ लागे, छे तेने कहे छे-['सव्वत्थोवे सक्करस 'इत्यादि.] शकने उंचे जतां सौथी थोडो काळ लागे छे। कारण के ते उंचे जवामां अतिशीध होय छे. 'ऊर्ध्वलोककंडक 'शब्दनो अर्थ आ छे: —ऊर्ध्वलोक एटले उपरनुं क्षेत्र अने 'कंडक 'एटले वखतनो भागः शकतुं अघोलोककंडक, संख्यातगणुं छे — कर्ध्वलोककंडक करतां वमणुं छे. कारण के नीचाणवाळा क्षेत्र तरफ जतां शकनी मंद गति होय छे. 'शकनो उंचे जवानो काळ अने चयरनो नीचे जवानो काळ ए बन्ने सरखा छ ' तथा ' एक समयमां असुरेंद्र, असुरराज चमर, जेटछुं नीचे जाय छे तेटलं ज नीचे जवान शकने वे समय लागे, छे ! ए बात आगळ कहेवानी है अने ए बात उपरथी ज आगळ कहेलुं बमणापणुं रुव्ध थाय छे. ['बावइअं ' इत्यादि] ए बे सूत्र अवःक्षेत्रनी अपेक्षाए छे अने तेनी व्याख्या पूर्वनी पेठे करवी ['एवं खलु 'इत्यादि] ए निगमनसूत्र छे हवे शकादिकमांना एक एकनी गतिक्षेत्र संबंधी अलाबहुता दर्शाववा त्रण सूत्र कहे छे-['सक्करस' इत्यादि,] ते. सूत्रमां आ वात् छे-उंचे, नीचे अने तिरछे जे गतिनो विषय-गतिनुं क्षेत्र-छे ते अनेक प्रकारनो छे तो तमां कया गतिविषय करतां कयो गतिविषय अल्प वगेरे छे १ ए प्रश्न छे. उत्तर त्। आ छे - राक, एक समये सौथी थोड़ क्षेत्र नीचे आवे छे, कारण के तेनी गति, नीचे जवामां मंद् छे. [' तिरिअं संखेजे भागे सच्छइ 'ति] आपणे कल्पना करीए के, शक्र, एक समय एक योजन नीचे जाय छे. ते योजनना भाग करवाथी तेना वे माग थाय छे अने ते वे भागमां एक द्विभाग (पांडेल भाग जेटलो बीजो भाग) भेळवत्राथी त्रम संख्येय भाग थाय ले अने शक, एटलुं तिरले जाय ले अधीत् शक दोढ योजन तिरले जाय ले-कारण के ि ज जवामां ते शीघ गतिवाळो छे. [' उहुं संखेजें मार्ग गच्छइ 'त्ति] पूर्वनी कल्पना प्रमाणे जे त्रण द्विमागो जेटलुं क्षेत्र तिरछे जाय छे ते त्रण हिमागोमां एक चोथो दिभाग मेळववाथी चार द्विमागरूप संख्यातभाग समवे छे अने तेटला भागो जेटलुं (वे योजन) क्षेत्र उपर जाय छे.

फेंक्या पछी पा जहने पकडी शकाय.

गति

शक्र बज्ज अने चमरनी गतिने समय.

५. अध कर्थ सूत्रे संख्यातभागमात्रप्रहणे सति इदं नियतभागव्याख्यानं क्रियते ? उच्यते, 'आवइअं खेत्तं चमरे असुरिदे, अस्रराया अहे उत्रयह एकोणं समएणं, तं सके दोहिं ' तथा 'सैक्स्स उप्पयणकाले, चमरस्स य उत्रयणकाले, ते णं दोण्णि वि तुल्ला, इति वचनतो निश्चीयते-शक्तो यावदधो द्वाभ्यां समयाभ्यां गच्छति, तावद् ऊर्ध्वमेकेन-इति द्विगुणमधःक्षेत्राद्-ऊर्ध्वक्षेत्रम् , एतयोश्वापान्तरास्त्रः वर्ति तिर्यक्क्षेत्रम्, अतोऽपान्तरालप्रमाणेनैव तेन भवितन्यमिति अधःक्षेत्रापेक्षया तिर्यक्क्षेत्रं सार्धं योजनं भवतीति व्याख्यातम्. आह च चूर्णिकार:—" ऐंगेणं समएणं उवयह अहे णं जोयणं, एंगेणेव समयेणं तिरियं दिवडूं गच्छइ, उड्टं दो जोयणाणि सको ''ति ' चमरस्स णं ' इसादि. 'सव्वत्थोवं सत्तं चमरे असुरिदे असुरराया उडूं उपायइ एगेणं समएणं ' ति ऊर्ध्वगती मन्दगतित्वात् तस्य, तच किल कल्पनया त्रिभागन्यूनं गव्यूतत्रयम्. 'तिरियं संखेजं भागे 'ति तरिमनेव पूर्वीक्ते त्रिभागन्यूने गव्यूतत्रये द्विगुणिते ये योजनस्य संख्येयभागा भवन्ति, तान् गच्छति, तिर्यग्गती शीव्रतरगतित्वात् तस्य. 'अहे संखेजे मार्गे गच्छइ 'ति पूर्वे के त्रिभागद्वयन्यूने गब्यूतषद्के त्रिभागन्यूनगब्यूतत्रये मीलिते ये संख्येयभागा भवन्ति, तान् गच्छति-योजनद्वयमिल्यर्थः. अथ कथं संख्यातभागमात्रोपादाने नियतसंख्येयभागत्वं व्याख्यायते ? उच्यते, शक्रस्योर्ध्यगतेश्वमरस्य चाधोगतेः समत्वमुक्तम्, शक्रस्य चोर्ध्वगमनं समयेन योजनद्वयह्त्पं कस्पितम् , अतश्चमरस्याधोनमनं समयेन योजनद्वयमुक्तम् , तथा 'जावइअं सक्के देविंदे देवराया उड्ढूं उपयइ एगेणं समएणं तं वज्ज दोहिं, जं वजं दोहिं तं समरे तिहिं ' इति वचनसामध्यीत् प्रतीयते-शक्तस्य यदूर्ध्नं गतिक्षेत्रं तस्य त्रिभागमात्ररूपं चमरस्य कर्ध्वगति-, अत्रम्, अतो व्याख्यातं त्रिमागन्यूनं त्रिगव्यूनमानं तदिति. ऊर्वक्षेत्र-अधोगतिक्षेत्रपोश्च अपान्तराळवार्ति तिथक् क्षेत्रमिति कृत्वा त्रिभागद्दयन्यू_ नषद्गध्यृतमानं तद् व्यास्यातमिति. यच चूर्णिकारेण उक्तम् "चमरो उड्ढं जोयणं " इसादि. तन अनगतम् , 'वजं जहा सकस्स तहेन , त्ति वज्रमाश्रित्य गतिविपपस्याल्यबहुत्वं वाच्यं यथा सकस्य तथैव. शेवद्योतनार्थं त्वाह-' नवरं विसेसाहिअं कायव्यं 'ति तच्चेवम्-' र्वजस्त णं मंते ! उडूं, अहे, तिरियं च गइत्रिसयस्स कयरे कयरेहितो अपा या, वहुआ वा, तुल्ला वा, विसेसाहिआ वा ? गोयमा ! सव्यत्थोवं खेत्तं वज्जे अहें उवयह एकेणं समएणं, तिरियं विसेसाहिए भागे गच्छइ, उहुं विसेसाहिए भागे गच्छइ'' इति. वाचनान्तरे तु एतत् साक्षादेवोक्तमिति,

शंका. समाधान.

चूणिकार.

•

समजातुं नथीं.

५. रां ० - स्भामां तो मात्र 'संस्थात भाग' एयं ज लस्युं छे, पण कांइ नियमित काळ देखाडवो नथी तो पण पूर्व प्रमाणे काळती जे नियतता देखाडी छे ते केवी रीते? समा०-'असुरंद्र असुरराज चगर, एक समये जेटलुं क्षेत्र नीचे जाय छे, तेटलुं ज नीचे जवामां शकने वे समय लागे छे' तथा शकनो उपर जवानो काळ अने चमरनो नीचे जवानो काळ, ए बन्ने सरखा छे 'ए वचनथी निश्चित थाय छे के-शक, जेटछं नीचे वे समये जाय छे तेटछुं ज उंचे एक समय जाय छे अर्थात् नीचेना क्षेत्र करतां उंचेतुं क्षेत्र वमणुं छे अने उचेना तथा नीचेना क्षेत्रनी धचगाळ तिरहुं क्षेत्र छे माटे तेतुं प्रमाण एण वबगाळा प्रमाणे ज होतुं जोइए अने एम छ माटे नीचेना क्षेत्रनी अपेक्षाए तिरखुं क्षेत्र दोढ योजन थाय छ एम व्याख्या करी छे. र्चूर्णिकारे कह्युं छे के, "शक्र, एक समये नीचे एक योजन जाय छे तिरछुं दोढ योजन जाय छे, अने उंचे वे योजन जाय छे. " ['चनरस्स गं ' इत्यादि.] असुरेंद्र असुरराज चमर, एक समये सौधी थोडुं क्षेत्र उपर जाय छे. कारण के उंचे जवामां तेनी मंद गति छे. ते क्षेत्र, कल्पना प्रमाणे त्रिभागन्यून त्रण गाउ संभवे छे. ['तिरियं संखे जो भागे 'ति] आगळ कहेल त्रिमागन्यून त्रण गाउ जेटला क्षेत्रने बमणुं करबाथी योजनना जे संख्येयभागो आवे तेटलुं (त्रिमागद्वयन्यून छ गाउ) क्षेत्र तिरहे जाय छे. कारण के तिरहे जवामां चमरनी शीव्रतर गति छे. ['अहे संखेजे मागे गच्छइ ' ति] आगळ कहेल त्रिमागद्वयन्यून छ गाउमां, त्रिभागन्यून त्रण गाउ मेळववाथी जे संख्येय मागो आवे छे तेटलुं व योजन-क्षेत्र नीचे जाय छे. शं०-सूत्रमां तो मात्र 'संख्यातमाग' एवं ज ठरूयुं छे, पण कांइ नियमित काळ देखाड्यो नथी तो पण पूर्व प्रमाणे काळनी जे नियतता देखाडी छे ते केवी रीत ? समा-० शक्रनी ऊर्ध्वगतिनी अने चमरनी अघोगतिनी सरखाइ कही छे. वळी शक्रनुं ऊर्ध्वगमन एक समये वे योजन जेटछुं कलूखुं छे त्यारे चमरनुं अघोगमन पण एक समये वे योजन जेटलुं ज कहेवुं ए उचित छे. तथा ' देवेंद्र, देवराज शक, एक समये जेटलुं उरर जाय छे, तेटलुं ज उपर जवाने वजने बे समय अने चमरने त्रण समय लागे छे 'ए बचनथी जाणी शकाय छे के शकतुं जेटलुं कर्ष्वगतिक्षेत्र छे तेना त्रिभाग जटलुं चमरतुं कर्ष्वगतिक्षेत्रः हे अने एम हैं माटे पूर्व प्रमाणे नियतताबाळी (' त्रिभागन्यून त्रण गाउ ' एटहुं ऊर्ध्वगति क्षेत्र हे एवी) हकीकत कही हो. ऊर्ध्वक्षेत्र अने अधः क्षेत्रनी यचगाळानुं तिर्यक् क्षेत्र छे माटे तेनुं प्रमाण शिभागद्वयन्यून छ गाउ कशुं छे. आ स्थळ चूर्णिकारे जे कशुं छे " चमर, उंचे एक योजन " इत्यादि. ते अबगत थतुं नथी-ते समजातुं नथी. ['वज्जं जहा सक्रस्स तहवे ति] जेम शक्र संवंधे गतिविषयनी अल्पबहुता कही छे तेम वज्जन आश्रीन

^{9.} प्र० छायाः— यादत्कं क्षेत्रं चमरः, अधुरेन्द्रः, अधुरराजोऽघोऽवपति एकेन समयेन, तत् शको द्वाभ्याम्. २. शकस्य उत्पतनकालः, चमरस्य चाऽवपतनकालः, ता द्वावि दुल्याः. ३. एतद्विषयशूर्णिगतः पाठ एवंस्त्येण दृश्यतेः—" उचिरं गति यथाः—एगेण समएण सको, दोहिं वर्जा, तिहिं भमरा तुलं खेतं कम्मंतिः सिध्य मंद-मंदनरजायणभमणं दिवसपुरिस इव (१) अहे एगेण सगएण चमरो, दोहिं सको, तिहिं वर्जाः तहेव मंदम (त) मनवत् , (१) सहःणपरिहाणे अप्य-बहु माणियल्नं. कथमं कालो, खेतं पड्डच सहाणे अप्य-बहुममणा भित्रकालो, उद्धं, अहे, तिरियंः एगेणं समएण उचति अहे, जोयणं, तेणेव समएण तिरिया दिवहं गच्छति, उद्धं दो जोयणाणि सको. चमरो उद्धं जोयणं, तिरियं दिवहं. अहे दो जोयणाणि. वज्ञमवि अहे जोयणं तिरियं दिवहं अहे दो जोयणाणि. वज्जमवि अहे जोयणं तिरियं दिवहं विसेसा य अप्य-बहुं एथ्य पाडेजा. जहा वा समया सकादीणं तहा वा खुड्डो-हाणिहिं तहेव खेतं पि. ४, एकेन समयेन अव्यति अधा योजनम् एकेनेव समयेन तिर्यम् द्वपर्थं मन्छति, उध्वंम् दे योजने शक इति. ५, यावत्कं शकः, देवेन्द्रः, देवराज उध्वंम् उत्यति एकेन समयेन तद् वजो द्वाभ्याम्, यद् वजो द्वाभ्यां तत् चमरित्रिकाः. ६. दज्ञस्य समदन् । उध्वंम्, अधः, तिर्यक् च मतिविषयस्य कतरः कतरेभ्योऽत्या वा दुल्हां वा दुल्हां वा, विदेशां विद्वाहां का विद्वाहां का

गण गतिविषयनी अल्पबहुता कहेवी। बाकी रहेट बातने जंगायया कहे हे के - ['नवरं विसेसाहिअं कायव्वं 'ति] ते आ प्रमाणे: - 'वज्याय के केते! उद्वं, अहे, तिरियं गशिमयह कर्यों कर्या कर्या का वा, बहुआ या, तुड़ा या, विसेसाहिआ वा १ गोयमा! सव्यत्येषं खेते वर्ध अहं उत्रयह एक्केंगं समस्यं, तिरियं विसेसाहिए भागे गच्छड़, उद्वं विसेसाहिए भागे गच्छड़ ति 'अर्थात् 'हे नगवन्! वज्रनो कर्ष्यतिविषय, अधोगतिविषय अने तिर्यग्यतिविषय; ए त्रमेमां क्यों कोनाथी अल्प छे, वचारे छे, तुल्य छे अने सरकों छे हे गौतम! वज्र एक समये साथी थोड़ं क्षेत्र नीचें जाय छे, तिरछे विश्वायिक मागो जाय छे अने उत्र पण विश्व मागो जाय छे अने असी वाचनामां तो आ पाठ मूळां ज ठल्यों छे.

वज्रना गा

धीजी वाचनः

६. अस्यायमधः— स्तोकं क्षेत्रं वज्रमधो त्रजति एवेत समरेन, अधोमन्दगतित्यात् तस्य, तच्च किछ कल्पनया त्रिमागन्यूनं योजनम्, तिर्धेग् विशेपाधिकी मागी गन्छति, श्रीप्रतरणित्यात्, ती च किछ वोजनस्य हो भागी विशेपाधिकी—सित्रभागं गन्यूत्त्रयमिर्क्षधः तथा ऊर्खं विशेपाधिकी भागी गन्छति, श्रीप्रति तिर्धेगाधिकी भागी गन्छति, तारेवोध्विगी किश्चिर् विशेपाधिकी, ऊर्ध्वनती शीव्रतमगित्वात्—परिष्ट्रिं योजनित्यर्थः अथ कथं जामान्यतो विशेपाधिकी मागी गन्छति, तारेवोध्विगी किश्चिर् विशेपाधिकी, ऊर्ध्वनती शीव्रतमगित्वात्—परिष्ट्रिं योजनित्यर्थः अथ कथं जामान्यतो विशेपाधिकाधेऽभिष्टिते नियतभागतं व्याख्यायते? उच्यते, "जायहंशं चमरे असुरिदे असुरराया अहे उच्यत् एकेणं समयेणं तायहंशं तके दोि, तं वज्ने तीहिं " इतिवचनतामध्वीत् प्रत्नाघोगसयेश्वया वज्रस्य त्रिभागन्यूना अधोगतिर्ध्वया इति त्रिमागन्यूनं योजनिति ता व्याख्याता. तथा "सकस्य उच्ययकाले, वज्यत्य उप्ययणकाले, एसं णं दोण्णि तुक्षे " इति वचनादवसीपते—यावदेकेन सनयेन राकोऽधोगच्छित, तावत् चक्रमूर्ध्वम्, राक्रधैकेनायः किछ योजनम्, एवं वज्रमूर्ध्वयोजनिति छत्वा ऊर्ध्व योजनं तस्योक्तम्, अर्था-अधोगच्छित, तावत् वक्रमूर्ध्वम्, राक्रधैकेनायः किछ योजनम्, व्यादि स्वत्रयम्, क्ष्य गतिकालस्य तदाह—'सक्कात णं ' इत्यादि स्वत्रयम्, शक्कादीनां गतिकालस्य प्रत्येकत्वन्य स्वत्रयस्य क्षेत्रस्य समस्याद्य—चहुत्वमुक्तम्, अथ गतिकालस्य लेत्वात्यत्यस्य णं मन्ते! वज्रस्त ' इत्यादि 'एए णं दोषि वि तुस्तु ' ति राक्र-चमरयोः स्वत्यान्यमनं प्रति वेगस्य समस्याद् उत्यतनाव्यतनकाली तयोः तुस्यां परस्यरेण 'तन्वरयोव'ति वक्ष्यमाणापेश्वया इति, तथा 'सक्कस्त' इत्यादी 'एस णं दोण्ड वि तुस्ते' ति उभ्योरिप तुल्यः—शक्ताव्यतनकालः वज्नोत्यातकालस्य तुल्यः 'संस्वन्यातकालस्य त्यान्यत्वनकालः वज्नोत्यातकालस्य तुल्यः स्वतीयम्यः सम्यविप्तान्यातकाल्य राक्राव्यानकालस्य तुल्यः समन्ति।

६. उपरनी वातनुं तात्पर्य आ छे:— वज्र, एक समये नीचे थोडुं क्षेत्र जाय छे, कारण के नीचे जवामां ते भंद गतिवालुं छे. वज्रनं अधोगमननुं होत्र कल्पना प्रमाण तिमागन्यन योजन थाय छे. ते वज्र, तिरखुं विशेषाधिक वे भाग जाय छे. कारण के ते, तिरखुं जवामां शिक्रतर गतिवालुं छे. विशेषाधिक वे भाग एटले वो वे विशेषाधिक भाग तिरहा क्षेत्रमां कहा। छे ते वे गागने ज कांइक विशेषाधिक समजवा—वज्र, उंचे एक योजन जाय छे. कारण के यज्र उंचे जवामां शिक्रतम गतिवालुं छे. शं०—मूळ सूत्रमां तो सामान्यपणे विशेषाधिकता कही छे, तेथी अईं नियततावाली विशेषाधिकता केवी रीते जाणवी? समा०—'एक समये असुरेंद्र, असुरराज चमर, जेटलुं नीचे जाय छे, तेटलुं ज नीचे जवामां इंद्रने ये समय अने वज्रने त्रण समय लागे छे 'ए बात कहेवाथी शक्रना अधोगमननी अपेक्षाए वज्रनी अधोगति निमागन्यत्र छे माटे ते जिमागन्यन् योजन कही छे. तथा 'शक्रनो नीचे जवानो काळ अने वज्रनो उपर जवानो काळ, ए बन्ने छुट्य छे 'ए वचनथी जणाय छे के, एक ममये शक्र, जेटलुं नीचे जाय छे तेटलुं ज वज्र, एक समये उपर एक योजन जाय छे तेटलुं ज वज्र, एक समये उपर एक योजन जाय छे अने वज्र, एक ममये शक्र, जेटलुं नीचे जाय छे तेटलुं ज वज्र, एक समये उपर एक योजन जाय छे अने वज्र, एक ममये उपर एक योजन जाय छे तेटलुं ज तेलं प्रमाण किमागसहित त्रण गाउ जेटलुं कल्लुं छे. हमणां गतिविषयक क्षेत्रनी अल्पवालुता कहीं, अने हवे गतिना काळगी अल्यबहुता कहें छे:—['सक्करस णं 'इत्यादि.] ए संबंधे ए त्रण सूत्रो छे. शक्र बनेरेना प्रलेकना गतिकाळनी अल्यवहुता कहीं, हवे परसरनी अपेक्षाए ए वातने कहे छे:—['सक्करस णं 'इत्यादि.] ए संबंधे ए त्रण सूत्रो छे. शक्र बनेरेना प्रलेकना गतिकाळनी अल्यवहुता कहीं, हवे परसरनी अपेक्षाए ए वातने कहे छे:—['एअस्स णं भेते! वज्रस ' इत्यादि.] ['एए णं दोशि वि तुछ 'लि] शक्र

धैका. समाधान,

गतिमःन

परस्पर तरखा

१. इंद बगेरेनी गतिने लगती कोठो आ प्रमाणे छे:-

समय. (जवानो काङ)	जनार.	अ•वे.	क्षपः.	
9 .	शक.	आठ कोश. (वे योजन)	छ कोश. (दोढ योजन)	चार कोश. (एक योजन)
9.	चसर.	त्रिभागन्यून त्रण कोश.	त्रिभागदयन्यून छ कोश. (दोड योजन)	भाठ कोश. (वे योजन)
9.	वर्ष.	चार कोश. (एक योजन)	त्रिभागसहित त्रण कोशः	त्रिभागन्यून चार कोशः (एक योजन)

र प्रमाणे.

अने चमरने पोताने स्थाने जवानो वेग सरखो होवाथी (अनुक्रमे) तेनो उंचे जवानो अने नीचे जवानो काळ, परस्परपणे सरखो कही छै. ['सव्वत्थोध.' ति] ए वातनो संबंध हवे पछी छै. तथा ['सक्करस'] इत्यादि स्वानां ['एम णं दोण्ह वि तुछे 'ति] बन्नेनो सरखो छे. अर्थात् शक्तो नीचे जवानो काळ, बन्नना उंचे जवाना काळनी सरखो छे अने बन्ननो उंचे जवानो काळ, शक्रना नीचे जवाना काळनी सरखो छे. ['संखे-च्याणे 'ति] शक्रना उंचे जवाना समयनी अने चमरना नीचे जवाना समयनी अपेक्षाए संख्येयगुण छे. ए ज प्रमाणे आगळना स्व संबंधे पण विचारतुं.

तैए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया वज्जभयविष्पमुक्के, सक्केणं देविंदेणं, देवरण्णा महया अवमाणेणं अवमाणिए समाणे चमरचं-चाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरासि सीहासणं स ओहयम-णसंकप्पे चिंतासोअसागरसंपविद्वे, कर्यळपल्हत्यमुहे अङ्बाणी-वगए भूमिगयाए दिहीए श्रियाति, तए ण चमरं असुरिंदं, असुररायं सामाणिअपरिसोववचया देवा ओहयमणसंकृष्यं जाव-*ज़िया यमाणं पासंति, फार्यल-जाव एवं पयासि: —िक णं देवा-*णुभिया ! ओहयमणसंकपा जाव-झियायह ? तए णं से चमरे असुरिंदे, असुरराया ते सामाणिअपरिसोववचए देवे एवं वयासि:-एवं खलु देवाणुष्पिया ! मए समणं भगवं महावीरं नीसाए सके, देविंदे, देवराया सयमेव अचासाइए, ततो तेणं परिकृतिएणं समाणेणं ममं वहाए वज्जे निसिन्ने. तं भदं णं भवतु देवाणु-पिया! समणस्त भगवओ महावीरस्त, जस्त न्हि पभावेण अकिट्टे, अध्वहिए, अपरिताविए, इहमागए, इह समोसढे, इह संपत्ते, इहेप अज उपतंप जित्ता णं बिहरामि. तं गच्छामो णं देवाणु-प्यिया ! समंग भगवं महावीरं चंदामी, नसंसामी जाव-पज्ज्वा-सामो त्ति कहु चउसहीए सामाणिअहाहस्साहिं, जाव सन्विद्धीए, जाव-जेणेव असोगवरपायने, जेणेव ममं आंतिए तेणेव उवागच्छ इ, उवागच्छित्ता ममं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं जाय-नमंसित्ता एवं वयासि:-एवं खलु भन्ते ! मर तुन्भं नीसाए सक्ने देविंदे, देवराया सयमेव अचासाइए, जाय-तं भद्दं णं भवत् देवाण्जियःणं

हवे, वन्नना भयथी मुक्त थएलो, देवेंद्र, देवरान शक्त द्वारा मोटा अपमानधी अपमानित थएछो, हणाएछ मानिसक संकल्पवाळो, चिंता अने शोकरूप दरियामां पेठेलो, मुखने हथेळी उपर टेकवी राखनार, आर्तथ्यानने पामेलो अने नीचे मांडेल नजरवाळो ते असुरेंद्र, असुरराज चमर, चमरचंचा नामनी राजधानीमां सुधर्मी सभामां, चमर नामना सिंहासनमां बेसी विचार करे छे. पछी हणाएळ मानसिक संकल्पवाळा अने यावत्-विचारमां पडेला ते अमुरेंद्र, अमुरराज चमरने जोइ सामानिकसमामां उत्पन्न थएल देवोए हाथ जोडीने यावत्—तेने आ प्रमाणे वहां के:—हे देवानुप्रिय! तमे आज हण,एळ मानसिक संकरपवाळा थइ यावत्-शुं विचार करो छो ? त्यारे असुरेंद्र अमुरराज चमरे ते सामानिक-सभामां उत्पन्न थएल देवोने का प्रमाणे कह्यं के:-हे देवानुप्रियो ! में मारी पोतानी नेळे ज श्रमण भगवंत महावीरनो आंत्ररो छइ देवेंद्र देवराज शक्रने तेनी शोमाधी भ्रष्ट करवो धार्यी हतो. त्यारे तेणे (शक्रे) मारा उपर कोप करी मने मारवा माटे मारी पाछळ वज्र फेंक्युं. पण, हे देवानुप्रियो ! श्रमण भगवंत महाबीरनुं भछं थाओ, के जेना प्रभावधी हुं अक्छिप्ट रह्यो छुं, अव्यधित-पीडा विनानो-रह्यो छुं तथा परिताप पाम्या सिवाय अहीं आव्यो छुं-अहीं समयसर्थें छुं-अहीं संप्राप्त थयो छुं अने अहीं ज उ ।संपन्न थइने विहरूं छुं, तो हे देवानुष्रियो ! आपणे बचा जइए अने श्रमण भगवंत महावीरने वांदीर, ननीए यावत्-तेओनी पर्युवासना करीए, एम करी ते, चोसठ हजार सामानिक देवो साथे यावत्-सर्व ऋद्भिपूर्वक यात्रत्—जे तरफ अशोक्तनं उत्तम दृक्ष छे अने जे तरफ हुं (श्रीमहाबीर) छुं ते तरक आवी मने त्रण वर प्रदक्षिणा दइ यात्रत्-नमस्कार करी ते आ प्रमाणे बोल्यो के:-हे भगवन्! में मारी पोतानी जाते ज तमारो आशरो छड्ने देवेंद्र, देवराज शकते तना शोमाथी श्रष्ट करवो घार्यो हतो यावत्—आ। देवानुप्रियनुं भछं थाओं के जेना प्रभावे हुं क्लेश पाम्या सिवाय यावत्-विहरुं हुं. तो हे देवानुप्रिय! हुं ते तंत्रंधे आपनी पासे क्षमा मागुं छुं, यावत्-

१. मूलच्छायाः—ततः स चमराऽमुरेन्द्रः, अमुरराजी वद्यानयविश्रमुक्तः सक्तेण देवेन्द्रेण, देवराजेन महता अपमानेन अपनानितः सन् चमरचधाया राजधान्याः, सभायाः मुधमीयाः, चम्रे सिंहासने अपहतमनस्वंकलाः, चिन्ताजोकसागरसंप्रविष्टः, करतलप्रयेक्षमुखः आतंत्र्यानोपमाने भूमिगतया
दृष्ट्या ध्यायति, ततश्चमरम् अधुरेन्द्रम्, अधुरराज सामानिकपर्षः स्वत्रका देवाः अपहतमनस्वंकलं यावत्—ध्यायन्तं पद्यन्ति, करतलं यावत्—एवम्
अवादिष्ठः—किं देवानुप्रियाः! अपहतमनस्वंकलाः यावत्—ध्यावत ? ततः स चमरः अमुरेन्द्रः अपुरराजस्तान् सामानिकपर्यदुरम्तकान् देवान् एवम्
अवादीत्—एवं खल्ल देवानुप्रियाः! मया अमणं भगवन्तं महावीरं निश्राय दाको देवेन्द्रः, देवराजः स्वयमेव अखादातितः, ततस्तेन परिकुपितेन
सता मम बधाय वर्ज निःस्प्रम्, तद् भदं भवतु देवानुप्रयाः! अनणस्य भगवतो महावीरस्य, यस्याऽरिम प्रभावेण अकृष्टः, अव्यथितः, अपरितापितः,
इह आगतः, इह समवस्तः, इह संप्राप्तः, इहेव अद्य उपसंपद्य विहरामिः तद् गच्छामो देवानुप्रियाः! धनणं भगवन्तं महावीरं वन्दामहे, नमस्यामो
यावत्—पर्थपासाहे इति कृत्वा चतुःष्वद्र्या सामानिकसहिद्योभिः, यावत्-सर्वेश्या सेनेष अशोकतरपादपः, येनैष सम अनितकस्तेनेष उपागच्छति,
उपागम्य माम् विकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणं यावत्—गमस्यन्ता एवम् अवादीतः—एवं खल्ल भगवन्। मया त्वां निश्राय सको देवेन्द्रः, देवराजः खयमेव
अलाःगतितः, यावत्—तद् भदं भवतु देवानुशियाणामः—अनु०

र्जंस्त म्हि पमात्रेणं अकिष्ठे जाव विहरामि, तं लामोमि णं देवाणु - एम कही ते ईशान खूगामां चारयो गयो यावत्—तेणे वर्त्राश जातनो महाविदेहे वासे सिन्झिहिइ, जाव-अंतं काहिइ.

िया ! जाव उत्तरपुरिक्षमं दिसीभागं अवक्षमइ, जाव-वर्त्तास- नःख्यविधि देखाडची अने पछी ते, जे दिशामांथी आच्यो हतो, ते इयदं नद्दविहिं उवदंसेड, जामेव दिसिं पाउच्मृष्ट, तामेव दिसिं ज दिशामां चा्ल्यो गयो. हे गौतम! असुरेंद्र, असुरराज चमरे पाडेगए. एवं खलु गोयमा ! चमरेणं असुरिदेणं, असुररण्णा सा ते दिव्य देवऋदि ए प्रमाणे छव्य करी, प्राप्त पारी अने यावत्— ादिव्या देविड्री लखा, पत्ता जाव-अभिसमण्णागया, ठिई सागरोवपं, साने आणी. ते चमर इंद्रनी आवरदा सागरोपमनी छे अने ते महा-विदेह क्षेत्रमां सिद्ध थशे यावत्-सर्व दुःखोनो नाश करशे.

७. 'ओह्यमगसंक्रपो ' त्ति उपहतो ध्वस्तः, मनसः संकल्पो दर्प-हर्षादिप्रभवो विकल्पो यस्य स तथा, 'चिंवासोगसागरमणुप्प-विद्वे ' ति चिन्ता पूर्वकृतानुस्मरणम्, शोको दैन्यम्, तावेव सागर् इति विग्रहः, अतस्तम्, 'करयलपल्हत्थमुहो 'ति करतले पर्यस्तम्-अधोमुखतया न्यस्तं मुखं येन स तथा,' जस्स मिह पभावेणं'ति यस्य प्रभावेण इहागतोऽस्मि—भवामीति योगः. किमूतः सन् ? इत्याह— 'अकिहें ' ति अकृष्ट:-अविलिखितः, अविल्धो वा अवाधितो निर्वेदनमिस्पर्धः. एतदेव कथम्? इसाह-'अव्वहिए 'ति अव्यधितः-अताहितः, अताहितत्वेऽपि व्वटनकल्पकुलिशसदिकर्पत् परितापः स्यात् अतस्तं निषेवयनाह—"अपरितापिए"त्ति. ' इहमागए ' इस्यादि विवक्षया पूर्ववद् व्याख्येयम् . ' इहेय अज ' इत्यादि . इहैव स्थाने अद्याऽसित्रहनि उप तंपद्य प्रशान्तो भूत्वा विदरागिति .

७. ['ओहयमणसंकप्पे 'ति] अभिमान अने हर्ष वगेरेथी उत्पन्न थएलो जेनो मानसिक विकल्प नारापाम्योछे ते, ['चिंतासोगसागरमणुपविद्धे' ति] पूर्वे करेल कार्यने याद करवुं ते चिंता, दीनता ते शोक, चिंता अने शोकरूप सागरपां पेठेलो, ['करयलपल्हत्थमुहो 'ति] जेणे पोतानुं मुख, हाथना तळिया उपर-हथेळी उपर-अधोमुखपणे टेकव्युं छे ते, ['जस्स मिह पभावेणं 'ति] 'जेना प्रमाये अहीं आव्यो छुं 'ए प्रमाणे संबंध करवी. केवी अब्बो छुं ? तो कहे छे के, ['अिक्ट्रे 'ति] घवाया विनानो अथवा कोइ रीते पीडाया विनानो-निर्वेदनपूर्वक आब्यो छु. ए केवी रीते ? तो कहे छे के, ['अव्विहर 'ति]व्यथा विनानो-मार खावा विनानो, जो के चमरे मार खाधो नथी तो पत आग जेवा वज्रना संबंधथी तेने परिताप थाय ए तो संभवित छे. माट ते वातने निषेधवा कहे छे के-['अपरिताविए 'ति] परिताप पाम्या विनानो अहीं आव्यो छुं ['इहमागए '] इत्यादि स्त्रो विवक्षापूर्वक पूर्वनी पेठे जाणवां. ['इहेव अचा ' इत्यादि.] आ ज टेकाणे आजे प्रज्ञांत यहने विहरं छुं.

३०. प्र०-- विंपत्तियं णं भन्ते ! असुरकुमारा देवा उड्डं उपयंति, जाव-सोहम्मो कप्पो ?

२०, उ०-गोयमा ! तेसि णं देवाणं अहुणांववचाण वा चरिमभवत्थाण वा इमेआरूवे अज्ञात्थिए, जाव-समुप्पज्जइ-अहो ! णं अम्होहं दिव्या देविड्डी लखा, पत्ता जाव-अभिसम-ण्णागया, जारिसिआ णं अम्होहं दिव्या देविड्डी जाव-अभिसमचा-गया, तारिसिआ णं सक्केणं देविदेण, देवरण्णा दिव्या देविडी जाव-अभिसमण्णागया. जारिसिआ णं सक्तेणं देविदेण, देवरण्णा जाब अभिसमनागया, तारिसिआ णं अम्होहि वि जाय-अभिसम-चागया. तं गच्छामो णं सकस्स देविंदस्स, देवरण्यो अंतिअं पाउच्मवामो, पासामो ताव सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो दिव्वं देविडि जाय-अभिसमनागयं, पासउ ताव अन्हे वि सक्ते देविदे, देवराया दिव्यं देविट्टं जाव अभितमधागयं, तं जाणामो ताब सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो दिव्यं देवाडूं जाव-अभिसमन्नागयं,

३०. प्र०—हे भगवन्! अमुरकुमार देवो यावत् सौधर्म कल्प सुधी उंचे जाय छे तेनुं शुं कारण ?

३०. उ० - हे गौतम! ते ताजा उत्पन्न थएल के मरवानी तैयारीयाळा देवोने आ ए प्रकारनो आध्यातिक यावत्-संकला उत्तन थाय छे के, अहो!! अमे दिव्य देवनादि छन्न करी छे. प्राप्त करी छे अने सामे आणी छे. जेवी दिव्य देवऋदि अमे यावत्-सामे आणी छे तेवी दिव्य देवऋदि देवेंद्र, देवराज शके पण यावत्–सामे आणी छे अने जेवी दिव्य देवऋदि देवेंद्र. देवराज शक्रे यावत्-सामे आणी छे तेशी ज दिव्य देवऋदि अमे पण यात्रत्-सामे आणी छे. तो जइए अने ते देवेंद्र, देवराज श-क्रनी पासे प्रकट थइए अने ते देवेंद्र, देवराजे यावत्-सामे आणेळी दिव्य देवऋदिने आपणे जोइए तथा देवेंद्र देवराज शक पग अमे सामे आणेली यावत्-दिच्य देवऋदिने ज्र. वळी देवेंद्र, देवराज शक्रे सामे आणेली यात्रत्–दिच्य देवऋद्भिने आपगे जाणीए अने जाणड ताव अग्हे वि सक्के देविंदे, देवराया दिन्वं देविड्डिं जाव – देवेंद्र, देवराज शक्त पण अमे सामे आणेली यावत्–दिव्य देवऋद्भिने

चंत्रस्ती अने की ब

१. मूलच्छायाः — येपाम् अस्मि प्रभावेणं अकृष्टः, यावत् -विहरामि, तत् क्षमयामि देवानुभिय ! यावत् -उत्तरपारस्त्यं दिग्नागम् अपकामित, यावत्-द्वात्रिंशद्वद्वं नाध्यविधिम् उपदर्शयति, यामेव दिशं प्रादुर्भूतः तामेव दिशं प्रतिगतः एवं खछ गातम ! चमरेण असुरेन्द्रेण, असुरराजेन सा दिव्या देवधिः लब्धा, प्राप्ता यावत्-अभिसमन्वामता, स्थितिः सामरोपमम्, महाविदेहे वर्षे सस्त्यति, यावत्-अन्तं करिष्यति. २. किंगस्ययं भगवन् ! असुरकुमाराः देवा ऊर्ध्वय् उत्पवनित, यावत्-वैष्यमैः कल्पः ? गातम ! तेषां देवानाम् अधुनीत्पन्नानां या, चरममवस्थानां वा अयमेतद्रूपः आध्या-िमकः यावत्-समुत्पयान-अहो ! अस्नामिदिच्या देवधिर्लब्धा, प्राप्ता यावत्-अभित्तमन्यागता, यादृशिका अस्नामिः-दिव्या देवधिः यावत् अभिसमन्या-गता, ताहशिका शक्षेण घेषेन्द्रेण, देवराजेन दिव्या देवधिः यावत्-अभिसमन्वागता. याहशिका शक्षेण देवेन्द्रेण, देवराजेन दावत्-अभिसमन्वागता. ताहशिका अस्माभिरपि चावत्-अभिसमन्दागताः तद् गच्छामः शकस देतेन्द्रस्य, देवराजस्य अन्तिकं प्रादुर्भवन्तः, पर्यामस्तावत् शकस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य दिव्यां देवर्धि यावत्-अभिसमन्वागताम्, परयतु तावत् अस्याकम् अपि शको देवेन्द्रः, देवराजो दिव्यां देवधिम् यावतः-अभिसमन्वागताम्, तदु जानीमः तावत् शकस देवेन्द्रस देवराजस्य दिव्यां देववि यावत्-अभिसमन्यागताम्, जानातु तावद् अस्माकम् अपि शको देवेन्द्रः, देवराजा दिव्यां देवार्थे यादतः-अनु०

य भणी

सुधेनो

हेनु.

अंभिस भागयं. एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा उडूं उप्पयंति, जाणे. हे गौतम ! ए कारणने छड्ने असुरकुमार देवो यावत्— जाव-सोहम्मो कप्पो.

--सेवं भंते, भंते ! ति.

चमरो सम्मत्तो.

सौधर्मकल्प सुधी उंचे जाय है.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे हे. चमर संबंधी हमांत पूर्व थयुं.

भगवंत-अज्ञ सुहम्मसाभिषणीए सिरीभगवई सुत्ते तति असये दुइओ चमरो-सम्मत्ते.

८. पूर्वमसुराणां भवप्रत्ययो वैरानुबन्धः सौधर्मगमने हेतुरुक्तः, अथ तत्रैव हेत्वन्तराभिधानाय आह्- किंपात्तयं णं ? इत्यादि. तत्र 'किंपात्तियं' ति कः प्रत्ययः कारणं यत्र तत् किंप्रत्ययम् 'अहुणोयवनाणं'ति उत्यन्तमात्राणाम्, 'चरिमसप्तथाण व'ति भवचर-मभागस्थानाम्-च्यवनावसरे इत्यर्थः.

भगवत्सुधर्मस्यामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे इतीयशते चमराख्ये द्वितीय उद्देशके श्रीअभयदेवस्तिविति विवरणं सगाप्तम्.

८. आगळना प्रकरणमां एम जणाव्युं छे के, असुरो वेरने लीधे सोधर्म देवलोकनां जाय छे अर्थात् तेओना सौत्रमी गगनमां वैरनी कारणता दर्शावी हो. होवे आ बीजा प्रकरणमां तेओना सौधर्भगमननुं बीजुं पण कारण जणाववानुं हो. ते अर्थे जगावे हो के:--['किंपत्तियं णं ' इत्यादि.] तेमां शुं कारण है ? ['अहुगोत्रवद्याणं 'ति] हमणां ज उत्पन्न यक्ला, ['चरिमभवत्थाण व 'ति] भवने चरम भागे रहेळा अर्थात् च्यववानी--मस्वानी निकट आवेटा.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिळजळचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सदुणानां परक्कतिकरणाद्वेतजीवी तपस्वी। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति शान्योः –द्यात् श्रीवीरदेवः स्कटशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः॥

१. मृळच्छायाः-अभिसमन्दामताम्, एवं खळ गैतिम! अगुरकुमाराः देवाः ऊर्ध्वम् उत्पतन्ति, यायत्-साधमैः कलाः. तदेवं भगवन् ! भगवन् ? इति. चगरः सनाप्तः--अनु॰

शतक ३.-उद्देशक ३.

राजगृइ.-मंडितपुत्र गौतम.-किया.-काथिकी.-आधिकरणिकी.-प्राहेपिकी.-पारितापनिकी.-आणातिपात.-कियाप्रभेद.-पेलो अनुसव के पेलुं कमें १--पेली क्रिया पछी अनुभव .- श्रमणोंने कम दोय ?- होय .- प्रमाद .-- योग .- जीवनां एजन अने परिणमन थिमेरे .-- जीवनी अंत किया (मुक्ति) .- आरंभ .-- संरंभ .-- समारंभ .-जीवनी अक्रियता.-तृपपूलक अने अग्नि.-जलबिंदु अने अग्नि.-नाव अने तेनां छिद्रो.-अनगारनी सावधानता.-प्रमत्तता अने अप्रमत्ततानी स्थितिनुं प्रमाण -- विद्वार -- गीतम -- छवण समुद्रमां भरती औट थवातुं शुं कारण १- लोकस्थिति -- विद्वार ---

तें णं काले णं, ते णं समए णं रायगिहे नामं नयरे होत्था. जान-परिसा पर्डिगयाः ते णं काले णं, ते णं समए णं जाव-. अंतेवासी मंहिअपुत्ते नामं अणगारे पगइभइए जाय-पज्जुवासमाणे एवं वयासीः--

?. प्र०—कइ णं भंते ! किरियाओ पण्णता ?

ते काळे, ते समये राजगृह नामे नगर हतुं यावत्-सभा धर्मकथा सांभळीने पाछी गई. ते काळे, ते समये यावत्-मगवंतना ⁹मंडितपुत्र नामना भद्रस्यभावव_।ळा शिष्य यावत्–पर्युपासना करतां आ प्रभागे बोह्या के:--

१. प्र०-हे भगवन् ! केटली कियाओ कही छे?

श्रीभद्रवाहने नामे प्रतिदि पामेली आवश्यकनिर्शक्तिमां वधा गणधरोनी गृहवास जणावता जणाव्युं छे के-भगवंत महावीरना अभ्यारे गणधरीनी गृहस्थवयीय अनुक्रमे आ प्रमाणे

" पद्मा छायालीसा बायाला हुंति पद्म पत्ना य ! तेवन पंचसद्रो अडया-र्जासा य छायाला ॥ छत्तिला सीलसमं अगारवाभी भवे गणहराणं "-(आवर्यक निर्भुक्ति गा-७३-७४-य० मं०)

खारे श्रीमलयगिरिञ्चत आवर्यक्टी शमां ते विषेती नेष आ प्रमाणे हे:-'' पन्ना छायालीसा बायाला होति पन्न पन्ना य । पणसट्टी बादन्ना अट-वाठीसा य छायाला ॥ छतीसा सोलसमं अगरवासी भवें गगईराणं (गाधा

७३-५४): — अभिभान रा० १० ८१८.

५०, ४६, ४२, ५०, ५०, ६५, ५२, ४८, ४३, ३६, अने १६ वर्ष ए प्रमाणे वधा गणधरीनो एइस्थपयाय छे. एटडे आ गणना प्रमाणे श्री-भंडितपुत्र अनगारनो गृहस्थवास समय ६५ वर्षनो टरे छे एथी तेमनुं आयु-ध्य प्रथम गणना प्रमाणे ८३ वर्षनुं थाय छे अने वीजी गणना प्रमाणे ९५ वर्षनुं याय छे. (अभि ० रा॰ ए ० ८१८):—अनु०

छे — वेला गणधरनी गृहस्य पर्याय ५० वर्ष, बीजानी ४६ वर्ष, त्रीजानी

.४२ वर्ष, चोथानो ५० वर्ष, पांचमानो ५० वर्ष, छहानो ५३ वर्ष, सात-मानो ६५ वर्ष, आठमानो ४८ वर्ष, नवमानो ४६ वर्ष, दसमानो ३६ वर्ष अने अग्यारमा गणधरनो गृहस्थपर्याय १६ वर्ष छे-अर्थात् आं गणत्री

प्रमाणे मंदितपुत्र अनगारनो गृहस्थवास समय ५२ वर्षनी जणाय छे.

२. श्रीर्यामाचार्ये करेला प्रज्ञापना सूत्रमां २२ सु कियापद ' छे, तेमां तेमणे कियानं सविस्तर खरूप जणाव्युं छ अने जूरी जूरी रीते कियाना मेरी पण दशाव्या छे. 'किया 'ने छणतो आ सूत्रनो मूळ पाट अने उपर जणावेलो श्रीभगवतीशीनो मूळ पाठ ए वने अर्थनां तो तहन सरखा छे, तैनां जे स्थळे छाई शैलीभेद छ ते आ प्रमाणे छे:---

श्रीभगवतीजी---१. पाओसियों ण भंते ! किरिया कतिविद्या पण्णता ?

श्रीप्रज्ञायनाजी---

१. पादोषिया णं भंते ! किरिया कतिविहा पणासा ?

^{ें.} मूलंच्छायाः--तिहमन् काले, तिहमन् समये राजगृहं नाम नगरम्-अभवत्. यावत्-पर्वत् प्रतिगता. तिहमन् काले, तिहमन् समये यावत्-अन्ते-वासी मण्डितपुत्रो नाम अनगारः प्रकृतिभद्रको यावत्-पर्युरासीन एवम्-अनाबीत्:-कति भगवन् ! कियाः प्रवृत्रः !--अनु >

९. आ मंडितपुत्र नामना अनगार भगरंत महावीरगा छहा गणधर इता. ते विषेनो विगतवार हेवाल प्रस्तुत पुस्तकना प्रथम खंडमां (जूओ १०१३) आंवी गएलो छे. तेमनी आयुष्यगणना संबंधे जैन मंथकारोनां ज्दां ज्दां मतो छे अने ते आ प्रमाणे छे:---

- १. उ०—मैंडिअपुत्ता ! पंच किरियाओ पण्णताओ. तं जहा:-काइया, अहिगरणिआ, पाओसिआ, पारिआवणिआ, पाणाइवायकिरिया.
 - २. प्र० काइआ णं भंते ! किरिया कड़िवहा पण्णता ?
- २. उ०--मंडिअपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता. तं जहा:-अणुव-रयकायकिरिया य, दुप्पउत्तकायकिरिया य.
 - ३. प्र० -- अहिगरणिया णं भंते ! किरिया कड्विहा पण्णत्ता ?
- ३. उ० मंडिअपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता. तं जहा: संजोय-णाहिगरणिकरिया य, निवत्तणाहिगरणिकरिया य.
 - ४. प्र०—पाओसिआ ण भंते ! किरिया कइविहा पण्णत्ता ?
- ४. उ०—मंडिअपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता. तं जहा:-जीवपा-ओसिआ य, अजीवपाओसिआ य.
- ५. प्र० पारिआवाणिआ णं भंते ! किरिया कहिवडा पण्णत्ता ?
- ५. उ०—मंडिअपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता. तं जहाः-सहत्थ-पारिआवणिआ य, परहत्थपारिआवणिआ य.
- ६. प्रo-पाणाइवायिकरिया णं भंते ! किरिआ कश्विहा पण्णता ?
- ६. उ० —मंडिअपुत्ता ! दुविहा पण्यत्ता. तं जहाः-सहत्य-पाणाइवायकिरिया य, परहत्थपाणाइवायकिरिया य.
- माणार्यापामारया यः, परहरवयाणार्यापामारया यः
- भंडिअपुत्ता! दुविहा पण्णता, तं जहा-जीवपाओसिया, अजीवपाओ-
 - नः २. पारियावणित्रा ण भेते। किरिया कतिविहा पण्यता?
- मंडिअपुता ! दुविहा पण्णता, तं जहा-सदृत्थपारियावणिया य, परहृत्थपारियावणिया यः
 - ३. पाणाइवायकिरिया णं भंते ! कतिविहा पण्णता ?
- मंडितपुत्ता! दुविहा पण्णता, तं जहा-सहत्थपाणाइवाय ०८रहत्थपाणाइ-वायकिरिया य.
- आ सिवायनो बीजो पाठ तो शब्दे शब्द मळतो छे अने आ भागनी प्रज्ञापनामां करेली व्याख्या तथा आ भगवतीजीमां करेली व्याख्या ए बने तो शब्दशः मळती छेः— जूओ प्रज्ञा० पृ० ४३५-४५३ (आगमो०)ः—अनु०
- १. मूलच्छायाः—मिण्डतपुत्र! पश्च कियाः प्रश्नाः तद्यथाः-कादिकी, अधिकरणिकी, प्राह्मेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपातिकयाः कायिकी भगवन्! किया कतिविधा प्रश्नाः मण्डतपुत्र! द्विधा प्रश्नाः तद्यथाः—अनुपरतकायिकयां चं, हुष्प्रयुक्तकायिकया चं. आविकरणिकी भगवन्! किया कतिविधा प्रश्नाः मण्डितपुत्र! द्विधा प्रश्नाः तद्यथाः-संयोजनाधिकरणिकया चं, निर्वेतनाधिकरणिकया चं प्राद्यक्ति भगवन्! किया कतिविधा प्रश्नाः प्रश्नाः पर्वेतविधा प्रश्नाः विद्यधा प्रश्नाः तद्यथाः—जीवप्रद्विधि चं, अजीवप्रदेषिकी चं, पारितापनिकी भगवन्! किया कतिविधा प्रश्नाः प्रश्नाः मण्डितपुत्र! द्विधा प्रश्नाः तद्यथाः—सहस्तपारितादनिकी चं, परहस्तपारितापनिकी चं, प्राणातिपातिकया भगवन्! किया कतिविधा प्रश्नाः मण्डितपुत्र! द्विधा प्रश्नाः तद्यथाः—सहस्तपारितादनिकी चं, परहस्तपारितापनिकी चं, प्राणातिपातिकया भगवन्! किया कतिविधा प्रश्नाः मण्डितपुत्र ! द्विधा प्रश्नाः तद्यथाः—सहस्तपारितादिक्या चं, परहस्तपारितादिकया चः—अञ्च०

?. द्वितीयोदेशके चमरोत्पात उक्तः, स च कियारूपः, अतः कियासक्ष्याभिघानाय तृतीयोदेशकः. स च-'ते णं काले णं' इसादि.

तत्र 'पंच किरियाओं ' ति करणं किया-कर्मबन्धनिबन्धना चेष्टा-इत्यर्थः. 'काइयं ' ति चीयते इति कायः-शरीरम्, तत्र भवा तेन वा

- १. उ० हे मंडितपुत्र! क्रियाओ पांच यही छे. ते आ प्रमाणे: —कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारिताप्निकी अने प्राणातिपात क्रिया.
 - २. प्र:-- हे भगवन्! काविकी क्रिया केटला प्रकारनी कही छे?
- २. ट०—हें मंडितपुत्र ! कायिकी किया वे प्रकारनी कही छे. ते आ प्रमाणे:—अनुपरत काय क्रया अने दुण्प्रयुक्त कायिकया.
- २. प्र०—भगवन्! आधिकरणिकी किया केटरा प्रकारनी कही छे?
- ३. डः—हे मंडितपुत्र! आधिकरणिकी क्रिया बे प्रकारनी कही छे. ते आ प्रमाणे:—संयोजनाधिकरणिकया अने निर्वर्तना-धिकरणिकया.
- ४. प्र०—हे भगवन् ! प्राद्वेषिकी क्रिया केटला प्रकारनी केही छे ?
- ४. उ०—हे मंडितपुत्र! प्राद्वेषिकी क्रिया वे प्रकारनी कही छे. ते आ प्रमाणे:—जीवप्राद्वेषिकी क्रिया अने अजीवप्राद्वेषिकी क्रिया.
- ५. प्र०—हे भगवन् ! पारितापनिकी किया केटळा प्रकारनी कही छे ?
- ५. उ०—हे मंडितपुत्र ! पारितापनिकी किया वे प्रकारनी कही छे. ते आ प्रमाणे:—खहस्तपारितापनिकी अने परहस्तपारितापनिकी.
- ६. प्र०-- हे भगवन् ! प्राणातिपात किया केटला प्रकारनी कही छे ?
- ६. उ०—हे मंडितपुत्र ! प्राणातिपात किया वे प्रकारनी कही छे. ते आ प्रमाणे:—-स्वहस्तप्राणातिपात किया अने परहस्तप्राणा-तिपात किया अने परहस्तप्राणा-
- गोयमा! तिविहा पण्णता, तं जहा-हे णं अप्पणो वा, परस्स वा, तदु-भयस्स वा, असुमं मणं संपधारेतिः सेतं पादोसिया किरियाः
 - २. पारियाचणिया णं भंते! किरिया कतिविहा पण्यता !
- गोयमा! तिविहा पण्णता, तं जहा—जे णं अन्यणो वा, परस्स वा, तिदुभयस्स वा अस्सायं नेदणं उदीरेति सेतं पारियावणिया किरिया.
- ३. पाणातिनायकिरियां णं भते! कतिविद्दां पण्णतां? गोयमा! तिविद्दां पण्णताः, तं जहा-जे णं अप्पाणं या, परं वा, तरुभयं वा जीवियाओ ववरोवेद्द से तं पाणाइवायकिरिया.

क्रिया.

कायिती.

अ:भिकरिकी.

प्रदेशिती.

प्राण, ति दात्र.

अनु ग्रतः

दुष्प्रयुक्तः

संनोजन,

निर्वर्तन.

उत्ते ⊈.

अभी है.

परिवार अने

माध्यतीपात.

पारेतापनिकी.

निर्वृत्ता-कायिकी. ' अहिगराण्य ' ति अविकियते नरकादिषु आत्मा अनेन इति अधिकारणम्-अनुष्टानविशेषः, बाह्यं वा वस्तु-यहा-रथ-खड़ादि, तत्र भवा, तेन वा निर्वृत्ता, इति-आविकरणिकी. 'पाओसिश' ति प्रद्वेषो मत्सरः, तत्र भवा, तेन वा निर्वृता, स एव वा प्राद्वेषिकी. 'परितायाणिय' ति परितापनं परितापः-पीडाकरणम् , तत्र भया, तेय वा निर्वृता, तदेय वा पारितापनिकी. 'पाणाइ-वायकिरिय ' ति प्राणातिनातः प्रसिद्धः, तद्विषया किया, प्राणातिपात एव वा क्रिया प्राणातिपातिकयाः ' अणुवरयकायिकिरिया य ' ति अनुपरतोऽविरतः, तस्य कायिक्रिया-अनुपरतकायिक्रिया, इयम्-अविरतस्य भवति. ' दुणउत्तकायाक्रिरिया य ' ति दृष्टं प्रयुक्तो दुष्प्रयुक्तः, स चासौ कायश्च दुष्प्रयुक्तकायः -- तस्य किया दुष्प्रयुक्तकायिकमा अथवा दुर्श्च प्रयुक्तं प्रयोगो यस्य स दुष्प्रयुक्तः, तस्य कायिकमा दुष्प्रयु-क्तकायिकयाः इयं प्रमत्तसंयतस्य ऽपि भवति, विरितमितः प्रमादे सति कायदुष्टपयोगस्य सङ्गवात्ः 'सनोयणाहिगरणिकरिया स् ' ति संयोजनम् –हरु –गर –विप – कूटयन्त्रासङ्गानां पूर्वनिवर्तितानां मीउनम् –तदेव अविकरणिकपा संयोजनाधिकरणिकपा, 'निव्यत्तणाहिगरण -किरिया य' ति निर्वर्तनम्-असि-शक्ति-तोमरादीनां निष्पादनम्, तदेव अधिकरणिक्रया निर्वर्तनाधिकरणिक्रया. 'जीवपाओसिआ य' त्ति जीवस्य आत्मनः, परस्य, तदुभयरूपस्य उपरि प्रद्वेषाद् या किया, प्रद्वेषकरणमेत्र वा. 'सहत्यपरिताविश्वा य' ति स्व सोन स्वस्य, परस्य, तदुभयस्य वा परितापनाद् असातोदीरणाद् या क्रिया, परितापनाकरणमेत्र वा सा स्वहस्तपारितापनिकी. एवं पर्एरवपारितापनिकी अपि. एवं प्राणातिपातिक्रयाउपि.

१. बीजा उद्देशकमां चमरना उत्पात विषे हकी कत जगाबी छे. अने ते 'उत्पात-उंचे जबुं 'एक प्रकारनी किया गणाय छे. माटे हवे वाचक वर्गने सहज शंका थाय के, 'किया 'ए शुं? तो आहिं 'किया 'तुं खरूप जगावीने तें संदेहने टाळवा आ त्रीजा उदेशकती शहआत थाय छे. ते आ प्रमाणे:--['ते णं काले णं ' इत्यादि.] तेमां ['पंच किरियाओ 'ति] करवुं ते किया अर्थात् कर्मनो वंध धवामां कारणस्त्य जे चेष्टा ते किया. ['काइय 'ति] संगृहीत थाय-चयरूप थाय-ते काय-शरीर, काय-शरीर-मां थएली के काय-शरीर-द्वारा थएली जे किया ते कायिकी किया. [' अहिगरणिअ 'ति] जे द्वारा आत्मा, नरक वगेरे दुर्गतिओमां जवानी अधिकारी थाय ते अधिकरण-एक जातनु अनुसान अधिवा बहारनी वस्तु, जेत्री के — रास्ररूप चक्र, रथ अने तरवार वगेरे. ते अविकरणमां थएली के अधिकरण द्वारा बनेली जे किया ते आधिकरणिकी किया. ['पाओसिअ'ति] प्रदेष एटले मत्सर, प्रदेष-मत्सर-मां--एटले मत्सररूप निमित्तने लईने-थएली के प्रदेष-मत्सर-द्वारा थएली जे किया ते प्राद्वेषिकी किया। अथवा प्रद्वेष-मन्सर-रूप ज जे किया ते प्राद्वेषिकी किया। ['परितावणिअ'ति] पीडा उपजावबी-रिवावबुं ते परिताप, तेने हईने के ते द्वारा थएली किया अथवा परिवापरूप ज जे किया ते पारिवापनिकी. ['पाणाइवायकिरिय'ति] 'प्राणाविभात' शब्दनी अर्थ प्रसिद्ध छे. प्राणोनुं तद्दन पडी जवुं-(५) पांच इंदिय, (३) शारीरिक, मानसिक अने वाचिक एम त्रण बळ, (१) उच्छ्यास अने निःश्वास तथा (१) आयुष्य एम दस प्राणी छे. तेओने आत्माथी तद्दन जूदा पाडवा-ते प्राणातिपात. प्राणातिपातने लगती जे किया अथवा प्राणातिपातरूप ज जे किया ते प्राणातिपात कियाः ['अणुवरयकायिकरिया य 'ति] विरति-त्यागद्यति-विनाना प्राणीनी जे शारीरिक किया ते अनुपरतकायिकयाः आ किया विरति विनाना प्राणीने होय छे. ['दुणउत्तकायिकरिया य'ति] दुष्ट रीते प्रयोजेल ते दुष्ययुक्त. दुष्ययुक्त अहीर द्वारा थएली ज किया ते दुष्प्रयुक्तकायिकयाः अथवा दुष्ट प्रयोगवाळा मनुष्यना शरीर द्वारा थएली जे किया ते दुष्प्रयुक्तकायिकयाः आ किया प्रमत संयतने पण होय छे. करण के निरतिवाळा प्रामीने प्रनाद थवाथी तेनुं शरीर दुष्ययुक्त थइ जाय छे. ['संजोयमाहि गरणकिरिया य 'ति] संयोजन एट छे जोडवुं-मेळवर्रुं. हळना जूरा जूदा भागोने जोडीने (मेळवीने) हळ तैयार करवुं, कोइ पण पदार्थमां झेर (विष) मेळवीने एक मिश्रित पदार्थ बनारवो तथा पक्षिओ अने मुगोने पकडवा माटे तैयार थता यंत्रना जूदा जूदा भागोने जोडीने एक (पक्षित पकडनार्ह) यंत्र तैयार करवुं; ए बधी कियाओनो समास 'संयोजन' शब्दना अर्थनां थाय छे. तो संयोजनरूप ज ने अधिकरणिकया ते संयोजनःधिकरण कियाः ['निव्यत्तगाहिन'ण-किरिया य 'ति] तरवार, यरछी के भाछुं; इत्यादि शखोनी बनायट ते निर्वर्तन अने निर्वर्तनरूप ज जे अधिकरण किया ते निर्वर्तनाधिकरण किया. िजीवपाओसिया य'ति | पोता (जीव) उपर अने पोता तथा बीजा उपर करेल द्वेष द्वारा धएली जे किया अथवा पेता उपर अने पेता तथा बीजा उपर जे दूष करवो ते ज जीवप्राद्वेषिकी किया ['अजीवपाओसिया य' ति] अबीव उपर करेल द्वेष द्वारा थएली जे किया अयवा अजीव उपर जे द्वेप करवी ते ज अजीवप्राद्वेषिकी किया ['सहस्थपारितावणिया य ' ति | पोताना हाथे पोताना, बीजाना के बन्नेना परितायन-दुः बना उदीरण-द्वारा थएली जे किया अथवा ने परितापन व ते स्वइस्तमरितापनिकी। ए व प्रमाणे परहस्तपारितापनिकी अने प्राणातिपातिकवा संबंधे प्रम समजनुं,

किया अने वेदना

७. प्र० - पुँच्वं भंते ! किरिया, पच्छा वेअणा ? पुच्यं वेअणा, पच्छा किरिया ?

७. उ०—मंडिअपुत्ता ! पुन्यि किरिया, पच्छा वेदणाः णो पृज्यि वेदणा पच्छा किरिया.

७. प्र० — हे भगवन्! पहेलां किया थाय अने पछी वेदना थाय के पहेटां वेदना थाय अने पछी क्रिया थाय?

७. उ०—हे मंडितपुत्र! पहेलां क्रिया थाय अने पछी वेदना थाय, पण पहेलां वेरना थाय अने पछी क्रिया थाय 'एम न थाय.

Jain Education International

१. मूलच्छायाः — पूर्व भगवन् । किया, पश्चाद् वेदना १ पूर्व वेदना, पश्चात् किया १ मण्डितपुत्र । पूर्व किया, पश्चाद् वेदना को पूर्व नेदना पश्चात् क्रियाः--अनु ०

–कमी.

–थोगः

८. प्र०-- भैरिय णं मंते ! समणाणं निग्गंथाणं किरिया कृज्यह ?

- ८. उ०--हंता, अत्थि.
- ९. ४०—कहं णं भंते ! समणाणं निग्गंथाणं किरिया कजाइ?
- ९. उ०-मंडिअपुत्ता ! पमायपचया, जोगनिमित्तं चः; एवं खलु समणाणं निग्गंथाणं किरिया कजइ.
- २. उत्ताः क्रियाः, अथ तज्जन्यं कर्म, तद्देदनां चाधिकृत्य आह-'पुन्नं भंते ' इत्यादि. क्रिया करणम्, तज्जन्यत्वात् कर्म अपि किया, अथवा कियत इति किया-कर्म एव. वेदना तु कर्मणोऽनुभवः, सा च पश्चादेव भवति, कर्मपूर्वकत्वात् तदनुभव(न)स्य इति. अथ कियामेव स्वामिभावतो निरूपयन्नाह-' आर्थि णं ' इत्यादि. अस्त्ययं पक्षः, यदुत किया कियते-क्रिया भवति ! प्रमादप्रस्ययात्, यथा-दुष्प्रयुक्तकायक्रियाजन्यं कर्म. योगनिमित्तं च, यथा-ऐर्वापथिकं कर्म.
- २. आगळ्ना प्रकरणमां किया संबंधी हकीकत कही छे. हवे क्रियाजन्य कर्म संबंधी अने कर्मजन्य वेदना संबंधी हकीकत कहे छे:---['पुट्वं भंते !' इत्यादि.] करबुं ते किया. कर्म कियाथी पेदा थाय छे माटे (जन्य अने जनकमां अभेद कल्पवाथी) कर्म पण किया कहेवाय छे. अथवा किया शन्दनो ज अर्थ 'कर्म ' एम करवो -कराय ते किया-कर्म. क्रमेंनो अनुभव ते बेदना. ते वेदना, पाछळ ज थाय छे. कारण के वेदना कर्मपूर्वक छे-कर्मनी हाजरी पहेलां होय त्यार बाद ज वेदना (कर्मनो अनुभव) धाय छे. हवे कियान ज खानिभावे निरूपता कहे छै:---थने किया ['अत्यि णं' इत्यादि.] आ बात होइ शके के. श्रमण निर्मिश्रोने कियाओं होय? (हा, होय. तेनुं कारण दर्शावे छे-) प्रमादने ठीथे, जेमके हुधायुक्त शरीरनी चेटा जन्य कर्म. योगने लीघे ईर्यापथिकी कियाधी-मार्गमां हालवा चालवानी कियाथी-उपजतुं कर्म.

जीवनां एजनादि.

१०. पठ-जीने णं मंते ! सया समिअं एअइ, वेअइ, चलइ, फंदइ, घटइ, खुव्भइ, उदीरइ, तं तं भावं परिणमइ ?

- १०. उ० हंता, मंडिअपुता ! जीवे णं सया समिअं एयि, जाव-तं तं भावं परिणमइ.
- ११. प्र०-जावं च णं भंते ! से जीवे सया समिजं जाव-परिणम्ह, तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंतिकिरिया भवइ ?
 - ११. उ०-नो इणहे समहे.
- १२. प्र०-से केणहेणं एवं वुचइ-जावं च णं से जीवे सया समिअं जाव-अंते अंतिकरिया न भवति ?
- १२. उ०-मांडिअपुत्ता ! जावं च णं से जीवे सया सिमअं

१०. प्र- हे भगवन्! जीव, हमेशा मापपूर्वक कंपे छे, विविध रीते करे छे, एक ठेकाणेथी बीजे ठेकाणे जाय छे, संदन किया करे छे-थोडुं चाले छे, बबी दिशाओमां जाय छे, क्षोभ पागे छे, टदीरे छ-प्रवळतापूर्वक प्रेरणा करे छे अने ते ते भावने परिणमे छे ?

८. प्र०-हे भगवन्! श्रमण निर्प्रथोने किया होय?

९. प्र०--हे भगवन् ! श्रमण निर्प्रथोने केवी रीते किया

९. उ०--हे मंडितपुत्र! प्रमादने लीधे अने योगना-शरीरा-

दिकनी प्रवृत्तिना-निमित्ते श्रमण निर्प्रथोने पण क्रियाओ होय छे.

८. उ०-हे मंडितपुत्र ! हा होय.

होय-श्रमण निर्प्रधो कया प्रकारे कियाओ करे?

- १० ट० —हे मंडितपुत्र! हा, जीत्र हमेशा मापपूर्वेक कंपे छे अने यावत्-ते ते भावने परिणमें छे.
- ११. प्र०-हें भगवन् ज्यां सुधी ते जीव, हमेशा मापपू-वंक की छ यावत्—ते ते भावने परिणमे छे, त्यां सुधी ते जीवनी भरण समने अंतिक्रिया (मुक्ति) थाय ?
- ११, उ०-हे मंडितपुत्र ! ए अर्थ समर्थ नथी-सिक्रिय जीव-नी मुक्ति न थाय.
- १२. प्र०--हे भगवन्! 'उयां सुधी ते जीव, हमेशा मापपूर्वेक कंपे त्यां सुधी यात्रत्-तेनी मुक्ति न धाय' एम कहेवानुं शुं कारण?
- १२. ड०-हे मंडितपुत्र! ज्यां सुधी ते जीव, हमेशा मापपू-जाव-परिणमइ, तायं च णं से जीवे आरंगइ, सारंभइ, समा- विक कंपे छे अने यावत्-ते ते भावने .परिणमे छे खां सुधी ते रंगइ; आरंभे वटह, सारंभे वटह, समारंभे वटह; आरंभमाणे, जीव, आरंभ करे छे, संरंभ करे छे, समारंभ करे छे, आरंभमां

१. मूलच्छायाः - शस्ति भगवन् ! शमणैनिवन्यैः किया कियते १ हन्त, अस्ति. कथं भगवन् ! श्रमणैनिवन्यैः क्रिया कियते १ सण्डितपुत्र ! प्रमाद-प्रत्यात्, यागनिमीत्तं चः एवं खल धमणैनिवेन्थैः किया कियते. २. जीवो भगवन्। सदा समितम्-एजते, ब्येजते, चलते, स्पन्दते, घटते, शुभ्यति, उदीरयात, तं तं नावं परिणमति ? हन्त, मण्डितपुत्र ! जीवः सदा समितम्-एजते, यावत्-तं तं भावं परिणमति. यावच भगवन् ! स जीवः सदा समितम् यावत्-परिगमति, तावच तस्य जीवस्य अन्तं अन्तिकया भवति है नायमर्थः समर्थः. तत् केनार्थेन एवम्-उच्यते—यावच स जीवः सदा समितम् यानत्-अन्ते अन्तिक्या न भवति ! मण्डितपुत्र । यानच स जीवः सदा समितम् यातत्-गरिणमति, तावच स जीव आरमते, संरमते, समारमते, आरंक्ने वर्तते, संस्कृति वर्तते, समारक्ते वर्तते, आर्थमाणः-असुक

सीरंगमाणे, समारंगमाणे; आरंभे वहमाणे, सारंभे वहमाणे, समारंभे वहमाणे वहूणं पाणाणं, भूत्राणं, जीवाणं, सत्ताणं दुक्खावणयाए, सो आवगयाए, जूरावणयाए, तिष्पावणयाए, पिहावणयाए, पारियावणयाए वहह, से तेणहेणं मंडिअपृत्ता ! एवं वृच्चह्र—जावं च णं से जीवे सया सिमअं एयह जाव-परिणमइ, तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंतिकारिया न भवति.

? २. प्र०—जीवे णं भंते ! सया मियं णो एअइ जाव-नो तं तं भावं परिणमइ ?

१२. उ०—हंता, मंडिअपुत्ता! जीवे ण सया समिअं जाव-नो परिणमइ.

१४. प्र०--जावं च णं भंते ! से जीवे नो एअइ जाव-नो तं तं भावं परिणमइ, तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंति कि रिया भवइ ?

१४. उ०--हंता, जाव-भवइ.

१५. प्र०—से केणडेणं जाव-भवइ ?

१५. उ०—मंडिअपुत्ता! (मंडिआ!) जावं च णं से जीवे सया सिमअं णो एयइ, जाव-नो परिणमइ, तावं च णं से जीवे नो आरंभइ, नो सारंभइ, नो समारंभइ; नो आरंभे वहइ, नो सारंभे वहइ; अणारंभमाणे, असारंभमाणे, असमारंभे अवहमाणे, सारंभे अवहमाणे, समारंभे अवहमाणे वहूणं पाणाणं, मूआणं, जीवाणं, सत्ताणं अदुक्सावण-याए, जाव-अपरितावणयाए वहइ.

से जहा नाम ए केइ पुरिसे सुक्कं तणहत्थयं जायतेआंसि पिक्सवेजा, से णूणं मंडिअपुत्ता ! से सुक्के तणहत्थये जायतेआंसि पिक्सिते समाणे खिप्पामेव मसमसाविज्ञ इ? हंता, मसमसाविज्ञ इ.

से जहा नाम ए केइ पुरिसे तत्तंति अयकत्रहंति उदयविंदुं पिनसर्वेजा, से णूणं मंडिअपुना ! से उदयविंदू तत्तंति अयकवहांति वर्ते छे, संरंभमां वर्ते छे, संमारंभमां वर्ते छे अने ते आरंभ इस्तो, संरंभ करतो, समारंभ करतो तथा आरंभमां वर्ततो, हरंभमां वर्तने अने समारंभमां वर्ततो जीव, घणा प्राणोने, भूतोने, जीवोने अने सस्तोने दुःख पमाडवामां, शोक कराववामां, जूराववामां, दिपाववामां, पिटाववामां, उत्त्रास पंमाडवामां अने परिताप कराववामां वर्ते छे-कारण थाय छे. हे मंडितपुत्र! ते कारणने छइने एम कह्युं छे के, ज्यां सुधी ते जीव, हमेशा मापध्वेक कंपे छे यावत्—ते ते भावने परिणमे छे त्यां सुधी ते जीवनी मरण समय मुक्ति थइ शक्ति नथी.

१२. प्र० — हे भगवन्! जीव, हमेशा समित न कंपे अने यावत्-ते ते भावने न परिणमें? अर्थात् जीव, निश्चित्र पण होय?

१३. उ०-हे मंडितपुत्र ! हा, जीव, हमेशा समित न कंपे अने यावत्-ते ते भावने न परिणमें अर्थात् जीव, निष्क्रिय होय,

१४. प्र०--हे भगवन्! ज्यां सुधी ते जीव, न कंपे यावत्-ते ते भावने न परिणमे त्यां सुधी ते जीवनी भरण समये मुक्ति थाय ?

१४. उ०--हे मंडितपुत्र! हा, एवा जीवनी मुक्ति थाय.

१५. प्रo—हे भगवन्! एवा जीवनी यावत्-मुक्ति थाय तेनुं शुं कारण ?

१५. उ०—हे मंडितपुत्र! ज्यां सुधी ते जीव, हमेशां सिनत न कंप यावत्—ते ते भावने न परिणमे त्यां सुधी ते जीव, आरंभ करतो नथी, संरंभ करतो नथी, समारंग करतो नथी, आरंभमां वर्ततो नथी, संरंभमां वर्ततो नथी, समारंगमां वर्ततो नथी। अने ते आरंभ न करतो, संरंभमां न करतो, संरंभमां न करतो, समारंभमां न करतो तथा आरंभमां न वर्ततो, संरंभमां न वर्ततो अने समारंभमां न वर्ततो जीव बहु प्राणोने, भूतोने, जीवोने अने सत्त्योने दुःख पमाडवामां यावत्—परिताप उपजाववामां निमित्त थतो नथी.

जेम कोइ एक पुरुष होय अने ते सूका घासना पूळाने अग्निमां नाखे. तो हे मंडितपुत्र! अग्निमां नाख्यो के तुरत ज ते सूका घासनो पूळो बळी जाय, ए खरुं के नहीं ? हा, ते बळी जाय.

वळी, जेम कोंइ एक पुरुष होय, अने ते, पांणीना टीपाने तपेछा छोटाना कडाया अपर नाखे. तो हे मंडितपुत्र! तपेछा छोटाना

१. मूळच्छायाः — संरममाणः, समारममाणः; आरम्भे वर्तमानः, संरम्भे वर्तमानः, समारम्भे वर्तमाने बहूनां प्राणानाम्, भूतानाम्, जीवानाम्, सच्चानां दुःखापनतया, शोचापनतया, ज्रापनतया, त्रापनतया, पिष्टापनतया, परिताननतया वर्तते, तत् तेनथिन मण्डितपुत्र ! एवम्-उच्यते—यावच स जीवः सदा समितम् एजते यावत्—परिणमति, तावच तस्य जीवस्य अन्ते अन्तिक्ष्या न भवति. जीवो भगवन् ! सदा समितं नो एजते, यावत्—नो तं तं भावं परिणमति ! हन्त, मण्डितपुत्र ! जीवः सदा समितम्, यावत्—नो परिणमति. यावच भगवन् ! स जीवो नो एजते, यावत्—नो तं तं भावं परिणमति, तावच तस्य जीवस्य अन्ते अन्तिक्ष्या भवति ? हन्त, यावत्—भवति. तत् केनथिन यावत्—भवति ? मण्डितपुत्र ! (मण्डित !) यावच म जीवः सदा समितं नो एजते, यावत्—नो परिणमति, तावच स जीवो नो आरभते, नो संरमते, नो समारभते; नो आरम्भे वर्तते, नो संरम्भे वर्तते, नो समारभते; नो आरम्भे वर्तते, नो समारभे वर्तते, नो समारभते वर्तते, अनारभगाणः, असरमाणः, असमारमभगाणः; आरम्भेऽवर्तमानः, संरम्भेऽवर्तमानः, समारम्भेऽवर्तमानो बहूनो प्राणानाम्, भूतानाम्, जीवानाम्, सच्चानाम्—अदुःखापनतया, यावत्—अपरितापनतया वर्तते. तद्यथा नाम कथित् पुरुषः त्रसे जाततेजसि प्रक्षिपेत्, तद् नुनं मण्डितपुत्र ! तत् शुष्कं रणहस्तकं जाततेजसि प्रक्षिपे सद्यस्त्रपर्थः—अतु०
प्रक्षिपेत्, तद् नृनं मण्डितपुत्र ! स उदक्षिनदुः तप्ते—अयस्कपालेः—अतु०

पैक्सिचे समाणे खिप्पामेव विदंसमागच्छइ ? हंता विदंसमाग-च्छइ.

से बहा नाम ए हरए सिया, पुण्णे, पुण्णप्पमाणे, वोलहमाणे, वोसहमाणे समभरघडताए चिह्नह. अहे णं के इ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं णावं सयासवं, सयिछहं ओगाहेजा, से णूणं मंडिअपुता! सा नावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरेमाणी आपूरेमाणी, पुण्णा, पुण्णप्पमाणा, वोलहमाणा, वोसहमाणा समभरघडताए चिह्नति. अहे णं केइ पुरिसे तीसे नावाए सव्यओ समंता आसवदाराइं पिहेइ, पिहित्ता णावा—उस्सिचणएणं उदयं उस्सिचिंजा, से णूणं मंडिअपुत्ता! सा नावा तंसि उदयंसि उस्सिचिंति समाणंसि खिप्पामेव उडूं उद्दाइ १ हंता, उद्दाइ.

एवामेव मंडिअपुत्ता ! अत्तत्तासंवुडस्त अणगारस्स ईरिआस-मिअस्स जाव-गुत्तवंभयारिस्स, आउत्तं गच्छमाणस्स, चिद्वमाण-स्स, निसीअमाणस्स, तुयद्वमाणस्स, आउत्तं वत्थ-पिड्ग्गह-कंवल-पायपुंछणं गेण्हमाणस्स, णिविखवमाणस्स, जाव-चक्खुप-म्हानेवायमिव वेमाया सुहुमा ईरिआविहआ किरिआ कज्जइ, सा, पढमसम्ययद्यपुद्वा, वितियसमयवेइआ, तइअसमयनिज्ञारिआ, सा यद्धा, पुद्वा, उदीरिआ, वेइआ, निज्जिण्णा, सेयकाले अकम्मं या वि भवति. से तेणद्वेणं मंडिअपुत्ता! एवं वुचइ-जावं च णं से जीवे सया सिमअं नो एअइ, जाव-अंते अंतिकिरिया भवति. कडाया उपर नाख्युं के तुरत ज ते पाणीनुं टीपुं नाश पामे-छम थइ जाय, ए खरुं के नहीं ? हा, ते नाश पामी जाय.

वळी, जेम कोइ एक घरो होय अने ते, पाणीथी मरेलो होय, पाणीथी छलोछल मरेलो होय, पाणीथी छलकातो होय, पाणीथी वयतो होय तथा तं मरेल घडानी पेठे बधे ठेकाणे पाणीथी व्यक्त होय अने तेमां—ते घरामां—कोइ एक पुरुप, सेंकडो नानां काणावाळी अने सेंकडो मोटां काणावाळी, एक मोटी नावने प्रवेशावे. हवे हे मंडितपुत्र! ते नाव, ते काणांओ द्वारा पाणीथी मराती मराती पाणीथी मरेली थइ जाय, तेमां पाणी छलोछल मराइ जाय, पाणीथी छलकती थइ जाय अने ते नाव पाणीथी वथ्ये ज जाय तथा छेवटे ते भरेला घडानी पेठे बधे ठेकाणे पाणीथी व्यक्त थइ जाय, हे मंडितपुत्र! ए खरुं के नहीं हा, खरुं. हवे कोइ एक पुरुप, ते नावनां बधां काणां बूरी दे अने नौकाना उलेचणावती तेमांनुं पाणी तिची ले—पाणी बहार काढी नाखे. तो हे मंडितपुत्र! ते नैका, तेमांनु बधुं पाणी उलेचाया पछी शीन्न ज पाणी उपर आवे ए खरुं के नहीं हा, ते खरुं—तुरत ज पाणी उपर आवे.

हे मंडितपुत्र! ए ज रीते आत्मा द्वारा आत्मामां संवृत थएल, ईर्यासमित अने यावत्-गुप्त ब्रह्मचारी तथा सावधानीथी गमन करनार, स्थिति करनार, बेसनार, स्नार तथा साव-धानीथी वस्त्र, पात्र, कंबल अने रज़ोहरणने ब्रह्मण करनार अने म्कनार अनगारने यावत् आंखने पटपटावतां पण विमात्रापूर्वक स्कृम ईर्यापथिकी क्रिया थाय छे अने प्रथम समयमां बद्धस्पृष्ट थएली, बीजा समयमां वेदाएली, त्रीजा समयमां निर्जराने पामेली अर्थात् बद्धस्पृष्ट, उदीरित, वेदित अने निर्जराने पामेली ते क्रिया भविष्यत्काळे अकर्म पण यइ जाय छे. माटे हे मंडितपुत्र! 'ज्यां सुधी ते जीय, हमेशा समित कंपतो नथी यावत्–तेनी मरण समये मुक्ति थाय छे' ए बात जे कही छे तेनुं कारण उपर कहां ते छे.

३. क्रियाधिकारादिदमाह—'जीवे णं' इत्यादि. इह जीवग्रहणेऽपि सयोग एवाऽसौ प्राह्यः, अयोगस्य एजनादेरसंभवात्. सदा नित्यम्, 'सिमंजं' ति सप्रमाणम्, 'एयइ' ति एजते कम्पते, ''एजू कम्पने'' इति वचनात्. 'वेयइ' ति व्येजते विविधं कम्पते, 'चलइ' ति स्थानान्तरं गच्छति, 'फंदइ' ति स्पन्दते किश्चिच् चलति. ''स्पदि किश्चिच् चलने '' इति बचनात्. ''अन्यमवकाशं गत्वा पुनस्तत्रैव आगच्छति "—इति अन्ये. 'घटइ' ति सर्वदिक्षु चलति, पदार्थान्तरं वा स्पृशति. 'लुव्भइ' ति क्षुम्यति—पृथिवीं प्रविशति, क्षोमयति वा पृथ्वीम्, बिभेति वा. 'उदीरइ' ति प्राबस्येन प्रेरयति, पदार्थान्तरं प्रतिपादयति वा. शेषिकिया-भेदसंग्रहार्थमाह—'तं तं भावं परिणमइ' ति उत्केषणा—ऽञ्चुज्ञन—प्रसारणादिकं परीणामं वातीत्वर्थः. एयां च एजनादिभावानां

१. मूळच्छायाः—प्रक्षिप्तः सन् शिश्मेव विध्वंसमागच्छति ? हन्त, विध्वंसमागच्छति . तयथा नाम ह्रः स्यात्, पूणः, पूणंप्रमाणः, व्यवलोटरन्, विकसन्, सममरघटतया तिष्ठति, अथ कथित् पुरुषः तस्मिन् ह्रे एकां महतीं नावं शतास्त्राम्, शतच्छिद्राम्—अवगाहयेत्, तद् नृनं मण्डितपुत्र ! सा नास्तरास्त्रद्वारेरापूर्यमाणा आपूर्यमाणा, पूणा, पूण्प्रमाणा, व्यवलोद्यन्ती, विकसन्ती समभरघटतया तिष्ठति. अथ कथित् पुरुपत्तस्या नावः सर्वतः समन्ताद् आस्त्रद्वाराणि पिद्धाति, पिधाय नावुत्सेचनकेन उदकमुत्तिश्चेत्, तद् नृनं मण्डितपुत्र ! सा नाः तत्मन् उदके उत्तिके सति क्षिप्रनेव उध्वमुद्याति ? हन्त, उद्याति. एवमेव मण्डितपुत्र ! आत्मात्मसंदृतस्य अनगारस्य ईर्यासमितस्य यावत्—गुप्तत्रहाचारिणः, आयुक्तं गच्छमानस्य, तिष्ठतः (चेष्टमानस्य) निपीदमानस्य, त्वय्वतंयमानस्य, आयुक्तं वस्न-प्रतिग्रह—कम्वळ-पाद्योञ्छनं गृहणानस्य, निक्षित्माणस्य, यावत्—चक्षुःपक्ष्मनिपात्मपि विमात्रा सूक्ष्मा ईर्यापचिक्ती किया कियते, सा प्रधनसमयवद्य-स्पृष्टा, द्वितीयसनयचेदिता, तृतीयसमयनिकिरिता, सा बद्धा, स्पृष्टा उदीरिता, वेदिता, निक्षणां, पृष्यकारे अकमं वाद्यि भवति तत् वेनार्थेन मण्डितपुत्र ! एवमुच्यते—यावच स जीवः सदा समितं नो एजते, यावत्—अन्ते अन्तिया भवतिः—अतु०

क्रमभावित्वेन सामान्यत! सदिति मन्तव्यम्, न तु प्रत्येकापेक्षया-क्रमभाविनां युगपदभावादिति. 'तस्स जीगस्त अंते ' ति मरणान्ते, 'अंतिकिरिय'ति सक्छकर्मक्षयस्याः 'आरंमइ' ति आरमते पृथिव्यादीन् उपद्रवयति. 'सारंमइ' ति संरमते तेषु विनाशसंकरं। करोते, 'समारंमइ' ति स्वारमते तानेव परितापयति. आह च—'' संकर्षा संरमो परितायकरो भवे समारंमो। आरंमो उद्यक्षो सन्वनयाणं विमुद्धाणं '' इदं च 'किया-कियावतोः कथंबिद् अभेदः ' इस्तिन्यानाय तयोः समानाविकरणतः सूत्रमुक्तम्. अथ 'तयोः कथंबिद् अभेदः' इस्तिन्यानाय तयोः समानाविकरणतः सूत्रमुक्तम्. अथ 'तयोः कथंबिद् अभेदः' इस्तिन्यानाय तयोः समानाविकरणतः सूत्रमुक्तम्. अथ 'तयोः कथंविद् अभेदः' इस्तिन्यानाय तयोः समानाविकरणतः सूत्रमुक्तम्. अथ 'तयोः कथंविद् भेदोऽप्यति' इति दर्शयितुं पूर्वोक्तमेवार्थं व्यधिकरणत आह—'आरममाणः, संरममाणः, समारममाणो जीवः' इस्यनेन प्रथमो वाक्यार्थोऽनृदितः 'आरम्भे वर्तमानः' इसादिना तु दितीयः. 'दुक्तावणयाए' इसादौ 'ता' शब्दस्य प्राकृतप्रमन्तवाद्—दुःखापन्तयां मरण्यक्षणदुखःप्रपणान्याम्, अथवा इष्टविश्वोगादिदुःखहेतुप्रापणायां वर्तते—इति योगः. तथा योकाऽप्रपायाम्—दैग्यप्रापणायाम्. 'ज्रावणयाए ' ति शोकाति-रेकात् शादिकरणत्रापणायाम्. 'तिपावणयाए ' ति तेपाऽप्रपायाम्, तत्वथ परितापनायां शरीरसंतापे वर्तते, क्वित् पर्याने—'दुक्रसणयाए' इस्रविक्तमथीयते तत्र 'किलामणयाए ' ति ग्राविन्यने, 'उद्दावणयाए ' इस्रविक्रमथीयते तत्र 'किलामणयाए ' ति ग्राविन्यने, 'उद्दावणयाए ' ति उत्रासने.

३. कियाना अधिकारथी हवे आ सूत्र कहे छे के, [' जीवे णं ' इत्यादि.] जो के अहीं सामान्य प्रकारे ' जीव 'तुं ग्रहण कर्युं छे तो पण ते जीव, योग (शरीरयोग, मनयोग अने वचनयोग) वाळो ज लेवो. कारण के योग विनाना जीवने एजन वगेरे कियाओ होइ शकती नधी. सदा हमेशा, ['समियं' ति] प्रमाण सहित, ['एँयइ' ति] कंपे छे, ['येअइ' ति] विविध रीते कंपे छे, ['यउइ' ति] एक स्थानेथी बीजे स्थाने जाय छे. ['फंद्इ 'ति] कांइक चाले छे, " बीने अवकाशे जइने कळी त्यां ज आवे छे " एम बीनाओ कहे छे. ['घटर 'ति] सर्व दिशाओमां चाले छे अथवा बीजा पदार्थनो स्पर्श करे छे, ['खुन्मइ ' ति] क्षोग पामे छे-पृथिवीमां पेसे छे - अथवा पृथिवीने क्षोभावे छ वा बीवे छे. [' उदीरइ ' ति] प्रवळतापूर्वक पेरे छे अथवा बीजा पदार्थनुं प्रतिपादन करे छे. बाकीना किया संबंधी बधा मेदोनो संपद् करवा कहे छे के, ितं तं भावं परिणमइ 'ति] उत्हेपण, अवक्षेपण आकुंचन अने प्रसारण वगेरे पर्यायोने पामे छे. ए एजन (कंपन) वगेरे किया कमपूर्वक याच छे माटे 'ते हमेशा थाय छे 'ए बात सामान्य प्रकारे समजवी परंतु प्रत्येकनी अपेक्षाए न समजवी कारण के कमपूर्वक थनारी किया एक ज काळे थइ शकती नथी. ['तस्त जीवस्त अंते 'ति] अंत एटले मरणांत, ['अंतिकिरिय 'ति] सक उक्रमेना नाशरूप जे किया ते 'अंतिकिया'. ['आरंगइ ' ति] आरंभ करे छे अथीत् पृथिवी वंगरेना जीवोने उपद्रव करे छे, ['सारंगइ ' ति] संरंभ करे छे --पृथिवी वंगरेना जीवोना नाशनो संकल्प करे छे, ['समारंभइ ' ति] समारंभ करे छे अर्थात् पृथिवी वगेरेना जीत्रोंने दुःख उपजावे छे. कणुं छे के — " संरंभ एटके हिंसानी संकल्प, समारंभ एटले परिताप उपजावनार प्रदृत्ति अने उपद्रव ए आरंभ; ए प्रमाण सर्व विद्युद्ध नयोतुं मत छे. '' किया भाने कियानो करनार ' ए बन्ने नोखा नोखा नथी, ए वातने जणाववा माटे आ सूत्र समानाधिकरणपूर्वक कथुं छे. वळी 'किया अने कियानो करनार' ए बन्ने कोई रीते नोखा मोखा पण छे, ए बातने जणाववा, पूर्वोक्त हकीकतने ज व्यथिकरणपूर्वक कहे छे के, ['आरंमे ' इत्यादि.] अधिकरणरूव आरंममां जीव वर्ते छे. ए प्रमाणे संरंभ अने समारंभमां पग समजवुं. 'आरंभ करतो, संरंग करतो अने समारंभ करतो जीव'ए बाक्यबंड किया अने किया करनारनो अभेद [एकता] सुचवायं छे. अने ' आरंभमां वर्ततो ' इत्यादि वाक्य वडे किया अने किया करनारनो भेद (जूदाई) सुचवाय छे. अं०-किया अने किया करनारना अभेदने सूचववा माटे मूळगां जणावेलो 'आरंभइ, सारंभइ अने समारंभइ' नो उहिस्स पूरतो हो, हतां फरीने ते माटे आ बीजो 'आरमगाणः' विगेरेनो उहेख शा माटे कर्यो छे ? समा०-आ बीजो उहेख तो मात्र पहेला उहेखनो अनुवाद छे अने तेने पहेला उहेखना समर्थन माटे जणांवलो छे. आ ज प्रकारे 'आरंभे वहह' अने 'आरंभे वहमाणे' ए बन्ने उलेखो विषे पण समजवातं छे-ए बन्ने उलेखो किया अने किया करनारना भेदने सूचवे छे. ['दुक्खावणयाए'] मरणरूप दुःख पमाडबुं अथवा इष्टवियोग वगेरे दुःखना हेतुओ पमाडवा-पदा करवा, तेमां वर्ते छे. एम संबंध करवो. तथा हो कापना-दीनता प्रमाडवी, तेमां वर्ते छे, ['ज्यवगयाए ' ति] शोकना व शराश्वी शरीरचे जीर्गता प्रमाडवी, तेमां वर्ते छे, ['तिप्यीवणयाएं ति] शोकनी वधारी थवाथी ज रोवरावयुं अथवा ठाळ झराववी, तेमां वर्ते छे, ['विद्वावणयाए'ति] पीटाववामां अने पछी शरीरने संताप देवामां वर्ते छे. कोइ ठेकाणे ['दुक्लभयार्' इला.दे.] ए प्रमाणे पाठ देखाय छ अने ते स्वष्ट ज छे, ,['किश्रामणयाए, उद्दवणयाए'] ए प्रमाणे जे अधिक पाठ देखाय छे तेमां [किलानणयाए] एटले ग्लानि पमाडवी तेमां. अने [उद्दावणयाए-ति] एटले वास उपवाववी तेमां.

8. उक्तार्थविपर्ययम ह—' जीवे णं ' इत्यादि. ' णो एयइ ' ति शैंलेशी प्रत्ये योगनिरोधाद् नो एजते इति-एजनादिरहितस्तु नारम्भादिषु वर्तते. तथा च न प्राणादीनां दुःखापनादिषु. तथा च योगनिरोधामिधानशुक्लध्यानेन सकलकर्मध्यंसक्त्या अन्तिक्रया भवति. तत्र दृष्टाक्तद्वयमाह—' से जहा ' इत्यादि. ' तणहत्थयं 'ति तृणपूलकम्, ' जायते अंसि ' ति वह्नौ, ' मसमसाविज्ञह् ' ति शित्रं दृद्धते, इह च दृष्टान्तद्वयस्याऽपि उपनयनार्थः सामर्थ्यगम्यःं, यथा—एवम् एजनादिरहितस्य शुक्तध्यानस्य चतुर्थमेदानस्य कर्नदाह्य-

योगवाळीः

प्जनादि.

अन्तिकिया.

समानाधिकरण व्यक्तिरण.

संबर.

समाधान.

अधिक गठ,

१. प्र० छायाः—संकल्यः संरम्भः परितापकरो भवेत् समारम्भः । आरम्भ उद्भवकः सर्वनयानां विशुद्धानामः—अनु० २. सरखावो-तत्त्वार्थसूत्र— अ० ६ सू० ९ " संरम्भः सक्यायः (संकलाः) परितापनया भवेत् समारम्भः । आरम्भः प्राणिवधः विविधो योगस्ततो होयः—भाष्यः—अनु०

१. ' एजू ' आ घातु कंपन अर्थमां वपराय छे. २. आ घातु (स्पंद्) ' बांइक चायतुं ' अर्थमां छे: — श्रीअसय० ३. ' तु खायनता 'ुविगेरेमां जं 'ता ' शब्द छे ते भावस्वक प्रत्यय छे. किंतु टीकाकारे ' तो ए 'ता ' दाब्दने प्राकृतप्रंगय तरीके संगाव्यो छे: — श्रतु० ४ ' तिष्टु' अने ' छेष्टु' धातु ' खर्वा ' अर्थमां छे: — श्रीअभय०

दहनं स्यादिति. अथ निष्क्रियस्यैव अन्तिक्रिया भवति-इति नौदृष्टान्तेन आह- भे जहा नाम ए दस्यादि. इह शब्दार्थः प्राग्वत् . नवरम्-' उद्दाह' ति उद्याति-जलस्योपरि वर्तते. 'अतत्तासंबुङस्स ' आत्मनि आत्मना संवृतस्य प्रतिसंकीनस्य-इत्सर्थः. एतदेव ' इरियासमिअस्त ' इसादिना प्रपञ्चयति. 'आउत्तं 'ति आयुक्तम्—उपयोगपूर्वेकमिसर्थः. 'जाव चक्लुपम्हानियायमवि ' ति कि बहुना आयुक्तगमनादिना स्थूळिकियाजालेनोक्तेन? याबचक्षुःपक्ष्मनिपातोऽपि-प्राकृतत्वाल् लिङ्गव्यत्ययः-उन्मेप-निभेपमात्रिकिपाऽप्यस्ति, आस्तां गमनादिका ताबदिति शेष:. 'वेमाय' ति विविधमात्रा अन्तर्भुहूर्तादेर्देशोनसूर्वकोटीपर्यन्तस्य क्रिया, कालस्य विचित्रत्वात्. वृद्धाः पुनरेवमाहुः--" यावता चक्षुपोर्निमेपोन्मेपमात्राऽपि क्रिया क्रियते, तावताऽपि कालेन विगात्रया-स्तोकयाऽपि मात्रया-इति. क्वचित् 'विमात्रा ' इत्यस्य स्थाने 'सपेहाए ' ति दृश्यते. तत्र च स्वप्रेक्षया-स्वेच्छपा चक्षुःपक्ष्मनिपातः, न तु परकृतः. 'सुहुम ' त्ति सूक्ष्मबन्धादिकाला, 'इरियावहिय' ति ईर्यापथी गमनमार्गः, तत्रभवा ऐर्यापथिकी-केवलयोगप्रस्थवा इति भावः. 'किरिय' ति कर्म सातवेदनीयमित्यर्थः. 'कज्जइ ' त्ति क्रियते भवति-इत्यर्थः. उपशान्तमोह-क्षीणमोह-सयोगिकेवलि- उक्षणगुणस्थानकत्रयवर्ति-वीतरागोऽपि हि सकियत्वात् सातवेदं कर्म बन्नाति-इति भावः. 'से 'ति ईर्यापिकी किया, 'पढमसमयवद्धपृष्ट' ति बद्धा कर्मतापादनात्, स्पृष्टा जीवप्रदेशैः स्पर्शनात् , ततः कर्मधारये, तत्पुक्षे च सति-प्रथमसमप्रबदस्पृष्टाः तथा द्वितीयसमये वेदिता अनुभूतत्वरूपा-द्वितीयसमयवेदिता. एवं तृतीयसमये निर्जाणी-अनुभूतत्वरूपत्वेन जीवप्रदेशेभ्यः परिशाटिता-इति. एतदेव वाक्पान्तरेणाऽऽह —सा बद्धा स्पृष्टा प्रथमे समये, द्वितीये तु उदीरिता-उदयमुपनीता, किमुक्तं भवति? वेदिता, नहि एकस्मिन् समये उदीरणा, उदयश्च संभवति-इसेवं व्याख्यातम् . तृतीये तु निर्जीणी, ततश्च 'सेअकाले ' ति एत्यत्काले, 'अकम्मं या वि ' ति अकर्म अपि च भवति. इह च यद्यपि तृतीयेऽपि समये कर्म अकर्म भवति, तथापि तत्थण एव अबीतमावकर्मत्वेन द्रव्यकर्मत्वात् तृतीये निर्जीर्ण कर्म-इति व्यपदिस्यते, चतुर्थादिसमयेषु तु अकर्भ-इति. 'अत्तत्तासंवुडस्स ' इत्यादिना च इदमुक्तम्-यदि संयतोऽपि साश्रयः कर्म बन्नाति, तदा सुतरामसंयतः. अनेन च जीवनावः कर्मजळपूर्यमाणतयाऽर्थतोऽघोनिमज्जनमुक्तम् . सिक्रयस्य कर्मबन्धभणनाच अक्रियस्य तद्विपरीतत्वात् कर्भबन्धाऽभाव उक्तः. तथा च जीवनावाऽनाश्रवतायाम्ध्वेगमनं सामध्यादुपनीतमवसेयमि।ति.

थ. कहेली वातथी विपरीत वातने कहे छे अर्थात् हवे अक्रियपणाने लगती हकीकत कहे छे—['जीवे णं 'इत्यादि.] ['णो

कंपती नथी.

पूळो.

संवृत.

विमात्रा. वृद्धी.

सपेदा.

स्रशीई. वेदाई-छुटी.

एयइ 'ति] शैलेशी करण करती वखते योगनो निरोध थवाथी कंपतो नथी अने एजनादिकिया रहित होवाथी आरंभादिकमां वर्ततो नथी, तेम छ माटे ज प्राण वगेरेने दुःखादिनुं कारण यतो नथी. तेथी योगनिरोध नामना शुक्ल ध्यानवडे अकिय आत्मानी सकल कर्मना नाग्ररूप अंतिकया थाय छे. ते संबंधे वे उदाहरणी दर्शात्रे छे:--['से जहा ' इत्यादि.] ['तणहत्थयं 'ति] तृणनी पूळो ['जायतेयंसि 'ति] आगमां [' मसमसाविज्ञइ 'ति] शीव बळी जाय. अहीं बच्चे उदाहरणनो सार सामर्थ्यगम्य छे. एम एजनादिरहित मनुष्यना, शुक्छ घ्यानना चोथा भेदरूप अग्निवडे कर्मरूप दाह्य (वळवा योग्य वस्तु) नुं दहन थाय छे हवे 'निष्क्रिय मनुष्यनी ज अंतिक्रिया थाय छे 'ए वातने नावना उदाहरणथी कहें छे के, ['से जहा णाम ए ' इत्यादि.] आ स्थळे शब्दार्थ पूर्वनी पेठे करवो. विशेष ए के, ['उद्दाइ 'ति] पागीनी उपर वर्ते छे-तरे छे, ि अत्तत्तासंबुडस्स 'ति] आत्मामां आत्मावडे संइत-प्रतिसंलीन-तेतुं ए ज वातने ['इरियामिनयस्स '] इत्यादि स्त्रवडे सविस्तर कहे छे. ['आउत्तं' ति] उपयोग पूर्वक—सावधानीथी. ['जाव—चक्खुपम्ह—निर्वायमिव 'ति] वधारे तो शुं ? अर्थात् गमन वगेरे स्थूल कियाओ सावधानीथी थाय एमां शुं पण, आंखनी उन्मेष अन निर्मेष किया पण सावधानीथी थाय छे ['वेमाय 'ति] विमात्रा एटले विविध मात्रा अर्थात् अंतर्गुहुर्तथी मांडी देशोन पूर्वकोटि पर्वतनी कियाः कारण के काळ विचित्र छे। वळी बृद्धो तो आ प्रमाणे कहे छे- '' जेटला समये आंखनी उन्सेष अने निमष मात्र पण किया थाय छे तेटला समय पण-विमात्रावडे-थोडी मात्रावडे पण" कोइ ठेकाणे 'विमात्रा' ए पदने स्थाने ('संपेहाए') ए पद देखाय छे. (' संपहाए ') एटले खोग्रक्षावंड-स्वेच्छावंड-चक्षुनी पांपणनं ढळवं थाय छे, पण ते परकृत नथी. [' सुहुम 'ति] सूक्ष्मवंधादि काळवाळी, ['इरियावहिय' ति] ईर्यापथ एटले जवानो गार्ग, तेमां थएली जे किया ते ऐर्यापथिकी अर्थात् केवल शरीरहेतुक किया-ईयांपथ. ['किरिय 'ति] किया एटले कर्म-सातावेदनीय कर्म. ['कजइ 'ति] थाय छे. उपशांतमोह, क्षीणभोह अने सयोगिकवेली; ए जण गुण-स्थानक उपर वर्ततो वीतराग पण सातावेदनीय कर्म बांधे छे, कारण के ते सिकय - कियावाळो -- छे. ['से 'ति] ते -- ईर्यापथिकी किया ि ५ इससँमयबद्धपुद्ध ' ति] प्रथम समये कर्मपणे उत्पन्न करी मन्टे बांधी--जीवना प्रदेशो साथे तेनुं स्पर्शन व्ययुं माटे स्पर्शाई, बीजे समये अनुभव थयो-बेदन थयुं, ए प्रमाणे त्रीने समये प्रदेशोथी छुटी पड़ी गई-अनुभवाइ रही माटे जीवना प्रदेशोथी नोखी यह गई. ए ज वातने नीजा वाक्यथी कहे छे, प्रथम समय बंघाइ अने स्पर्शाइ बीजा समये तो उदयमां आणी-वेदी-अनुभवाइ गई. 'एक काळे उदीरणा अने उदय संभवतो नथी ' एम छे माटे ' उदीरित ' शब्दनुं उपर प्रमाणे विवेचन कर्युं छे अर्थात् ' उदीरित ' शब्दने अहीं वेदित अर्थमां योज्यो छे. त्रीजे समये तो निर्जराणी अने तथी [' सेयकां छे 'ति] मविष्यत्काळमां ते [' अकम्मं या वि 'ति] अकमे पण थइ जाय छे. जो के अहीं त्रीजे समये पण कर्म अकर्म थाय छे तो पण ते ज वखते भावकर्मनी रहितता होवाथी अने द्रव्यकर्मनी हाजरी होवाथी 'बीजे समये कर्म निर्जीर्ण थयुं ' एम व्यवहार थाय छे अने चोधा वगेरे समयोगां तो 'कर्म अकर्म धाय छे 'एम व्यवहार थाय छे. ['अत्तत्तासंडवुस्स 'इत्यादि.] ए सूत्र

एम सूचवे छे के, जो आश्रववाळो संयत पण कर्मनो बंध करें, तो असंयत जीव कर्मनो वंध करें ते तो सुतर ज छे. कर्मात्मक पाणीधी भराती

१. 'निवाबो 'ने बदले 'निवायं 'थवानुं कारण प्राकृतमां लिंगनी अनियतता है. २. प्रथम 'प्रथम ' अने 'समय 'नो तथा 'वद 'अने स्ट्रहनो -इमें भारय समास करवो, पछी ए वले पदोनो एकमेक साथे तत्पुरुष समास करवो:--श्रीअभय०

जीवहा नौकातुं नीचे हुवबुं, आधी कहुं छै. कियावाळोन कर्मनो बंध होय छे एम होंचुं छे गाँट किया विनाना मनुष्यंन कर्मनो बंध नथी होतो, ए बात सूचवाय छे अने ए उपरथी ज एम समजाय छे के, जो जीवहप नौका आसव [काणा—कर्न आववानो मार्ग] रहित होय तो तेमुं कर्बन कर्बनमन—पाणी उपर तरबुं-थाय छे.

ं प्रतत्त अने अप्रमत्त संयतनो समय.

१६. प्र०—पैमत्तसंजयस्स णं भते ! पमत्तसंजमे वहमाणस्स सन्वा वि य णं पमत्तद्धा कालओ केयचिरं होइ ?

१६. उ०-मांडिअपुत्ता ! एगजीवं पडुच जहण्येणं एकं समयं, उक्कोसेणं देसूणा पुट्यकोडी: णायाजीवे पडुच सन्यदाः

२७. प्र०-- अप्पनत्तसं नयस्स णं मंते ! अप्पमत्तसं नमे वह-माणस्स सन्त्रा वि णं अप्पमत्तद्धा कालओ केवचिरं होइ ?

१७. उ० - मण्डिअपुत्ता ! एगजीवं पडुच जहत्रेणं अंतोमु-हुत्तं, उक्कोसेणं देसूणा पुन्यकोडी. णाणाजीवे सन्यदं.

—सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति भगवं गोयमे मण्डिअपुत्ते अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नगंतर; वंदित्ता नमंतित्तां संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति. १६ प्र०—हे भगवन्! प्रमत्त संयमने , पाळता प्रमत्त संयमिनो वधो मळीने प्रमत्तसंयम -काळ केटलो थाय छे ?

१६. उ०-- हे मंडितपुत्र ! एक जीयने आश्रीने जघन्ये एक समय अने उत्कृष्टे देशीन पूर्वकोटि, एटलो प्रमत्तसंपम काळ-थाय छे. अने अनेक जातना जीवोने आश्रीने सर्व काळ, प्रमत्तसंयम-काळ छे.

१७ प्र०—हे भगवन्! अप्रनत्त संयमने पाळता अप्रमत्त संयमिनो बचो मळीवे अप्रमत्तंसंयम-काळ केटहो याय छें?

१७ उ०--हे मंडितपुत्र ! एक जीवने आर्थाने जघन्ये अंतर्मृहूर्त अने उन्हांट देशोन पूर्वकोटि, एटको अप्रमत्ततंपम—काळ थाय छे. अने अनेक जातना जीवोने आर्थाने सर्व काळ, अप्रम-संयम—काळ छे.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, एम करी भगवान्, गौतम मंडितपुत्र सनगण श्रमण गावत महा-वीरने वांदे छे, नमे छे अने तेम करीने संयम तथा तपवडे आत्माने भावता विहरे छें.

भ. अथ यदुक्तम् — 'श्रमणानां प्रमादप्रत्यया किया भवति ' इति. तत्र प्रमादपरत्वम् . तिह्रपक्षत्वात् तिहतरत्वं संयतस्य कालते निरूपयन् आह्— 'पगक्त ' इत्यादि. 'सञ्चा वि य णं पगक्त ' ति सर्वा अपि च — सर्वकालसंभवाऽपि च प्रमत्ताला प्रमत्तगुणस्थानककालः कालतः प्रमताद्धा—सम्इलक्षणं कालमाश्रित्य, कियचिरं कियन्तं कालं यावद् भवति ?— इति प्रश्नेः नतु 'कालतः ' इति न वाच्यम् , 'कियचिरम् ' इत्यनेनैव गार्थकात् . नैवम् , 'क्षेत्रतः ' इत्यस्य व्यवच्छेदार्थत्वात् . भवति हि 'क्षेत्रतः कियचिरम् ?' इत्यपि प्रश्नः यथा — अवधिवानं क्षेत्रतः कियचिरं भवति ? त्रविह्याःसागरोपमाणि, कालतस्तु सातिरेका प्रदृष्टिः - इति 'एकं समयं ' कथम् ? उच्यते—प्रमत्तसंयमप्रतिष्ठतिसमयसमनन्तरमेव मरणात् . 'देसूणा पुच्यकोण्डि ' ति किल प्रत्येकगन्तर्महूर्नप्रमाणे एव प्रमत्ता- इप्रमत्तगुणस्थानके, ते च पर्यायेण जायमाने देशोनपूर्वकोटि यावद् उद्ध्वपेण मवतः . स्वपवतो हि पूर्वकोटिरं परअदः, स च संयममष्टासु वर्षेषु गतेषु एव लभते, महान्ति च अप्रमत्तान्तर्मृहूर्वपेक्षया प्रमत्तान्तर्मृहूता न कल्यन्ते, एवं च अन्तर्मृहूर्वप्रमाणानां प्रमत्ताद्धानां सर्वासां मीलनेन देशोनपूर्वकोटिकालमानं भवति . अन्ये वाहः — ' अष्टवर्योनां पूर्वकोटि यावद् उद्ध्वर्वः प्रमत्तत्वरास्यात् ' इति . एवम् — अप्रमत्तस्यत्वर्यः सर्वोऽपि सर्वविरतोऽप्रमत्त उच्यते, प्रमादामात्रातः त च उपशमश्रणीं प्रतिप्रमानो मुहूर्ताभ्यत्तरे कालं कुर्वन् जवन्यकालो लम्यते— इति देशोनपूर्वकोटी तु केवलिनमाश्रिस ' इति .

ं ५. हमणां जे कह्युं के, अमणोने प्रमादने कींघे किया होय छे. तो हवे प्रमादपरता, तथा तथी विपरीततावाळी, अप्रमादपरता; ते वज्ञे

१. मूळच्छायाः—प्रमत्तसंयतस्य भगवन्। प्रमत्तसंयमे वर्तमानस्य सर्व।ऽपि च प्रमत्तादा काळतः क्षियन्ति । मण्डतपुत्र! एकतीवं प्रतीत्व जधन्येन एक समयम्, उत्कृष्ठेन देशाना पूर्व होटी. नानाजीवान् प्रतीत्व सर्वाद्धाः अप्रमत्तन्यतस्य भगवन्। अप्रमत्ततंदमे वर्तमानस्य सर्व। आभे अप्रमत्ताद्धा काळतः किप्रनिदं भवति । नागाजीवान् प्रतीत्व प्रतीत्व जधन्येन अन्तर्शेहृतेम्, उत्कृष्टन देशाना पृष्ठिकोटी. नागाजीवान् प्रतीत्व सर्वाद्धम्, तदेवं भगवन्। इति भगवान् गैतमो मण्तिपुद्धाःनवारः अमणं भणवन्त महत्वीरं वन्दते, न स्वतः विहरतः—अनुव् तपसा शात्मानं भावतन् विहरतिः—अनुव्

१ चूर्णिंगतः पाठो वथाः—पमत्तस्य जहण्ये कालो समझो, एयो य अप्पमत्ताणतो चवमाणो पमत्ततंजतो काले करेजा तत्थ लामति देसुग पुरुवकीम्धाःम ताए अप्पमत्तो जहण्यकालो उवसमसेटी पडिवज्जमाणो मुहुत्ते अविभंतरतो कालं करेज्जमाणो होति केवली देसुणः—अनुर

संयतने केटला काळ सुधी रहे, ए वातनुं निरूपण करवा कहे छे के, ['पमत्त ' इत्यादि.] ['सव्या वि य णं पमत्तद्व 'ति] सर्व काळे संभवतो प्रमत्ताद्धाः प्रमत्तादा -प्रमत्तगुणस्वानकनो बचो य काळ, काळथी-प्रमत्तादा सगृहस्त काळने आश्रीने-केटला काळ सुधी रहे ? ए प्रमाणे प्रश्न छे. शं०-आ शंका. सूत्रमां 'कालओ-काळथी ' अने ' कियचिरं-क्यां सुधी ' ए वही मूकवानी अगत्य नधी. कारण के 'काठओ ' ए राष्ट्रनी अर्थ 'कियचिरम् ' ं शन्दना ज अर्थनां आबी जाय हे माटे सूत्रमां 'कालओं ' शन्द कहेवानी ह्यं जरूर है ? समा —'कालओं 'ए शन्द क्षत्रना न्यवस्त्रेदने साह समाधान. मूनयों छे. कारण के क्षेत्रविषयक प्रश्लोगां 'कियबिरम् ' शब्द पण प्रयोजाय छे. जैम के, अवविज्ञान, क्षेत्रवी 'कियबिरम् '-क्यांसुवी छे १ तिजीश सागरोपम. अने काळथी तो अवधिशान, छासठ सागरोपम करतां वधारे छे. ['एक समयं'] ते केवी रीते ? तो कहे छे के, प्रमत्त संयमने प्राप्त कर्या पछी तुरत ज एक समय बीत्या पछी-मरण थाय तो एक समय घटे छे. ['देस्णा पुच्यकोडि ' ति] प्रमत्तगुणस्थानक अने अप्रमतगुणस्थानक, ए बन्नेनो प्रत्येकनो सभय, अंतर्मुहूर्त छे. ते अंतर्मुहूर्त प्रवाण काळदा या बन्ने गुणस्थानक पण, पर्याय (जूदे जूरे समये कमवार) भवाधी देशोन पूर्वकोदि पूर्वकोटि सुधी उत्कृष्ठपणे होय छे. कारण के संयमवाळा मनुष्यनुं वधारेमां वधारे आयुष्य पूर्वकोटि जेटलुं व होय छे. तेवी मनुष्य, आठ घरस गया पछी ज संयमनो लाम करे छे. अध्यसत्तनां अंतर्भुहूर्ती करतां व्रमत्तनां अंतर्भुहूर्ती नोटां छ एम प्रत्याय छे. अने एवी रीते अंतर्भुहूर्त व्रमाण बधा प्रमत्तादानं मेळवतां तनो काळ देशोन पूर्वकोटि याय छै. बीजाओ तो कहे छे के, '' वजारेमां वधारे आउ व से ऊणी पूर्वकोटि सुधी प्रमत्तर्वयतपणुं टके छै.'' ए प्रमाणे अप्रमत्त संबंधी पण सूत्र कहेतुं. विशेष ए क, [जिल्हेणे जिलेसुहुत्ते 'ति] अप्रमताद्वामां एटले अप्रमत्त गुणस्यानकने समये वर्तमान मनुष्य अंतर्भुद्वर्तनी वचमां मरतो नधी. चूर्णिकारनो मत तो अंतरहः - " प्रवत्त संयत सिवाय बाकीना बधा य सर्व विरतिवाला मनुष्यो, वृशिकार. प्रमाद नहीं होवाने लीचे अप्रमत कहेवाय छे. एवा कोइ उपशम श्रेणिन समतो गनुष्य, शहूरीनी वच काळ करे तो त माटे जवन्य काळ छन्ध यह शके छे अने देशोन पूर्वफोटि तो केवळशानिन आधीने छे."

खषणसमुद्रनो भरती-ओट.

१८. ४० — मंते । ति भगवं गोयमे समणं मगवं महावीरं गंदर, नमंदर; वंदित्ता, नमंमित्ता एवं वयामी: — कस्हा णं भनते ! त्रवासमुद्दे चाउदस-इमु-दिष्ठ-पुण्णमासिणीमु अतिरेगं वडूर वा ! हायह या !

१८. उ०--जहा जीवामिगमे लबणसमुद्दवत्तव्यया नेयव्या, जाय-स्रोअष्टिर्द, लोखाणुभावे,

—सेवं मंते !, भंते ! वि बाव विहरह.

१८. प्र०—' हे भगवन्!' एन कही भगवान् गीतम, श्रमण भगवतं महावीरने बांदे छे, नमे छे अने तेम करी तेओ आ प्रमाणे बोल्पा के:—हे भगवन्! लवण समुद्र, चौदशने दिवसे, आठमने दिवसे, अमासने दिवसे अने पूनमने दिवसे वचारे केम बधे छे अने वधारे केम बडे छे ?

१८. उ०—हे गौतम! जेम जीवाभिगम सूत्रमां छवण समुद्र संबंधे कहां छे तेम अहीं जाणबुं अने यावत्–ते 'छोफस्विति' अने 'छोकानुभाव' ए शब्द सुधी जाणबुं.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, एम कही यावत्-विहरे छे.

मगबंत-मजबुहम्मसामिषणीए सिरीभगवरेषुचे ततिशसये तह्ओ किरिशा-उदेशे सम्मत्तो.

६. 'णाणा जीवे पहुच सन्बहं ' इत्युक्तम् , अथ सर्वाद्धाभाविभावान्तरप्ररूपणाय आह—' भंते ' ति इत्यादि. ' जितरेमं 'ति तिथ्यन्तरापेक्षया अधिकतरिमवर्थः. ' लवणसमुद्दवत्तन्या नेयन्य ' ति जीवाभिगमोक्ता. वियद् दूरं यावत् ? इत्याह—' नाव लोजिहिं ' इत्यादि. सा चैवमर्थतः—" कस्माद् भदन्त ं लवणसमुद्रश्चतुर्दश्चादिषु आतिरेक्षेण वर्धते वा ? हीयते वा ? इह प्रश्ने उत्तरम्—लवणसमुद्रस्य मध्यभागे दिशु चत्वारो भहापातालकल्या योजनलक्षप्रमाणाः सन्ति, तेषां चाऽधस्तने त्रिभागे वायुः, मध्यमे वायुद्दके, लपरितने तृद्दक्षिति. तथाऽन्ये क्षुद्रपातालकल्या योजनसहस्त्रमाणाश्चतुरशीति उत्तराष्ट्रसताधिकसप्तसहस्त्रसंख्याः बाध्यादियुक्तिनिमागवन्तः सन्ति. तदीयवातविश्वोभवशाद् जलवृद्धि—हानी अष्टम्यादिषु स्थाताम्. था लवणिदालाया दश योजनानां सहस्राणि विष्क्रम्भः, पोडश उच्ल्यः, योजनार्धनुपरि वृद्धि—हानी इत्यादि. अथ कस्माल् लवणो जम्बूद्रीपं नोत्प्लावयित ? अर्हदादिप्रभावात् , लोकिस्थितिर्वा—एवा इति. एतदेवाह—" लोअद्विह " ति लोकस्थवस्या, ' लोकाणुभाय " इति लोकप्रभावः.

सगरासुधर्मसामित्रणीते भीभगवतीसुत्रे वृतीयशते क्रियाख्ये वृतीय उद्देशके श्रीअभयदेवस्तिवित्चितं विवरणं समाप्तम्,

१. चूर्णिनो मूळ पाठ आगळ जणावेहो हे:--अनु०

९. मूलच्छायाः—सगदन्! इति भगवान् भीतमः ध्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति, वन्दिता, नमस्यिक्षा एवस्यायीदः—फस्माद् भगवन्! स्वयमसुदः चतुर्दशी-अष्ठगी-त्रद्धि-पूर्णमासिनीषु अतिरेकं वर्षते वाः! हीयते वाः! यथा जीवाभिगमे स्वयमसुद्रवक्षत्रयता हात्त्या, यावद्-कोकस्थितः, सोकानुभावः, तदेषं भगवन्। भनवन्। इति यावत्-विहरतिः—अनु०

्द. ['णाणा जीवे पहुच सव्वदं 'ति] ए सूत्रमां सर्वाद्धामावी प्रमादपरता अने अप्रमादपरताने सूचवी छे. हवे सर्वाद्धा मावी-तेवा बीजा पदार्थोतुं निरूपण करवा कहें छे के, ['संते ' इत्यादि.] ['अतिरेगं 'ति [बीजी तिथिनी अपेक्षाए वधारे, ['लवणसमुदंवत्तव्वया नेयस्व 'ति] जीवाभिगम-सूत्रमां कहेली लवण समुद्र संबंधी वक्तव्यता कहेयी। क्यां सुधी ? तो कहे छे के, ['जाव-लोयिहिई ' इत्यादि.] ए जीवाभिगम सूत्रमां कहेली लवणसमुद्र संबंधी वक्तव्यता आ प्रमाणे छे:—''हे मगवन्! चतुदेशी विगेरे तिथि श्रोमां लवण समुद्र वधारे केम वधे छे ? अथवा वधारे केम बटे छे ? (उत्तर—) लवण समुद्रनी वचे चारे दिशाओमां चार मोटा पाताळ कळशो छे अने तेनुं माप लाख बोजन (प्रमाण) छे। तेओनी नीचला त्रिमागमां वासु छे, वचलमां पाणी अने वायु छे अने उपरना भागमां तो पाणी छे. तथा वीजा पाताळ कळशो पण छे जेओ नाना (क्षुद्रः) छे, तेबुं माप हजार योजननुं छे तथा तेनी संख्या ७८८४ छे. ते बया पण वायु वंगेरेथी युक्त त्रिमागवाळा छे. तेओना वायुविक्षोमथी लवण , समुद्रमां पाणीनो वधारो अने घटाडो अध्मी वगेरे तिथिओमां थाय छे. तथा लवण समुद्रनी शिखानो विष्कंभ दश हजार योजन छे अने तेनी उचाइ सोळ हजार योजन छे तथा उपर अडधो योजन पाणीनो वथारो अने घटाडो थाय छे '' इत्यादि. लवण समुद्र, जंब्द्धीपने केम दुबादतो नधी ?. (उत्तर—) अर्हेत वंगेरेना प्रमावथी अथवा एवी ज लोकनो स्थिति छे. ए ज वातने कहे छे के, ['लोयिहिइ 'ित्त] लोकनी व्यवस्थ एवी ज छे. ['लोयागुमावे 'ति] लोकनो प्रमाव एवो छे.

लवण समुद्रः भरती औट थवानुं कारण

लो रुस्थिति.

बेडारूपः समुद्देऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्रुणानां परक्वतिकरणाद्वैतजीवी तपसी। अस्मावं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति शान्सोः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं सारहा चाप्तमुख्यः॥

१. श्रीजीवासिगमसूत्रमां ठवणसमुद्र विषेनी हकीकत आ प्रमाणे छेः—

कम्हा णं भंते ! लवणसमुद्दे चाउद्स-दृमु-द्दिह-पुण्णिमासिणीस अतिरेगं बहुति वा ? हायति वा ?

गोयमा ! जंबुहीवस्स णं चउद्दिसिं बाहिरिहाओ वेइयंताओ खबणसमुद्दं पंचाणउति जोयणसहस्साइं ओगाहिता एत्थ णं चतारि महार्लिंजर (महा-रंजर) संटाणसंठिया, महइनहालया महापायाठा पण्यता. ते जहाः---बलयामुहे, केतूए, जुवे, ईसरे. ते ण महापाताला एगमेगं जोयणसय-सहस्सं उब्वेहेणं, मूळे दस जोयणसहस्ताई विक्खंभणं, मज्झे एगपदेसियाए सेढोए एगमेनं जोयणसतसहस्तं विक्खंभेणं, उवरिं मुहमूले दसजीयणस-हस्साई विक्लंभेणं. तेसि णं महापायालाणं कुड्डा सब्बत्ध समा दसजीयण-सतवाह्ला पण्णतः-सन्त्रनद्शामया, अच्छा जात्र-पडिरूवा. तत्थ णं वहवे जीवा, पोश्गला य अवक्र नंति, विउक्त नंति, चयंति, उवचयंति-सासया णं ते कुड्डा दब्बद्वपाए, वण्ण-पजनवेहिं असासया. तत्थ णं चत्तारि देवा महिद्वीया जाव-पिलओवमहितीया परिवसंति, तं जहा--काले, महाकाले, वेलंने, पभंजणे. तेसि णं महापायालाणं तओ तिभागा पण्यता, तं जहा-देदिके तिभागे, मजिझके तिभागे, उपरिमे तिभागे ते णं तिभागा तेतीसं जोयणसहस्सा, तिष्णि य तेतीसं जोयणसतं जोयणतिभागं च बाइहेर्ण. तत्थ णं जे से हेर्डिहे तिभागे एत्थ णं वाउकाओ संचिष्ठति, तस्य णं जे से मिष्सिक्षे तिभागे एत्थ णं वायुकाए य, आउकाए य संच्छित, तत्थ णं जे से उबरिके तिभागे एत्थ णं आउकाए संचिद्रति, अदुत्तरं च णं गोयमा। लवणसमुद्दे तत्थ तत्थ देसे बहवे खुड्डा-लिजरसंठाणसंठिया खुरुवायालकलसा पण्यत्ता, ते णे खुरा पाताला एगमेगं ओयणसहस्सं उब्बेहेणं, मूछे एगमेगं जोयणसतं विक्खंभेण, मज्झे एगपदेसियाए सेडिए, एगमेगं जोयणसहस्तं विक्खमेणं. तेसि ण खुड्ढागपायालाणं कुड्ढा सन्वत्थ समा-दस जीयणाई बाहलेणं पण्णता-सन्ब-वइरामया अच्छा जाब-पडिस्वा. तस्थ णं वहवे जीवा, पोग्गला य जाव-असासया वि. पत्तेयं पत्तेयं अद्धपलिओवमद्वितीयाहिं देवताहिं परिग्गहिया. तेसि णं खुडूनपातालाणं ततो तिभागा पण्णत्ता, तं जहा-हेन्छि तिभागे, मिनिक तिभागे, उन्हों तिभ गे. ते णं तिभागा तिण्णि तेचीसे जोवणसते जोयणतिभागं च बाहरोंण पण्यत्ते. तत्थ णं जे से हेट्टिहे तिभागे एत्थ णं बाउकाओ, मिन्झिले तिभागे बाउआए, आउयाते च, उबरिले आउकाए. एवामेव सपुन्वावरेणं लवणसमुद्दे सत्त पायालसहस्या अट्ट य जुलसीता पातालसता भवंती।तेमक्खाया. तेसि णे महापायालाणं, सुहुमपायालःण य हेडिम-मिन्सिमिटेस विभागेस बहवे ओराटा वाया संसेयंति, संसुन्डिमंति, एयंति; चर्छति, कंपंति, खुब्मंति, घटंति, फंदंति, तं तं भावं परिणमंति-तया में से उदए उप्पामिकति, जया में तेसिं महापायालामं खुड्डारापायालाम

हे भगवन् ! चै।दश, आठम, अमास अने प्रमना दिवसोमां छवण समुद्रमां भरती आववातुं अने ओट थवातुं शुं कारण ?

हे गै।तम ! जंबूद्रीपनी चेदिकाना चारे दिशाना बहारना छेडाथी पंचाणुं पंचाणुं हजार योजन जेटला लदणसमुद्रना भागनं एकीते। सोटामां मोटां चार महापातालो रह्यां छे, जेओनो आकार मोटा कुंडा जेवो छ अने जेओ नां नाम आ प्रमाणे छे:--वडवामुख, केयू र यूप अने ईश्वर. ते महापाता-लोना उदेध एक ठाख योजनतो छे, तेशोनां मूळनो विष्कंग दस हजार ये जननो छे. एक प्रदेशनी श्रेणिपूर्वक तेओशो मध्यम विष्कंम लाख योजननो छे. तेओना मुखभागनो विष्कंभ दस हजार योजननो छे, ते महापानाहोनी भींत बधे ठेकाणे सम छे अने तेनी जाडाई दस हजार योजननी छे. ते भींती वजमय छे अने हुं इर यावत्-प्रतिहृष है. तेमां घणा जीवो अने षणा पुरलो अपक्रमे छे, पेदा थाय छे, चय पाने छे अने उपचय पाने छे. ते भीतो द्रव्यार्थपणे शास्त्रती छे अने वर्ण तथा पर्धायनी अपेक्षाए अशा-इवती छे. त्यां पत्योपमना आयुष्यवाळा अमे यावत्-मोटी ऋद्भिवःळा चार देवो रहे छे. तेमांनो एक फाल, बीजो महाकाल, छोजो बेलब आने चोछो प्रभंजन छे. ते महापातालोना त्रण त्रिभाग छे, जैसके; नीचेनो, बचलो अने उपरनो त्रिभाग. ते निभागोनी जाडाईनुं माप तेत्रीस हजार त्रणसें तेत्रीस थोजन उपरांत एक योजन त्रिभाग (एक तृतीयांश योजन) छे. तेमां जे नीचेनो जिभाग छे तेमां वायुकाय रहे छे, बचला त्रिभागमां बायुकाय अने जलकाप रहे छे अने उपरना त्रिभागमं जलकाय रहे छे. वळी, हे गैतिम ! स्वणसमुद्रमां घणी जायाए नाना नाना कुंडानी जेवा चीजा पण घणा क्षुद्रपातालकलको छे. ते क्षुद्रपाताल कलशोनोः उद्देध एक एक हजार योजननो छे, तेमनो मूळनो विष्कंभ सी जोजननो छे अने एक प्रदेशनी धेणिपूर्वक तेना मध्यनो विष्कंभ हजार योजननो छे तथा तेना उपटा भागनो विष्कंभ सो दोजननो छे. ते धुद्रपातालोनी भीत यथे ठेकाणे सम छे, ते भीतनी जाडाई दस योजननी छे. ते बधी भीतो वजनी छे अने यावत्-संदर तथा प्रतिहर छे. तेमां घणा जीवो अने युद्रको अपक्रमे छे, पेदा थाय छे, चय पामे छ अने उपचय पामे छ अने यावत्-ते अशास्वती छे. ते प्रत्येक श्चद्रपाताल देवाधिष्ठित छे. ते देवनुं आयुष्य अडधा पत्थोपमनुं छे. ते क्षद्रवातालना त्रण त्रिभाग हे. जेमके; नीचेनो, वचलो अने उपरनो. ते प्रस्येक त्रिभागनी जाडाई त्रणसें तेत्रीस योजन अने एक योजन त्रिस ग छे. कीचेना त्रिभागमां वायुकाय छे, वचला त्रिभागमां वायुकाय अने जलकाय वने छे अने उपरना त्रिभागमां जलकाय छे. ए रीते पूर्वधी पश्चिम सुधीमा कवणसमुद्रना भागमां सात हजार आठसेने चाराशा

य हेडिल-मिन्सिलेस तिभागेस नो बहवे ओराला जाव-तं तं भावं न परि-णमंति तया णं से उदए नो उन्नामिज्जइ, अंतरा वि य णं ते वाथं उदीरेंति, अन्तरा वि य णं से उदगे चण्णामिज्जइ, अंतरा वि य ते वाया ने। उदीरेति, अंतरा वि य णं से उदगे णो उण्णामिज्जइ; एवं खळु गोयमा ! लवणसमुद चाउइस-इसु-दिह-पुण्णम।सिणीसु अइरेगं अइरेगं वहृति वा, हायति वा":—जीवाभिगम पृ ० २०४-२०५ (आगमो०):—अनु० पाताल कलशो छे. ते महापाताल अने शहरातालोना नीचला तथा यचला तिमागोमां उर्ध्वनमनशील (उरार) एवा घणा वायुओ संस्वेदे छे, संमूछें छे, कंपे छे, चाले छे, क्षोमवळा थाय छे, परसार संघट करे छे, संदे छे अने ते ते विश्वतिए परिणमे छे. ज्यारे एम थाय छे त्यारे ते पाणी उंचुं उछले छे अने जा रे एम थाउं नथी त्यारे पाणी पण उंचुं उछलतुं नथी वधे पण ज्यारे ते पवनो उदीराय छे त्यारे पाणी उचुं उछले छे अने ज्यारे एम थाउं नथी त्यारे पाणी उंचुं उछलतुं नथी एम थाउं नथी त्यारे पाणी उंचुं उछलतुं नथी रूप थाउं नथी त्यारे पाणी उंचुं उछलतुं नथी. हे गातम! ए रीते लवण समुद्रमां थता भरती ओटना कारणनी हकीकत छे:—जीवाभिगम, प्रव्ह २०४-३०५ (आगगो०):—अनु०

शतक ३.-उद्देशक ४.

अनगार यानरूपे जता देवने देवरूपे जूने के यानरूपे ?—चतुर्भगी.—एवा देवी अने देव-देवी संबर्धना प्रश्नो.—एक्षने जोनारो अनगार तेना अंदरना के बहारना भागने जूने ?—चतुर्भगी.—ए रीते मूळ, कंद, रकंध, छाल, डाळ, पत्र, फुल, फळ तथा वीजना प्रश्नो.—पीतालीश भागा —मनुष्य, तिदेच, वाहन अने पताकाने आकारे वाय ?—मात्र पताकाने आकारे वाय.—कारण.—पताकाने आकारे अनेक योजन जाय ?—हा.—आत्मकाल.—परक्रि —आत्म-प्रयोग.—परअयोग.—वायु पताका छे ?—ना—तेवे ज आकारे जनारी वादळीओ.—कारण —मरण पूर्वेनी छेश्यामाळो नैरियक.—ज्योतिषक तथा वैमानिकोनी छेश्या.—छेश्याह्रव्यो.—अनगार, बहारनां पुद्रकोने लीथा विना वैभारने ओळने ?—ना.—छईने ?—हा.—विकुर्वणा करन रो माथी.—कारण.—प्रणीत भोजने.—अप्रणीत भोजन्या मांस अने छोहीनी प्रवनुता—अस्थिओनी पनता.—अप्रणीत भोजन्या मांस अने छोहीनी प्रवनुता—अस्थिओनी प्रतनुता.—मायी विराधक.—अमायी आराधक.—

- १. प्र०—अणगारे णं भन्ते ! भावियणा देवं वेउव्विय-समुग्घाएणं समोहयं नाणरूवेणं नायमाणं नाणइ, पासइ ?
- ?. उ०—गोयमा ! अत्थेगईए देवं पासइ, नो जाणं पासइ; अत्थेगईए जाणं पासइ, नो देवं पासइ; अत्थेगईए देवं पि पासइ, जाणं पि पासइ; अत्थेगईए णो देवं पासइ, नो जाणं पासइ.
- २. प्र०—अणगारे णं भन्ते ! भाविअप्पा देवि वेउ व्यिअ-समुन्धायेणं समोहयं जाणरूवेण जायमाणं जाणइ, पासइ ?
 - २. उ०-गोयमा ! एवं चेव.
- ३. प्र०—अणगारे णं भन्ते ! भाविअपा देवं सदेवी अं वेउन्विअसमुग्घाएणं समोहयं जाणरूवेणं जायमाणं जाणइ, पासइ ?
- ३. उ०—गोयमा! अत्थेगईए देवं सदेवीअं पासइ, नो जाणं पासइ; एएणं अभिलावेणं चत्तारि भंगा.
- ४. प्र०—अणगारे णं भन्ते ! माविअप्पा रुक्स्तस्स किं अन्तो पासइ, बाहिं पासइ ?

- १ प्र०—हे भगवन् ! भावितातमा अनगार, वैक्रिय समु-द्वातथी समबहत थएला अने यानरूपे गति करता देवन जन्म, जूए ?
- १. उ०—हे गौतम! कोइ तो देवने जूए पण यानने न जूए. कोई यानने जूए पण देवने न जूए. कोई देव अने यान, ए बनेने जूए अने कोई तो देव अने यान, ए बेमांथी कोइ वस्तुने न जूए.
- २. प्र॰—हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार, वैक्रिय समुद्धा-तथी समवहत थएळी अने यानरूपे गति करती देवीने जाणे, जूए?
 - २. उ०--हे गौतम! पूर्व प्रमाणे ज जाणवुं.
- र. प्र०-- हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार, वैकिय तमुद्धा-तथी समवहत थएला अने यानरूपे गति करता एवा देवीवाळा देवने जाणे, जूए?
- ३. उ०—हे गौतम! कोई तो देवीवाळा देवने जूए, पण यानने न जूए, ए अभिळापथी अहीं पूर्व प्रमाणे चार मांगा करी छेवा.
- ४. प्र०--हे भगवन्! भावितात्मा अनगार, शुं झाडना अंदरना भागने जूए के बहारना भागने जूए?

^{9.} मूलच्छायाः—अनगारे। भगवन्! भावितातमा देवं वैक्रियसमुद्धातेन समवहतं यानरूपेण यान्तं जानाति, पश्यति १ गातम ! अस्त्वेकको देवं पश्यिति, ने। यानं पश्यिति, अस्त्येकको यानं पश्यिति, नो देवं पश्यिति, अस्त्येकको देवं पश्यिति, अप्तारे। अस्त्येकको ना देवं पश्यिति, अस्त्येकको देवं पश्यिति, अपत्यिति, अनगारे। अभ्यति, अनगारे। भगवन् ! भावितात्मा देवीं वैक्रियसमुद्धातेन समबहतां यानरूपेण यान्ती जानाति, पश्यिति १ गातम ! एवं नैवः अनगारे। भगवन् ! भावितात्मा देवं सदेविकं वैक्रियसमुद्धातेन समबहतं यानरूपेण यान्तं जानाति, पश्यिति १ गीतम ! अस्त्येकको देवं सदेविकं पश्यिति, ने। यानं पश्यिति; एतेन अभिलापेन चत्वारे। भक्षाः. अनगारे। भगवन् ! भावितात्मा वृक्षस्य किम् अन्तः पश्यिति, बहिः पश्यिति १ —अगु०

[्]रः जूओ–भगवतौ प्र० खं० प्र० २६२–समुद्धातः—अनु०

एवं जाव-पुष्फेण समं बीअं संजोएअव्वं.

५. प्र०-अणगारे णं भन्ते ! भाविअप्पा रुक्खस्स किं फलं पासइ, बीअं पासइ ?

५. उ०-चउमंगी.

४. उ०-- चेउमंगो. एवं-कि मूलं पासइ, कंदं पासइ? ४. उ०-- हे गौतम! अहीं पण चार भांगा कहेवा. ए ज चडमंगो. मूलं पासइ, संधं पासइ? चडमंगो. एवं मूलेणं रीते हुं मूळने जूए छे? कांदाने जूए छे? हे गौतम! पूर्व प्रमाणे बीअं संजोएअव्वं, एवं कंदेण वि समं संजोएअव्वं जाय-बीअं. चार भांगा करवा. मूळने जूए छे? स्कंधने जूए छे? हे गौतम! अहीं पण चार भागा करवा. अने ए ज प्रमाणे मूळनी साथे बीजनो संयोग कन्यो, ए रीते कंदनी साथे पण जोडवुं यावत्-बीज. ए प्रमाणे यावत्-पुष्पनी साथे वीजनो संयोग करवो.

> ५. प्र०-हे भगवन्! भाविताःमा अनगार, शुं वृक्षनुं फळ जूए के बीज जूए?

५. उ०--हे गौतम! अहीं चार भांगा करवा.

१. 'अनन्तरोद्देशके क्रिया उक्ता, सा च ज्ञानवतां प्रत्यक्षा' इति तदैव क्रियाविशेषमाश्रित्य विचित्रतया दर्शयंश्रतुर्थोद्देशकमाह, तस्य चेदं सूत्रमः-' अणगारे णं ' इत्यादि. तत्र ' भाविअप्य 'त्ति भावितात्मा संयम-तपोभ्याम् , ' एवंविधानामनगाराणां हि प्रायोऽवधि-ज्ञानादिरुब्धयो भवन्ति ' इति कृत्वा भावितात्मा इत्युक्ता. ' वे उन्त्रियसमुग्धाएणं समोहयं ' ति विहितोत्तरशरीरमिखर्थः. ' जाण-रूवेणं 'ति यानप्रकारेण शिविकाद्याकारवता वैकियविमानेन इटार्थः. ' जायमाणं 'ति यान्तं गुच्छन्तम्, ' जाणइ 'त्ति ज्ञानेन, ' पासइ 'ति दर्शनेन. उत्तरमिह—चतुर्भङ्गी, विचित्रत्वादवधिज्ञानस्येति. ' अंतो ' ति मध्ये काष्टसारादि, ' बाहिं 'ति बहिर्वर्ति त्वक्-पत्रतंचयादि, ' एवं मूलेणं ' इत्यादि. एवमिति मूल-कन्दसूत्राभिलापेन मूलेन सह कन्दादिपदानि वाच्यानि यावद् बीजपदम्, तत्र च मूलम्, कन्दः, स्कन्धः, त्वक्, शाखा, प्रवालम्, पत्रम्, पुष्पम्, फलम्, वीजं चेति दश पदानि, एषां च पश्चवावारिशद् द्विकसंयोगाः, एताबन्त्येव इह चतुर्भङ्गीसूत्राणि अध्येयानि. एतदेव दर्शयितुमाह- एवं कंदेण वि व इत्यादि.

9. आगळना उद्देशकमां क्रिया संबंधे हकीकत कही छे. अने ते क्रिया, ज्ञानी मनुष्योने प्रत्यक्ष होय छे माटे ते ज क्रियाविशेषने आश्रीने तेने विचित्रपणे देखाइता चोथो उद्देशक कहे छे. अने तेनुं प्रथम सूत्र आ छेः—[' अणगारे णं ' इत्यादि.] तेमां [' भाविअप ' ति] संयम अने तपबड़े भावित आत्मा, झांझे भागे एवा प्रकारना साधुओंने ज अवधिशानादिक लब्धिओं होय छे माटे ए हेतुथी अहीं 'भावितातमा' शब्दनी प्रयोग कर्यों छे. ['वेउव्वियसमुम्बाएणं समोहयं 'ति] अर्थात् जेणे उत्तर शरीर बनाव्युं छे-तेने. ['जाणरूबेणं 'ति] शिबिका (डोळी) बगेरेना आकारवाळा वैकिय विमानने रूपे. [' जायमाणं ' ति] गति करता-जता-तेने [' जाणइ ' ति] ज्ञानवडे जाणे छे. [' पासइ 'ति] भविष्ठान. दर्शन वडे जूए छे. अहीं उत्तरमां चतुर्भेगी जाणवानी छे, कारण के अविधिद्यान विचित्र छे. [' अंतो ' ति] वच्चे रहेल लाकडानो गरभ वगेरे. ि बाहिं 'ति] बहार रहेनारी छाल अने पांदडां वगेरे. ['एवं मूलेणं 'इत्यादि.] मूल अने कंदना सूत्रामिलापपूर्वक-मूलनी साथे कंदथी मांडीने यावत्-बीज सुधीनां पदो कहेवां ते पदो आ छे:-मूळ, कांदो स्कंघ (मोटी डाळी) छाल, डाळी, प्रवाळ (अंकुर), पांदडुं, फुल, फुळ ४५ मांगा. अने बीज ए रीते ए दश पदो छे ए दशे पदोना द्विकसंयोगी ^१४५ मांगा थाय छे तो एटलां ज अहीं चतुर्मेगी सुत्रो कहेवां. ए ज वातने देखाडवा कहे छे के, [' एवं कंदेण वि ' इत्यादि.]

२. ते ४५ मांगा आ प्रमाणे हे:---

,٩.	मूळ	कंद.	٩२.,	, शाखा.	. २३. ,,	फळ,	₹४.	,,	फळ.
₹.	23	स्कंघ.	१₹.,	, प्रवाळ.	₹४. "	वीज.	₹५.	,,	बीज.
٠ ۽.	"	्छाल.	٩٧. ,,	पत्र.	२५. छाल	शाखा.	३६. प्र	वाळ	पत्र.
٧.	,,	शाखाः	ξ ¹ 4. ,,	. geq.	२६ ,,	प्रवाळ.	₹७.	"	पुब्य.
4.	,,	प्रवाळ.	۹۹۰,	फळ.	₹७, ,,	पत्र.	₹८.	,,	फळ,
ξ,	,,	पृत्र.	90.	वीज.	२८. ,,	ded.	३९.	**	बीज.
9.	"	पुब्द.	१८. स्कं	ध छाल.	39. ,,	फळ .	80.	पत्र	युष्प.
٤.	"	फळ.	१९. ,,	যাভা•	₹∘, ",	बीज-	8 8. :	47	फळ.
ዓ.	>,	बीज.	२०. "	प्रवाळ.	३१. शाखा	प्रवाळ.	. ¥₹	<i>5</i>)	बीज.
१०,	कंद	स्कंघ.	39 , ",	पत्र.	₹₹. ,,	पत्र•	83.	पु रुपः	फळ.
ጳ •ጳ.	,,	छाल.	२२, "	पुष्प.	₹₹, + ,, -	पुब्द,	४ ४,	,,	बीज.
							824. E	कळ	बीजः-अनु०,

भावितवातमा.

१. मूलच्छायाः—चतुर्भेङ्गः. एवं किं मूलं पर्यति, कन्दं पर्यति ? चतुर्भेङ्गः. मूलं पर्यति, स्कन्धं पर्यति ? चतुर्भेङ्गः. एवं मूलेन बीजं संयोजयितव्यम्, एवं कन्देनाऽपि समं संयोजयितव्यम् यावत्-बीजम्, एवं यावत्-पुष्पेण समं बीजं संयोजयितव्यम्, अनगारे। भगवन् ! भावितातमा बृक्षस्य किं फलं पर्यति, बीजं परयति ? चतुर्भङ्गः--अनु०

१. जूओ-भगवती प्र० खं० पृ० १३९-अवधिज्ञानः — अनु०

वायुकाय.

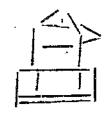
- ६ प्र० पेमू णं भन्ते । माउनाए एगं महं इतिथरूवं वा, पुरिसरूवं चा, हतिथरूवं चा, चाणरूवं चा; एवं जुम्म-भिछि-थिष्टि-सीथ-संदमाणिअरूषं वा विडाध्यत्तए ?
- ६. उ०—गोयमा 1 नो इणड्डे समद्वे, याउकाए णं विकु-च्येमाणे एगं महं पद्धागासंटिजं रूपं विकुव्यइ.
- ७. प्र०-- पभू णं भन्ते ! वाउकाए एगं महं पडागासंडिअं रूवं विज्ञवित्ता अणेगाइं जोअणाइं गमित्तए ?
 - ७. उ०--हन्ता, पम्.
- ८. ४०—से भंते ! किं आयडीए गच्छइ, परिडीए नच्छइ ?
- ८. उ०—गोयमा! आंब द्वीए गच्छइ, नो परिट्वीए गच्छइ; जहा आबद्वीए, एवं चेव आवकम्मुणा दि, आयप्पयोगेण वि भाणिजव्यं.
- ९. प०—से भंते ! किं जातिओदयं गच्छइ, पयओदयं गच्छइ ?
- २. उ०—गोयमा ! असिओएयं पि गच्छ**र, पयओ**दयं पि गच्छर.
- १०. प्र०--से मंते ! कि एगओपडागं गच्छर, दुहुओपडागं गच्छर १
- १०. उ०—ंगोयमा ! एगओपडागं गच्छइ, नो दुहुओं-पडागं गच्छ्ड.
 - ११. ४० -- से णं मंते ! कि वाउकाए पडागा ?
 - ? १. उ०-गोयमा ! याउकाए णं से, नो सलु सा पढागा.

- ६. प्र०—हे भगवन्! वायुकाय, एक मोटुं खीरूप, पुरुपरूप, हिस्तिरूप, यानरूप, ए प्रमाणे युग्य गिछि, थिलि, शिविका (डोडी) अने संद्मानिका (मेनो) ए बवानुं स्रप विकृषीं छके छे है
- ६. ड०—हे गीतम! ए अर्थ समर्थ नथी. क्या विदुर्वणा करतो वादुकाय, एक गोटुं क्तांकाना आकार जेवुं ह्या विदुर्वे छे.
- ७. प्र०—हे भगवन्! वायुकाय, एक भोटुं पताकाना आकार जेवुं रूप विकुर्वी अनेक योजनो सुधी गति करवाने शक्त छे?
 - ७. उ०--हे गीतम! हा, ते तेम करवाने शक्त छ.
- ८. प्र०-- हे भगवन्। छुं ते यायुकाय, आत्नऋदिधी गति करे छे के परनी ऋदिथी गति करे छे?
- ८. उ०—हे गौतम! ते आत्मऋदिधी गति करे छे एण परनी कि हिंथी गति करतो नधी. ' जेम ते आत्मऋदिधी गति करे छे तेम ते आत्मऋदिधी गति करे छे ' ए प्रमाणे कहेतुं.
- ९. प्र०—हे भगवन्। शुं ते वायुकाय, उंची पताकानी पेठे रूप करी गति करें छ के पडी गएडी पताकानी पेठे रूप करी गति करें छे!
- ९. उ०—हे गीतम! ते, उंची पताकानी पेठे अने पडी गएली पताकानी पेठे-ए बने प्रकारे-रूप करी गति करे छे.
- १०. प्र०—हे भगवन्! शुंत एक दि तमां (एक) पताका होय एवं रूप करी गति करे छे के बे दिशामां (एक साथे बे) पताका होय एवं रूप करी गति करे छे?
- १० उ० —हे गोतम! ते, एक दिशामां पताका होय एवं रूप करीने गति करे छे, पण वे दिशामां पताका होय एवं रूप करीने गति करतो नथी.
 - ११. प्र०-हे भंगवन्! तो शुं ते वायुकाय पताका छे?
- ११. उ०—हे गौतम! ते वायुकाय, पताका नथी. पण षायुकाय छे.
- र. मूल्ट्छायाः—प्रभुनेगवन् ! बायुकायः एक महत् स्रोहतं वा, पुरुषहतं वा, दिल्लितं वा, यानहतं वा; एव युग्य-गिलि-थिडि-शिविका-स्विन्दर्भानिकाहतं वा विक्वितंत् ? गीनम ! नाऽयम् अयेः समर्थः, वायुकायो विक्वितंताणः एतं महत् पताकाविश्वत स्वं विक्विते. प्रभुनेगवन् ! वायुकायः एकं महत् पताकाविश्वतं हतं विक्वितं अनेकानि योजनानि गन्तुम् ! हन्त, प्रभुः स भववन् ! किन् आत्मद्वीः गटकते, वाद्यवं गटकते, वाद्यवं गटकते, वाद्यवं गटकते, वाद्यवं गटकते, वाद्यवं आत्मद्वे, एव चैव आत्मक्रमंगाऽपि, आत्मप्रयोगेगानि भगितव्यम्, प पनवन् ! किन् अत्मिद्वीः गटकति, वाद्यवं गटकति,
- र. यायुनुं बद्दन पताकाना आकारे याय हे, एम बीमूळहार लगावे छे, पण ते विषे विशेष स्वष्ट ध्यानी जरूर छे. हदाय कपडाना फद्दफ्टाट उपस्थी यायुना आकारने आह बेरिण करपश्ममं आहंदु होम ती भन्ने, पम यायु पताकाने आहारे ज वहें छ-इप हे, ए अपने जियेन क्या पहें लो विषे विशेष खठाही पदानी जरूर छे. सखेदाथ्य साथे जणावनुं पहें छे के, आ अने आवा योजा केटलाक विविध्न उलेखे मां डीकाकार ती एक सखर पण बोलता नवी एमी म मनुवादक खावा विषयोने स्वष्ट करी सकता नशी. हवे पछीना प्रकरणमां यलाइकना एडले मेवना (वाटळांना) खे आहारी जणाव्या छे से कराच अमुचित पण गणाय. हारण के, आहाशमां बादळानां जातनातनां हुनो आपणे प्रस्थक करीए छीए अने थे।डी वणी सरखाईथी आपणे उने अनुक प्राणी के पदार्थ साथे सरखाईथी आपणे उने अनुक प्राणी के पदार्थ साथे सरखादीए छीए. परंतु बायुना पताका-आहार अपरमक्ष हे, तेन ते विषे विशेष काई जणातुं नथीं माटे ज वायुना आहारने कारी। ए प्रश्न खारा विचारणीन हो:—सखु०

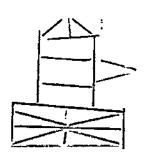
२. ' देवं वेडिव्विअसम्। घाएणं समोहयं ति ' इति प्रागुक्त्म्, अते। वैक्रियाधिकार। दिदमाह-' पमू णं ' इत्यादि. ' जाणं ' ति शकटम्, ' जुग्गं ' कि गोल्लविषयप्रसिद्धं जम्पानं दिहस्तप्रमाणं वेदिकोपशोभितम्, 'गिल्लि'वि हस्तिन उपरि कोल्लरस्पा या मानुपं गिळतीव गिळि:, ' थिक्षि ' ति छाटानां यदश्वपत्यानम् , तदन्यविषयेषु ' थिछि ' इत्युच्यते : ' सीअ ' ति शिविका-कूटाकारा-च्छादिता भ्यानविशेषः, 'संदमाणिय 'ति पुरुषप्रमाणौऽऽयामा जम्पानविशेषः, 'एगं महं पडागासंटिशं 'ति महत् पूर्वप्रमाणा-पेक्षया, पताकासंस्थितम्—सङ्पेणैव वायोः पताकाऽऽकारशरीरत्वाद् वैक्रियावस्थायामि तस्य तदाकारस्यैत्र भावादिति, ' आयड्डीए 'चि भारमद्भी आतंत्रतक्या-आत्मळच्या वा, ' आयकम्मुण ' ति आत्मिकिश्या, ' आयणओगेणं ' ति न परप्रयुक्त इसर्थः. ' जिसिओ-दयं ' ति उच्छित ऊर्ध्वम् - उदय आयामा यत्र गमने तद् उच्छितोदयम् - ऊर्ध्वपताकिसर्थः - क्रियाविशेषणं चेदम्, ' पयओदयं ' ति पतदुद्भयम्-पतितपताकं गच्छति. कैर्ध्वपताकास्थापना इयम्, पैतितपताकास्थापना तु इयम्, ' एगओपडागं 'ति एकतः एकस्यां दिशिः पताका यत्र तद् एकतः पताकम्, स्थापना तु इयम्, ' दुहओएडागं ' ति. द्विधापताकम्, स्थापना चैयम्,

२. 'देवं वेअव्वियसमुम्धाएणं समोहयं 'ति अर्थात् वैक्रिय शक्तिने लगती हकीकत आगळ कहेवाई छे माटे हवे पण ते ज वात संबंधे सुन अ। सूत्र क़हे छे:--['पभू णं ' इत्यादि.] ['जाणं' ति] यान-शकट-गाडुं. [' जुग्गं ' ति] वेदिकाथी उपसुक्त अने वे हाथ छांसुं जे बाहन गोह. ते सुम्य. आ बाहननी प्रसिद्धि गोर्छंदेशमां छे. (स्विसा गाडी १) [' गिछि ' ति] हाधी उपर रहेती अंबाडी मनुष्यने गळी जाय-जेमां बेस-गिही-थिही. वाथी महण्य देखाय नहीं ते-गिहिः [' थिछि ' ति] छाटोतुं जे घोड़ातुं पटाण ते बीजा दशोमां ' थिछि ' तरीके प्रसिद्ध छे. [' सीअ ' ति ने शिविका-शिखरना आकारबी ढांकलं एक जातनं बाहन-पाछखीः [' संदमाणिश ? ति] पुरुष जेंटली लंबाइबालं बाहनविशेष-मेनोः [' एगं महं पड़ागासंठियं 'ति] पूर्व प्रमाण करतां मोटुं अने पताकाने आकारे रहेलुं, कारण के बाउनुं शरीर खल्पे करी पताकाना आकार जेतुं ज छे अने अल्पप्रयोग. वैकियअवस्थामां पण वासु पताकाने आकारे ज रहे छे. [अयनुहीए 'ति] आसीनी प्रक्तिवड अथवा आत्मानी छव्धिवडे. [आय-कम्मुण ' ति] आत्मानी कियावडे, [' आयप्पओगेणं ' ति] आत्माना प्रयोगधी-बीजाना प्रयोगधी नहीं. [' ऊसिओदयं ' ति] जें गितिमां लांवपण उंचे देखाय ते उच्छितोदय अर्थात् उंची धजाने आकारे. ' उच्छित्रोदय ' ए कियाविश्वपण छे. [' पयओदयं ' ति] पडी गएछ धजानी पेठे गति करे छे.

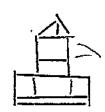
उंची धजानो आकार आ रीते छे:---'



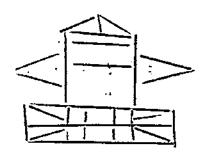
ि एगओपडाग 'ति] ज्यां एक दिशामां पताका होय ते ' एकतःपताक ' कहेबाय. तेनो घाट आ रीते छेः—



पडी गएल धजानो आकार आ रीते छे:---



['दुइओपडागं ' ति] ज्यां बन्ने तरफ पताका होय ते 'द्विधापताक' कहेवायः तेनो आकार आ रीते छे:—



.वलाहक

१२. प्र०-पैम् णं मते ! वलाहरो एगं महं इत्थिखवं १२. प्र०-हे भगवन् ! वलाहक, एक मोटुं स्त्रीरूप यावत् वा, जाव-संदमाणिअरूवं वा परिणामेत्तए ?

१२. उ० - हंता पम्.

संदगानिकारूप परिणमात्रवा समर्थ छे?

१२. उ० — हे सौतम ! हा, ते, तेम करवा समर्थ छे.

आ वधी स्थापनाओ टीकाना भाषांतरमां आपेली छे:--अनु०

[्]र. वर्तमानमा सिंहलद्वीप (सीलोन-के।लम्बे।) मां 'गोलं 'नामना तालुका छे तेने ज अहीं 'गोलं विषय ' राष्ट्यी जणान्या लागे छे— ते ं तरफ दिशेषे करीने था युग्य-रिक्सागाडी-ने। ज प्रचार जे।एलो छे:--अनुरू

रे. मूल च्छायाः -- प्रमुभगवन् । वलाहकः एक महत् स्नाहत वा, यानत्-स्वन्दमानिकाहतं वा परिणमायतुम् १ हस्त, प्रभुः -- अनु

१२. प्र०—पैमू णं भंते ! बलाहए एगं महं इत्थिरूवं परिणामेत्रा अणेगाइं जोअणाइं गमित्तए ?

१२. उ० — हंता, पभू.

ं १४. प्र०—से मंते ! किं आयडूीए गच्छइ, परिड्रीए गच्छइ ?

१८. उ०--गोयमा ! नो आयडीए गच्छइ, परिड्वीए ग-च्छइ; एवं नो आयकम्मुणा, परकम्मुणा; नो आयपयोगेगं, परप्पयोगेणं; डासिओदयं वा गच्छइ, पययोदयं वा गच्छइ.

१५. प्र०—से मंते ! किं बलाहए इत्थी ?

१५. उ०—गोयमा । बलाहर णं से, नो खलु सा इत्थी, एवं पुरिसे, आसे, हत्थी.

१६. प्र॰—पभू णं भंते ! बलाहए एगं महं जाणरूवं प-रिणामेत्ता अणेगाइं जोअणाइं गमेत्तए ?

.१६. उ० — जहा इत्थिरूवं तहा माणिअव्वं. नवरं-एगओ -चक्कवालं पि, दुहओचक्कवालं पि गच्छइ-माणिअव्वं. जुग्ग-गिल्लि-थिल्लि-सीआ-संदगाणिआणं तहेव. १३. प्र०—हे भगवन् ! बलाहक, एक मोटुं स्त्रीरूप करीने (परिणमावीने) अनेक योजनो सुधी जवा समर्थ छे?

१३. उ० — हे गौतम! हा, ते, तेम करवा समर्थ छे.

१४. प्र०—हे भगवन्! छुं ते बलाहक, आत्मऋद्भियी गति करे छे के परऋद्भियी गति करे छे?

१४. उ०—हे गौतम! ते, आत्मऋद्विधी गति करतो नथी, प्राम परऋद्विधी गति करे छे. ए प्रमाणे आत्मकर्म अने आत्म-प्रयोगधी पण गति करतो नथी पण परकर्म अने परप्रयोगधी ते, गति करे छे. अने ते उंची थएळी के पडी गएळी घजानी पेठे गति करे छे.

१५. प्र०-हे भगवन्! शुं ते बटाहक, स्त्री छे!

१५. उ०-हे गौतम! ते बळाहक, स्त्री नथी, पण बलाहक छे. ए प्रमाणे पुरुष, घोडो तथा हाथी वगेरे विषे पण जाणवुं.

१६. प्र०—हे भगवन्! द्यं ते बलाहक, एक मोटा यानतुं रूप परिणमावी (करी) अनेक योजनो सुधी गति करी शके छे?

१६. उ०—हे गौतम! जेम झिरूप संबंधे कर् तेम यानना रूप संबंधे पण समजबुं. विशेष ए के, ते एक तक्क पेडुं राखीने पण चाले अने बन्ने तरफ पैडुं राखीने पण ते चाले. तथा ते ज रीते जुग्ग, गिल्लि, थिल्लि शिनिका अने संद्मानिकाना रूप संबंधे पण समजबुं.

३. रूपान्तरिक्रियाऽविकाराद् बलाहससूत्राणि:—' बलाहए ' ति मेघः, ' परिणामेत्तए ' ति बलाहसस्याऽजीवत्वेन विकुर्वणाया असंभवात् परिणामियतुमित्युक्तम्, परिणामश्चाऽस्य विस्तास्त्यः. ' नो आयड्ढीए ' ति अचेतनत्वाद् मेघस्य विविक्षतायाः शक्तरमावाद् म आत्मद्भर्षा गमनमस्ति, वायुना, देवेन वा प्रेरितस्य तु स्थादिए गमनम्, अते।ऽमिधीयतेः—' परिड्ढीए ' ति. ' एवं पुरिसे, आसे, हिथि ' ति श्वीरूपसूत्रमिव पुरुषरूपा-ऽश्वरूप—हिस्तारूपसूत्राणि अध्येतच्यानि. यानरूपसूत्रे विशेषोऽस्ति, इं तद् दर्शयित—' पमू णं मंते ! बलाहए एगं महं जाणरूवं परिणामेत्ता ' इत्यादि—' पयओद्यं पि गच्छइ ' इत्येतदन्त स्त्रीरूपसूत्रसमानमेव विशेषः पुनर्यम्:—' से मंते ! कि एगओचक्रवालं गच्छइ, दुहओचक्रवालं गच्छइ श गोयमा ! एगओचक्रवालं पि गच्छइ, दुहओचक्रवालं पि गच्छइ दिशोचक्रवालं पि गच्छइ ' तुहओचक्रवालं पि गच्छइ ' तुहओचक्रवालं पि गच्छइ ' तुहओचक्रवालं पि गच्छइ ' तुहओचक्रवालं पि गच्छइ सहावीत्रस्त्रम् अंशमाहः—' नवरम्—एगओ ' इत्यादि. इह यानं शक्तरम्, चक्रवालं चक्रम् ; शेपसूत्रेषु तु अयं विशेषो नास्ति, सकट एव चक्रवालमावात्. ततश्च युग्य—गिछि—विछि—शिविका—स्पन्दमानिकारूपसूत्राणि स्त्रीरूपसूत्रवद् अव्येयानि. एतदेवाहः— ' जुग्य—गिछि—थिछि—सिआ—संदमाणिआणं तहेव 'ति.

३. रूप बद्द्यानी कियानुं प्रकरण-अधिकार-चालतुं होवाथी हवे बलाहक-मेघ-नां आकाशमां ने अनेक रूपो थाय-देखाय-छे ते विषे सूत्रों कहे छे: —['वलाहए 'ति] मेघ ['परिणामेतए 'ति] वलाहक, अनीन होवाथी तेने विकुर्वणा शक्ति संभी शकती नथी माटे अहीं 'विकुर्वण करवाने 'वदले 'परिणमाववाने 'एम कह्युं छे. कारण के, तेने (नेघने) स्वयावरूप परिणाम तो होय छे. ['नो आयद्गीए 'ति] मेघ अचेतन छे माटे तेने विवक्षित शक्ति न होवाने लीघे ते आत्मऋदियी गति करतो नथी. परतु वायु के देव द्वारा प्रेरित थल्लो मेघ गमन पण करे छे माटे कह्युं छ के, ['परिद्शीए 'ति] परनी ऋदिथी गमन करे छे. ['एवं पुरिसे, आसे, हित्थ 'ति] स्रीरूप संबंधी सूत्रनी पेठे पुरुषरूप, अश्वरूप अने हित्तारूप संबंधी सूत्रो जाणवां. मात्र यानरूप संबंधी सूत्रमां विशेष छे तो तेने दर्शाववा कहे छे के 'पभू णं मंते ! मलाहए एगं महं जाणरूवं परिणामेता ' इत्यादि, त्यांथी मांडीने 'पयओदयं पि गच्छइ' त्यां सुधीनुं सूत्र, स्रीरूप संबंधी सूत्रनी पेठे कहेवु. विशेष तो आ छे के:—'से भंते! कि एगओचक्कवालं गच्छइ, दुहओचक्कवालं गच्छइ?'ए प्रश्ननो जवाव जापतां कहे छे के, 'गोयना! एगओ-

शकीय मछात्रक **परि**णाः स्वभ वासु—दत्र

विशेष.

१. मूळच्छायाः—प्रभुर्भगवन् ! बलाहकः एकं महत् स्रीरूपं परिणमध्य अनेकानि योजनानि गन्तुम् ? हन्त , प्रभुः स भयवन् ! किम् आसार्द्वाः गच्छति, परद्वर्था गच्छति १ गौतम ! नो आत्मद्वर्थाः गच्छति, परद्वर्था गच्छति १ गौतम ! नो आत्मद्वर्थाः गच्छति, परद्वर्थाः गच्छति १ गौतम । वलाहकः सः, नो खल्ल सा स्रो, एव पुरुषः, अक्षः, हस्ती. प्रभुर्भनवन् ! बलाहकः एकं महद् यानरूपं परिणमध्य अनेकानि योजनानि गन्तुम् १ यथा स्रीरूपं तथा भणितव्यम् , नवरभ- एकत्यक्रवालमप्रि, द्विशक्षकृत्रालम् अपि गच्छति । भणितव्यम् , युग्य-गिष्ठि-थिष्ठि-शिविका-स्पन्दमानिकानां तथैवः—अनु०

चक्कवालं पि गच्छइ, दुहओचक्कवालं पि गच्छइ 'ति 'अर्थात् ए मेघ, एकतश्रकवाल पण चाले छे अने द्विधा चकवाल पण चाले छे. ए ज यकट. हकीकतने मूळ सूत्रमां पण जणावी छे के; ['नवरं एगओ 'इत्यादि.] अहीं 'यान ' एटले 'शकट-गाडुं—'समजवुं अने 'चकवाल ' एटले 'पैंडुं 'समजवुं. वाकी बीजां सूत्रोमां तो आ विशेष नथी. कारण के पैंडुं तो गाडाने ज होय छे माटे युग्य, गिल्लि, थिल्लि, शिबिका अने स्पंदमानिका, ए नधानां रूप संबंधी सूत्रो, सीरूप संबंधी सूत्रनी पेठे कहेवां. ए ज वातने कहे छे के, ['जुगा-गिल्लि-थिक्कि-सीआ-संदमाणिआणं तहेव 'ति].

लेक्यानां द्रव्यो.

ं १७. प्रo—जीवे णं मंते ! जे भविए नेरइएसु उनयन्नित्तए से णं मंते ! किलेसेसु उववज्जइ ?

१७. उ०—गोयमा ! जल्लेसाइं दन्वाइं परिआइत्ता कालं करेइ, तल्लेसेसु उववज्जइ, तं जहाः—कण्हलेसेसु वा, नीललेसेसु वा, काउलेसेसु वा; एवं जस्स जा लेस्सा सा तस्स भाणिअन्या.

१८. प्र०-जाव-जीवे णं भंते ! जे भविए जो इसिएसु उववाजित्तए पुच्छा ?

१८. उ०—गोयमा ! जल्लेसाइं दव्याइं परिभाइत्ता कालं करेइं तल्लेसेसु उववज्जइ, तं जहा:—तेउलेसेसु.

१९. प्र०—जीवे णं भंते! जे भविए वेमाणिएसु उववाजित्तए से णं भंते! किलेसेसु उववजाइ ?

१२. उ०--गोयमा ! जल्लेसाइं दब्बाइं परिआइत्ता कालं करेड् तल्लेसेसु उववज्जड़, तं जहा:-तेउलेसेसु वा, पम्हलेसेसु वा, १७. प्र०—हे भगवन्! जे जीव, नैरियकोमां उत्पन धवाने योग्य छे ते, हे भगवन्! केवी लेईयावाळाओमां उत्पन थाय!

१७. उ०—हे गौतम! जीव, जेवी लेश्यावाळा द्रव्योतुं प्रहण करी काळ करे छे तेवी लेश्यावाळामां ते, उत्पन्न थाय छे. ते आ प्रमाणे:—हृष्णलेश्यावाळामां, नीललेश्यावाळामां अने कपोत-लेश्यावाळामां अर्थात् जे जेनी लेश्या होय, तेनी ते लेश्या कहेवी. ए प्रमाणे बीजा पण प्रश्ना करवा यावत्—

े १८. प्र०—हे भगवन् । जे जीव, ज्योतिषिकोमां उत्पन्न थवाने योग्य छे ते, केवी लेश्यावाळाओमां उत्पन्न थाय !

१८. उ०—हे गौतम! जीव, जेवी लेख्याबाळां द्रव्योतुं प्रहण करी काळ करे छे तेवी लेख्याबाळामां ते, उत्पन्न थाय छे. ते था प्रमाणः—तेजोलेख्याबाळाओमां.

१९. प्र०—हे भगवन्! जे जीव वैमानिकोमां उत्पन्न थवाने व योग्य छे ते, हे भगवन्! केवी लेक्यावाळाओमां उत्पन्न थाय ?

?९. उ०--हे गौतम! जीव, जेवी छेश्याबाळां द्रव्योनुं प्रहण करी काळ करे छे तेवी छेश्याबाळामां ते, उत्पन्न थाय छे. ते आ

१. मूलच्छायाः—जीवी भगवन् ! यो भव्यो नैरियकेषु उपपत्तं स भगवन् ! किलेर्येषु उपपश्चते ! गौतम ! यहेर्यानि द्रव्याणि पर्यादाय कालं करोति, तहेर्येषु उपपश्चते, तह्यथाः—कृष्णलेर्येषु वा, नीललेर्येषु वा, कापोतलेर्येषु वा; एवं यस्य या लेर्या सा तस्य भणितव्या. यावत्-जीवो भगवन् ! यो भव्यो ज्योतिष्केषु उपपत्तं पृच्छा ? गौतम ! यहेर्यानि द्रव्याणि पर्यादाय कालं करोति तहेर्येषु उपपश्चते, तह्यथाः—तेजोलेर्येषु, जीवो भगवन् ! यो भव्यो वैमानिकेषु उपपत्तं स भगवन् ! किलेर्येषु उपपद्यते ? गौतम ! यहेर्यानि द्रव्याणि पर्यादाय कालं करोति तहेर्येषु उपपद्यते, तह्यथाः—तेजोलेर्येषु वा, पद्मलेर्येषु वा:—अतु०

^{9.} जे द्वारा कर्मनी साथे आत्मा श्रिष्ट थाय-लिश्यते-तेने शास्त्रकारोए लेश्या कही छे. अहीं भा नात विचारवा जेवी छे के, लेश्या ए ग्रुं सामणी के बुत्तिहर छे के अणुहर है ? आ प्रश्नतं समाधानं करतां प्रज्ञापनानी टीकामां (ए० ३२०, पद १७ स०) श्रीमत्रयगिरिजीए जणाब्धु छे के, लेरबा ए अणुरूप छे-परमाणुसमूहरूप छे. जैनदर्शनमां पुत्रलोनी फक्त आठ जातो जणावी छे. (जैमके; औदारिकपुद्गल, वैक्टियपुद्गल, आहै।रकपुद्रल, तैजमेंपुद्रल, कार्मणपुद्रल, भाषापुद्रल, भनै पुद्रल अने शासीच्छ्वासपुद्रल.) तेमांनी कई जातमां ए लेश्यानां अणुओनी समावेश धई शके छ ! ए पण विचारतं घटे छे. श्रीमलयिगिरिजीए तो ए निषे स्वष्ट जणान्युं छे के, लेखानां अणुओ, योगान्तर्गतदन्यरूप छे अथीत् जे अणुओ मानिक, वाचिक अने कायिक छे तेमां ज का लेश्यानां अणुओनो समावेश यह जाय छे. जेम बदाम के बाझी, ज्ञानावरणना क्षयोपशमने, मदापान, झानायरणना उदयने, दिघमोजन, निद्राने अने पिसदृहि, प्रकोपने उत्तेजे है तेम ए हेश्यानां परमाणुओ कवायोदयनां उत्तेजक छे-बळता अग्निमां धी होमवाथी जेम ते विशेष प्रज्विति थाय छे तेम आपणा शरीरमां रहेलां लेर्यानां अणुओ उद्भूत थएला कपायने विशेष उत्तेजित करे छे, ज्यांसुधी अ.पणामां जरा पण काषायिक पृत्ति विद्यमान होय छे त्यां सुधी तेने, ए लेश्यानां अणुओ टेको आपे छे अने ए वृत्तिनो समूळ नाग्न धये ए अणुओ अकिंचित्कर थाय छे अथीत् हेर्यानां अणुओ रह्यां रह्यां असत् वषायने पेदा करी शकतां नथी. किंतु एतं काम तो उद्भूत कवायने ज टेको आपवानुं छे. आटला उपस्थी समजाई एके तेम छे के, लेर्या ए अणुरूप छे अने ए अणुओ पण मानसिक, वाचिक अने कायिक परमाणुओमांनां छे. शास्त्रकारीए ए अणुरूप छेर्याओना मुख्य छ प्रकार दर्शाच्या हे. एमांना पेला त्रण प्रकार अञ्चन, अञ्चनतर अने अञ्चातम हे अने छेहा त्रण प्रकार शुभ, शुभतर अने शुभतम छे. ते प्रत्येक छेरयानां अणुओमां केवो रंग, कैवो रस, केवो गंध अने केवो स्पर्श रहेलो छे ते पण जणान्युं छे अने कई छेरया-बाळा मनुष्यनी कई युत्ति होय ते पण सूचव्हं छे अने छेवटे केरयानी स्थितिमयादानी वधारे ओछो समय जणावी तेनुं मावी परिणाम पण प्रकट कर्यु छे. ज्यारे ज्यारे मनुष्यमां कोई जातनी कापायिक वृत्तिनो उदय थतो होय त्यारे तेना लोहीनो रंग, रस, गंघ अने स्वर्श पण बदलतो होय छे, ए बात शरीरशास्त्र अने मानसशास्त्रना गंभीर अभ्याविधी अप्रतीत नथी. स्धूलदृष्टिए आपणे पण एटलुं तो जाणी शकीए छीए के, उस क्रोध करता मनुष्यनुं लोही विकृत यह जाय छे, शरीर लाल थहे जाय छे अने धमधमी जाय छे, नीचे आपेला कोटा उपरथी देश्यानां रंगादिकमी माहिती मळी शके तेम है, दे आ प्रमाणे:--

भुकलेसेसु वा.

प्रमाणे:—तेजोवेश्यावाळाओमां, पद्मछश्यावाळाओमां अने जुक्नछे-स्यावाळाओमां.

१. मूलच्छायाः—-शुक्ललेश्येषु वाः—-भंतु०

लेश्याओ.

375.	लेश्या.	कोने होय?	चुर्ण.	रस.	गंध.	स्पर्श.	+परि णाम	रुक्षण.	≉् स्थान ₊	स्थि। जघन्य,		गति.	=पुनर्जन्म•
		नैर्धिक, तिर्यंच, मतुष्य, भुवनपति अने वानव्यंतरोने.	काळो.	अनंत गुण कडवी	1	कुक्षेञ्च	घणो अने घणा प्रका रनो.	क्रूरतम दृत्तिः	असंख्य.	अर्थ मुहूर्त.	३३ साग- रोपम अने १ सुहूर्त.	दुर्गति.	ेहपानी उत्पत्ति अयां पछी १ सुहूर्ते वा टेहपानो अन्त धवाने १ सुहूर्त बाकी होय त्यारे
	- नील.	नैरियक, तिर्थेच, मनुष्य, भुवनपृति, अने व्यंतरोने.	नी लो .	अनंत गुण तीखोः	35 .	7.2	>>	कूरतर वृचि.	,,	>>	१० साम- रोपम अने पट्योपम- नो असं- स्यातमो भाग-		£¢.
rair	-कापोत ः - ,		पारेवानी डोक जेवो.	अनंत सुण खाटो.	,	,,	23	क्रूर−दृत्ति.	»		३ सागरो- १म,पल्य० अ० भाग.	٠,	,,
8.	तेजः.	तिर्यंच, मनुष्य अने देवने	रातो.	अनंत गुण मीठो.	सुरभि.	कोमळ.	,,,	शुभ−वृत्ति.	,,,		२ सागरी पम,पेल्य० अ० भा०	ļļ	D
35.	पद्म.	- तिर्थंच, मनुष्य अने वैमानिकोने.	भांगेली हळदर जेवो.	अनंत गुण मधुर.	**	2)	*>	ग्रुभतर−वृत्तिः	,,	>>	१० साम रोपम, अने १ मुहूर्तः	>>	> 9-
1,97	ચક્ર∙	् तिर्थंच, मनुष्य. अने चैयानिकोने.	घोळो.	अनंत गुण स्वादुः	, ,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,	50	3 3	शुभतम ∙वृत्ति.	,,	, ,	३३ सागः रोपम क्षने १ मुहूर्तः	37	23

+ परिणाम-शब्द, छेरयानी न्यूनाधिकताने वा तीवमन्दताने सूचवे छे. * स्थान-शब्द छेरयानां निमित्ताने सूचवे छे. = पुनर्जनम-शब्द जन्मांतरनो सूचक छे. मनुष्य अने तिर्थचोनी कांई आखी आंदगी सुधी एक ज छेरया रहेती नथी. ते तो निमित्तको घणी वखत बदलाया करे छे. हिंचे ज्यारे तेओना पर्यवसाननो समय आवे छे त्यारे तेओं एवी कोई पण छेरयामां वर्तता होय छे.के, जेनी साथे तेओए एक महूर्त तो गाळेडं होय अर्थात् तेओने पर्यु अमुक एक निश्चित छेरयामां ज थाय छे. आयी विपरीत—देव अने नारकोनी छेरया तेओनी आखी जींदगी सुधी बदलाती नथी. जे छेरयामां तेओ वर्तता होय छे तेंदं अवसान थवाने मात्र एक ज महूर्त वाकी रहे छे खारे ज तेओ मरवानी अणी उपर होय छे—तेओ जे छेरयामां रेप छे ते ज छेरयामां पुनर्जन्म प्रहण करे छे:—अमु०

2. परिणामाधिकाराद् इदमाहः—' जीवे णं ' इत्यादि. ' जे मिनिए ' ति यो योग्यः, ' किंलेसेसु ' ति का कृष्णादीनामन्यतमा लेश्या येषां ते तथा—तेषु किंलेश्येषु मध्ये, ' जलेसाइं ' ति या लेश्या येषां द्रव्याणां तानि यलेश्यानि—यत्या लेश्यायाः संबद्धानि इत्यर्थः. 'परियाइत्त 'ति पर्धादाय परिगृह्य मावपरिणामेन, कालं करोति—मियते, तलेश्येषु नारकेषु उत्पद्यते. भवन्ति चात्र गाथाः—'' सर्व्वाहिं लेसाहिं पदमे समयम्मि संपरिणयाहिं, नो कस्स वि उववाओ परे भवे अत्थि जीवस्य. सन्वाहिं लेसाहिं चरिमे समयम्मि संपरिणयाहिं, न वि कस्स वि उववाओ परे भवे अत्थि जीवस्त. अंतमुद्धत्तिम गए अंतमुद्धतिम सेसए चेव, लेसाहिं परिणयाहिं जीवा गच्छांते परलोयं.'' चतुर्विशतिदण्डकस्य शेषपदानि अतिदिशवाहः—'एवं' इत्यादि. एवम्—इति नारकस्त्राभिलापेन इत्यर्थः. 'जस्त्त'ति असुरकुमारादेः या लेश्या कृष्णादिका, सा लेश्या तस्याऽमुरकुमारादेः भणितव्या इति. ननु एतावतैव विविश्वतार्धसिद्धेः किमर्थं भेदेनोक्तम्—' जाव—जीवे णं मंते!' इत्यादि ? उच्यतेः—दण्डकपर्यवसानसूत्रदर्शनार्थम्. एवं तर्हिं वैमानिकसूत्रमेव वाच्यं स्थात्, न तु ज्योतिष्कसूत्रम् इति ? सत्यम्, किन्तु ज्योतिष्क-वैमानिकाः प्रशस्तलेश्या एव भवन्ति—इत्यस्याऽर्थस्य दर्शनार्थं तेषां भेदेनाऽभिधानम्, विचित्रत्वाद् वा सूत्रगतेरिति.

परिगाम.

के**श्या-द्र**न्य.

गाधाओ

समाधान.

8. परिणमन-परिवर्तन-परिणाम-नो अधिकार चालतो होवाथी, हवे आ एने ज लगती बीजी वात कहे छे के, ['जीवे णं ' इत्यादि.] ['जे भविए 'ति] योग्य. [' किलेसेसु 'ति] जेओने कृष्ण बगेरे लेक्याओगांथी कोइ एक लेक्या होय ते 'किलेक्य 'तेमां. ['क्लेसाई 'ति] जे द्वयोनी जे लेक्या होय ते दव्यो 'यलेक्य 'कहेवाय अर्थात् जे कोइ लेक्या संबंधी द्वयो. ['परियाइत्त 'ति] मावपरिणामपूर्वक प्रहण करीने अर्थात् आत्मामां असुक नियत लेक्यानी असर थया पछी ज-मरण पामे छे—जे लेक्यावाळां द्वयो लीघेलां होय ते लेक्यावाळां नारकोमां उत्पन्न थाय छे. आ संबंधे केटलीक गाथाओ आ प्रमाणे छेः—'' जैयारे लेक्याना संपरिणामनो पहेलो समय होय त्यारे कोइ पण जीवनो, परभवमां उपपात—जन्म-थतो नथी. लेक्याना संपरिणाम थयाने अंतर्सहर्त बीत्या पछी के अंतर्सहर्त बाकी रखा पछी ज जीवो परलोकमां जाय छे. '' चोवीशर्दंडकनां बाकीनां पदोनो अतिदेश करता कहे छे के, [' एवं ' इत्यादि.] ' एवं ' एटले नारकस्त्रना अभिलाप प्रमाणे. [' जस्स 'ति] असुरकुमारादिकने कृष्ण बगेरे जे लेक्या होय ते लेक्या, असुरकुमारादिकने कहेवी. शं०—आटलुं कहेवाथी ज कहेवानी वात कहेवाइ शके छे तो ['जाव—जीवे णं मंते!'इत्यादि.] ए सूत्र जूदुं शा माटे कह्युं ? समा०—दंडकना अंतिम सूत्रने देखाडवा माटे पूर्वोक्त सूत्र कह्युं छे. शं०—जो एम छे तो एकलुं वैमानिकोनं ज सूत्र कहेनुं हतुं, पण ज्योतिषिक संबंधी सूत्र शा माटे कह्युं ? समा०—' वैमानिको अने ज्योतिषिको सारी लेक्यावाळा होय छे ' ए वातने देखाडवा ते बन्ने सूत्रो जूदां कर्यों छे. अथवा तेम करवानुं कारण सूत्रनी विचित्र गति छे.

विकुर्वणा.

२०. प्र०—अणगारे णं भंते ! भाविअपा बाहिरए पोग्गले अपरिआइत्ता पमू वेभारं पन्वयं उल्लंघेत्तए वा, पल्लंघेत्तए वा ?

२०. उ०-गोयमा 1 नो इणहे समहे.

२१. प्र०—अणगारे णं मंते ! माविअप्पा बाहिरए पोर्गहे परिआइत्ता पमू वेभारं पव्ययं उल्लंघेत्तए वा, पल्लंघेत्तए वा १ २० प्र०—हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार, बहारनां पुद्र-छोतुं प्रहण कर्या सिवाय वैभार पर्वतने ओळंगी शके छे, प्रछंघी शके छे ?

२० उ०-हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नथी.

२१. प्र०—हे भगवन ! भावितारमा अनगार, बहारनां पुद्रलोनुं प्रहण करीने वैभार पर्वतने ओळंगी शके छे, प्रलंबी शके छे?

१. प्र॰ छायाः—सर्वाभिर्लेश्याभिः प्रथमे समये संपरिणताभिः, नो कस्याप्युपपातः परे भवेऽस्ति जीवस्यः सर्वाभिर्लेश्याभिश्वरमे समये संपरिणताभिः, माऽपि कस्याप्युपपातः परिणत् भवेऽस्ति जीवस्यः अन्तर्भुहूर्ते गते, अन्तर्भुहूर्ते शेषके चैव, लेश्याभिः परिणताभिजीवा गच्छन्ति परलोकम्ः—अनु०

२. लेक्या ' संबंधे ' अहीं एक संक्षिप्त टिप्पण आपेलं छे, परंतु ते विषेनी वधारे विगतो प्रक्षापना सूत्रना १७ मा लेक्यापदमां तथा उत्तराध्ययन सूत्रना २४मा लेक्या अध्ययनमां नोंघाएली छे. आ उपर जे गाथाओ आपेली छे ते, उत्तराध्ययनना लेक्या अध्ययननी छे. तेनी स्पष्ट अर्थ आ प्रमाणे छे:-

आ बन्ने गाथाओं मरणोन्मुख-न्नियमाण-मरवानी अणी उपर आवेला-प्राणीने लागु पाडवानी छे. जे देहधारी मरणोन्मुख छे तेनुं मरण तइन छैन्दनी एवी लेक्यामां थई शके छे के जे लेक्या साथे एनो संबंध भोडामां ओछुं अंतर्ग्रहूर्त ग्रुधी तो रहो होय अधीत कोई पण न्नियमाण प्राणी, लेक्याना संपर्कनी पहेली पन्ने ज मरी शकतो नथी. किंतु ज्यारे एनी अमुक कोई लेक्या निश्चित थाय छे खारे ज ए, एना जूना देहने छोडी मृतन देह तरफ जई शके छे अने लेक्याने निश्चित थतां ओछामां ओछुं अंतर्ग्रहूर्त तो लागे छे माटे ज गाथामां अंतर्ग्रहूर्वनी मथीदा नोधेली छे. आ हकीकत मात्र मनुष्य अने तिर्यचीने ज बंध बेसती छे अने देव तथा नारको माटे तो आ प्रमाणे छे:—देव अने नारकोनी कोई पण लेक्या खाखी जींदगी सुधी एक सरखी ज रहे छे अर्थात् कोई देवनी कापीत लेक्या होय तो ते, एनी जींदगी सुधी बदलाती नथी. तेम कोई नैरियकनी कृष्ण लेक्या होय ते पण, एनी जींदगी सुधी बदलाती नथी. तेम कोई नैरियकनी कृष्ण लेक्या होय ते पण, एनी जींदगी सुधी बदलाती नथी. तेम कोई नैरियकने—उपर्वक्त गाथा लागु थई शके तेम नथी. तेओ तो ज्यारे मरणोन्मुख होय छे लारे एओनी लेक्यानो अंत आववाने (बदलो थवाने) अंतर्ग्रहूर्त ज बाकी रहेखं होय छे माटे कोई पण विव वा नैरियक पोतानी लेक्यानं छेवटनं अंतर्ग्रहूर्त वाकी रहे ज काळ करी शके छे-ते पहेलां तो नहि ज:—अनु०

१. मूलच्छायाः—अनगारो भगवन् । भावितातमा बाह्यान् पुद्गलान् अपर्यादाय प्रभुवैभारं पर्वतं उल्लब्बियुं वा, प्रलब्बियुं वा १ गीतम । माइयम् अर्थः समर्थः. अनगारो भगवन् । भावितातमा बाह्यान् पुद्गलान् पर्यादाय प्रभुवैभारं पर्वतम् उल्लब्बियुं वा, प्रलक्ष्वियुं वा १:—अनुः

२१: उ०—हैता, पम्.

२२. प्र०—अंगगारे णं भंते ! माविअप्पा घाहिरए पो-ग्गेले अपरिआइत्ता जापइआई रायगिहे नगरे रूवाई, एवइआई विकुन्वित्ता वेभारं पव्वयं अंतो अणुप्पविसित्ता पभू समं वा विसमं करेत्तए, विसमं वा समं करेत्तए ?

२२. उ०-गोयमा ! नो इणहे समहे, एवं चेव वितिओ वि आलावगो, णवरं-परिआइत्ता पभू.

२३. प्रo—से मंते ! किं माई विकुव्वइ, अमाई विकुव्वइ?

२३. उ०-गोयमा ! माई विकुव्वह, नो अमाई विकुव्यह.

ं २४. प्र०--से केणहेणं भंते ! एवं वुचर, जाव-नो अमाई विकुब्बइ ?

२४. उ०--गोयमा ! माई णं पणीअं पाण-भोअणं भोचा भोचा वामेति, तस्स णं तेणं पणीएणं पाण भोअणेणं अहि-अद्विमिंजा बहलीभवंति, पयणुए मंस-सोणिए भवति; जे वि य से अहाबायरा पोग्गला ते वि य से परिणमंति, तं जहा:-सोइं-दियत्ताए, जाव-फासिंदियत्तार; अष्टि-अद्विमिंज-केस-मंसु-रोम-नहत्ताए, सुकत्ताए, सोणियत्ताए. अमायी णं लूहं पाण-भोअणं भोचा भोषा णो नामेइ, तस्स णं तेणं लूहेणं पाण-भोअणेणं आहे-अहिमिंजा पयणुभवंति, बहले मंस—सोणिए; जे वि य से अहाबायरा पोग्गला ते वि य से परिणमंति, तं जहाः-उचार-त्ताए, पासवणत्ताए, जाव-सोणिअत्ताए, से तेणहेणं जाव-नो अमाई विकृष्वइ.

—माई णं तस्स ठाणस्स अणालोइजपडिकंते कालं करेइ,

Jain Education International

२१. उ०--हे गौतम! हा, ते, तेवी रीते तेम करवा समर्थ छे.

२२. प्र०--हे भगवन्! भावितात्मा अनगार, बहारनां पुद्रलोनुं प्रहण कर्या सिवाय, जेटलां रूपो राजगृह नगरमां छे तेटलां रूपोने विकुवीं, वैभार पर्यतमां प्रवेश करी, ते सम पर्वतने विषम करी शके ? के ते विषम पर्वतने सम करी शके ?

२२. ड०--हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नधी-ते, ए प्रमाणे न करी शके. ए ज रीते बीजो आलापक पण कहेवो. विशेष ए के, ' पुद्रलोनुं प्रहण करीने पूर्व प्रमाणे करी शके छे ' ए प्रमाणे कहेबुं.

२३. प्र०-हे भगवन्! छुं मायी (प्रमत्त) मनुष्य विकुर्वण करे के अमायी (अप्रमत्त) मनुष्य विकुर्वण करे?

२३. उ०--हे गौतम! मायी मनुःय विकुईण करे, पण अमायी मनुष्य विक्वीण न करे.

२४. प्र०--हे भगवन्। भाषी मनुष्य विकुर्वण करे अने अमायी मनुष्य विक्वर्यण न करे ' तेनं क्यं कारण?

२४. उ०--हे गौतम ! मायी मनुष्य, प्रणीत (धी वगेरेथी ख्य चिकाशदार) एवं पान अने भोजन करे छे, एवं भोजन करी करीने वमन करे छे. ते प्रणीत पान भोजन द्वारा तेना हाड भने हाडमां रहेली मजा ते घन थाय छे तथा तेनुं मांस अने लोही प्रतनु थाय छे, वळी तेना (ते भोजनना) जे यथाबादर पुद्रलों छे तेनुं तेने ते ते रूपे परिणमन थाय छे. ते आ प्रमाणे:--श्रोत्रइंद्रिययणे यावत्-स्पर्शइंद्रियपणे, तथा हाडपणे, हाडनी मज्जापणे, केशपणे इमश्रुपणे, रोमपणे, नखपणे, वीर्यपणे अने लोहिएणे (ते पुदलो) परिणमे छे, अने अमायी मनुष्य तो छखुं एवुं पान-भोजन करे छे, एवुं भोजन करीने ते वमन करतो नथी. ते ख्खा पान भोजन द्वारा तेनां हाड, हाडनी मज्जा प्रतनु थाय छे अने तेनुं मांस अने छोही घन थाय छे तथा तेना जे यथाबादर पुद्रलो छे तेनुं पण तेने परिणमन थाय छे. ते आ प्रमाणे:--उच्चारपणे, मूत्रपणे अने यावत्-लोहिपणे. तो ते कारणधी यावत्-अमायी मनुष्य विकुर्वण करतो नधी (?)

---मायी, ते करेली प्रवृत्तिनुं आलोचन अने प्रतिक्रमण कर्या नित्य तस्त आराहणा. अमाई णं तस्त ठाणस्त आलोइअ- सिवाय काळ करे छे माटे तेने आराधना नथी अने अमायी,

१. मूलच्छायाः—हन्त, प्रभुः. अनगारी भगवन् ! भावितातमा बाह्यान् पुदूलान् अपर्यादाय यादन्ति राजगृहे नगरे रूपाणि, एतावन्ति विकुर्व्य वैभारं पर्वतम् अन्तोऽनुप्रविश्य प्रभुः समं वा विषमं कर्तुम् , विषमं वा समं कर्तुम् ? गातम । नाऽयम् अर्थः समर्थः , एवं चेय द्वितीयोऽपि आछापकः , नवरम्-पर्यादाय प्रभुः. स भगवन् कि मायी विकुर्वते, अमायी विकुर्वते ? गीतम ! मायी विकुर्वते, नो अमायी विकुर्वते तत् केनाऽर्थेनः भगदन् ! एवम् उच्यते, यावत्-नो अमायी विकुवते ? गातम ! मायी प्रणीतं पान-भोजनं भुक्तवा भुक्तवा वमयति, तस्य तेन प्रणीतेन पान-भोजनेन भस्थि-अस्थिमजा बद्दलीभवन्ति, प्रतसुकं मांस-शोणितं भवति, येऽपि च तस्य यथाबादराः पुदूलास्तेऽपि च तस्य परिणमन्ति, तदाधाः-शोनेन्द्रियतया, यावत् - राशेन्द्रियतया, अस्थि-अस्थिमणा-केश-इमश्च-रोम-नखतया, शुक्रतया, शोणिततया. अमाथी रूक्षं पान-भोत्रनं मुक्तवा मुक्तवा नो वसवति, तस्य तेन रूक्षेण पान-भोजनेन अस्थि-अस्थिमज्ञाः प्रतनूभवन्ति, बहुछं मांस-शोणितम्; येऽपि च तस्य यथावादराः पुदू छ स्तेऽपि च तस्य परिण-मन्ति, तद्यथाः--उचारतया, प्रखनणतया, यानत्-शोणिततया, तत् तेनाथेन यावत्-नो अमायी विकुर्वते. मायी तस्य स्थानस्य अनाओवितप्रतिक्षान्तः कार्लं करोति, मास्ति तस्य भाराधना. भमायी तस्य स्थानस्य भानोचितः—अतु॰ १. जूओ भ० प्र० ख० पृ० २४४. टिप्पण १:—अतु०

पैडिकंते कार्ल करेड़, अस्थि तस्स आराहणा.

ते पोतानी भूलवाळी प्रवृत्तिनुं आछोचन अने प्रतिक्रमण करीने काळ करे छे माटे तेने अराधना छे.

—सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति.

🧓 - —हे भगवन् । ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् । ते ए प्रमाणे छे.

भगवंत-अज्ञसुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते ततिअसये. चउत्थो-सहेसे। सम्मची।

्य. देवपरिणामिषिकाराद् अनगाररूपद्रव्यदेवपरिणामस्त्राणिः मं बाहिरए ' कि औदारिकशरीरव्यतिरक्तान् वैक्तियान् इत्यर्थः वेमारं 'ति वैमारामिधानं राजगृहक्तीडापर्वतम्, ' उल्लंधित्तए या ' इत्यादि. तत्रोल्लङ्क्वनं सङ्कत्, प्रव्ल्ड्बनं पुनः पुनरिति. ' नो इण्ण्डे समन्ने 'ति वैक्तियपुद्रव्यर्थादानं विना वैक्तियरुपर्यवामावात्. बाह्यपुद्गलपर्थादाने तु सति पर्वतस्त्रोल्लङ्क्वनादौ प्रमुः स्यात्, महतः पर्वतातिकामिणः क्षरीरस्य संभवादिति. ' जावइआंइ ' इत्यादि. यावन्ति रूपाणि पञ्च — पुरुवादिरूपाणि, ' एवइआंइ ' ति एतावन्ति, ' विज्ञाविन्त ' ति वैक्तियाणि कृत्वा, वैभारं पर्वतं समं सन्तं विषमम्, विषमं तु समं कर्तुमिति सम्बन्धः, कि कृत्वा ! इत्याहः — जन्तर्मध्ये वैभारस्येव अनुप्रविर्यः ' मायी 'ति मायावान्, उपब्रक्षणत्वादस्य सक्षवायः — प्रमत्त हित यावत् . अप्रमत्तो हि न वैक्तियं कुरुत इति. ' पणीअं 'ति प्रणीतं गल्लक्षेह्विन्दुकम्, ' भोचा भोचा वामोति 'ति वमनं करोति, विरेचनं वा करोति वर्ण— बलादर्थम्, यथा प्रणीतमोजनम्, तद्वमनं च विक्तियासमावं मायित्वाद् मवति, एवं वैक्तियकरणभि इति ताल्पर्यम् . ' वहलीमवंति ' चनीमवन्ति प्रणीतसामध्यत् . ' परणणुर 'ति अधनम्, ' अहावायर 'ति यथोचितवादराः आहारपुद्रला इत्यर्थः ' परिणमंति ' श्रोत्रेन्दियादित्वेन, अन्यथा शरीरस्य दार्ब्वाऽसंमवात् . ' लह्लं ति रूक्ताए, सिघाणचार, वंतचार, प्रचत्तार, पूजात्वार, प्रक्षमोतिनः उच्चारितयेव आहारादियुद्गलः परिणमन्ति, अन्यथा शरीरस्य असारताऽनापत्तिति. अथ मायि—अमायिनोः फलमाहः — ' माई णं ' इत्यादि । ' तस्य ठाणस्त 'ति तस्तात् स्थानाद् विकुर्वणाकरणव्यवात् , प्रणीतभोजनव्यवाद् वा. ' अमायी णं ' इत्यादि. ' तस्य अस्ति आराधना—इति.

भगवत्सुधर्मस्वामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे ततीयशते चतुर्थ उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

५. आगळनुं प्रकरण देव-छेरयांपरिणामपर्यवसायी होवाधी एनी पछी आवतुं आ प्रकरण पण एवं ज मूकेंछुं छे अर्थात् आगळना प्रकरणनी पेठे द्रव्यदेव. आ प्रकरंणमां पण छेवट सुधी, भविष्यमां देवरूपे अवतार लेनारा एटले देव थवाने योग्य-द्रव्यदेव-अनगारीए करेलां पुद्रलपरिणमनोने सूचववानां े छे. ते विषेनां सूत्रो आ प्रमाणे छे:—['बाहिरए' ति] औदारिक शरीरथी भिन्न अर्थात् वैकियपुद्गलोने. ['वेमारं' ति]'वैकार' नामना वैभार. राजगृह नगरना कीडापर्वतने, [' उछंचित्तए वा ' इत्यादि.] ते बेमांने एकवार ओळंगढुं ते उछंघन अने वार्यवार ओळंगढुं ते प्रछंघन [' नो इणहे समहे ' ति] ए वात बनती नथी. कारण के वैकिय पुद्रलोनुं महण कर्या सिवाय वैक्रिय शरीरनी बनावट थह शकती ज नथी असे पर्वतनुं उद्धंघन करनार मंनुष्य, पर्वतातिकामी (पर्वतने वटी जाय) एवा मोटा वैकिस शरीर सिवाय, पर्वतने ओळंगी शकतो नथी. अने एवडं मोटं प्रदल्परण. वैकिय शरीर, बहारनां वैकिय पुद्रलोनुं अहण कर्या सिवाय बनी शकतुं नधी तथी बहारनां पुद्रलोनुं यहण कर्या पछी ज ए पर्वतने ओळंगबा (विगेरे)मां समर्थ थई शके छ तो मोदुं शरीर बनाववा माटे नहारनां (वैकिय) पुद्रलोने ग्रहण करतुं ज जोईए. [' जावहआई ,' इत्यादि.] जेटलां पशु अने पुरुष वगेरेनां रूपो. [' एवइआइं 'ति] एटलां रूपोने [' विकुन्तित्त 'ति] वैकिय करीने समत्ववाळा वैभार पर्वतमे विषम करें अने विषमने तो सम करे-एम संबंध छे. हुं करीने ? तो कहे छे के, वैमार पर्वतनी वच्चे पेसीने. [' मायी ' ति] मायावाळो. आ सूत्र, मायी. सूचक होबाथी 'मायी 'शब्दथी 'कषायवाळो 'अर्थात् 'प्रमत्त 'मनुष्य एम समजवुं. कारण के अप्रमत्त मनुष्य तो वैक्रियरूप करतो नथी. [' पणीअं ' ति] चीकाशना झरतां बिंदुवाळुं. [' भोचा भोचा वामेति 'ति] वमन करे छे अथवा विरेचन करे छे. ते मनुष्य मायी छे माटे वर्ण भोजन. तथा बल विगरेने माटे विकियास्वभावरूप प्रणीत भोजन अने तेनुं वमन करे छे अने ए प्रमाणे ए द्वारा वैकियकरण पण थाय छे-ए तात्पर्य छे. ['बहुलीभवंति ' ति] कठण थाय छे. ['पयणुए ' ति] पातछं-कठण नहीं. [' अहावायर ' ति] यथोचित बादर अर्थात् आहारनां पुद्रलो श्रोत्रइंद्रिय बंगरेपणे परिणमे छे. जो एम न थाय तो शरीरनी इटता थवी असंमित छे. [' लहं ' ति] लखुं. [' नो वामेह ' ति] अकषाथि-पणाने लीघे विकियानो इच्छुक न होवाथी वमन करतो नथी. ['पासवणताए '] अहीं ' यावत् ' राज्य मूक्यो छे माटे आ रीते जाणवुं:— " श्रेष्मपणे, नासिकाना मळपणे, वमनपणे, पित्तपणे अने पूतिपणे. " लुखुं जमनारने आहार वगेरेनां पुद्रलो, उचार (विद्या) विगेरेपणे परिणमे छे. जो एम न होय तो तेनुं शरीर दुर्बळ न थवुं जोईए. हवे मायी अने अमायीनी ए प्रवृत्तिनुं फळ कहे छे: [' माई णं ' इत्यादि] विकुर्वणा करवारूप अथवा प्रणीत भोजनरूप स्थानथी. [' अमाई णं ' इत्यादि.] पहेलां मायी होवाने लीधे वैकियरूप कर्युं हतुं अथवा प्रणीत भोजन कर्युं हतुं. पण पछी ते बाबतनी पश्चात्ताप बंबाधी ते अमायी थयो अने तेणे आठोचन तथा प्रतिक्रमण कर्या पछी काळ कर्यों, तो तेवाने आराधना छे. पश्चात्ताप.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचिरिते क्षारमारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परक्कृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्ती। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति शान्स्योः –द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तसुख्यः॥

१. मूलच्छायाः - प्रतिकान्तः कालं करोति, अस्ति तस्य आराधनाः तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः - अनु

शतक ३.-उदेशक ५

अनगार बाह्य पुद्रलोने लीथा विना स्त्री विगेरेनां रूपो करे ?--ना.-लईने.-इा.-एवां रूपोवडे जंबूद्वीपने भरी देवानुं मात्र सामर्थ्यं.-युवक-युवति.-असिचर्यपात्र.-एकतः पताका-पर्यस्तिका.-पर्यक.-अभियोग.-घोडो, दाथी, सिंह, वाघ, वरू, दीपडो, रींछ अने अष्ट पद विगेरेने रूपे अनगार.-पुद्रलपयादान. आत्मक्तद्भि.-परक्रदि विगेरे.-अध के साधु ?-साधु.-विकुर्वणा.-मायी.-तेनी गति-आभियोगिक.-अमायी.-नेनी गति.-अनाभियोगिक.-गाथा --

- ?. प्र०—अणगारे णं मंते ! भाविअप्पा वाहिरए पोग्गले अपरिआइत्ता पभू एगं महं इत्थीरूवं वा, जाव—संदमाणिअरूवं वा विडाव्वित्तए ?
 - ं १. उ०-नो इणहे समहे.
- २. प्र०—अणगारे णं भंते ! भाविअप्पा वााहिरए पोग्गले परिभाइत्ता पभू एगं महं इत्थीरूवं वा, जाव–संदमाणिअरूवं बा विउव्वित्तर १
 - २. उ०—हंता, पभू.
- ३. प्र०—अणगारे णं भंते ! भाविजया केवइआइं पभू इत्थिरूवाइं विजन्तिचए ?
- ३. उ०—गोयमा! से जहा नामए जुनई जुनाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेजा, चक्कस्स वा नाभी अरगाउत्ता सिया, एनामेन अणगारे वि भाविअप्पा वेडाव्विअसमुग्धायेणं समोहणइ, जान—पम् णं, गोयमा! अणगारे णं भाविअप्पा केवलकप्पं जंनुहीवं दीवं बहूहिं इत्थिक्तवेहिं आइण्णं, वितिकिण्णं, जान—एस णं गोयमा! अणगारस्स माविअप्पणो अयमेयाक्तवे विसये, विसय्यमेते नुइए, णो चेच णं संपत्तीए विडाव्विस वा, विडाव्विति वा, विडाव्विस्सांति वा—एवं परिवाडीए णेयव्वं, जान—संदमाणिआ.

- १. प्र०─हे भगवन्! भावितात्मा अनगार, बहारनां पुद्रलोने लीधा सिवाय एक मोटा स्त्रीरूपने यावत्—स्पंदमानिका-रूपने विकुर्ववा समर्थ छे?
 - ?. उ०-हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नथी.
- २. प्र०—हे भगवन् ! भाविताःमा अनगार, बहारनां पुद्रलोने छईने एक मोटा स्त्रीरूपने यावत्-स्पंदमानिकारूपने विकुर्ववा समर्थ छे !
 - २. ड० हे गौतम ! हा, ते तेम करवा समर्थ छे.
- ३. प्र०—हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार केटलां स्त्रीरूपोने विकुर्ववा समर्थ छे !
- रे. उ०—हे गौतम! जेन कोई एक युवान, युवतिने काकडा वाळवापूर्वक पकडे अथवा जेन पैडानी धरी आराओधी व्यास होय तेम भावितातमा अनगार पण वैकियतमुद्धातधी समवहत धई यावत्—हे गौतम! मा तात्मा अनगार आखा जंबूद्दीपने घणां स्त्रीरूपोवडे आकीर्ण, व्यानकीर्ण यावत् -करी शके छे. हे गौतम! मावितात्मा अनगारनो आ ए प्रकारनो भाविषय छे, पण ए प्रकार कोईवार विकुष्ण थयुं नधी, चतुं नधी अने थशे नहि. ए ज प्रमाणे कमपूर्वक यावत्—स्वंदमानका संबंधी स्त्र सुधी समजवुं.

^{4.} मूलच्छायाः —अनगारो भगवन् ! भावितातमा बाह्यान् पुद्रलान् अपर्यादाय प्रभुः एकं महत् स्त्रीरूपं वा, यावत् -स्पन्दमानिकारू। वा विकुर्वितुम् ! नाऽपम् अर्थः समर्थः अनगारो भगवन् ! भावितातमा वाह्यान् पुद्रलान् पर्यादाय प्रभुः एकं महत् स्त्रीरूपं वा, यावत् -स्पन्दमानिकारू। वा
विकुर्वितुम् ! हन्तं, प्रभुः अनगारो भगवन् ! भावितातमा कियन्ति प्रभुः स्नीरूपाणि विकुर्वितुम् ! भीतम ! स यथा नाम युवति युवा हस्तेन हस्ते
एकीयात्, चकस्य वा नामिः अरकायुक्ता स्यात्, एवमेव अनगारोऽपि भावितातमा विजयसमुद्धातेन समयहन्ति, त्या त् अभुर्वितम ! अनगारो
भावितातमा केवूलकर्वं जम्बूदीपं द्वीपं बहुभिः स्नोक्षः आकीर्णम्, व्यतिकीर्णम्, यावतः एव गातम ! अनगारस्य भावितात्यः निकुर्वित वा, विकुर्वित वा, विकुर्वित्यति वा-एवं परिपाद्यां कातव्यम्, यावत्-स्पन्दमानकाः —अतु०

- ४. प्र०—से जहा नामए केइ पुरिसे असि-चम्मपायं गहाय गच्छेजा, एवामेव अणगारे वि भाविअप्पा आसि-चम्म-पायहत्थ-किचगएणं अप्पाणेणं उडूं वेहासं उप्पइजा ?
 - ४. उ० हंता, उपहजा.
- ५. प्र०-अणगारे णं भंते ! भाषिअप्या केवइआइं पम् , असि-चम्महत्थकिचगयाइं रूवाइं विउन्वित्तए ?
- ५. उ०—गोयमा! से जहा नामए जुनइं जुनाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेजा, तं चेन जान-विडिच्चिसु ना, विजन्नंति ना, विजिन्नंति ना.
- ६. प्र०—से जहा नामए केइ पुरिसे एगओपडागं काउं गच्छेजा, एवामेव अणगारे विभाविअप्पा एगओपडागाहत्थ-किचगएणं अप्पाणेणं उर्दू वेहायसं उप्पएजा ?
 - ६. उ० हंता, गोयमा ! उपएजा.
- ७. प्र०—अणगारे णं भंते ! भाविअप्पा केनइआई पभू एगओपडागाहत्थिकिचगयाई रूवाई विकुन्तित्तए ?
- ७. उ०—एवं चेव जाव-विकुव्विसु वा, विकुव्वंति वा, विकुव्विस्सांति वा. एवं दुहओपडागं पि.
- ८. प्रायम् ते बहा नामए केइ पुरिसे एगओजण्णोवइअं (तं) काउं गच्छेजा, एयामेव अणगारे णं भाविअपा एगओजण्णो-वइअकिचगएणं अप्पाणेणं उर्दू वेहासं उपएजा ?
 - ८. उ०—हंता, उपएजा.
- ९. प्र०—अणगारे णं भंते ! माविअप्पा केवइआई पमू एगओजण्णोवइअकिचगयाई रूवाई विकुवित्तए ?
- ९. उ०—तं चेव जाव—विकुान्विसु वा, विकुन्यंति वा, विकुन्तिस्संति वा. एवं दुहओजण्णोवइयं पि.

- 8. प्र०—हे भगवन् ! जैम कोइ एक पुरुष तरवार अने ढाल लइने गति करे, ए ज प्रमाणे भावितात्मा अनगार पण तरवार अने ढालवाळा मनुष्यनी पेठे कोइ पण कार्यने अंगे पोते उंचे आकाशमां उडे ?
 - ४. उ०-हे गौतम ! हा, उड़े.
- ५. प्र०—हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार, तरवार अने ढारुवाळा मनुष्यनी जेवां केटलां रूपो विकुर्या शके ?
- ५ उ०—हे गौतम ! जेम कोइ एक युवान युवतिने काकडा बाळवापूर्वक पकडे यावत्—(बधुं पूर्वनी पेठे जाणतुं) विकुर्वणा थइ नथी, विकुर्वणा थती नथी अने विकुर्वणा धरो पण नहि.
- ६. प्र०—-हे भगवन् । जेम कोइ एक पुरुष (हाधमां) एक पताका करीने गति करे ए ज प्रमाणे भावितात्मा अनगार पण, हाथमां एक (एक तरफ धजावाळी) पताका धरीने चाछ-नार पुरुपनी पेठे पोते कोई कार्यने छौधे उंचे आकाशमां उडे ?
 - ६ उ०--हे गौतम ! हा, उडे.
- ७. प्र०—हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार, हाथमां एक (एक तरफ धजावाळी) पताका धारण करी चालनार पुरुषनी जेवां केटलां रूपो करी शके ?
- ७. उ०—हे गौतम ! पूर्वनी पेठे ज जाणहुं अने यावत्— विकुर्वण थयुं नथी, थतुं नथी अने थशे नहि. ए प्रमाणे वे तर्फ धजावाळी पताका संबंधे पण समजवुं.
- ८. प्र०—हे भगवन् ! जेम कोई एक पुरुष एक तरफ जनोइ करीने गति करे, ए ज प्रमाणे भावितामा अनगार पण, एक तरफ जनोइ करीने चालनार पुरुषनी पेठे पोते कोइ कार्यने लीधे उंचे आकाशमां उडे ?
 - ८. उ०-हे गौतम ! हा उडे.
- ९. प्र०—हे भगवन् । भाविताःमा अनगार पोते, कार्य परत्वे एक तरफ जनोइवाळा पुरुषनी जेवां केटळां रूपो विकुर्वी शकें?
- ९. उ०—हे गौतम ! ते ज प्रमाणे जाणवुं अने यावत्— विकुर्वण कर्युं नथी, विकुर्वण करता नथी अने विकुर्वण करशे पण नहि. ए प्रमाणे बे तरफ जनोइवाळा पुरुषनी जेवां रूपो संबंधे पण समजवुं.

१. मूलच्छायाः —स यथा नाम कोऽपि पुरुषोऽसि-चर्मपात्रं गृहीत्वा गच्छेत्, एवमेव अनगारोऽपि भावितात्मा असि-चर्मपात्रहृस्तेकृत्यगतेन आत्मना ऊर्ध्व विहायः उत्पतेत् ? इन्त, उत्पतेत् . अनगारो भगवन् ! भाषितात्मा कियन्ति प्रभुः असि-चर्महृस्तेकृत्यगतानि रूपाणि विकुर्वितुम् ? गौतम ! स यथा नाम युवति युवा इस्तेन इस्ते गृजीयात् , तच्चव यावत्—व्यक्तवीद् वा, विकुर्वित वा, विकृर्वित्यति वा. स यथा नाम कोऽपि पुरुषः एकतःपताकं कृत्वा गच्छेत् , एवमेव अनगारोऽपि भावितात्मा एकतःपताकाहरूतकृत्यगतोन आत्मना ऊर्ध्व विहायः उत्पतेत् ? इन्त, गौतम ! उत्पतेत् . अनगारो भगवन् ! भावितात्मा कियन्ति प्रभुः एकतःपताकाहरूतकृत्यगतानि रूपाणि विकृत्वितुम् ? एवं वेष यावत्—व्यक्कविद् वा, विकुर्वित वा, विकृत्वित्यति वा. एवम् द्वियापतावम् अपि स यथा नाम कोऽपि पुरुषः एकतोयशोपवीतं कृत्वा गच्छेत् , एवमेव अनगारो भावितात्मा एकतोयशोपवीतकृत्यगतेन आत्मना ऊर्ध्व विहायः उत्पतेत् ? इन्त, उत्पतेत् . अनगारो भगवन् ! भावितात्मा कियन्ति प्रभुः यज्ञोपवीतकृत्यगतानि रूपाणि विकृत्वितम् ? तच्चव यावत्—व्यक्कविद् वा, विकृतित वा, विकृतित वा; एवं द्विधायज्ञोपवीतम् अपिः —अनु०

ं १०. प्र०—से वहा नामए केंद्र पुरिसे एगओपत्हरिथअं .काउं चिट्टेजा, एवामेव अणगारे वि भावियप्पा० ?

१०. उ०-एवं चेव जाव-विक्तुविंसु वा, विकुव्वंति वा, विकुन्त्रिस्तंति वा; एवं दुहओपल्हरिथअं पि.

काउं चिद्वेजा० ?

११. उ०-तं चेव जाव-विकुव्विषु दा, विकुव्वंति वा, विक्। व्यक्तांति वाई एवं दुहओपितयंकं रूपि.

- प्रमाणे वे तरफ पर्लोठी संबंधे पण समजवं. ११. प्र० — से जहा न मए केइ पुरिसे एगओपित्यं कं ११. प्र०--हे भगवन् ! जेम कोई एक पुरुष एक तरफ पर्यकासन करीने बेसे, ए ज प्रमाणे भावितात्मा अनगार पण एनी जेवं रूप करीने आकाशमां उडे ?
 - ११. उ०-हे गौतम ! ए ज प्रमाणे जाणवुं अने यायत्-विकुर्वण थयुं नथी, विकुर्वण थतुं नथी अने विकुर्वण थरो पण नहि; ए प्रमाणे वे तरफना पर्यकासन संबंधे पण समजवुं.

१० प्र०-हे भगवन् ! जेम कोई एक पुरुष एक तरक

१०. उ०--हे गौतम ! ए ज प्रमाणे जाणितं अने यावत-

पटोंठी करीने बेसे, ए ज प्रमाणे भावितात्मा अनगार पण एनी

विकुर्वण कर्युं नथी, विकुर्वता नथी अने विकुर्वशे पण नहि; ए

जेवुं रूप करीने आकाशमां उडे?

- १. चतुर्थोदेशके विकुर्वणा उक्ता, पञ्चमेंऽपि तामेव विशेषत आह-'अणगारे णं ' इत्यादि, ' अतिचम्मपायं गहाय ' त्रि असिचर्मपात्रं रफ़रकः, अथवा असिश्च खद्गः, चर्मपात्रं च रफ़रकः, खद्गकोशो वा असिचर्मपात्रम्, तद् गृहीत्वाः ' असिचस्वपात्र-हत्थाकिचगएणं अप्पाणेणं ' ति असिचर्मपात्रं हस्ते यस्य स तथा, ऋसं संघादिप्रयोजनम्, गत आश्रितः क्रस्यगतः, ततः कर्मश्रास्यः-अतस्तेनात्मना, अथवा असिचर्मपात्रं कृत्वा-हस्ते कृतं येनासौ असिचर्मपात्रहस्तक्कतः-तेन, प्राकृतत्वाचैवं समासः. अथवा असिचर्ने-पात्रस्य हस्तकृत्यं हस्तकरणम्, गतः प्राप्तो यः स तथा तेन. 'पित्रमेकं 'ति आसनविशेष:-प्रतीतश्च.
- १. चोथा उद्देशकमां विकुर्वणा संबंधे हकीकत कही छे अने पांचमा उद्देशकमां पण ते व हकीकतने विशेषताथी कहे छे:--[' अणगारे णं ' इत्यादिः] [' असिचम्मपायं गहाय ' ति] असिचर्मपात्र एटले स्फुरक-ढालः अथवा असि एटले तरवार अने चर्मपात्र एटले ढाल अथवा म्यान-तेने लइने. ['असिचम्मपायैहत्धिकबगएणं अप्पाणेणं 'ति] जेना हाबमां असि अने चर्मनात्र छे ते 'असिचर्मपात्रहस्त ' कहेवाय. संघ विगेरेना प्रयोजननी सिद्धिने आश्रीने गएलो ते ' कृत्यगत ' कहेबाय तेणे−ते आत्माए. अथवा जेणे असिचमैपात्रने हाथमां कर्यु छे ते–तेणे• अथवा असिचर्मपात्रतुं जे हाश्रमां करतुं (धरतुं), तेने पामेल-तेणे. [' पलियंकं ' ति] एक जातनुं प्रसिद्ध आसन-पर्यकासन.

अभियोग अने आभियोगिक.

१२. प्र०--अणगारे णं भंते । भाविअप्पा बाहिरए पोग्गर्ले रूवं या, वन्धरूवं या, वैगरूवं वा, दीविअरूवं वा, अच्छ-रूवं वा, तरच्छरूवं वा, परासररूवं वा अभिजुं जित्तए ?

१२. उ०-नो इणहे समहे.

१३. प्र०-अणगारे णं० ?

१३. उ०-एवं बाहिरए पोग्गले परिआइत्ता पमू.

- १२. प्र०--हे भगवन् ! भावितात्मा अनगारं बहारमां अपरिआइत्ता पभू एगं महं आसरूवं वा, हरिथक्तं वा, सीह- पुद्रलो प्रहण कर्या सिवाय एक मोटा घोडाना रूपन, हाथिना रूपने, सिंहना रूपने, वाधना रूपने, नारना रूपने, दीपडाना रूपने, रिंडना रूपने, नाना वाघना रूपने अने शुरभना रूपने अभियोजवा समर्थ छे ?
 - १२. उ०--हे गौतम ! ए वात समर्थ नथी.
 - १३. प्र०--हे भगवन्! भावितात्मा अनुपार पुद्रलोने लईने पूर्व प्रमाणे करवा समर्थ छे?
 - १३. 🕶 हे भौतम ! बहारनां पुद्रलोने लईने ते अनगार पूर्व प्रमाणे करी शके छे.

असि,-चर्मप¦श्र

पर्यक.

१. मूलच्छायाः — स यथा नाम कोऽपि पुरुषः एकतःपर्यस्तिकां कृत्या तिष्ठेत् , एवमेव अनगारोऽपि भावितारमा । १ एवं वैव यावत् व्यक्तवीद् धा, विकुवैति वा, विकुविष्यति वा; एवं द्वियापर्यस्तिकाम् अपि स यथा नाम कोऽपि पुरुषः एकतःपर्यक्कं कृत्वा तिष्टेत्० ? तचैव यावत् व्यकुविद् धा, विकुर्वति वा, विकुर्विष्यति वा; एवं द्विधापयंद्वम् अपि. २. अनगारो भगवन् ! भावितात्मा बाह्यान् पुद्रलान् अपर्यादाय प्रभुः एकं महद् अश्वरूपं वा, हिल्हिक् वा, सिंहिक्ष वा, व्याग्रहकं वा, बुक्हवं वा, द्वीपिकहारं वा, महश्रहपं वा, तरश्रहपं वा, पराश्चरहकं वा अभियोबतुम् ? नाउत्रम् अर्थः समर्थः अनगारः 🕯 एवं बाह्यान् पुदूलान् पर्नादाय प्रभुः—अनु०

१: अहीं 'असिचर्मपात्रहस्त 'अने 'ऋखगत ' आ बे शब्दोनो कमैधारय समास करवो. २. अहीं प्राकृतंनी शैलीने अनुसरीने पूर्वनिपातनो निपर्यंत थएलों छः — श्रींभभय ०

१४. ४०— अणगारे णं मंते ! भाविभप्पा एगं महं आस-रूवं वा अभिजुंजित्ता अणेगाइं जोअणाइं पम् गमित्तए ?

१४. उ० - हंता, पमू.

१५. प्र०--से भंते ! किं आयडूीए गच्छइ, परिड्डीए गच्छइ ?

१५. उ० — गोयमा ! आयडीए गच्छइ, नो परिडिए; एवं आयकम्मुणा, नो परकम्मुणा; आयण्योगेणं, नो परणयोगेणं. उस्तिओदयं वा गच्छइ, पयओदयं वा गच्छइ.

ं १६. 🛪 🗕 से णं मंते ! किं अणगारे आसे ?

१६. उ०--गोयमा ! अणगारे णं से, नो खलु से आसे; एवं जाव-परासररूवं वा.

१७. य—से मंते ! किं मायी विकुव्यइ, अमायी वि वि-कुव्यइ ?

१७. उ०—गोयमा! मायी विकुव्वइ, नो अमायी विकुव्वइ.

१८. ४० — माई णं भंते ! तस्स डाणस्स अणालोइअपडि-कंते.कालं करेइ, काहें उववज्जइ ?

े १८. उ०—गोयमा ! अण्णयरेसु आभिओगेसु देवलोगेसु देवत्ताए उववजाइ.

१९. प्र०—अमायी णं भंते ! तस्स टाणस्स आलोइअप-डिकंते कालं करेइ, कहिं उववज्जइ ?

१९. उ०—गोयमा !ं अण्णयरेसु अणाभियोगिएसु देवलो-एसु देवत्ताए उववज्जइ.

--सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.

गाहाः—इत्थी असी पडागा जण्णोवङ्के य होड़ बोघव्वे, पल्हित्थिअ पलियंके अभिओग विकुव्वणा मायी. १४, प्रo — हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार, एक मोटा घोडाना रूपने अभियोजी अनेक योजनो सुधी जवाने समर्थ छे?

१४. उ०--हे गौतम ! हा, ते, तेम करवा समर्थ छे.

१५. प्र०—हे भगवन् ! शुं ते आत्मऋदिथी जाय छे के पारकी ऋदिथी जाय छे ?

१५. उ० — हे गौतम! आत्मऋदिथी जाय छे, पण पारकी ऋदिथी जतो नथी. ए प्रमाणे पोताना कर्मथी जाय छे, पण पारकाना कर्मथी जतो नथी; पोताना प्रयोगथी जाय छे पण पारकाना प्रयोगथी जतो नथी. तथा ते सीघो पण जई शके छे अने निपरीत पण जई शके छे.

१६. प्र०---हे भगवन् ! शुं ते अनगार अश्व-चोडो-कहेबाय ?

१६. उ०—हे गौतम! ते अनगार छे, पण घोडो नथी. ए प्रमाणे यावत्-शरभना रूप सुधीनां बधां रूपो संबंधे जाणवुं.

१७. प्र०—हे भगवन् ! हां ते विकुर्वण मायी अनगार करे, के अमायी अनगार पण करे ?

१७. ड० -- हे गौतम! ते विकुर्वण मायी अनगार करे, अमायी अनगार न करे.

१८. प्र०—हे भगवन् । ते प्रकारनं विकुर्वण कर्या पछी ते संबंधी आलोचन के प्रतिक्रमण कर्या सिवाय जो ते विकुर्वण करनार मायी साधु काळ करे, तो ते क्यां उत्पन्न थाय ?

१८. उ०—हे गीतम ! ते साधु, कोई एक जातना आभियोगिक देवलोकोमां देवपणे उत्पन्न थाय.

१९. प्र०—हे भगवन् । ते किया संबंधी आलोचन अने प्रतिक्रमण करीने जो अमायी साधु काळ करे, तो क्यां उत्पन्न धाय ?

१९. उ०—हे गौतम! ते साभु, कोई एक जातना अना-भियोगिक देवलोकोमां देवपणे उत्पन्न थाय.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे.

गाथा—ह्नी, तरवार, पताका, जनोइ, पछोंठी अने पर्य-कासन; ए बघां रूपोनो अभियोग अने विकुर्वणा संबंधी हकीकत आ उदेशकमां छे तथा ए प्रमाणे माथी साधु करे छे एम पण जणाव्युं छे.

भगवंत-अज्ञसुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते ततिअसये पंचमो उदेसा सम्मत्तो.

^{9.} मूलच्छायाः—अनगारो भगवन्! भावितात्मा एकं महद् अश्वरूपं वा अभियुज्य अनेकानि योजनानि प्रभुपेन्तुम् १ हन्त, प्रभुः. स भगवन् । किम् आत्मद्धां गच्छति, परद्धां वा गच्छति, परद्धां वा गच्छति, स भगवन् । किम् अनगारोऽश्वः १ गातम । अनगारः सः, नो खल्छ सोऽश्वः; एवं यावन्—पराशरूपं वा. स भगवन् । किं मायी विकुर्वति, अमायी अपि विकुर्वति १ गातम । मायी विकुर्वति, नो अमायी विकुर्वति, मायी भगवन् । तस्य स्थानस्य अनलोचितप्रतिकान्तः कालं करोति, कुत्र उपपद्यते १ गातम । अन्यतरेषु आभियोगिकेषु देवलोकेषु देवतया उपपद्यते. अमायी भगवन् । तस्य स्थानस्य आलोचितप्रतिकान्तः कालं करोति, कुत्र उपपद्यते १ गातम । अन्यतरेषु अनाभियोगिकेषु देवलोकेषु देवतया उपपद्यते. तदेवं भगवन् ।, तदेवं भगवन् । इति. गाथाः—श्री असिः पताका यशोपवीतं च भवति बोद्धन्यम् , पर्वस्तिका पर्यद्वः अभियोगो विकुर्वणा पात्रीः—अनु०

२. विग 'ति वृक्तः, 'द्वीविकः' ति चतुष्पदविशेषः, ृक्षञ्छः' ति ऋक्षः, 'तर्पछः'ति व्यावविशेषः, 'प्रसार 'ति शरमः 🗜 इह अन्यान्यि शृगाङ्गदिपुदानि याचनान्तरे दृश्यन्ते. ' अभिजुं जित्तए 'ति—अभियोक्तुं विद्यादिसाम्ध्र्यतः , तदनुप्रवेशेन व्यापा-रियेतुम्, यच स्वस्यानुप्रवेशेन अभियोजनं तिद्वद्यादिसामध्यीपात्तवाह्यपुद्गतान् विना न् स्याद् इति क्षावा उच्यते:- नो बाहिरए पुग्गले अपरिआइत्त 'ति. 'अणगारे णं से ' ति अनगार एवाली-तत्त्वतोऽन्गारस्येव अधाद्यनुप्रवेशेन व्याप्रियमाणलात्. ' माथी अभिजुंबइ ' ्रित कषायुवान् अभियुद्धे इत्यर्थः, अधिकृतवाचनायां ' मायी विकुव्यइ ' ति दश्यते, तत्र चाभियोगोऽपि विकुर्वणा इति मन्तव्यम्-विकियां एपत्वात् तस्य. ' अचयरेमु ' त्ति आभियोगिकदेवा अच्युतान्ता भवन्ति इति कृत्वा अन्यतरेषु दृत्युक्तम् –केपुचिद् इत्यर्थः, • उत्पद्यते चाभियोगभावनायुक्तः साधुराभियोगिकदेवेषु. करोति च विद्यादिलब्युपजीवकोऽभियोगभावनाम्, यदाहः—'' मंती—जोगं काउं ्रभूइकुम्में तु जे परंजेति, साय-रस-इड्डिहेरं अभियोगं भावणं कुणइ. " 'इत्यी ' इत्यादि. संप्रहगाथा गतार्था.

भगवत्सुधर्मसामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे उतीयशते पद्यम उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवरणं समाप्तम्

ं २. [' ब्रिग-' ति] नार, [' दीविअ ' ति] एक जातनुं चारपगुं जनावर-दीपडो, [' अच्छ ' ति] रिंछ, [' तरच्छं ' ति] एक जातमो वाध-नामो वाघ, [' परासर ' ति] सिंहने मारनार शरम-अटापद, बौजी वाचनामां आ ठेकाणे ' शियाळ ' बगेरे वीजां जनावरोनां प्ण नोमो आवे-देखाय-छे. ['अभिजुंजित्तए ' ति] अभियोग करवाने-दिया विगेरेना बळ्यी अश्व-घोडा-दिगरेना स्वमा प्रवेश करीने ते द्वीरी किया करवाने रूपमां प्रवेश करीने ते द्वारा जे किया करनानी छे ते, निया विभेरेना बळ्यी ग्रहण करेला बहारना पुद्रली सिवाय यह शंकती नथी माटे कहुं छे के:--[' नो वाहिरए पुग्गले अपरिआइत्त ? ति] ['अणगारे णं से ' ति] ए अनगार-साधु-ज छे कारण के खरीं रीते तो अश्व विगरेमां पेठेलो साधु ज वपराशमां आने छे अर्थात् अश्वादिना रूपमां पण साधु ज पेठेलो छे माटे ते साधु ज छे पण अञ्चादि नथी. ['मायी अमिजुंजइ ' ति] जे कवायवाळो साधु होय ते-अभियोग-करे छे. चालु वाचनामां ['मायी विकुव्वइ रैं] एवो पाठ देखाय छे. शंव-.'्अभिजुंजइ '–अभियोग करे छे अने ' विकुव्वइ '−विकुर्वण करे छे, ए क्रियापदोनो भिन्न भिन्न अर्थ छे, तो चालु बाचना अने वीजी बाचनामां ते भिन्न अर्थीनुं संघटन केम थ्रइ शके ? समा०--अभियोग अने विकुर्यंग कियानुं फळ जोतां तो ए बन्ने शब्दोनो जूदो अर्थ संभवतो नथी। कारण के अभियोग करनार पण नयां नवां रूपो बनावे छे अने विकुर्वण करनार पण नवां नवां रूपो बनावे छे माटे अभियोग विकुर्दणरूप होवाथी 'अभियोग ' अने ' विकुर्वण ' ए बन्ने शब्दोना अर्थमां पण मळतापणुं छे अने तेम होवाथी बन्ने वाचनामां संघटन थई जाय छे. ['अन्नयरेसु ' ति] जानियोगिक देवो अच्युत देवलोक सुवी होय छे माटे 'कोइ एक जातना 'ए प्रमाणे कहुं छे. विद्या विगरेनी लब्धिथी उपजीवन करनार साधु अमियोगनी मावनाने करे छे. अने ए अभियोगनी मावनावाळी साधु आभियोगिक देवोमां उत्पन्न थाय छे. कह्युं छे के— कह्युं छे के. " जें भी मात्र वैषयिक सुखने माटे अने खादु आहारनी प्राप्तिने माटे मंत्र साधना करे छे अने भूतिकर्मने प्रयोजे छे तेओ अभियोगनी भावनाने करे छे. " [' इत्थी ' इत्यादि.] ए संग्रहगाथा गतार्थ छे-स्पष्ट अर्थवाळी छे.

> बेंडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्रुणानां परक्वतिकरणाद्दैतजीवी तपस्वी। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्सोः-द्वात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चामुस्यः॥

१. प्र॰ छायाः -- मन्त्रा-ssयोगं कुला भूतिकर्म तु यः प्रयुद्धे, सात-रस-दिहेतुम् आभियोगिकी भावनां करोतिः--अनु॰

9. आ गाथा उत्तराध्ययन सूत्रना ३३ मा अध्ययनमां २६२ भी हे. त्यां जणावेली तेनी वर्ध आ प्रमाणे हे:—

योगदेवा हि देवानाम् आज्ञाकारिणः किङ्करप्रायाः, दासप्रायाश्र. " (क॰

" मंता-जोगं काउं भूइकम्मं च जे पउंजेति, साय-रस-इक्टिंड अ-

" जे पुरुष, सुख, स्वाद अने ऋदिने लोभे मंत्रसाधना करे छे, औष-थी संयोग करे छे अने भूतिकर्मने प्रयोजे छे ते, आभियोगिकी भावनाने करे छे ''-- २६२. जे वाक्यनी आदिमां 'ॐ' अने अंते 'स्वाहा' शब्द आवे तेतुं नाम मंत्र. आयोग एटले साधना वा औपपीसंयोग. मनुष्योनी, पशुओनी अने घर विगेरेनी रक्षा माटे भस्म, गृत्तिका वा सूतर द्वारा कराता प्रयोगने भूतिकर्म कहेवामां आवे छे-भभूती नाखवी, मंत्रीने धूळनी मूटी आपवी वा दोरो करी देते-ए विगेरे भूतिकर्म कहेवाय छे. ए जातना मंत्र के भूतिकर्मनो उपयोग जे साधु पोताना अंगत लाभने साह-सारो आहार मळे वा सारां कपडां मळे वा नेपियक सुख मळे ए हेतुथी करे छे, ते, मरीने आभियोगिक देवमां अवतरे छे. खर्गमां जे देवो मोटा संपत्तिशाली श्रीमंतो जेवा छे तेओनी आज्ञामां रहेवानुं काम आभियोगिक देवोनुं हे अर्थात् आभियोगिक देवो, एक जातना दास देवो हे. आ विषे वधू हकीकत उत्तराष्ययन सूत्रना ३६ मां अध्ययनमां आवेली छे अने प्रज्ञापनासूत्रना २० मा पदमां (पृ० ४००-४०६ स०) पण ए जातनो रहेस मळी आवे छे. प्रस्तुत सूत्र (भगवती)ना प्रथम खंड (पृ० ११०) मां पग आभियोगिकनी माहिती आपेली छे. खां आपेली गाथाओ उत्तरा-ध्ययनना ३६ मा अध्ययनमां अने प्रज्ञापनाना उपर्कुक्त स्थळमां पण टांकेली छे.

वृकादि. वीजी वान आंभयोग.

आ० पृ० ११०३.)

भिओगं भावणं कुणइ-२६२ " यः पुरुषः सात-रस-दिहेतवे मन्त्रा-SSयोगं कुला-मन्त्रश्च आयोगश्च मन्त्रायोगम्. मन्त्रः-ऑकारादिस्वा-हान्तः, आयोगः-औषधीमीलनम्; अथवा मन्त्राणाम् आयोगः-साधनं मन्त्रा-९९योगः-तं कृला. तथा भूला-भस्तना, मृतिकथा, सूत्रेण वा यत् कमें तद् भूतिकमें -मनुष्याणाम्, तिरश्वाम्, गृहाणां वा रक्षायर्थं केतिका-दिकरणं भूतिकरणं कर्म. एतानि सुखार्थम्, सरताऽऽहारार्थम्, नक्षादिप्रा-प्सर्थं यः साधुः कुर्यात् स आभियोगिकीं भारनां करोति. आभियोगिकीं भावनां चोत्पाद्य स आभियोगिरवे देवत्वे मृत्वा उत्पद्यते-इस्पर्थः. आभि-

भा संबंधे 'गच्छाचारपयना ' अने ' बृहत्कल्पवृत्ति ' मां पण नीचे जणावेली उन्नेख मळी आने छे:--

" मैताओर्ग काउं म्हरूम्मं च जे पउंजंति, साय-रस-इन्निहेवं शंभिओगभावणं कुण्डः"

" मन्त्राणाम्-आयोगो व्यापारो मन्त्रायोगः-तम्. यदि वा मन्त्राथ, आगोगाध-तथाविधद्रव्यसंयोगाः × × तत् द्वता विधाय-व्यापार्यं दा. भूता भस्मना, उपलक्षणत्वाद् पृदा, सूत्रेण कर्मरक्षार्यं वसलादिपरिवेष्टनं भूतिक्रमं. च-शब्दात् कोतुकादि च यः प्रयुक्के-किमर्थम् ? सातं सुखम्, रसा माध्र्यादयः, ऋदिः उपकरणादिसंपत्-एते हेतवो यसिन् प्रयोजने तत् सात-रस-ऋढिहेत्उ-को भावः ? सातास्यं मन्त्र-योगादि प्रयुक्के- एवम् आभियोगीं भावनां करोति. इह च सातादिहेतोरभिधानम्, निस्पृदस्य सपवादत एतत्प्रयोगः- प्रस्युत गुण-इति स्थापनार्थमः"—ग० द्वि० अ०

" एआणि गारवट्टा कुणमाणी आभियोगिशं बंधह, मीअं गारवरहिओ कुम्बं आराहगर्तं च."

" एतानि कीतुकावीनि ऋदि-रस-सात-गौरवार्थं कुर्वाणः प्रमुकानः सन् आभियोगिकं देवादिप्रेध्यकमं व्यापारफठं कमं बधाति-द्वितीयमपवाद-, पदमत्र भवति- गौरवरहितः सन् अतिशयझाने सति निःस्पृहदृत्या प्रवचन-प्रभावनार्थम् एतानि कीतुकावीनि कुर्वेन् आराधको भवति-उद्चेगोतं च कमं बधाति-तीर्थोन्नतिकरणात्-इति गता आभियोगिकी भावनाः—१० मा० हा० अभिधानराजेन्द--आभियोगिकभावना शब्दः " मुझ, स्वाद अने संपत्तिने अर्थ जे मंत्र, आयोग के भूतिकर्मने प्रयोजे है ते अभियोगभावनाने करे छे."

"मंत्रायोग एटले मंत्रनो आयोग अधीत मंत्रनो उपयोग. अधवा मंत्रो अने आयोगो-आयोगो एटले ते ते प्रकारना द्रव्यना संयोगो. भृति एटले असा-राख, माटी के दोरो-ते द्वारा वसति विगेरेनं परिवेष्टन एटले अमंरक्षा माटे घर फरती राख नाखवी, माटी वेरवी के घर फरतो दोरो विट्यो. सात एटले सुख, रस एटले मधुर विगेरे रसो अने ऋदि एटले उपकरण ियोरेनी संपत्ति. ते त्रणेना उदेशथी जे मंत्र विगेरेनो उपयोग करे छे से आमियोगी भावनाने करे छे. अहीं मंत्र विगेरेना उपयोग करवानो जे हेत जणाव्यो छे तेथी एम कली शकाय छे के, निस्त्रह साधु, ए हेतुथी (उपर जणावेला हेतुथी) मंत्रादिनो उपयोग करे नहि. (निस्त्रह साधु तो मंत्रादिनो उपयोग ज करे नहि) कदाच ते, अपवादवशे मंत्रादिनो उपयोग करे तो ते उपयोग द्वारा तेने हानि थती नथी-उलटो गुण थाय छे-आ वातने जणाववा माटे ज मंत्रादिना उपयोगने लगता ते सुखादि हेतुओनो अहीं उल्लेख करेलो छे. ग० दि० अ०

" जे, गौरवने माटे ए मंत्रादिनो उनयोग करे छे ते, आभियोगिक देवने लगतुं कर्म बांधे छे अने जे निस्पृह्पणे ए मंत्रादिनो उपयोग करे छे ते आराधकपणाने पामे छे."

" जे ऋदि, रस अने सुदादिनी प्राप्ति माटे ए कौतुक विगेरेनो उपयोग करे हे ते देवोना नोकर यवाने लायक कर्म वांधे हे. अने जे निस्पृद्द हे— अतिशय ज्ञानी हे ते ए कौतुक विगेरेनो उपयोग प्रयचननी प्रभावना माटे करे हे अने एम करवाथी ते उच गोत्र वांधे छे-आराधक थाय है":-अनु

शतक ३.-उदेशक ६.

्मिध्यादृष्टि अनगः रतुं विकुर्वण.—प्राराणसी.—राजगृह.—तथाभावने स्थाने अन्यशामाव.—राजगृहने वदले वाराणसी अने वाराणसीने वदले राजगृह समजवानी अम.—सम्यगृहिः अनगारतुं विकुर्वण.—तथाभाव.—अन्यथाभाव निह.—वीर्यलिध.—वैक्षियलिध.—जबिशानलिध.—अने पुरुषकारंपराक्रम.—पुद्रलनुं पर्यादान अने अपर्यादान.—विकुर्वण.—प्रामरूप.—संनिवेशस्त्रः,—युवक-सुवति.—जमरः—अस्मरक्षक देवो.—इंद्रोना आस्मरक्षक देवो.—विहारः

- १. प्र०—अणगारे णं भंते ! भावियपा मायी, मिन्छिदिही वीरियलदीए, वेडाव्यियलदीए, विभंगणाणलदीए वाणारांसे नगरि समोहए, समोहणित्ता रायगिहे नगरे रूवाई जाणइ, पासइ ?
 - १. ७० हता, जाणइ, पासइ.
- १. प्रo—से भंते ! कि तद्दाभावं जाणह, पासदः, अघहा-भावं जाणहः, पासदः ?
- . २. उ०—गोयमा ! णो तहाभावं जाणइ, पासइ; अण्ण-हाभावं जाणइ, पासइ.
- ₹. प्र०—ते केणहेणं भंते ! एवं दुचहः—ने तहाभावं जाणइ, पासइ; अबहाभावं जाणइ, पासइ ?
- २. ७० गोयमा! तस्स ण एवं भवइ-एवं खलु अहं रायगिहे नगरे समोहए, समोहणिता वाणारसीए नयरीएं रूवेाई जाणामि, पासामि; से से दंसणे विवचासे भवइ, से तेण्डेंणं जाव-पासति.

- १. प्र०—हे भगवन् ! राजगृह नगरमां रहेलो मिध्यादृष्टि अने मायी—कषायी—भावितातमा अनगार वीर्यलन्धियी, वैकिय-लिख्यी अने विभंगज्ञानलन्धियी वाणारसी नगरीनुं निकुर्नण करीने (तहत) रूपोने जाणे, जूए ?
 - १. उ० हे गौतम ! हा, ते, ते रूपोने जांगे भने जूंए.
- २. प्र०—हे भगवन् ! छुं ते तथाभावे—जेवुं छे तेवुं— जाणे अने जूए, के अन्ययाभावे—जेवुं छे तेथी विपरीत रीते— जाणे अने जूए !
- २. उ०—हे गौतम ! ते तथाभावे न जाणे अने न जूए, पण अन्यथाभावे जाणे अने जूए.
- ३. प्रo हे भगवन् ! तेम थवानुं शुं कारण के, ते सधाभावे न जाणे अने न जूए; पण अन्यधाभावे जाणे अने जूए !
- ३. उ०—हे गौतम! ते ताधुना मनमां एम धाय छे के— वाराणसीमां रहेलो हुं राजगृह नगरनी विकुर्घणा करीने (तहत) रूपोने जाणुं छुं अने जोडं छुं. एवं तेनुं दर्शन विपरीत होय छे माटे—आ कारणथी—यावत्—ते, (अन्यधामाने जाणे छे अने) अप छे.

^{2.} मूल्ट्छायाः—अनगारो मगवन् ! भावितारमा माथी मिध्यादृष्टिः वीर्यल्ड्या, वैकियल्ड्या, विभन्नज्ञानल्ड्या वाराणसी नगरी समबहतः, समबहत्य राजगृहे नगरे रूपाण जानाति, पश्यति १ हन्त, जानाति, पश्यति स भगवन् ! किं तथाभावं जानाति, पश्यति; अन्यथाभावं जानाति, पश्यति शामित् भगवन् ! एवम् उच्यते—नो तथाभावं जानाति, पश्यति शामित् भगवन् ! एवम् उच्यते—नो तथाभावं जानाति, पश्यति अन्यथाभावं जानाति, पश्यति शामित् जानाति, पश्यति शामित् । तथाभावं जानाति, पश्यति शामित् । तथाभावं जानाति, पश्यति अन्यथाभावं जानाति, पश्यति शामित् । तथाभावं जानाति, पश्यति शामित् जानाति, पश्यति शामित् । तथाभावं जानाति, पश्यति । तथाभावं जानाति, पश्यति । तथाभावं जानाति, पश्यति । तथाभावं जानाति, पश्यति । समबहतः । समबहलः वाराणस्यां नगर्याः रूपाणि जानामि, पश्चामिः, तस् तस्य वर्शने विपर्यासः (विष्यत्यासः) भवति, तत् तेनार्थेन यावत्—पश्यतिः—अनु०

- ४. प्र०—अणगारे णं भंते । भावियपा मायी, मिच्छिदिही जावं-रायगिहे नगरे समोहए, समोहणिचा वाणारसीए नयरीए रूबाई जाणइ, पासइ ?
- 8. उ०—हंता, जाणइ, पासइ; तं चेव जाव—तस्स णं एवं हवइ—एवं खलु अहं वाणारसीए नयरीए समोहए, समोह-णित्ता रायगिहे नगरे रूवाई जाणामि, पासामि; से से दंसणे विवसासे भवति, से तेणहेणं जाव—अनहाभावं जाणइ, पासइ.

५. प्र०—अणगारे णं भंते ! भावियपा मायी, मिच्छिदिही वीरियलाईए, वेजन्वियलदीए, विभंगणाणलदीए वाणारसी नयारें, रायगिहं च नयरं अंतरा एगं महं जणवयवरगं समोहए, समोह-णित्ता वाणारसिं णयरिं, रायगिहं च नगरं अंतरा एगं महं जण-वयवरगं जाणित, फासइ ?

५. उ०—हंता, जाणइ, पासाति.

६. प्र०—से भंते ! किं तहामावं जाणइ, पासइ; अचहा-भावं जाणइ, पासइ ?

- ६. उ०:—गोयमा ! णो तहामावं जाणइ;-पासइ; अनहा-भावं जाणइ, पासइ.

७. प्र०-से केणहेणं जाव-पासइ ?

७. उ०—गोयमा ! तस्त सलु एवं भवति-एस सलु वाणारसी नगरी, एस खलु रायगिहे नयरे; एस खलु अंतरा एगे महं जणव्यवागे; नो खलु एस महं वीरियळकी, वेडाविय-लबी, विमंगनाणलबी; इड्डी, जुत्ती, जसे, बले, वीरिए, पुरि-संक्रीरपरकमे लबे, पत्ते, अभिसंमण्णागए; से से दंसणे विवचासे भवति, से तेणहेणं जार्म-पासति.

ं हैं . प्रेड — अंणगार्र णे भंते । भावियणा अमायी सर्मादिही बीरियलदीए, वेडव्वियलदीए, खोहिनाणलदीए रायगिहं नगरं समोहस, समोहणिता वाणारसीए नयरीए ख्वाइं जाणइ, पासइ ?

८. उ०—हता, जाणइ, पासइ...

- ४. प्र०—हे भगवन् ! वाराणसीमां रहेळो मायी, मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार यावत्—राजगृह नगरनुं विकुर्वण करीने (तहत) रूपोने जाणे अने जूए ?
- 8. ज०—हे गौतम! हा, ते, ते रूपोने जाणे अने जूए, यावत्—ते साधुना मनमां एम थाय छे के, राजगृह नगरमां रहेलों हुं वाराणसी नगरीनी विकुर्वणा करीने (तद्गत) रूपोने जाणुं हुं अने जोउं हुं; एहुं तेनुं दर्शन विपरीत होय छे माटे—आ कारणधी— यावत् ते अन्यथाभावे जाणे छ अने जूए छे.

५ प्र०—हे भगवन् ! माथी मिथ्यादृष्टि भावितातमा अनगार (पोतानी) वीर्यल्डिंधथी, वैक्रियल्डिंधथी अने विभंगज्ञानल्डिंधथी वाराणसी नगरी अने राजगृह नगरनी वसे एक मोटा जनपद वर्गनी विकुर्यणा करे अने तेम कर्या पछी ते वारणसी नगरी अने राजगृह नगरनी वसे एक मोटा जनपद वर्गने जाणे अने जुए ?

५. उ० 🗀 हं गौतम ! हा, ते, तेने जाणे अने जूए.

१ प्र०—हे भगवन् ! शुं ते, तेने तथाभावे जाणे जूए; के अन्यथाभावे जाणे जूए?

६. उ० — हे गौतम! ते, तेने तथामाने न जाणे अने न जूए; पण अन्यथामाने जाणे अने जूए.

७. प्र० — हे भगवन् ! ते प्रकारे जाणे अने जूए, यावत्— तेनुं शुं कारण ?

७. उ० — हे गौतम ! ते साधुना मनमां एम थाय छे के, आ वाराणसी नगरी छे अने आ राजगृह नगर छे, तथा ए बेनी वचे आवेछो आ एक मोटो जनपद वर्ग छे; पण ते नारी बीर्यछिय, वैक्रियछिय के विभंगज्ञानछिय नथी; तथा में मेळवेछां, प्राप्त करेळां अने मारी पासे रहेछां ऋदि, युति, यश, बळ, बीर्य के पुरुषकार पराक्रम नथी; तेवुं ते साधुनं दर्शन विपरीत थाय छे ते कारणथी यावत्—ते, ते प्रमाणे जाणे छे अने जूए छे.

ट. प्र०—हे भगवन् । वाराणसी नगरीमां रहेलो अमायी, सम्यग्दृष्टि भावितात्मा अनगार वीर्यव्हिध्यी, वैक्रियल्डिध्यी अने अवधिज्ञानल्डिध्यी राजगृह नगरनुं विकुर्वण करीने (तहत) रूपोने जाणे अने जूए ?

८. उ० हे गौतम ! हा, ते, ते रूपोने जाणे अने ए.

र. मूळच्छायाः—अनगारो भगवत् ! भावितात्मा मायी मिथ्यादृष्टिः यावत् -राजगृहे नगरे समवहत्यः, समवहत्य वाराणस्यां नगर्या रूपाणि जानाति, पश्यति ? हन्त, जानाति, पश्यति; तचैव यावत् तस्य एवं भवति -एवं खळ अहं वाराणस्यां नगर्या समवहत्यः, समवहत्य राजगृहे नगरे रुपाणि जानामि, पश्यामिः; तत् तस्य दर्शने विपयासो भवति, तत् तेनाऽथेंन यावत् अन्यथाभावं जानाति, पश्यति अनगारो भगवन् ! भावितात्मा मायी मिथ्यादृष्टिः वीर्यल्य्या, वैकियल्य्या, विभन्नज्ञानल्य्या वार्णण्युं नगरीम्, राजगृहं च नगरम्, अन्तरा एकं महान्तं जनपद्वर्णं समवहतः, समवहत्य वाराणसी नगरीम्, राजगृहं च नगरम्, अन्तरा एकं महान्तं जनपद्वर्णं जानाति, पश्यति ? हन्त, जानाति, पश्यति स भगवन् ! कि तथाभावं जानाति, पश्यति , अन्यथाभावं जानाति, पश्यति , तत् केनार्थेन यावत् पश्यति , अन्यथामावं जानाति, पश्यति , अन्यथामावं जानाति, पश्यति , तत् केनार्थेन यावत् पश्यति ? गीतम ! तस्य खळ एवं भवति एपा खळ वाराणसी नगरी, एतत् खळ राजगृहं नगरम्, एव खळ अन्तरा एको महान् जनपद्वर्णः; नो खळ एषा मम वीयल्यां , विभन्नज्ञानल्यां , विभवल्यां , विभवल्यां

www.jainelibrary.org

९. प्र०—से भते ! कि तहामार्व जाणइ, पासइ; अनहा-भावं जाणइ, पासइ ?

९. ड०—गोयमा ! तहाभावं जाणइ, पासइ; नो अवहा-भावं जाणइ, पासइ.

१०. प्र०-से केणहेणं भंते ! एवं वृचह ?

. १०. उ०—गोयमा! तस्स णं एवं भवइ—एवं खलु अहं रायगिहे नयरे समोहए, समोहणित्ता वाणारसीए नयरीए रूवाइं जाणामि, पासामि; से से दंसणे अविवचासे भवति, से तेणहेणं गोयमा! एवं बुचइ. बीओ आलावगो एवं चेव. नवरं—वाणा-रसीए नयरीए समोहणावेयव्वो [समोहणा नेयव्वा] रायगिहे नगरे रूवाई जाणइ, पासइ.

??. प्र०—अणगारे णं भंते ! भावियपा अमाथी सम्म-दिही वीरियलदीए, वेजन्वियलदीए, ओहिनाणलदीए रायगिहं नगरं, वाणारसिं नयिं च अंतरा एगं महं जणवयवग्गं समोहए, समोहणित्ता रायगिहं नगरं, वा ारसिं नयिं, तं च अंतरा एगं महं जणवयवग्गं जाणइ, पासइ ?

११. उ०--हंता, जाणइ, पासइ.

१२. प्र०—से भंते ! किं तहाभावं जाणइ, पासइ; अन्नहा-भावं जाणइ, पासइ ?

१२. उ० — गोयमा ! तहाभावं जाणइ, पासइ; नो अन-हाभावं जाणइ, पासइ.

१३. प्र०—से केणडेणं ?

१३. उ० — गोयमा! तस्स णं एवं भवति – गो खलु एस रायगिहे णगरे, णो खलु एस वाणारसी नगरी, णो खलु एस अंतरा एगे जणवयवग्गे; एस खलु ममं वीरियल बी, वेज व्विय-लबी, ओहिनाणल बी, इड्डी, जुत्ती, जसे, बले, वीरिये, पुरिस-कारपरक मे लबे, पंत्ते, अभिसमन्नागए; से से दंसणे अविवचासे भवइ, से तेण हेणं गोयमा! एवं वुचइ – तहाभावं जाण इ, पास इ; नो अनहाभावं जाण इ, पास इ. ९. प्र०—हे भगवन् ! शुं ते, ते ह्रपोने तथाभावे जाणे अने जूए, के अन्यथामावे जाणे, जूए ?

९. उ० — हे गौतम ! ते, ते रूपोने तथामावे जाने अने जूए, पण अन्यथामावे न जाणे अने न जूए.

१०. प्र०-हे भगवन् ! तेम थवानुं शुं कारण ?

१०. उ० — हे गौतम ! ते साधुना मनमां एम थाय छे के, वाराणसी नगरीमां रहेलो हुं राजगृह नगरमी विकुर्वणा करीने (तद्गत) रूपोने जाणुं छुं तथा जोउं छुं, तेवुं तेनुं दर्जन विपरितता विनानुं होय छे, ते कारणथी हे गौतम! 'ते तथाभावे जाणे छे अने जूए छे' एम कचुं छे. बीजो आलापक पण ए रीतिए कहेबो. विशेष ए के,—विकुर्वणा वाराणसीनी समजवी अने राजगृहमां रहीने रूपोनुं जोवुं अने जाणवुं समजवुं.

११. प्र०—हे भगवन् ! अमायी, सम्यग्दृष्टि भावितातमा अनगार वीर्यल्थियी, वैक्रियल्थियी अने अवधिज्ञानल्थियी राजगृह नगर अने वाराणसी नगरीनी वज्जे एक मोटो जनपद वर्ग विकुर्वे अने पछी राजगृह नगर अने वाराणसी नगरीनी वज्जे एक मोटा जनपद वर्ग मोटा जनपद वर्गने जाणे अने जूए ?

११. उ० - हे गौतम ! हा, ते, तेने जाणे अने जूए.

१२. प्रo — हे भगवन् ! शुं ते साधु, तेने तथाभावे जाणे अने जूए, के अन्यथाभावे जाणे अने जूए ?

१२. उ०—हे गौतम ! ते, तेने तथाभावे जाणे भने जूए, पण अन्यथाभावे न जाणे अने न जूए.

१३. प्र०-हे भगवन् ! तेनुं शुं कारण ?

१३. उठ — हे गौतम! ते साधुना मनमां एम थाय छे के, ए राजगृह नगर नथी, ए वाराणसी नगरी नंशी अने ए बेनी बच्चेनो एक मोटो जनपद वर्ग नशी; पण ए मारी वीर्यछिय, बैकियछिय, के अवधिज्ञानलिय छे; ए में मेळवेलां, प्राप्त करेलां अने मारी पासे रहेलां ऋद्वि, द्यति, यश, बळ, वीर्य अने पुरुषकार पराक्रम छे; तेनुं दर्शन अविपरीत होय छे. ते कारणधी हे गौतम! एम कहेबाय छे के, ते साधु तथामावे जाणे छे अने जूए छे, पण अन्यथामावे जाणतो नथी तेम जोनो नथी.

१. मूलच्छायाः—स भगवन्! किं तथाभावं जानाति, पश्यितः अन्यथाभावं जानाति, पश्यितः गौतमः! तथाभावं जानाति, पश्यितः नोऽन्यथाभावं जानाति, पश्यितः तत् केनाऽर्थेन भगवन्! एवम् उच्यते १ गौतमः! तस्य एवं भवित-एवं खल्ल अहं राजगृहे नगरे समवहतः, समवहस्य वाराणस्यां नगरीं ह्रपणि जानामि, पश्यिमः तत् तस्य दर्शने अविपयासो भवित, तत् तेनाऽर्थेन गौतमः! एवम् उच्यते. दितीयः आलापकः एवं चैवः नवःम्-वाणारस्यां नगर्या समवद्यातिव्यः [समवहतिनेतव्या] राजगृहे नगरे ह्रपणि जानाति, पश्यितः अनगारो भगवन्! भाविताऽऽत्मा अमायी सम्यगृहिः वीर्यत्रव्या, विक्रयत्रव्याः अवधिज्ञानस्या राजगृहं नगरम्, वाराणसीं नगरीम् चाऽन्तरा एकं महान्तं जनपदवर्गः समवहतः, समवहत्यः राजगृहं नगरम्, वाराणसीं नगरीम् चाऽन्तरा एकं महान्तं जनपदवर्गः समवहतः, समवहत्यः राजगृहं नगरम्, वाराणसीं नगरीम्, वश्यितः, पश्यितः स्मवहतः, समवहत्यः जानाति, पश्यितः अन्यथाभावं जानाति, पश्यितः स्मवहतः विष्यामावं जानाति, पश्यितः अन्यथाभावं जानाति, पश्यितः तत् केनाऽर्थेन १ गौतमः! तस्य एवं भवित—नो खल्ल एतद् राजगृहं नगरम्, नो खल्ल एषा वाराणसी नगरी, नो खल्ल एष अन्तरा एको जनगदवर्गः, एष खल्ल मम वीर्यलिव्यः, विक्रयलियः, अवधिज्ञानस्रविः, ऋदिः, सुतिः, यशः, वरुम्, वीर्यम्, पुरुपकारपराक्रमो स्वर्यः, प्राप्तः, अभिसमन्वागतः; तत् तस्य-दर्शमे अविगरीसो भवति, तत् तेनाथेन गौतमः! एवम् उच्यते—तथाभावं जानाति, पश्यितः, नोऽन्यधाभावं जानाति, पश्यितः—अनु०

- १४. प्र०-अणगारे णं भंते ! भावियणा बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगं महं गामरूवं वा, नगररूवं वा, जाव-संनिनेसरूवं वा विज्ञाब्वित्तए ?
- १४. च०-णो तिणहे समहे; एवं वितीओ वि आलावगो, णवरं-बाहिरए पोग्गळे परियाङ्ता पम्.
- २५. प०-अणगारे णं भंते ! भावियपा केवहयाइं पभू गामरूबाई विकुव्वित्तए ?
- १५. उ०--गोपमा ! से घहा नामए जुवति जुवाणे हत्थेणं हरथे गेण्हेजा, तं चेन जान-निकुन्निसु वा, निकुन्नंति वा, नि-कुब्धिस्संति वाः एवं जाव-संगिवेसरूवं वा.

- १४. प्र०—हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार बहारनां पुद्रलो मेळव्या सिवाय एक मोटा गामना रूपने, नगरना रूपने, यावत्-संनिवेशना रूपने विकुर्ववार्तसमर्थ छे ?
- १४. उ० हे गौतम! ए अर्थ समर्थ नथी. ए प्रमाणे बीजो आलापक पण कहेवो. विशेष ए के, बहारनां पुद्रलोने मेळवीने ते साधु तेवां रूपोने विकुर्ववाने समर्थ छे.
- १५. प्र०—हे भगवन् ! भावितासा अनगार केटलां प्राम-रूपोने विक्वर्ववाने समर्थ छे ?
- १५. उ० हे गौतम ! जेम कोह एक युवान पुरुष पोताना हाथे युवति स्त्रीना हाथने पकडे-मजबूत काकडा वाळे (ए बधुं पूर्व प्रमाणे कहेबुं,) यावत्-ए रीते ते साधु प्रामरूपोने यावत्-संनिवेशरूपोने विक्वें. (ते साधुनुं ए मात्र सामर्थ्य हे, पण विकुर्वण नथी,)
- विकुर्वणाधिकारसंबन्ध एव षष्ठ उद्देशकः, तस्य चादिसूत्रमः—' अणगारे णं ' इत्यादि. अनगारो गृहवासयागात्, भावि-ताऽऽत्मा खसमयानुसारिप्रशमादिभिः, ' मायी ' इत्युपलक्षणत्वात् कषायवान् , सम्यग्दिष्टरप्येत्रं स्याद् इत्यत आहः—मिथ्यादिष्टरन्यती-र्थिक इत्यर्थः. वीर्यञ्ब्ध्यादिभिः करणभूताभिः ' वाणारसीं नगरीं समोहए ' ति विकुर्वितवान् , राजगृहे नगरे रूपाणि पशु-पुरुष-प्रासादप्रमृतीनि जानाति, पश्यति विभङ्गज्ञानलब्ध्या. 'णो तहाभावं 'ति यथा वस्तु तथा भावोऽभिसन्विर्यत्र ज्ञाने तत् तथाभावम्, अथवा यथैव संवेद्यते तथैव भावो बाह्यं वस्तु यत्र तत् तथाभावम्. अन्यथा भावो यत्र तदन्यथाभावम्, क्रियाविशेषणे च इमे. स हि मन्यते:-अहं राजगृहं नगरं समबहतो वाराणस्यां रूपाणि लानामि, पश्यामि-इत्येवं ' से ' ति तस्य अनगारस्य इति, ' से ' ति असौ दर्शने विपर्यासी विपर्ययो भवति, अन्यदीयरूपाणाम् अन्यदीयतया विकलिगतत्वाद् दिग्मोहाद् इव पूर्वाम् अपि पश्चिमां मन्यमानस्य इति. क्वचित्-'से से दंसणे विवरीए विवचासे' ति दृश्यते, तत्र च तस्य तद् दर्शनं विपरीतम्, क्षेत्रव्यस्येनेति कृत्वा विपर्यासो मिध्या इत्यर्थः. एवं द्वितीयसूत्रमपि. तृतीये तु 'वाराणासिं नगरिं, रायिगहं नयरं, अंतरा य एगं महं जणवयवग्गं समोहए'ति वाराणसीम् , राजगृहम् , तयोरेव चान्तरालवार्तिनं जनपदवर्गम्—देशसमूहम्; समबहतो विकुर्वितवान्, तथैव च तानि विभङ्गतो जानाति, पश्यति—केवलं नो तथा-भावम्, यतोऽसौ वैक्रियाण्यपि तानि मन्यते स्वाभाविकानि इति. ' जसे ' त्ति यशोहेतुत्वाद् यशः, ' नगर रूवं वा ' इह यावत्-करणाद् इदं दृश्यम्:-''निगमरूवं वा, रायहाणिरूवं वा, खेडरूवं वा, कन्चडरूवं वा, मडंबरूवं वा, दोणमुहरूवं वा, पटणरूवं वा, आगररूनं वा, आसमरूवं वा, संवाहरूनं व '' त्ति.

१. पांचमा उद्देशकनी पेठे आ छट्टो उद्देशक पण, विकुर्वणा संबंधी हकीकतने लगतो ज छे. तेनुं पहेलुं सूत्र आ छे:—['अणगारे णं' अनगार. इत्यादि.] घरवासनो त्यागी छे माटे अनगार, खशालमां कहेला शम, दम विगरेना नियमोने धरनार ते मावितातमा, ' मायी ' ए सूचक शब्द होयाथी ' मायी ' एटले कोघादि कपायवालो, ए प्रकारनां विशेषणोवालो तो सम्यक्तवी जीव पण होय, अने तेनुं यहण अहीं नथी करवुं माटे

कहें छे के, एवा प्रकारनो निथ्यादृष्टि-अन्यमतवाळो-जीव, किया करवामां साधनरूप वीर्यछन्धि वगेरे निमित्तोथी [' वाराणसी नगरी समोहृष्ट ' १. मूकेच्छायाः—अनगारो भगवन् । भावितात्मा बाह्यान् पुदूलान् अपर्यादाय प्रभुः एकं महद् प्रामहतं वा, नगरहां वा, यावत्-संनिवेशहतं

- वा निकृवितुम् ! नाज्यम् अर्कः समर्थः, एवं बितीयोऽपि आलापकः, नवरम्-बाह्मन् पुद्रलान् पर्वादाय प्रभुः. अनगारी भगवन् । भावितात्मा कियन्ति प्रभु:-प्रामरूपाणि विकृषितुम् ? गौतम ! स यथा नाम युवति युवा इस्तेन इस्ते गृषि ।त् , तचैव यावत् न्यकुविषुः ना, विकृषिनत वा, विकृषिण्यन्ति वा, एवं यावत्-संनिवेशरूपं वाः--अञ्च०
- १. वाराणक्षी नगरी, पूर्वे काशी देशनी राजधानी हती. अत्यारै ए नगर काशी प्रांत-(जिल्ला)-तुं मुख्य शहेर गणाय छे. तेना वसवाट वरुणा अमे असी नामनी गंगाने मळती नानी बदीओ वसे, महानदी गंगाने किनारे छे अने हती। एथी ज ते नगरी बाराणसी एवा शैगिक-(घटता अर्थवाळा)-नामधी गवाई छे. काळना प्रभावे ज्यारे नीजी अनेक पवित्र पुरीओ नष्टप्राय थइ छे त्यारे आ नगरीनुं अस्तित्व जळवायुं छे तेमां ए स्थळ सर्व धार्म-अद्धं पुण्यस्थान छै ते एक कारण छे. आपणी मान्यताए ए स्थळ धणुं पवित्र हैावाबी अंगादिसूत्रोमां घणे स्थळे तेतुं नाम मळे छे. तेमां 'स्थानांग',-(क॰ आ॰प्ट॰५४४.) 'ज्ञातांग',-(क॰ आ॰ प्ट॰ ५०८.) 'डपासक दशांग',-(चुह्नणीपिगानो अधिकार.) तथा आर्थ, अनार्थना विभेदवाळुं प्रथम पद 'पन्नवणा' (स॰५५.) आदि स्थळो मुख्य छे. तेनी पूर्वनी उज्जवळताने जणावनारां श्रीपार्श्वनाथ प्रमु विगेरेना कल्याणकोनां स्थळो; (काशी पासेनो) सारनाथनो बुदस्तूप अने हिंतुओनां धर्मधामो आजे हयाती धरावे छे. ते विषे श्रीज्ञातासूत्रमां दंको परिचय आ रूपे आवे छे:—

" ते णं काले णं, ते णं समए णं वाराणसी णामं णयरी होत्था, वण्ण-महाणईए मथंगतीरहहे णामं दहे होत्था० " क० आ० १० ५०७).

" ते काळे, ते समये वाणारूसी नामनी नगरी हती, वर्णक ते बाजा-ओं • तीसे मं वाराणसीए णयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमें दिसिभाए गंगाएं रसी नगरीनी बहार उत्तर अने पूर्व दिशाना मध्य कोणमां, गंगा महा-नदीते किनारे मयंगतीरद्रह*्नामानो* द्रह्-ह्द्द-ह्तो० '' (क० आ० प्र०० 400).

स्क्मश्रदी.

ति] ' समोहए ' एटले विकुर्कण करे छे-राजगृहमां रह्यो रह्यो वाराणसी नगरीनी विकुर्वणा करीने तद्गत पशु, पुरुष तथा महेल विगेरे वस्तुओने विभंगज्ञान द्वारा जाणे छे अने जूए छे. ['नो तहाभावं 'ति] जेवी वस्तु छे एवा भाववाळु जे ज्ञान ते-तथाभाव, अथवा जेवुं जणाय तेवा ज नाख अनुसदराहुं इ.त ते तथाभाव, तेथी उलटा अनुभववाळुं ज्ञान ते-अन्यथाभाव, तथाभाव अने अन्यथाभाव ए वन्ने कियाविरोषण छे. ते विनुर्वणा करनार विभंगज्ञानी जाणे छे के, में राजगृह नगरनी विकुर्वणा करी छे अने हुं वाराणसीमां रूपोने जाणुं खुं अने जोउं खुं, तेनो (ते अनगारनो) [' से ' ति] ए अनुभव उंभो छे, कारण के एणे बीजां रूपोने बीजी रीते कल्पेळां छे–जाणेळां छे–जेम दिग्मूढ गनुष्य पूर्व दिशाने पण पश्चिम दिशा माने छे ते रीते ते अनगारनो अनुभव छे गाँट ते विपरीत अनुभव छे. [' से से दंसणे विषरीए, विवचासे ' ति] कोइ प्रतिमां पूर्व प्रमाणे पाठभेद.

श्रीउववाईसूत्रमां आवेलुं 'चंपा' नगरीतुं वर्णन आ 'वाराणसी'ने पण लागु १डे छे (४० ६०१,४०९) प्रतिद्व वैयाकरण महामाध्य- कारनो आ—" अनुगर्क वासणसी "–(वासणसी गंगाने किनारे छंबाणे छे) प्रसिद्ध प्रधोग जणावे <mark>छे के, एमने समये पण वाराणसी गंगाने पने</mark> हती. ए हकीकतने मध्यकाळना पंडितोए पण टेको आपेळो छे. काशी देशनी राजधानी तरीकेनु तेनुं गौरव पन्नवणाजीमां आ रीतिए जणाचैनुं छे:---

" + + वाराणसी चेव कासी य० "-(क० आ० ५० ९०).

" वाराणसी, ए आर्थ देश काशीनी राजधानी छे-देश काशी अने मुख्य नगरी घाराणसी " (क० आ० प्र. ९०).

हेमचंद्राचार्यंजी ए योगिक नामनो अर्थ आ प्रमाणे जणावे छे:---

" + + वरणा च असिश्व वरणाऽसी नदी, तयोरदूरभदा नगरी + + वाराणसी. यद्वा वराणी बीरणाभिधानम्, वराणाः सन्ति अत्र वराणसा नदी, + + तस्या अदूरभवा इति वाः देशो वा वराणः, तत्र भवा चा. " (क्ष० चि० य० मं० ५० ३८९).

" × × बरणा भने असी ए बे नदीओ है, तेनी पासे रहेली-सएली-नगरी 🗙 🛪 वे चाराणसी ' अथवा, जैमां चराण होय ते नधीतुं नाम बराणसा (बराण एटले एक जातनुं धास) तेनी पासे रहेली नगरी दे बाराणसी. अथवा बराण-ए, देशनुं नाम छे, तेमां रहेली मगरी ए ' वाराणसी '. (ख॰ वि॰ य॰ घं० ६० ३८९).

शा कोशमां वर्तमान बनारसनां आ चार नामो जणाव्यां छे:—काशि, वराणसी, वाराणसी अने शिवपुरी. ए उपरथी जगाय छे के, प्रशापनामां, जणावेला देशसूचक 'काशी ' शब्दने, एक नगर-वाचक थयां आज घणो समय वीती गयो छै. तथा छेवट संवत १६६९मो रचाएला ' सम्मेतिशिख-रतम '-मां ' वाराणसी ' नगरीने त्रिवेणी-संगम तीर्थ-प्रयाग-(अल्हाबाद)-थी ३५ कोश उपर महानदी गंगाने किनारे बसेली, तथा *घन-घान*द आदिथी पूर्ण जणावी छे:---

> " कोस पांत्रीस बाराणसी ए गंगतीर पवित्र तज, परतथी (खी) अलका पुरी जसी ए दीसइ जहां बहु वित्त तख. इण नयरिं दो जिनवर ए जनम्या पास सुपास तउ, वेणि ठामि दोइ जिणहरु ए पुरु विं करइ प्रकास तउ ":--अनु०

१. जैन आंग-स्त्र-मां विशेषे करीने राजगृह्नो उल्लेख घणे ठेकाणे मळी आवे छे अने कैटलेक ठेकाणे बाणारसीनो निर्देश पण सुलम जणाय छे. बढिोना सूत्रपिटकना 'मिन्समिनकाय ' नामना प्रथमां श्रीबुद्धना विद्वारोनी चौंघ जोतां घणे स्थळे 'काशी ' बाणारसी 'अने 'राजगृह 'नो उहेख पण मळी आवे छे अने ते आ प्रमाणे छैं:—

्वास्तविक सत्य शोधाया पछी भगवान युद्धदेव तेने प्रकाशित करवा काशी तरफ पधारता हता, तेवामां रस्तामां तेमने आजीविक संप्रदायनी उपक नामे तपस्वी मळयो. तेणे तेमने-शीबुददेवने-पूछ्युं के, तमारो शासक-गुरु-कोण छे ? तमने कोनो धर्म वने छे ? तेना जवाबमां बीजुं कैटखंक जणाव्या पछी ते भगवाने आ गाथा कहेळी हे:---]

- १. " धम्मचकं पवतेतुं गच्छामि कासिनं पुरं, अंधभूतस्मि छोकसिम आहड्यं अमतदंदुमिं " ति-मिज्झमिनि (सू० २६-पृ० १२२.)
- २. " अहसं खो अहं भिक्खवे दिव्वेन चवखुना विसुदेन अतिकंतमा-नुसकेन पंचवरिगये भित्रख्वाराणसियं विद्दंते इसिपतने मिगदाये "-मज्ज्ञिमनि० (स्० २६-५० १२१).
- ३. "अथ ख्वाहं भिक्खवे अनुपृष्वेन चारिकं चरमानो येन बाराणसी, इसिपतनं, सिगदायो × तेनुपसंकामें"–म० नि०−(स० २६−४० १२२)
- १. " अथ हवाई आबुसो पुरुवण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरं आदाय राजगहं पिंडाय पाबिसिं "-म० नि० (स्० ५-५० २३)
- २. " एकमिदा हं महानाम समयं राजगहे बिहरामि गिज्झकूटे पन्तरते "-म० ० (स० १४-५० ६८ तथा सू० २९-५० १३५)
- ३. " एवं में सुतं–एकं समयं भगवा राजगहे विहरति चेळुवने कलंदकतिवापे "-म० नि० (स्० २४ पृ० १०४ तथा स० ४४ पृ० २०२)

- १. '' अंध थएला लोकमां अमृतमुं बाजुं बगाडवाने अने घमेचक्रनें प्रवर्तावव ने माटे काशी नगर तरफ जाउ छुं."
- २. आ सामेना उेखमां ' बाराणती 'नगरीनो अने तैसां आवेलां ' इतिपतन ' तथा ' मिगदाय ' नामनां स्यळोनो पण उहेल करेलो हे.
 - २. आ सामेना पाठमां पण ' वाणारसी ' नो निर्देश मळी आवे छे.
- १. " हे आयुष्मन् ! इवे हुं पूर्व हानी वखत खवा दहने, पात्र अने चीवरने लड्ने राजग्रहमां भिक्षा माटे पेठी "
- २. ''एक वखत महानाम नामनें। हुं राजगृह नगरमां गिध्नकूट पर्वतमां विद्दर्भ हुं " आ उद्देखमां ज्ञातपुत्रना अनुगामी निर्धयोगी आकरी तपथर्यानो पण निदेश करेलो छे. अहीं जणावेलो 'महानाम ' नामनो तपस्वी श्रीबुद्धनो काकानो दीकरो भाइ थाय.
- ३. " में एम स!भळ्युं छे-एक वस्नत भगवान् (बुद्धदेव) राजगृह नगरमां वेणुवन-(वांसडानुं वन) मां कळंदकना निवाप पासे विद्रे छे."--आ त्रणे उडेलमां ' राजगृह ' ने निर्देश करेली छे.

आ प्रकारे बौद्धमंथमां के के काशी काशी, वाराणती, राजगृह अने तेनी आसपामनां वन, पर्वत तथा निवाप (खेतर) नो उक्रेस पण मधी भावे छे आ मंधनां नगर तरीके पण 'काशां 'नो निर्देश करेलो छे:--अनु •

पाठ छैं. तेनो अर्थ:—तेनुं ते दर्शन विपरीत छे, कारण के ते दर्शन क्षेत्रनी अवलावदलीवालुं छे-मांट ज मिथ्या—खोटुं-छे. ए प्रमाण बीजुं सूत्र पण जाणवुं. त्रीजा सूत्रमां तो ['वाणारसिं नगरिं, रायिग्हं नगरं, अंतरा य एमं महं जणवयवग्गं समोहए 'ति] वाराणसी (बनारस) अने राजगृह (राजगिर) नगरी वस्ते देशना समृहनी विकुर्वणा करी अने ते ज प्रमाणे तेने विभंगथी जाणे छे अने जूए छे, मात्र ते जे जाणे छे अने जूए छे ते तथाभावे (सत्यपणे) नथी. कारण के ते विभंगज्ञानी अनगार, ते वैकियरूपोने पण स्वामाविक स्पो माने छे. [' जसे 'ति] यश्चं कारण होवाथी यश्च. [' नगरेस्वं वा '] ए ठेकाणे ' यावत् ' शब्द मूक्यो छे माटे नीचनी हकीकत वधारे जाणवी:—निगमना स्पने, राजधानीना स्पने, खेटना स्पने, कर्बटना स्पने, महंबना स्पने, द्रोणमुखना स्पने, पहनना स्पने, आकरना स्पने, आत्रमना स्पने अने संबाधना स्पने: अर्थात् जेम नगरना स्पनी विकर्वणा करी तेम ए वधानां स्पोनी पण विकुर्वणा करी समजवी.

क्ष्मैट— -द्रोणसुख— -संबाधः

चमर.

१६. प्र०—चैमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स, असुररण्यो कइ आयरनखदेवसाहस्सीओ पण्णताओ ?

ृं १६. उ०—गोयमा ! चतारि चउसद्वीओ आयरपखदेव-साहस्तीओ पण्णताओ; ते णं आयरक्खा वण्णओ, ९वं सब्बेसिं इंदाणं जस्स अतिका आयरक्खा ते भाणिअन्या. १६. प्र०—हे भगवन् । असुरेंद्र, असुरगज चमरना आत्म-रक्षक देवो केटला हजार कह्या छे ?

१: उ०—हे गौतम! चमरना आत्मरक्षक देवो २५६ सहस्र छे-(२,५६,०००) वहा छे. अहीं आत्मरक्षक देवोनुं वर्णन समजवुं अने बधा य इंद्रोमां जेने जेटला आत्मरक्षक देवो होय ते बधा पण समजवा.

- 9. अहीं उपर जणावेला ' माम ' विगेरेना अर्थेंनि श्रीअभयदेव सूरिए आगळना कोई प्रकरणमां (भ० खं॰ १, १०८६) जणावी दोधा छे; सैंम श्रीमलयगिरि आचार्ये पोतानी ' रायपसेणी ' (उपा॰ २) नी टीकामां पण जणावेला छे; किंतु पन्नवणा (उपा॰ ४) नी युक्तिमां श्रीमलयगिरि आचार्ये मामादि शह्लोना अर्थेंने जणावतां आ जातनी विशेषता जणावेली छे:—
- " x x प्रसति बुद्धादीन् गुणान् इति प्रामः. यदि वा सम्यः शास्त्रप्र-सिद्धानाम् अष्टादशकराणाम् इति प्रामः ". x x
- " क्षुत्रकप्राकारवेष्टितं कर्वटम्. "
 " अर्थतृतीयगव्यूताऽन्तर्मामरहितं मडम्बम्. "
- ",पहण दित-पहतम्, पत्तनं वा उभयत्राऽपि प्राकृतत्वेन निर्देशस्य स्मानत्यातः, नत्र यत्रोभिनेव गम्यं तत् पहतम्, यत्पुनः शकद-घेष्टक-नेभिनेश गम्यं तत् पत्तनम्, यथा- भृगुक्त छम्, उक्तं चः-" पत्तनं शक्तः हैगम्य घोटकैनीभिरेव च, नैभिरेव तु यद् गम्यं पहतं तत् प्रचक्षते."
 - " द्रीणमुखम्: बाहुल्येन जलनिर्गमप्रवेशम्. "
 - " संगाधः यात्रासमागतप्रभूतजननिवेशः."

' प्राम एटले बुद्धि आदि गुणोने प्रसनारं-साइ जनारं-स्थल. अथवा शास्त्रमां प्रसिद्धि पामेला अढार करो, जे स्थळे लागु धई शकता होय ते-प्राम."

" कर्वेट एटले नाना किलाशी घेराएउं स्थान "

"फरतां आसपास अङ्गी गव्यूत-पांच कोश-सुधीमां अंतर प्रामो विनात स्थान ते मडंब."

"पहण'—ए निर्देश, प्राकृत होताथी तेनां संस्कृतमां 'पहन', अथवा 'पत्तन' एवा बे शहूं। बनी शके छे. नेमां जे स्थळे नाव हुम्सए ज जवाय तेने 'पहन' कहेवाय,—(जेन द्वातिका.) तथा जे स्थळे नाव, गाडां अने घाडा विगेरे द्वारा पण जई शकाय तेने पत्तंन-(बंदर) कहेवाय, जेंग-भगुकच्छ-(भरूच). बीजाओनी पण एज मत छे के:— ''गाडां, घोडाओ तथा नाव द्वाराष्ट्र जवाता स्थळने 'पत्तन' कहेवाय अने केवळ नाव वाटे ज जवाय तेवा स्थळने 'पहन' कहेवाय."

" घणे भागे जळ मार्ग द्वारा ज्यांथी वहार नीकळाय के अंदर पेसाय तेवा स्थळने 'द्रोणमुख 'कहेवाय.

'' यात्राए नीकळेला घणा माणसोना निवास स्थानने-पडावने-'संबाध 'कहेवाय, ''

वळी है न बंद्राचार्यजीना जणाववां प्रमाणे श्रीवाचस्पति, तो तेना अर्थोंने तहन जूदी रीत ज जणावे छे:---

"स्वात् स्थानीयं तु अतिल्क्यः, प्रामी प्रामशताष्टके, तदर्भे तु द्रोणमुखं तम् कर्वटमिल्याम् कर्वटाऽपे कर्वटकं स्थात तद्भे तु कार्वटम्, तद्भे पत्तनं तम् पत्तनं पुरुभेदनम्, निगमस्तु पत्तनाभे तद्भे तु निवेशनम्, कर्वटादभमो दन्नः पत्तनाद् उत्तमश्च सः, उद्दन्नश्च निवेशश्च स ए। दन्न
इस्यपि—" (अक्षिक प्रंक प्रक १८६)

" घणा लंबाईबाळा स्थळने 'स्थानीय' कहे छे, एक सो आठ गामना समुदायने 'प्राम' कहवाय छ, तेना अडधा भागने माटे 'होणमुख' वा कर्वट वह वपनाय छ (अ. वर्वट शह ह्यीलिंगी नथ) 'कर्वट 'ना अडधा भागने 'वर्बट केहेवाय, तेना अडधा भागने 'कार्वट 'कहेवाय अने 'पत्तन' वा पुटमेदन, एना अडधा भाग जेवडा स्थानने कहे छे. पत्तना अर्ध प्रमाण भागने 'निगम' कहे छे, तथा निगमना अडधा भागने 'निवेशन' कहे छे. हंग, छहंग अने निवेश ए बधा एक सरखा छे':—(अ० चि० य० प्रं० पृ० ३८८) अनु०

१. मूलच्छायाः—चमरस्य भगवन् । अयुरेन्द्रस्य, अयुरराजस्य कित आत्माक्षदेवसाहरुयः प्रज्ञप्ताः ? गीतम् । चतस्रश्रतुष्यश्द्य आत्मरक्ष-देवसाहरुयः प्रज्ञप्ताः; ते आत्मरक्षा-वर्णकः, एवं सर्वेषाम् इन्द्राणां यस्यं पायन्त आत्मरक्षकास्ते मणिलव्याः—अनु — सेवं भंते !, भंते ! ति.

--हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे एम कही यावत्-विहरे छे.

भगवंत-अजासुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुचे ततिअसये छ्ट्ठो उद्देश सम्मची-

२, विकुर्वणाऽधिकारात् तत्समर्थदेवविशेषप्ररूपणाय सूत्राणि:-- ' वण्णभो ' ति आत्नरक्षदेवानां वर्णको वाच्यः, स चायमः-'' तेत्रबच्द-विम्मअकवया, उप्पीक्षिअसरासणपहिआ, निणद्भगेवेज्जा, बद्धआविद्धविमलवराचिधपद्दा, गहिआउहपहरणा, 'तिण्णयाई, तिसंधिआई वहरामयकोडीणि धणूई आभीगिव्हा पयओ परिमाइअकंडकलाया, नीलपाणिणों, पीअपाणिणों, रत्तपाणिणों, एवं चारु-चाव-चम्म-दंड-खग्ग -पासपाणिणो, नील-पीअ-रत्तचारुचाव-चम्म-दंड-खग्ग-पासवरधरा, आयरक्सा, रक्स्लोषगया, गुत्ता, गुत्तपाछित्रा, जुत्ता, जुत्तपाछिभा, पत्तेयं पत्तेयं समयओ, विणयओ, किंकरमूआ इव चिहंति ^{११} ति. अस्य अयम् अर्थः—सन्नाह-निकया कृतसन्नाहाः बद्धः कराबन्धनतः, वर्मितश्च वर्मीकृतः शरीराऽऽरोपणतः, कवचः कङ्कटो यैस्रो तथा, ततः सन्नद्धशन्देन कर्मधारयः, तथा उत्पीडिता प्रसम्राऽऽरोपणेन शरासनपट्टिका धनुर्पष्टिर्येस्ते तथा, अथवा उत्पीडिता-बाही बद्धा शरासनपट्टिका धनुर्धर-प्रतीता यैस्ते तथा, पिनद्धं परिहितम्, प्रेत्रेयकं प्रीत्रःभरणं यैस्ते तथा, तथा बद्धो प्रन्थिदानेन, आत्रिद्धश्च शिरसि अरिपणेन विमछो ंबरश्च चिह्नपट्टी बोधतासूचको नेत्रादिवल्लरूपः, सौबर्णी वा पट्टी यैस्ते तथा; तथा गृहीतानि आयुघानि प्रहरणाय यैस्ते तथा, अथवा गृहीतानि आयुधानि क्षेत्यास्त्राणि, प्रहरणानि च तदितराणि यैस्ते तथा, त्रिनतानि—मध्य-पार्धद्वयख्क्षणे स्थानत्रयेऽवनतानि, त्रितंधितानि-त्रिषु स्थानकेषु कतसंधिकानि नैकाङ्किकानि—इत्यर्थः; वज्ञमयकोटीनि धन्ंषि अभिगृद्य पदतः-पदे मुष्टिस्थाने तिष्ठन्तीति सम्बन्धः. परिमात्रिक:-सर्वतो मात्रावान् , काण्डकलापो येषां ते तथा, नीलपाणयः-इसादिषु नीलादिवर्णपुङ्क वाद् नीलादयो बाणभेदाः संमान्यन्ते, चारुचापपाणयः-इत्यत्र च चापं धनुरेव अनारोपितज्यम् , अतो न पुनरुक्तता, चर्मपाणयः-इत्यत्र चर्मशब्देन स्फुरकः उच्यते; दण्डादयः प्रतीताः उक्तमेवार्थं संप्रहणेन आहः—' नील-पीअ ' इत्यादि; अथवा नीलादीन् सर्वानेव सुगपत् केचिद् धारयन्ति देवशकेरिति दर्शयन्नाह:-' नील-पीज' इत्यावि. ते चाऽःमरक्षा न संज्ञामात्रेणेन इत्याह:-आत्मरक्षा:-स्वान्यात्मरक्षा इत्यर्थ:, ते एव विशिष्यन्ते-रक्षोपगता:-रक्षाम् उपगता:-सततं प्रयुक्तरक्षा इत्यर्थः. एतदेव कथम् १ इत्याह:-गुप्ता अभेदवृक्त्यः, तथा गुप्तपालीकास्तदन्यतो व्यावृत्तमनोवृत्तिकाः, (मण्डळीका) युक्ताः परस्परसंबद्धाः, युक्तपाळीकाः निरन्तरमण्डलिकाः, प्रत्येकम् एकैकशः, समयतः पदातिसमा-चारेण, विनयतः-विनयेन, किंकरभूता इव-प्रेष्यत्वं प्राप्ता इव इति. अयं च पुस्तकान्तरे साक्षाट् दृश्यते एव इति. 'एवं सन्वेसिं इंदाणं 'ति एवमिति चमरवत् सर्वेषाम् इन्द्राणाम् आत्मरक्षा बाच्याः, ते चार्थत एवम्:-सर्वेषामिन्द्राणां सामानिकचतुर्गुणाः आस्मरक्षाः, तत्र चतुःपष्टिः सहस्राणि चमरेन्द्रस्य सामानिकानाम् , बलेस्तु पष्टिः; शेपभवनपतीन्द्राणां प्रस्तेकं पट् सहस्राणि, शक्रस्य चतुरशीतिः, ईशानस्य अशीतिः, सनःकुमारस्य द्विसतिः, माहेन्द्रस्य सप्ततिः, ब्रह्मगः पष्टिः, छान्तकस्य पश्चाशत् , शुक्रस्य चत्वा-रिशब, सहस्रारस्य त्रिंशत्, प्राणतस्य विंशतिः, अन्युतस्य दश सहस्राणि सामानिकानामिति. यदाहः-'' चउँसही सही खलु छच सहस्सा ओ असुरवज्ञाणं, सामाणिआ उ एए चउग्गुणा आयरक्खा ओै. चउरासीइ असीई बावत्तारे सत्तरि य सट्टी य, पन्ना चत्तालीसा तीसा वीसा दस सहस्य '' ति.

भगवत्सुधर्मस्वामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे ततीयशते पष्ठ उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

२. आगळना प्रकरणमां विकुर्वणा संबंधी हकीकत जणावी छे अने हवे ए ज विकुर्वण करवामां समर्थ एवा देव विशेषो संबंधे निरूपण करवानुं छे. ['दण्णओ 'ति] अहीं आस्मरक्षक देवोनुं वर्णन कहेवुं अने ते आ प्रमाणे छे:—'' बरावर सज्ज, दोरीधी मजबूत रीते बांधेळा अने शरीर उपर चडावेळा वस्तरवाळा, लओए दोरी चडावीने तीरकामठाने (धनुर्यष्टिने) तैयार कर्युं छ एवा, अथवा जेओर वाणावळीओने—धनुर्धरोने—जाणीती त्यासनपट्टिकाने हाथमां बांधेळी छे एवा, डोकमां घरेणांने पहेरनारा, जेओए श्रूखीरतानो सूचक, नेतर वगेरेना तंतुथी बनेळो अथवा सोनानो बनेळो, पवित्र अने उत्तम तमगो गांठ वाळीने माथामां आरोप्यो छे एवा, जेओए प्रहार करवा माटे आयुधोनुं प्रहण कर्युं छे एवा अथवा फेंकवानां अने फेंक्या सिवाय काममां आवतां शस्त्रोने धारण करनारा, वसे अने वसे पडखे—त्रण ठेकाणे—समी गएछां, त्रण ठेकाणे सांधा-

मात्मरक्षक देवी तेनी वर्णक.

१. मूरुच्छायाः -तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इतिः - अमु०

१. प्र० छायाः — समझ-बद्ध-विमन्दवाः, उत्पीडितशरासनपहिकाः, पिनद्वप्रेवेयकाः, बद्ध-आविद्ध-विमन्दविष्टाः, रहीताऽऽयुषप्रदेश्याः, विनन्दानि, त्रिसन्धितानि वज्ञमयकोटीनि धन्षि अभिष्ट^{त्}य पदतः परिमात्रिकशण्डकलापाः, नीलगण्यः, पीतपाण्यः, रक्तपाण्यः, एवं चारचाप-चर्म-२ण्ड-खङ्ग-पाश्चरधाः, आत्मरक्षाः, रक्षोपगताः, गुप्ताः, गुप्तपालिकाः, युक्ताः, युक्तपालिकाः, प्रत्येकं प्रत्येकं समयतः, विनयतः किङ्करभूता इव तिष्ठन्ति-इतिः. २ चतुष्विदः पिटः खलु पर च सहस्राणि तु असुरवर्जाणाम्, सामानिकास्तुः पते चतुर्गणा आत्मरक्षास्तुः चतुरकोतिः अद्योतिः द्वासप्ततिः सप्ततिश्च पिष्टश्च, पद्याशन् चःवारिसत् निश्चद्वं पश्चित्रंश सहस्राणि इतिः देशं पाना प्रज्ञापन्ताः स्थानपदे १३४-(१० ९४ स०). ३. इयमपि तत्रव पदे १४८-(१० १०४):—अनु०

चाप-धनुष.

वाळां-सळंग नहीं बनेलां-अने वज़थी बनेली कोटि-आगला भाग-वाळां धनुषोने हाथमां ग्रहण करीने उभा रहेनारा, सर्वतः मात्रा मधीदा-वाळा तीरना समूहने धारण करनारा, हाथमां नीछने (केटलाक वाणोनो पाछलो माग नीलादि वर्णवाळो होय छ माटे अहीं नील, पीत अने रक्त विगेरे-ए-बधा-एक जातिना बाणना भेदो होय, एम संभवे छे.) धरनारा, पीतने अने रक्तने हाथमां धरनारा, ए प्रमाणे सुंदर चापने हाथमां धरनारा, (शंo - चाप अने धनुषु ए बन्ने एक ज बस्तुनां नाम छे तो आगळ ' धनुषने घारण करनारा ' एम कहेवाथी ' चापने घरनारा ' ए अर्थ पण आवी जाय छे तेम छतां (अहीं) फरीवार ' चापने धरनारा ' एम शा माटे कक्षुं ? स० -- आ स्थळे पुनकक्ति दूषण आववानो संभव नथी, कारण के 'चाष ' अने 'धनुष् ' ए बन्ने शब्दना अर्थमां थोडो केर छे: -- दोरी नहीं चडावेलुं धनुष ते 'चाप ' अने दोरी चडावीन सज्ज करेलुं धनुष ते धनुष. आ रीतिए ए बन्ने शब्दना अर्थमां थोडो पण मेद छे.) तथा सुंदर ढालने, दंडने, तरवारने अने पासलाने हाधमां धारण करनारा. दिव्य शक्तिना धारक होवाथी केटलाक देवो नील, पीत, रक्त एवां सुंदर चाप, तरवार, ढाल अने पासला वगेरेने एक साथे हाथमां धरनारा छे. तथा पोताना धणिनुं रखोपुं करनारा छे माटे पोताना ' आत्मरक्षक ' नामने दीपावनारा छे, रखोपाना काममां योजेला, अभेद वृत्तिवाळा, खामिनी रक्षा करवामां ज मनने जोडनारा-बीजे जती मनोवृत्तिने रोधनारा, परस्पर संबंधवाळा अने परस्पर जोडाएला मंडळवाळा. ए वधा देवो वारा फरती एक एक, उचित काळे पगीनी पेठे विनयपूर्वक आंगे छे अर्थात् तेओ चाकरनी जेम रहे छे " बीजा पुस्तकमां तो आ बघो पाठ मूळमां ज मांडेलो जणाय छे. [' एवं सब्वेसिं इंदाणं 'ति] ए रीते-चमेरेंद्रनी पेठे-वधा इंद्रोना आत्मरक्षक देवो संबंधी हकीकत जाणवी. ते आत्मरक्षक देवोनी संख्या आ रीतिए छे:--हर एक इंद्रदेवने सामानिक देवो करतां आत्मरक्षक देवो चार गणा होय छे. चरमेंद्रने चोसठ हजार सामानिक देवो छे, बिछ इंद्रेन साठ हजार सामानिक देवो छे; अने भुवनपतिना बाकीना अत्येक इंद्रदेवने छ छ हजार सामानिक देवो होय छे. शक इंद्रने चौरासी हजार सामानिक देवो छे, ईशान इंद्रने एंशी हजार सामानिक देवो छे, तथा सनस्कुमारने बाँतेर हजार, माहेंद्रने सित्तेर हजार, ब्रह्मेंद्रने साठ हजार, लांतकेंद्रने पचास हजार, शुक्रने चालीस हजार, सहस्रारने बीश हजार, प्राणतने वीस हजार अने अच्युतेंद्रने दश हजार सामानिक देवो होय छे. कखुं छे के:-- "असुरेंद्र सिवायना इंद्रोने चौराठ हजार, साठ हजार अने छ हजार सामानिक देवो होय छे अने आत्मरक्षक देवो तेथी चारमणा होय हे. ८४ हजार, ८० हजार, ७२ हजार, ७० हजार, ६० हजार, ५० हजार, ४० हजार, ३० हजार, २० हजार अने १० हजार सामानिक देवो अनुक्रमे शकेंद्रधी अन्युतेंद्र सुधीना इंद्रोने होय छे, '' अने तेथी चार गणा आत्मरक्षक देवो तेओने होय छे.

सामानिक अ**ने** वरक्षकोनी संख्या.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् हायी यः सहणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्सोः—ह्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः॥

शतक ३.-उद्देशक ७.

रागगृह.-शक्तमा लोकप लो केटला (-चार-सोम.-प्रम.-वरण.-वेशवण.-प्रमना विमानो केटलां (-चार.-संध्याप्रभ.-वरशिष्ट.-स्वयं ज्वल.-वरण.-सोमना विमान विगेरेनो पूर्ण परिचय.-सोमना ताबाना देवो.-सोमना ताबानी वारातिक प्रश्तिले.-सोमना आत्थो.-यमना विमान विगेरेनो परिचय.-यमना ताबाना देवो.-यमना ताबाना रोगो-दु:खो.-यमना अपत्थो.-वरणना विमान विगेरेनो परिचय.-यरणना ताबाना देवो.-वरणना ताबानी पाणीने लगती प्रवृत्तिओ.-थरणना अपत्थो.-वैश्रवणना विमान विगेरेनो परिचय.-वैश्रवणना ताबाना देवो.-वेशवण-कुनेर-ने हसाक रहेकी लक्ष्मी अने लक्ष्मीशृष्टि.-वेशवणना अपत्थो.--

- ?. प्रo —रीयागिहे णगरे जाव-पजुवासमाणे एवं चयासी:-समस्स णं भंते ! देविंदस्स, देवरण्णो कति लोगपाला पण्णत्ता ?
- १. उ०—गोयमा ! चत्तारि लोगपाला पण्णता, तं जहाः— सोभे, जमे, वरुणे, वेसमणे.
- २. प्र०—एएसि णं मंते ! चडण्हं लोगपालाणं कति विभाणा पण्णत्ता ?
- २. उ०—गोयमा ! चत्तारि विमाणा पष्नता, तं जहाः— संझप्पभे, वरसिष्टे, सयंजले, वग्गू.
- ं ३. प्र०—कहिं णं भंते ! सकस्त देविंदस्त, देवरण्णो सो-मस्त महारण्णो संझप्पमे णामं महाविमाणे पण्णत्ते ?
- ३. उ०--गोयमा ! जंयुद्दीचे दीवे मंदरस्स पव्ययस्स दा-हिणे णं इमीसे राणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्ञाओं भूमिमा-गाओ उड्डं चंदिम-सूरिय-गहगण-नक्सत्त-ताराह्म्बाणं वहूड्ं जोअणाइं, जाय-पंच बडेंसिया पण्णत्ता, तं जहाः-असोगवडेंसए,

- ं १. प्र०—राजगृह नगरमां यात्रत्-पर्युपासना करता आ प्रमाणे बोल्या के:-हे मगवन् ! देवेंद्र, देवराज शक्रने केटला लोकपालो कह्या छे ?
- १. उ०—हे गौतम ! तेने चार छोकपाछो कह्या छे.ते आ प्रमाणे:-- सोम, यम, वरुण अने वैश्रमण.
- २. प्रo—हे भगवन् ! ए चारे छोकपालोने केटलां विमानी कह्यां छे ?
- २. उ०—हे गौतम ! एओने चार विमानो कहाां छे. ते आ प्रमाणे:—संध्याप्रभ, वरशिष्ट, स्वयंज्वल अने वल्गु.
- प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज शक्रा क्षेक्षपाल सोम नामना महाराजानुं संध्याप्रभ नामनुं मोटुं वि्मान क्षा रहेलुं कहां छे ?
- ३. उ०—हे गौतम ! जंबूद्वीप नामना द्वीपमां मंदर पर्वतनी दक्षिणे आ रत्नप्रभा पृथिवीना बहुतन रमणीय भूमिभागथी इंचे चंद्र, सूर्य, प्रहगण, नक्षत्र अने ताराहरों आवे छे. अने त्यांथी बहु योजन उंचे यावत्—पांच अवतंसको कह्या छे. ते आ प्रमाणे:—अशोकावतंसक, सप्तपणीवतंसक, चंपकावतंसक, चूता-

र. मूळच्छायाः—राजगृहे नगरे बावत्-पर्युपासीनः एवम् अवादीत्ः-शकस्य भगवन् ! देवेन्द्रस्य, देवराजस्य कति लोकपालाः भ्रह्माः ? गातम ! चत्वारी लोकपालाः प्रह्माः, तद्यथाः - सोमः, यमः, वहणः, वैश्ववणः एतेषां भगवन् ! चतुर्णौ लोकपालानां कति विमानानि अक्षमानि ? गातम ! चत्वारि विमानानि प्रक्षमानि, तद्यथाः-सन्ध्याप्रभम्, वरशिष्टम्, स्वयंज्वलम्, वन्तुः कुत्र भगवन् ! शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य सम्ध्याप्रभं नाम महाविमानं प्रक्षमम् ! गातम ! जम्बूद्रीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेऽस्या रत्नप्रभावाः खिच्या बहुसमाणियाद् भूमिभागाष् अर्थं चन्द्रमः-सूर्य-प्रह्मण-नक्षत्र-ताराक्ष्याणां बहुनि योजनानि यावन्-प्रस्थ अवतंसकाः प्रह्माः, तथ्याः- अशोकावतंसकः—भनु०

सैत्तवण्णवर्डेसए, चंपयवर्डेसए, चृअवर्डेसए, मञ्झे सोहम्मवर्डे-सए; तस्स णं सोहम्मवर्डेसयस्स महाविमाणस्स पुरित्थमे णं सोहम्मे कपे असंखेजाइं जोअणाइं वीइवइत्ता एत्थ णं सकस्त देविंदस्स, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो संझप्पमे णामं महावि-माणे पण्णत्ते:-अद्भतेरसजोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं, उणयालीसं जोयणसयसहस्साइं, बावतं च सहस्साइं, अट्ट य अडयाले जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिचलेवेणं पण्णत्ते, धा सूरियाभविमाणस्स वत्तव्वया सा अपरिसेसा भाणिअन्वा, जाव-अभिसेओ; नवरं-सोमो देवो. संज्ञप्यमस्स णं महाविमाणस्स अहे, सपर्विख, सपडिदिसिं असंखेजाई जोयण (सय) सहस्साई ओगाहित्ता एत्थ णं सकस्स देविंदस्स, देवरण्गो सोमस्स महा-रण्णो सोमा नामं रायहाणी पण्यत्ताः-एगं जीयणसयसहस्सं आयामविनखंभेणं जंबुद्दीवप्पमाणाः; वेमाणिआणं पमाणस्स अद्भं णेयव्वं, जाव-उवरियलेणं, सोलस जोयणसहस्साई आयाम-विक्खंभेणं, पण्णासं जोयणसहस्साइं, पंच य सत्ताणउए जोयणसये किंचि विसेसूणे परिवखेवेणं पण्णत्ते; पासायाणं चत्तारि परिवा-डीओ णेयव्वाओ, सेसा णित्थि. सकस्स णं देविंदस्स, देवरण्णो ,सोमस्स महारण्णो इमे देवा आणा-जनवाय-वयण-निदेते चिट्ठंति, तं जहाः-सोमकाइया इ वा, सोमदेवयकाइया इ वा, विज्ञुकुमारा, विज्ञुकुमारीओ; अग्गिकुमारा, अग्गिकुमारीओ; वायुकुमारा, वायुकुमारीओ; चंदा, सूरा, गहा णक्खत्ता, तारारूवा े जे यावणोे तहप्पंगारा सच्चे ते तब्भत्तिआ, तप्पविखया, त-ब्मारिया सक्तस्स देविंदरस, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो आणा-उववाय-वयण-निदेसे चिष्टंति. जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पञ्चयस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुप्पज्ञंति, तं जहाः-गहदंडा इ वा, गहमुसला इ वा, गहगाजिआ इ वा, गहजुदा इ वा, गह-सिंघाडणा इ वा, गहावसन्वा इ वा, अन्मा इ वा, अन्मरुव्सा

वतंसक अने वचे सौधर्मावतंसक छे. ते सौधर्मावतंसक महाविमा-ननी पूर्वे सौधर्म कल्प छे, तेमां असंख्य योजन दूर गया पछी-अहाँ-देवेंद्र, देवराज शक्रना छोकपाछ सोम नामना महाराजानुं संध्याप्रभ नामनुं महाविमान आवे-कह्यं-छः-तेनी-विमाननी-छंबाइ अने पहोळाइ साडा बार छाख योजननी छे**.** तेनो घेराबो ओगणचाळीश लाख, बावन हजार, आठसेंने अडताळीश-३९५२८४८-योजन करतां कांइक वधारे छे. ए संबंधे सूर्यार्भ-देवनी विमानवक्तस्यतानी पेठे ववी हकीकत कहेवी अने ते प्रमाणे यावत्-अभिषेक सुधी कहेवुं. विशेष ए के, अहीं सूर्धाभ-देवने बदले सोम देव कहेबो. संध्याप्रभ महाविमाननी बराबर नीचे (सपक्षे अने सप्रतिदिशे) असंख्य योजन आगळ अवगाह्या पछी-अहीं-देवेंद्र, देवराज शक्रना सोम महाराजानी सोमा नामनी राजधानी छे. ते राजधानीनी छंबाइ अने पहोळाई एक छाख योजननीं छें-ते राजधानी जंबूद्वीप जेटली छे. आ राजधानीमां आवेटा किल्हा बगेरेनुं प्रमाण वैमानिकोना किल्हा बगेरेना प्रमाण करतां अड्युं कहेवुं अने ए प्रमाणे यावत्-घरना पीठवंघ सुधी जाणवुं. घरना पीठबंधनो आयाम अने विष्कंभ सोळ हजार योजन छे अने तेनो घेरावो पचास हजार, पांचसेने सत्ताणु योजन करतां कांइक विशेषाधिक छे. प्रासादोनी चार परिपाटिओ कहेवी अने बाकीनी नथी. देवेंद्र देवराज शक्रना सोग महाराजानी आंजामां, उपपातमां, कहेणमां अने निर्देशमां आ देवो रहे छे:--सोमकायिको, सोमदेवकाथिको, विद्युत्कुमारो विद्युत्कुमारीओ, अग्निकुमारो, अग्निकुमारीओ, वायुकुमारो, वायुकुमारीओ, चंद्रो, सूर्यों, प्रहो, नक्षत्रो, तारारूपो अने तेवा ज प्रकारना बीजा पण बधा देवो तेनी भक्तिवाळा, तेना पक्षवाळा अने तेने ताबे रहेनारा छे-ए बधा देवो तेनी आज्ञामां उपपातमां, कहेणमां अने निर्देशमां रहे छे. जंबूद्वीप नामना द्वीपमां मंदर पर्वतनी दक्षिणे जे आ पेदा थाय छ:-प्रहदंडो, प्रहमुसलो, प्रहगर्जितो, ए प्रमाणे प्रहयुद्धो,

^{9.} मूळ्च्छायाः—सत्तपणावतंसकः, चम्यकावतंसकः, चृतावतंसकः, मध्ये सै।धमीवतंसकः; तस्य सै।धमीवतंसकः महाविमानस्य पै।रस्त्ये सै।धमें कल्पेऽतंख्येयानि योजनानि व्यतित्रज्य अत्र शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य सम्धाप्तमं नाम महाविमानं प्रज्ञप्तमः—अधंत्रयोदशयोजन-शतसहस्राणि आयाम—विष्कम्भेण, एकोनचरवारिशद् योजनशतानि, किश्चिद् विशेषाधिकानि परिक्षेपेण प्रज्ञामः, या सूर्था(सूरिका)भविमानस्य वक्तव्यता सा अपरिशेषा भणितव्या, यावत्—अभिषेकः; नवरम्—सोमो देवः सन्ध्याप्तमस्य महाविमानस्य अवः, सप्रक्षम्, सप्रतिदिश्म असंख्येयानि योजन—(शत)—सहस्राणि अवगाद्या अत्र शक्तव्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य सोमा नाम राजधानी प्रज्ञप्ताः—एकं योजनशतसहस्रम् आयामविष्कम्भेण जम्बूद्रीपप्रमाणाः, वैनानिकानो प्रमाणस्याऽर्वं शातव्यम्, यावत्—उपरितने(ले)न, योजशास्त्र योजनसहस्राणि, पश्च च सस्तनविर्याजनशतानि किश्चिद् विशेषोनानि परिक्षेपेण प्रज्ञपः, यावत्—उपरितने(ले)न, योजशास्त्र योजनसहस्राणि, पश्च च सस्तनविर्याजनशतानि किश्चिद् विशेषोनानि परिक्षेपेण प्रज्ञपः, प्रासादानां चतसः परिपारको ज्ञा(ने)तव्याः, शेषा नास्तिः शक्तव्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य इमे देवा अज्ञा—उपपात—वचन—निर्देशे तिष्ठन्ति, तद्यथाः—सोमकायिका इति वा, सोमदेवताकायिका इति वा, विद्यक्तिमाराः, विद्युक्तमाराः, विद्युक्तमाराः, अप्रक्रमाराः, वायुक्तमाराः, वायुक्तमाराः, वायुक्तमाराः, व्यव्यत्य दक्षिणेन यानि इमानि समुरः वानते, तद्यथाः—प्रहदण्डा इति वा, प्रहमुसल्यानि इति वा, प्रह्मस्यः देवि वा, प्रहमुसल्यानि इति वा, प्रश्चानि इति वा, प्रश्वानि इति वा, प्रश्चानि इति वा,

[্]৭. अभिषेक सुधीनो बधो वर्णक रायपसेणी उपांगना-(क० आ० प्र॰ ९०१-२०४) ए प्रुष्टोमां साबस्तर नोंधेलो छे:—अनु० 💎

२. चालता सूत्रमां जणाव्युं छे के, अंतरिक्षमां जे जे उत्पादो थाय छे ते वधा, कोकपालोगा वशनों छे. (लोकपालो पण शकाशित छे) ुत्तेओनी रजा सिवाय तदाशित कर्मकरों एमांनो एक पण उत्पात करी शकता नधी. आवी ज इकीकत, गर्यसंहिता अने वाराहीसंहितामां आ प्रमाणे गोंघी छे:---

- " खास्राण संस्व अन्त- एते शुभाशुननिवेदिनः, कोकपाला महात्मानो"
- " अझाणि लोकपाला खोकामात्राय संत्यजन्ति-उल्काः-वरादः. (सहत्संहिता, प्र० ४५६)
- " ग्रुम अने अशुभने जाणनारा महात्मा छोक्याको पोताना अञ्चीने सजे छ.-गर्मः.
 - " लोकना चंहारमाटे लोकपालो उल्का-अछोने छोडे छे "-बराह. (ए. ए. ए० ४५६)

्र पुरसातीनां जे की नानी कहीं जगावेलां छे, ते तां घणांसरां बृहत्वंहितानां आ प्रमाणे जणाव्यां है: -

प्रदेषु :-(२० स० १० ३२१)

" वियति चरतां प्रहाणाम्—उपर्युपारे आत्मगार्गसंस्थानाम् । अतिवृगद् दग्विषये समतामित्र संप्रयातानाम् " । २ आसम-क्रमयोगाद् मेदो-केखां-शुमर्दना-प्रपत्नवैः । युद्धं चतुष्प्रकारं पराशरांशिमेनिभिठकत् " । ३-प्रहयुद्धाध्यायः

प्रहृशंगाटक--प्रहदंड--प्रहमुशल—(प्र∘-२४९-४३१) " चक-धनुः-शृङ्गाटक-दण्ड-पुर-प्रास-वजसंस्थानाः । क्षुदृष्टिकग लोके समराय च मानवेन्द्राणाम् "-प्रहृशंगाटकाध्याय.

प्रहापसब्य—(पृ॰ ३२२)

" दक्षिणेनायसन्त्रं साद् उत्तरेण प्रदक्षिणम् । प्रहाणां चन्द्रमा हेयो नक्षत्राणां तथेय च--प्रह्युद्धाध्यायः

क्षञ्रष्ट्स—(पृ० ४१२)

" दिवसहरामो नीजे भानुन्छादी खमध्यगोऽञ्चतरः " " अञ्चक्षे मेघतरी "-संध्यालक्षणम्

संध्या—(पृ० ४२६)

" अशिस्तिमितानुदितात् सृथादसप्टमं नभो यावत् । तावत् मध्याकालश्चिंद्वरैतैः फडं चास्मिन् " १ " शहोरात्रस्य यः संविः सा च संध्या प्रकीर्तिता । . द्विनाडिका भवेत् साधुर्यावदाजयोतिदर्शनम् "-संध्यालक्षणम् ।

गांधवैनगर—(५० ४७८)

- " गन्धवैनगरमुरिथतमापाण्डुर् "
- " खपुरं सिन-रक्त-पीत-कृष्णम् "
- " अने कवणी ऋति खे प्रकाशते पुरं पताका-ध्वत-तोरणान्वितम्"।
- " बहुवर्ण ताकार्क्यं गन्धर्यनगरं महत् "-गन्धर्वनगरत्रक्षणम्.

उल्काप त---(पृ० ४५५)

- " दिवि भुक्तञ्चनफलानां पततः हपाणि यानि तान्युरुकाः ।
- " धिष्ण्य-उल्का-अशनि+वयुत्-तारा इति पञ्चधा भेताः "॥ १ -उरुवासक्षणम्

दिग्दाइ—(५० ४३९)

" दाहो दिशां राजभयाय पीतो देशस्य नाशाय हुताशवणैः । यखारुणः स्याद्यसव्यवायुः सस्यस्य नाशं स करोति दष्टः "॥ १ -दिग्दाहरूक्षणम्.

परिवेष—(१० ४६६)

" सम्पूर्किता स्वीन्द्राः किरणाः पवनेन मण्डलीभृताः । नानावर्णःकृतयस्त्रन्त्रश्चे रुयोग्नि परिवेषाः "-परिवेषलक्षणम्,

प्रतिसूर्य-(१० ४८०)

" उदयात् प्रशति दिनप्रहरैकं यावत् तनुधनोऽकेसमीपे यदा भवति सदा अर्करिवनवसात् तत्र द्वितीयोऽकं इ' लक्ष्यते स प्रतिस्य उच्यते. एवमस्ताग्येऽपि संभवति. "—अर्कवारः—प्रतिस्येलक्षणम्.

"आकाशमां गति करता, पोत पोताना मार्गमां उपराउपर रहेळा अने घणुं दूर होवाने लीधे आपणने एक साथे थई गएला देखाता महोतुं युद्ध आसन्न अने कमने लीधे चार प्रकारनुं कक्षुं छः --भेद्युद्ध, उल्लेखयुद्ध, अंशुमदंनयुद्ध अने अपसव्ययुद्ध." आ विपेनी विशेष विगत जाणवा माटे प्रह्युद्ध-अध्याय जोई हेवो जोईए.

" चक (पैड़ं), धतुप, सिंगोड़ं, दंड, नगर, प्रास अने वक्ष ए वर्षा महोनां संस्थानो (घाटो) छे अने ए अद्भुतस्य ह छे. "

" ज्यारे चंद्र, मही अने नक्षत्रोनी दक्षिणे गति करतो होय खारे ' धागसव्य ' कहेवाय अने ज्यारे ए ज उत्तरे गति करतो होय खारे ' प्रदक्षिण ' कहेवाय. "

" वादळांना साड खेवा घाटने अझब्रुक्ष के मेघतर क्यों छे. ए वृक्ष, नीलों होय छे अने तेनो अप्र भाग दहिंगा जेवो होय छे अने ए सूर्यने ढांकनारों सने आफाशनी वसे होय छे."

" अइधा आधमेला अने अडधा उगेला सूर्यने लीधे ज्यां सुधी आकाश अस्पष्ट रहे छे तेटलो समय ' संध्याकाल ' कहेवाय छे. "

" दिवस अने रात्रीनी संधि (सांधा)ना भागने संध्या कहेवामां आवे छें. तेतुं प्रमाण वे नाडिका छे अने ए, उथोति (ताराओ) तुं दर्शन यतां पूरी थाय छे. "

वादकां उपर पडतां स्थेनां किरणोने ठीघे आकाशमां यता नगरना देखावने 'गांधर्वनगर 'कहेवामां आवे छे ते घोछं, ठाछ, पीछं अने काछं होय छे-अनेक वर्ण अने आकारवाछं होय छे तथा पताका, धजा अने तोरणायी गंडित पण होय छे. ''

" खर्गनां सुखोने भोगवीने पडता आत्माओनां ह्योने 'तहका' कहेवामां आवे छे. ते पांच प्रकारनी छे:-धिष्ण्य, उल्का, अशनि, विद्युत् अने तारा"

"मडका जैवी दिशाओं नाम 'दिग्दाह 'छे-ते पीळो, अग्नि जेवो अने काल एम अनेक प्रकारनो होन छे-तेना रंगो प्रमाणे जूदां जुदां एळो पण जणाव्यां छे "

' थोडां वादळावाळा आकाशमां प्रतिबिंव पामेलां सूर्य अने चंद्रनां किरणो वायुद्वारा मंडलीभूत थयां छतां के अनेक वर्ण अने आकारने धारण करे छे-एतुं नाम ' परिवेष ' छे "

" केटलीएक बार ज्य रे सर्यना उदयथी मांडी एक प्रहर सुधी सर्यनी आसपास थोडा बादळा जामेला होय छे खारे ते बादळ तु लंदा छुं, स्थेन। किरणोने लीधे बीजा स्थं जेखं देखाय छे अने एतं ज नाम प्रतिसूर्य छे. आवा प्रतिस्थं, स्थेना अस्तसमये पण जोई शकाय छे. हैं

है ना, संझा इ ना, गंघन्ननगरा इ ना, उकापाया इ ना, दिसि-दाहा इ वा, गिजाआ इ वा, विज्जू इ वा, पंसुवृद्धी इ वा, जूवे इ वा, जक्लािक्तये ति वा, धूमिआ इ वा, महिआ इ वा, रयुग्धाए ति वा, चंदोवरागा इ वा, सूरोवरागा इ वा, चंदप-रिवेसा इ वा, सूरपरिवेसा इ वा, पिंडचंदा इ वा, पिंडसूरा इ षा, इंदधणू इ वा, उदगमच्छ-कापिहसिअ-अमोह-पाईणवाया **इ वा,** पईणवाया इ वा, जाव-संवद्ययाया इ वा, गामदांहा 🕴 वा, जाव-संनिवेसदाहा इ वा, पाणक्खया, जणक्खया, धणक्खया, कुलक्खया, वसणब्मूया अणारिआ—जे यावण्णे तहप्पगारा ण ते सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो अनाया, अदिहा, असुआ, अस्सु (मु) आ अविण्णाया; तेसि या सोमकाइआणं देवाणं. सक्करस णं देविंदस्स, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो इमे अहावचा अभिण्णाया होत्था, तं जहा:-इंगालए, वियालए, लोहिअक्से, सणिचरे, चंदे, सूरे, सुके, बुहे, वह-स्तई; राहू. सकस्स णं देविंदस्स; देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सत्तिभागं पलिओवमं ढिई पण्णत्ता, अहावचा-ऽभिचायाणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता. एवं महिडूीए, जाय-महाणुमागे सीमे महारायाः

प्रहक्तंगाटको, प्रहापसच्यो, अभ्रवृक्षो, संध्या, गांधर्वनगरो, उल्का-पातों, दिग्दाहो,गर्जारबो, विजळीओ, धूळनी वृष्टिओ, यूपो, यक्षोदीतो, धूमिका, महिका हुरजनी उद्घात, चंद्रप्रहणी, सूर्य-प्रहणो, चंद्रपरिवेषो, सूर्यपरिवेषो, प्रतिचंद्रो, प्रतिसूर्यो, इंद्रधनुप्, उदकमस्य, कपिहसित, अमोध, पूर्व दिशाना पवनो, पश्चिमना पवनो, यायत्-संवर्तक पवनो, ग्रामदाहो यावत्-संनिवेशदाहो, प्राणक्षय, जनक्षय, धनक्षय, कुलक्षय, यावत् व्यसनभूत अनार्थ (पापरूप) तथा तेवा ज प्रकारना बीजा पण बधा, ते बधा, दवेंद्र देवर ज शक्रना सोम महाराजाथी अजाण्या नथी, अणजोएला नथी, अणसांभळेळा नथी, अणसमरेळा नथी अने अविज्ञात नथी अथवा ते बधा सोमकायिक देवोथी अजाण्या नथी. देवेंद्र, देवराज शकना सोम महाराजाने आ देवो अपत्यरूप अभिमत छै:--अंगारक-मंगळ, विकोलिक, लोहिताक्ष, शनैश्वर, चंद्र, सूर्य, शुक्र, बुध, बृहस्पति अने राहु. देवेंद्र, देवराज शक्रना सीम महाराजानी आवरदा त्रण माग सहित पत्योपमनी छे अने तेना अपस्यरूप अभिमत देवोनी आवरदा एक पत्योपमनी कही छे,-ए प्रकारनी मोटी ऋदियाळो अने यावत् मोटो प्रभावशाळी सोम महाराजा छे.

१. षष्ठोद्देशके इन्द्राणांभारमरक्षा उक्ताः, अथ सप्तमोद्देशके तेषामेव लोकपालान् दर्शयितुमाहः—'रायगिहें ' इत्यादि. 'बहुइं जोयणाइं ' इह 'यावत् ' करणाद् इदं दश्यमः—'' बहुइं जोयणसयाइं, बहुइं जोयणस्यस्त स्माइं, बहुइं जोयणसयसहस्माइं, बहुओ जोयणकोडीओ, वहूओ जोयणकोडीओ, उहुं, दूरं वीईवइत्ता एत्थ णं सोहम्मे णामं कप्पे पण्णत्ते, पाईण—पडीईणायए, उदीण-दाहिणाविधिने, अद्धवंदसंठाणसंठिए, अचिमालिभासरासिवण्णामे असंखेजाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम—विक्लंभेणं, असंखेजाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्लंबेणं; एत्थ णं सोहम्माणं देवाणं बत्तीसं विमाणावाससयसहस्साइं भवंतीति अक्लाया, ते णं विमाणा सन्वर्यणामया, अच्छा, जाव—पडिरूवा; तस्स णं सोहम्मकप्पस्स बहुमज्झदेसभाए '' इति । 'वीईवइत्त 'ति व्यतिझज्य—व्यतिक्रम्य, 'जा सूरियामविमाणस्स ' ति सूरिकाभविमानं राजप्रश्नीयोपाङ्गोत्सखरूपम्, तद्वक्तव्यता इह वाच्या; तत्समान् लक्ष्यणस्वाद्

उदकमत्स्य—(१०४२९)

[&]quot; मरेखा मत्स्याकारा एव मेघाः "-संध्यालक्षणम्. अमोघ--(पृ० ४२९)-

[&]quot; शुक्लाः कराः दिनकृतो दिवादिमध्यान्तगामिनः स्निग्वाः । अन्युच्छित्रा ऋजवो वृष्टिकरास्ते तु असोधाख्याः "

[&]quot; माछला आकारना मेघोने ' उदकमत्स ' कहेवामां आने छे "

[&]quot; सर्यनां जे किरणो, क्षाकाशमां सर्वत्र व्यापेटां होय छे, घोळां होय छे, सरळ-सीधां-अन अखंड होय छे तथा स्निग्ध होय छे ते 'अमोद्य' कहेवाय छे-ए किरणो गृष्टिना स्चक छे "

उपर सचनेला उहेंको बाराहीसंहिता के बृहत्संहितामां छे. एनो प्रणेता महापंडित बराह के बराहिमहिर छे. एनो समय ईसवीय ५मो-६हो सैंको लेखाय छे. आ ज वराहने, जैनसंप्रदाय भद्रवाहुनो भाई (१) होवानुं सूचवे छे:—अनु०

१. मूलच्छायाः—इति वा, सन्ध्या इति वा, गान्धवंनगराणि इति वा, उल्कापातः इति वा, दिग्दाहा इति वा, गार्जेतानि इति वा, वियुद् इति वा, पांगुर्वाष्टः इति वा, यूपा इति वा, यक्षोदोप्तानि इति वा, धूमिका इति वा, मिहिका इति वा, रजउद्धात इति वा, चन्द्रोत्तागा इति वा, सूर्येपरागा इति वा, प्रतिचन्द्रा इति वा, प्रतिचन्द्रा इति वा, प्रतिचन्द्रा इति वा, प्रतिचन्द्रा इति वा, प्रतिचनिवाता इति वा, प्रावत्—संविवाता इति वा, प्रावत्—संविवाताः, जनक्षयाः, धनक्षयाः, कुलक्षयाः, व्यसन्भूता अनार्थाः, ये चाप्यन्ये तथाप्रकारा न ते शक्ष्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य अञ्चाताः, अद्ष्याः, अस्मृताः, अविवाताः, तेषां वा सोमकायिकानां देवानाम्, शक्ष्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य होमस्य महाराजस्य इते यथाप्रवारः, अनिधरः, शविधरः, चन्द्रः, स्र्यः, शुकः, वुधः, वृहस्पतिः, राहुः, शक्ष्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य सित्रभागं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञपा, यथाप्रवाराधिनज्ञातानां देवानाम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञपा; एवं महधिकः, यावत्—महानुभागः सोमो महाराजः—अनु०

९- प्र० छायाः—बहूनि योजनशतानि, बहूनि योजनसहस्राणि, बहूनि योजनशतसहस्राणि, बहुवो योजनकोट्यः कर्ष्वम्, दूरं व्यतिवृज्याऽत्र साधर्मो नाम कल्पः प्रज्ञसः-प्राचीन-प्रतीचीनायतः, उदीचीन-दक्षिणांवस्तीर्णः, अर्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितः, अर्थिमीलिभासराशिवणामः, असंख्येयाः योजनकोटाकोट्यः आयाम-विष्क्रमभेण, असंख्येया योजनकोटाकोट्यः परिशेषण, अत्र सौधर्माणां देवानां द्वात्रिशद् विमानावासशतसहस्राणि सुवन्तीति आख्याताः, ते विमानाः सर्वरत्नमयाः, अच्छाः, यावत्-प्रतिरूपाः, तस्य सौधर्मकलपस्य ब्रुमध्यदेशभागे " इतिः-अनु०

अस्पेति. कियती सा वाच्या? इत्याह:-यावदभिषेक:- अभिनवोत्पन्नस्य सोमस्य राज्याभिषेकं यावद् इति, सा च इहातिबहुत्वाद् न छिखि-तेति. ' अहे ' ति तिर्थग्रोके, ' वेगाणिअणं पनाणस्त ' ति वेमानिकानां सौधर्मावेमःनसस्कप्रसाद-प्राकार द्वारादीनां प्रमाणस्य इह नगर्याम् अर्थं इ।तत्वन्, 'सेसा णिति' ति सुत्रर्नादिकाः सभा इह न सन्ति, उत्पत्तिस्थानेषु एव तासां भाषात्. 'लोगकाइय'ति सोमस्य कायो निकायो येपामस्ति ते सोगकाथिका:-सोनपरिवारभूताः, 'सोमदेवयकाइय 'त्ति सोमदेवताः तत्सामानिकादयः, तासां कायो येषामिल ते सोमदेवताकायिकाः-सोमसामानिकादिदेवपरिवात्भूता इत्यर्थः. 'ताराह्या 'ति तारकहराः. 'तव्यत्तित्र 'ति तत्र सोमे भक्तिः सेवा, बहुमानो वा येषां ते तद्गक्तिकाः, ' तप्पविखय ' ति सोमपाक्षिकाः--सोमस्य प्रयोजनेषु सहायाः, 'तन्मारिय ' ति तद्वार्याः-तस्य सोमस्य भाषी इव भाषीः-अस्यन्तं बर्याचात् , पोपणीयस्याश्चेति तद्वार्याः; तद्वारो वा येषां वेदव्यतयाऽस्ति ते तद्वारिकाः.

१. छट्टा उद्देशकमां इंद्रोना आत्मरक्षक देवो संबधी हकीकत जणावी छै अने हुवे सातमा उद्देशकनां इंद्रोना छोकपाछी संबंधी हकीकतने जगावता (देखाडता) कहे छे के:--['रायगिंह 'इलादि.] ['बहूई जीयणाई'] ए ठेका में 'यावत् 'शब्द मूल्यो छे तेथी आ प्रमाणे वबारे जामनुं:-- '' घमां सेंकडो योजनो, घमां हजार योजनो, घमां लाज योजनो, घमां कोड योजनो अने घमां कोटाकोटि योजनो सुधी उंचे दूर गया पड़ी-अहीं-सौवर्म नामे करा कक्षो छे, ते करा, पूर्व अने पश्चिममां लांबो छे अने उत्तर तथा दक्षिणमां विस्तीर्ण-विस्ता-वाळो -पहोळो -छे, अउदा चांदानी जेवो तेनो घाट छे, सुर्राती कांतिना सन्दु जेवो तेनो वर्ष छे, तेनो आयाम अने विकंश असंख्य योजन के टाकोटि छे, तेनो घराबो पंत्र असंस्य योजन कोटाकोटि छे. अही -सौंदर्ग करामां-देबोनां-सौंदर्ग देवोनां-वत्रीत टाख विनानो-विमानावासो-छे, एम कह्युं छं. ते वधां विवासी साव वज़नां बरेठां छे, निर्मेल अने यावत्-प्रतिरूप छे, ते सौवर्म करानी वचीवच (बहु मध्येवा धागमां) [' वीहबइत ' ति] जहने. " [' जा सुरियाम विभागस्त ' ति] रीजप्रशीय (रायासेणी) नायना उपांगमां वर्णील सुरिकाभ नामना विभाननी वक्त यता अहीं कहेवी. कारण के, आ अने ते स्रिकाम विगान, ए बन्ने सरखां छे. ते वक्तव्यता अहीं केटली कहेवी ? तो कहे छे के, अभिषेक सुधी-नवा उत्पन्न थएल सोमना राज्याभिषेक सुवी-ते वक्तव्यता कहेवी. ते वक्तव्यता घणी लांबी होवाबी अहीं लखी नधी. [' अहे ' ति] एटले तिर्यग्-तिरछा-ठोकमां, [' वे । णिया गं पमाणस्य ' ति] वैमानिकोना सौधर्म विमानमां रहेळ महेळ, किञ्ज अने बारणां विगेरेना माप करतां अहीं-सोम टो क्पाउनी नगरीमां-अड्युं माप जाणबुं. [' सेसा णिथ ' ति] आ नगरीमां सुधर्मा सभा वर्गेरे खानो नथी, कारण के ते वधां स्थानो, सोमनी उत्पत्तिना स्थाने ज होय छे. [' सोमकाइय ' ति] सोमना निकायना देवो-सोमना परिवाररूप देवो ते सोमकायिक देवो, सोमकायिक. [' सोमदेवयकाइय ' ति] सोम महाराजाना जे सामानिक देवो ते सोमदेवता अने तेना परिवाररूप देवो (तेना निकायना देवो) ते सोमदेवता -सोमदेवलाकाविक देवो, ['तासस्व ' ति] तास्क रूप देवो, ['तब्मतिअ ' ति] सोमगां भक्तिवाळा -सोमनुं बहु मान वर गरा देवो ते तास्त. तद्वक्तिक देवो, [' तप्पक्क्षिय ' ति] सोमना पक्षवाळा देवो-कांइ काम पडें तो सोमने सहायता आपनारा देवो ते तत्पाक्षिक देवो, [' तन्मा-रिय ' ति] जैम सीवनी राणी सर्व प्रकारे सोमने अधीन छे तेम ते देवो सर्व प्रकारे सोमने तावे रहे छे माटे तदार्य देवो, अथवा सोम ते ने पोपण करे छ माटे ते तद्भार्य देवो, अथवा जओने माथे सोमनो भार (कारभार) बहेवानो छे ते देवो तद्भारिक देवो.

'गहदंड'ति दण्डा इत्र दण्डास्तिर्थगाऽऽयताः श्रेणयः, ग्रहाणां मङ्गलादीनां त्रि-चारादीनां दण्डा ग्रहदण्डाः. एवं ग्रहमुसलानि, नवरम्:-ऊर्वायताः श्रेणयः. ' गहगज्जिभ 'ति प्रहसंचाछादौ गर्जितानि-स्तनितानि प्रहगर्जितानि, ' प्रह्युद्धानि '-प्रहयोरेकत्र नक्षत्रे द्भिणोत्तरेण समश्रेणितया अवस्थानानि. 'प्रह्मृङ्गाटकानि '-प्रहाणां सृङ्गाटकप्रलातेण अवस्थानानि. 'प्रहापसञ्यानि '-ब्रहाणामपसव्य 'पनानि प्रतीपगमनानि इयार्थः. अभारमका वृक्षाः-अभ्रष्टक्षाः. ' गन्धर्यनगराणि '-आकाशे व्यन्तरकृतानि नगराकार-प्रतिबिम्बानि. ' उक्कापाताः '-सरेखाः, सोद्योता वा तारकस्येव पाताः. ' दिग्दाहाः '-अन्यतमस्यां दिशि अधोऽन्धकाराः, उपरि च प्रकाशास्त्रकाः दद्यमानमहानगरप्रकाशकलाः. ' जृषे 'ति शुक्छपक्षे, प्रतिपदादिदिनत्रयं यत्रद् थैः संध्यत्छेदा आवियन्ते ते यूपकाः. ' जनलातित्तय 'ति यक्षेदीतानि आकाशे व्यन्तरकृतज्वलनानि. धूनिका -महिकयोर्वेणेकृतो विशेषः, तत्र धूमिका धूमवर्णा धूसरा इसर्थ:. महिका तु आपाण्डुरा इति. 'रउग्घाय 'ति दिशां रजस्वलतानि, 'चंदोवरागा, सूरोवरागा ' चन्द्र-सूर्यप्रहणानि, पिडिचंद ' ति द्वितीयचन्द्राः, ' जदगमच्छ ' ति इन्द्रधनुष्खण्डानि, 'कविहासिअ ' ति अनभ्रे या विद्युत् सहसा तत् कपिहसितम्, अन्ये त्वाहु:- ' की हिसितं नाम यदाऽऽकाशे वानरमुखतदशस्य, विक्वतमुखस्य हसनम् '' ' अमोह ' ति अमोघाः आदित्योदया-उत्तसमयपोरादित्यकिरणविकारतनिता आताम्राः, कृष्णाः, श्वामा वा शकटोद्धिसंस्थिता दण्डा इति. 'पाईणवाय ' ति पूर्वदिग्वाताः, 'पईणवाय' ति प्रतीचीनवाताः, 'यावत्'-वरणादिदं दश्यम्:-'' दे।हिणवाया इ वा, उदीणवाया इ व', उडूवाया इ वा, अहोवाया इ चा, तिरियवाया इ वा, विदिसीवाया इ वा, वाउच्भामा इ वा, वाउक्कालिओ इ वा, वायमंडालिओ इ वा, उक्कालिआ-वाया इ वा, मंडलिआशया इ वा, गुंजायाया इ वा, शंझायाना इ वा '' ति. इह 'वातोद्धामाः'—अनवस्थितवाताः, वातोत्कलिकाः समुद्रोत्कलिकावत् , 'वातमण्डलिकाः '-वातोल्यः(sea:), उत्कलिकावाताः-उत्कलिकामिर्ये वान्ति, 'मण्डलिकावाताः '-मण्डलिकामिर्ये बान्ति, ' गुजावाताः '-गुजन्तः सशब्दं ये वान्ति, ' इांशावाताः '-अशुभनितुराः, ' संवर्तकवाताः '-तृणादिसंवर्तनस्वभावा इति.

१. जुओ अभिळ पाने ११०-टि १.

१. प्र० छायाः—दक्षिणवाता वा, उरीचीनवाता वा, अर्थवाता वा, अयोवाता वा, तिर्यग्वाता या, विदिग्वाता वा, वातोन्हामा या, - बातोरकलिकां वा, वातामण्डलिका वा, उरकलिकावाता वा, मण्डलिकावाता वा, गुजावाता वा, झञ्झावाता वा इतिः—अतु०

दंड,-मुसल,--चुढ,- श्रंगा-अभ्रवका--दि--च्यक--यक्ष-द--य्यक--यक्ष-द--य्यक--यक्ष-प्रजडद्वात--प्रतिचंद्र-उदव--

रनेक प्रकारना प्रविते.

गक्षय विनिरे.

आवरदा.

['गहदंड ' ति] मंगळ वगेरे त्रण चार प्रहोनी जे तिरछी दंडनी पेठे लांबी हारो ते प्रहदंड, ए प्रमाणे प्रहमुसल शब्दनो पण अर्थ जाणवी- विशेष ए के, त्यां उभी श्रेणीओ (हारो) कहेची- [' गहगज्ञिअ ' ति] ज्यारे महो सित करे छे त्यारे जे कडाका-गाज-धाय छे ते ' प्रहगर्जित ' कहेवाय. एक नक्षत्रमां—एक दक्षिणमां अने एक उत्तरमां एवी रीते सामसामी हारमां वे प्रहोतुं जे रहेवुं ते ' ब्रह्युद्ध ', सिंगो-हाना आकारे प्रहोतुं ने रहेवुं ते ' ग्रहरूंगाटक ', ग्रहोनी ने डाबी-प्रतीप-प्रतिकृळ-वांकी-चाल ते ' प्रहापसम्य ' आभस्य वादळांनां-वृक्षों ते अश्रवृक्ष, आकासमां व्यंतरोए करेली नगरीनी जेवी जे आकृतिओ ते गंधर्वनगर, रेखा अने प्रकासवाछुं तारानी पेठे जे खरवुं ते उल्कापात, बद्धता मोटा नगरना उजासनी जेवा कोइ एक दिशामां नीचे अंधकार अने उदर प्रकाशस्य जे देखादो ते दिग्दाह, [' ज्वे ' ति] अजदाळियाना दिवसोमां पडवो, बीज अने त्रीज सुधी जेवडे संध्याना छेडा ढंकाय छे ते यूपक, [' जक्खालितय ' ति] आकाशमां ध्यंतरोए करेला मडका ते यक्षज्वालित-यक्षोदीप्तक, धूमिका अने महिकाना रंगमां भेद छैः धूमिका धूम देवी धूसर होय छै. अने महिका तो आगांदुर होय छै. ['रउम्घाय'ित्त] दिशाओनं रजस्वलपणुं ते रजलद्यात, [' चंदीवरागा, सूरोवरागा '] चंद्र अने सूर्यनं घरण (ग्रहण) ते चंद्रोपराग अने सूर्योपराग, [' पडि-चंद 'ति] बीजा चंद्रो ते प्रतिचंद्र, [' उदगमच्छ ' ति] काचबीना (इंद्रधनुषना) खंडो-मागो ते उदकमत्स, [' कविहसिय ' ति] वाद्ळा विनाना आकाशमां एकदम विजळीनो जे अवकारो ते कपिहसित, बीजाओ तो कहे छे के—'' आकाशमां वानरानी मुखाकृति जेवी बगडेल मुखाकृतिनं हसवुं ते कपिहसित " [' अमोह ' चि] सूर्यना उगवाना अने आधमवाना वखते दंड नेवा लांवा, साधारण लाल के काळा अने उंचा करेल गाडाने घाटे आकाशमां रहेला सूर्यना किरणना विकारथी थएला जे मोटा मोटा लिंसोटा ते अमोघ, ['पाईणवाय 'ति] पूर्व दिशाना पवनो, [' पईणवाय ' ति] पश्चिम दिशाना पवनो, अहीं ' यावत् ' शब्द मूययो छे माटे आ प्रमाणे वदारे जाणवुं:—'' दक्षिण दिशाना पवनो, उत्तर दिशाना पवनो, ऊर्च दिशाना पवनो, अधोदिशाना पवनो, तिरहा पवनो, वायव्य वसेरे खूणा (विदिशा) ना पवनो-वातोद्धामो-ठेकाणा विनाना पवनो, सनुद्रना कहो होनी पढे बानार-बातोत्कलिका-पवनो, पवननी ओळीओ-मंडलिकाबात, हत्कलिकाओ-लहेरो-बंडे बानारा पवनो-उत्कलिकायातो, ओळीओ-मंडळीओ-वंडे वानारा पवनो मंडलिकायातो, गुंजतां गुंजतां वानारा पवनो—गुंजायातो, खराव निष्टुर (वावाहोडा वखते वानारा) पवनो-इंझावातो, तणखलुं वरेरेने फेरवनारा पवनो-संवर्तक पवनो.

अभाउनन्तरोक्तानां प्रहदण्डादीनां प्रायिकप्तलानि दर्शयनाहः—'पाणक्षय' ति वरक्षयाः, ' जणक्षय' ति लोकमरणानि. निगमपनाह—' वतणक्ष्या अणारियां जे यावण्ये तहण्यार ' ति इहैवमक्षरघटनाः— न केवलं प्राणक्षयादयं एव, ये चाउन्ये एतद्धातिरिक्तास्तव्यकाराः प्राणक्षयादितुत्या व्यक्तम्ताः—आपद्रपाः अनार्यः—पापात्मकाः, न ते अज्ञाता इति योगः. ' अण्णाय ' ति अनुमानतः, 'अदिष्ट 'ि प्रसक्षाऽपेक्षया, 'असुय' ति परवचनद्वारेण 'अमुय' ति अस्मृता मनोऽपेक्षया, 'अविण्णाय ' ति अवध्य-पेक्षया इतिः ' अहावच्य ' ति यथा अपत्यानि तथा ये ते यथापला देवाः—पुत्रस्थानीया इत्यर्थः, ' अनिण्णाय ' ति अभिमृताः, अभिमृतवस्तुकारित्वादिति, ' होत्य ' ति अभवन्, उपलक्षणवाचास्य भवन्ति, भविष्यन्ति इति द्रव्यव्यम् ; ' अहावचाऽभिनायाणं ' ति यथाऽपत्यम् एवम् अभिज्ञाताः—अवगता यथापत्याभिज्ञाताः; अथवा यथापत्याश्च ते अभिज्ञाताश्च इति कर्मधारयः. ते चाङ्गारकादयः पूर्वोक्ताः, एतेषु च यद्यपि चन्द्र—सूर्ययोवर्षलक्षायिकं पत्थोपमम्, तथाऽपाऽऽधिक्यस्याऽविविद्यतित्वाद् अङ्गारकादीनां च प्रहत्वेन पत्थोपमस्थैव सद्भावात् पत्थोपमम् इत्युक्तम् इति.

हैंये हमणां कहेल अहदंड बगेरेनां अनिश्चित फळो देखाडतां फहें छे के, ['पाणक्खय' ति] बल्ला छ्यो, ['जणक्छय' ति] माणसोना नाओ, हवे छेवटे उपसंहार करता कहें छे के, ['वसण्डभूया अगारिआ जे यावण्यो तहणगार' ति] अहीं अश्वरनी घटना—शब्दार्थ—
आ प्रमाणे छे:—तेना फळरूपे शाम्रक्षय वगेरे ज छे एटलुं ज नहीं किन्तु जे बीजा पण हा एयादिनी समान छे—आपतिरूप अने पापरूप छे—ते
बधा उपद्रवो पण तेना फळरूपे छे. 'ते बचा उपद्रवो सोग महाराजायी अजाण्या नधी 'एम बाक्यनो संबंध करतो. ['अण्णाय' ति] अज्ञात
—अनुमानथी अजाण्या, ['अदिट्ठ 'ति] अहट्य-प्रत्यक्षनी अपेक्षार नहीं जोरल, ['अहुय' ति] बीज श्री अणसांमळेळा, ['अमुय' ति]
मननी अपेक्षाए नहीं याद करेल, [अविण्णाय' ति] अविष्ती अपेक्षार अविज्ञात, ['अहावच्च 'ति] अपत्य—पुत्र—नी जेवा ज देवो ते यथापत्य देवो—पुत्रने ठेकाणे रहेला देवो, ['अमिज्ञाय' ति] अभिमत वस्तु करनारा होवाशी अभिज्ञात, ['होत्य' ति] हता, 'हता 'ए कियापद स्चकरूप होवाथी 'होय छे अने होशे 'ए पत्र जाणवुं. ['अहावच्चभिज्ञायाणं' ति] पुत्रनी पेठे ज जाणेहा—गणेला—ते यथापत्याभिज्ञात
अथवा-पुत्रनी जेवा अने अभिज्ञात. आगळ कहेला अंगारक वगेरे देवो पुत्रनी जेवा छे. ए बवामां जो के चंद्र अने सूर्यनी आवरदा पत्योपम
करतां एक लाख वरस वधारे छे, तो पण ते वधाराने अहीं गण्यो नथी अने अंगारक वगेरे ग्रहो होवाथी (ग्रहोनी आवरदा एक पत्योपमनी क

यम.

४. प्र०—कैहि णं भंते ! सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो ४. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र देवराज शक्तना यम महाराजानुं जमस्स महारण्णो वरिसिष्ठे नामं महाविमाणे पण्णत्ते ? वरिष्ठि नामनुं महाविमान क्यां आव्युं कह्युं छे ?

१. शा स्थळे कर्मधारय समास करवो:--श्रीअभय०

१. मूल-छायाः - कुत्र भगवन् । शकस देवेन्द्रस्य, देवराजस यमस महाराजस वरशिष्टं नाम महाविमानं प्रज्ञसम् १: --अ तु०

४. उ०--गीयमा ! सोहम्मवडिंसयस्स महाविमाणस्स दाहिणेणं सोहम्मे कप्ने असंखेजाइं जोयणसहस्साइं वीईवइत्ता एत्थ णं सक्रस्स देविंदस्स, देवरण्णो जमस्स महारण ो वरसिष्ठे नामं विमाणे पण्णत्ते:-अद्भतेरसजोयणसयसहस्साई, श्रहा सोमस्स विमाणं तहा जाव-अभिसेओ; रायहाणी तहेव, जाव-पासायपंतीओ: सकस्स णं देविंदस्स, देवरण्णो जमस्स महारण्णो इमे देवा आणा, जाव-चिहंतिः तं जहा-जमकाइया इ वा, जमदेवकाइया इ वा: पेयकाइया इ वा, पेयदेवयकाइआ इ वा; असुरकुमारा, असुरकुमारीओ; कंदपा, निरयवाला, आभियोगा; जे यात्रणो तहप्यगारा सन्वे ते तन्भत्तिगा, तप्पनिखया, तन्भा-रिया सक्करस देचिंदस्स, देवरण्णो जमस्स महारण्णो आणाए जाव-चिह्नंति; जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समप्पजाति, तं जहा:-डिंवा इ वा, डमरा इ वा, कलहा इ वा, बोला इ वा, खारा इ वा, महाजुद्धा इ वा, महासंगामा इ वा, महासत्थनिवडणा इ वा, एवं महापुरिसनिवडणा इ वा, महारुहिरनियङणा इ वा, दुष्मूआ इ वा, कुलरोगा इ वा, गामरोगा इ वा, मंडलरोगा इ वा, नगररोगा इ वा, सीस-वेअणा इ वा, अच्छिवेअणा इ वा, कण्णवेअणा इ वा, नहवेअणा इ वा, दंतवेअणा इ वा, इंदरगहा इ वा, खंदरगहा इ वा, कुमारग्गहा इ वा, जनस्वग्गहा इ वा, भूअग्गहा इ वा, एगाहिआ इ वा, बेयाहिआ इ वा, तेयाहिआ इ वा, चाउत्थहिआ इ वा; उव्वेयगा इ वा, कासा इ वा, सासा इ वा, जरा इ वा, दाहा इ वा, कच्छकोहा इ वा, अजीरया, पंडुरोगा, हरिसा इ वा, भगंदरा इ चा, हिअयसूला इ वा, मत्थयसूला इ वा, जोणिसूला इ वा, पग्ससूला इ वा, कुन्छिसूला इ वा, गाममारी इ वा, मगरमारी इ वा, खेडमारी इ वा, कव्वडमारी इ वा, दोणमुह-मारी इ वा, मडम्बमारी इ वा, पट्टणमारी इ वा, आसममारी इ. वा, संवाहमारी इ वा, सिणवेसमारी इ वा, पाणक्खया, जणक्लया, धणक्लया, कुलक्लया, वसणब्भूआ अणारिया, ने यावि अने तहप्पगारा ण ते सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो जमस्स

४. उ० - हे गौतम । सौधर्मावतंसक नामना महाविभीन दक्षिणे सौधर्म कहए छे. सांधी असंख्य हजार योजनो मृत्या पछी-अहां-देवेंद्र, देवराज शक्तना यम महाराचानुं बरिनष्ट नामनुं महाविमान कहां छे. तेनी छंबाई अने पहोळाई साडा बार लाख योजननी छे, इलादि वधुं सोमना दिमाननी पेठे जाणबुं अने यावत्-अभिषेक, राजधानी अने प्रासादनी पंक्तिओ संबंधे पण ते ज रीते समजवुं, देवेंद्र देवराज शक्तना यम महाराजानी आ-ज्ञामां यावत् आ देवो रहे छे:-यमकायिक, यमदेवकायिक, प्रेतकायिक, प्रेतदेवकायिक, असुरकुमार, असुरकुमारीओ, कंदर्भी, नरकपाछी, अभियोगी अने तेवा प्रकारना बीजा पण बधा देवी तेनी भक्तिवाळा, तेना पक्षवाळा अने तेने तात्रे रहेनारा छै-ते बधा देवेंद्र देवराज शक्रना यम महाराजानी आज्ञामां यावत् रहे छे. जंबूदीप नामना द्वीपमां मंदर पर्वतनी दक्षिणे जे आ उत्पन्न थाय छे:— डिंबो, डमरो, कलहो, बोलो, खरो, महायुद्धो महासंप्रामो, महाशस्त्रनिपतनो, ए प्रमाणे म्हापुरुपनां मरणो, महारुधिरनां निपतनो, दुर्मूतो, कुलरोगो, प्रामरोगो, मंडलरोगो, नगररोगो, माथानो दुखावो, आंखनी पीडा, काननी वेदना, नखनो रोग, दांतनी पीडा, इंद्रप्रहो-इंद्रना वळगाडो, स्कंदप्रहो, कुमारप्रहो, यक्षप्रहो, भूतप्रहो, एकांतरिओ ताव, बेआंतरिओ तात्र, त्रण आंतरिओ तात्र, चोथीओ तात्र, उद्देगो, खांसी. श्रास -दम, बळनाशक ताव, दाह, शरीरना अमुक भागोनं सडवुं, अजी-रण, पांडुरोग, हरस, भगंदर, छातीनुं शूळ, माथानुं शूळ, योनिनुं श्ळ, पडखानुं श्ळ, काखनुं श्ळ, गामनी मरकी, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, मलंब, पहन, आश्रम, संबाध, अने सन्निवेशनी मरकी, प्राणक्षय, जनक्षय, कुलक्षय, व्यसनभूत अनार्थ (पापरूप) अने तेवा ज प्रकारना बीजा बया पण-ते बधा, देवेंद्र देवराज

१. मूलच्छायाः—गीतम ! साथमाऽवतंसकस्य महाविमानस्य दक्षिणेन सीथमें कल्पे असंख्येयानि योजनसहस्राणि व्यतिन्नय अत्र शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य अमस्य महाराजस्य वरिष्ठ नाम विमानं प्रज्ञसम्:—अर्थत्रयोदरायोजनशतसहस्राणि, प्रथा सोमस्य पिमानं तथा यावत—शिमिकः; राजधानी तथेव, यावत—प्रासादपदक्तयः; शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य यमस्य महाराजस्य इमे देवा आज्ञायां यावत—तिष्ठन्ति, तथ्याः—यमकायिकाः इति वा, यमदेवकायिका इति वा; प्रत्यायका इति वा, प्रेतदेवताकायिका इति वा; असुरकुमाराः, असुरकुमाराः, वस्त्राजस्य यमस्य महाराजस्य आज्ञायां यावत—तिष्ठन्ति, जम्बूरीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन यानि इमानि समुत्यवन्ते, तथ्याः—दिवन्द्रस्य, देवराजस्य यमस्य महाराजस्य आज्ञायां यावत—तिष्ठन्ति, जम्बूरीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन यानि इमानि समुत्यवन्ते, तथ्याः—दिव वा, हन्दर इति वा, कर्त्या इति वा, महायुद्धानि इति वा, प्रवेदना इति वा, स्वत्रया इति वा, अक्षिवेदना इति वा, कर्णवेदना इति वा, क्रव्यदेना इति वा, प्रमत्येगा इति वा, अत्रयहा इति वा, क्रव्यद्धान इति वा, अत्रयहा इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, अत्रयहा इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रवाद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रवाद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रवाद्धान इति वा, प्रवाद्धान इति वा, प्राप्तयान इति वा, प्रत्यद्धान इति वा, प्रवाद्धान इति वा

ृहिण्णो अन्नाया, तेसिं वा जमकाइयाणं देवाणं. सकस्स देविं-दस्स, देवरण्णो जमस्स महारण्णो इमे देवा अहावचा अभिण्णायां होत्था; तं जहाः—

अंबे अंबरिसे चेव सामे सबले ति यावरे, रुहो-वरुहे काले य महाकाले ति यावरे.

असी य असिपत्ते कुंभें (असिपत्ते धणू कुंभे) वालू वेयरणी ति य, खरस्तरे महाघोसे एमेए पत्ररसाऽऽहिया.

सक्कस्स णं देविंदस्स, देवरण्णो जमस्स महारण्णो सत्तिभागं पिलओवमं ठिई पण्णत्ता, अहावचाभिण्णायाणं देवाणं एगं पिलिओवमं ठिई पण्णत्ता, एवं महिड्डीए, जाव-जमे महाराया.

शक्तना यम महाराजाथी अथवा यमकायिक देवोथी यावत्— अजाण्या नधी. देवेंद्र देवराज शक्तना यम महाराजाने आ देवो अपत्यरूप अभिमत छे:——

अंब, अंबरिष, स्याम, सबल, रुद्र, उपरुद्र, काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष्, कुंभ, वाल, वैतरणी, खरस्वर अने महाघोष एम ए पन्नर छे.

देवेंद्र देवराज शक्तना यम महाराजानी आवरदा त्रण माग सहित पल्योपमनी छे अने तेना अपग्ररूप अभिमतं देवोनी आवरदा एक पल्योपमनी छे—एवी मोटी ऋदिवाळो यावत् ए यम महाराजा छे.

२. 'पेयकाइय' ति प्रेतकायिका व्यन्तरविशेषाः, 'पेयदेवयकाइअ' ति प्रेतसःकदेवतानां सम्बन्धिनः, 'कंदप्य' ति ये कन्दर्पभावनाभावितत्वेन कान्दर्पिकदेवेषु उत्पन्नाः, कन्दर्पशीलाश्च-कन्दर्पश्चाऽतिकेलिः. ' आभियोग ' त्ति ये अभियोगभावनाभावि-तत्वेन आभियोगिकदेवेषु उत्पत्नाः, अभियोगवर्तिनश्च-अभियोगश्चाऽऽदेश इति. ' डिंबा इ व ' ति डैम्बा विष्नाः, ' डमर ' ति एक-राज्ये एव राजकुमारादिकृतोपद्रवाः, 'कलह 'ति वचनगटयः, 'वोल 'ति अव्यक्ताऽक्षरध्वनिसमूहाः, 'खार 'ति परस्परमत्सराः, ' महाजुङ 'ति महायुद्धानि व्यवस्थाविहीनमहारणाः, ' महासंगाम 'ति सव्यवस्थचकादिव्यूहरचनोवेतमहारणाः, महाशस्त्रनिपातनादयस्तु त्रयो महायुद्धादिकार्यभूताः, ' दुब्भूअ ' ति दुष्टा जन-धान्यादीनामुपद्दवहेतुस्त्रात् , भूताः सत्त्राः-यूका-मुस्कुणो-न्दुर-तिद्वपभृतयो दुर्भूता ईतम इत्यर्थः. इन्द्रमहादय उन्मत्तताहेतवः, एकाहिकादयो ज्वरविशेषाः, ' उच्वेयम ' त्ति ' उद्देगकाः '-इष्टवियोगादिजन्या उद्देगाः, ' उद्देजकाः ' वा–छोकोद्देगकारिणश्चौरादयः. ' कच्छकोह ' त्ति कक्षाणां शरीराऽवयवविशेषाणाम् , वन–गहनानां वा कोथाः -कुथितःवानि, शटितानि वा कक्षाकोथाः, कक्षकोथा वा. ' अंब ' इत्यादयः पश्चदश असुरनिकायाऽन्तर्वर्तिनः परमाधार्मिकनिकायाः, तत्र यो देवो नारकान् अम्बरतले नीत्वा विमुश्चति असौ ' अम्बः ' इत्यमिधीयते. यस्तु नारकान् कल्पनिकाभिः खण्डशः कृत्वा भ्राष्ट्र-पाकयोग्यान् करोति इति असौ अम्बरीषस्य-भ्राष्ट्रस्य संबन्धाद् 'अम्बरीषः' एव उच्यते. यस्तु तेषां शातनादि करोति, वर्णतस्तु इयामः, स ' स्यामः ' इति. ' सबले ति यावरे 'ति शबल इति चाऽपरो देव इति प्रक्रमः, स च तेषां अन्त्र-हृदयादीन् उत्पाटयति, वर्णतश्च ' शबळः '—कंर्बुर इसर्थः. यः शक्ति—कुन्तादिषु नारकान् प्रोतयति स रौद्रत्याद् ' रौद्रः ' इति. यस्तु तेषाम् एवाऽङ्गो—पाङ्गानि भन्कि सोऽत्यन्तरौद्रत्वाद् 'उपरौद्रः ' इति. यः पुनः कण्ड्वादिषु पचति, वर्णतश्च कालः स 'कालः ' इति. 'महाकाले ति यावरे ' चि महाकालः ' इति चाऽपरो देवः इति प्रक्रमः, तत्र यः श्रक्ष्णमांसानि खण्डियत्वा स्वा (खा) दयति वर्णतश्च महाकालः स ' महाकालः ' इति. ' असी य ' ति यो देवोऽसिना तान् छिनत्ति सः ' असिः ' एव. ' असिपत्ते ' ति अस्याऽऽकारपत्रवद्दन-विकुर्वणाद् ' असिपत्रः ', ' कुंमे ' ति कुम्भादिषु तेषां पचनात् ' कुम्भः '; कवित्पठयते—' असिपत्ते धणू कुंमे ' ति तत्राऽसि-पत्र-कुम्भी पूर्ववत्, 'धणु 'त्ति यो धनुर्विमुक्ताऽर्धचन्द्रादिभित्रीणैः कर्णादिनां छेदन-भेदनादि करोति स 'धनुः ' इति. ' वालु 'त्ति कदम्बपुष्पाद्याकारवालुकासु यः पचित स ' वालुकः ' इति. ' वेयरणी चि य 'त्ति वैतरिणीति च देव इति प्रक्रमः, तत्र पूय-रुधिरादिभृतवैतरणी-अभिधाननदीविकुर्वणाद् ' वैतरणी ' इति. ' सरस्तरे ' ति यो वज्रकण्टकाकुलशाल्मलीवृक्षमारोप्य नारकं खरस्वरं कुर्वन्तम्, कुर्वन् वा कर्षस्यसौ ' खरस्वरः '. ' महाघोसे ' ति यस्तु भीतान्, पटायमानान् नारकान् पशून् इव वाटकेषु महाघोषं कुर्वन् निरुणि स ' महाघोषः ' इति. ' एमेए पचरसाहिय ' ति एवम् - उक्तन्यायेन एते यमयथापत्यदेवाः पञ्चदश आस्याता इति.

कायिकादि.

आमियोग.

-कलहादि.

२. ['पेयकाइय' ति] प्रेतकायना एक जातना व्यंतर विशेषो, ['पेयदेवयकाइअ' ति] प्रेत संबंधी देवोना संबंधी ते-प्रेतदेवता-कायिक देवो, ['कंदप 'ति] कंदप भावनाथी वासित होवाने लीघे जेओ कंदप देवोमां उपन्या छे-जेओनी प्रकृति कंदप अतिकीडा-मां ज रमनारी होय छे-ते कंदप देवो, ['आमियोग 'ति] अभियोग भावनाथी भरपूर होवाने लीघे जेओ आभियोगिक देवोमां उपन्या छे-जेओनी प्रकृति अभियोग-आदेश-मां वर्तनारी छे-ते आभियोगिक देवो, ['डिंबा इ व 'ति] डिंबो-विशो, ['डमर 'ति] एक राज्यमां ज राजकुमार वेगेरेए करेला उपद्रवो-डमरो, ['कलह 'ति] क्लेश माटे राडो पाडवी—कल्हो ['बोल 'ति] नहीं समजाय तेवा (अक्षरवाला)

^{9.} मूळळायाः—महाराजस्य अज्ञाताः, तेषां वा यमकायिकानां देवानाम्. शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य यमस्य महाराजस्य इमे देवा यथाऽपत्या अभिज्ञाता अभवन्; तद्यथाः—अम्बः, अम्बरिषश्चेव इयामः सवल इति योऽपरः, रहो—परुदः कालश्च महाकाल इति योऽपरः. असिश्च असिपत्रः कुम्भः (असिपत्रो धनुः कुम्भो) वालुः वैतरणी इति च, खरखरो महाघोषः एवमेते पद्यदशाऽऽख्याताः. शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य यमस्य महाराजस्य सित्रमागं पत्योगमं स्थितिः प्रज्ञसा, यथाऽपत्याऽभिज्ञातानां देवानाम् एकं पत्योपमं रिथतिः प्रज्ञसा, एवं सहाईकः, यावत्-यमो महाराजः—अनुक

शब्दना समूहो — बणबणाटो — बोलो, [र खार ' ति] परस्पर मत्सर — खार, [' महाजुद्ध ' ति] व्यवस्था विनानी मोटी लडाइओ - महाजु ['महासंगाम ' ति] व्यवस्थायाळी अने चक वंगरेना व्यृह्नी रचनावाळी मोटी लढाइओ--महासंग्रामो, 'मोटां शस्त्रे तुं पढवुं ' 'मोटं पुरुषोनुं रणमां पडवुं ' अने ' रुधिरना मोटा प्रवाहो ' ए त्रणे तो महायुद्ध विगरेना परिणामरूप छे . [' दुव्मूख ' ति] माणसोन अने अनाज बगेरेने मुकशानी पहोंचाडनारा नठारा जीवो-जू, माकड, उंदर अगे तीड वगेरे ते दुर्भूतो—दुष्ट जीवो, इंद्रग्रह वगेरे गांडपणना कारणो-एक जातना वळगाडो-छे, एकाहिक--एकांतरिओ-- वगेरे एक जातना तावो छे, [' उच्वेयग ' ति] ' वहालानो वियोग ' विगेरे कारणोधी थएला उद्वेगो-ते उद्वेगको अथवा लोकोने उचाट करावनारा चोर वंगरे नटारा लोको ते-उद्वेजको, ['कच्छकोह ' ति] काखलीओनो-एक जातना शरीरना भागोनो-सड़ो ते कक्षाकोथ के वन अने झाडिओनो सड़ो ते कक्षकोथ. असुरना निकायोमां रहेनारा ' अंव ' नगरे पन्नर परमाधामिना अंव विगेरे पन निकायों छे. तेमां जे देव नारकोने आकाशमां छई जईने नीचे पडता मूके ते 'अंब ' कहेवाय छे, जे देव कातरोत्रडे (कातरणिओवडे) नारकोना कटका करीने तेने भाठामां पकववाने योग्य बनावे ते 'अंवरीष ' कहेवाय छे, कारण-ने अंबरीष-भाठा-नी साथे संबंध धरावतो होय ते पण उपचारथी अंबरीव-भाठो-कहेवाय ते कांइ खोटुं नथी. वे देव नारकोने शातन-पीडा-विगेरेथी त्रास आपे छे अने रंगे काळो छे ते ' स्याम ' कहेवाय छे, [' सबले ति यावरे ' ति] शबल नामनो बीजो देव छे, ते नारकोना आंतरडाओ अने हृदय वगेरेने फाडी नांखे छे अने रंगे काबर चितरों छे तथी ' शबल ' कहेवाय छे, जे देव बरछी अने कुंत-माला-विगरेमां नारकोने परीवे छे ते रौद्र-भयंकर होवाधी ' रौद्र ' कहेवाय छे. जे देव नारकोनां अंग अने उपांगीने चीरी नाखे छे ते बहु भयंकर होवाथी ' उपरौद्र ' कहेवाय छे. वळी जे देव कडाया वगेरेमां नारकोने रांधे छे अने रंगे काळो छे ते ' काल ' कहेबाय छे, [' महाकाले ति यावरे ' ति] महाकाल नामनो बीजो देव छे, जे देव नारकोना चिकाशदार मांसना दुकडाओने खांडीने स्वाद ले छे अने रंगे घणो कालो छे माटे ते 'महाकाल कहेवाय छे. ['असी य 'ति] जे देव नारकोने तरवारथी छेदे ते 'असि 'कहेत्राय छे, ['असिपत्ते 'ति] जे देव तरवारना घाटनी जेवां पांदडांओवाळुं वन विकुर्वे-बनावे-ते ' असिपत्र ' कहेवाय छे. [' कुंभे ' ति] जे देव नारकोने घडा वेगेरेमां नाखीने रांधे ते ' कुंभ ' कहेवाय छे. [' असिपत्ते धणू कुंभे ' ति] पाठनेदन कोइ प्रतिमां ए प्रकारनो पाठ छे, तेमां 'असिपत्र 'अने 'कुंम 'नो अर्थ पूर्वनी पेठे जाणवो अने ['घणु 'ति] एटले जे देव धनुष् द्वारा फेंकेळां अर्घचंद्रादि बाणोवडे ते नारकोना कान विगेरेने छेदे, मेदे अने बीजी पण पीडा करे ते 'धनुष् कहेवाय छे. ['बालु 'त्ति] जे देव नारकोने कदंबना फुल विगेरेनी आकृति जेवी वेळुओमां संघे ते 'वालुक 'कहेवाय छे, ['वेयरणी ति य 'ति] 'वैतरणी ' नामे देव छेन्जे, पूर्य अने रुधिर विगरेशी भरेली वैतरणी नामनी नदी बनावे छे ते देव 'बैतरणी 'कहेवार छे, [• खरस्सरे ' ति] जे देव वज्र जेवा कांटावाळा शालमिलना झाड उपर चडावीने नारकोने चीस पडाये के चीस पाडता नारकने खेंचे ते 'खरखर ' कहेवाय छे. ['महाघोसे 'ति] वळी जे देव मोटी त्राडो मारतो बीनेला अने पलायन करता नारकोने पशुओनी पेठे वाडाओमां रोकी राखे ते ' महाघोष ' कहेवाय छे . [' एमेए पन्नर-साऽऽहिय ' ति] ए प्रमाणे-पूर्वे जणाव्या प्रमाणे-यम् महाराजाने पुत्रस्थानीय-पुत्रनी जेवा-पन्नर देवो कहा छे.

वरुण.

५. प्र०-केहि णं गंते ! सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो वरुणस्स महारण्णो सयंजले नामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

५. उ०-गोयमा ! तस्त णं सोहम्मवडेंसयस्त विमाणस्त पचारिथमेणं सोहम्मे कप्पे असंखेजाइं, जहा सोमस्स तहा सीधर्म कल्प छे, त्यांथी असंख्येय हजार योजन मूनया पछी-विमाण-रायहाणीओ भाणिअच्या, जाव-पासायवडेंसया, नवरं-नामनाण तं. सक्स्स णं वरुणस्स महारण्णो जाव-चिह्नंति, तं संबंधी बधी हकीकत सोम महाराजानी पेठे जाणबी, तेम ज जहाः--वरुणकाइआ इ वा, वरुणदेवयकाइआ इ वा, नागकुमारा, नागकुमारीओ, उदाहिकुमारा, उदाहिकुमारीओ, थणिअकुमारा, थणिअकुपारीओ; जे यावण्णे तहप्पगारा सब्वे ते तब्मत्तिआ, जाव-चिद्वंति. जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्ययस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुप्पजांति, तं जहाः-अइवासा इ वा, मंदवासा इ वा, सुबुद्दी इ वा, दुवुद्दी इ वा, उदब्मेदा इ वा, उदप्पीला इ वा,

५. प्र०—हे भगवन्! देवेंद्र देवराज शक्तना वरुण महाराजानं खयंज्यल नामनं महाविमान क्यां आव्युं कर्युं छे ?

५. उ० — हे गौतम ! सौधर्मावतंसक विमाननी पश्चिमे अहीं-वरुण महाराजानुं स्वयं व्वल नामनुं महाविमान आने छे. आ विमान, राजधानी अने यावत्-प्रासादावतंसको संबंधे पण ए ज रीते समजवं. विशेष ए के,-नामनो भेद जाणवो. देवेंद्र देवराज शक्तना बरुण महाराजानी आज्ञामां यावत्—आ देवो रहे छै:-वरुणकायिको, वरुणदेवकायिको, नामकुमारो, नामकुमारीओ, उद्विकुमारो उद्विकुमारीओ, स्तनितकुमारो, स्तनितकुमारीओ, अने बीजा पण वधा तेवा प्रकारना देवो तेनी मक्तिवाळा यावत्-रहे छे. जंबूद्वीप नामना द्वीपमां मंदर पर्वतनी दक्षिणे जे आ उत्पन्न थाय छे:- अतिवृष्टि, मंदवृष्टि, सुरृष्टि, दुईष्टि, उदकोद्भेद माधामी-निव

९. मूलच्छायाः - कुत्र भगवन् ! शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य वरुणस्य महाराजस्य स्वयंज्यलं नाम महाविमानं प्रकृप्तम् ? गीतम ! तस्य क्षेषमावतंसकस्य विमानस्य पश्चिनेन सौधर्भे कल्पे असंख्येयानि यथा सोमस्य तथा विमान-राजधान्यो भणितव्याः, गावत्-प्रासादावतंसकाः; नवरम्-मामनानात्वम् . शकस्य वरुणस्य महाराजस्य यावत्-तिष्ठन्ति, तदाथाः-वरुणकाधिका इति वा, वरुणदेवताकायिका इति वा; नामकुमाराः, नामकुमाराः, उत्धिकुमाराः, उद्धिकुमार्थः; स्तनितकुमाराः, स्तनितकुमार्यः; ये चःप्यःन्ये तथाप्रकाराः सर्वे ते तद्भिक्तिः। यावत्–तिष्टन्तिः, जम्बूद्रीपे द्रीपे मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन यानि इमानि समुत्पवन्ते, तथथाः-अतिवर्षा इति वा, गन्दवर्षा इति वा, सुरृष्टिः इति वा, दुर्वृष्टिः इति वा, उदक्रेनदा इति ना, उदमोत्पीला इति वाः—अनु०

निहा इ वा, पन्नाहा इ वा, गामवाहा इ वा, जाव—संनि-नेसनाहा इ वा; पाणन्स्या, जाव—तेसिं वा वरुणकाइआणं देनाणं. सक्कस्स णं देविंदस्स, देवरण्णो वरुणस्स महारण्णो नाव— अहानधाऽभिण्णाया होत्था, तं जहा:—कक्कोडए, कद्दमए, अंजणे, संखवालए, पुंडे, पलासे, मोए, जए, दिहमुहे, अयंपुले, काय-रिष. सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वरुणस्स महारण्णो देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता, अहावचाभिण्णायाणं देवाणं एगं पिक्कोवमं ठिई पण्णत्ता, एमहिडीए, जाव—वरुणे महाराया. (पहाड विगेरेमांथी पाणीनी उत्पत्ति), उदकोत्पीळ (तळाव वगेरेमां पाणीनो समूह), अपवाह (पाणीनुं थोडुं वहेवुं), पाणीनो प्रवाह, गामनुं तणाई जवुं, यावत्—संनिवेशनुं तणाई जवुं, प्राणक्षय, ए वधा वरुण महाराजाथी अथवा वरुणकायिक देवोथी अजाण्या नथी. देवेंद्र देवराज शक्तना वरुण महाराजाने आ देवो अपत्यरूप अभिमत छे:—कर्भेंटक, कर्दमक, अंजन, शंखपाळक, पुंड्, पळाश, मोद, जय, दिधमुख, अयंपुळ अने कातिरिक. देवेंद्र देवराज शक्तना वरुण महाराजानी आवरदा वे पल्योपम करतां कांइक ओछी कही छे अने तेना अपत्यरूप देवोनी आवरदा एक पत्योपमनी कही छे—एवी मोटी ऋदिवाळी यावत्—वरुण महाराजा छे.

- ३. 'अइवास ' ति अतिशयवर्षाः—वेगवद्धर्षणानि इसर्थः, ' मंदवास ' ति शनैर्वर्षणानि, ' सुवृद्धि ' ति धान्यादिनिष्विति हेतुः, ' दुवृद्धि ' ति धान्यादिनिष्विते हेतुः, ' दुवृद्धि ' ति धान्यादिनिष्विते ं ति उदकोद्धेदाः—गिरितटादिभ्यो जलोद्धवाः, ' उदणि ' ति उदकोधिणः—तडागादिषु जलसम्हाः, ' उच्चाह् ' ति अपकृष्टानि—अस्पानि उदकवहनानि, तान्येव प्रकर्षवन्ति प्रवाहाः. इह प्राणक्षयादयो जलकत्ता दृष्ट्याः. ' ककोडए ' ति कर्कोटकाभिधानोऽनुवेलंधरनागराजावासभूतः पर्वतो छवणसमुद्दे ऐशान्यां दिशि अस्ति—तिन्वासी नागराजः ' कर्कोटकः ' . ' कदमए ' ति आग्नेय्यां तथैव विद्युत्प्रभपर्वतः, तत्र कर्दमको नाम नागराजः . ' अंजणे ' ति वेलम्बाभिधान-वायुक्तुमारराजस्य लोकपालोऽञ्जनाभिधानः, ' संखवालए ' ति घरणाभिधाननागराजस्य लोकपालः शङ्खपालको नामः श्रेपास्तु पुण्डाद-योऽप्रतीता इति.
- ३. ['अइवास' ति] अतिवर्षा-घणो वरसाद-वेगपूर्वेक वरसतो वरसाद, ['मंदवास' ति] धीमो वरसाद, ['सुवृद्धि' ति] ह्विधि-अनाज वगेरेने सारो पाक थाय एवो वरसाद, ['दुवृद्धि' ति] दुवृद्धि-अनाज वगेरेने न पकावी शके तेवो वरसाद, ['उदन्भेद' ति] उदकोद्भेद-पहाडनी तळेटी वगेरे ठेकाणेधी पाणीनुं निसरवुं, ['उदप्पील 'ति] उदकोत्पील (ड) तळाव वगेरेमां भरेला पाणीना समूहो, ['उव्वाह' ति] अपवाह-पाणीना थोडा थोडा रेलाओ, पाणीना वधारे वधारे रेलाओ ते प्रवाह, आ स्थळे 'प्राणक्षय' वगेरेनुं कारण पाणी समूहो, समजवुं. ['कक्कोडए' ति] लव्या समुद्रमां ईशान खूणामां अनुवेलंधर नामे नागराजनो आवासरूप (रहेठाणरूप) कर्कोटक नामे पहाड छे तेथी ते पहाडमां रहेनार नागराज पण 'कर्कोटक' कहेवाय छे, ['कद्मए' ति] ते ज प्रमाणे अन्निख्णामां विद्युत्थम नामे पहाड छे, तेमां 'कर्दमक' नामे नागराज रहे छे, ['अंजणे 'ति] वेलंब नामना वायुकुमारना राजानो 'अंजन 'नामनो लोकपाल छे. ['संखवालए 'ति] गं नगी. धरण नामना नागराजनो 'शंखपालक 'नामनो लोकपाल छे. धुंडू वगेरे बाकी बधा तो (अमारा) जाण्यामां नथी.

वैश्रमण.

६. प्र० — केहि णं भंते ! सकस्स देविंदस्स, देवरण्णो वेसमणस्स महारण्णो चर्गू नामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

६. उ० — गोयमा ! तस्त णं सोहम्मविद्यंत्रयस्त महाविमाणस्त , उत्तरेणं षहा सोमस्त महाविमाण-रायहाणिवत्तव्वया
तहा नेयध्वा, जाव-पासायवर्ष्टसयाः सक्तस्त णं देविदस्स,
देवरण्णो नेसमणस्स इमे देवा आणा-उववाय-ययण-निद्देसे
चिद्वांति, तं जहाः-वेसमणकाइआ इ वा, वेसमणदेवयकाइआ

६. प्र०—हे भगवन् ! देवेंद्र देवराज शक्रना वैश्रमण महाराजानुं वल्गु नामनुं महाविमान क्यां कह्युं छे ?

६. उ० — हे गौतम! तेनुं विमान, सौधमीवतंसक नामना महाविमाननी उत्तरे छे. आ संबंधे बधी हकीकत सोम महाराजानी पेठे जाणवी अने ते यावत्—राजधानी तथा यावत्—प्रासादावतंसक संबंधे पण तेम ज जाणवुं. देवेंद्र, देवराज शक्रना वैश्रमण महाराजानी अञ्चामां, उपपातमां, कहेणमां अने निर्देशमां आ देवो रहे छे:—वैश्रमणकायिक, वैश्रमणदेवकायिक, सुवर्णकुमारो,

१. मूलच्छायाः—अपवाहा इति या, प्रवाहा इति वा, प्रामवाहा इति वा, यावत्—संनिवेशवाहा इति वा; प्राणक्षयाः, यावत्—तेषां वा वरणः कायिकानां देणनाम्. शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य वरणस्य महाराजस्य यावत्—यथाऽपछाऽभिज्ञाता अभवन्, तथयाः—कर्केटिकः, कर्दमकः, अजनः, शक्ष्यपालकः, पुण्डः, पलाशः, मोदः, जयः, दिधमुखः, अयंपुलः, कातिकः. शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य वरणस्य महाराजस्य देशोने द्वे पल्योपमे स्थितिः प्रज्ञातः, यावत्—वरुणो महाराजः. २. कुत्र भगवन् ! शकस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य वेश्रमणस्य महाराजस्य वल्यु नाम महाविमानं प्रज्ञप्तम् ! गोतम ! तस्य सौधमीवतंसकस्य महाविमानस्य उत्तरेण यथा सीमस्य महाविमान-राजधानीवक्तव्यता तथा ज्ञा(ने)तव्या, यावत्—प्रासादावतंसकाः. शकस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य वेश्रमणस्य इमे देवा आज्ञा—उपपात—स्थल-निद्देशे तिप्रन्ति, तद्यथाः—वेश्रमणकाथिका इति वा, वेश्रमणदेवताकायिका इति वाः—अजु०

इं वा, सुवण्णकुमारा, सुवण्णुमारीओ; दीवकुमारा, दीवकु-मारीओ; दिसाकुमारा, दिसाकुमारीओ; वाणमंतन, वाणमंत-रीओ; जे यावणो तहपागारा सब्बे ते तन्भतिआ, जाव चिहांति. इधा देवी तेनी भक्तिवाळा, (तेना पश्चवाळा अने तेने तांव जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्ययस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुध्यजीते, तं जहाः - अयागरा इ वा, तज्यागरा इ वा, तंवागरा इ बा, एवं सीसागरा इ वा, हिरण्यागरा इ वा, सुवण्यागरा इ वा, इ वा, सुवण्यवासा इ वा, रयणवासा इ वा, वहरवासा इ वा, आभरणवासा इ वा, पत्तवासा इ वा, पुष्यतासा इ वा, पतः-वासा इ वा, वीअवासा इ वा, महवासा इ वा, वण्यासा इ वा, चुण्यवासा इ वा, गंधंशसा इ वा, वत्थवासा इ वा; हिरण्यवुद्वी इ वा, सुत्रण्यवुद्वी इ वा, रययवुत्री इ वा, यहरवृद्धी इ वा, आभरणवृद्धी इ वा, पत्तवृद्धी इ वा, पुष्फ बा, वणाबुद्धी ह वा, चुणगबुद्धी इ बा, गंधबुद्धी इ बा, वत्थबुद्धी निविओ, निधानो, घणां जूनां नष्ट धणियाळां, जेनी संमाळ करनारा इं वा, भायणंबुड़ी इ वा, स्वीरवुद्धी इ वा; सुकाला इ वा, जण ओछा छे एवा, प्रहीन मार्गवाळां, जेनां घणिनां गोत्रोनां घरो दुकाला इ वा, अप्परघा इ वा, महरघा इ वा, सुभिक्सा इ वा, विरल थयां छे एवां, नवणि आतां, जेनी संभाळ करनार जनो दुन्भिवसा इ वा, कयविक्रया इ वा, सिनिही इ वा, संनिचया नामशेष छे एवां, जेनां धणिनां गोत्रोनां व ी नामशेष छे एवां इ वा, निही इ वा, निहाणाई वा, चिंरपोराणाई वा, पही-णसामिआइं वा, पहींणसे उआई वा, पहींणमग्गाणि वा चार होरीओ ज्यां भेगी थाय एवा मार्गमां, राजमार्गीमां अने पहीणगोत्तागाराइं वा; उच्छण्गसानिआइं वा, उच्छण्णसेउ-आइं वा, उच्छण्णगोत्तागाराइं वा, तिघाडग-तिग-चउक-चचर=चतुम्मुह=महापह-पहेसु वा, नगरनिद्धवणेसु वा, सुसाण-गिरि-कंदर-संति-सेलो-वहाग-भवणगिहेसु संविक्षिताइं चि- रहेवाना घरमां राखेळां छाखो रूपियानां निधानो अने दाटेळी हान्तः; न ताइं सक्स्स देविंदस्स, देवरण्यो वेसमगस्स महा- छाखो रूपियानी दोछतः, ए वधुं देवेंद्र देवराज शक्षना वैश्रमण रण्णो अन्नायाइं, अदिद्वाइं, असुआइं, अस्सु (मु) आइं, अबि- महाराजाधी, के वैश्रमणकाथिक देत्रोधी अजाण्युं नधी, अणजोयुं ण्णायाइं; तेसि वा वेसमणकाइआणं देवाणं. सक्तस्स देविंदस्त, देवरण्णो नेसमगस्य महारण्गो इमे देवा अहावचाऽनिण्णाया देवेंद्र, देवराज शक्तना वैश्रमण महाराजाने आ देवो अपस्यरूप होत्था, तं जहः: -पुण्णभद्दे, माणिभद्दे, सालिभद्दे, सुमणभद्दे, अभिमत छे:-पूर्णभद्द, माणिभद्र, शालिभद्र, सुननोमद्र, चक्र,

सुवर्णकुमारीओ, हीपकुमारो, द्वीपकुमारीओ, दिकुमारो, दिकु रीओ, वानव्यंतनो, बानव्यंतरीओ तथा देवा प्रकारना बीजा पत रहेनारा) यावत्-छे. जंबूदीय न मना द्वीपमां मंदर पर्यतनी दक्षिणे जे आ उत्पन्न थाय छे:-छोडानी खाणो; रांमानी-कळाइनी-खाणो, तांबानी खाणो, सीमानी खाणो, हिरण्यती, सोनानी, रयणागरा इ वा, वहरागरा इ या, वसुहारा इ वा, हिरण्यवासा स्टन्नी, अने वज्रनी खाणो, बसुधारा, हिरण्यती, सुवर्णनी, रत्ननी, बज़नी, घरेणांनी, पांइडानी, फुळनी, फळनी, बीननी, माळानी, वर्गनी, चूर्गनी, गंधनी अने बख्ननी वर्शओ; तथा ओडी के बधारे हिरण्यनी, सुवर्णनी, रत्ननी, यज्ञी, आगरणनी, पत्रनी, पुष्पनी, फळती, बीवनी, माल्यनी, बाली, चूर्मनी, गंधनी, बस्ननी, भाजननी अने क्षीरनी वृष्टि; मुकाळ, दुनाळ, सोंघरत, मोंघारत, मिञ्चानी समृद्धि, मिक्षानी हानि, खरीदी, वुड़ी इ वा, फलवुड़ी इ वा; बीअवुड़ी इ वा, मलवुड़ी इ वेचाण, घी अने गोळ वगेरेनुं संघरवुं, अनाजने संघरवुं तथा अने सिंगोडाना घाटबाळा मार्नमां, तरभेटामां, चोकंमां, चत्वरमां, सामान्य मार्गीमां, नगरनी पाणीती खाळोमां-गटरोमां, मसाणगां, पहाड उपरना घरमां, गुफामां, शांतिघर-धर्म किया करवाना ठेकाणा-मां, पहाडने कोतरीने बनावेळ घरमां, सभाने स्थाने अने नथी, अणसांभळ्युं नथी, अणसमरेळ नथी अने अविज्ञात नथी. चके, रक्खे, पुण्णरक्खे, स (प) व्वाणे, सञ्चलसे, सञ्चकामे, रक्ष, पूर्णरक्ष, सद्दन, सर्वयशाः, सर्वकाम, समृद्ध, अमोच अने

१. मूलच्छायाः —सुवर्णकुमाराः, सुवर्णकुमार्थः; द्वीपकुमाराः, द्वीयकुमार्यः; दिवकुमाराः, दिवकुमार्यः; वानव्यन्तराः, वानव्यन्तर्थः; ये चःप्यऽन्ये तथाप्रकाराः सर्वे ते तद्गक्तिकाः, यावत्-तिष्ठन्तिः, जम्बूर्द् पे हीपं सन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन थानि इमानि समुत्पद्यन्ते, तद्यशः अयआकरा इति चा, त्रपुत्राकरा इति चा, ताम्राऽऽकरा इति चा, सीलकाऽऽकरा इति चा, हिरण्याऽऽकरा इति चा, सुवर्णाऽऽकरा इति वा, रत्नाकरा इति बा, मम्राऽऽकरा इति वाः प्रमुधाग इति वा, हिरण्यवर्षः इति वा, सुवर्णवर्षा इति वा, रत्नवर्षा इति वा, वज्रवर्षा इति वा, आभरणवर्षा इति वा, पत्रवर्षा इति वा, पुष्पवर्षा इति वा, फलवर्षा इति वा, बीजवर्षा इति वा, माल्यवर्षा इति वा, वर्णवर्षा इति वा, चूर्णवर्षा इति वा, गन्धवर्षा इति वा, वस्रवर्षा इति या; हिरण्यपृष्टिः इति वा, सुनर्णपृष्टिः इति बा, रत्नपृष्टिः इति वा, चञ्चवृष्टिः इति वा, आसरणवृष्टिः इति वा, पत्रवृष्टिः इति वा, पुष्पवृष्टिः इति वा, फेलवृष्टिः इति वा, बीजवृष्टिः इति वा, गाल्यवृष्टिः इति वा, वर्णवृष्टिः इति वा, चूर्णवृष्टिः इति वा, गन्यवृष्टिः इति वा, कलवृष्टिः इति वा, भाजनवृष्टिः इति वा, श्लीरवृष्टिः इति वा; सुकाला इति वा, दुष्काला इति वा, अल्पाटर्या इति वा, महार्या इति वा, सुभिक्षा इति वा, दुर्भिक्षा इति वा, क्रयविकया इति वा, संनिधयः इति वा, संनिचया इति वा, निधयः इति वा, निधानानि इति वा, चिरपुगणानि इति वा, प्रहीणस्वानिकानि इति वा, प्रहीणसेनकानि इति बी, प्रहींगमार्गाण इति था, प्रहीणगोत्रामाराणि इति या; उत्सवसामि हानि इति या; उत्सन्नसेंचकानि इति वा, उत्सनगोत्रागाराणि इति वा, शक्षाटक-त्रिक+चतुष्क-चत्वर-चतुर्गुख-प्रहापथ-प्रथेषु वा, नगरनिर्धवनेषु वा, इमशान-गिरि-कन्दरा-शान्ति-शैळो-पस्थान-गेवनगृहेषु संतिक्षिप्तानि तिष्ठति, न तानि शकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य वैश्रवणस्य महाराजस्य अज्ञातानि, अदृष्टानि, अश्रुतानि, अस्मृतानि, अविज्ञातानि; तेषां वा वैश्रवणकायिकानां देवानाम्, राकस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य वैश्रवणस्य गहाराजस्य इमे देवा यथाऽपत्याऽभिज्ञाताः अभवन्, तद्यथाः-पूर्णभदः, गणिभद्रः, शालिभद्रः, सुमन्येभद्रः, चकः, रक्षः, पूर्णरक्षः, सद्वानः, सर्वयशाः, सर्वकामः--अनु •

र्झ, अमोहे, असंगे. सकस्त णं देविंदस्स, देवरण्णो वेसमणस्स असंग. देवेंद्र, देवराज शक्तना वेत्रमण महाराजानी आवरदा बे महारण्यो दो पलिओवमाणि ठिई पण्णत्ता, अहावचाऽभिण्या-यागं देवाणं एगं पिछओदगं ठिई पण्णत्ता, एमहड्रीए, जाव-वेसमणे महाराया.

-सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति.

पल्योपमनी छे अने तेना अपत्यरूप अभिमत देशोनी आवरदा एक पहनोपम छे-ए रीते वैश्रमण महाराजा यावत्-मोटी ऋदिवाळी छे.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रनाणे हे.

भगवंत-अज्ञसहम्मसामिपणौए सिरीभगवईस्ते ततिशसये सत्तमो उदेते। सम्मत्तो.

४. 'वसुहारा इ व 'ति तीर्थकरजन्मादिषु आकाशाद् द्रव्यवृष्टिः, 'हिरण्णवास 'ति हिरण्यं रूप्यम्, ''घटितसुवर्णम् '' इसम्बे. वर्षीऽल्पतरः, वृष्टिस्तु महती इति वर्ष-वृष्टयोभेदः. माल्यं तु प्रथितपुष्पाणि, वर्णश्चन्दनम् , चूर्णो गन्धद्रव्यसंबन्धीः, गन्धाः कोष्ठपुटपाकाः. ' सुमिक्खा इ व 'चि सुकाले, दुष्काले वा भिक्षुकाणां भिक्षासमृद्यः, दुर्भिक्षास्तु उक्तविपरीताः. ' संनिहि ' ति घृत-गुडादिस्था-पनानि, 'संनिचय 'त्ति धान्यसंचयाः, 'निही इ व 'ति लक्षादिप्रमाणद्रव्यस्थापनानि, 'निहाणा इ व 'त्ति भूमिगतसहस्रादि-संख्यद्रव्यस्य संचयाः, किंविधानि ! इत्याह:-' चिरपोराणाइं ' ति चिरप्रतिष्टितःवेन पुराणानि-चिरपुराणानि अत एव ' पहीण-सामियाइं 'ति खल्पीभूतसामिकानि, 'पहीणसेउयाइं 'ति प्रहीणा अल्पीभूगः सेकारः-सेचकाः-घनप्रक्षेतारो येपां तानि, तथा प्रहीण-मार्गाणि वा, 'पहीणगोत्तागाराइं 'ति प्रहीणम्-विरलीभृतमानुषं गोत्रागारम्-तत्त्वामिगोत्रगृहं येषां तानि, तथा 'उच्छवसाामि-याइं ' ति निःसत्ताकीभूतप्रभूणि, ' नगरनिखवणेसु ' ति नगरनिर्धवनेषु –नगरजङनिर्गमनेषु, ' सुसाण-गिरि-कंदर-संति-सेटो-वङ्गाण-लवण-गिहेसू ' ति गृहशब्दस्य प्रस्येकं संबन्धांत् इमशानगृहम्-वितृवनगृहम्, गिरिगृहम्-पर्वतीवरिगृहम्, कन्दरगृहम्-गुहा, शान्तिगृहम्-शान्तिकर्मस्थानम् , शैलगृहम्-पर्वतमुत्कीर्य यत् कृतम् , उपस्थानगृहम्-आस्थानमण्डपः, भवनगृहम्-कुटुग्वियसनगृहमिति.

भगवत्सुधर्मस्वासित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे देतीयशते तसम उद्देशके श्रीअनवदेवस्दिवित्वित विवरणं समाप्तम्,

वसुंधारा. 8. [' वसुहारा इ व ' ति] तीर्थकरना जन्मादि प्रसंगमां आकाशथी ने धनवृष्टि थाय छे तेने दसुधारा (धननी धारा) कहेवामां आंवे छे. [' हिरण्णवास ' ति] हिरण्य एटले रूपुं. बीजाओ हिरण्य शब्दनो अर्थ ' घडेलुं सोनुं ' कहे छे. झरमर झरमर दरसतो दरसाद ' वर्ष ' कहेवाय छ. झपाटाबंध वरसतो वरसाद ' ष्टृष्टि ' कहेवाय छे-ए रिते ' वर्ष ' अने ' दृष्टि ' शब्दना अर्थमां भिन्न मिन्न मान छे. सुंथेलां पुष्पीने माल्य वर्ष-दृष्टि. कहेबामां आवे छे. वर्ण एटले चंदन. चूर्ण एटले सुगंधी द्रव्यनो भूको. गंधो एटले कोछपुटपाक विगेरे. [' सुभिनसा इ व 'ति] सुभिक्ष एटले जे समये मिश्रुकोने भिक्षा सारी रीते गळती होय ते समय, पछी ते सुकाळ हो य वा दुकाळ होय. ए समयथी विपरीतताबाळी समय ते दुर्भिक्ष-₹इ-दुसिक्ष, अर्थात् जे समये मिक्षुकोने मिक्षा न मळती होय ते समय. ['संनिहि 'ति] घी अते गोऊ विगरेनो संत्रहः ['संनिचय 'ति] अनाजनो संग्रह. [' निही इ व ' ति] धननो संग्रह-लाख वा तेथी दधारे धननो संग्रह. [' निहामा इ व ' ति] धननो संदार-जमीनमां दाटेला हजारो रुपियानुं नियान, ए बधां केवां ? तो कहे छे के:-['चिस्पोरागाइं 'ति] बतु समयथी राखेलां होताथी जूनां धण्लां.-एवां होवाथी ज ['पहीणसामियाइं'ति] न घणीआतां घएछां-भाग्ये ज जेनो कोइ घणी धई-मळी-शके एवां. ['पहीणसे उयाइं'ति] ए बधा धन भंडारो हुने एवा अने एटला बचा जूना थई गया छे के, तेमां कोई धननो उमेरनारों पण हयात रह्यों नथी तेम कोई तेनो हिसाब लेनारो पण रह्यों नथी अर्थात् ते प्रहीणसेचक (संचक एटले सिंचन करनार.) एटले सेचक विवाना थएला छे (अथवा ते धन मंदारो 'प्रहीणसेतुक ' छे एटले ते (धन भंडारो), एटला नथा जूना थएला छे के ते तरफ जवा आववानो मार्ग (रोतु) पण ह्यात-रखो नबी-धसाइ गयो छे तथी ते मार्ग तरफ कोइ जतुं आवतुं नथीः)['पहीणगोत्तागाराइं ' ति] जे घणीए ए धन भंडारो भरेला छे तेनुं कोई गोनीय सगुं वा तेवा सनानुं घर पण हवे हयात रह्यं नथी-ए भंडारो एटला वया जूना छे. [' उच्छन्नसानियाई ' ति] जेने लेनाग घर्णाओं हुत्रे सत्ताहीन थएला छे. [' नगरनिद्ध-बणेसु ' ति] नगरनां पाणी नीकळवानी खाळोमां. ['सुप्ताण--गिरि- कंदर--गंति- सेल-उबद्दाण--भवणगिहेसु ' ति] अर्थात् श्वशानगृहमां, हानगृहादि. निरिगृहमां, कंदरागृहमां, शांतिगृहमां, शैंडगृहमां, उपस्थानगृहमां अने भवनगृहरां. इनशानगृह एटले मसाग. गिरिगृह एटले पर्वत उपर रहेलुं घर. कंद । गृह एटले गुफा, शान्तिगृह एटले शांतिने माटे विधिविधानों क वातुं घा, शैरगृह एटले पर्वतमां कोते हुं घर, उरस्थानगृह एटले सभामंडप, भवनगृह एटले कुटुंब रही शके एवं घर.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽसिन् द्यी यः सहणानां परक्वतिकरणाहैतजीवी तपस्वी। असाऋं कीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति शान्योः –द्दात् श्रीवीरदेवः सकटशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः॥

Jain Education International

१. मूलच्छायाः-समृदः, अमोषः, असन्नः, शक्तरं देवेन्द्रस्य, देवराजस्य वैश्रवणस्य महाराजस्य द्वे परुयोपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता, यथाऽपत्याऽभिज्ञा-तालां देवानाम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता, एवं महर्दिकः, य'यत्-वैश्ववणो महाराजः, तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इतिः-अमु॰

शतक ३.-उद्देशक ८.

राजगृह,—असुरकुमारन उपरि केटला ?–दस.–नामनिदेश.–नागकुमारना उपरिओ.-मुवर्णकुमारना–बिकुकुवारना–अभिकुमारना–दीपकुमारना–उद्धिकुमारना -दिक्रुमारना अने स्तनितकुमारना उपरिओ -पिशाचना-वानव्यंतरना-उपरिओ.-साधर्म-ईशानना उपरिओ.-सर्व खर्गना उपरिओ.-विहार.

?. प्र०—रै।यगिहे नगरे जाव-पज्जुवासमाणे एवं वयासी:--

१. प्र॰—राजगृह नगरमां यावत्–पर्युपासना करता आ असुरकुमाराणं भंते ! देवाणं कइ देवा आहेवचं जाव—विहरांति ? प्रमाणे बोल्याः—हे भगवन् ! असुरकुमार देवो^१ उपर केटला देवो अधिपतिपणुं भोगवता यावत्-विहरे छ ?

बौद्धोना सूत्रपिटकना ' मज्झिमनिकाय ' नामना प्रथमां देवोने लगती जे इकीकत जणाय छे तेमांनी फेटलीक आ प्रमाणे छे:— देवनो अर्थ अने प्रकारः

" देवे-दिव्वंति पज्रहि कामगुणेहि, असनो वा इद्धियाति देवा. कीळेंति जोतेंति वा ति-अत्यो ते तिविधा-सम्मुतिदेवा, उप्पत्तिदेवा, विसुद्धिदेवा ति. सम्मुतिदेवा नाम राजानो, देवियो, कुमाराः उप्पतिदेवा माम चातुम्महाराजिके देवे उपादाय ततुसरि देवा. विसुद्धिदेवा नाम अरहंतो खीणासवा. "

" पांच कामगुणो द्वारा जे रहे ते देव अथवा पोतानी ऋदिथी जे रहे ते देव अथवा कीडा करें वा बीपे ते देव. ते देवो त्रण प्रकारना छे: १. सम्मुतिदेव-समृद्धिने लीधे कहेवाता देव (१) जेमकेः राजाओ, देवीओ अने कुमारो. २. उत्पतिद्वारा थएठा देव. जेमकेः चतुर्महाराजिक देव विगेरे. ३. विशुद्धिद्वारा थएला देव. जेमकेः जेओना आसवो क्षीण थएला छे एवा अरहंतो. "-(म० टी० पृ० २३१-राजवाडेनुं)

अहीं के उत्पत्ति-देवो जणावेला छे तेथोनी साथे अहीं-जैनसूत्रमां-सूचवेला शकादिदेवोनुं समानपणुं छे. बत्पति-देवोना प्रकारोः

" चातुम्महाराजिकानं देवानं. तावतिसानं देवानं. यामानं देवानं. मुसिसानं देवानं. निम्मानरतीनं देवानं. परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं. ब्रह्मकायिकानं देवानं. आमानं देवानं. परित्तामानं देवानं. अध्यमाणामानं देवानं. आभस्तरानं देवानं. सुभानं देवानं. परित्तसुभानं देवानं. **अ**प्पमाणसुभानं देवानं. सुभक्षिण्णानं देवानं. येहप्फलानं देवानं. अविहानं धेवानं. अतप्पानं देवानं. सुरस्सानं देवानं. सुरस्सीनं देवानं. अकिनहानं धेवानं. आकासानशायतनूपगानं देवानं. विञ्ञाणघायतनूपगानं देवानं. 🕆 क्षाकिश्वञ्जायतनूषगानं देवानं. नेवसञ्जायतनूषगानं देवानं. "

" चासुर्महाराजिक देव. तावातींस देव (जैन शद्ध-न्नायस्त्रिश). याम देयः तुषित देव (जैनशद्धे-तुषितः ज्ञां सत्त्वार्ध-अ० ४. सूत्र. २६). निर्माण रति देव. परनिर्मितवशावती देव. ब्रह्मकायिक देव (जैनशद्ध-बहादेयलोक). आभ देव. परिताभ देव. अप्रमाणाभ देव. आभास्तर देव- ग्रुभ देव- अप्रमाणशुभ देव- शुभकीर्ण देव- चेहफ्कल देव- अविह देव. अतष्प देव. मुर्श देव. मुर्शी देव. अक्रिक देव. आकाशानंचाय-तनोपग देव. विज्ञानं नामतनोपग देव. आर्किचन्यायतनोपग देव अने नैवसंज्ञायतनोपग देव. "-(४० पृ० १९५-राजवाडेतुं)

[आभाखर एडले जेओनी कांति शरीरथी छूटी छूटी पडीने फेलाय. परिताभा एडले परित-चारे तरफ, आभा-कांति-वाळो. अप्रमाणाभा

भूळच्छायाः—राजगृहे नगरे थादत्-पर्युपासीन एवम् अवादीतः-असुरकुमाराणां भगवन्! देवानां कति देवाः आधिपत्यं यावत्-विहरन्ति ?-अनु०

१. [आ भगवतीसूत्रमां आ स्थळे अने बीजे पण अनेक स्थळे देवोने लगती घणी हकीकतो मळे छे. ए विषय एटलो बधो गूढ छे के, ते विषे आपणी जेवा अर्वागृदृष्टिवाळा कांड् कही शके वा स्पष्ट करी शके तेम नथी. परंतु ए संबंधे आ सूत्रकारनी पेठे बीजा बीजा बैदिक अने बौद्धसूत्रकारीए शुं शुं अने केंद्रं केंद्रं विचार्युं के ते तो जरूर आपणे जोइ शकीए-विचारी शकीए अने ते द्वारा कोइ प्रकारनी निर्णय-जो थई शके ती-जरूर चांधी शकीए-एवा ज एक उद्देशथी आगळ वे एक टिप्पणी आप्यां छे (जूओ-पु० ४१. २-३-४ टि० पु० ४८. २-टि० पु० ५० मां आवेला दिप्पणनो अंतभाग. पृ॰ ५७. १-दि॰) अने अहीं पण ए विधयतं उपयोगी दिप्पण उमेहं छुं.]

'१. उ० — गें।यमा ! दस देवा आहेवचं जाव-विहरंति. बेसंगणे; बली वहरोयणिदे, वहरोयणराया; सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे.

२. प्र॰—नागकुमाराणं मंते ! पुच्छा ?

२. उ०--गोयमा ! दस देवा आहेवचं, जाव-विहरंतिः तं जहाः-धरणे णं नागकुमारिदे, नागकुमाररायाः; कालवाले कोलवाले, सेलवाले, संखवाले; भूआणंदे नागकुमारिदे, नागकु-मारराया; कालवाले, कोलवाले, संखवाले, सेलवाले.

१. उ०-हे गौतम ! अधिपतिपणुं भोगवता यावत्-दस तं जहा:—चमरे असुरिंदे, असुरराया; सोमे, जमे, वरुणे, देवो रहे छे, ते आ प्रमाणे:-असुरेंद्र, असुरराज चमंर; सोमे, यम, वरुण, वेश्रमण; वैरोचनेंद्र, वैरोचनराज बलि; सोम, यम, वरुण अने वैश्रमण.

> २. प्र०-हे भगवन् ! नागकुमार देवो उपर केटला देवो अधिपतिपणुं भोगवता यावत्-विहरे छे ?

> २. उ०-हे गौतम ! अधिपतिपणुं भोगवता यावत्-दस देवो रहे छे, ते आ प्रमाणे:--नागकुमारेंद्र, नागकुमारराज घरण; कालवाल, कोलवाल, शैलपाल, शंखवाल; नागकुमारेंद्र, नागकु-मारराज भूतानंद; कालवाल, कोलवाल, शंखवाल अने शैलपाल.

एटले अप्रमाण-माप विनानी-आभावाळा. शुभकीण-शुभवडे कीण-भरेला. परित्तशुभ-चारे तरफ शुभवाळा. अप्रमाणग्रुभ-माप विनाना शुभवाळा. वेहफफळ एटले विपुलफळवाळा-चतुर्थध्यानभूमिब्रह्माणोः-म० टी० प्र० २३२-रा०].

वंदिक अंथोमां पण उपर जणावेली हकीकतने मळती (थोडा घणा फेरफारवाळी) जे हकीकत जडे छे तेनो संक्षेप आ छे:

" द्वादशाकी वसदोऽशै विश्वेदेवास्त्रयोदश, पद्त्रिंशत् तुषिताश्चेव पष्टिसभाखरा अपि. पद्तिराद्धिके माहाराजिकाथ व्रते उसे, रदा एकादशैकोनपञाशद् वायवोऽपरे. चतुर्दश तु दैकुण्टा सुशर्माणः पुनर्दश, साध्याश्व द्वादशेखाद्या विश्वेया गणदेवताः "

" बार सूर्य, अन्ठ वसु, तेर विश्वेदेव, छत्रीश तुषित (वौद्ध० जैन० तुषित), साठ आभास्त्रर (बौ० आभस्सर), वसॅने छत्रीश माहाराजिक (बौ० चातुम्महाराजिक), अम्यार स्द्र, ओगणपचास नायु, चौद वैकुंठ, दश सुग्रम अने बार साध्य ".-(अ० चि० देवकांड)

आ प्रकारे जुदी जुदी संख्यामां अने जुदां जुदां नामो द्वारा जैन, योद्ध अने वैदिकसंप्रदाये। देवना विषयमां। विचार करेलो छे ते ज मात्र अत्रे टांकेली छे.

९. मूळच्छायाः —गोतम ! दश देवा आधिपत्यं यावत् –विहरन्ति. तद्यथाः–वमरोऽसुरेन्द्रः, असुरराजः; सोमः, यमः, वहमः, वेश्रवणः; बलिवेरीचनेन्द्रः,वैरीचनराजः; सोमः, यमः, वहणः, वैश्रवणः. नामकुमाराणां भगवन् । पृच्छा १ गातम । दश देवा आधिपस्यं यावत्-विहरन्ति, तदाधाः-धरणो नागकुमारेन्द्रः, नागकुमारराजः; कालपालः, कोलपालः, कैलपालः. शह्वपालः; भूगानन्दो नागकुमारेन्द्रः, नागकुमारराजः; कालपालः, कोलपालः. शङ्खपालः, शैलपालः-अनु०

१. अहीं मृदसूत्रमां सूत्रकारे सोम, यम, वहण अने वैश्रमणने लोकपाल कह्या छे एटले (जेवा आपणे मनुष्य छीए तेवा) एक प्रकारना देव कहा छ. ए विषे अत्यंत प्राचीन निहन्तकार (जुओ भ० पृ० ४९ दिप्पण) श्रीयास्क जे जणावे छे ते आ छे:

सोमः--

र्भ सोमः". २.

" ओषधिः से मः-सुनोतेः-यद् एनम् अभिपुण्वन्तिः "

" खादिष्टया मदिष्टया पनस्य सोन! धार्या इन्द्राय पातने सुनः"

औषधि ए सीम-('सु'धातु उपस्थी 'सीम 'शद्व बने छे.) हे भोम! अभिषवाएलो एवो तुं स्वादिष्ठ अने मदिष्ठ एवी घारा द्वारा इन्द्रने पीवा माटे जर-पड. "

आ उपरथी एम जणाय छे के, कोइ रसात्मक पदार्थने 'सोम 'कहेलो छे अने बळी एम जणावेखं छे के, '' न तस्य अइनाति कथन अदेव इति " " ए सोमने केाइ अदेव-जे देव न होय ते-खाइ शकतो नथी "-(या० नि-प्ट० ७६९-०७९)

यमः--

" यमो यच्छति-इति हतः "

" सर्व अने ज्वरादि (ताब विगेरे) रूपे थइने जंतु मात्रनो नाश

"यच्छति उपरमयति जीवितात् × (तेस्कर इव सर्प-ज्वरादिरूपो करे ते यम" भूषा) सर्वं भृतन्नामम्-यमः "

" अग्निरपि यम उच्यते "

"अग्निते पण यस कहेवामां आवे छे "-(या० नि० पृ० ७३२--

आ उपस्थी एम कळाय छे के, नाशक-शक्तिने ' यम ' शब्द सूचवे छे.

वहणः--

" वरुण:-हुणोति-इति '-" स हि वियद् हुणोति मेघ नालेन "

" ढांके ते वहण " मेघना समूहद्वारा आकाशने ढांकनारी वहण "→ (या० नि ० ७१२-७१३.)

आ उपरथी एम समजाय छे के, वरसाद साथे संबंध धरावता कोइ पदार्थने 'वरुण ' कहेवामां आवेलो छे. 'वैश्रमण ' शब्द माटे ए गिरक्तमां कांइ जणा≅ुं नथी तेम तेनो निर्देश पण कयों नथी. जे (देव) अर्थमां आ जैनसूत्रमां 'वैश्रमण ' शब्द वपराएठो छे ते ज अर्थमां बौद्धप्रधमां पण ते शब्द जडी आवे छे. जूओ मिल्समिनिकाय-सू० ३७-अंक-५ (पृ० १७४ रा०) ए ठेकाणे (ए वैद्धप्रंथमां) वैश्रमण विषे घणुं रमुजी वृत्तांत आपेलं छे पण अहीं खास उपयोगी न होवाथी पडतुं मूक्वुं छे:—अनु०

— जैहा नागकुमारिंदाणं एआए वत्तव्याए नेयव्वं एवं इमाणं नेयव्वं. सुवण्णकुमाराणं—वेणुदेवे, वेणुदाली, चित्ते, विचिते, चित्तपक्ले, विचित्तपक्ले. विज्ञुकुमाराणं—हरिकंत, हरिस्सह, पम, सुप्पम, पमकंत, सुप्पमकंत. अग्निकुमाराणं—अग्मिसीह, अग्मिमाणव, तेउ, तेउसीह, तेउकंत, तेउप्पम. दीवकुमाराणं— पुण्ण, विसिष्ठ, रूअ, रूअंस, रूअकंत, रूअप्पम. उदिहकु-माराणं—जलकंते, जलप्पम, जल, जलरूअ, जलकंत, जलप्पम. दिसाकुमाराणं अमिअगई, अमिअवाहणे, तुरिअगई, खिप्पगई, सीहगई, सीहविक्रमगई. याउकुमाराणं, वेलंब, पमंजण, काल, महाकाल, अंजण, रिष्ठ. थिणअकुमाराणं—घोस, महाघोस, आवत्त, वियावत्त, नंदिआवत्त, महानंदिआवत्त. एवं भाषिअव्वं जहा असुरकुमारा.

-सो० का० चि० ५० ते० रू० ज० तु० का० आ०

३. प्र०-पिसायकुमाराणं पुच्छा ?

ं ३. उ०—गोयमा ! दो देवा आहेवचं, जाव-विहरंति, तुं जहाः—

काले य महाकाले सुरूव-पिडरूव-पुण्णभद्दे य, अमरवई माणिभद्दे भीमे य तहा महामीमे.

किनर-निंपुरिसे खलु सप्पुरिसे खलु तहा महापुरिसे, 'अइकाय-महाकाए गीअरई चेन गीअजसे. एए नाणमंतराणं देनाणं.

जोइसिआणं देवाणं दो देवा आहेवचं जाव विहरित, तं जहाः-चंदे य, सूरे य.

- ४. ४०--सोहम्मी-साणेसु णं मंते ! कप्पेसु कइ देवा आहवेचं जाव विहरंति ?
 - ४. उ०--गोथमा ! दस देवा जाव-विहरंति, तं जहाः-

—जेम नागकुमारोना इंद्रो संबंधे ए वक्तव्यताथी जणान्ड तेम आ देवो संबंधे पण समजवुं:—सुवर्णकुमारना उपरिओ—वेणुदेव, वेणुदालि, चित्र विचित्र, चित्रपक्ष अने विचित्रपक्ष—छे. विद्युत्कुमारोना उपरिओ—हरिकान्त, हरिसह, प्रभ, सुप्रभ, प्रभा-कान्त अने सुप्रभाकान्त—छे. अग्निकुमारोना उपरिओ—अग्निसिंह, अग्निमाणव, तेजस्, तेजःसिंह, तेजःकान्त अने तेजःप्रभ—छे. हीपकुमारोना उपरिओ—पूर्ण, विशिष्ट, रूप, रूपांश, रूपकांत अने रूपप्रभ—छे. उद्धिकुमारोना उपरिओ—जलकान्त, जलप्रभ, जल, जलक्ष्प, जलकान्त अने जलप्रभ—छे. दिक्कुमारोना उपरिओ—अमितगति, अगितवाहन, त्वरितगति, क्षिप्रगति, सिंहगति अने सिंहविक्रमगति—छे. वायुकुमारोना उपरिओ—वेलंब प्रभंजन, काल, महाकाल, अंजन अने रिष्ट—छे. स्तनितकुमारोना उपरिओ—पोष, महाघोष, आवर्त, व्यावर्त, नंदिकावर्त अने महानंदिकावर्त—छे. ए प्रमाणे बधुं असुरकुमारोनी पेठे कहेतुं.

—दक्षिण भवनपतिना इंद्रोना प्रथम लोकपालोना नामो आद्याक्षरे आ प्रमाणे छे:—सो—सोम, का—कालवाल, चि—चित्र— प∸प्रभ, ते—तेजस्, रू-रूप, ज—जल, तु—खरितगति, का, काल अने आ—आयुक्त.

३. प्र०-हे भगवन् ! पिशाचकुमारो उपर अधिपतिपणुं भोगवता केटला देवो छे ?

३. उ०—हे गौतम! तेओ उपर अधिपतिपणुं भोगवता यावत्—वे वे देवों छे:—काल अने महाकाल, सुरूप अने प्रतिरूप, पूर्णभद्र अने अमरपति माणिभद्र, भीम अने महाभीम, किंनर अने किंपुरुष, सत्पुरुष अने महापुरुष, अतिकाय अने महाकाय, गीतरित अने गीतयश, ए बधा वानव्यन्तर देवोना इंद्रों छे.

-- ज्योतिषिक देवोनी उपर अधिपतिपणुं भोगवता वे बे देवो यावत्-विहरे छे:-चंद्र अने सूर्य.

४. प्र०—हे भगवन्! सौधर्म अने ईशान करपमां अधिपतिपणुं भोगवता यावत्-केटला देवो रहे छे ?

४. उ०—हे गौतम! त्यां अधिपतिपणुं भोगवता यावत्-

^{9.} मूलच्छायाः—यथा नागकुमारेग्द्राणाम् अनया वक्तव्यतया ज्ञातव्यम्, एवम् एषां शातव्यम्, सुवर्णकुमाराणाम्—वेणुदेवः, वेणुदालिः, चित्रः, विवित्रः, वित्रपक्षः, विचित्रपक्षः, विद्युत्कुमाराणाम्—इरिकाग्तः, इरिसहः, प्रभः, स्रप्रभः, प्रभकान्तः, सुप्रभकान्तः, अन्निकुमाराणाम्—अग्निसिंहः, अग्निमाणवः, तेजः, तेजःसिंहः, तेजस्कान्तः, तेजःप्रभः; द्विषकुमाराणाम्—पूर्णः, विशिष्टः, रूपः, रूपः, रूपः। रूपः स्वान्तः, रूपंगतिः, स्वप्रभः; उद्धिकुमाराणाम्—अमितगतिः, अमितवाहनः, तूर्यगतिः, स्विप्रगतिः, विह्वविक्रमगतिः, वायुकुमाराणाम्—वेलम्बः, प्रभक्षनः, कालः, महाकालः, अजनः, रिष्टः; स्वनितकुमाराणाम्—धोषः, महाघोषः, आवर्तः, व्यावर्तः, सन्यावर्तः, महानन्यावर्तः, एवं भणितव्यम्, यथा असुरकुमाराः सोमः, कालपालः, चित्रः, प्रभः, तेजः, रूतः (प)ः, जलः, तूर्यगतिः, कालः, आयुक्तः, पिशाचकुमाराणां पृच्छा? गौतम! द्वौ देवौ आधिपत्यं यावत्—विहरन्ति, तद्यथाः—कालश्च महाकालः सुरूप—प्रतिश्व गीतयशाः—एते वानव्यन्तराणां देवानाम्. ज्योतिष्काणां देवानां द्वौ देवौ आधिपत्यं यावत्—विहरन्ति, तद्यथाः—चन्द्रश्च, सूर्यश्च. सौधर्मे—शानयोभगवन् । कल्पयोः कित देवा आधिपत्यं यावत्—विहरन्ति, तद्यथाः—चन्द्रश्च, सूर्यश्च. सौधर्मे—शानयोभगवन् । कल्पयोः कित देवा आधिपत्यं मावत्—विहरन्ति, तद्यथाः—चन्द्रश्च, सूर्यश्च. सौधर्मे—शानयोभगवन् । कल्पयोः कित देवा आधिपत्यं मावत्—विहरन्ति, तद्यथाः—चन्द्रश्च, सूर्यश्च. सौधर्मे—शानयोभगवन् । कल्पयोः कित देवा आधिपत्यं मावत्—विहरन्ति, तद्यथाः—अनु०

र्सको देनिंदे, देवराया; सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे. ईसाणे दश्च देवो रहे छे:-देवेंद्र, देवराज शक्क; सोम, यम, वरुण, णियव्वा.

- सेवं भंते !. सेवं भंते ! ति.

देविंदे, देवराया; सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे. एसा वत्तव्वया वैश्रमण अने देवेंद्र, देवराज ईशान; सोम, यम, वरुण अने सन्बेस वि कप्पेस एए चेव माणिअन्वा. जे य इंदा ते य मा- वैश्रमण. ए बधी वक्तव्यता बधा य कल्पोमां जाणवी अने जे इंद्रो छे ते कहेवा.

> —हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे एम कही यावत्-विहरे छे.

भगवंत-अज्ञ सुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुत्ते ततिअसये अहमी उदेसी सम्मत्तो.

.१. देववक्तव्यताप्रतिबद्ध एव अष्टमोद्देशकः, स च सुगम एव, नवरमः--- सो-का-ाच-प--ते-स्द-ज-तु-का-आ ' इसमे-नाक्षरदशकेन दक्षिणभवनपतीन्द्राणां प्रथमलोकपालनामानि सूचितानिः, वाचनान्तरे तु एतान्येव गाथायाम्, सा चेयम्:—''सीमे य काल-वालें चित्त-पभ तेउ तह रूए चेव, जल तह तुरिअगई अकाले आउत्त पढमा ओ." एवं द्वितीयादयोऽप्यम्यूह्याः, इह च पुस्तकान्तरे-उयमर्थो दृश्यते:—दाक्षिणात्येषु लोकपालेषु प्रतिसूत्रं यो तृतीय-चतुर्थो तो औदीच्येषु, चतुर्थ-तृतीयो-इति. ' एसा वत्तव्या सन्वेसु वि कप्पेस एए चेव भाणिभन्व व ति एषा सौधर्भेशानोक्ता वक्तव्यता सर्वेष्विप कल्पेषु इन्द्रनिवासभूतेषु भणितव्या, सनत्कुमारादीन्द्रयुग्मेषु पूर्वेन्द्राऽपेक्षया उत्तरेन्द्रसंबन्धिनां लोकपालानां तृतीय—चतुर्थयोर्व्यसयो बाच्य इत्यर्थः, तथैते एव सोमादयः प्रतिदेवलोकं बाच्याः, नतु भवनपतीन्द्राणाम्-इव अपरापरे. ' जे य इंदा ते य भाणियव्वा ' शकादयो दशेन्द्रा वाच्याः, अन्तिमे देवलोकचतुष्टये इन्द्रइयभावात्.

सगवत्सुधर्मस्वामेप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे उतीयशते अष्टम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

१. आठमा उद्देशकर्मी पण देव संबंधी ज वक्तव्यता छे अने आ (आठमो) उद्देशक सरल ज छे. विशेष ए के, [' सो, का, वि, प, ते, रू, ज, तु, का, आ, '] आ अहीं कहेंल दस अक्षरोवडे दक्षिण भवनपतिना इंद्रोना प्रथम लोकपालनां नामो सूचव्यां छेः सो-सोम, का-कालवाल, चि-चित्र, प-प्रम, ते-तेज, रू-रूअ, ज-जल, तु-तुरियगइ-त्वरितगति, का-काल अने आ-आउत्त-आयुक्तः; बीजी वाचनामां तो तें नामोने गाथामां ज जणाव्यां छे, ते आ छे:—[' सोमें य, कालवाले, चित्त, प्यम, तेउ, तह रूए चेव, जल तह तुरियगई य काले आउत्त पढमा उ '] ए प्रमाणे बीजा वगेरे पण जाणवा. बीजा पुस्तकमां तो आ प्रमाणे अर्थ देखाय छे:—दक्षिणना छोकपाछोमां प्रत्येक सूत्रमां जे त्रीजा अने चोथा कहा छे, ते ज उत्तरना लोकपालोमां चोथा अने त्रीजा छे. [' एसा वत्तव्यया सत्वेसु वि कप्पेसु एए चेव भाणिअव्य 'ति] ए-सीधर्म अने ईशान संबंधे कहेली-वक्तव्यता इंद्रना निवासवाळा बधा य कल्पोमां कहेवी. सनत्कुमारादि इंद्र-युगलो विषे पूर्वना इंद्रनी अपेक्षाए उत्तरना इंद्र संबंधी लोकपालोमां त्रीजो अने चोथो उलटी रीते कहेवो. तथा दरेक देवलोकमां आ ' सोम ' वगेरेने ज कहेवा, पण भवनपतिना इंद्रोनी पेठे बीजा बीजा न कहेवा. ['जं य इंदा ते य भाणियव्या '] शक वगेरे दस इंद्रो कहेवा, कारण के छेला चार देवलोकोमां ने इंद्रो छे.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्रुणानां परकृतिकरणाद्वेतजीवी तपस्वी। असाकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्खोः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तसुख्यः॥

धीजी वाचनाः बीजा पुस्तकमां जुदो अर्थ.

१. मूलच्छायाः—शको दिवेन्द्रः,देवराजः; सौमः, यमः, वहणः, वैश्रवणः; ईशानी देवेन्द्रः, देवराजः; सोमः, यमः, वहणः, वैश्रवणः: एषा वक्तव्यता-सर्वेषु अपि कल्पेषु एते चैव भणितव्याः; ये च इन्द्रास्तेऽपि भणितव्याः. तदेवं भगवन्!, तदेवं भगवन्! इति अनु०---

१. प्र॰ छायाः—सोमश्र कालपालिश्रः प्रभस्तेजस्तथा रूपश्चैव, जलस्तथा लिरतगतिश्र काल आयुक्तः प्रथमास्त —अनु॰

शतक ३.-उद्देशक ९.

राजगृह.--इंद्रियविषयना केटला प्रकार ?-पांच-जीवाभिगम.-विदार.--

- ?. प्र०--रीयगिहे जाव-एवं वयासी:-कइविहे णं भंते! (सो)इंदियविसए पण्णत्ते?
- १. प्र०—राजगृह नगरमां यावत्—आ प्रमाणे बोल्या के:-हे भगवन् ! इंद्रियोना विषयो केटला प्रकारना कह्या छे?
- ?. ड॰—गोयमा ! पंचिवहे इंदियविसए पण्णत्ते, तं जहाः-सोतिंदियविसए जीवाभिगमे जोइसियउद्देसओ नेयव्यो अपरिसेसो.
- १. उ०—हे गौतम! इंद्रियोना निषयो पांच प्रकारना कहा छे, ते आ प्रमाणे:-श्रोत्रइंद्रियनो विषय इत्यादि आ संबंधे जीवाभिगम सूत्रमां कहेछो आखो ज्योतिषिक उदेशक जाणवी.

भगवंत-अज्ज सुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते ततिअसये नवमो उदेसो सम्मत्तो.

१. देवानां चाऽविध्वानसद्भावेऽपि इन्द्रियोपयोगोऽपि अस्ति, इत्यत इन्द्रियविषयं निरूप्यन् नवमोद्देशकम् आहः—
'रायागिहे 'इत्यादि. ' जीवाभिगमे जोइसियउद्देसओ नेयव्वो 'ति स चायमः— " सीइंदियविसये, जाव-फासिंदियविसए; सोइंदियविसए णं मंते ! पोग्गलपरिणामे कहि पण्णत्ते ? गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहाः—सुन्मसद्दपरिणामे य, दुन्मिसद्दपरिणामे य, दुन्मिसद्दपरिणामे य, युन्मिसद्दपरिणामे य, युन्मिसद्दपरिणामे य, वुन्मिगंधपरिणामे य, दुन्मिगंधपरिणामे य, दुन्मिगंधपरिणामे य, दुन्मिगंधपरिणामे य. एवं जिन्मिदियविसए, सुरसपरिणामे य, दुरसपरिणामे य. फासिंदियविसए पुच्छा ? सुहफासपरिणामे य, दुहफासपरिणामे य. " इत्यादि वाच्यम्. वाच्यान्तरे चः— '' इंदियविसए, उचावय-सुन्मिणो '' ति दश्यते, तत्र इन्द्रियविषयसूत्रं दर्शितमेव, उचावयसूत्रं त्वेवमः— ''से णूँणं मंते! उचावएहिं सद्दपरिणामेहिं परिणममाणा पोग्गला परिणमंतीति वत्तव्वं सिया ? हंता, गोयमा ! '' इत्यादि, 'सुन्भिणो ति, इदं सूत्रं पुनरेवमः--'' से णूँणं मंते! सुन्भिसद्दपोग्गला दुन्भिसद्त्ताए परिणमंति ? हंता, गोयमा ! '' इत्यादि.

भगवत्सुधमें सामिप्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे तृतीयशते नवम उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवर्णं समाप्तम्.

१. मूलच्छायाः—राजग्रहे यावत्-एवम् अवादीत्ः-कतिविधो भगवन् ! (श्रोत्र) इन्द्रियविषयः प्रकृतः १ गीतम ! पश्चविधः इन्द्रियविषयः प्रकृतः, तद्यथाः-श्रोत्रेन्द्रियविषयो जीवाऽभिगमे ज्योतिषिकोहेशको हातव्योऽपरिशेषः—अनुः

^{9.} प्रवासाः—श्रेत्रेन्द्रियनिषयः, यानत्-सर्तेन्द्रियनिषयः। श्रेत्रेन्द्रियनिषयो भगवन् । पुद्रलपरिणामः कतिनिधः प्रहासः ? गीतम । द्विनिधः प्रहासः, तद्यथाः—स्राम्भः द्वरिभग्रह्मपरिणामश्च, द्वर्ष्णामश्च, द्वर्ष्णामश्च, दुर्भग्रह्मपरिणामश्च, प्राणेन्द्रियनिषये प्रच्छा ? गीतम । द्विनिधः प्रहासः, तद्यथाः—स्रामग्रह्मपरिणामश्च, दुर्भग्रह्मपरिणामश्च, एवं जिल्लेन्द्रियनिषयः स्रामग्रह्मपरिणामश्च, द्वर्मग्रह्मपरिणामश्च, द्वर्मपरिणामश्च, स्रोनेन्द्रयनिषये प्रच्छा ? स्वस्पर्शपरिणामश्च, दुःखस्पर्शपरिणामश्च, इ. इन्द्रियनिषयः, उचावच-स्रामीः, ४. तद् स्वं भगवन् । स्रामग्रहस्प्रह्मप्राणाः प्रहास्परिणामश्च, द्वर्ष्णमिनि इत्तं गीतम । ५. तद् न्वं भगवन् । स्रामग्रहस्प्रह्मुक्ष्णाः प्राप्तमानित इति वक्तव्यं स्थात् । हन्तं, गीतम । ५. तद् न्वं भगवन् । स्रामग्रहस्प्रह्मुक्ष्णाः प्राप्तमानित । स्वर्भावव्यत्या प्राप्तमनित १ इन्तं, गीतम । स्वर्षः

१. देवोने अवधिद्वान होवा छत पण इंद्रियोना उपयोगनी जरूर रहे छे माटे हवे इंद्रियोना विषयोनुं निरूपण करवा आ नवमा उद्देशकने कहे छे के, ['रायगिहें ' इत्यादि] ['जीवाभिगमे जोहसियउद्देसओ नेयव्वो 'ति] ते आ प्रमाणे छे:—" श्रोत्रैइंद्रियनो विषय अने यावत—स्पर्शइंद्रियनो विषय. हे भगवन ! श्रोत्रइंद्रियना विषय संबंधी पुद्रलपरिणाम केटला प्रकारनो कह्यो छे हे गौतम ! ते वे प्रकारनो कह्यो छे, ते आ प्रमाणे:—सुभ शब्दनो परिणाम अने अशुभ शब्दनो परिणाम चक्षुइंद्रियना विषय संबंधी पूर्व प्रमाणे पूछ्युं. हे गौतम ! ते वे प्रकारनो कह्यो छे. ते आ प्रमाणे:—सारा रूपनो परिणाम अने नटारा रूपनो परिणाम. नासिका इंद्रियनो विषयः सारा रसनो परिणाम अने नटारा रसनो परिणाम. ए प्रमाणे जीभ इंद्रियनो विषयः सारा रसनो परिणाम अने नटारा रसनो परिणाम; स्पर्शइंद्रियनो विषयः सुखरूप—सारा—स्पर्शनो परिणाम अने दुर्खरूप—नटारा—स्पर्शनो परिणाम. " इत्यादि कहेतुं. बीजी वाचनामां तो ['इंदियनिसए उच्चावय—सुक्ष्मिणो 'ति] आ प्रमाणे पाठ छे, तेनो अर्थः इंद्रियोना विषय संबंधी सूत्र, उच्चावचसूत्र अने सुरभिसूत्र एम त्रणे सूत्रो अहीं कहेवां. तेमां इंद्रियोना विषय संबंधी सूत्र तो हमणां ज उपर जणाव्युं छे. उच्चावच सूत्र तो आ प्रमाणे छे: "हे भगवन् ! शुं उच्चावच शब्दपरिणामोवडे परिणाम पामता पुद्रलो 'परिणमे छे 'एम कहेवाय ? हे गौतम ! हा, एम कहेवाय " इत्यादि कहेवुं. ['सुक्मिणो 'ति] वळी आ सूत्र आ रीते छे:—"हे भगवन् ! सारा शब्दनां युद्रलो नटारा शब्दपणे परिणमे छे हे गौतम ! हा ए प्रमाणे परिणमे छे." इत्यादि.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचिरते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परक्नृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्ती। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्योः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चान्नमुख्यः॥

वाचनामां

जुं सत्र.

१. जूओ जीवाभिगम (पृ० ३७३-३७४. स॰):--अनु०

शतक ३.-उद्देशक १०.

. राजगृह.-- चमरनी सभाओ केटली ?-त्रण.-शंमिका-चण्डा-जाता-यावत्-अच्युतसभा.-विहार.--

- ?. प्र० —रै।यगिहे जाव -एवं वयासी:-चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स, असुररण्णो कइ परिसाओ पण्णत्ताओं ?
- ?. उ० गोयमा ! तओ परिसाओ पण्णत्ताओ, तं जहाः--सामिआ, चंडा, जाया. एवं जहाणुपुन्वीए जाव-अचुओ कपो.
 - -सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति.

- १. प्रo—राजगृह नगरमां यावत् आ प्रमाणे बोल्या केः--हे भगवन् ! असुरेंद्र असुरराज चमरने केटली सभाओ कही छे?
- १. उ०—हे गौतम ! तेने त्रण सभाओं कही छे. ते आ प्रमाणे शमिका (शमिता), चंडा अने जाता; ए प्रकारे क्रमपूर्वक यावत्—अच्युत कल्प सुधी जाणवुं.
- —हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, एम कही यावत्-विहरे छे.

भगवंत-अज्ञसुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुत्ते ततिअसये दसमी उदेसे। सम्मत्ती.

१. प्राग् इन्द्रियाणि उक्तानि. तद्दन्तथ देवा इति देववक्तव्यताप्रतिवद्धो दशम उद्देशकः, स च सुगम एव. नवरम्:—'सामिय'ित्त सिमका उक्तमत्वेन स्थिरप्रकृतितया समवती, स्वप्रभोवां वोपौत्सुक्यादिभावान् शमयित उपादेयवचनतया इति शमिका, शमिता वा—अनुद्धता. ' चंड ' ति तथाविधमहत्त्वाऽभावेन ईवत्कोपादिभावाचण्डा, ' जाय 'ित प्रकृतिमहत्त्ववर्जितत्वेनाऽस्थानकोपादिनां जातत्वाद् जाता, एषा च क्रमेणाऽभ्यन्तरा, मध्यमा, बाह्या च इति; तत्राभ्यन्तरा समुत्वत्रप्रयोजनेन प्रभुणा गौरवाईत्वादाकारितैव पार्थे समाग्वन्नित, तां चाऽसौ अर्थपदं पृच्छिति, मध्यमा तु उभयथाप्यागच्छिति, अत्यत्तरगौरविषयत्वात्, अभ्यन्तरतया च आदिष्टमर्थपदं तया सह प्रविश्वाति—प्रन्थिवन्यं करोति इत्यर्थः; बाह्या त्वनाकारितैवागच्छिति, अत्यतमगौरविषयत्वात्, तत्त्यार्थार्थपदं वर्णयत्येव. तत्र आद्यायाम्:—चतुर्विशतिर्देवानां सहस्राणि, द्वितीयायाम् अष्टाविशतिः, तृतीयायां द्वात्रिशद् इति; तथा देवीशतानि क्रमेणाऽध्युष्टानि, त्रीणि, सार्थे च द्वे इति. तथा तद्वेवानामायुः क्रमेण अर्धतृतीयानि पत्योपमानि, द्वे, सार्थं चेति; देवीनां तु सार्धम्, एकम्, तदर्थं च इति; एवं बलेरित. तथरमः—देवप्रमाणं तदेव चतुश्चतुःसहस्रहीनम्, देवीमानं तु शतेन शतेन अधिकम् इति, आद्युर्मानमिप तदेव, नवरम्ः—पत्योपमाधिकमिति. एवमच्युतान्तानाम् इन्द्राणां प्रस्थेकं तिसः पर्षदो भवन्ति—नामतः, देवादिप्रमाणतः, स्थितिमानतथ्य कचित् किश्चद् मेदेन मेदवसः—ताश्च जीवाभिगमाद अवसेयाः.

श्रीपञ्चमाङ्गस्य शतं तृतीयं व्यारुयातमाश्रित्य पुराणवृत्तीः; शक्तोऽपि गन्तुं भजते हि यानं पान्यः सुखार्थं किमु यो न शक्तः है

^{ः-}मूलदूर्छीयाः—राजगृहे यावत्-एवम् अवादीत्ः-चमरस्य अगवन् ! असुरेन्द्रस्य, असुरराजस्य कति पर्षदः प्रहप्ताः ? गातम ! तिसः पर्षदः प्रहप्ताः, तद्ययाः-शमिकार्षे(शामिता), चण्डा, जाताः, एवं यथाऽऽतुपूर्वर्षा यावत्-अच्युतः कलाः, तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः—असः

१. आगळना उद्देशकमां इंद्रियो संबंधे हकीकत जणावी छे अने देवो पण इंद्रियोबाळा होय छे माटे हवे आ दसमा उद्देशकमां देव संबंधी वक्तव्यता कहेवानी छे. आ उद्देशक तो सरल ज छे. विशेष ए के, ['समिय 'ति] समिका-पोताना उत्तमपणाने लीधे स्थिर स्वभाववाळी होवाथी समतावाळी अथवा पोताना उपरिए करेल कोप के उतावळ वगरे भावोने, मान्य वचनवाळी होवाथी शांत करी देनारी, अथवा शमिता-तोछडाई विनानी-उद्भत नहीं ते. [' चंड ' ति] तेवा प्रकारनी मोटाई न होवाथी साधारण कोपादिकना प्रसंगमां पण बोली नाखनारी ते चंडा [' जाय ' ति] मोटाईवाळो स्वभाव न होवाधी कोप वगेरे भावोने अस्थाने (अणअवसरे-वगर प्रयोजने) भजवनारी ते जाता. ए त्रणे सभ क्रमपूर्विक अभ्यंतरा, मध्यमा अने बाह्या छे-समिका अभ्यंतर सभा छे, चंडा वचली सभा छे अने जाता बहारनी सभा छे. तेमांनी अभ्यंतर सभानी रीतभात आ छेः ज्यारे उपरिने (स्वामीने) कांइ पण प्रयोजन होय अने ते आदर पूर्वक अभ्यंतरसभाने बोलावे त्यारे ज ते आवे छे अने सभानी बेठक थया पछी ते उपरि ते सभाने पोतानुं प्रयोजन कही देखांडे छै. तेम करवानुं कारण-ते सभा गौरव-मोटाइ-ने योग्य छे. यचली समा तो उपरि बोलावे के न बोलावे तो पण आवे छे, कारण-तेनी मोटाई थोडी ओछी छे. ते वचली सभानी बेठक थया पछी-उपरि, अभ्यंतर सभा साथे थएल वार्तालापने जणावे छे अने ते संबंधे गांठ वाळे छे—नक्की करे छे. बाह्य सभा तो बोलाव्या विना ज चाली आवे छे, कारण-तेनी मोटाइ धणी ओछी छे. ते बाह्य सभानी बेठक थया पछी-उपरि, आगळ थयेला वार्तालापने मात्र वर्णवे छे. तेमां प्रथम सभामां २४००० देवो सभासद छे, बीजी सभामां २८००० देवो सभासद छे अने त्रीजी सभामां ३२००० देवो सभासद छे. प्रथम सभामां ३५० अने आयुष्य. देवीओ, वचली सभामां ३०० देवीओ अने छेली सभामां २५० देवीओ सभासद छे. प्रथम सभाना देवोनी आवरदा २॥ पल्योपमनी, बीजी सभाना देवोनी आवरदा २ पल्योपमनी अने छेझी सभाना देवोनी आवरदा १॥ पल्योपमनी छे प्रथम सभानी देवीओनी आवरदा १॥ पल्योपमनी, बीजी सभानी देवीओनी आवरदा १ पल्योपमनी अने छेखी सभानी देवीओनी आवरदा ।। पल्योपमनी छे. ए प्रमाण बिल संबंधे पण जाणवुं. विशेष ए के, सभासद देवोनी संस्या जे उपर जणावी छे, तेमांथी चार चार हजार सभासद ओछा करी नाखवा अने देवीओनी संस्या जे उपर जणावी छे तेमां सो सो देवीओ उमेरवी. आवरदानुं प्रमाण पण पूर्व प्रमाणे ज जाणवुं, विशेष ए के, पल्योपमधी वधारे जाणवुं. ए प्रमाणे अच्युत सुधीना प्रत्येक इंद्रोने त्रण समाओ होय छे, ते सभाओनां नामो, तेओमांना सभासदो-देवो अने देवीओनी संख्या तथा ते बघांनी आवरदानुं मापः ए त्रणे वानां कोइ ठेकाणे थोडां थोडां जुदां छे. ए त्रणे समाओनी हकीकत जीवीभिगम नामना उपांगथी जाणवी.

श्रीपंचमांगे शतक तृतीय व्याख्यायुं आश्रीने पुराणवृत्ति, छतां बळे गाडुं धरे प्रवासी जावाने सौख्यें नवळानुं तो हुं?

तृतीय शतक समाप्तः

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचिरते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् द्रायी यः सदृणानां परक्वतिकरणाद्वैतजीवी तपली। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो घाहको दान्ति शान्योः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः॥

৭. जूओ जीव।भिगम (पृ॰ १६४-१७४ तथा ३८८-३९०, स॰):---अनु॰

शतक ४.-उद्देशक १-२-३-४-५-६-७-८.

संग्रहेगाथा.—ईशानना लोकपालो केटला ?-सोम, यम, वरुण अने वेश्रनण.-लोकपालोनां विमानो केटलां ?-सुमन, सर्वतोभद्र, वरुषु अने सुवस्यु.-सुमन वर्ग आन्युं ?-ईशानावतंसकनी पूर्वे.-वारे विमानना चार उदेश.-स्थितिमेद.-राजधानी.—

गौहाः— चत्तारि विमाणिहिं चत्तारि य होति रायहाणीहिं, नेरईए लेस्साहि अ दस उद्देसा भउत्थसये. आ चीया शतकमां दश उद्देशक छे. तेमां चार उद्देशकमां विमान संबंधी हकीकत छे, वीजा चार उद्देशकमां राजधानी संबंधी हकीकत छे अने एक उद्देशक नैरियको संबंधे छे तथा एक उद्देशक लेखा संबंधे छे--ए रीते आ शतकमां दश उद्देशक छे.

ईशान इंद्रनो परिवार.

?. प्र०-रायगिहे नयरे जाव-एवं वयासी:-ईसाणस्स णं भंते ! देविंदस्स, देवरण्णो कह लोगपाला पण्णत्ता ?

१. प्रo—राजगृह नगरमां यावत्-आ प्रमाणे बेल्या के:— हे भगवन्! देवेंद्र देवराज ईशानने केटला लेकपाला कहा छे?

9. मूलच्छायाः—गाथाः—चरवारो विमानेश्वरवारश्च भवन्ति राजधानीभिः, नैरयिको लेश्याभिश्च दश उद्देशःश्वतुर्थशते. राजगृहे नगरे यावत्⊸ एवम् अवादीतः- ईशानस्य भगवन् ! देवेन्द्रस्य, देवराजस्य कति लोकपालाः प्रज्ञप्ताः—अनु०

"इति इ भिक्खने! पटिसंचित्रखनो अप्पोरसुक्रताय चितं नमति, नो धम्मदेसनाय अथ खो ब्रम्हुनो सहंपतिस्स मम चेतसा चेतोपरिवितकं अञ्ञाय एतदहोसि — नस्सति वत भो छोको x x x अथ खो भित्रखने! ष्रम्हा सहंपति एकंसं उत्तरासंगं करित्वा येनाऽई तेनऽअिं पणामेत्वा मं एतद्वोच—' देसेतु भंते! भगवा धम्मं, संति सत्ता अप्प-रजक्ख-जाति-का अस्सवनता धम्मस्स परिहायंति—भविस्संति धम्मस्स अञ्जातारो ति."

(भगवान बुद्ध कहे छैः)

"हे मिश्रुओ । ए प्रमाणे सारी रीते समन्या पछी (मार्क) चित्त आत्मानी उत्सुक्ता तरफ नमें छे-वळे छे पण धर्मना उपदेश माटे नहि. हवे सहंपति (जैन शब्द 'सोहम्मपति') ब्रह्माने मारो उपलो विचार जणाया पछी एम धर्युं के (जो भगवान धर्मनो उपदेश नहि करें) तो लोकोनो नाश धशे. हवे हे भिश्रुओ । ए सहंपति ब्रह्मा एक खमा तरफ खेस करीने जे तरफ इं खुं ते तरफ आवी हाथ जोडी-प्रणाम-करी आ प्रमाणे बोल्योः हे भगवन् ! आप-भगवान-प्रमंनो उपदेश करो-प्रजा धर्म रहित अने अज्ञान धइ जशे " — (म० ए० ११९. रा०)

था उड़ेख्यां सहपति बहा भगवान युद्धने धर्मापदेश देवानी विनंती करी छे-जैनोमां पण आ ज जातनी विनंतीनी नींथ मळी आवे छे-ब्रह्मनी केस राखवानी अन प्रणाम करवानी उल्लेख तो जैबोना ए जातना उड़ेख साथे बरावर मळी रहे छे.

१. आ सत्रमां—अलार सुवीमां अने हवे पछीनां शतकोमां—आपणे अने क स्थळे 'इंद्र' शब्दनो प्रशेम धएलो जोइए छीए. प्रायः सघळे ठेकाणे ए इंद्रने 'देविंद '-देवोनो इंद्र अने 'देवराय 'देवोनो राजा-ए वे विशेषणो लागेलां जोवामां आवे छे. आधी वधु, ज्यारे आपणे ज्ञातनंदनयोगीश्वरनं जीवन—चरित्र सांभळीए छीए त्यारे तेमां-जन्म, निष्क्रमण (दीक्षा) अने धर्मवक्षत्रवर्तनादिना प्रसंगोमां तथा तेमना छद्मस्थ-विहारना प्रसंगोमां अनेक स्थळे आ 'इंद्र ' अने तेना देवादि परिवारने पण जोइए छीए-आपणा पाराणिक पद्मतिए प्रंथ-रचनाराओ ए इंद्रने-'जैन '- जणावे छें अने ते उपरांत एने चतुर्विध संघनो रक्षक पण ठरावे छे-इंद्र संबंधे एनी लीला अने समृद्धिना उद्येखोने वाद करतां जैनमंथो ए विषे उपर जणाव्या करतां विशेष प्रकाश नाखी शकता नथी-तेम वाद्ध पंथो पण ए विषे (इंद्र विषे) लगभग एवं ज भळतं वर्णन आपे छे. मात्र विशेषतामां तेने 'बौद्ध ' होवानं सचने छे. ए विषे एक टिप्पण आगळ (जुओ-पा-१९ ९. टिप्पण) जणात्री गयो छुं अने बैद्ध पंथमां आवतुं इंद्रने लगतुं केटखंक उपयोगी लखाण अहीं पण उमेर्र छुं:

- ?. उ०—गोयमा ! चत्तारि लोगपाला पण्णत्ता, तं जहाः-सोमे, जमे, वेसमणे, वरुणे.
 - २. प्र०-एएसि णं भंते ! लोगपालाणं कइ विमाणा पण्णत्ता ?
- २. उ०--गोयमा ! चत्तारि विमाणा पण्णत्ता, तं जहाः-सुमगे, सञ्बओभद्दे, वन्गू, सुवन्गू.
- २. प्र० काहि णं भंते ! ईसाणस्स देविंदस्स, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सुमणे नामं महाविभाणे पण्णत्ते ?
- २. उ०--गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्चयस्स उत्तरे णं इमीसे रयणप्यभार पुढवीए जाव-ईसाणे णामं कप्पे पण्णत्ते, तत्य णं जाय-पंच वडेंसया पण्णत्ता, तं जहा:-अंकवडेंसये, फालि-

- १. उ०-हे गौतम! तेने चार लेकपाला कहा छे. ते आ प्रमाणे:-सोम, यम, वैश्रमण अने वरुण.
- २. प्र०—हे भगवन् ! ए छोकपाछोने केटछां विमानो कह्यां छे ?
- २. उ० हे गौतम ! तेओने चार विमानो कह्यां छे. ते आ प्रमाणेः —सुमन, सर्वतोभद्र, वल्गु अने सुवल्गु.
- ३. प्र०—हे भगवन्! देवेंद्र देवराज ईशानना सोम महाराजानुं सुमन नामनुं महाविमान क्यां कहां छे ?
- ३. प्र० हे गौतम ! जंबूद्वीप नामना द्वीपमां मंदर पर्वतनी उत्तरे आ रत्नप्रभा पृथिवी यावत्-ईशान नामे कल्प कह्यो छे. तेमां यावत्-पांच अवतंसको कह्या छे. ते आ प्रमाणे:-अंकाव-

पति 'पण कहेवामां आवेलो छे.

"एवं मे सुनं-एकं समयं भगवा सकेस विहरति कपिलवत्युस्मि निमोधा-रामे. अथ खो भगवा पुरुषण्डसमयं निवासेखा पत्तचीवरं आदाय कपिल-बरशुं पिंडाय पाविसि x x x येन महावनं तेनुपसंक्राम x दंडपाणि पि खो सक्तो जधाविहारं अनुचंकमानो येन भगवा तेनुपसंकाने. "

" एवं मे सुनं एकं समयं भगवा सावित्थयं विद्दश्ति पुक्वारामे मिगा-रमातुपासादें. अथ खो सक्को देवानार्नेदो येन भगवा तेनुपसंक्रमि."

'' सुत्रमी सभामां जे ब्रह्माने परिपूछे छे '' (म० ५० २२८ रा०) आ उड़ेखमां ब्रह्माने 'सुवर्मा:-प्रभा ' होवानुं जणाव्युं छे-जैनो पण शक्त इंद्रने सुवर्मा-सभानो स्वामी कहे छे अने ए उपरथी एने 'सै।धर्म-

> " में एम स'भळ्उं छे (के)-एक वखत भगवान् (युद्ध) शाक्यदेशमां कपिलवस्तु गामना न्ययोधाराममां विचरता हता. हवे भगवान् पूर्वाह्ननो समय वीतावी पात्र अने बस्नने लड्ने (भोडा बपोरना भागमां) कपिलबस्तु गःममां भिक्षामाढे पेठा 🗴 पछी जे तरफ महावन हतुं त्यां गया. ए वखते दंडपाणि (जै० वज्रपाणि) शक पण पगे चालतो चालतो ज्यां भगवान छे त्यां आव्यो. " ~(म० पृ**० ७**७ रा**०**)

> " में एम सांभळ्युं छे (के)-एक वंखंत भगवान श्रावस्ती (सवथ) नगरमां निगारमातु-प्रासादमां-पूर्वाराममां विचरे छे. हवे देवोनो इंद्र (जै॰ देविंद) शक्त पण ज्यां भगवान छे त्यां आव्यो "

> > —(म० ५० १७२ स०)

आ बने उड़ेखोमां इंद्रनुं शीबुद पासे जबुं वर्णव्युं छे. आटला थोडा उड़ेखो उपस्थी आपणे कळी शकीशुं के, जैन अने वाद साहिखने घडनारा पुरुवीए इंद्रने पोतपोताना इष्ट पुरुव पासे नम्न बताब्यो छे अने वारंबार तेओनी सेवामां राख्यो छे-पण आ उपरथी 'इंद्र ' कोण हे ? शुं ए जैन छे ? मा बैद्ध छे? ए कांइ कळी शकात नथी-अव्देख चोकस जणाय छे के, ए ए उडेखो छखनारा 'इंद्र'ने कोइ विशिष्ट व्यक्तिरूपे जरूर मानता जणाय छे. हुने ' इंद ' विषे ए बने संप्रदायना उल्लो करतां निशेष प्राचीन एवा श्रीयास्कनो अभिप्राय पण तपासीए.

श्रीयास्क पोताना निरुक्तमां (ए. ७३७-०१९) ' इंद ' शब्दनी अनेक न्युरपत्तिओ आपे छे-जे आ प्रमाणे छे:---

- " इसं दणाति-इति वा "
- " इराम् अनं नीह्यादि, दणाति विदारयति " (१)
- **"ृइर**ं ददाति-इति वा "
- " यो वर्षद्वारेण इसम् अतं ददाति " (२)
- " इरां दधाति-इति वा " (३)
- " इरां दारयते-इति वा "(४)
- " इसं धास्यते-इति वा " (५)
- " इन्दवे द्रवति-इति वा " (६)
- " इन्दे। रमते-इति वा " (७)
- "इन्धे भूतानि-इति वा " (८)
- " इदंकरणाद्-इति आग्रयणः " (९)
- " इदंदर्शनात्-इति अपमन्यवः " (१०)
- " आदरयिता च यज्ननाम् " (११)

''इंग एटले बीहि विगेरे अभ-तेने फाडी नाखे ते इरादार=इंद्र'' (१)

- " वरसवा ६ रा जे अन्नने आपे ते इराद=इंद्र " (२)
- '' अज्ञने घारणकरे ते इराध≔इन्द ''
- " इराने फाडे ते इंद्र " (४)
- " इरानु धारण करे ते इंद्र " (५)
- " इंदु माटे जे द्रवे-जरे-ते इंदुद्रव=इंद्र " (६)
- " इन्दुमां रमे ते इन्दुर=इन्द्र " (७)
- ·' भूतोने प्रदीप्त करे ते इन्ध=इन्द्र '' (८)
- " आनो करनार ते इदंकर=इंद " एम अप्रायण कहे छे (९)
- " आनो जोनार ते इदंदर्शां=इंद " एम आपमन्युओ कहे छे (१०)
- " यज्वानोनो आदर करनार ते देव " (११)

्रुधा उछेखोमां श्रीयास्के 'इन्द्र' शब्दनो भाव िशेष सुस्मष्ट करवा एनी अनेक प्रकारनी (पोतानी अने बीजानी पण) व्युत्पत्तिओ जणावी छे-आमां क्यांय इंद्र माटे देवेंद्र, पाकशासन, दंडपाणी के वजाणीना भावनी गंध पण आवती नथी माटे पाठकी 'इन्द्र शब्दना सुस्पष्टभावने श्रीयास्कना उहेखथी कदाच ओळखी शके खराः - अनु०

१. मूलच्छायाः--गौतम ! चत्वारो लोकपालाः प्रइप्ताः, तद्यथाः-सेमः यमः, वैश्रमणः, वरुणः. एतेषां भगवन् ! लाकपालानां कति विमानाः प्रज्ञताः १ गौतम ! चत्वारो विमानाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथाः-सुननः, सर्वतीभद्रः, वल्गुः, सुवल्गुः. कुत्र भगवन् ! ईशानस्य, देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सीमस्य महाराजस्य सुमने। नाम महाविमानं प्रज्ञप्तम् ! गैातम ! जम्बूदीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेऽस्याः रक्षप्रभायाः पुथिव्याः यावत्-र्द्रशानी नाम कल्पः प्रहप्तः, तत्र यानत्-पद्य अन्तंसकाः, प्रह्माः, तद्यथाः-अन्त्वानतंसकः--अनु०

[&]quot; यो ब्रह्मानं परिपुच्छति सुधम्मायं अभितो समं "

हैं तरें से ये, रयणवंडेसये, जायकत्ववंसिये, मज्झे ईसाणवंडेसये; तस्त णं ईसाणवंडेसयस्स महाविमाणस्स पुरित्थमेणं तिरियमसंखेजाइं जोयणसहस्साइं वीईवइत्ता तत्थ णं ईसाणस्स देविंदस्स, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सुमणें नामं महाविमाणे पण्यत्ते अद्धतेरस-जोअण०, जहा सकस्स वत्तव्वया तइअसये तहा ईसाणस्स वि जान-अचिणआ सम्मत्ता.

चउण्हं वि लोगपालाणं विमाणे विमाणे उद्देसओ, चऊसु वि विमाणेसु चत्तारि उद्देसा अपरिसेसा, नवरं — ठिईए नाणत्तंः — आदि दुअ तिभागूणा पलिया धणयस्स होति दो चेय, दो सतिभागा बरुणे पलियमहावचदेवाणं. तंसक, स्फटिकावतंसक, रत्नावतंसक अने जातरूपावतंसक, ए चारे अवतंसकोनी वच्चे ईशानावतंसक छे. ते ईशानावतंसक नामना महाविमाननी पूर्वे तिरछुं असंख्येय हजार योजन मूक्या पछी—अहीं—देवेंद्र देवराज ईशानना सोम महाराजानुं सुमन नामनुं महाविमान कहुं छे. तेनो आयाम अने विष्कंभ साडा बार छाख योजन छे, इत्यादि बधी वक्तव्यता त्रीजा शतकमां कहेली शक्तनी वक्तव्यतानी पेठे अहीं ईशानना संबंधमां पण कहेवी. अने यावत्—आखी अर्चनिका सुधी कहेवी.

ए रीते चारे छोकपाछोना प्रत्येक विमाननी हकीकत पूरी थाय त्यां एक एक उदेशक जाणशी-चारे विमाननी हकीकत पूरी थतां पूरा चारे उदेशक समजवा. विशेष ए के, स्थिति—आवरदा—मां भेद समजवी—आदिना वेनी—सोमनी अने यमनी—आवरदा त्रण भाग ऊणा पत्योपम जेटली छे, वैश्रमणनी आवरदा वे पत्योपमनी छे अने वरुणनी आवरदा त्रण भाग सहित वे पत्यो-पमनी छे. तथा अपत्यरूप देवोनी आवरदा एक पत्योपमनी छे.

- १. सृतीयशते प्रायेण देवाधिकार उक्तः, अतः प्रायस्तदधिकारवदेव चतुर्थं शतम्, तस्य पुनरुदेशकार्थाधिकारसंग्रहाय गाथा-'चत्तारि' इत्यादि व्यक्तार्थाः; 'अचणिअ' ति सिद्धायतने जिनप्रतिमाद्यर्चनम् अभिनयोत्पनस्य सोमाऽऽख्यलोकपालस्य इति.
- रै. त्रीजा शतकमां घणी खरी हकीकत देवो संबंधे ज जणात्री छे, तेथी चोथा शतकमां पण घणी खरी हकीकत तेत्री ज जणावत्रानी चतुर्थ छे. घोथा शतकना उद्देशकोमां कथा कथा विषयो संबंधे चर्चा करतानी छे ए बातने जणावनारी गाथा आ छे:—['चत्तारि' इत्यादि.] ए, चारे गाथानो अर्थ पण स्पष्ट छे. [' अचणिअ'ति] अर्चनिका-ताजा जन्मेला सोम नामना लोकपालद्वारा सिद्धायतन⊢मां रहेली जिनप्रतिमा वगेरेनुं पूजन अर्वि

राजधानीओ.

?. प्र०-उ०-रॉयहाणीसु वि चत्तारि उद्देसा भाणिअव्वा, जाव-महिंडुीए, जाव-परुणे महाराया.

१. प्र० उ० — राजधानी ओना संबंधमां पण एक एक राजधानी संबंधी हकीकत पूरी थतां एक एक उद्देशक पूरो समजवो. अने ए रीते राजधानी ओना संबंधे चार उद्देशक पूरा समजवा. यावत्— ए रीते वरुण महाराजा मोटी ऋ द्वाळो छे.

भगवंत-अज्ञसहम्मसामिपणीए सिरीभगवईस्रते चउत्थसये पढमादिअह उदेसा सम्मत्ताः

१. 'रायहाणीसु वि चत्तारि उद्देसा भागिअव्वा 'ते चैवम्:—'' कैहिं णं मंते ! ईसाणस्त देविंदस्स, देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सोमा नामं रायहाणी, पण्णत्ता ? गोयमा ! सुमणस्स महाविमाणस्स अहे, सपविखं० '' इत्यादि पूर्वोक्तानुसारेण जीवाभिगमोक्तविजयराजधानीवर्णकानुसारेण च एकैक उद्देशकोऽध्येतच्य इति. ननु एता राजधान्यः किछ सोमादीनां शक्तस्य, ईशानस्य च सम्बन्धिनां छेकपाछानां प्रत्येकं चतस्त्र एकादशे कुण्डछवराभिधाने द्वीपे द्वीपसागरप्रज्ञप्यां श्रूयन्ते, उक्तं हि तत् संप्रहिण्याम्:— '' कुंडेछनगस्स अन्मितरपासे होति रायहाणीओ, सोलस उत्तरपासे सोलस पुण दिक्सणे पासे.

ा जुडलगगरत आन्मतरपास हाति रायहाणाओं, सालस उत्तरपास सालस पुण दाक्खण पार जा उत्तरेण सोलस ताओ ईसाणलोगपालाणं, सक्कस्स लोगपालाणं दक्खिणे सोलस हवंति.''

^{9.} मूलच्छायाः—स्फिटिकावतंसकः, रक्तावतंसकः, जातरूपावतंसकः, मध्ये ईशानावतंसकः; तस्य ईशानावतंसकस्य महाविमानस्य पौरस्त्येन तिर्थेग् असंख्येयाणि योजनसहस्राणि व्यतिवज्य तत्र ईशानस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य सुमनो नाम महाविमानं प्रज्ञसम् अधेत्रयोदशयोजनम्०, यथा शकस्य वक्तव्यता द्वतीयशते तथा ईशानस्यात्रपि यावत्—अर्चनिका समाप्ताः चतुर्णाम् अपि लोकपालानां विमाने विमाने वद्देशकः; चतुर्ष अपि विमानेषु चत्वारः उद्देशा अपरिशेषाः, नवरम्—स्थित्याः नानात्वम्ः—आशो द्वी त्रिमागोनी पत्योपमी धनदस्य भवतो द्वी चैव, द्वी सित्रमागी वहणः पत्योपमं यथाऽपत्यदेवानाम् २. राजधानीषु अपि चरवारो उद्देशाः भणितव्याः, यावत्—महर्षिकः, यावत्—वहणो महाराजः—अनु०

१. प्र० छायाः — कुत्र भगवन् । ईशानस्य देवेन्द्रस्य, देवराजस्य सोमस्य महाराजस्य सोना नाम राजधानी प्रश्नसा ? गौतम ! सुमनस्य महाविमानस्याऽधः, सपक्षे० २. कुण्डलनगस्याऽभ्यन्तरपार्श्वे भवन्ति राजधान्यः, पोडश उत्तरपार्श्वे षोडश पुनर्दक्षिणे पार्श्वे. या उत्तरस्यां षोडश ता द्वैतानकोकपालानाम्, शकस्य कोकपालानां दक्षिणस्यां षोडश भवन्तिः —अतु०

एताश्च सोमप्रभ-यमप्रभ-वेश्वमणप्रभ-वरुणप्रभाभिधानानां पर्वतानां प्रत्येकं चतसृषु दिक्षु भवन्ति, तत्र वेश्वमणनगरीरादी कृत्वाऽभिहितम्:--

'' मैंड्से होइ चउण्हं वेसमणपभो नगुत्तमो सेलो, रइकरयपव्ययसमो उब्बेहु-चत्त-विक्खंभे.
तस्स य नगुत्तमस्स उ चउिहिसं होंति रायहाणीओ, जंबूदीवसमाओ विक्खंभायामओ ताओ.
पुन्वेण अयलभहा समझसा-(समुक्कसा) रायहाणी दाहिणओ, अवरेण ऊ कुबेरा घणप्पभा उत्तरे पासे.
एएणेव कमेणं वरुणस्स होंति अवरपासिम, वरुणप्पमसेलस्स वि चउिहिसं रायहाणीओ.
पुन्वेण होइ वरुणा वरुणपमा दिखाणे दिसीभाए, अवरेण होइ कुमुआ उत्तरओ पुंडरिगणीआ.
एएणेव कमेणं सोमस्स वि होंति अवरपासिम, सोमप्पमसेलस्स वि चउिहिसं रायहाणीओ.
पुन्वेण होइ सोमा सोमप्पमा दिखाणे दिसीभाए, सिवपागारा अवरेण होइ निलणा य उत्तरओ.
एएणेव कमेणं अंतकरस्स वि य होंति अवरेणं, समिवित्तिष्पमसेलस्स चउिहिसं रायहाणीओ.
पुन्वेण ऊ विसाला अतिन्त्रिसाला ओ दाहिणे पासे, सेज्जपभाऽवरेणं अ मुआ पुण उत्तरे पासे.'' इति.

इह च प्रन्थे सौधमीवतंसकाद् ईशानावतंसकाच असंख्येययोजनकोटीर्व्यतिकम्य प्रत्येकं पूर्वादिदिक्षु स्थितानि यानि सम्ध्याप्रभादीनि सुमनःप्रभृतीनि च विमानानि, तेषामधोऽसंख्याता योजनकोटीरवगाह्य प्रत्येकमेकैका नगर्युक्ता, ततः कथं न विरोध इति ? अत्रोच्यतेः— अन्यास्ता नगर्यः, याः कुण्डलेऽभिधीयन्ते, एताश्चाऽन्या इति; यथा शक्रे—शानाप्रमहिषीणां नन्दीश्वरद्वीपे, कुण्डलद्वीपे च.

भगवत्सुधर्मसामिप्रणीते शीभगवतीस्त्रे चतुर्धराते प्रथमादिअष्टम-उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवरणं समाप्तम्,

१. [' रायहाणीसु वि चत्तारि उद्देशा माणिअव्या '] राजधानीओ संबंधे चार उद्देशक कहेवा. ते आ प्रमाणे:— '' हे भगवन् ! देवेंद्र, देवराज ईशानना सोम महाराजानी सोमा नामती राजधानी वयां आवी-कही- छे ? हे गौतम ! (ते राजधानी) सुमन नामना महाविमाननी बराबर नीचे छे. " इत्यादि बधुं आगळ कह्या प्रमाणे अने जीवाभिगममां कहेळा विजयराजधानीना वर्णकने अनुसारे कहेबुं-ते रीते एक एक राजधानी संबंदे एक एक उद्देशक एम चार उद्देशक कहेवा. शंट-द्वीपसागरप्रज्ञितिमां एम संभळाय छ के, शक अने ईशान इंद्रना सोम वगेरे छो लालोनी एक एकनी चार चार राजवानीओ अग्यारमां कंडलवर नामना द्वीरमां छे. संग्रहणीमां ते संबंधे कहां छे के-'' कुंडल नामना पर्वतना अंदरना पडखामां उत्तरनी बाजुए सोळ अने दक्षिणनी बाजुए सोळ-एम बबी मळीने बत्रीश-राजधानीओ छे. जे सोळ राजधानीओ उत्तरनी बाजुए छे ते ईशान इंद्रना टोकपाटोनी छे अने ने सीळ राजधानीओ दक्षिणनी बाजुए छे ते शक्त इंद्रना टोकपाटोनी छे. " ए बधी राजधानीओ सोमप्रम, यमप्रम, वैश्रमणप्रम अने वरुणप्रम नामना पहाडोनी (एक एक पहाडनी) चार चार दिशामां छे. तेमां वैश्रमणनी नगरीओने आदिमां राखीने कहुं छे के-" चारे राजधानीओनी बचोबच बैश्रमणप्रभ नामनो पहाड छे-ते पहाड सर्व पहाडोमां उत्तम-छे अने तेनो उद्वेध, उंचाई अने विस्तार रतिकर नामना पर्वतनी सरखो छे. ते नगोत्तमनी चारे दिशाओमां चार राजधानीओ छे-तेओनी लंबाई अने पहोळाई जंबूद्वीप जेटली छे. पूर्व दिशामां अचलमद्रा नगरी छे, दक्षिण दिशामां सगुत्कर्षा नगरी छे, पश्चिम दिशामां कुवेरा अने उत्तरना पडखामां धनपमा नगरी छे. ए ज कमबड़े बरुणप्रम नामना पहाड़नी बीजी बाजुर-पश्चिम चारे दिशामां वरुणनी चार राजधानीओ छे-पूर्व दिशामां वरुणा, दक्षिण दिशामां वरुण-प्रभा, पश्चिममां कुमुदा अने उत्तरमां पुंडरगिणिआ नगरी छे. ए ज कपवडे सोनवभ नामना पहाडनी बीजी बाजुर-पश्चिम चारे दिशामां सोमनी चार राजधानीओ छे-पूर्व दिशामां सोमा, दक्षिण दिशामां सोमप्रमा, पश्चिममां शिवपाकार। अने उत्तरमां नलिना नगरी छे. ए ज कनवेड समवर्ति-प्रभ नामना पहाडनी बीजी बाजुए-पश्चिमे चारे दिशामां यमनी चार राजधानीओ छे-पूर्व दिशामां विशाला, दक्षिण दिशामां अतिविशाला, पश्चि-ममां शय्याप्रभा अने उत्तरमां मुदा नगरी छे " ए प्रमाणेनी हकीकत द्वीपसागर प्रज्ञितमां छे त्यारे आ यंथमां ए राजधानीओ संबंधे जणाव्युं छे के, सींघर्मावतंसकथी अने ईशानावतंसकथी असंख्य क्रोड जोजन दूर गया पछी जे, पूर्व वगरे दिशाओमां-एक एक दिशामां रहेळां संध्याप्रभ विगेरे अने सुमनःप्रभ विगरे विमानो छे ते विमानोनी नीचे असंख्य कोड जोजन अवगाह्या पछी ते एक एक विमाननी नीचे एक एक नगरी कही छे. तो राजधानीओ विषेनी पूर्वनी हकीकत अने आ ग्रंथमां कहेली हकीकत मळती नथी आवती, माटे तेमां विरोध कां न होय? समा॰-जे नगरीओ कुंडलद्वीपमां छे ते जूदी छे अने जे नगरीओ आ ग्रंथमां जणावी छे ते पण जूदी छे, माटे विरोध आववानुं कारण नथी. जेम शक अने ईशान इंद्रनी पट्टराणीओनी नगरीओ नंदीश्वर द्वीपमां छे अने कुंडल द्वीपमां पण छे तेम अहीं पण समजवुं.

> वेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सहुणानां परक्वतिकरणाहैतजीवी तपसी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्खोः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः॥

जीवाभिगम्. द्वीपसागर-प्रसप्तिः

समाधान,

१. प्र० छाः— मध्ये भवति चतुर्णां वैश्वनणप्रभो नणेसमः शैलः, रतिकरकपर्वतसमः उद्वेषो-चरव-विष्कम्भे. तस्य च नणेसमस्य तु चतुर्दिशि भवन्ति राजधान्यः, जम्बूरीपसमा विष्कमभाऽऽयामतस्यः. पूर्वस्याम् अचलभदा समुत्कषी राजधानी दक्षिणतः, अपरस्यां तु कुचेरा धनप्रभा उत्तरिसम् पार्थे. एतेनैव क्रमेण वहणस्य भवन्ति अपरपार्थे, वहणप्रभशैलस्याऽपि चतुर्दिशि राजधान्यः. पूर्वस्यां भवति वहणा वहणप्रभा दक्षिणे दिशाभागे. अपरस्यां भवति कुमुदा उत्तरतः पुण्डरिकिणी. एतेनैव क्रमेण सोमस्याऽपि भवन्ति अपरपार्थे, सोमप्रभशैलस्याऽपि चतुर्दिशि राजधान्यः. पूर्वस्यां भवति सोमा सोमप्रभा दक्षिणे दिग्मागे, शिवप्राकाराऽपरस्यां भवति निलना चोत्तरस्याम्. एतेनैव क्रमेण अन्तकरस्याऽपि च भवन्ति अपरस्याम्, समवतिप्रभशैलस्य चतुर्दिशि राजधान्यः. पूर्वस्यां तु विशाला अतिविद्याला तु दक्षिणे पार्थे, शृष्याप्रभाऽपरस्याम् च मुदा पुनदत्तरे पार्थेः—अनु०

ं शतक ४.–उद्देशक ९.

ेनरियकोमां जे पैदा थाय ते नैरियक के अनेरियक ?-प्रशापनाना छेश्यापदना त्रीजा उद्देशनी वक्तव्यता.--

?. प्र० —नेरेइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ, अनेरइए नेरइएसु उववज्जइ?

. १. उ०—पनवणाए लेस्सापए तइओ उद्देसओ भाणियव्वो, जाव-नाणाइं. १ प्र०—हे भगवन् ! नैरियक होय ते, नैरियकोमां उत्पन्न थाय के अनैरियक होय ते, नैरियकोमां उत्पन्न थाय !

१. उ०—हे गौतम ! प्रैज्ञापना सूत्रमां कहेला लेश्यापदनो त्रीजो उद्देशी अहीं कहेबो अने ते यावत्—ज्ञानोनी हकीकत सुधी कहेबो,

भगवत-अज्ञ सहस्मसामिपणीए सिरीभगवईस्ते चडत्थसये नवमो उदेसो सम्मत्तो.

१. अनन्तरं देववक्तव्यता उक्ता, अथ वैक्रियशरीरसाधम्यीद् नारकवक्तव्यताप्रतिबद्धो नवम उदेशक उच्यते, तत्र इदमादिसूत्रम्:— 'नेरइए णं ' इत्यादि. 'लेरसापए 'चि सप्तदशपदे, 'तहओ उद्देसओ भाणियव्यो ' चि. क्वचिद् 'द्वितीयः' इति दृश्यते, स चाऽपपाठ इति; स चैवमः—'गोर्यमा ! नेरइए नेरइएसु उववज्जइ, नो अणेरइए णेरइएसु उववज्जइ" इत्यादि. अयं चात्यार्थः— 'नैरियको नैरिवकेषु उत्पचते, न पुनरनैरियकः; कथं पुनरेतत् ? उच्यतेः—यस्माद् नारकादिभवोपप्राहकमायुरेव अतो नारकाद्यायुः— प्रथमसमयसंवेदनकाल एव नारकादित्र्यपदेशो भवति ऋजुसूत्रनयदर्शनेन. यत उक्तं नयविद्धिर्ऋजुसूत्रस्क्षपनिरूपणां कुर्वद्भिः—

" पटाठं न दहत्यग्निर्मियते न घटः क्वचित्, न शून्याद् निर्गमोऽस्तीह न च शून्यं प्रविश्यते. नारकव्यतिरिक्तश्च नरके नोपपयते, नरकाद् नारकश्चाऽस्य न कश्चिद् विप्रमुच्यते "

इत्यादि-इति. ' जाव-नाणाइं ' ति, अयमुदेशको ज्ञानाधिकारावसानोऽध्येतव्यः, स चाऽयम्:-'' कैण्हलेस्से णं भंते । जीवे कइसु (कयरेसु) नाणेसु होजा ! गोयमा ! दोसु वा, तिसु वा, चउसु वा नाणेसु होजा, दोसु होजामाणे आमिणिबोहिअ-सुअनाणेसु होजा '' इत्यादि.

भगवरसुधर्मसामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे चतुर्थशते नवम उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवरणं समाप्तम्,

१. मूलच्छायाः—नैरियको भगवन् ! नैरियकेषु उपपद्यते, अनैरियको नैरियकेषु उपपद्यते ? प्रज्ञापनायाः टेर्यापदस्य तृतीयः उद्देशको भणितव्यः, यावत्-ज्ञानानिः—अनु०

जुओ प्रज्ञापना सुत्र, पद-१७ (१० ३५२-३५६स०):—अनु०

१. प्र॰ छाः—गातम ! नैरियको नैरियकेषु उपपद्यते, नो अनैरियको नैरियकेषु उपपद्यतेः—अनु० २. इतः पाठात् 'विष्रमुच्यते ' इत्यन्तानि अक्षराणि प्रशापनाया मरुयगिरिश्चितदीकायामपि एतानि इव संप्राप्यन्तेः—अनु० ३. कृष्णल्देश्यो भगवन् ! जीवः कतिषु (कतरेषु) ज्ञानेषु भवेत् ? गातम । द्वयोका, त्रिषु वा, चतुर्षु वा ज्ञानेषु भवेत् , द्वयोभवन् आभिनिकोधिक-क्षुतज्ञानयोभवेतः—अनु०

शेदं छे.

शंका.

१. आगळना उद्देशकोमां देवो संबंधे हकीकत कही छे अने हवे आ नवमा उद्देशकमां नास्को संबंधी हकीकत जणाववानी छे. कारण के जेम देवो वैकिय शरीरने धारण करे छे तेम नारको पण वैकियशरीरना धारक छे माटे देव पछी नारकोनी वक्तव्यता कहेवी ए ठीक जणाय छे. तेमां आदि सूत्र आ छे:-['नेरइए णं ' इत्यादि.] [' लेरसापए ' ति] लेश्या नामना सत्तरमा पदमां [' तईओ उद्देसओ भाणियव्यो 'ति] आवेलो त्रीजो उद्देशक अहीं कहेवो. कोई ठेकाणे " बीजो उद्देशक " एम देखाय छे ते खोटुं छे. ते त्रीजा उद्देशकनो पाठ आ रीते छे:—" हे गौतम ! नैरियक होय ते नैरियकोमां उत्पन्न थाय छे, पण जे अनैरियक छे, ते नैरियकोमां उपजतो नथी. " इत्यादि. शं॰—साधारण बुद्धियी विचार करतां जणाय छे के, मनुष्य अने पशु विगरे नारिकमां उत्पन्न थाय छे, त्यारे अहीं कहेवामां आव्युं छे के, जे नैरियक-नारिकी-होय ते, नरकमां उत्पन्न थाय छे अर्थात् अहीं कहेली वात अने सर्वना अनुभवमां आवती वात, ए वन्ने वातोमां विरोध आवे छे अने अनुभवेली वातने वाधान, खोटी करवानुं साधन जणाव्या सिवाय बिन अनुभवेली हकीकतने साची ठराववी ए केबी रीते ? समार--ज्यारे मनुष्य के पशु विगेरे अहींथी मरीने नरकमां उत्पन्न थाय छे त्यारे तेओए मर्या पहेलां-मनुष्य के पशुनी जींदगीनी हाजरी हती त्यारे-नरकमां जवाने योग्य आयुष्य कर्म बांध्युं ज होय छे-ते सिवाय तेओ नरकना अधिकारी बनी शकतां नथी. हवे आपणे विचारीए के अहींथी कोइ पण मनुष्य के पशु नरकमां जवाने खाना थयो त्यारे तेने त्यां पहोंचतां थोडामां थोडा पण वखतनी जरूर रहे छे. जेटलो समय तेने त्यां पहोंचतां लागे छे तेटला समय सुधी ते (नरक भणी) जनार जीवने आएणे कइ गतिनो कहेवो जोइए ? तेना जवाबमां विचारतां जणाय छे के, हवे ते जीव जे गतिने छोडीने चाल्यो छे तें गतिनो-मनुष्य के पशु गतिनो-तो नथी ज, तेम देव गतिनो पण नथी ज. कारण के जीव पासे जे गतिने योग्य आयुष्यनी हाजरी होय ते ज गतिनो ते गणाय छे, तो आ जनार जीव पासे देव, मनुष्य के पशु गतिनुं आयुष्य तो नथी-जो ते आयुष्य, तेनी पासे होत तो तेने स्त्रप्ते पण आ रस्तो लेवानी जरूर न रहेत, मात्र तेनी पासे एक नरक गतिनुं आयुष्य छे अने तेने लीधे ज ते नरकने पंथे पड़्यों छे, आपणे आगळ जोई गया के, जे जीव पासे जे गतिनुं आयुष्य होय ते जीव ते ज गतिनों कहेवाय छे, तों हवे आपणो जवाब म⊅ी गयो के, ए जनार जीव नरक गतिनो-नारकी-छे, कारण-तेनी पासे अत्यारे मात्र एक नारकिने योग्य आयुष्यनी ज हाजरी छे, माटे ते जनार जीव नारकिनो ज छे अने ए रीते शास्त्रमां जे कहुं छे के, 'जे नारकी होय ते ज नरकमां जाय छे 'ते काई खोटुं नथी. जो के आपणो स्थूल अनुभव एवा छे के, अमुक मनुष्य मरीने नारिकमां गयो, पण तेनां खरी हकीकत ए छे के, ज्यां सुधी जीवनी साथे मनुष्यना आयुष्यनो संबंध होय छे त्यां सुधी ज ते मनुष्य कहेवाय छे, ज्यारथी ते जीव साथेनो मनुष्यना आयुष्यनो संबंध तूट्यो त्यारथी सूक्ष्मदर्शी पुरुषो तेने भनुष्य 'न कहे तो ते खोदुं नथी-पण जे गतिना आयुष्यनी साथे तेनो संबंध छे ते गतिनो व्यवहार ते जीव प्रति करे तो ते पण साचुं छे. माटे आपणो अनुभव सर्वथा स्थूळ छे अने शास्त्रमां कहेली वात तो अमुक अपेक्षाने अवलंबीने जणावाय छे माटे योग्यतानुसारे बेमांथी एक पण खोटुं नथी अर्थात् जे जीवनी साथे जे भवने (नारक बगेरेना भवने) पमाडनारुं आयुष्य लाग्युं होय अने ते जीव ज्यारथी ते भवना (नारक वगेरेना भवना) आयुष्यनुं वेदन करतो होय त्यारथी ज-आयुष्यने अनुभव करवाना पहेला समयथी ज-ऋजुसूत्र नयना मतथी (ते जीव) ते भववाळो (नारक वगेरे भववाळो-नारिक बगेरे) कहेवाय छे — ऋजुसूत्र नय मात्र वर्तमान स्थिति उपरथी ज पदार्थी प्रति व्यवहार चंछवे छे. तेनी दृष्टि, भूत अने भविष्यत्काळ तरफ तो औदासीन्य धारण करे छे. नयज्ञानमां प्रवीण पुरुषोए ऋजुसूत्र नयना खरूपनुं निरूपण करतां कह्युं छे के, " पराळने अग्नि बाळतो नथी, कोइ ठेकाणे घडो फुटतो नथी, शून्यमांथी कांइ नबुं पेदा थतुं नथी अने शून्यमां प्रवेश पण थतो नथी. " नारकी सिवायनो कोइ बीजो जीव नरकमां पेदा थतो नथी अने नरकथी कोइ नारक छुटो पण थतो नथी ए रीते ऋजुसूत्र नयनो मत छे " इत्यादि जाणबुं. ' नरकथी कोइ नारक छुटो पण थतो नथी ' एटले जे काळे जीव नरकथी छुटो थाय ते काळे ते, नारक-नारकी-ज शेनो ? अने जे काळे जीव नारक (नारकी) होय ते काळे ते, नरकथी छुटो ज केम थह शके ? अर्थात् ज्यां सुधी जे आयुष्य तेनी पासे होय त्यां सुधी ते आयुष्यनो धणी ते, कहेवाय माटे नारकनुं आयुष्य पूरुं थह रहा पछी तेनी पासे जे गतिनुं आयुष्य होय ते गतियाळो ते जीव नरकथी बीजे ठेकाणे जाय छे एम ध्यवहार थाय, पण नरकथी नारकी (नरकना आयुष्यवाळो) बीजे ठेकाणे जाय छे एम व्यवहार न थाय-एम ऋजुसूत्र नयतुं सापेक्ष मत छे. [' जाव-नाणाइं ' ति] आ उद्देशक अहीं ज्ञान संबंधी हकीकत सुधी जाणवो. ते आ रिते:-- " हे भगवन् ! कृष्णलेस्यावाळो जीव केटलां ज्ञानमां वर्ते-केटलां ज्ञानवाळो होय १ हे गीतम ! ते, वे ज्ञानमां, त्रण ज्ञानमां के चार ज्ञानमां होय. जो वे ज्ञानमां होय तो मतिज्ञान अने श्रुतज्ञानमां होय, जो त्रण ज्ञानमां होय तो मति, श्रुत अने अवधिज्ञानमां होय " इत्यादि जाणवुं.

> वेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सहुणानां परकृतिकरणाद्वेतजीवी तपस्वी। असाकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्योः -द्यात् श्रीवीरदेवः सक्छित्रवसुखं मारहा चाममुख्यः ॥

Jain Education International

शतक ४.-उद्देशक १०.

कृष्णलेख्या नीललेख्याने पामीने तद्र्पपणे अने तद्रणपणे परिणमे ?-प्रशापनाना लेख्यापदनो चतुर्य उदेशक.-लेख्यानां परिणाम-वर्ण-रस-गंध-शुद्ध-अप्रशंस्तं-संख्रिष्ट-उष्ण-गति-परिकास-प्रदेश-आगाह-तर्गणा स्थान- व बहु व. हे भगवन् ! ते ५ प्रमाणे ---

१. प्र०—से णूणं मंते ! कण्हलेस्सा नीललेस्तं पप्प तारू- १. प्र०—हे भगवन्! कृष्णलेख्या नीललेखानो संयोग प्रामी वत्ताए, तावण्णताए० ?

णेयव्यो, जाव---

ते रूपे अने ते वर्णे परिणमे ?

?. उ०—एवं चउत्थो उद्देसओ पण्णवणाए चेव लेसापदे १. उ०—हे गौतम ! प्रैज्ञापना सूत्रमां कहेलो लेखाः प्रनो णेयव्यो, जाव— चोथो उद्देशक अही कहेवो अने ते यावत्—' परिणाम ? इत्यादि द्वार गाथा सुधी कहेवी.

भै. मूलच्छायाः — तद् नूनं भगवन् ! कृष्णेलेश्या नीललेश्यां प्राप्य तद्भ्यतया, तद्वणेतया० १ एवं चितुर्थः उदेशकः प्रज्ञापनायाश्चेव "लेश्यापदे इतिव्यः, यावतः--अनु०

व्याख्याप्रज्ञासतां एडळे.सपवतीस्त्रमां अनेक स्थळें के जहां सव स्णाए ' सब्द संसळाया कृरे छे. तेनो अर्थ,एम थाय छे के, केन् प्रज्ञापकासां कहुं छे तेम अहीं पण समजी लेखें ' आ प्रकारे आ एजमां स्थळे स्थळे आवता प्रज्ञायना (प्रवृत्तणा) एजनो परिचय आपवा अहीं आवर्यक लागे छे. साथी प्रथम प्रज्ञापनासूत्रतं स्वरूप ज्णाबी पृथी तेना कता अने तेनी शैली विषे ज्णाववातं छे, प्रज्ञापना स्त्रना टीकाकार श्रीमलयगिरिजी ए...टीकाना आरंभमां ज जणावे छे के, " इयं च समवायास्यस्य चतुर्थ-अङ्गस्य उराङ्गम्-तर्दुक्तार्थप्रतिपादनात् " अर्थात् " आ प्रज्ञापना-पन्न कोया समवाय-बेंगर्स उपांग छे. कारण के, समदोर्य-अंग-मां कहेली अ्था खाँ प्रजापनामाँ पितिपादेली छें"-(प्रजीपे० ए० १ सर्व) टीकिकिरिश्रीनी ओ उद्यक्षमा विश्वास राखीने भले आपणे 'प्रज्ञापना ' सत्रने चोथा समवाय-अपने उपांग मानी हैईए. तो पण तेओश्रीए ए उहेखनो संवादक एकाद प्राचीन उहेख पोताना उहेखं पासे प्रमाण तरीके टंक्यों होतातो विशेष उचित थात; अंग अने उपांगना परस्पर संकलननी व्यवस्थां, विषयनी दृष्टिए अतेडी लागती होवाथी एने एनी रहता माटे प्राचीन उल्लेखना टेकानी विशेष जहर जणाय छे. (आ विषे अहीं विशेष न लखता मगवती विशेष खं र एवं १६ पर आवेंकु 'राजप्रश्नीय ' ने लगतुं टिप्पणं जोंवानी ज भलामण कर्र छुं) टीकाकास्त्री 'तदुक्तार्धवितिपादनात् ' हेतु आपीने प्रज्ञापनाने समवाय÷ अंगर्तु उपांग जणावे छे ते ज हेतुयी आ प्रज्ञापना स्थान गर् ठाणांग) के भगवतीयत्रतं पण उपांग थइ सके छे. माटे ज आ सत्रमा (अज्ञापनामा) अंगोपांगीमाननी रढता माटे पुष्ट अने प्राचीन उड़ेखनी तथा दियाँच हेतुनी गरेवणा करवी अगत्यनी के. आरण प्रज्ञापना ''नो प्रयनाम तरीकेनो उँहेख नंदीसूत्रमां मळी आवे छे. नंदीसूत्रमां शुत्रप्रधोनो नामवार निर्देश आपेळो छे. तेमां नोध्युं छे के, "जीवाभिगमो, पन्नवणा, महापन्नवणा ? इंखादि. (जुओ भ • द्वि० खं० ५० ३६ डिप्पण) आ नींघमां ए उतांग तरीके नहि पण एक श्रुतग्रंथ तरीके नींघाएलुं छे एथी एनी उपागताना प्रश्नतुं निराकरणे थइ रावतुं नथी; तथा ए 'पन्नवणा ' अने आ 'प्रज्ञायना सूत्र 'ए वने एक ज के के के मे ? ए पण कांइ कही काकातुं नथी, कारण के, त्यां टीकाकार धीमलग्रगिरिजीए 'पन्नवणां "विषे कोइ जातनो विशेष उठेखा करेलोः जणातो नथी. जे प्रज्ञापना-पन्नवणा-आपणी पासे ह्यात छै तेमां कुल ३६ प्रकरण छे-एनी संकलना करनारे के एना रचनारे एमानी प्रकरणने "पद" शब्दे निर्देशेला छिन १छं पद प्रज्ञापना छे; तेमां जीव अने अजीवना मुख्य अने पेटा भेदो विषे सबिस्तर विवेचन छे. २ जुं स्थान पद छे, तेमां साधारण जीवथी लड्ने सिद्ध सुधीना जीवोनां स्थानक-रहेठाण-वर्णवेळां छे. ३ हुं अल्पबहुत्व पद छे, तेमां जीव अने अजीवना अनेक प्रकारोमां कयो प्रकार कया प्रकारथी न्यूनाधिक छे ते वियतवार जणावेलुं छे. ४धुं स्थिति पद छे, एमां दरेक प्रकारना जीवोनी ओछामां ओछी अने वधारेमां वधारे आयुष्यनी मर्यादा स्ववेली छे. ५मुं पर्शय पद छे, तेमां सर्वे प्रकारना जीव अने अजीवना पर्यायो नोंबेला छे. ६६ उपपात-उद्वर्तना पद छे, एमां जीवोना उपपात, उपपातनो बिरह अने उद्वर्तना जणाव्यां छे अने कयो जीव क्यांथी क्यां उनजे एं पण नोंधेलु छे. ७मुं उच्छ्वास पद छे, एमां क्यो जीव ओछामां ओछे अने वधारेमां वधारे केटले वखते श्वास ले छे-ए हकीकत आपेली छे. ८नं संज्ञापद छे, एमां संज्ञाओनी संख्या अने कयो जीव कइ संज्ञावाळी छे-ए जणावेलुं छे: र्९मुं योनिपद् छे, एमां योनि-उत्पत्तिस्थान-ना प्रकार अने कया जीवनी कह योनि होय छे-ए नोंधेळुं छे. १०मुं चरमाचरम पद छे, एमां पदार्थमात्रनेरिअपेक्षाकृत चरमता अने अचरमतानो सविद्धार विचार करेलो छे. ११मं भाषापुद छे, एमा भाषाना प्रकारो, कया जीवोने क्रया प्रकारनी

पैरिणाम-वण्ण-रस-गंघ-सुद्ध-अपसत्थ-संकिलिहु-ण्हा, गइ-परिणाम-पएसो-गाह-वग्गणा-हाणमप्पबहुं. द्वार गाथाः—परिणाम, वर्ण, रस, गंध, खुद, अप्रशस्त, संक्रिष्ट, उष्ण, गति, परिणाम, प्रदेश, अवगाहना, वर्गणा, स्थान अने अल्पबहुत्व; ए बधुं लेश्याओं संबंधे कहेतुं.

भाषा होय छे, भाषानां परमाणुओनुं प्रहण अने तेना प्रकारो, ए परमाणुओना वर्ण, रस, गंध, स्पर्श, अवगाहना अने स्थिति, भाषानां अणुओना प्रहण अने मोचननो समय, ए द्रव्योनो (भाषानां अणुओनो) मेद-तुटी जबुं विगेरे विशेष गंभीर विषयो चर्चेळा छे. १२मुं शरीरपद छे, एमां शरीरना प्रकारो अने पेटा प्रकारो विगेरे जणावेलुं छे. १३मुं परिणाम पद छे, एमां जीव अने अजीवना परिणामो अने तेना अनेक प्रकारो जणाव्या छे. १४मुं कषायपद छे, एमां कषायो, कषायवाळाओ अने कर्मना चयनो उडेख आवेलो छे. १५मुं इंदियपद छे, एमां इंदियोना प्रकारो, आकारो, जाडाई, पहोळाई, अनगाहना, स्पर्शो विगेरे विषे घणुं तलस्पर्शा विनेचन करेलुं छे तथा कह इंदिय केवी रीते अने केटले छेटेवी पोताना विषयने मोळखी ले छे, कइ इंदियने विषयने ओळखती वखते विषयनो संबंध (संस्पर्श) राखवी पडे छे अने ए संबंध कोने नथी राखवी पडतो, कार्मणपुद्रलोनुं देखाबं, दर्पण विगेरे पारदर्शक पदार्थोमां पडतुं प्रतिबिंब अने तेनी समजण विगेरे बीजा पण अनेक विषयो चर्चेला छे. १६मुं प्रथोग पद छे, एमां मन, वचन अने तनना अनेक प्रकारना प्रयोगों तथा अनेक प्रकारनी गतिओं (चालवानी रीतो) सरस रीते समजावेली छे. १७ छं लैक्या पद छे, एमां लेक्याओ उपरांत बीजी पण अनेक बाबतो आवेली छे. (जूओ भ० द्वि० खं० पृ० ९०–९१ टिप्पण) १८मुं कायस्थितिपद छे, एमां अनेक प्रकारे कायस्थितिनुं वर्णन आपेलुं छे. १९मुं सम्यक्तवपद छे एमां सम्यक्तवने स्नगती बाबत जणावी छे. २०मुं अंतकिया पद छे, एमां अंतिकिया अने तेने लगतुं विशेष विवेचन आपेलुं छे. २१ मुं अवगाइनापद छे, एमां अवगाइना, संस्थान अने शरीर विगेरेने लगती इकीकत जणावी छै. २२ मुं कियापद छे, एमां किया, कियाना प्रकारी तथा कियाने लगता बीजा अनेक विचारी पण नोंधेला छे. २३ मुं कर्मप्रकृतिपद छे. एमां कर्म कर्मना खमान, कर्मना प्रकार, कर्मनी स्थितिनी मर्यादा, अने कर्मना बंध विषे विगतवार विवेचन करेलुं छे. २४ मुं कर्मप्रकृतिबंध, २५ मुं कर्मवेद, २६ मुं कर्मबंध अने २७ मुं कर्मप्रकृति–वेदवेद–ए चारे पदोमां कर्मने लगती हकीकतो आवेली छे. २८ मुं आहार पद छे, तेमां आहार, आहारना प्रकार, क्या जीवनो क्या प्रकारनो आहार, आहारनां अणुओ विगेरे अनेक विषयोनुं निरूपण छे. २९ मुं उपयोग पद छे, एमाँ उपयोग अने क्या जीवने क्या प्रकारनो उपयोग होय छे, ए विषे विवेचन आपेछं छे. ३० मुं पश्यत्ता पद छे, एमां 'जोवा विषे विचार आपेलो छे. ३१ मुं संती पद छे, एमां जीवोनी संतिता अने असंक्रिता विगेरे विवे विचार कर्ये। छे. ३२ मुं संयमपद छे, एमां जीनोनी संयमिता अने असंयमिता संबंधे विचारेतं छे. ३३ मुं अवधिपद छे, एमां अवधिज्ञानने लगती पूरेपूरी माहिती आपेली छे. ३४ मुं प्रविचारपद छे, एमां विशेषे करीने देव अने देवीना संभोगने लगती हकीकत आपेली छे. ३५ मुं वेदना पद छे, एमां बेदनाना प्रकार अने क्या जीवने कह वेदना होय छे-ए विषय नोंधेलो छे. ३६ मुं समुदात पद छे, एमां समुदातना खरूपथी मांडीने समुदातने लगती सघळी हकीकतो आपेली छे.-(जुओ भ० प्र० खं० प्र० २६२)

भा रीते प्रज्ञापनासूत्रना विषयोनुं दिद्गर्शन आप्या पछी तेना कर्ता विषे पण विचारनं घटे छे. प्रज्ञापनासूत्रना मूळ उपरथी—तेनी शहभातना के अंतना भाग उपरथी—तेना कर्तानी माहिती मळी शकती नथी. फक्त टीकाकारना अनेक उल्लेखो उपरथी आपणे एना कर्ता तरीके आर्थश्यामसूरिने मानी शकीए छीए. टीकाकारशीए ए जातना जे उल्लेखो दशाच्या छे तेमांना केटलाक आ प्रमाणे छे:—

" भगवान् आर्थश्यामोऽपि इत्थमेव सूत्रं रचयति "

(१० १० ७२)

" भगवाम् आर्थश्यामः पटति "

(vs of

" सर्वेषामपि प्रावचनिकसूरीणां मतानि भगवान् आर्थश्याम उपदिष्ठवान् (ए० ३८५)

ः " स्रिशह- (१० ७) स्रिशह-(१० ८) स्रिशह-(५० १८)सूरि-राह-(प्र०१८) स्रिराह-(४० १९) स्रिराह-(४० २३) स्रिराह-(१० २४) सूरिराह-(१० २४) सरिराह-(१० ४३) भगवानाह-(५० ४२) सृरिराह-(५० ४३) सृरिराह-(५० ४३) स्रिराह-(५० ४४) सृरिराह्—(१०४६) अथ का आसालिगा १ एवं शिष्येण प्रश्ने कृते सित भगवान् आर्येश्यामी यदेव प्रन्थान्तरेषु आसालिगावतिपादकं गैातमप्रश्न-भगविकविचनरूपं सूत्रमित तदेव आगमबहुमानतः पठति-(१० ४७) सूरिराह-(पृ० ४९) अत्रापि संमूर्डिममनुष्यविषये प्रवचनबहुमानतः शिष्याणामपि च ' साक्षाद् भगवता इद्मुक्तम् 'इति वहुमानोत्पादनार्थम्--(पृ०५८) सुरिराइ-(पृ० ५८) अमीषां ८०वानामादेशानाम् अन्यत-मादेशसमीचीनतानिर्णयोऽतिशयज्ञानिभिः, सर्वेत्कृष्टश्रुतलव्धिसंपनेनी कर्त शक्यते, ते च भगवदार्यस्यामप्रतिपती नासीरन्. केवलं तःकालापेक्षया ये पूर्वतमाः सूरयः तस्कालभाविष्रन्थपै।वीपर्यपर्यास्नमति श्रीवेदस्य स्थिति प्ररूपितवन्तस्तेषां सर्वेषामि प्रावचनिकष्रीणां मतानि भगवान् आर्थश्याम उपदिष्टवान्, तेऽपि च प्रावचनिकसूर्यः स्वमतेन सूत्रं पठन्तो गातमप्रश्न-भगनत्रिर्वचनरूपत्या पठन्ति, ततस्तद्वस्थान्येव

" भगवान् आर्यस्याम पण आ ज प्रमाणे सन्नने रचे छे "

" भगवान् आर्यस्याम पढे हे-कहे-छे "

" बधा य प्रावचनिक च्रिओनां मताने भगवान् आर्यश्यामें उपवेशेलां छे "

" आचार्य कहे छे--(पु० ७-८-१८-१९-२३-२४-४१-४३-४४-४६-५५-५८) भगवान् (सूरि) कहे छे—(पृ०४२) ४७ मा पृष्ठ उपर ' आसालिगा ' नामना सर्व संबंधी विचार आवेलो छे. तेमां जणाव्युं छे के--'' आसालिगा ए शुं कहेवाय ? '' एवो प्रश्त ज्यारे शिष्ये कर्ये। त्यारे भगवान् आर्येदयाम एनो उत्तर आपे छे. जे (उत्तर) बीजा अंथमांथी उद्धरेलो छे अने गातमना प्रश्न तथा महावीरना उत्तररूप छे-अने तेने अहीं आगमना बहुमानने लीधे कहेलो छे.−(पृ० ४७) ५०मा **पृ**ष्ठ उपर संमूर्छिम मनुष्योने लगती इकीकत आये छे, तेमां पण–' आ तो साक्षाद् भगवाने कह्यं छे ' एवो भाव शिष्योने उत्पन्न कराववाने साह उपर प्रमाणेनो बीजा कोइ अंग प्रंथनो पाठ आपेलो छे.-(पृ० ५०) ३८५ मा पृष्ठ उपर क्रीवेदनी स्थितिनी इकीकत आपेठी छे. तेमां ए विषे कोई एक नकी हकीकत न जणावतां पांच जुदी जुदी हकीकतो आपेली छे. आ विषे टीकाकारशी जणावे छे के, ए पांचे जुदा जुदा प्रावचनिकोना (सिद्धांत धुरंधरोना) मत छे. जे वखते सूरि श्रीआर्यश्याम इयात इता ते वखते 'ए पांच मत्तमांथी क्यो मत सत्य छे ' एवो निर्णय आपनार कोइ अति-शय ज्ञानी अथवा उरकृष्टतम श्रतलिधवाळा पुरुषनी ह्याती न हती. माटे श्री आर्थेर्याम भगवाने पोताना समयथी पहेलांना आचार्या ते

्**ृ. मूलच्छायाः — परि**णाम-वर्ण-रस-गन्ध-छ**द्ध-अप्रशस्त-संक्षि**क्षो<u>-</u>ष्णाः, गति-परिणाम-प्रदेशा-ऽनगाह्-वर्गण<u>ः-</u>स्थान-अरपबहुत्वम्ः—अन्तु०

— सेवं भंते !, सेवं भंते ! त्ति.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, एम कही यावत्-विहरे छे.

भगवंत-अज्ञसहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुत्ते चडत्थसये दसमो उदेसी सम्मती.

१. लेश्याऽधिकारात् तद्वत एव दशम—उद्देशकस्य इदम् आदिसूत्रमः—' से णूणं ' इत्यादि. ' तारूवत्ताए ' ति तद्रूपतयां – नीछछेश्यास्वभावेन, एतदेव व्यनिकः-' तावण्णताए ' ति तस्या इव नीछछेश्याया इव वर्णी यस्याः सा तद्वणी, तद्भावस्तत्ता तयां तद्वर्णतयाः 'एवं चउत्थो उद्देसओ ' इत्यादिवचनादेवं द्रष्टव्यमः-'' तागंधताए, तारसत्ताए, ताफासत्ताए मुज्जो मुज्जो परिणमाति ? हंता, गोयमा । कण्हलेसा नीललेसं पप्प तारूवत्ताए, तावण्यत्ताए, तागंधत्ताए, तारसत्ताए, ताफासत्ताए भुज्जो मुज्जो परिणमतिः अयमस्य भावार्थः--यदा कृष्यलेश्यापरिणतो जीयो नील्लेश्यायोग्यानि द्रव्याणि गृहीत्या कालं करोति, तदा नील्लेश्यापरिणत उत्पद्यते, 'जैल्लेसाइं दन्भाइं परिआइत्ता कालं करेइ तल्लेसे उचवज्जइ' इति बचनात्, अतः कारणमेव कार्यं भवति. 'कण्हलेसा नीललेसं पप ' इत्यादि तु कृष्ण-नील्लेश्ययोर्भेदपरमुपचारादुक्तमिति. '' से केणैडेणं भंते ! एवं वुचइ-कण्हलेसा नीललेसं पप तारूवत्ताए, तावण्णताए, तागंधताए, तारसत्ताए, ताफासत्ताए भुज्जो पुर्जो परिणमइ १ गोयमा ! से जहा नाम ए खीरे दूसि पण (तकम् इत्यर्थः,) सुद्धे वा वत्थे रागं पप तारूवत्ताए, तावण्णयत्ताए, तागंधत्ताए, तारसत्ताए, ताफासत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ; से एएणहेणं गोयमा ! एवं वुचइ:-कण्हलेसा०" इत्यादि, एतेनैव अभिलापेन नील्लेख्या कापोतीम् , कापोती तैजसीम् , तैजसी पद्माम् , पद्मा शुक्लां प्राप्य तद्र्यत्यादिना परिणमति-इति वाच्यम्. अथ कियदूरमयमुदेशको वाच्यः ? इत्याहः- ' जाव ' इत्यादि, ' परिणाम ' इसादिद्वारमाथोक्तद्वारपरिसमाप्तिं यावद् इसर्थः. तत्र परिणामो दर्शित एव, तथा 'वण्ण 'त्ति,—क्वण्णादिलेश्यानां वर्णो वाच्यः, स चैत्रम्:-''कॅण्हलेस्सा णं मंते ! केरिसिआ वण्णेणं पण्णत्ता ?'' इत्यादि. उत्तरम्:-कृष्णलेश्या कृष्णा जीमूतादिवत् , नीललेश्या नीला मृङ्गादिवत्, कापोती कापोतवर्णा खदिरसारादिवत्, तैजसी लोहिता शशकरकादिवत्, पद्मा पीता चम्पकादिवत्, शुक्ला शुक्ला शङ्कादिवद् इति. तथा 'रस' त्ति-रसस्तासां वाच्यः-तत्र ऋष्णा तिक्तरसा निम्बादिवत्, नीला कटुकरसा नागरवत्, कापोती कषायरसा अपनवबदरवत्, तेजोलेश्या आम्लमधुरा पक्वामादिफलवत्, पद्मलेश्या कहुकषायमधुररसा चन्द्रप्रभासुरादिवत्,

मूत्राणि लिखता 'गोतमा 'इत्युक्तम्. अन्यया भगवति गै।तगाय निर्देष्टरि न संशयकथनमुपपद्यते-भगवतः सकलसंशयातीतलात् "— (पृ०३८५)

समयना साहित्यनी सहायने लीधे परापूर्वथी जै मान्यता मानता आव्या हता तेने तेवीन तेवी ज अहीं उपदेशेली छे. जो के, आ विषयने लगती सूत्रनी रचना गातमना प्रश्न अने महावीरना उत्तररूप छे. ए जोतां तो ए पांच जुदी जुदी हकीकतो न शाववी जोइए. कारण के, श्रीमहावीर तो सकल संश्यातीत होताथी तेओए पोताने श्रीमुखे एक नक्की हकीकत ज गातमने कहेवी जोइए, आवो संदेह आपणने थाय ए खामाविक छे. एना समाधानमां टीकाक रश्रीए जणान्युं छे के, आ सूत्र-रचना कांइ साक्षात महावीर अने गातमना प्रश्नोत्तररूप नथी. ए तो ते ते मतवाळा पोतपोताना मतने जणावतां पण गातमना प्रश्न अने महावीरना उत्तर-ए शिलीनी रचना करीने जणावे छे. माटे अहीं श्रीआर्यश्यामसूरिए पण तेओनी ते शैली जेवीने तेवी कायम राखीने ए शब्दो टांक्या छे माटे आ प्रस्तुत विषयना प्रश्नोत्तरोने गातम अने महावीरना समजवानी भूळ करवानी नथी.

उपर जणावेला टीकाकारश्रीना अनेक उल्लेखो उपरथी एउं तरी आवे छे के, आ प्रज्ञापनासूत्रना प्रणेता श्री 'आर्यदयामस्सरि ' नामे कोई असाधार-णज्ञानी पुरुष हुदो. हुवे आपणे अहीं ते पुरुषनो परिवय मेळववा कोशीश करिए ते स्थानप्राप्त छेः प्रज्ञापना सूत्रनी शरुआतमां कोई वीजानी करेली वे गाथाओं मळी आवे छे अने तेमां आ आर्यद्याम सूरिजीनो कांइक परिचय मळतो लागे छे. ते गाथाओं आ छेः

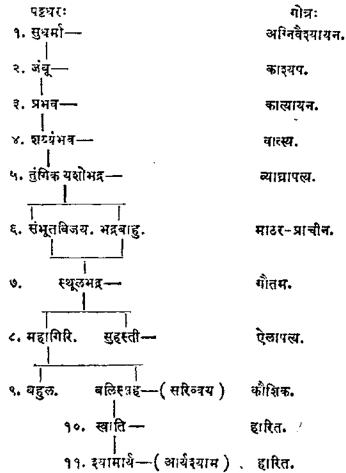
" वायगवरवंसाओ तेवीसइमेण घीरपुरिसेणं, दुद्धरघरेण मुणिणा पुन्तसुयसमिद्धयुद्धीण । १ सुयसागरा विणेकण जेण सुयरयणमुत्तमं दिनं, सीसगणस्स भगवओ तस्स णमो अज्ञ-सामस्स " २ -(अन्यक्रतंक) " वाचकोना वंशमां वेवीशमी पेढीए थएटा, घीरपुरुष, संयमना घारक अने पूर्व श्रुतथी समृद्ध बुद्धिनाळा जे श्रीआर्थश्याम भगवाने श्रुतस्म सागरमांथी वीणीने आ श्रुतरस्न (प्रज्ञापना १) शिष्यगणने दीषुं छे तेमने नमस्कार थाओं"

- १. मूलच्छायाः -तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इतिः -अनुः ।
- 9. प्रवशिया —तद्ग्रस्तया, तदस्तया, तत्स्वर्शतया भूयो भूयः परिणगति ? इन्त, गौतम ! कृष्णलेख्या नीललेख्यां प्राप्य तद्भ्यत्या, तद्ग्यत्या, तद्ग्यत्या, तद्ग्यत्या, तदस्तया, तत्स्वर्शतया भूयो भूयः परिणमति. २. यक्षेत्यानि द्रव्याणि पर्यादाय कालं करोति तक्षेत्य उपयते. ३. तत् केनार्थेन भगवन् ! एवम् उच्यते कृष्णलेख्या नीललेख्यां प्राप्य तद्भ्यत्या, तद्ग्यत्या, तद्ग्यत्या, तदस्तया, तत्स्वर्शत्या भूयो भूयः परिणमति, गौतम ! त्रवा नाम क्षारं द्वी प्राप्य, शुदं वा वहं रागं प्राप्य तद्भ्यत्या, तद्ग्यत्या, तदस्तया, तदस्वर्था, तत्स्वर्था भूयो भूयः परिणमति; तत्त्वर्थान गौतम । एवम् उच्यते कृष्णलेख्याव ४. कृष्णलेख्या भगवन् । कीद्शी वर्णन प्रश्नक्षा शिल्या वर्षे

शुंक्ला लेश्या मधुररसा गुडादिवत्. 'गंध' ति,-लेश्यानां गन्धो वाच्य:-तत्राऽऽद्यास्तिस्तो दुरिभगन्धाः, अन्यास्तु तदितराः, 'सुद्ध' ति, अन्याः शुद्धाः, आद्यास्तितराः; 'अपसत्थ' ति, आद्या अप्रशस्ताः, अन्यास्तु प्रशस्ताः; 'संकिलिइ' ति, आद्याः संकिल्छाः, अन्यास्तितराः; 'जण्ह' ति, अन्या उष्णाः स्निग्धाश्च, आद्यास्तु शीता रूक्षाश्च; 'गह' ति-आद्या दुर्गतिहेतवः, अन्यास्तु सुगतिहेतवः; 'परिणाम' ति-लेश्यानां कतिविधः परिणाम इति वाच्यम् , तत्राऽसौ जधन्य-मध्यमो-स्कृष्टभेदात् त्रिधा,

आ गाथा द्वारा आपणे एटलुं जरुर समजी शकीए छीए के, आर्यश्यामसूरिजी वाचक वंशना हता, प्रेश्नुतना जाण हता अने वाचकोना वंशमां तेमनी पाट २३ मी हती. आ उपरांत तेमनी समय, तेमना गुरु के तेमना समसमयी विद्वानी-ए विषे कांइ कळाडुं नथी. नंदीसूत्रनी स्थविरावलीमां अने खरतरगच्छनी तथा श्रीधर्मसागरजीनी पद्यावलीमां एक आर्यश्याम सूरिजीनी नींध मळी आये छे, तो हवे विचारतं जोइए के, ते आर्यश्याम अने आ वाचकवंशवाळा आर्यश्याम ए वने एक छे के जुदा जुदा छे ? नंदीमूत्रमां जे स्थितिरावली आपी छे ते आ छे:—

" सुहम्मं अग्विसाणं जम्बूनामं च कासवं, पभवं कचायणं वंदे वच्छं सिजंभवं तथा. २३ जसभदं तुंगियं वंदे संभूयं चेव माढरं, भद्दबाढं च पाइतं थूलभद्दं च गोयमं. २४ एलावचसगोत्तं वृंदामि महागिरिं सुहर्षियं च, तत्तो कोसिअयोत्तं बहुलस्स सरिव्वयं वंदे. २५ हारियगुत्तं साद्दं च वंदिमो हारियं सामजं."२३



का स्थितिराविज्ञीमां नींधाएला इयामार्थ के आर्थइयाम आर्थ श्रीष्ठ्रधर्माथी ११मा आवे छे अने हारित गोत्रना छे. खारे आ प्रज्ञापना सत्रना कर्ता आर्थइयामने टीकाकारश्रीए आर्थ श्रीष्ठ्रधर्मभगवानथी २१मा जणावेला छे. ["तथा च सुवर्मस्वामिन आरभ्य भगवान् आर्थइयामः त्रयोविंशतितम एव "-(प्र० प्र० ५. स०)] आम हावाथी कदाच आपणे एम कळी शकीए के, जे आर्थइयामनो निर्देश नंदीसत्रना कर्ता देववाचक करे छे ते आर्थइयाम अने श्रीष्ठ्रधर्माभगवानथी त्रेवीशमी पाट उपर थएला आर्थइयाम एक न हाय-जो ए बने एक ज हाय ते। एकनी ११मी अने बीजानी २३मी एम जुरी जुरी पाट शी रीते होय? वळी नंदीसूत्रनी टीका करनार श्रीमलयगिरिजीए ए पदावलीनी पण टीका करी छे-तेमां श्रीआर्थइयामनो परिचय आपत्रं आ वाक्य श्रीमलयगिरिजीए निर्देश्युं छे: "खातिशिष्यं हारितगीत्रम्-इयामार्यं वन्दे—(प्र० ४९) आ उहेलमां 'एमणे प्रज्ञापना करी छे के, जे प्रज्ञापनाना प्रणेता वाचकवंशीय आर्थइयाम छे ते आ ज छे एवा कशो स्पष्ट के अस्पष्ट निर्देश टीकाकारश्री करता नथी तेथी पण ए अग्यारमी गादी बाळा अने आ त्रेवीशमी गादीवाळा—ए बनेने एक मानवानी हिम्मत थती नथी। श्रीधर्मसागरजीनी पद्यावलीमां जे निर्देश छे ते नंदीसूत्रवाळी नोंधने अनुसरतो ज छे माटे नंदीसूत्रवाळी नोंध करतां ए श्रीधर्मसागरजीनो उहेल कांइ विशेष निर्णय आपी शकतो नथी। तेओए (धर्मसा०) तो घणुं स्पष्ट जणान्युं छे के,

"श्रीआर्यमहागिरेस्तु शिष्यो बहुर-चित्सहै। यमल-भातरी. तत्र बिल्सहस्य शिष्यः खातिः-उत्त्वार्थादयो प्रन्थास्तु तरकृता एव संभाव्यन्ते. तिष्ठिष्यः इयामाचार्यः प्रज्ञापनाकृत् श्रीवीरात् षदसप्तत्यधिकशतत्रये (३७६) खर्गभाक्. तिष्ठिष्यः साण्डिल्यो जीतमशादाकृत्-इति सन्दिस्य-विरावल्यामुक्तमस्ति, परं सा पद्वगरंपरा अन्या-इतिः"—(४० सा० प०)

" श्रीआर्यमहागिरिना से शिष्य नामे-बहुल अने बलिसह जोडलामाइ हता. तेमांना बलिसहना शिष्य नामे खाति थया-तत्त्वार्थ विगेरे प्रथो आ खातिए क्या जणाय छे अने ए खातिना शिष्य नामे द्यामाचार्य थया-तेमणे प्रशापना सूत्रनी रचना करी छे अने तेओ बीरात ३७६मां खर्गवासी थया. तेमना शिष्य नामे सांडिल्य थया अने एमणे जीतनी मर्यादा करी-ए प्रमाणे नंदीक्त्रनी स्थविरावलीमां कह्युं छे, परंतु ते पट्टपरंपरा जुदी छे"

(आ पद्दावली विषे कांइ लखवानुं अहीं स्थान नथी तो पण इतिहास-भ्रमने दूर करवा माटे मारे एटडं अहीं जणावी देखं जोइए के, जे शब्दो नीचे — आम लीटी मुकेली छे ते शब्दो नंदीसूत्रनी पद्दावलीमां नथी ज.)

उपरना श्रीधर्मसागरजीना उहेसवी आपणने एम मानवाउं मन थइ जाय के, ए उहेस द्वारा प्रज्ञापनाना कर्ता आर्यश्याम अने तेमना गुरु खाति-ए विषेनो तथा श्रीआर्यश्यामना समयनो पण निर्णय थइ जाय छे, पण आपणे उतावळ न करतां आ निर्णयने ध्यानमां छेती वखते प्रज्ञापनामां नोंधा- उत्पातादिभेदाद् वा त्रिधा इति; 'पएस ' त्ति, आसां प्रदेशा वाच्याः—तत्र प्रत्येकमनन्तप्रदेशिका एता इति; 'ओगाह ' त्ति, अवगाहना आसां वाच्या—तत्रैताः असंख्यातक्षेत्रप्रदेशावगाढाः; 'वग्गण 'त्ति, वर्गणा आसां वाच्याः—तत्र वर्गणाः कृष्णलेश्यादियोग्यद्रव्यवर्गणाः, ताश्वाऽनन्ताः औदारिकादिवर्गणावत् ; 'ठाण'त्ति, तारतम्येन विचित्राऽध्यवसायनिबन्धनानि कृष्णादिद्रव्यवृन्दानि, तानि चाऽसंख्येयानि,

एको—" यायगवरवंसाओ तेवीसइमेण धीरपुसेणं" आ उछेख भूळवो जोइनो नथी. श्रीधर्मसागरजीए जे कांइ निर्णयात्मक के संभवात्मक लह्युं छे ते बंधुं ११ मी गादीना धणी श्रीआर्यद्यामने लागु थाय छे, निह के, १३ मी पाटना मुखी आपणा आ श्रीआर्यद्यामने. नळी एमणे ए ११ मी पाटनाळा आर्यस्यामजीने प्रज्ञापनाता कर्ता स्वव्या छे ते विषेनो बीजो कोइ आधार आप्यो नथी—तेमणे (धर्म सा०) छेवटे लह्युं छे के, "ए प्रमाणे नंदीस्त्रनी स्थित्रावलीमां सहयुं छे" पण नंदीस्त्रनी स्थित्रावलीमां, जे कांइ धर्म गर्गाण पोतानी आ स्थळनी पहावलीमां नोंधुं छे तें वें नोंधे छं मळतुं पण नथी, तेमां (नंदीनी प०) तो मात्र साति अने स्थामाचार्यना नाम अने गोत्रना उछे छे ए सिवाय एमनो समय के एमनी कृति विषे मूळमां के टीकामां क्यो उछेख जडतो नथी तेथी एकला श्रीधर्मसागरजीना उछेखथी आपणे एम श्री रीते मानी शकीए के, ११ मी गादी-वाळा श्रीश्यामसूरिजीए आ प्रज्ञापना सूत्रनी रचना करी हशे ! अने कदाच एम मानी लइए तो पण एमनी (स्थामार्थनी) त्रेवीकामी पाटवाळा उछेखनुं शुं थसे ? ए विचार उभी थाय छे. आ रीते नंदीस्त्रनी पहावली अने श्रीधर्मसागरजीनी पहावली ए बन्ने द्वारा आ स्त्रना करी विषे आपणे कोइ प्रकारना निर्णय उपर आवी शकता नथी. हवे आपणे आ यावतने लगती खरतरगच्छनी पहावली ने उछेख तपासीएः—

"२४. ततः श्रीवीरस्रिर्जातः. पुनस्तदेव श्रीकालिकाचार्या जातः, स च वीरवाक्यात् भादपद्युक्तगञ्चमीतश्चतुर्थ्यां श्रीपर्युषणापवे आनीतवान्. तत एव अद्यापि चतुरसीतिगच्छेषु चतुर्थ्यां सांवरसरिकश्रतिक्रमणं क्रियते. अयं च वीरात् त्रिनवद्यधिकनवशतवर्षेः (९९३) संजातः—तथा विकार— संवरसरात् त्रयोविंशस्यधिकपञ्चशतशतवर्षेः (५२३) संजातः.

कालिकाचार्यद्वयम्--

पुनः कालिकाचार्यद्वयं प्राग्जातम्, तत्र आदाः प्रज्ञापनाकृत्-इन्द्रस्य अत्रे निगोदनिचारवक्ता—द्यामाचार्यापरनामा, स तु वीरात् ३७६ वर्षेर्जातः द्वितीयो गर्दभिक्षोच्छेदकः-स तु वीरात् ४५३ वर्षेर्जातः "— खरतर(प०)

" लार पछी चोवोशमा श्रीवोरस्रि थया. ए ज वखते कालिकाचार्य थया-जेमणे श्रीवीरना वाक्यथी पांचमनी चोथ करी (?) अने ते चोराशी गच्छमां आज सुत्री संमानित थइ. ए कालिकाचार्य वीरात् ९९३ वर्षे अने विकनात् ५२३ वर्षे थया.

वे कालिकाचार्य.

ए उपरांत बीजा वे कालिकाचार्य पहेलां थइ गया छे. जेमांना एक तो वीरात् ३०६ वर्षे थया छे. एनुं बीजुं नाम स्यामाचार्य हतुं. एमणे इंद्रनी पासे निगोदनुं अद्भुत विवेचन कर्युं हतुं. अने प्रज्ञापना स्थनी रचना पण एमणे ज करी छे. बीजा कालिकाचार्य वीरात् ४५३ वर्षे थया अने एमणे ज राजा गर्दभिक्षनो नाश कराव्यो.

आ पट्टावली जणाने छे के, स्यामान्यार्थ के कालिकान्यार्थ कुल त्रण थया छे-तेमांना एक तो वीरात् २७६ वर्षे, बीजा वीरात् ४५१ वर्षे अनें त्रीजा वीरात् ९९२ वर्षे. ए त्रणे कालिकान्यार्थना कार्यनो परिचय पण आ पट्टावलीकारे आपेलो छे—प्रज्ञापनाना कर्ता विषे जे वात धर्मसागरजीए जणानी छे ते ज नात आमणे जणानी छे माटे आपणे नीरात् २७६ मां थएला अने अग्यारमी पाटनाळा श्रीआर्थस्यामजीने आ सन्नता कर्ता त्यां सुची तो न ज मानी शकीए ज्यां सुधी प्रज्ञापना सत्रमां आवेली गाथामां जणानेली श्रीआर्थस्यामस्तरिनी त्रेवीशमी पाट खोटी न ठरे.

खरतर गच्छनी पटावलीमां २४मी पाट उत्तर श्रीवीरसूरि जणाव्या छे अने ए ज वखते एक कालिकाचार्य थयानुं जणाव्युं छे तथी एम कल्पी शकाय खरु के, आपणा त्रेवीशमी पाटबाळा श्रीआर्यश्याम अने ए श्रीवीरसूरिना समसमग्री श्यामसूरि (कालकसूरि)-ए वजे कदाव एक ज होय- आ कल्पनामां त्रेवीशमी पाटना प्रश्ननो केटलोक निवेडो थइ शके छे माटे ज आवी अनाधार कल्पना करवानुं साहस थइ शके छे, वळी बीजुं के, ज्यां पत्रवणामां श्रीआर्यश्यामनो परिचय आपेलो छे त्यां कांइ तेमना गुरु विगेरेनो परिचय आपेलो नथी तथी आपणे एम तो शी रीते कही शकीए के, आ ज आर्यश्यामना गुरु खाति हता—उपरान उद्योशी आर्यश्याम अनेक होवानुं साबीत थइ गया पछी 'आ ज आर्यश्याम खातिना शिष्य छे 'एम आपणे कही शकीए निह-वळी खातिना शिष्य आर्यश्याम तो श्रीस्त्रमंथी अग्यारमी पाटे आवता होवाथी ते अने आ त्रेवीशमी पाटना धणी आर्यश्याम ए वत्रे एक शी रीते होय ? अर्थात् आपणे पाटनी दृष्टिए तो ए खातिना शिष्य श्रीआर्यश्यामजीने प्रज्ञापनाना कर्ता न ज मानी शकीए. आ रीते छेवट ए त्रण आर्यश्याममाना क्या श्रीआर्यश्याम आ सत्र रच्युं छे ? ए प्रश्ननो नीकाल थइ शक्ष वो अश्वय जणाय छे.

प्रज्ञापनासूत्रमां एक स्थळे स्रीवेदना समयनी मर्यादा विषे विचारतां मूळमां ज ए विषे आ रीते पांच अभिप्रायो दशाववामां आव्या छै:--

प्र०-" इत्थिनेदेणं भन्ते । इत्थिनेदे ति कालतो केनिकरं होति !

उ॰—गोयमा । एगेणं आदेसेणं जह० एगं समय, उक्को० दस्तरं पिलेओ-वमसतं पुन्तकोडिपुहुत्तमङमहिअं.

एगेर्ग आदेसेर्ग जह० एगें समयं, उक्को० अहारस-पिलतोवमाई पुरुव-कोटि-पुडत्तमब्महिआई

एगेण आदेसेण जि॰ एगं समयं, उक्की॰ चडद्स पिलओवमाई पुन्द-कोटिपुड्तमञ्जाहिआहं.

एगें आदेसेंग ज॰ एगं समयं, उश्लो॰ पिओवमसतं पुन्त्रकोडिपुहु-त्तमस्मिहिअं,

एगेणं आदेसेंगं जह० एगं समयं, उक्षो० पिलतोवमपुहुतं पुन्वकोडि॰ पुहुत्तमञ्महियं. हे भगवन् ! स्त्रीवेद ' स्त्रीवेद ' ए प्रमाणे काळथी क्यां सुधी रहे !

हे गातम! एक आ आदेशे करीने खावेद जधन्ये एक समय सुनी अने उत्कहे ११० पत्योपम अने वेथी नव पूर्वकोटि सुनी रहे-

एक आदेशे करीने स्रीवेद जधन्ये एक समय सुधी अने उत्कृष्टे १८ पहभीयम अने वेथी नव पूर्वकोटि सुबी रहे.

एक आदेशे करीने स्रीवेद जघन्ये एक समय सुधी अने उत्करे भाद पत्योपम अने वेथी नव पूर्वकोटि सुधी रहे.

एक आदेशे करीने खीनेद जयन्ये एक समय सुत्री अने उत्कृष्टे १०० पत्योपम अने नेथी नव पूर्वकोटि सुनी रहे.

एक आदेशे करीने कीवेद जयन्ये एक समय सुधी अने उत्कृष्टे बेथी नय पत्योपम उपरांत बेथी नव पूर्वकोटि सुधी रहे.

आ पांच अभिप्रायोमां क्यो अभिप्राय रीतसरनो छे-ए विषे श्रीआर्यक्यामजीए कोइ प्रकारनो स्पष्ट खुलासो कर्ये। नथी, देतुं कारण जणावतां श्रीटीकाकारंजी जणावे छे के-

अध्यवसायस्थानानामसंख्यातत्यादिति, 'अप्पबहुं 'ति, छेर्यास्थानानामस्पबहुत्वं वाच्यम् , तचैवम्:-" एएसि णं भंते ! कण्हलेसा-ठाणार्गं जाव -सुक्कलेसाठाणाण य जहन्नगार्णं दव्यद्वयाए २ कयरे कयरेहिंतो अप्पा या, बहुया वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा? गोयमा! सन्तरथोया जहन्मा काउलेस्साठाणा द्व्यद्वयाएं, जहन्मा नीललेस्साठाणा द्व्यद्वयाए असंखेजगुणा, जहन्मा कण्हलेस्साटाणा दव्यद्वयाए असंखेळागुणा, जहन्रगा तेउलेसाठाणा दव्यद्वयाए असंखेळागुणा, जहन्रगा पम्हलेसाठाणा दव्यंद्वयाएं असंखेजगुणा, जहचगा सुकलेस्साठाणा दव्यद्वयाए असंखेजगुणा '' इत्यादि.

> स्वतः सुबोधेऽपि शते तुरीये व्याख्या मया काचिदियं विद्ब्धा, दुग्धे सदा स्वादुतमे स्वभावात् क्षेपो न युक्तः किमु शर्करायाः ?

१. आगळना उद्देशकमां छेत्रदे छेश्या संबंधी हकीकत जणात्री छे माटे आ दसमा उद्देशकमां एण ए संबंधे ज कहेवानुं छे. आ उद्देशकनुं अंदि सूत्रं आ छे:—['से णूणं ' इत्यादि] ['तारूबचाए 'त्ति] ते रूपपणे-नीळळेश्याना स्वभावे, ए ज वातने स्पष्ट करे छे के, ['ताबन्नः त्ताए ' ति] ते वर्णपणे-नीठठेश्यानी जेवा वर्णपणे, [' एवं चउत्थो उद्देसओ ' इत्यादिः] आ सूत्रथी आ प्रमाणे समजवुं:—'' ते गंधपणे, तें रसपणे, '' अर्थात् कृष्णलेश्या नीळलेश्याने पामीने तेना वर्णपणे, तेना गंधपणे अने तेना रसपणे वारंवार परिणमे छे १ हे गीतम ! हा, कृष्णलेश्या नीळळेड्याने पामीने ते रूपपणे, ते गंधपणे अने ते रसपणे बारंबार परिणमे छे. तात्पर्य आ छे के -ज्यारे कृष्णळेड्याना परिणामवाळो जीव, नीळ-र्लेश्याने योग्य इंट्योतुं महण करी मरण पामे छे त्यारे ते नींठलेश्याना परिणामवाळो थईने उत्पन्न थाय छे कारण-(जीव) " जे लेश्यानां द्रव्योतुं शहण करीने मरण पामे, ते टेश्यावाळो थइने बीजे ठेकाणे उत्पन्न थाय छे " ए प्रमाणेनुं शास्त्रकथन छे—जे कारण होय छे, ते ज संयोगवरी कार्यरूप बनी जाय छे, जेम कारणरूप माटी कालांतरे साधनसंयोगे कार्यरूपे-घटपणे-बनी जाय छे तेम कृष्णलेखा, पण कालांतरे साधनवशे नीळलेस्यामां फेरवाइ जाय छे-नीळलेस्यारूपे बनवी सुशक्य छे. शं०-ज्यारे कार्य अने कारण, ए बन्ने पदार्थ एक ज रूपना छे तो पछी ' कृष्णलेख्या नीललेख्याने पामीने ' ए रीते ए लेक्यामां भेद दर्शाववानुं हुं कारण १ कारण - ज्यां वे वस्तु एक ज होय त्यां भेदनी हयाती समापान. संभवती नथी, तो पछी अहीं ए बे लेक्याओमां शा माटे भेद दर्शाच्यो ? समा०-ए वे लेक्याओमां जे भेद देखाडचो छ ते वास्तविक रीते नथी, पण उपचारथी छे. माटे औपचारिक मेद दर्शाववाथी वस्तुना खरूपमां वांघो आववानुं कारण नथी. '' हे मगवन्! कृष्णलेश्या, नीललेश्याने पामीने तेना रूपपणे, तेना वर्णपणे, तेना गंधपणे, तेना रसपणे अने तेना स्पर्शपणे वारंबार परिणमे छे ' एम कहेवानुं शुं कारण ? '' ' हे गौतम! े जेम दूध, छाशने पामीने–छाशना संयोगथी–छाश रूपे, छाशना वर्णे, छाशना गंघे, छाशना रसे अने छाशना स्पर्शे परिणमे–बने–छे, अथवा जेम चोक्खुं छुगडुं रंगने पामीने-रंगना संयोगथी-रंगना रूपे, रंगना वर्षे, रंगना गंधे, रंगना रसे अने रंगना स्पर्शे वारंवार परिणाम पामे छे. तेवी रीते हें गौतम! कृष्णलेश्या, नीललेश्याने पामीने तेना वर्णादि परिणामरूपे बनी जाय छे " इत्यादिः ए ज अभिलापवडे ' नीललेश्या कापोत

" अमीषां पञ्चानाम् आदेशानाम् अन्यतम-आदेशसमीचीनता-निर्णयोऽतिशयहानिभिः, सर्वेत्ऋष्टश्चतरुब्धिसं मेत्रैवा कर्तुं शक्यते, ते च छे-ए जातनो निर्णय अतिशय झानिओथी के सर्वेत्कृष्ट श्रुतनी भगवत्-आर्यदयामप्रतिपत्ता नाधीरन्, केवलं तत्कालापेक्षया ये पूर्वसूरयः 🕆 त्तरकाल-मावित्रन्थपै।वीपर्यगर्यालोचनया यथाखमति स्रोवेदस्य स्थिति प्रक्षितवन्त स्तेषां सर्वेषाम् अपि प्रावचनिकसूरीणां मतानि भगवान् आर्यस्याम जादिष्टवान् '-प्र० १०३८५.

" आ पांच आदेशी-मती-मां कयो अंमुक एक आदेश समीचीन लब्धिवाळा पुरुषोयी यह शके छे. तेवा अतिशयज्ञानवाळा के सर्वेत्स्ट्रप्ट श्रुतनी ल ब्यवाळा पुरुषो भगवत्-आर्थस्यामनी प्रतिपत्तिमां न हता. फक्त ते समयना पूत्रीचाया ते समयना प्रयोद्वारा पूर्वापरनी पर्यालोचना करीने जे स्वमतित्रमाणे स्त्रीवेदनी स्थिति प्ररूपी गया इता ते बधा प्रावचनिक आचार्यानां मतोने भगवान् आर्थस्यामे अहीं नोंधेलां छे "

टीकाकारश्रीमा आ उरेख उपरथीं आपणे विशेष तो नहि, पण एटलं तो जाणी शकीए खरा के, ज्यारे आ प्रहापना सत्रनी रचना थइ हशे त्यारे अतिशयज्ञानिओंनो के सर्वे।स्कृष्टधत लिब्ब धरावनारा पुरुषोनो चिरह हशे अने खुद श्रीआर्यश्यामजी पण ते समये स्नीवेदने लगतां उपरनां मतांतरो विषे कोइ जातनो निर्णय आपी शके तेवा सातिशयहानी नहि होय-जैनइतिहासमां जे समयथी सातिशयशानिओनो विरह मनातो आवयो छे तें समय आ प्रज्ञापनानो अने तेना प्रणेतानो हशे-एम उपरना टीकाकारश्रीना उहेख द्वारा चोक्खं तरी आवे छे.

हिवे आपणे प्रज्ञापनानी शैली विषे विचार करीने आ टिप्पण पूर्व करीशुं.

प्रज्ञापना स्त्रनी रचना वे प्रकारनी छेः तेमां केटलेक ठेकाणे तो कोइ प्रकारना नाम निर्देश विना ज प्रश्न अने उत्तरो रचाया छे अने केटलेक ठेकाणे तो भगवतीयत्रनी जेम महावीर अने गौतमना प्रश्लोत्तरोनी जेवी संकलना थइ छे. ते बन्ने जातनी शैलीना नमुना आ प्रमाणे छे:-

(साधारण शैली.)-

" से कि तं अजीवपन्नवणा ? अजीवपन्नवणा दुविहा पन्नता. तं जहा-रूवि-अजीवपनवणा य, अरूवि-अजीवपनवणा य. से किं तं अरूवि-अजीव- रूपी अजीवप्रज्ञापना अने अरूपी अजीवप्रज्ञापना. अरूपी अजीवप्रज्ञापना पत्रवणा ? अरूवि-अजीवपत्रवणा दसविहा पत्रत्ता. " x x x-

'' अजीवश्रज्ञापना ए छुं ? अजीवप्रज्ञापना वे प्रकारनी छे. जेस केः ए शुं ? अरूपी अजीवप्रज्ञापना द्श प्रकारनी कही छै. "

(40 E0 A-?)

९. प्र० छाया०--एतेषां भगवन् ! कृष्णलेश्यास्थानानां यावत्-शुक्रलेश्शास्थानानां च जधम्यकानां द्रव्याऽर्थतया (३) कतराणि कत्रेः भ्योऽलानि वा, बहुकानि वा, तुरुयानि वा, विशेषाऽधिकानि वा १ गौतम । सर्वस्तोकानि जघन्यकानि कापोतलेश्यास्थानानि द्रव्यार्थतया, जघन्यकानि नीइछेरयास्थानानि दव्यार्थतयाऽसंख्येयगुणानि, जवन्यकानि कुष्णहेश्यास्थानानि द्रव्यार्थतयाऽसंख्येयगुणानि, जघन्यकानि तेजोछेश्यास्थानानि द्रव्यार्थ-ह्मयाऽसंख्येयगुणानि, जघन्यकानि पद्मलेख्यास्थानानि द्रव्यार्थतयाऽसंख्येयगुणानि, जघन्यकानि शुक्कलेख्यास्थानानि द्रव्यार्थतयाऽसंख्येयगुणानिः—अनु

तुर्थ उद्देशक.

Jain Education International

छेश्याने, कापोत लेश्या तैज़सी लेश्याने, तैजसी लेश्या पद्म लेश्याने अने पद्म लेश्या शुक्ल लेश्याने पामीने तेना रूपादिरूपे परिणमे छे ' इत्यादि कहेबुं. हवे आ उद्देशक क्यां सुधी कहेबो ? तो कहे छे के, ['जाव ' इत्यादि] ['परिणाम '] इत्यादि द्वार गाथामां कहेलां द्वारोनी समाप्ति सुधी ए उद्देशक कहेवो. तेमां परिणाम संबंधे हकीकत हमणां ज जणावी छे. तथा ['वन्न'ति] कृष्णलेश्यादिक लेश्यानो वर्ण कहेवो. ते आ रीते:-'' हे भगवन् ! कृष्णलेश्यानो वर्ण केत्रो कह्यो छे १ इत्यादिः उत्तर-मेघ विगेरेनी जेवी कृष्णलेश्या काळी छे, भमरा विगेरेनी जेवी नीठलेक्या नीठी छे, खेरसार विगरेनी जेवी कापोत लेक्या कापोती छे, ससलाना लोही विगरेनी जेवी तैजसी लेक्या लाल छे, चंपकविगरेनी जेवी पीत लेखा पीळी छे, शंखविगेरेनी पेठे शुक्ललेखा घोळी छे. तथा [' रस ' ति] लेखाओनो रस कहेवो. ते आ प्रमाणे:–लिंबडा विगेरेनी रस.

(महावीर अने गौतमना प्रश्नोत्तरवाळी शैली)—

" कहि णं भंते ! बादरपुढवीकाइयाणं पज्जत्तमाणं ठाणा पण्णता? गोयमा ! सट्ठाणेणं अद्वसु पुढवीसु × कहि णं भंते ! बादरपुढवीकाइयाणं अपन्नत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ? गोयमा ! जत्थेव बादरपुढवीकाइयाणं पजत्तगाणं ठाणा पन्नता तत्थेव "××× —(प॰ पृ॰ ७१)

" हे भगवन्! पर्याप्त बादरपृथ्वीकायिकोनां रहेठाणो क्यां कहां छे? हे गौतम ! सस्थाननी अपेक्षाए आठे पृथ्वीओमां 🗷 हे भगवन् ! अपर्याप्त वादरपृथ्वीकायिकीनां रहेठाणो क्यां कह्यां छे ? हे गौतम ! ज्यां बादर पृथ्वीकायिकोनां स्थानो कह्यां छे त्यां ज तेओ्नां पण स्थानो कह्यां छे. "

आ प्रकारनी बे शैली माटे टीकाकार महाशय जणावे छे के--" न सर्वमेव सूत्रं गणधरप्रश्न-तीर्थंकरनिर्वचनरूपम् , किन्तु किंचिद् अन्यथाऽपि, बाहुल्येन तु तथारूपम् "-(प॰ पृ॰ ७) अर्थात् " आ संकलनामांनो घणो खरो भाग महावीर अने गौतमना प्रश्नोत्तररूप छे अने थोडो भाग बीजी रीतें-सामान्य प्रश्नोत्तरहृप-पण छे. '' आ प्रकारनी वे शैली जोइने साधारण रीते एवी संदेह थवी संभवित छे के, ज्यारे आ प्रथमां घणी खरी भाग महावीर अने गातमना प्रश्नोत्तरहण आवेस्रो छे अने मात्र "किंचिद् अन्यथाऽपि" छे तो पछी आना रचनार महावीर अने गातम ज शा माटे न होय ! अथवा आर्यश्यामसूरि केम होय ! आ प्रश्ननुं समाधान श्रीयुत टीकाकारजीए घणुं सरळ, स्पष्ट अने युक्तियुक्त आपेलं छे अने ते आ प्रमाणे छे:-

" एवं गातमखामिना प्रश्ने कृते भगवान् आह्-वर्धमानखामी--गोयमा ! + इलादि. नतु गातमोऽपि भगवान् उपचित-कुशलमूलो गण-धरः तीर्थंकरभाषितमात्कापद्श्रवणमात्राऽवासप्रकृष्टश्रुतज्ञानावरणक्षयो-पश-मश्रुदेशपूर्ववित् सर्वक्षरसन्निपाती-इति विविक्षतार्थेप्रतिज्ञानसमन्वित एव, ततः किमर्थं पृच्छति ? न हि चतुर्दशपूर्विविदः सर्वेतिकृष्टश्चतरुब्धिसमन्वि-तस्य किंचित् प्रज्ञापनीयमविदितमितः × सत्यमेतत् , केवलं जाननेव गातमस्वामी भगवान् अन्यत्र विनेयेभ्यः प्रतिपाद्य तत्संप्रस्ययनिमित्तं विव-क्षितमर्थे प्रच्छति. यदि वा प्रायः सर्वत्र गणधरप्रश्र—तीर्थंकरनिर्वचन-रूपं सूत्रम्-अतो भगवान् आर्यश्यामोऽपि इत्थमेव सूत्रं रचयति. अथवा संभवति तस्याऽपि गणमृतो गातमस्वामिनोऽनाभोगः-छत्तस्थलात् न ततो जातसंशयः सन् प्रच्छति-इति न कश्चिद् दोषः "—

(प० ५० ७२-७३)

" ए प्रमाणे भैतिमस्वामिए पूछ्या पछी वर्धमानस्वामी उत्तर आपे छे. कदाच एम कहेवामां आवे के, गातम खामी चैाद पूर्वना धरनार छे, तीर्थं करे कहेलां त्रण पदोने सांभळवा मात्रथी ज जेओए उत्कृष्टश्रतज्ञान-नी प्राप्ति करी छे अर्थात् तीर्थंकरे कहेलां मात्र त्रण पदो उपरथी ज जे बारे अंगो जेवां महाश्वतनी रचना करे छे एवा ए गातमखामिने वळी हुवे पुछवानुं हुं बाकी होय १ ए वधारेमां वधारे श्रुतज्ञाननी रूब्धिवाळा एवा गैतिमधी वळी हुं कोइ पण बात अजाणी होय ? माटे खरी रीते तो 'शितम् प्रश्न करे ' ए वात ज घटती आवे एवी नथी. आ शंका साची छे, तो पण गितमनो पूछवानो आशय ज बीजो छे त्यां ए शंका घटी शकती नथी. ए बीजो आश्चय आ प्रमाणे छे:-गै।तमे पोते शिष्योने जे जे वातो कही होय ते बराबर कहेवाणी छे के नहि-ए वातनो निश्चय करवा माटे ै।तमने पूछ्डं पडे छे माटे भातम जेवा महाज्ञानी पण जो प्रश्न करे तो ते अयुक्त नथी, अथवा घणे भागे सूत्रनी शैली गणधरना प्रश्न अने तीर्थं करना उत्तररूपे रखाणी छे माटे ज भगवान् आर्थ्श्याम पोते पण ए ज रैलीमां आ एत्रनी रचना करे छे. अथवा भात्म पोते गमे तेवा महाज्ञानी होय तो पण छदास्य तो खरा ने-अने छदास्थनी भूल थवी ए कांद्र असंभवित नथी माटेज गातम संशयवाळा होइ शके छे अने ए संशय टाळवाने माटे ते पूछी पण शके छे-एमां कांइ दूशण होय नहि. 🔥

उपरना उहेखमां टीकाकारश्रीए त्रण वात आ प्रमाणे जणावी छे:--पेली वात तो तेओए ए जणावी छे के, गैतिम जेवा महाहानिने नवुं जाणवा माटे कांड् पूछवानु बाकी न होय, पण पोते बीजाने जणावेली वातो बरावर छे के नहि ? ए वातनो निर्णय करवा माटे तेओने पूछवानी जरुर रहे छे-आ बात लखती वखते टीकाकारनो ख्याल एवो रहा है के, आ सल्लमां आवता प्रश्नोत्तरो जाणे साचे ज महावीर अने गैतिम वचे न थयेला होय. बीजी वातमां तेओ एम जणावे छे के, घणे ठेकाणे गणधरना प्रश्न अने तीर्थकरना उत्तरो-ए शैलीमां स्त्रोनी संकलना थएली छे माटे आर्यस्याम भगवान् पण ए ज शैलीए सा सूत्रनी रचना करे छे. आ बीजी वातमां तो तेओए (टीकाकारशीए) एम साफ ज जणाव्यं छे के, आ प्रवापना सुन्न (गणधर अने तीर्थंकरना प्रश्लोत्तरनी शैलीमां अने क्यांय साधारण प्रश्लोत्तरनी शैलीमां) श्रीआर्थश्यामे रचे हुं छे. हवे छेवटनी त्रीजी वात जे, तेओए जणावी छै ते पेली वातनुं ज समर्थन करती जणाय छे. अने वळी टीकामां अनेक स्थळे " सूरिराह " " भगवान् आर्थश्यामः पठति " एवा एवा निर्देशो करीने ' प्रज्ञापनानी कृति श्रीआर्थश्यामनी छे ' ए वातने दृढ करी छे-प्रज्ञापनामां आवेली प्रश्नोत्तराहमक शैली श्रीआर्थश्यामनी पोतानी ज उद्भवानेली छे एउं अनेक स्थळे श्रीटीकाकारजीए जणाव्या छतां ए शैलीने श्रीगीतम अने श्रीमहावीरना प्रश्नोत्तरात्मक मानी टीकाकारशीए ए विषे जे संगति करवानां समाधानो जणाव्यां छे ते द्वारा तेमनो आशय कळातो नथी-गमे तेम हो. परंतु आ शैली श्रीभगवतीजीमां आवेली शैलीनी जेवी संवादनारूपमां तेना प्रणेताए जोडेली छे एमां कशो संदेह राखवानी नथी. तात्पर्य ए के, प्रज्ञापना एक संप्रहात्मक गंभीर प्रथ छे, तेना प्रणेता त्रण-माना कोइ एक श्रीआर्थस्यामजी छे अने एमां (प्रज्ञापनामां) आवेली शैली एमणे पोते ज उपजावेली लागे छे. आ श्रीआर्थस्यामजीनो श्रीखाति-सुरि साथे कशो संबंध कळातो नधी, (ए खाति सूरिने श्रीधर्मसागरजीए तत्त्वार्थ विगेरेना कर्ता मानेळा छे अने अलारे पण जैनो तेम ज माने छे परंदु तत्त्वार्थना कर्ता खातिजीतं गोत्र 'कै।मीषणि ' छे—(कै।भीषणिना खातितनयेन वात्सीमुतेन अर्धम् "—तत्त्वार्ध प्रशस्ति) खारे ११ मी पादवाळा आर्थश्यामजीना गुर शीखातिजीतं गोत्र हारित छे—माटे ए वे जुदा गोत्रवाळा आचार्य एक ज होय ए शी रीते मनाय १) आ रीते भन्नापना, ऐना कर्ता अने एनी शैली विषे यथामति आलेख्युं छे:--अन०

पेठे कृष्णलेखा तिक्त (कडवी) छे, सुंठनी पेठे नीललेखा कदु (तिखी) छे, काचा बोरनी पेठे कापोती लेख्या कवाय रसवाली छे, पाकी केरी विगरेनी पेठे तेजोलेस्या खाटी अने गळी छे, चंद्रशमा वगेरे मद्यनी पेठे पद्मलेस्या तिखी, कपायली अने मधुर छे अने गोळ विगरेनी गंध. पेठे शुक्तलेश्या मधुर-गळी-छे. ['गंघ'ति] लेश्याओनो गंघ कहेवोः आदिनी जण लेश्याओ दुर्गेघी छे अने छेही जण लेश्याओ सुगंधी शुद्ध. छे ['सुद्ध 'ति] छेही त्रण लेश्याओ शुद्ध छे अने पेली त्रण लेश्याओ अशुद्ध छे ['अपसत्थ 'ति] पेली त्रण लेश्याओ नठारी छे अने संकिल्ह. छेड़ी जण लेस्याओ सारी छे. ['संकिलिट्ट' ति] पेली जण लेस्याओ संक्रिट छे अने छेड़ी जण लेस्याओं असंक्रिट छे ['उण्ह 'ति] छेड़ी त्रण छेरयाओ स्निम्ध अने उष्ण छे अने पेली त्रण छेरयाओ शीत अने रूझ छे. ['गित ' ति] पेली त्रण छेरयाओ दुर्गतिनुं कारण छे अने छेली त्रण छेरयाओ सुगतिनुं कारण छे. ['परिणाम 'ति] ' छेरयाओनो परिणाम केटला प्रकारनो होय ' ए कहेतुं. ते आ रीतेः छेरयानो परिणाम त्रण प्रकारनो छे:-जधन्य, उत्कृष्ट अने मध्यम अथवा उत्पात वगेरे. ['पएस ' ति] लेश्याओना प्रदेशो कहेवा : ते लेश्याओमांनी एक एक लेखा अनंत प्रदेशवाळी छे. ['ओगाहे ' ति] एओनी अवगाहना कहेवीः ए लेखाओनी, असंख्य (क्षेत्र) प्रदेशमां अवगाहना छे-ए लेश्याओं ने समाई रहेवा माटे क्षेत्रना असंख्य प्रदेशोनी जरूर पडे छे. ['वग्गण ' ति] ए लेश्याओनी वर्गणा कहेवी: कृष्णलेश्यादिक लेश्याने योग्य द्रव्यवर्गणा, औदारिकादि वर्गणानी पेठे अनंत छे. ['ठाण ' ति] तरतमपणाने लीघे विचित्र अध्यवसायनां कारणरूप कृष्ण विगेरे द्रव्यनासमू हुं असंख्य छे, कारण के अध्यवसायनां स्थानो पण असंख्य छे. ['अप्पबहुं 'ति] छेश्यानां स्थानोतुं ओछावधतापणुं जणावबुं, ते आ रीते:-" हे भगवन् ! ए कृष्णलेस्यानां जघन्य स्थानोमां अने यावत्-शुक्कलेश्यानां जघन्य स्थानोमां द्रव्यार्थपणे कयां कोनाथी ओछां छे, वधारे छो सरखां छे के विशेषाधिक छे १ हे गौतम ! द्रव्यार्थपणे कापोतलेश्यानां जघन्य स्थानो सौथी थोडां छे, द्रव्यार्थपणे नीललेश्यानां जघन्य स्थानो असंख्य-गणां छे, द्रव्यार्थपणे कृष्णलेश्यानां जघन्य स्थानो असंस्यगणां छे, द्रव्यार्थपणे तेजोलेश्यानां जघन्य स्थानो असंस्यगणां छे, द्रव्यार्थपणे पद्मलेश्यानां ज्ञधन्य स्थानो असंख्यमणां छे अने द्रव्यार्थपणे शुक्कलेश्यानां जघन्य स्थानो पण असंख्यगणां छे " इत्यादिः

चोधुं शतक,

गति-परिणाम.

प्रदेश-अवगाह.

वर्गणा.

स्थान.

अरुप-बहुरव,

चोथे शते सर्व रीते सुबोधे व्याख्या करी में कंइ आ रचेली, सेजे हमेशा रसयुक्त दूधे मेळ्युं गळ्युं शुं नथी छाजतुं ते ?

चतुर्थ शतक समाप्त.

बेडारूपः समुद्रेऽखिळजळचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्वणानां परक्वातिकरणाद्वैतजीवी तपसी। असाकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्सोः-द्धात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तसुख्यः॥

शतक ५.-उद्देशक १.

विषयसंग्रहगाथा--चंपा-रित.-अतिल.-ग्रंथिका.-शब्द,-छद्यास्य -आयु.-एजन.-निर्मथ.=राजगृह.-चंपा-चंद्र,-उदेशकारंभ.-पूर्णभद्र वैत्य.--सूर्योतं उद्गमनादि.दिवम-रात्रिविचार,-जंबूद्रीपनुं दक्षिणार्थ अने उत्तरार्थ.- मंदर पर्वतनुं उत्तर-दक्षिण -अडार मुहूर्तनो दिवस.-शर मुहूर्तनी रात्री.-दिवस अने
रात्रीना मापमां वधघट.-बार मुहूर्तनो दिवस.-अडार मुहूर्तनी रात्री.-वर्षकतु-हेमंतकतु-विगेरेना प्रथम समयनो विचार.-प्रथम समयादिकाल
संख्या.-

चैंप-रिव अनिल गंठिय सद्दे छउमाऽऽउ एयण नियंहे, रायगिहं चेपा-चेदिमा य दस पञ्चमिम स्ये. हवे पांचमुं शतक शरु थाय छे अने तेमां दस उदेशकों छे: प्रथम उदेशकमां सूर्य संबंधी प्रश्ननो निवेडो छे-ए प्रश्न, चंपा नगरीमां पूछायो हतो. बीजा उदेशकमां वायु संबंधी सवालोनो निर्णय छे. त्रीजा उदेशकमां जालप्रधिकाना उदाहरण उपरथी जणाती हकीकतनो निर्णय छे. चोथा उदेशकमां शब्द विषे पूछाएला प्रश्न अने उत्तरीनो निर्णय छे. पांचमा उदेशकमां छद्मस्थ संबंधी हकीकत छे. छट्टा उद्देशकमां आयुष्यनुं ओछापणुं के वधारेपणुं, ए संबंधी हकीकत छे. सातमा उदेशकमां पुद्रलोना कंपन संबंधी विचार कथीं छे. आठमा उदेशकमां निर्पर्थीपुत्र नामना साधुए पदार्थी संबंधे विचार कर्यों छे. नवमा उदेशकमां राजगृह नगर संबंधी पर्यालोचन छे अने दशमा उदेशकमां चंद्र संबंधी आलोचना छे—ते आलोचना चंपा नगरीमां थइ हती. ए प्रमाणे आ पांचमा शतकमां दस उदेशक छे.

" कृतदुर्नयमङ्गानाम्-अङ्गानां जनपदस्य भूषायाः, चम्पापुर्याः कर्षं जल्पामस्तीर्थपुर्यायाः.

अस्यां द्वादशमजिनेन्द्रस्य श्रीवासुपूज्यस्य × गर्भावतार-जन्म-प्रवज्या-केवलक्षान-निर्वाणोपगमलक्षणानि पञ्च कल्याणकानि जित्तरे. × अस्यां सुभद्रा महासती पाषाणमयविकटकपाटसंपुटपिहिताः तिलः प्रतोलीः शीलमाहात्म्याद् आमसूत्रतन्तुवेष्टितेन तितज्ञा कूपाद् जलमाकृष्य तेन अभिषेच्य सप्रभावमुद्घाटयत्, एका तुरीया प्रतोली अन्याऽस्ति, ' या 'किल तत्सहशी सुचरित्रा भवति-तया इयमुद्घाटनीया ' इति भणिला राजादिजनसमझं तथेव पिहितामेव अस्थापयत्. सा च तिह्नाद् आरभ्य चिरकालं तथेव हष्टा जनतया. कमेण विक्रमादिस्यवर्षेषु पष्टिअधिकत्रयोदश-इति अतिकानतेषु (१३६०) लक्षणावतीहम्मीरश्रीसुरत्राणसमदीनः शंकर-

''अंगदेशनी राजधानीकप अने तीर्थकप एवी ' चंपा-नगरी 'नो करण कहीए छीएः आ नगरीमां वारमा श्रीवासुपूज्य तीर्थंकरनी पांच कल्याणक थयां हतां. आ नगरीना बंध थएला दरवाजाओंने सुभद्रा महासतीए पोताना सुचरित्रना महिमाथी काचे तांतणे चालणी बांधी अने तेवडे कूवामांथी पाणी काढी अने ते पाणीने ते दरवाजाओं उपर छांटीने उपाड्या हता. तेमांनो एक चोथो दरवाजो (पोळ) ' हने पछी थनारी बीजी कोई महासती एने उधाडशे 'एवं धारी राजा विगेरेनी समक्षमां हतो तेम बंध राख्यो हतो अने ते वखतनो ते बंध ज हतो-एम घणा वखतथी लोकोए जोवं हतुं. 'परंतु पाछळथी एटले विकमसंवत् १३६० मां लक्षणावतीना हम्भीर अने सुलतान समदीने शंकरपुरना गढने माटे जोइता पाषाणो मेळववा ए दरवाजाने तोडी तेनां बारणां लइ लीधां हतां.

१. मूलच्छायाः - चम्पा-रविरनिली प्रनियका शब्दः छद्मस्था-SSयुरेजनं निर्धन्थः, राजगृहं चम्पा-चन्द्रमाश्च दश पश्चमे शतेः - अनु०

१. आ चंपापुरीनो परिचय आपतां श्रीजिनप्रभसूरिए पोताना तीर्थकल्पमां खास एक चंपापुरीनो कल्प आपेळो छे, एमांनो केटलोक सार अहीं आ प्रमाणे जणाबीए छीए:---

- १. चतुर्थशतान्ते लेखा उत्ताः, पञ्चमशते तु प्रायो लेखावन्तो निरूप्यन्ते, इत्येवं संबन्धस्यास्य उद्देशक—संप्रहाय गाथेयम्:—
 'चम्पा ' इत्यादि. तत्र चम्पायां रिविविषयप्रश्ननिर्णयार्थः प्रथम उद्देशकः. 'अनिल ' त्ति वायुविषयप्रश्ननिर्णयार्थे द्वितीयः. 'गंठिय ' ति जालप्रन्थिकाञ्चापनीयार्थनिर्णयपरस्तृतीयः. 'सद्दे ' ति शन्दविषयप्रश्ननिर्णयार्थश्चतुर्थः. ' छजम ' ति छद्मस्यवक्तव्यतार्थः पञ्चमः. ' आज ' ति आयुषोऽल्पावादिप्रतिपादनार्थः षष्ठः. ' एयण ' ति पुद्गलानामेजनाद्यर्थप्रतिपादकः सप्तमः. ' नियंठे ' ति निर्प्रन्थीपुत्राभिधानाऽनगारविहितवस्तुविचारसारोऽष्टमः. ' रायिगहं ' ति राजगृहनगरविचारणपरो नवमः. ' चंपा—चंदिमा य ' ति चम्पायां नगर्यां चन्द्रमसो वक्तव्यतार्थो दशमः.
- १. चोथां शतकना छेवटना भागमां छेस्याओ संबंधी विचारो जणाव्या छे, माटे हवे छेस्यावाळा जीवो संबंधी कांइक जणावाय तो ते स्थानप्राप्त छे, तेथी आ पांचमा शतकमां तो प्रायः छेस्यावाळा जीवो संबंधी निरूपण करवातुं छे⊢ए रीते चोथा अने पांचमा शतकनो परस्पर संबंध

पुरदुर्गेषयोगियाणप्रहणार्थं प्रतोलीं पातियला कपाटसंपुटमप्रहीत्. × अस्यां चन्दनहाला दिधवाहननृपतिनन्दना जन्म उपलेमे, या किल भगवतः श्रीमहावीरस्य केश्वाम्ब्यां सर्पकोणस्यकुल्मावैः × पत्रदिनोनपण्मासावसाने अभिमहान् अपूरयत्. अस्यां पृष्ठचम्पया सह श्रीवीरः त्रीणि वधारात्रसम्वसरणानि चके. अस्यामेव परिसरे श्रीश्रेणिकसृतुः—अशोकचन्द्रो नरेन्द्रः—कृणिकापराख्यः श्रीराजगृहं जनकशोकाद् विद्वाय नवीनां राजधानीं चम्पाम् —अचीकरत्. अस्यामेव पाण्डकुलमण्डनो दानशाण्डेषु दृष्टान्तः श्रीकणेनृपतिः साम्राज्यश्रियं चकारं × अस्यां विद्वर्न् श्रीशस्यमवसूरिश्चतुर्देशपूर्वधरः स्वतन्यं मनकांद्रभिधानं राजगृहागतं प्रवाज्य तस्य आयुः पणमासावश्रेषं अतहानोपयोगेन आकलस्य तद्व्ययनार्थं दश्वकालिकं पूर्वगताद् निर्व्यूद्धः वान्-तत्र आत्मप्रवादात् पद्वीवनिकाम्, कमेप्रवादात् पिण्डेषणाम्, सल्प्रवादात् वाव्यशुद्धम्, अवशिष्ट—अध्ययनानि प्रत्याख्यातपूर्वतृतीय-मस्त्वन हति. "

आ मगरी विषे श्रीहेमचंद्रसूरि पोतानां महाबीर-श्रित्रमां आ प्रमाणे जणाने छे:---

<u>"राजा राजगृहे स्थातुम्—अभृद् भृशमभीश्वरः १८०</u> करिष्ये पुरमन्यत्रेलादिदेश विशांपतिः, शस्त्रभूशोधनायाथ वास्तुविद्याविशारदान्. १८१ ते च वास्तुविदः शस्तां पर्यन्तः सर्वतो भुवम् , प्रदेशेऽहाक्षुरेकत्र महान्तं चम्पकद्वयम्. **फचुश्र नायमुद्याने दर्यते नेह सारणिः,** नायमाबालवलयी तथाप्यस्याद्भता लिपिः. १८३ अहो ! बहुलशाखलमहो ! पत्रलताद्भुता, अहो ! कुसुमसंपत्तिरहो ! कुसुमसारभम्. १८४ अहो । छायेकातपग्यमातपत्राभिभावुकम्, अहो । विश्रामयोग्यलमहो। सर्वे किमप्यदः. १८५ निसर्गरमणीयोऽयं यथा श्रीधाम चम्पकः,-तथाऽत्र नगरमपि भविष्यति न संशयः, १८६ वम्पकेन श्रियः सत्यंकारेणैवोपशोभितम्, स्थानं पुरीनिवेशाई ते तथाख्यन् महीमुजे. १८७ चम्पकस्य अभिधानेन चम्पा-इति नगरी नृपः, वेगाद् अकारयत् सिब्विंचसा हि महीभुजाम्. १८८ ततश्च पुर्या चम्पायां गत्वा सबलवाहनः, महीमिमां श्रेणिकस्भीतिमः सहितोऽन्वशात्.'' १८९

आ नगरीमां दिखेवाहन राजानी पुत्री चंदनबालानो जन्म थयो हतो— एणे केशांबी नगरीमां सपडाना ख्णामां रहेला अडदना बाकलाओ आपी श्रीवीरने छ महिनाना उपवास पछी पारणुं कराव्युं हतुं. पृष्ठ चंपानी साथे आ नगरीमां श्रीवीरे त्रण चोमासां कथा हतां. पोताना पिताना अवसान—संबंधी शोकने लीधे श्रेणिक राजाना पुत्र कोणिके (जेतुं बीजुं नाम अशोकचंद्र छे) राजगृहने छोडीने पोतानी राजधानी चंपा नगरीमां करी हती. पांडवकुलभूषण अने प्रसिद्ध दानवीर श्रीकणेराजे आ नगरीमां पोतानुं साम्राज्य स्थाप्युं हतुं. श्रीशव्यंभवधरिए आ नगरीमां ज राजगृहथी आवेला पोताना पुत्रने दीक्षा आपी हती अने तेनुं आयुष्य थोडुं जाणी ते-माटे तेमणे दशकैकालिक नामना सूत्रनी स्चना करी हती— ते रचनामां तेमणे आत्मप्रवाद नामना पूर्वप्रंथथी लहने पड्जीवनिका प्रकरणने, कर्मप्रवाद नामना पूर्वप्रंथथी लहने पिढेकणा प्रकरणने अने सलप्रवाद नामना पूर्वप्रंथथी लहने पिढेकणा प्रकरणने उमेर्यु हतुं अने बाकीनां अध्ययनोने प्रलाह्यान पूर्वनी त्रीजी वस्तुमांथी उद्भवाव्यां हतां."

पोताना पिताना एत्युना शोकने लीधे राजा कोणिक राजधानीराजगृहमां रही शकतो न हतो तेथी तेणे बीजुं नगर-राजधानी-वसाबवानी इच्छाथी वास्तुविद्याना पंडितोने सारी जग्या शोधवा मोकल्या.
ते वास्तुशाखिओनी दृष्टिए जग्या शोधतां शोधतां एक मोडं चंपाई
झाड पडयं-जे विशाळ शाखावां हुं, छंदर पांद्रांवां हुं, सुगंधी छुष्पवाछ
अने छत्रनी जेवी छायावां हुं तथा मुसाफरोने माटे एक अपूर्व विशामस्थान हुं आम छतां खबी तो ए हती के, ए झाड कोइ बाग ने न हुं,
त्यां कोइ पाणीनों घोरियों न हतो तेम पाणीनों क्यारों पण न हतों-तो
पण ए झाड आंखें छंदरमां संदर हुं ए वास्तुशाखिओए ए झाडने
जोइने एडं नकी कर्यु के, भा झाड छहमीनुं घाम छे अने स्थानतुं संदर
धरों. एम विचारी राजा कोणिकने ए पंडितोए नगर वसाववानी ए झाडवाळी जग्या बतावी अने राजाए खां ए झाडना नाम उपरधी 'चम्पा'
नामनी नगरीने वसावी. त्यारवाद राजा पोताना बंधुओं अने लावलहरूदर
सहित ए चंपा नगरीमां जइने पोतानं शासन चलाववा लाग्यों, ''

-- महावीरचरिश्र-सर्ग-११.

ए ज आचार्यश्री, शब्यंभवस्रि अने चंपानगरी विषे पोताना परिशिष्टपर्वमां पण आ प्रमाणे जणावे छे:--

" तदा शर्यंभवाचार्यश्रम्पायां विहरत्रभूत्, बालोऽपि तत्रैव ययावाकृष्टः पुण्यराशिनाः ६८ ××× सर्वसावद्यविरतिप्रतिपादनपूर्वकम्, तमबालिथयं बालं सूरिर्वतमित्रहत्. ८० × × रिद्धान्तसारमुद्धत्याचार्यः शर्यंभवस्तदा, दुशवैकालिकं नाम् श्रतस्कंधमुदाह्रस्, ८५—पंचमसंगं. (चंपा नगरीमां थएली दशवैकालिक एत्रनी रचना विषे आगळ श्रीजिन प्रमस्रिना शब्दोमां जणावाइ गयुं छे, ए ज वातने श्रीहेमचंद्रसूरि पण जणावे छे) "ते वखते श्रीशय्यं भवस्रि चंपा नगरीमां विहरता हता. पुण्यराशिथी खेंचाएलो तेमनो पुत्र पण त्यां ज आव्यो अने स्रिशीए ए बाळकने सिक्षत क्यां अने तेना श्रेय माठे खां ज दशवैकालिक नामना अत्रक्ष्मनी रचना करी. "—(परिशिष्टपर्व):—अनु •

छे. हवे आ पांचमा शतकना उद्देशकोनुं (ते ते उद्देशकमां आवेळा विषयोनुं) सूचन करवाने आ संग्रह गाथा जणावे छे:---[' चंपा ' इत्यादि-] विषयसूचक ते उद्देशकोमां प्रथम उद्देशक चंपा नगरीमां कहेवायो छे अने तेमां सूर्य संबंधी सवालोनो निवेडो छे. ['अनिल'ति] वायु संबंधी प्रश्नना निर्णय माटे बीजो उद्देशक रचायो छे. ['गंठिय'त्ति] जालग्रंथिका-जाळ-ना उदाहरण उपरथी जणाती हकीकतनो निर्णय त्रीजा उद्देशकमां छे. ['सद्दें 'ति] शब्द संबंधी प्रश्नोनो निर्णय चोथा उद्देशकमां छे ['छउम 'ति] छद्मस्य जीव संबंधी हकीकत कहेवाने पांचमो उद्देशक छे. ['आउ' ति]' आयुष्यनुं ओछापणुं 'वगेरे बाबत जणाववाने छट्टो उद्देशक छे. ['एयण 'ति] पुद्रलोना कंपन संबंधी विचार सातमा उदेशकमां छे. [' नियंठे ' ति] आठमा उद्देशकमां पदार्थ संबंधी विचारोनो सार छे अने ते विचार निर्धेथीपुत्र नामना साधुए कयों छे. [' राय-गिहं ' ति] नवमा उद्देशकमां राजगृह नगर संबंधी विचार छे अने [' चंपा चंदिमा य ' ति] दशमो उद्देशक चंपा नगरीमां कहेवायो छे तथा तेमां चंद्र संबंधी हकीकत छे.

सूर्य.

१. प्र०—ते भाले णं, ते णं समये णं, चंपा नामं १. प्र०—ते काले, ते समये चंपा नामनी राजधानीनी पडिगया.

ते णं काले णं, ते णं समये णं, समणस्स भगवओ महावी-

रायहाणी होत्था. वण्णओ. तीसे णं चंपाए नयरीए पुण्णभदे नगरी हती. वर्णक. ते चंपा नगरीनी बहार पूर्णभद्र नामनुं नामं चेइए होत्था. वण्णओ. सामी समोसढे, जाव-परिसा चैलै (व्यंतरायतन) हतुं. वर्णक. त्यां खामी (श्रीवीर)पधार्या अने यावत्-(वीरनी वाणी सांभळवाने) सभा गामनी बहार नीकळी.

ते काले, ते समये अमण भगवंत महावीरना मोटा रस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे, गोयमगोत्ते णं जाव- शिष्य-गौतम गोत्रना-इंद्रभूति नामना अनगार यावत्-आ एवं वयासी-जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उदीण-पाईणमुग्गच्छ प्रमाणे बोल्या के:-हे भगवन् ! जंबूद्वीप नामना द्वीपमां सूर्यो

चिला, चिलया विवृतम्—चितायाः, चितेः, चिलाया विकारः—चितायाः, चितेः, चिलाया भावः, कर्म वा —एम अनेक रीते थइ शके छे. क्षत्रना टीकादार श्रीअभयदेवसूरिए पण 'नितेः भावः, कर्म वा 'ए ब्युत्पत्तिने नोंघेली छे. चिता, चिति के चित्यानो अर्थ 'चे 'थाय छे, जेमां मृतहानी अप्तिशायी करवामां आवे छे अधीत जे स्थळे मृतकने संस्कारवामां आवे छे ते स्थळनी पवित्र मस्मनुं नाम 'चैख ' छे अने ते, एनो सुख्य अर्थे, प्राचीन अर्थ अने ब्युत्पति—अर्थ छे. प्राचीन काळमां अनेक धर्मवीर अने कर्मवीर महापुरुषोनी पवित्र भस्म सचवाती हती अने एनं ज नाम ंचैस ' हतुं. तथा मृत महागुरूवनी यादिविरि माटे ए भस्स उत्तर मूरुवामां आवतो शिलाग्ट, ए भक्त उत्तर के वासे सो वामां आवतुं वृक्ष वा ए भस्स उपर चणाववामां आवतो स्तूप पण चैत्य-शब्दनो भाव हतो ['स्तूप 'करवानी पद्धति माटे जूओ (ज्ञा॰ स॰ पृ० १५५ तथा जं० प्र० बा० हु॰ १४०-१४७] बैाद्धोना साहित्यमां पण चैत्य (पालि-चेतिय) शब्दना आ ज भावो अत्यारे पण प्रसिद्ध छे अने त्यार पछी ए महम उपर चणाववामां आवता चोतरा, कवर, के देवळी पण 'चैख ' शब्दना भावमां आव्यां. ज्यां एवा चोतरा, कवर के देवळीओ होय छे खां प्रायः इमशान, अरण्य के एवो ज कोइ उजाड प्रदेश होय छे अने त्यां भूतोतुं रहेठाण होय छे-एवी लोकप्रवाद छे एने लड्ने 'चैत्य 'तुं बीखुं नाम व्यंतरायतन प्रसिद्ध थयुं वा वैत्यनो ए बीजो अर्थ पण प्रचार पाम्यो. सूत्रमां प्रायः घणे ठेकाणे ए ज भावमां वैत्य शब्द योजायो छे अने ए, एनो अर्थ 'गङ्गामां घोपः 'नी जेवो लाक्षणिक-सामीप्यजन्य-छे. सूत्रमां ज्यां 'अरिहंत हैत्य ' के 'जिन हैत्य ' शब्द आवे छे त्यां तेनो उपर जणावेलो व्युत्पत्ति अर्थ ज घटाववानो छे अर्थात् ' अरिहंतनी पवित्र भसा के स्तूप ' एवो ज अर्थ करवानो छे. वर्तमानमां तो आ शब्द यौगिक रह्मो नथी, पण रूढ थयो छे अने तेनी रूढतानो पायो आज घणा समयथी नखायो छे. खुद श्रीअभयदेवसूरि जेवा समर्थ पंहित अने मलयगिरि जेवा समर्थ शब्दशासी पण ए 'चैत्य 'शब्दने रूढ जणाये छे-डित्थनी पेठे संज्ञाशब्द जणाये छे-ए एक आश्चर्यकर घटना छे. तेओए जणाव्युं छे के, ' संज्ञाशब्दलात् देवताप्रतिविम्बे प्रसिद्धम् , × तदाश्रयभूतं × एहम्-तदपि उपचारात्-चैलम् "- (भगवतीटीका तथा सर्वप्रज्ञांसिटीका) आ महापुरुषो ए शब्दने रूढ माने छे तेनुं कारण आ छेः खरी रीते तो 'बैत्य ' शब्दनो मूळ भाव अने च्युत्पत्तिने अनुसरतो भाव उपर जणाव्यो छे ते ज लागे छे तो पण एमना जमानामां घणुं करीने एवा स्तूपो कराववानी प्रथा ओछी यह गई हती अने तेने बदले धर्मवीर के कर्मवीर पुरुषीनां मंदिरो गमे ते ठेकाणे चणाववामां आवतां अने तेमां मूर्तिओ एण पघराववामां आवती-अने ते मंदिरो अने मूर्तिओने 'चैत्य ' शब्दथी संबोधवामां आवतां-खरं विचारतां तो चिता उपर चणावेला सिवायनां ए मंदिरोमां के मूर्तिओमां 'चैत्य 'शब्दनी भाव बंध वेसती न आवती, छतां मात्र एक स्पारकतानी समानताने लीघे तेमना समयनो जनसमाज 'चैल ' शब्दथी मंदिरोने संबोधतो तथी ज एओने 'चैल ' शब्दने रूढ के संज्ञा-शब्द टराववानी जरुर पड़ी हती. तातार्थ ए छे के, ' चैत्य ' शब्दनी मूळ भाव जुदी छे अने काळकृत तथा रूढिकृत भाव पण जुदी छे, सत्रमां वपराएलो ' चैत्य ' शब्द टीकाकारीथी विशेष प्राचीन होवाधी त्यां तेनो प्राचीन अर्थ ज समजवी युक्तियुक्त छे. केटलाको 'चैत्य ' शब्दने ' विते संज्ञाने ' धातु उपरथी वा ' वित्त ' शब्द उपरथी उपजाववानी रीत जणावे छे ते शब्दशास्त्रनी दृष्टिए अप्रतीत छे-आ रीते वैरय (चेइअ) क्तब्दना अर्थनो हंको परिचय छः-अनुव

१. मूलच्छायाः —तिस्मन् काले, तिस्मन् समये चम्पा नाम राजधानी अभवत्. वर्णकः । तसां चम्पायां नगर्यां पूर्णमदं नाम वैस्यम् अभवत्. वर्णकः खामी समवस्तः, यावत्-पर्वत् प्रतिगता. तिसम् काले, तिसम् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येडोऽन्तेवासी इन्द्रभूतिनीम अनगारः, गौतमगोत्रो यावत्-एवम् अवादीत्:-जम्बूद्रीपे भगवन् ! द्वीपे सूर्यौ उदीचीन-प्राचीनम् उद्गलः-अनु॰

^{9.} जैनोना सुत्र साहित्यमां अनेक ठेकाणे चैत्य-शब्दनो प्रयोग थएलो छे-पणे ठेकाणे ते एकलो ज वपराएलो छे अने घणे ठेकाणे ' अरिहंत-चेइय 'वा 'जिणचेइय 'ए रीते वपराएलो छे. ए 'बैख 'शब्द रूढ नथी पण योगिक एटले ब्युत्पत्तिवालो छे अने तेनो वास्तविक अर्थ आ प्रमाणे संस्कृतना 'चिति', चिला ' के 'चिता 'शब्द उपरथी ए 'चैला 'शब्दनी उत्पत्ति थएली छे अने ते—चितायाः, चितेः, चिलाया इदम्—

पोईण-दाहिणमागच्छंति, पाईण-दाहिणमुग्गच्छ दाहिणपडणिमा-गच्छंति, दाहिण-पडीणमुग्गच्छ पडीण-उदीण(चि)मागच्छंति, पडीण-उदीणमुग्गच्छ उदीचि-पादीणमागच्छन्ति ?

- २. उ० ─ हंता, गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उदीची-पाईणमुग्गच्छ जाय—उदीच-पाईणमागच्छंति.
- २. प्र० जया णं भंते ! जंबूदीवे दीवे दाहिणहें दिवसे हवइ, तया णं उत्तरहें ऽिव दिवसे भवइ; जया णं उत्तरहें ऽिव दिवसे भवइ; जया णं उत्तरहें ऽिव दिवसे भवइ, तया णं जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरित्थम-पचरिथमे णं राई हवइ ?
- २. उ० हंता, गोयमा ! जया णं जंबुदीने दीवे दाहिणडें वि दिवसे जाव-राई भषइ.
- ३. प्र० जया णं भंते ! जम्बूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरित्थमे णं दिवसे भवइ तया णं पचिरिथमेण वि दिवसे भदइ, जया णं पचिरिथमे णं दिवसे भवइ, तया णं जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्ययस्स उत्तर-दाहिणे णं राई भवइ ?
- ३. उ०-हंता, गोयमा ! जया णं जंबूदीवे दीवे मंदरपुर-रिथमे णं दिवसे, जाव-राई भवड़.
- ४. प्र० जदा णं भंते ! जंबूदीवे दीवे दाहिणहे उक्कोसए अहारसमुहुत्ते दिवसे भवइ तदा णं उत्तरहे िष उक्कोसए अहारस-मृहुत्ते दिवसे भवइ, जया णं उत्तरहे उक्कोसए अहारसमुहुत्ते दिवसे भवइ तया णं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पुरस्थिम-पचित्थिये णं जहाित्रशा दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ?
- ४. ७० हंता, गोयमा ! जया णं जम्यू० जाव-दुवाल-समृहुत्ता राई भवइ.
- ५. प्र०—जया णं जम्ब्० मंदरस्त पुरित्यमे उक्कोसए अष्टारसमुहुत्ते दिवसे भवइ तया णं जंबुदीवे दीवे पचित्यमेण वि उक्कोसेणं अष्टारसमुहुते दिवसे भवइ, जया णं पचित्थिमे णं

ईशान ख्णामां उगीने अग्नि ख्णामां आधमे छे ? अग्नि ख्णामां उगीने नैर्ऋत ख्णामां आधमे छे ? नैर्ऋत ख्णामां उगीने वायव्य ख्णामां आधमे छे ? अने वायव्य ख्णामां उगीने ईशान ख्णामां आधमे छे ?

- १. उ० हे गौतम ! हा, एज रिते सूर्यनुं उगवुं अने आथमवुं थाय छे-जंबूद्वीप नामना द्वीपमां सूर्यो उत्तर अने पूर्व-ईशान खूणा-मां उगीने यावत्-ईशान खूणामां आथमे छे.
- २. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे जंबूदीपमां दक्षिणार्धमां दिवस होप छे, त्यारे उत्तरार्धमां पण दिवस होप छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां पण दिवस होप छे त्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे रात्री होय छे ?
- २. उ०—हे गौतम! हा, ए ज रीते होय छे-ज्यारे जंबूदीपमां दक्षिणार्धमां पण दिवस होय छे त्यारे यावत्—रात्री होत्र छे.
- ३. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वे दिवस होय छे खारे पश्चिममां पण दिवस होय छे अने ज्यारे पश्चिममां दिवस होय छे खारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी उत्तर दिक्षणे सत्री होय छे?
- ३. उ०--हे गौतम ! हा, ए ज रीते होय छे-ज्यारे जंबू-द्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वे दिवस होय छे त्यारे यावत्-रात्री होय छे.
- ४. प्र०—-हे भगवन् ! ज्यारे जंबूदी रमां दक्षिणार्धमां वधारेमः वधारे मोटो अदार मुहूर्तनो दिवस होय छे त्यारे उत्तरा पण वधारेमां वधारे मोटो अदार मुहूर्तनो दिवस होय छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां सौधी मोटो अदार मुहूर्तनो दिवस होय छे त्यारे जंबूदीपमां मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे नानामां नानी बार मुहूर्तनो रात्री होय छे ?
- ४. उ०--हे गौतम ! हा, ए ज रीते होय छे-जंबूद्दीपमां यावत्-बार मुहूर्तनी रात्री होय छे.
- ५. प्र०—हे भगवन् । ज्यारे जंबूद्गीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वें मोटामां मोटो अढार मुहुर्तनो दिवस होय छे त्यारे जंबूद्गीपमां पश्चिमे पण मोटामां मोटो अढार मुहूर्तनो दिवस होय छे अने

१. मूलच्छायाः—प्राचीन-दक्षिणम् आगच्छतः, प्राचीन-दक्षिणम् उद्गस्य दक्षिण-प्रतीचीनम् आगच्छतः, दक्षिण-प्रतीचीनम् प्रत्निन् प्रतीचीन-छरीचीनम् आगच्छतः, प्रतीचीन-छरीचीनम् उद्गम्य उदीची-प्राचीनम् आगच्छतः १ हन्त, गतम । जम्मूरीपे द्वीपे दश्गे उदीची-प्राचीनम् अगच्छतः १ हन्त, गतम । जम्मूरीपे द्वीपे दश्गे उदीची-प्राचीनम् अगच्छतः यदा भगवन् । जम्मूरीपे द्वीपे दक्षिणाऽर्षे दिवसो भवति तदा उत्तराघेऽपे दिवसो भवति, यदा भगवन् । जम्मूरीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्य-पश्चिमे रात्रिभवति १ हन्त, गौतम । यदा जम्मूरीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्य पर्वतस्य पौरस्यो दिवसो भवति तदा पश्चिमेऽपे दिवसो भवति, यदा भगवन् । जम्मूरीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्य पर्वतस्य पौरस्यो दिवसो भवति तदा जम्मूरीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरमम्हर्गे दिवसो भवति तदा जम्मूरीपे द्वीपे मन्दरभारस्य दिवसो भवति, यदा भगवन् । अम्मूरीपे द्वीपे दक्षिणाऽर्ये उत्कृष्टोऽष्टादशमुद्ध्गे दिवसो भवति तदा जम्मूरीपे द्वीपे पर्वति, स्वतः स्वतः परिस्तय-पश्चिमे जयन्यका द्वादशमुद्ध्यो रात्रिभवति १ हन्त, गौतम । स्वतः जम्मूरीपे द्वीपे पश्चिमेऽपि सम्दरस्य पौरस्य-पश्चिमे जयन्यका द्वादशमुद्धती रात्रिभवति १ हन्त, गौतम । स्वतः जम्मूरीवे द्वीपे पश्चिमेऽपि उत्कृष्टोऽष्टादशमुद्धती दिवसो भवति, यदा जम्मूर मन्दरस्य पौरस्य उत्कृष्टोऽष्टादशमुद्धती दिवसो भवति तदा जम्मूरीवे द्वीपे पश्चिमेऽपि उत्कृष्टोऽष्टादशमुद्धती दिवसो भवति, यदा जम्मूर मन्दरस्य पौरस्ये उत्कृष्टोऽष्टादशमुद्धती दिवसो भवति, यदा पश्चमेऽपि उत्कृष्टाइशमुद्धती दिवसो भवति, यदा पश्चमेऽभि वित्वसे पश्चमेऽभि वित्वसे पश्चमेऽभि वित्वसे पश्चमेऽभि वित्वसे पश्चमेऽभि वित्वसे पश्चमेऽभि वित्वसे पश्चमेऽभि वित्

उँकोसिए अष्टारसमुहुत्ते दिवसे भवइ तया णं भंते ! जंबूदीवे ज्यारे पश्चिमे मोटामां मोटो अढार मुहूर्तको दिवस होय छे त्यारे दीवे उत्तरे दुवालसमुहुत्ता जाव-राई भवइ ?

५. उ० — हंता, गोयमा ! जाव-भवइ.

६. प्र० — जया णं भंते ! जंनूदीने दीने दाहिणडू अद्वारस-मुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तया णं उत्तरे अहारसमुहुत्तागंतरे दिवसे भवइ, जया णं उत्तरड्डे अद्वारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तया णं जम्बूदीवे दीवे मंदरस्स पव्ययस्स पुरस्थिमे णं पचित्थिमे णं साइरेगा दुवालसमृहत्ता राई भवइ ?

६. उ०--हंता, गोयमा ! जया णं जम्बू० जाव-राई भवइ.

७. प्र० - जया णं भंते ! जम्नू० मंदरस्स पदनयस्स पुर-त्थिमे णं अद्वारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तथा णं पचित्थिमे णं अद्वारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, जया णं पचरिथमे णं अद्वार-समुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ तदा णं जम्बू० मंदरस्स पन्वयस्स उत्तरदाहिणे साइरेगदुवालसमुहुत्ता राई भवइ ?

७. उ० —हंता, गोयमा ! जाव- भवइ.

एवं एएणं कमेण ओसारेअव्वं, सत्तरसमुहुत्ते दिवसे तेरसमु-हुत्ता राई भवइ; सत्तरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा तेरसमुहुत्ता राई, सोलसमुहुत्ते दिवसे चोइसमुहुत्ता राई, सोलसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगचउदसमुहुत्ता राई, पण्णरसमुहुत्ते दिवसे पत्ररस-मुहुत्ता राई, पण्णरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा पण्णरसमुहुत्ता राई, चोइसमुहुत्ते दिवसे सोलसमुहुत्ता राई, चोइसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सोलसमुहुत्ता राई, तेरसमुहुत्ते दिवसे सत्तरस-मुहुत्ता राई, तेरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सत्तरसमुहुत्ता राई.

हे भगवन्! जंबूद्दीपमां उत्तरार्घमां नानामां नानी बार मुहूर्तनी रत्त्री होय छे?

५. उ०--हे गौतम! हा, ए ज रीते यावत्-होय छे.

६. प्र० — हे भगवन् ! ज्यारे जंबूद्वीपमां दक्षिणार्थमां अदार मुहूर्त करतां कांइक ऊणो-मुहूर्तानन्तर-दिवस होय छे त्यारे उत्तरार्थमां अढार मुहूर्तानन्तर दिवस होय छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां अढार मुहूर्तानन्तर दिवस होप छे त्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे बार मुहूर्त करतां कांइक वधारे छांबी रात्री

६. उ०-- हे गौतम! हा, ए ज राते होय छे-जबूदीयमां यावत्-रात्री होय छे.

७. प्रo -- हे भगवन् ! ज्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वे अढार मुहूर्तानंतर दिवस होय छे त्यारे पश्चिमे अढार मुहूर्तानंतर दिवस होय छे अने ज्यारे पश्चिमे अढार मुहूतनिंतर दिवस होय छे त्यारे जंबूद्वीयमां मंदर पर्वतनी उत्तर दक्षिणे बार मुहूर्त करतां-कांइक वधारे छांबी रात्री होय छे ?

७. उ - - हे 'गौतम ! हा, ए ज रीते होय छे.

ए प्रमाणे ए क्रमवडे दिवसनुं माप ओछुं करवुं अने रात्रीनुं माप वधारबुं: ज्यारे सत्तर मुहूर्तनो दिवस होय त्यारे तेर मुहूर्तनी रात्री होय. ज्यारे सत्तर मुहूर्त करतां कांइक ओछो-लाबो दिवस होय त्यारे तेर मुहूर्त करतां कांइक वधारे-लांबी-रात्री होय. ज्यारे सोळ मुहूर्तनो दिवस हो। त्यारे चौद मुहूर्तनी रात्री होय. ज्यारे सोळ मुहूर्त करतां कांड्क ओछो दिवस होत त्यारे चौद मुहूर्त करतां कांइ बधारे रात्री होय. ज्यारे पन्नर मुहूर्तनो दिवस होय त्यारे पन्नर मुहूर्तनी रात्री होय. ज्यारे पन्नर मुहूर्त करतां कांइक ओछो दिवस होय त्यारे पन्नर मुहूर्त करतां कांइक वधारे रात्री होय. ज्यारे चौद मुहूर्तनो दिवस होय त्यारे सोळ मुहूर्तनी रात्री होय. उयारे चौद मुहूर्त करतां कांइक ओछो दिवस होय छे त्यारे सोळ मुहूर्त करतां कांइक वधारे रात्री होय छे. अयारे तेर मुदूर्तनो दिवस होय छे खारे सत्तर मुहूर्तनी रात्री होय छे. ज्यारे तेर मुहूर्तनी दिवस होय छे खारे सत्तर मुहूर्तनी रात्री होय छे, ज्यारे तेर मुहूर्त करतां कांइक ओछो दिवस होय छे त्यारे सत्तर मुहूर्त करतां कांड्क वधारे रात्री होय छे.

१. मूलच्छायाः — उत्कृष्टकोऽष्टादशमुहूर्तो दिवसो भवति तदा सगवन् ! जम्बूद्वीपे द्वीपे उत्तरे द्वादशमुहूर्ते। यावत् -रानिभवति १ हन्त, गीतम् ! यावत्-भवति. यदा भगवन् ! जम्बुद्दीपे द्वीपे दक्षिणाऽर्धेऽष्टादशमुहूर्ताऽनन्तरो दिवसो भवति तदा उत्तरेऽष्टादशमुहूर्तानन्तरो दिवसो भवति, यदा उत्तराडर्थेऽष्टादशमुहूर्ताऽनन्तरो दिवसो भवति तदा जम्बूद्यीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्वे, पश्चिमे सातिरेका द्वादशमुहूर्ता रात्रिर्भवंति ? इन्त, गौतम ! यदा जम्बू० यावत्-रात्रिर्भवति. यदा भगवन् ! जम्बु० मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्येऽष्टादश्चमुहूर्तानन्तरो. दिश्सो भवति तदा पश्चिमेऽष्टादश-मुहूर्तां इनन्तरो दिवसो भवति, यदा पश्चिमेऽष्टार्देशमुहूर्तानन्तरो दिवसो भवति तदा जम्बु॰ मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तर-दक्षिणे सातिरेकद्वादशमुहूर्ता रात्रिर्भवति १ इन्त, गौतम ! यावत्-भवति. एवम् एतेन कमेण अवसारियतव्यम्, सप्तदशमुहूर्ती दिवसः त्रयोदशमुहूर्ती रात्रिर्भवति, सप्तदशमुहूर्ती-इनन्तरो दिवसः सातिरेका त्रयोदश कु हूर्ता रात्रिः, घोडशमुहूर्तो दिवसश्चतुर्दशमुहूर्ता रात्रिः, पोडशमुहूर्ता इनन्तरो दिवसः सातिरेका चतुर्दशमुहूर्ता रात्रिः, पद्मदशमुहूर्तो दिवसः पञ्चदशमुहूर्तो रात्रिः, पञ्चदशमुहूर्ताऽनन्तरो दिवसः सातिरेका पञ्चदशमुहूर्ती रात्रिः, चतुर्दशमुहूर्तो दिवसः षोडशमुहूर्तो रात्रिः, चतुर्दशमुद्द्रतीऽनन्तरो दिवसः सातिरेका षोडशमुद्द्रती रात्रिः, त्रयोदशमुद्द्रती दिवसः सप्तदशमुद्ध्रती रात्रिः, त्रयोदशमुद्द्रतीऽनन्तरो दिवसः सातिरेका *सप्तदश*सहूर्ता **र**।तिः—अनु०

- ८. प्र०---र्जया णं जंबूदीवे दीवे दाहिणड्ढे अहत्वए दुवाल-णं जंबूदीने दीने मंदरस्स पव्ययस्स पुरिश्यम-पचिर्धिमे णं उक्कोसिआ अङ्गारसमुहुत्ता राई भवइ ?
- ८. उ०-इंता, गोयमा ! एवं चेव उचारेअव्वं, जाव-राई भगइ.
- ९. प्र०-- चया णं भंते । जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्ययस्स पुरिक्षमे णं जहन्नए दुनालसमुहुत्ते दिवसे भवइ तथा णं पचित्थिमण वि, जया णं पचित्थिमे णं वि तया णं जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पन्वयस्स उत्तर-दाहिणे णं उक्नोसिआ अद्वारसमुहुत्ता राई भवइ ?

९. उ ०---हंता, गोयमा ! जाय-राई भवइ.

८. प्र० - हे भगवन् ! उयारे जंबूद्वीपमां दक्षिणार्धमां नानामां समुहुत्ते दिवसे भवइ तया णं उत्तरहे वि, जया णं उत्तरहे तया नानो बार मुहूर्तनो दिवस होय छे त्यारे उत्तरार्धमां पण तेम ज होय छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां तेम होय छे त्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वे, पश्चिमे मोटामां मोटी भटार मुहूर्तनी रात्री होय छे?

शतक ५.-उद्देशक १.

- ८. उ०--हे गौतम ! हा, ए ज रीते होय छे-ए प्रमाणे ज बधुं कहेतुं यावत्- रात्री होय छे.
- ९. प्र०-हे भगवन् ! ज्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वे नानामां नानो बार मुहूर्तनो दिवस होय छे त्यारे पश्चिमे पण तेम होय छे अने ज्यारे पश्चिमे तेम होय छे त्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी उत्तर दक्षिणे मोटामां मोटी अढार मुहूर्तनी रात्री

९. उ०-हे गौतम! हा, ए ज रीते होय छे-यावत्-रात्री थाय छे.

२. तत्र प्रथमोदेशके किञ्चिल् लिख्यते:-' सूरिय ' ति हो सूर्यों, जम्बूद्वीपे द्वयोरेव भावात् ; ' उदीण-पाईणं ' ति उदगेव उदीचीनम्, प्रामेव प्राचीनम्, उदीचीनं च तदुदीच्या आसऋवात्, प्राचीनं च तत् प्राच्याः प्रसासऋवाद्—उदीचीन-प्राचीनं दिगन्तरम्, क्षेत्रदिगपेक्षया पूर्वोत्तरदिग् इसर्थः. ' उग्गच्छ ' ति उद्गस-क्रमेण तत्रोद्गमनं कृत्वा-इसर्थः. ' पाईण-दाहिणं ' ति प्राचीनदक्षिणं दिगन्तरं पूर्वदक्षिणम्-इसर्थः. ' आगच्छांते ' ति आगच्छतः – क्रमेण एव अस्तं यात इसर्थः. इह चोद्रमनम् , अस्तगमनं च द्रष्टृछोकविवक्षयाऽवसेयम्. तथाहिः-येषामदृश्यौ सन्तौ दृश्यौ स्थाताम्, ते तयोरुद्गमनं व्यवहरन्ति, येषां तु दृश्यौ सन्तावदृश्यौ स्तः, ते तयोरस्तमयं व्यवहरन्ति-इति अनियतौ उदया-ऽस्तमयौ. आह चः---

> '' जैह जह समये समये पुरओ संचरइ मक्खरो गयणे, तह तह इओऽवि नियमा जायइ रयणी य भावत्थो. एवं च सइ नराणं उदय-त्थमणाइं होतिऽनिययाइं, सयदेसमेए कस्सइ किंची वयदिस्सइ नियमा. सइ चेव य निहिद्दो भहमुहुत्तो कमेण सन्वेसिं, केसिंचीदाणिं पि य विसयपमाणे रवी जोसिं. "

इसादि. अनेन च स्त्रेण सूर्यस्य चतमृषु दिक्षु गतिरुक्ता. ततश्च ये मन्यन्ते:—' सूर्यः पश्चिमसमुद्रं प्रविश्य पातालेन गत्वा पूर्वसमुद्रमुदेति 'इसादि, तन्मतं निविद्रम्-इति. इह च सूर्यस्य सर्वतो गमनेऽपि प्रतिनियतत्वात् तत्प्रकाशस्य रात्रि-दिवस-विभागोऽस्ति—इति तं क्षेत्रमेदेन दर्शयनाहः—' जया णं ' इत्यादि. इह सूर्यद्रयभावाद् एकदैव दिग्द्रये दिवस उत्तः, इह च यद्यपि ' दक्षिणार्धे ' तथा ' उत्तरार्धे ' इत्युक्तम् , तथाऽपि ' दक्षिणभागे ' ' उत्तरभागे ' च-इति बोद्धव्यम्-अर्धशब्दस्य भागमात्रार्थत्वात्. यतो यदि दक्षिणार्धे, उत्तरार्धे च समग्रे एव दिवसः स्यात्, तदा कथं पूर्वेण, अपरेण च रात्रिः स्यादिति वक्तं युज्येत ? अर्धद्भयप्रहणेन सर्वक्षेत्रस्य गृहीतःवात्. इतश्च दक्षिणार्धादिशः देन दक्षिणादिदिग्-मागमात्रमेव अवसेयम्, नत्वर्धम्, यतो यदाऽपि दक्षिणो-त्तरधोः सर्वोत्कृष्टो दिवसो भवति, तदाऽपि जम्बुद्दीपस्य दशभागत्रयप्रमाणमेव तापक्षेत्रं तथोः प्रत्येकं स्याद्, दशभागद्वयमानं च पूर्व-पश्चिमधोः प्रत्येकं रात्रिक्षेत्रं स्यात्. तथाहि:-षष्ट्या मुहुतैः किल सूर्यो मण्डलं पूर्यति, उत्कृष्टदिनं च अष्टादशिममुहुतैः-उक्तम्. अष्टादश च षष्टेर्दशमागत्रितयरूपा भवन्ति, तथा यदा अष्टादशमुह्तौँ दिवसो भवति तदा रात्रिद्वादशमुह्ती भवति, द्वादश च षष्टेर्दशभागद्वयरूपा भवन्ति इति. तत्र च मेरं प्रति नवधीजनसहस्राणि, चत्वारि शतानि षडशीत्यधिकानि, नव च दशभागा योजनस्य इति एतत्-९४८६ सर्वोत्कष्टदिवसे दशभागत्रयरूपं तापक्षेत्रप्रमाणं भवति. कथम् ? मन्दरपरिक्षेपस्य किंचिन्न्यूनत्रयोविंशत्युत्तरषद्शताधिकैकिनिंशचोजनसहस्त्रमानस्य (३१६२३) दशिमिर्भागे हते यद् लब्धं तस्य त्रिगुणितस्वे एतस्य भावाद् इति. तथा छवणसमुद्रं प्रति चतुनवितर्योजनानां सहस्राणि, अष्टी शतानि, अष्टषष्ट्यविकानि चत्वारश्च दशभागा योजनस्य

१. मूलच्छायाः — यदा जम्युद्रीये द्वंषे दक्षिणार्थे जधन्यको द्वादशमुहूर्तो दिवसो भतति तदा उत्तरार्थेऽपि, यदा उत्तरार्थे तदा जम्बुद्रीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्य-पश्चिमे उत्कृष्टिकाऽष्टादशसुहूर्ता रात्रिभैवति ? हन्त, गौतम ! एवं चैव उचारिवतव्यम्, यावत्-रात्रिभैवति यदा भगवन् ! जम्बुद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्ये जघन्यको द्वादशमुहूर्तो दिवसो भवति तदा पश्चिमेऽपि, यदा पश्चिमेऽपि तदा जम्बद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तर-दक्षिणे उत्कृष्टिका अष्टादशमुहूर्वा रात्रिभैवति ? हन्त, गौतम ! यावत्-रात्रिभैवतिः-अनु०

२. प्र॰ छा:-यथा यथा समये समये पुरतः संचरति भास्करो गगने, तथा तथा इतोऽपि नियमाद् जायते रजनी च भावार्थः. ए व सदा नराणामुदया-ऽस्तम(य)नानि भवन्ति अनियतानि, खकदेशभेदे कस्यचित् किचिद् व्यपदिश्यते नियमात् सक्टदेव च निर्दिष्टः भद्रमुहूर्तः क्रमेण सर्वेषाः कैषांचिदिदानीमपि च विषयप्रमाणे रवियेषाम्:—अनु०

इति एतत्-९४८६८ॐ उत्कृष्टदिने तापक्षेत्रप्रमाणं भवति. कथम् ? जम्बूद्वीपपरिधेः किञ्चिन्यूनअष्टार्विशत्युत्तरशतद्वयाधिकषोडश-सहस्रोपेतयोजन इक्षत्रय-३१६२२८-मानस्य दशिमभीगे हते यद् छब्धं तस्य त्रिगुणिततो एतस्य भावाद् इति. जघन्यरात्रिक्षेत्रप्रमाणं चापि एवमेव, नवरम्:-परिधेर्दशमागो द्विगुणः कार्यः, तत्राऽऽद्यं षड् योजनानां सहस्राणि, त्रीणि च शतानि चतुर्विशत्यधिकानि षद् च दश भागा योजनस्य-६३२४ 🖟 . द्वितीयं तु त्रिषष्टिः सहस्राणि, द्वे पञ्चचत्वारिंशद्धिके योजनानां सते, षट् च दश भागा योजनस्य-६३२४५%. सर्वत्रधौ च दिवसे तापक्षेत्रमनन्तरोक्तरात्रिक्षेत्रतुल्यम्. रात्रिक्षेत्रं तु अनन्तरोक्ततापक्षेत्रतुल्यमिति. आयामतस्तु तापक्षेत्रं जम्बूद्धीपमध्ये पञ्चचत्वारिंशद्योजनानां सहस्राणि-इति. छवणे च त्रयस्त्रिशत्सहस्राणि, त्रीणि शतानि त्रयस्त्रिशद्धिशानि, त्रिमागश्च योजनस्य-३३३३३. उभयमीछने तु अष्टसप्ततिः सहस्राणि, त्रीणि शतानि त्रयस्त्रिशद्धिकानि योजनित्रमागश्च इति-७८३३३१. ' उक्कोसए अद्वारसमुहुत्ते दिवसे भगइ ' ति इह कि उ सूर्यस्य चतुरशीयधिकं मण्डलशतं भवति. तत्र किल जम्बूद्वीपमध्ये पञ्चपष्टिर्मण्डलानि भवन्ति. एकोनविंशत्यधिकं च शतं तेषां लवणसमुदस्य मध्ये भवति. तत्र सर्वाभ्यन्तरे मण्डले यदा वर्तते सूर्यस्तदा अष्टादशमुहूर्तो दिवसो भवति. कथम् ? यदा सर्वबाह्ये मण्डले वर्ततेऽसौ तदा सर्वजघन्यो द्वादशमुहूर्तो दिवसो भवति. ततश्च द्वितीयमण्डलादारम्य प्रतिमण्डलं द्वाम्यां मुहूर्तेकषष्टिभागाभ्यां दिनस्य वृह्ये ज्यशीत्यधिकशततमे मण्डले षड् मुहूर्ता वर्धन्त-इति-एथमष्टादशमुहूर्तो दिवसो भवति. अत एव द्वादशमुहूर्ती रात्रिर्भवति, त्रिंशनमुहूर्तत्वादहोरात्रस्य. ' अडारसमुहुत्ताणंतर ' त्ति यदा सवीभ्यन्तरमण्डलानन्तरे मण्डले वर्तते सूर्यस्त रा सुहूर्तैकषष्टिभागद्वयहीनाऽष्टादशसुहूर्तो दिवसो भवति. स चाष्टादशसुहूर्तार्द् दिवसाद् अनन्तरः ' अष्टादशमुहूर्तानन्तरः ' इति व्यपदिष्टः. 'सािरेगा दुवालसमुहुत्त ' ति द्वाभ्यां मुहूर्तेकषष्टिभागाभ्यामधिका द्वादशमुहूर्ता 'राई भवइ 'ति रात्रिप्रमाणं भवतीत्यर्थः. यावता भागेन दिनं हीयते तावता रात्रिर्वर्धते-त्रिशनमुहूर्तत्यादहोरात्रस्येति. ' एवं एएणं कमेणं ' ति ' एवम् ' इत्युपसंहारे, एतेनाऽनन्तरोक्तेन ' जया णं मंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणडू ' इत्यनेनेत्यर्थः. ' ओसारेयव्वं ' ति दिनमानं ह्स्वीकार्यम् . तदेत्र दर्शयति:-' सत्तरस ' इत्यादि . तत्र सवीभ्यन्तरमण्डलान्तरमण्डलाद् आर्भ्ये-क्रिंशत्तममण्डलार्धे यदा सूर्यस्तदा सप्तदशमुहूर्ती दिवसो भवति-पूर्वीकहानिक्रमेण, त्रयोदशमुहूर्ता च रात्रिरिति. 'सत्तरसमुहुत्ताणंतर ' ति मुहूर्तैकषष्टिमाद्रयहीनसप्तदशमुहूर्तप्रमाणो दिवसः, अयं च द्वितीपादारभ्य द्वात्रिशत्तममण्डलार्धे भवति. एवमनन्तरत्वमन्यत्राऽपि जहाम्. ' साइरेगतेरसमुहुत्ता राइ ' ति मुहूर्तेकषिभागद्वयेन सातिरेकत्वम्. एवं सर्वत्र. ' सोलसमुहुत्ते दिवसे ' ति द्वितीयादारम्यै-कषिटतममण्डले पोडशमुहूर्ती दिवसो भवति. 'पण्णरसमुहुत्ते दिवसे ' ति द्विनवतितममण्डलार्धे वर्तमाने सूर्थे. 'चोइसमुहृत्ते दिवसे 'ति. द्राविंशत्युत्तरशततममण्डले, 'तेरसमुहुत्ते दिवसे 'ति सार्धद्विपञ्चाशदुत्तरशततमे मण्डले, 'बारसमुहुत्ते दिवसे 'ति ध्यशीत्यधिकशततमे मण्डले सर्वबाह्ये इत्यर्थः.

२. तेमां पहेला उद्देशक संबंधे कांद्रक विवरीए छी र-['सूरिय 'ति] वे सूर्यी, कारण के जंबूद्वीपमां वे ज सूर्यी छे. ['उदीणपाइणं ' ति] उत्तर दिशानी पासेनो प्रदेश ते उदीचीन अने पूर्व दिशानी पासेनो प्रदेश ते प्राचीन-उत्तर अने पूर्व दिशानी वचेनो भाग-ईशान खूणों. ['उमाच्छ ' ति] त्यां क्रमपूर्वक उमीने, ['पाईणदाहिणं ' ति] पूर्व अने दक्षिण दिशानी वचेना भागे-अग्नि खूणे, ['आगच्छंति ' ति] आवे छे-क्रमपूर्वक ज आथमे छे. ' अमुक समये सूर्य उमे छे अने अमुक समये सूर्य आथमे छे ' ए व्यवहार मात्र लोकोनी मरजीथी ज उपज्यों छे. कारण के समय भूमंडळ उपर सूर्यने उगवानो अने आथमवानो समय नियत नथी. खरी रीते तो सूर्यों छोकोती समक्ष हमेशा हाजर ज छे. पण ज्यारे कोइ पण जातनुं सूर्यनी आडुं आंतरुं आवी जाय छे त्यारे अमुक देशना लोको तेने जोइ शकता नथी माटे तेओ ' सूर्य आथम्यों छे ' एवो व्यवहार करे छे अने ज्यारे ते आंतरुं नथी होतुं त्यारे अमुक देशना छोको सूर्यने जोइ शके छे माटे तेओ ' सूर्य उच्यो छे ' एवो व्यवहार करे छे अर्थात् मात्र जोनारा ठोकोनी नजरथी ज सूर्यने उगवानो अने आथमवानो व्यवहार छे-बीजुं कांइ नथी. कह्युं छे के-" जैम जैम समये समये सूर्य आगळ संचरे छे-आकाशमां गति करे छे-तेम तेम आ तरफ पण रात्री थाय छे ए बात चोक्कस छे " "अने एम छे माटे-सूर्यनी गति उपर ज उगवा अने आथमवानो व्यवहार निर्भर छे माटे-मनुष्योने हिसावे उगवुं अने आथमबुं ए बन्ने कियाओ अनियत छे. कारण के पोताना देशना भेदने लीधे कोइ, कोइ पण प्रकारनो व्यवहार तो करे ज छे " " एकवार ज कमवडे बधाओने भद्रमुहूर्त निर्देश्यो (१) छे अने केटलाकोने तो ते अत्यारे पण छे-जेओने सूर्य विषयप्रमाण छे (१) '' इत्यादिः सूर्य चारे दिशाओमां गति करे छे-आकाशमां सूर्य बधी दिशाओगां फरे छे, ए वात उपरना मूळ सूत्रथी जणावी छे. जे लोको एम माने छे के " सूर्य पश्चिम तरफना दरियामां पेसीने, पाताळमां जइने फरीने पूर्व तरफना समुद्र उपर उमे छे " ए मतने उपरतुं मूळ सूत्र (सूर्यनी चारे तरफ घती गतितुं सूचक सूत्र) निषेधे छे. शं०-उपरना मूळ सूत्रमां जणाव्युं ते रीते विचारतां एम स्पष्ट प्रतीत थाय छे के, सूर्य चारे दिशामां गति करे छे अने ज्यारे एम छे तो पछी तेनी प्रकाश हमेशा कायम फेलाया करे छे ए वात तो निर्विवाद थइ शके छे तो पछी क्यांय रात्री अने क्यांय दिवस एवो यिभाग जोवामां आवे छे ते केम बनी शकरो ? उपरना कथन प्रमाणे तो हमेशा सघळे ठेकाणे दिवस ज रहेवो जोइए. एम छतां तेम थतुं नशी तेनुं शुं कारण ? समा० — जो के सूर्य बधी दिशाओमां गति कर्या करे छे तो पण तेनो प्रकाश मर्यादित छे-तेनो प्रकाश अमुक हद सुधी जाय अने वधारे न जाय ए रीते नियत छ-माटे जगतमां अनुभवातो रात अने दिवसनो व्यवहार बाधारिहत छे अर्थात् जेटली हद सुधी सूर्यनो प्रकाश जेटला बखत सुधी पहोंचे तेटली हदमां तेटला वखत सुधी दिवस अने बाकीनी हदमां तेटला वखत सुधी रात रहे ए व्यवहार, सूर्यनो प्रकाश मर्यादित होवाथी बरावर छे अने ए ज मातने क्षेत्रना भेदपूर्वक दर्शावता कहे छे के-[' जया णं ' इत्यादि.] जगतमां वे सूर्यनी हाजरी होवाथी एक ज वखते वे दिशामां दिवस होवानुं जाणाव्यं छे. शैं० - जेम एक चोरस के गोळ पदार्थ होय, ह्वे जो आवणे तेना उपरना अडघा भागने उत्तरार्ध अने हेठळना अडघा भागने, शंका,

www.jainelibrary.org

समावान

तापक्षेत्र अने रात्रीक्षेत्र.

वस अने रात्रीनी लंबाइ दुंकाइनी विचार.

दक्षिणार्धं कहीए तो ते वे भागमां आखो पदार्थ समाइ शके छे. जो कोइ ए प्रकारना पदार्थ उपर दीवो मूकी एम कहे के आ दीवानो प्रकाश ते चोरस के गोळ पाटियाना दक्षिणार्घ अने उत्तरार्धमां पोतानो प्रकाश पांडे छे तो एम रपष्टपणे समजाइ शके के दीवाना प्रकाशथी ते आखो पदार्थ अजवाळायो छे तो ए रीते अहीं पण केम न संमवे ? अहीं कह्युं छे के, जंबूद्वीपना दक्षिणार्धमां अने उत्तरार्धमां दिवस होय छे तो पछी आगळ कहेल उदाहरण प्रमाणे आखा य जंब्द्रीयमां दिवस होवानो संभव छे पण कोइ पण भागमां-पूर्व के पश्चिम भागमां-रात्री होवी घटती नथी. अने ए रीते वनतुं जणातुं नथी तेनुं द्युं कारण ? समा०—आ स्थळे दक्षिणार्घनो 'आखो दक्षिण-हेठळ-नो माग 'अने उत्तरार्धनो 'आखो उत्तर-उपर-नो भाग ' एवो अर्थ ज नथी, पण अहीं ' अर्घ ' बन्दनो अर्थ मात्र ' अमुक भाग ' गण्यो छे माटे दक्षिणार्घ एटले दक्षिण दिशामां आवेलो माग अने उत्तरार्ध एटले उत्तर दिशामां आवेलो भाग, एवो अर्थ थाय छे अने एम अर्थ थवाथी-दक्षिणार्ध अने उत्तरार्ध शब्दवडे ते आखो खंड लेवातो नथी-तेथी ज पूर्व अने पश्चिम दिशामां रात्री थवानुं लखाण बराबर घटी शके छे. ज्यारे पण दक्षिण अने उत्तरमां मोटामां मोटो अढार मुहूर्त-१४ कलाक अने २४ मिनिट-नो दिवस होय छे त्यारे पण जंबूद्वीपना वण दश भाग जेटलुं ज तापक्षेत्र (प्रकाशवाळो भाग) दक्षिण अने उत्तरमां होय छे अने वे दश भाग जेटलुं रात्री क्षेत्र (प्रकाश विनानो भाग) पूर्व अने पश्चिममां होय छे. ते ज वातने स्पष्टपणे जणांवे छे-सूर्य साठ मुहूर्त (४८ कठाक) जेटला काळे मंडळने पूरे छे-एक मंडळमां सूर्य साठ मुहूर्त सुधी रहे छे. मोटामां मोटो दिवस अढार मुहूर्तनो कह्यो छे अने अढार संख्या साठना दस भाग करवाथी जे एक भाग आवे तेवा त्रण भागरूप छे तथा ज्यारे अढार मुहूर्तनो दिवस होय छे त्यारे बार मुहुर्त (९ कळाक अने ३६ मिनीट) नी रात्री होय छे अने बार संख्या साठना दश भाग करवाथी जे एक भाग आवे तेना बे भागरूप छे. तेमां मेरु प्रत्ये आयाम–लंबाई–नी अपेक्षाए मोटामां मोटा दिवसमां ९४८६ योजन अने 🕉 नव दशमाग जेटलुं तापक्षेत्र होय छे अने ते मेरुना परिक्षेपनुं जेटछुं माप छे तेना दस भाग करतां जे एक भाग आये तेवा त्रण भागरूप छे. ते केत्री रीतें ? तो कहे छे के, मेरुनो परिक्षेप ३१६२३ योजन करतां कांइक ऊणो छे ते परिक्षेपनो दशवडे भांगाकार करतां ३१६२३ आटली संख्या आंब छे अने तेने वण गणी करतां ९४८६% आटली संख्या आवे छे, जें उपरनी (उपर बतावेल तापक्षेत्रनी) संख्या छे तथा तवण समुद्र प्रसे मोटामां मोटा दिवसमां ९४८६८ है योजन जेटलुं तापक्षेत्र होय छे, ते केवी रीते ? तो कहे छे के, जंबूद्वीयनो घेरायो ३१६२२८ योजन करतां कांइक ओछो होय छे. ते घेरावाना मापनो दश संख्याथी भांगाकार करतां ३१६२२ 😓 आठली संख्या आवे छे अने तेने त्रण गणी करतां ९४८६८ 😤 एटली तापक्षेत्रना योजननी संख्या आवे छे. जघन्य रात्रीक्षेत्रनुं माप पण ए ज प्रमाणे जाणवुं. विशेष ए के, घेरावाना क्षेत्रने दसे मांगीने (मांगता जे संख्या आवें तेने) बमणी करवी. जेमके, आपणे मेरुना परिक्षेप संबंधी योजन संख्याने दसे मांगी बमणी करतां जे कांइ योजनसंख्या आवे तटलुं मेरुनुं राजीक्षेत्र समजवुं. मेरुनो घेरावो ३१६२३ योजन करतां कांइक ऊणो छे. ते घरावाने दसे भांगता ३१६२३३ आटली संख्या आव छे अने तेने बमणी करतां ६३२४% आटली योजन संख्या आवे छे अने एटलुं मेरुनुं रात्रीक्षेत्र छे तथा ए ज रीते लवण समुद्रनुं रात्रीक्षेत्र काढवुं होय त्यारे तेना घेरावाने दसे मांगी बनणुं करतां जे योजनसंख्या आवे ते, तेनुं रात्रीक्षेत्र जाणवुं. जंबूद्वीपनो घेरावो ३१६२२८ योजन करतां कांइक ओछो छे, ते धेरावाना मापनी संख्याने दसे भांगता ११६२२ई आटली योजन संख्या आवे छे अने तेने बमणी करतां ६३२४५ई आटली योजन संख्या आवे छे अने तेटलुं लवण समुद्रना रात्रीक्षेत्रनुं माप छे. ए रीते बधे स्थळे समजवुं. तात्पर्य ए के, ज्यारे कोइ पण क्षेत्रानुं. तापक्षेत्र करवुं (काढवुं) होय त्यारे ते क्षेत्रना घेरावाने दसे मांगी तमणो करतां जे संख्या आवे तेटलुं ते क्षेत्रनुं तापक्षेत्र जाणवुं अने ज्यारे कोइ एण क्षेत्रतुं राष्ट्रीक्षेत्र काढवुं होय त्यारे ते क्षेत्रना घेरावाने दसे मांगी वमणो करतां ने संख्या आवे तेटलुं ते क्षेत्रतुं रात्रीक्षेत्र जाणवुं. तथा ज्यारे दिवस के राजीना काळनी लंबाइ, दुंकाइ जाणवी होय त्यारे सूर्य जे मंडळमां जेटला सहूर्त रहेतो होय ते सहूर्त संख्याने दसे भांगी (भागमां जे संख्या आवे) तेने तमणी करवाथी दिवसनी छंबाइ के दुंकाइ जणारा अने ते ज मुहूर्त संख्याने दशे भागी-भागनी संख्याने -बमणी करवाथी रात्रीनी लंबाइ के दुंकाइ जणारी. घारों के एक मंडळमां सूर्य ६० अहूर्त एटले ४८ कलाक रहे छे. तो हवे कोइने जाणवातुं होय के ज्यां सुधी सूर्य एक मांडलामां ६० सहूर्त सुधी रहे छे त्यां सुधी राजीतुं माप शुं जाणवुं १ उत्तर सरल ज छे-सहूर्तनी ६० संख्याने दसे भागवाथी ६ संख्या आवे छे अने तेने तमणी करवाथी १८ संख्या आवे छे-तो उवां सुधी सुर्थ ६० मुहूर्त सुधी एक ज मांडलामां रहे छे त्यां सुधी १८ सहूर्त (१४ कलाक अने २४ मिनीट) नो दिवस होय छे अने राजी बार सहूर्तनी होय छे, ते ए रीते के, सहूर्तनी संख्याने दसे भांगी अने बमणी करवाधी राजीनी छंबाइ वगेरे जणाइ जाय छे-६० मुहूर्तनी संख्याने दशे भांगता ६ नो भाग आवे छे अने तेने वमणुं करतां १२ संख्या आवे छे अने ते, राजीती लंबाइनुं माप छे ज्यारे दिवस नानो हो व त्यारे तान क्षेत्रनुं मान आगळ सहेल रात्रिक्षेत्र जेटलुं

ा। अर्थात् ३० मिनीट. ०

दसे भांगता ४॥। कस्राक्त अने त्रण भिनीद आवे छे अने तेने त्रणे गुणतां (४॥। १) १४। कस्राक्त अने ९ मिनीट आवे छे अने ज्यां सुधी सर्थ एक रे४। ९

मांडलामां ४८ फलाक सुधी रहे छे त्यां सुधी एटला कलाकनो दिवस मोटो होय छें. रात्री माटे पण तेम ज जाणंखं. मात्र ४॥ कलाक अने १ मिनीटने बमणा करवा अथीत् ज्यां सुधी १४। कलाक अने नव मिनीटनो दिवस होय छे त्यां सुदी ९॥ कलाक अने ६ मिनीटनी रात्री होय छे:—अनु

^{9.} कोइ महाशयने मुहूर्त शब्द अप्रसिद्ध जणातो होय तो तेने माटे चालु रूढि प्रमाणे पण दिवस अने रात्रिनुं माप जणावी शकाय छे. जूनी रीत प्रमाणे १। मुहूर्त थाय त्यारे नवी रीत प्रमाणे एक कलाक थाय अर्थात् १ कलाकनं सवा मुहूर्त थाय छे. हवे ज्यारे सूर्य एक मंडळमां ४८ कलाक रहेतो होय त्यारे ते ४८ कलाकने दसे मांगी-भागनी संख्याने-त्रमणी करतां जेटला कलाक अने जेटली भिनीट आवे तेटली संख्या दिवसना मापनी छे अने ते ४८ कलाकने दसे भांगी-भागनी संख्याने-वमणी करतां जेटला कलाक अने जेटली मिनीट आवे तेटली संख्या रात्रिना मापनी छे:—ज्यारे सूर्य ४८ कलाक एक मांडलामां ज रहे त्यारे दिवसनं माप-१०)४८ (४।॥ १०)३०(३ अर्थात् ४८ने

जाणबुं अने रात्रीक्षेत्र हुं माप आगळ कहेळ तापक्षेत्र जेटलुं समजबुं. आयाम-छंबाई-नी अपेक्षाए तो जंबूद्वीपनी बचेदुं तारक्षेत्र ४५००० योजन छे अने लवग समुद्र ताप क्षेत्र १११११ योजन छ-ते बन्ने तापक्षेत्रना मापनो सरवाळो करता ७८१११ योजन थाय छे. ['उक्कोसए अद्वारसमुद्र ते दिवसे भवइ 'ति] सूर्यनां बधां मळीने १८४ गंडळ-मांडळां-छे. तेनां आ जंबूद्वीपमां सूर्यनां ६५ मंडळ छे अने वाकीनां १९९ मंडळ लवण समुद्रनी वचे छे. तेमां-ते मंडळोमां-सौथी अंदरनां मंडळमां ज्यारे सूर्यनी हाजरी होय त्यारे अढार मुहूर्त (१४ कळाक अने २४ मिनीट) नो सौथी मोटो दिवस होय छे. ते केत्री रिते ? तो कहे छे के, आगळ कह्या प्रमाणे सूर्यनां १८४ मंडळो छे अने तेमां ज्यारे सौथी बहारना मंडळमां सूर्य विराजतो होय त्यारे नानामां नानो-साथी नानो-वार मुहूर्त (९ कळाक अने ३६ मिनीट) नो दिवस होय छे अने ज्यारे करतो करतो सूर्य सौथी अंदरना-१८३ मा-मंडळमां आने छे त्यारे वधतो वधतो दिवस १८ मुहूर्त (१४ कळाक अने २४ मिनीट) नो थई जाय छे अर्थात् आ बखते दिवसना सौथी पहेळानां मापमां ४ कळाक अने ४८ मिनीटनो वधारो थयो छे. हवे आपणे गणित द्वारा समजी शकीए के, एहेळेथी बीजे मांडळे, बीजेथी त्रीजे अने ए रीते छेवट १८३ में मांडळे (बवां मांडळानी गणत्रीमां १८४ में मांडळे) ज्यारे सूर्य आव्यो त्यारे दिवसनी छंबाइमां पूर्व प्रमाणे कार कर थाय छे तो प्रत्ये ६—एहेळेथी बीजे—मांडळे जतां दिवसनी छंबाइमां शो भेद थतो हशे १ तेनो उत्तर स्पष्ट छे के, प्रत्येक मंडळे जतां आगळना दिवसनी छंवाइ करतां १॥ मिनीट अने ४। स्वर्य हे केड दिवस वधे छे अने ए रीते

श्रत्येक मांडले वध्ये जाय छे अने ज्यारे सौधी अंदरने (१८३ में) मांडले सूर्यदेव पचारे छे त्यारे दिवस वधीने १८ मुहूर्त-१४ कलाक अने २४ मिनीट-नो थाय छे-छेले मांडले सूर्यराजनी पधरामणी थतां दिवस पोताना सौथी नाना माप करतां ४ कलाक अने ४८ मिनीट जेटलो वधी जाय छे. जेने आपणे १॥ मिनीट अने ४॥ सेकंड कहीए छीए तेने ज शास्त्रनी परिभाषामां एक मुहूर्तना वे ६१ मा भाग

कहा। छे अने ए हिसाबे वधतां वधतां छेबटे छ मुहर्त जेटलो काळ दिवसना मापमां उमेराइ जाय छे-छेबटे दिवस-१८ मुहर्तनो थाय छे. [अहीं मुहर्तनी गणत्री न करतां प्रसिद्ध होबाथी कलाक अने मिनीटोनी गणत्री जणायी छे] तो ए रीते १८ मुहर्तनो दिवस अने बार मुहर्तनी रात्री थाय छे. कारण—दिवस अने रात-बन्ने—नां बधां मळीने ३० मुहर्त छे. तात्पर्य ए छे के, ज्यारे सूर्य देव बहारना मांडलाथी अंदरनां मांडला तरक प्रयाण करे छे त्यारे १॥ मिनीट अने ४। १०॥ जेटलो दिवस प्रत्येक मांडले जतां वध्या ज करे छे अने रात्री तो तेटली ज घट्या करे

'छे तथा ज्यारे सूर्यराज अंदरनां मांडलाथी बहारनां मांडलां भणी प्रयाण करे छे त्यारे—पाछा वळतां—राशी प्रत्येक मांडले १॥ मिनीट अने ४। १०॥ जेटलो समय वध्या करे छे अने दिवस पण तेटलो ज घट्या करे छे-ज्यारे दिवस मोटो होय छे त्यारे राशी नानी होय छे अने ज्यारे

रात्री नानी होय छे त्यारे दिवस मोटो थाय छे. ['अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे 'ति] हवे ज्यारे भास्करराय सौधी अंदरना मांडलाथी निकळी तेनी पासेना-१८२ मा-मांडलामां पघारे छे त्यारे मुहूर्तना वे एक-सिटिया भाग जेटलो जगो अहार मुहूर्तनो दिवस होय छे. ते दिवसनुं नाम ' अष्टादशमुहूर्तानंतर ' एवं राखवामां आव्युं छे, कारण-ते दिवस, अढार मुहूर्तनो दिवस थया पछी तुरत ज आवे छे. ज्यारे ए रीते दिवसने घटवानी शहआत थाय छे त्यारे [' सातिरेगा दुवालसमुहुत्ता राइ ' ति] बार मुहूर्त अने मुहूर्तना वे एकसिटया माग जेटली रात्री लांबी थाय छे अर्थात् ए रीते रात्रीने वधवानी पण शरूआत थइ जाय छे. मूळ वात ए छे के, दिवसनो जेटलो भाग दुकी थाय छे तेटलो ज भाग रात्रीनो वधे छे, कारण कें, अहोराश्रमा शीरा मुहर्त छे. [' एवं एएणं कमेगं ' ति] ए रीते ए-आगळ जणावेळ कमवडे संमवपूर्वक दिवसनुं माप ['ओसारेयव्वं 'ति] घटाडी देवुं. ए ज वातने दर्शावे छे-['सत्तरस 'इत्यादि.] वळी ज्यारे सूर्थ १८२ मां मांडलाधी चालतो चालतो एकत्रीसमा मांडलाने अडधे आवे छे त्यारे दिवस सत्तर मुहर्तनो थाय छे अने आगळ जणावेल घटाडाना कम प्रमाणे रात्री तेर मुहर्तनी थाय छे. [' सत्तरसमुहुत्तागंतर ' ति] होत्र ज्यारे ठेउ बीजा मांडळाथी एकत्रीसमा मांडळाना अडवा रस्ताथी-सूर्य, बत्रीशमा मांडळाने अडिघे मागे पहोंचे छे त्यारे दिवसनी छंबाई मुहुर्तना बे एक सिठया भाग जेटली कणी सत्तर मुहूर्त थाय छे अने ['साइरेगसतरसमुहुता राइ ' ति] राशीनी लंबाई तेर मुहूर्त अने मुहूर्तना ने एक सिठिया भाग जेटली बधारे थाय छे ए रीतें अनंतरपणाथी थती लंबाई, दुंकाई बीजे ठेकाणे पण समजवी अने एम बधे य जाणवुं [' सो उसमुहुते दिवसे ' ति] वळी ठेउ घी ना मांडलाधी ज्यारे सूर्य फरतो फरतो ६१ में मांडले आवे त्यारे सोळ मुहूर्तनो दिवस थाय छे. [' पन्नरसमुहुत्ते दिवसे ' ति] ज्यारे सूर्य बाणुमा मांडलाने अडधे पहों ने त्यारे पन्नर मुहूर्तनो दिवस थाय छे. ['चोइसमुहुसे दिवसे 'ति] ज्यारे फरतो फरतो सूर्य एकसोने वावीशमें मांडले आवे छे त्यारे चौद मुहूर्तनो दिवस थाय छे. ['तेरसमुहुते दिवसे ' ति] ज्यारे १५२ मा मांडलानी अडध बाटे सूर्य आवे छे त्यारे तेर मुहूर्तनो दिवस थाय छे अने ज्यारे [' बारसमुहुत्ते दिवसे ' ति] एकसोने ज्याशीमें बहारने मांडले सूर्य पहों वे छे त्यारे छेक बार मुहूर्तनो दिवस धइ जाय छे-जेम दिवस घटतो जाय छे तेम राजी अधती जाय छे. जो के उपरनी हकीकतमां रात्रीना मापना वधारा संबंधी जुदुं जुदुं जणाव्युं नथी, तो पण ते वात वाचकोर स्वयमेव समजवानी छे—रात्रि अने दिवसनों बंधां मळीने ३० सहूर्त छे माटे दिवसना मापमां ववारो होय त्यारे राशिना मापमां घटाडो होय अने राशिना मापमां वधारो होय त्यारे दिवसना मापमां घटाडो होय, पण ते बन्नेमां मळी त्रीश सहूर्त थाय ए तो सुनिर्णीत ज छे माटे वधारा के घटाडानी रीत उपर प्रमाणे जाणवानी छे.

ऋतुओ विगेरे

१०. प्रठ--जैया णं भंते । जंबुद्दीये दीये दाहिणडे वासाणं १० प्रठ-हे भगवन् । उपारे जंबूद्दीपमां दक्षि गार्थमां वर्षा पढमे समए पडिवज्जइ तथा णं उत्तरडे वि वासाणं पढमे समये (चामासा)नी मोसमनो प्रथम समय होय स्यारे उत्तरार्थमां पण

त।पक्षेत्रनां मापी

दिवस अने रात्रीन वधघटनो हेतु.

अढारमुहूर्ननो दिव अने वारमुहूर्नन रात्री.

अष्टादश<u>मु</u>ह्तनित

सत्तर मु०नो दि। तेर मु०नी रार्व

सोल सु० दि०. १५ सु० दि.० १४ सु० दि०. तेर अने ब.र सु० दिवस.

१. मूलच्छायाः — यदा भगवन् ! जम्बूदीपे हीपे दक्षिणाऽर्धे वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा उत्तराऽर्थेऽपि वर्षाणां प्रथमः समयः — अवु ०

पिडवज्जइ; जया णं उत्तरहे वि वासाणं पढमे समए पिडवज्जइ तया णं जंबुद्दीये दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चित्थिमे णं अणंतरपुरक्खडे समयंसि वासाणं पढमे समये पिडवज्जइ ?

१०. उ०—हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे दाहि-णड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ, तह चेव जाव-पडिवज्जइ.

११. प्रo—जया णं मंते! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरित्थमे णं वासाणं पढमे समये पिडवज्जइ तया णं पचित्थिमे-णावि वासाणं पढमे समए पिडवज्जइ. जया णं पचित्थिमेण वि वासाणं पढमे समए पिडवज्जइ तया णं जाव-मंदरस्स पव्व-यस्स उत्तर-दाहिणे णं अगंतरपच्छाकडसमयांसि वासाणं पढमे समए पिडविचे मनइ ?

११. उ० — हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पन्वयस्स पुरस्थिमे णं एवं चेव उचारेयन्वं, जाव-पिडवने भवइ.

एवं जहा समएणं अभिलावो भाणेओ वासाणं तहा आव-लियाए वि भाणियञ्बो; आणपाणूण वि, थोवेण वि, लवेण थि, मुहुत्तेण वि, अहोरत्तेण वि, पक्लेण वि, मासेण वि, उऊणा वि, एएसिं सञ्बोसिं जहा समयस्स अभिलावो तहा भाणियञ्योः

१२. प्र०-जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे हेमंताणं पढमे समये पडिवजइ० १

१२. उ० — जहेन वासाणं अभिलानो तहेन हेमंताण नि, गिम्हाण नि भाणियन्त्रो जान—उऊए; एनं तिण्णि नि, एएसिं तीसं आलानमा भाणियन्त्रा. वर्षानो प्रथम सयम होय अने ज्यारे उत्तरार्धमा पण वरसादनो प्रथम समय होय त्यारे जंबृद्धीपमां मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे वर्षानो प्रथम समय अनंतर पुरस्कृत समयमां होय अर्थात् जे समये दिक्षणार्थमां वरसादनी शहआत थाय छे ते ज समय पछी तुरत ज बीजा समये मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे वरसादनी शहआत थाय ?

१०. उ०—हे गौतम! हा एज रीते थाय-छे ज्यारे जंबूद्वीपमां दक्षिणार्घमां चोशासानो प्रथम समय होय त्यारे ते प्रमाणे ज यावत्-धाय छे.

११. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वें चोमासानो प्रथम समय होय छे त्यारे पश्चिममां पण चोमासानो प्रथम समय होय छे अने ज्यारे पश्चिममां पण चोमासानो प्रथम समय होय छे त्यारे यावत्—मंदर पर्वतनी उत्तर दक्षिणे वर्षानो प्रथम समय, अनंतर पश्चात्कृत समयमां होय अर्थात् मंदर पर्वतनी पश्चिमे वर्षा शरु थयाना प्रथम समय पहेलां एक समये त्यां (मंदर पर्वतनी) उत्तरे दिक्षणे वर्षा शरु थाय ?

११. उ० — हे गौतम! हा, ए ज रीते थाय-ज्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्वे बरसादनी शरुआत थाय ते पहेलां एक समये अहीं (उत्तर दक्षिणे) वरसादनी शरुआत थाय, ए प्रमाणे यावत्—बधुं कहेनुं.

जेम वरसादना प्रथम समय माटे कह्युं तेम वरसादनी शरुआतनी प्रथम आवलिका माटे पण जाणवुं अने ए प्रमाणे आनपान, स्तोक, छव, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, ए बधां संबंधे पण समयनी पेठे जाणवुं.

१२. प्र०—हे भगवम! ज्यारे जंबूद्वीपमां दक्षिणांधमां हेमंत आतुनो प्रथम समय होय त्यारे उत्तरार्धमां पंण हेमंतनो प्रथम समय होय अने ज्यारे उत्तरार्धमां पण तेम होय त्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे हेमंतनो (प्रूथम समय अनंतर पुरस्कृत समये होय?) इत्यादि प्र्छवं.

१२. उ०—हे गौतम्! ए संबंधनो बधो खुलासो वर्षानी पेठे ज जाणवो अने ए ज प्रकारे ग्रीष्म ऋतुनो पण खुलासो समजवो. तथा हेमंत अने ग्रीष्मना प्रथम समयनी पेठे तेनी प्रथम आवलिका वगेरे यावत् ऋतु—सुधी पण समजवुं—ए प्रमाणे एक सरखुं ए त्रणे ऋतुओ विषे जाणवुं—ए बधाना मळीने त्रीश आलापक कहेवा.

१. मूलच्छायाः—प्रतिपद्यते, यदा उत्तराऽघेऽपि वधीणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा जम्बुद्धीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त-पश्चिमेऽनन्तरपुरस्कृतसमये वधीणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते १ हन्त, गौतम । यदा जम्बुद्धीपे द्वीपे दक्षिणाऽघे वधीणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तथा वैव
यावत्—प्रतिपद्यते. यदा भगवन् । जम्बुद्धीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्ये वधीणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा पश्चिमेऽपि वधीणां प्रथमः
समयः प्रतिपद्यते; यदा पश्चिमेऽपि वधीणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा यावत्—मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तर—दक्षिणेऽनन्तरपुरस्कृतसमये वधीणां प्रथमः
समयः प्रतिपद्यते भवति । हन्त, गौतम । यदा जम्बुद्धीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्तये एवं चैव उचारियतव्यम् , यावत्—प्रतिपत्नो भवति । एवं यथा
समयेन अभिलापो भणितो वधीणां तथा आविलक्षयाऽपि भणितव्यः; आन—प्राणाभ्यामपि, स्तोकेनाऽपि, लवेनाऽपि, महूर्तेनाऽपि, अहोरात्रेणाऽपि,
पश्चेणाऽपि, मासेनाऽपि, ऋतुनाऽपि; एतेषां सर्वेषां यथा समयस्याऽभिलापस्या भणितव्यः यदा भगवन् । जम्बुद्दीपे द्वीपे हेमन्तानां प्रथमः समयः
प्रतिपद्यते । यथेव वधीणाम् अभिलापस्यथेन हेमन्तानामपि; प्रीक्षाणाम् अपि भणितव्यो यावत्—ऋतुना; एवं त्रीणि अपि, एतेषां त्रिशद्व भालपका भणितव्याः—अनु०

१३. प्र०-जैया णं भंते ! जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्य-यस्स दाहिणडे पडमे अयणे पडिवज्जइ, तया णं उत्तरहे वि पढमे अयणे पडिवज्जइ ?

१३, उ० — जहा समएणं अभिलावो तहेव अयणेण वि भाणियव्यो, जाय-अणंतरपच्छाकडसमयंसि पढमे अयणे पडि-वण्णे भवइ.

जहा अयणेणं अभिलाबो तहा संवच्छरेण वि भाणियन्वो, जुएण वि, वाससएण वि, वाससहस्तेण वि, वाससयसहस्तेण वि, पुन्वंगेण वि, पुन्वेण वि, तुडियंगेण वि, तुडियेण वि, एवं पुन्वंगे, पुन्वे, तुडिअंगे, तुडिए, अडडंगे, अडडे, अववंगे, अववे, हूहूयंगे, हूहूये, उप्पतंगे, जप्पले, पउमंगे, पउमे, निलणेंगे, निलणें, अत्थणिउरंगे, अत्थणिउरे, अउअंगे, अउए, णडअंगे, णडए, पडअंगे, पडए, चूलिअंगे, चूलिए, सीसपहे-लिया, पलिओवमेण, सागरोवमेण वि भाणियव्वो.

१४. प्र०-जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्टे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ तया णं उत्तरहे वि पढमा ओसप्पिणी पडिवजाइ; जया णं उत्तरहे वि पिडिवजाइ तया णं जंबुदीचे दीचे मंदरस्स पव्ययस्स पुरित्थमे णं पचित्थिमे णं णेवित्थ ओसिपणी, नेवित्थि उस्सप्पिणी; अविद्विए णं तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो !?

१४. ड० — हंता, गोयमा ! तं चेव जाव-उचारेयव्वं, जाय-समणाउसो ! जहा ओसप्पिणीए आलावओ भणिओ एवं उस्सप्पणीए नि भाणियव्वो.

१३. प्र० — हे भगवन्! ज्यारे जंबूद्वीपमां मंदर पर्वतना दक्षिणींधमां प्रथम अयन होय छे त्यारे उत्तरार्धमां पण प्रथम अयन होय छे ?

१३. उ०--हे गौतम ! जेम समय संबंधे कह्युं, तेम अयन संबंधे पण समजवुं यायत्—तेनो प्रथम समय, अनंतर पश्चाःकृत समये होय छे-इत्यादि जाणबुं.

जेम अयन संबंधे कह्युं छे तेम संवत्सर, युग, वर्षशत, वर्षसहस्र, वर्षशतसहस्र, पूर्वांग, पूर्वे, त्रुटितांग, त्रुटित, अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पछांग, उत्पछ, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थन्पुरांग, अर्थन्पुर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलि-कांग, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम, अने सागरोपम ए बधां संबंधे पण समजवुं.

१४. प्र० — हे भगवन् ! ज्यारे जंबूद्वीपमां दक्षिणार्धमां प्रथम अवसॉपणी होय छे त्यारे उत्तरार्घमां पण प्रथम अवसर्पिणी होय छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां पण तेम होय छे त्यारे जंबूद्वीपमा मंदर पर्वतनी पूर्व पश्चिमे अवसर्पिणी नथी, तेम उत्सर्पिणी नथी. पण हे दीर्घजीविन्! श्रमण! त्यां अवस्थित काळ कह्यों छे ? १४. उ० -- हे गौतम ! हा, ए ज रीते छे-पूर्वेनी पेठे बधुं कहेवुं यावत्-हे दीर्घजीविश्रमण ! इत्यादि. जेम अवसर्पिणी संबंधे

कह्यं तेम उत्सर्पिणी विषे पण समजवं.

९ो मूलच्छायाः—यदा भगवन् ! जम्बुद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणाऽधे प्रथमम् अयनं प्रतिपद्यते तदा उत्तराऽधेऽपि प्रथमम् अयनं प्रतिष्यते ? यथा समयेन अभिलापस्तथैव अयनेनाऽपि भणितव्यः, यावत्-अनन्तरपृथान्कृतसमये प्रथमम् अयनं प्रतिपत्रं भवति. यथाऽयने-नाडभिलापस्तथा संवत्सरेणाडपि भणितव्यः, युगेनाडपि, वर्षसतेनाडपि, वर्षसहस्रेणाडपि, वर्षसतसहस्रेणाडपि, पूर्वाहेणाडपि, पूर्वेणाडपि, व्रुटिताहेनाडपि, शुटितेनाऽपि; एवं पूर्वेाङ्गम्, पूर्वम्, त्रुटिताङ्गम्, त्रुटितम्, अटटाङ्गम्, अटटम्, अववाङ्गम्, अववम्, हुहुकाङ्गम्, हुहुकम्, उत्पलाङ्गम्, उत्पलम्, पद्माङ्गम्, पद्मम्, निलनाङ्गम्, निलनम्, अर्थनिपूराङ्गम्, अर्थनिपूरम्, अयुताङ्गम्, नयुताङ्गम्, नयुतम्, प्रयुताङ्गम्, प्रयुताङ्गम्, प्रयुताङ्गम्, प्रयुताङ्गम्, प्रयुताङ्गम्, प्रयुताङ्गम्, चूलिका; शीर्षप्रहेलिकया, पल्योपसेन, सागरोपसेणाऽपि भणितब्यः. यदा भगवन् ! जम्बुई।पे द्वीपे दक्षिण।र्धे प्रथमाऽवसपिणी प्रतिपद्यते तदा उत्तराऽर्घेऽपि प्रथमाऽवसर्पिणी प्रतिपद्यते; यदा उत्तराऽर्घेऽपि प्रतिपद्यते तदा जम्बुद्दीपे दीपे सन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्ये पश्चिमे नैवाऽस्ति अवसर्पिणी, नैवाऽस्ति उत्सर्पिणी; अवस्थितस्तत्र कालः प्रज्ञप्तः श्रमणाऽऽयुष्मन् ! १ हन्त, गौतम ! तच्चैव यावत्—उच्चारयितव्यम् , यावत् -श्रमणाऽऽयुष्मन् ! यथा अवसर्पिण्या आलापको भणितः, एवम् उत्सर्पिण्याऽपि भणितन्यः---अनुव

१. आ वधा शब्दो संख्या-सूचक छे. बौद्धसाहित्समां पण आ शब्दोने मळता केटलाक संख्यासूचक शब्दो वपराएला छे अने ते क्षा प्रमाणे छे:---

कोटि—१००००००

पकोटि--१००००००००००००

कोटिप्पकोटि--१०००००००००००००००००००

महुते—१०००००००००००००००००००००००

नित्रनहुर्त—१०००७००००००००००००००००००००००००००००००

अध्युव-एकडा पछी ५६ मीडां.

निरम्बुद-एकडा पछी ६३ मीडां.

अहह—एकडा पछी ७० मींडां.

अवव-एकडा पछी ७७ मीडां.

अटट--एकडा पछी ८४ मींडां.

सोगंधिक -- एकडा पछी ९१ मींडां.

उप्पल--एकडा पछी ९८ मींडां.

कुमुद्---एकडा पछी १०५ मीडां. पुण्डरीक--एकडा पछी ११२ मींडां. पद्म--एकडा पछी ११९ मीडां.

कथान-एकडा पछी १२६ मीडां.

महाकथान-एकडा पछी १३३ मींडां.

असंख्येय्य-एकडा पछी १४० मींडां.

---(पालीव्याकरण-तद्धितकल्पसूत्र-५२)

डिपर जणांवेलां नामोमां अवब, अटट, उप्पेल, पदुम ए चारे नामो अहींना अडड, अवब, उप्पल अने परम-साथे बराबर मळतां आवे छे. परंतु भरिभाषाना सेदने लीधे तेना अर्थमां नैषम्य जणाय छे:--अनु०

३. कालाधिकारादिदमाह:-'जया णं भंते ! जंबुदीवे दीवे दाहिणड्डे वासाणं पढमे समए पाडिवज्जइ ' इत्यादि. 'वासाणं ' ति चतुर्मासप्रमाणवर्षाकालस्य संबन्धी प्रथमः आदाः, समयः क्षणः प्रतिपद्यते संपद्यते—भवतीत्पर्थः. ' अणंतरपुरक्खडसमयाति ' ति अनन्तरो निर्व्यवधानो दक्षिणाधे वर्षा-प्रथमताऽपेक्षया स चातीतोऽपि स्यात् , अत आहः-पुरस्कृतः पुरोवर्ती भविष्यन्-इत्यर्थः, समयः प्रतीतः; ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः-अतन्तत्र. ' अगंतरपच्छाकडसमयांसि ' ति पूर्वापरविदेहवर्षाप्रथमसमयापेक्षया योऽनन्तरः पश्चात्कृतोऽतीतः समयस्तत्र दक्षिणोत्तरयोर्वर्षाकालप्रथमसमयो भवति-इति. 'एवं जहा समएणं ' इत्यादि. आवलिकाऽभिलापश्चैवम्:-' जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमा आवितया पिडवज्जइ, तथा णं उत्तरे हे वि, जया णं उत्तरे हे वासाणं पढमा आवालिया पाडिवज्जइ, तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरात्थिमपचात्थिमेणं अणंतरपुरक्षडसमयांसे वासाणं पढमा आवालिया पिंडवज्जङ ? हंता, गोयमा ! ' इत्यादि. एवम्-आनप्राणादिपदेषु अपि. आविलकाद्यर्थः पुनर्थम्⊯-आविलका असंख्यातसमयात्मिका. भानप्राण उच्छ्वासनिःश्वासकालः. स्तोकः सप्तप्राणप्रमाणः. लवस्तु सप्तस्तोकस्तपः. मुहूर्तः पुनः लवसप्तसप्ततिप्रमाणः, ऋतुस्तु मासद्वयमानः. ' हेमंताणं ' ति शीतकालस्य. ' गिम्हाण वि ' ति उष्णकालस्य. ' पढमे अयणे ' ति दक्षिणायनम् , श्रावणादित्वात् संवत्सरस्य. ' जुएण वि ' ति युगं पञ्चसंवत्सरमानम्, ' पुन्वंगंण वि ' ति पूर्वाङ्गं चतुरशीतिर्वर्षेटक्षाणाम् . ' पुन्वंण वि ' ति पूर्व पूर्वोङ्गमेव चतुरशीतिवर्षठक्षेण गुणितम्. एवं चतुरशीतिवर्षठक्षगुणितमुत्तरोत्तरं स्थानं भवति. चतुर्नवतिअधिकं चाङ्कशतम्-अन्तिमे स्थाने भवति-इति. ' पढमा ओसिपिणि ' त्ति अवसर्पयति भावानित्येवंशीला अवसर्पिणी, तस्याः प्रथमो विभागः प्रथमावसर्पिणी. ' उस्सिणाणि ' चि उत्सर्पयति भावानित्येवशीला उत्सर्पिणी.

्मगवत्सुधर्मसामित्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पश्चमशतं त्रथम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

३. आगळना प्रकरणमां काळ संबंधी हकीकत जणावी छे अने हवे ऋतुओ विषे जणाववानी शरुआत थाय छे— ऋतु पण एक प्रकारनो काळ ज छे माटे ते संबंधीनुं निरूपण स्थानप्राप्त छे. ऋतुओ संबंधे जणावतां कहेछ्छे के, [जया णं मंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणहे वासाणं पढमे समए पिडव़जाइ ' इत्यादि.] ' वासाणं ' एटले वरसादनी मोसम-चोमासाना चार मिहना-नो पहेलो समय सांपडे छे. [अंगंतरपुरक्खडसमयंसि ' ति] दक्षिणार्घमां शरू थती चोमासानी मोसमना पहेळापणानी अपेक्षाए अनंतर-आंतरा विनानो, एवा विशेषणवाळो तो कोइ अतीत समय मणं होय माटे कहे छे के, पुरोवर्ती-हवे पछी आवनार-भविष्यमां थनार समय-ए समये. ['अणंतरपच्छाकडसमयंसि ' ति] पूर्व अने पश्चिम् विदेहमां शरु थती चोमासानी मोसमना प्रथम समयनी अपेक्षाए अनंतर-आंतरा विनानो अने पश्चात् कृत-अतीत थएलो-समय-ए समर्थे दक्षिण अने उत्तरमां चोमासानी मोसमनो प्रथम समय होय छे. ['एंवं जहा समएणं' इत्यादि] आवलिका संबंधी पाठनो उचार आ रीते छे:— ' जया णं भंते । जंबुद्दीवे दीवे दाहिण हे वासाणं पढमा आवलिआ पडिवज्जद्द, तया णं उत्तरहे वि, जया णं उत्तरहे वासाणं पढमा आविलेआ पृष्टिवजाइ, तया णं जंबुदीये दीवे मंद्रस्स पव्वयस्स पुरित्थमपचित्थमेणं अणंतरपुरक्खडसमयंसि वासाणं पढमा आविलया पृष्टिवजाइ १ हुंता गोयमा ! ' इत्यादि. ए प्रमाणे आनप्राण वगेरे पदोनो पण सूत्रपाठ समजवो. आवलिका वगेरे (शब्दो) काळना माप संबंधी शब्दो हें अने तेनो अर्थ आ है:-असंस्यात समयनी एक आविलका थाय है, उच्छ्वास अने निःश्वासनो एक आनवाण याय है, सात प्राणनो एक स्तोक थाय छे, सात स्तोकनो एक ठव थाय छे, सत्योतेर ठवनो एक मुहूर्त थाय छे, वे महिनानी एक ऋतु थाय छे. [' हेमंताणं 'ति] शीयाळा संबंधी, ['गिम्हाण वि ' ति] उनाळा संबंधी, ['पढमे अयणे ' ति] दक्षिणायन, कारण के, वर्षनी आदि (पहेलो) महिनो श्रावण छे. [• द्भएण वि ' ति] पांच वरसनुं एक युग थाय छे, [• पुन्वंगेण वि ' ति] चोराशी लाख ८४००००० —वर्षनुं एक पूर्वीग थाय छे, पूर्वीगनी संख्याने चोराशी लाख गणी करवाथी एक पूर्व थाय छे, ए प्रमाणे पूर्वने चोराशी लाखगणुं करवाथी एक बुटितांग थाय छे अने ए रीते उत्तरोत्तर बधा मापमां समजद्भं. छेवटना शीर्षप्रहेलिका नामना मापमां १९४ अंको आवे छे. ['पढमा ओसप्पिणि र ति] पदार्थीने अवसर्पावे मूळ खमावशी खसेडे-हीणा करे ते अवसर्पिणी-तेनो जे प्रथम विभाग ते प्रथमावसर्पिणी. [' उस्सप्पिणि ' ति] भावोने उत्सर्पावे-प्रकर्षवाळा करे-ते उत्सर्पिणी.

लवण-समुद्रादिः

१५. प्र०-लेबणे णं भंते ! समुद्दे सूरिया उदीचि-पाईण-मुरगच्छ० ?

१५. उ०-ज चेव जंबुदीवस्स वत्तव्वया भणिया स चेव सन्वा अपरिसेसिभा छवणसमुद्दस्स वि भाणियन्वा, नवरं-अभि-लावो इमो णेयव्वोः जया णं मंते ! लवणे समुद्दे दाहिण हु दिवसे भवइ तं चेव जाय-तदा णं लवणसमुद्दे पुरिथमपचित्थिमे भगवन् ! ज्यारे छवण समुद्रना दक्षिणार्धमां दिवस होय छे,

१५. प्र०-हे भगवन्। लंबर्ण समुद्रमां सूर्यो ईशान खूणामां उगीने अग्नि खूणामां लाय इत्यादि पूछतुं.

१५. उ० - हे गौतम ! जंबूद्वीपमां सूर्यो संबंधे जे वक्तव्यता कही छे ते बधी अहीं छवण समुद्र संबंधे पण कहेवी. विशेष ए के, ते वक्तव्यतामां पाठनो उचार आ प्रमाणे करवो:-- 'हे

वर्षाऋत.

वलिका विगेरे.

हेमन्त-श्रीष्म पूर्वांग विगेरे.

१. आ शब्दमां आवेला अनन्तर, पुरस्कृत अने समय-ए त्रणे शब्दोनो कर्मधारय समास करवानो छै:--श्रीअभय०. .

९. मूलच्छायाः-- सवणे भगवन्। समुद्रे सुर्यौ उदिवी-प्राचीनम् उद्गरा० १ या एव जम्बुद्दीपस्य वक्तव्यता भणिता सा एव सर्वा अपरिशेषिका अवणसमुद्रस्याऽपि भणितव्या, नवरम्-अभिलापोऽयं ज्ञातव्यः-यदा भगवन् ! लवणे समुद्रे दक्षिणार्धे दिवसो भवति, तचैव यावत्-तदा लवणसमुद्रे र्ने|}स्स-पक्षिमेः**--**अनु•

र्णं राई भवति. एएणं अभिलावेणं नेयव्वं.

१६. प्र०—जया णं भंते । लवणसमुद्दे दाहिणड्ढे पडमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ, तया णं उत्तरङ्के पडमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ, जया णं उत्तरङ्के पडमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ, तया णं लवणसमुद्दे पुरिवय-पचित्थिमेणं नेवित्थि औसिपिणी, नेवित्थि उस्सिपिणी समणाउसो !?

१६. उ० - हंता, गोयमा ! जाव-समणाउसो !.

१७. प्र०-धायइसंडे णं भंते ! दीत्रे सूरिया उदीचिपाईण-मुग्गच्छ० ?

१७. उ० — जहेन जंबुद्दीनस्स वत्तव्वया भिणया स चेव धायइसंडस्स वि भाणियव्वा, नवरं-इमेणं अभिलानेणं सब्वे आलावगा भाणियव्या.

१८. प्र०—जया णं भंते ! घायइसंडे दीवे दाहिणड्ढे दिवसे मवइ, तदा णं उत्तरड्ढे वि, जया णं उत्तरड्ढे वि तया णं घायइसंडे दीवे मंदराणं पन्वयाणं पुरित्थमपचित्थिमे णं राई भवइ !

१८. उ०-हंता, गोयमा ! एवं चेव जाव-राई भवइ.

१९. प्र० — जया णं भंते ! धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्न-याणं पुरित्थमेणं दिवसे भवइ तया णं पचित्थिमेण वि ? जया णं पचित्थिमेण वि तया णं धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्ययाणं उत्तरेणं दाहिणेणं रोई भवति ?

१९. उ० — हंता, गोयमा ! जाव-मवइ-एवं एएण अभि-लावेणं नेयव्वं जाव०-

२०. प्र० — जया णं भंते ! दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी तया णं उत्तरड्ढे ? जया णं उत्तरड्ढे तया णं धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं पुरत्थिम-पञ्चत्थिमेणं नत्थि ओसप्पिणी जाव-समणाउसो!? इसादि बधुं ते ज प्रमाणे कहेतुं, यावत्—सारे छवण समुद्रमां पूर्व पश्चिमे रात्री होय छे. 'ए अभिछापवडे बधुं जाणतुं.

१६. प्र०—हें भगवन्! ज्यारे छवण समुद्रना दक्षिगार्धमां प्रथम अवसर्पिणी होय छे त्यारे उत्तरार्धमां प्रथम अवसर्पिणी होय छे त्यारे उत्तरार्धमां प्रथम अवसर्पिणी होय छे त्यारे छवण समुद्रमां पूर्वे पश्चिमे अवसर्पिणी नथी होती, उत्सर्पिणी नथी होती, पण हे दीर्घजीवि श्रमण ! त्यां अवस्थित (फेरफार विनानो) काळ कहा। छे ?

१६. उ०—हे गौतम! हा, ते ज रीते छे अने ते यावत्— हे श्रमणायुष्मन्! इत्यादि.

१७. प्र०—हे भगवन् । धातकीखंड द्वीपमां सूर्यो ईशान खूणामां उगीने, इत्यादि पूछवुं.

१७. उ०—हे गौतम! जे वक्तव्यता जंबूदीप संबंधे कही छे ते ज वक्तव्यता बधी धातकीखंड संबंधे पण जाणवी. विशेष ए के, पाठनुं उचारण करती वखते बधा आलापको आ रीते कहेवा—

१८. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे धातकीखंड द्वीपमां दक्षिणा-र्धमां दिवस होय छे त्यारे उत्तरार्धमां पण दिवस होय छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां पण तेम होय छे त्यारे धातकीखंड द्वीपमां मंदर पर्वतोनी पूर्व पश्चिमे रात्री होय छे ?

े १८. उ०--हे गौतम! हा, ए ज रीते छे; यावत्-रात्री होय छे.

१९. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे धातकी खंड द्वीपमां मंदर पर्वतोनी पूर्वे दिवस होय छे त्यारे पश्चिमे पण दिवस होय छे अने ज्यारे पश्चिमे पण दिवस होय छे त्यारे धातकी खंड द्वीपमां मंदर पर्वतोनी उत्तरे अने दक्षिणे रात्री होय छे ?

१९. उ०-हे गौतम ! हा, ए ज रीते होय छे, अने ए अभिलापथी जाणवुं, यावत्-

२०. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे दक्षिणार्धमां प्रथम अवसर्विणी होय छे त्यारे उत्तरार्धमां पण तेम होय छे अने ज्यारे उत्तरार्धमां पण होय छे त्यारे धातकीखंड द्वीपमां मंदर पर्वतोनी पूर्व पश्चिमे अवसर्विणी नथी होती, उत्सर्विणी नथी होती ? यावत्— श्रमणायुष्मन् !

१. मूळच्छायाः—रात्री मवति. एतेन अभिळापेन ज्ञातध्यम् . यदा भगवन् ! छवणसमुद्रे दक्षिणार्धे प्रथमा अवसर्विणी प्रतिपद्यते, तदा उत्तरार्धे प्रथमा अवसर्विणी प्रतिपद्यते ! यदा उत्तरार्धे प्रथमा अवसर्विणी प्रतिपद्यते तदा छवणसमुद्रे पै। स्त्य-पक्षिमेन नैवाऽस्ति अवसर्विणी. नैवास्ति उत्सर्विणी अमण आयुष्मन् ! इन्त, गैतम ! यावत्—अमणाऽऽयुष्मन् ! धातिक खण्डे भगवन् ! द्वीपे सूर्यें। उदिची—प्राचिनम् उद्गत्य०. यथेव जम्बुद्वीपस्य वक्तव्यता भणिता सा एव धातिक खण्डस्य अपि भणितव्या, नवरम्—अनेन अभिळापेन सर्वे आळापकाः भणितव्याः यदा भगवन् ! धातिक खण्डे द्वीपे दिवसो भवति, तदा उत्तरार्धेऽपि ? यदा उत्तरार्धेऽपि तदा धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानां पे। स्त्य-पश्चिमेन रात्री भवति ? . हन्त, गीतम ? एवं चैव यावत्—रात्री भवति. यदा भगवन् ! धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानां पे। रस्त्येन दिवसो भवति. तदा पश्चिमेनाऽपि ? यदा पश्चिमेन अपि तदा धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानाम् उत्तरेण दक्षिणेन रात्री भवति ! हन्त, गौतम ! यावत्—भवति. एवम् एतेन अभिळापेन ज्ञातव्यं स्थवत्—यदा भगवन् ! दिख्णार्थे प्रथमा अवसर्विणी तदा उत्तरार्धे ? यदा उत्तरार्धे तदा धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानां पे। रस्त्य-पश्चिमेन नास्ति अवसर्विणी स्थान वितर्य प्रयमा अवसर्विणी तदा उत्तरार्धे ? यदा उत्तरार्धे तदा धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानां पे। रस्त्य-पश्चिमेन नास्ति अवसर्विणी स्थानक्ति । श्वाप्य प्रयमा अवसर्विणी तदा उत्तरार्धे ? यदा उत्तरार्धे तदा धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानां पे। रस्त्य-पश्चिमेन नास्ति अवसर्विणी स्थानक्ति । श्वाप्य प्रयमा श्वाप्य प्रयमा अवसर्विणी तदा उत्तरार्धे । यदा उत्तरार्धे तदा धातिक खण्डे द्वीपे मन्दराणां पर्वतानां पे। रस्तराणां पर्वतानां पे। रस्तराणां पर्वतानां पे। रस्तराणां पर्वतानां परस्य प्रयमा वितरस्य प्रयमा वितरस्य ।

२०. उ०-- वहंता, गोयमा । जाव-समणाउंसो !.

जहां लवगसमुद्दस्य वत्तव्यया तहा कालोदस्स विभागि-यन्वा, नवरं—कालोदस्स नामं भाणियव्यं.

२१. प्र०--अस्भितरपुक्त्वरद्धेणं भंते ! सूरिया उदीचिपाईण-मुग्गच्छ० १

२१. उ०—जहेच धायइसंडस्स वत्तव्यया तहेव अध्मितर-पुक्लरद्वस्स वि भाणियव्या, नवरं—अभिलावो जाणियव्यो जाव— तया णं अभितरपुक्लर् बे मंदराणं पुरिधम-पचित्यमेणं नेवित्य अवसिष्पणी. नेवित्य उस्सिष्पणी—अविद्य णं तत्य काले पण्णत्ते समणाउसो !.

—सेवं भंते !, सेवं भंते ! चि.

२०. उ० — हे गौतम ! हा ए ज रीते छे, यावत् -श्रमणा-युष्मन् !.

—जेम छत्रण समुदनी हकीकत कही तेम कालोद संबंधे पण समजवुं. विशेष ए के, छवणने बदले 'कालोद 'नुं नाम कहेवुं.

२१. प्र०—हे भगवन् ! अभ्वंतर पुष्करार्धमां सूर्यो ईशान खूणामां उगीने इत्यादि पूछबुं.

२१. उ० — हे गौतम! धातकी खंडनी वक्तव्यतानी पेठे अभ्यंतर पुष्करार्धनी वक्तव्यता पण कहेवी. विशेष ए के, धातकी खंडने बदले अभ्यंतर पुष्करार्धनी पाठ कहेवी अने यावत्— 'अभ्यंतर पुष्करार्धमां मंदरोनी पूर्व पश्चिमे अवसर्पिणी नथी होती, उत्सर्पिणी नथी होती, पण हे दीर्धजीवी श्रमण! सां अवस्थित काळ होय छे.

—हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे एम कही यावत्-विचरे छे.

भगवंत-अजसुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते पंचमसये पडमो उदेसी सम्मत्तो.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वैत्जीवी तपस्ति । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्सोः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाम्नमुख्यः ॥

^{9.} मूलच्छायाः —हन्त, गीतम ! यावत्-श्रमणाऽऽयुष्मन् ! यथा लवणवमुदस्य वक्तव्यता तथा कालोदस्याऽि भणितव्या, नवरम्-कालोदस्य नाम भणितव्यम्. अभ्यन्तरपुष्करार्धेन भगवन् ! सूर्या उरीची-प्राचीनम् उद्गत्य० ! यथेव धातिकवण्डस्य वक्तव्यता तथेव अभ्यनंतरपुष्करार्धस्य अपि भणितव्या, नवरम्-अभिलापो ज्ञातव्यः, यावत्–तदा अभ्यन्तरपुष्करार्धे मन्दराणां पारस्य-पश्चिमेन नैवाऽस्ति अवसर्पणी, नवाऽस्ति उसर्गिणोः अवस्थितः तत्र कालः प्रज्ञसः अमणाऽऽयुष्मन् !. तदे । भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः—अतु०

शतक ५.-उद्देशक २.

राजगृह.-ईक्सुरीवात.-पश्चात्वात.-मंदवात.-महावात.-ए वायु संबंधे दिशाओने आश्रीने पृच्छा.-द्रीपमां वाता वायु.-समुद्रमां वाता वायु.-ए वक्के लायुओनी परस्पर वात्वात.-पंदवात.-ए वायुओने वावानां कारणे.-गायुनी यशरीति गति.-वायुनी उत्तरिकार.-गायुकुम रादि द्वारा वायुकायनुं उदीरण स्वायुओ श्वास प्रश्वास ले ?-हा.-वायु मरी मरीने अनेक वार फरीयी वायुमां आवे ?-हा.-स्पृष्ट वायु मरे के अस्पृष्ट ?-स्पृष्ट वायु.-वायु शरीरसहित नीकले के शरीररिहा ?-वित्रे रीते नीकले.-ओदन-कुल्माप अने सुरानां अणुओ कोनां शरीर कहेवाय ?-अपेक्षार वनस्पतिनां-अक्षिनां-पाणीनां अने अक्षिनां शरीर कहेवाय.-अय-लेखं-वायुं-कलाई-पीसं-पाणा अने कप्रदिक्त-काट-नां अणुओ घोनां शरीर कहेवाय ?-पृथिवीनां अने अक्षिनां-हांडकुं-विलेखं हाडकुं-चामछुं-वलेखं चामछुं-विलेखं वलेखं विलेखं निक्किली स्वरी-नव अने वलेखं नास्व-ए ववानां अणुओ कोनां शरीर कहेवाय ? लेखंबिन अने अक्षितां-एवणसमुद्रनो चक्कवाल विष्क्षेम केटले ?-यावत्-लोकस्थिति-विहार,--

- १. प्र० रौयिगिहे नगरे जाव एवं वयासी: —अत्थि णं भते 1 ईसिंपुरेवाया, पच्छा वाया, मंदा वाया, महावाया वायंति ?
 - ₹. उ०−-हंता, अरिथ्.
- २. प्र०--अत्थि णे भंते ! पुरित्यमे णं ईसिंपुरेवाया, पच्छा वाया, मंदा वाया, महावाया वायंति ?
- २. उ०—हंता, अत्थि. एवं पचित्यमे णं, दाहिणे णं उत्तरे णं, उत्तरपुरित्थमे णं, दाहिणपुरित्थमे णं, दाहिणपचित्थमे णं उत्तरपचित्थमे णं.
- है. प्रo—जया ण भंते ! पुरित्थमे ण ईसिंपुरेवाया, पच्छा भाया, मंदा वाया, महावाया वायंति; तया ण पचित्थमेण वि हिसिंपुरेवाया, अया ण पचित्थमे ण ईसिंपुरेवाया तया ण पुरित्थमेण वि

- १. प्र० —राजगृह नगरमां यावत्—आ प्रमाणे बोल्या के—हे भगवन् ! ईपत्पुरोवात--थोडा वेहवाळा-थोडी भीनाशवाळा-थोडा विकणा-वायु,वनस्पति वगेरेने हितकर वायु-पथ्यवात, धीने धीने वानारा वायु-मैद वायुओ अने महावायुओ वाय छे ?
- १. उ०—हे गौतम! हा, ते वायुओ वाय छे.
- २. प्र० हे भगवन्! पूर्वमां ईपत्पुरोवात, पथ्यवात, मंदवात अने महावात छे?
- २. उ०—हे गौतम ! हा, छे. ए प्रमाणे पश्चिममां, दक्षिणमां, उत्तरमां, ईशान खूणामां, अग्नि खूणामां, नैर्ऋत खूणामां अने वायव्य खूणामां पण तेम ज समजवुं.
- ३. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे पूर्वमां ईवरपुरोवात, पथ्यवात, मंदबात अने महावात वाय छे त्यारे पश्चिममां पण ईपरपुरोवात वगेरे वाय छे ! अने व्यारे पश्चिममां ईवरपुरोवात वगेरे वाय छे । त्यारे पूर्वमां पण ते वायुओ वाय छे !

१. मूलच्छायाः—राजगृहे नगरे यावत्-एवम् अवादीतः—अस्ति भगवन् । ईषत्पुरोवाताः, पश्याः वाताः, मध्याः वाताः, महावाताः वान्ति । इन्त, अस्ति अस्ति भगवन् । पौरस्त्ये ईषत्पुरोवाताः, पश्याः वाताः, मर्दाः वाताः, महावाता वान्ति । इन्त, अस्ति एवं पश्चिमे, दक्षिणिसमन् , उत्तरिमन् १, उत्तर-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पौरस्त्ये, दक्षिण-पश्चिमे, उत्तर-पश्चिमे, चत्राः भगवन् । पौरस्त्ये ईषत्पुरोवाताः, पश्याः वाताः, मन्दाः वाताः, महावाताः, वान्तिः, तत्रा पश्चिमेऽपि ईषत्पुरोवाताः, यदा पश्चिमे ईषत्पुरोवाताः, वान्तिः, पौरस्त्येऽपि १:—अतु ।

- ₹. उ० हंता, गोयमा! जया णं पुरित्थमे णं, तया णं पचित्थमेण वि ईसिंपुरेवाया० जया णं पचित्थमेण वि ईसिंपुरे-वाया० तया णं पुरित्थमेण वि ईसिंपुरेवाया एवं दिसासु, विदिसासु.
 - ४. प्र०-अतिथ णं मंते ! दीविचगा ईसिंपुरेवाया ?
 - ४. ७०—हंता.
 - ५. प्र०-अत्थि णं भंते ! सामुद्दगा ईसिंपुरेवाया० ?
 - ५. उ०—हंता, अरिथ.
- ६. प्र०—जया णं भंते ! दीविचया ईसिंपुरेवाया० तया णं सामुद्दया वि ईसिंपुरेवाया० जया णं सामुद्दया ईसिंपुरेवाया०तया णं दीविचया वि ईसिंपुरेवाया ?
 - ६. उ०-णो इणहे समहे.
- ७. प्र०—से केणहेणं भंते ! एवं वुच्चइ, जया णं दीविचया ईसिंपुरेवाया०, णो णं तया सामुद्दया ईसिंपुरेवाया०, जया णं सामुद्दया ईसिंपुरेवाया, णो णं तया दीविच्चया ईसिंपुरेवाया० ?
- ७. उ०--गोयमा ! तेसि णं वायाणं अचमनविवचासेणं स्वणे समुद्दे वेलं नाइकमइ, से तेणहेणं जाव वाया वायांति.

- ३. उ: हे गौतम ! ज्यारे पूर्वमां ईषःपुरोवात वगेरे वाय छे त्यारे ते बधा पश्चिममां पण वाय छे अने ज्यारे पश्चिममां ईषःपुरोवात वगेरे वाय छे त्यारे पूर्वमां पण ते बधा वाय छे. ए प्रमाणे बधी दिशाओगां अने खूणाओगां पण समजवुं.
- ४. प्र०-हे भगवन्! ईपत्पुरोवात वगेरे वायुओ द्वीपमां होय छे ?
 - ४. उ० —हे गौतम ! हा, होय छे.
- ५. प्र०—हे भगवन् । ईषत्पुरोवात वगेरे बायुओ समुद्रमां होय छे ?
 - ५. उ०-हे गौतम ! हा, होय छे.
- ६. प्र०—हे भगवन् ! ज्यारे द्वीपना ईषत्पुरोवात वनेरे वायुओ वाता होय त्यारे समुद्रना पण ईषत्पुरोवात वनेरे वायुओ वाता होय ! अने ज्यारे समुद्रना ते बधा वायुओ वाता होय त्यारे द्वीपना पण ते बधा वायुओ वाता होय ?
 - ६. उ० हे गौतम ! ए वात ठीक नथी.
- ७. प्र०—हे भगवन् ! तेनुं हुं कारण के, 'ज्यारे द्वीपना ईनत्पुरोवातादि वाता होत त्यारे समुद्रना ईनत्पुरोवातादि न वाता होय ? अने ज्यारे समुद्रना ईनत्पुरोवातादि वाता होत स्यारे द्वीपना ईपत्पुरोवातादि न वाता होय ?
- ७. उ०—हे गौतम! ते वायुओ अन्योन्य व्यव्यासूत्रहे (एक वीजा एक साथे निह, पण नोखा नोखा) संचरे छे—ज्यारे द्वीपना ईषत्पुरोवातादि वाता होय त्यारे समुद्रना न वाय अने ज्यारे समुद्रना ईषत्पुरोवातादि वाता होय त्यारे द्वीपना न वाय—ए रीते ए वायुओ परस्नर विपर्यय वडे वाय छे अने ते प्रकारे ते वायुओ टवण समुद्रनी वेळाने उल्लंबता नथी ते कारणथी यावत्—पूर्व प्रमाणे 'वायुओ वाय छे 'ए रीते कहुं छे.
- १. प्रथमोद्देशके दिक्षु दिवसादिविभाग उक्तः, द्वितीये तु तास्वेत्र वातं प्रतिपिपादियिषुर्वातभेदांस्तावदिभधातुमाह—' रायिगहे ' इसादि. 'अत्थि 'त्ति अस्ति—अयमर्थः-यदुत वाता वान्तीति योगः. कीटशाः है इसाहः—' ईसिंपुरेवाय 'ति मना म् सस्नेह—(सैत्रेह)—

- र. गरमीनी मोसनमां जे शीत वायुओ वाय छे ते समुद्र तरफरी आवेला होय छे एटले ते वखते—ज्यारे शीत वायुओ वाता होय ते वखते—जमीनना उच्ण वायुओ वाता नथी अने ज्यारे शीआळानी मोसममां जे उच्च वायुओ वाय छे ते जमीन तरफथी आवेला होय छे एटले ते वखते—ज्यारे उच्च वायुओ वाता होय ते वखते—समुद्रना शीत वायुओ वाता नथी. समुद्रना वायुओ शीत होय छे अने द्वीपना (जमीनना) वायुओ उच्च होय छे—आ रीते ए वने (द्वीपना अने समुद्रना) वायुमां परस्पर विरुद्ध अने एक बीजाने उपघात करनारो गुण मोजुर होवाथी ते वने वायुओ एक साथे वाइ शके नहि, किंतु ते बेमांथी एक समये एक ज वायु वाय एटले के, ज्यारे द्वीपनो वायु वातो होय त्यारे समुद्रनो वायु न वाय अने ज्यारे समुद्रनो वायु वातो होय त्यारे द्वीपनो वायु न वाय अने ज्यारे समुद्रनो वायु वातो होय त्यारे द्वीपनो वायु न वाय—उगर जे आ वने वायुना व्यत्यासपूर्वक वावानी हकी हत जणावी छे ते आ टिप्पणमां जणावेली रीते घटती लागे छे:—उन्न०
- १. त्रेहेण सहिताः सत्रेहाः, त्रेहो हि अवश्याय-पर्यायः. " उस्ता-इति अवश्यायः-त्रेहः "-(प्रज्ञापनाटीका, प्रथमपद्गते अप्कायविचारे) ﴿ पुरोगामिषु हि वातेषु प्रायेण त्रेहो भवति-इति लेकिकवायुवाक्षिणः, अत एव अत्र ते पुरोवाताः सत्रेहाः, सन्नेहा वा उक्ताः भाषायां च त्रेह्⊸पर्यायः " शोस दिति शब्दो युज्यतेः—अतु•

^{9.} मूलच्छायाः—हन्त, गौतम ! यदा पौरस्त्ये तदा पश्चिमेऽपि ईषत्पुरोबाताः० यदा पश्चिमेऽपि ईषत्पुरोबाताः० तदा पौरस्त्येऽपि ईषत्पुरोबाताः० एवं दिशास विदिशास अस्ति भगवन् ! हैप्याः ईषत्पुरोबाताः० हन्त. अस्ति भगवन् ! सामुद्रिकाः ईषत्पुरोबाताः— ? हन्त, अस्ति यदा भगवन् ! हैप्याः ईषत्पुरोबाताः वदा सामुद्रिकाः अपि ईषत्पुरोबाताः ? यदा सामुद्रिकाः० ईषत्पुरोबाताः० तदा हैप्याः अपि ईषत्पुरोबाताः ? नाऽयम् अर्थः समर्थः तत् केनार्थेन भगवन् ! एवम् उच्यते यदा हैप्याः ईषत्पुरोबाताः० नो तदा सामुद्रिकाः ईषत्पुरोबाताः० यदा सामुद्रिकाः ईषत्पुरोबाताः० यदा सामुद्रिकाः ईषत्पुरोबाताः० वत् सामुद्रिकाः ईषत्पुरोबाताः० वत् तेनार्थेन स्वत् वत् वेतार्थेन स्वत् वत् वता वान्तिः—अनु०

वाताः 'पच्छा वाय 'त्ति पथ्या वनस्पत्यादिहिता वायवः, 'मंदा वाय 'ति मन्दाः शनैः संचारिणोऽमहावाताः, 'महावाय 'ति उद्दण्डवाताः अनल्पा—इत्यर्थः. 'पुरित्थमे णं 'ति सुमेरोः पूर्वस्यां दिशि—इत्यर्थः. एवमेतानि दिग्—विदिगपेक्षपाऽष्टौ सूत्राणि, उक्तं दिग्मेदेन वातानां वानम्, अथ दिशामेव परस्परोपनिबन्धेन तदाहः—'जया णं ' इत्यादि. इह च द्वे दिक्सूत्रे, द्वे विदिक्सूत्रे इति. अथ प्रकारान्तरेण वातस्वरूपनिरूपणसूत्रमः—तत्र - दीविचग 'त्ति दैप्या द्वीपसंवन्धिनः, 'सामुद्दग 'त्ति, समुद्रस्यैते सामुद्रिकाः. 'अन्नमन्तविचारोणं 'ति अन्योन्यव्यत्यासेन यदैके ईपत्पुरोवातादिविशेषणा वान्ति, तदा इतरे न तथाविधा वान्तीत्यर्थः. 'वेलं नाइक्कमइ 'त्ति तथाविधवातद्रव्यसामर्थ्याद् , वेलायास्तथास्वभावत्वाचेति.

१. प्रथम उद्देशकमां दिशाओंने उद्देशीने दिवस विगेरेनो विभाग जगाव्यो छे अने हवे आ बीजा उद्देशकमां पण दिशाओंने उद्देशीने द पवन संबंधी हकीकतने जणाववा सारु सौथी पहेलुं वायराना मेद संबंधे निरूपण करवाने कहे छे के, ['रायगिहे' इत्यादि.] ['अत्थि'ति] 'पवनो छे १'ए प्रमाणे संबंध करवो. केवी जातना १ तो कहे छे के, ['ईसिंपुरेवाय'ति] ईपत्परोवात-थोडा वेहवाळा-थोडी मीनारावाळा-थोडी विकाशवाळा पवनो, ['पच्छा वाय'ति] वनस्पति वगेरेने लाम-कर-पथ्य-वासु ते पथ्यवात, ['मंदा वाय'ति] धीमे धीमे संचरनारा वासुओ-मंद पवनो, ['महावाय'ति] उद्दंड-प्रचंड-पवनो-तोकानी वासुओं, ['पुरिव्यमेणं 'ति] सुमेर्स्थी पूर्व दिशामां, ए रीते ए आठ सूत्रो दिशा अने विदिशा-ख्गा-ओंनी अपेक्षाए कहेवां. आगळना प्रकरणमां पवनोना बहवा (वावा) संबंधे हकीकत कही छे अने हवे ते ज हकीकतने दिशाओंना परस्पर मेळापपूर्वक आ रीते कहे छेः ['जया णं 'इत्यादि.] आ ठेकाणे वे सूत्र दिशा संबंधी छे अने बे सूत्र खुणा संबंधी छे. हवे बीजी रीते पवनना निरूपण विषे सूत्र कहे छेः—तेगां ['दीविचग 'ति] द्वीप संबंधी पवनो, ['सामुद्दग 'ति] समुद्र संबंधी पवनो, ['अन्नमन्नविवचासेणं 'ति] परस्पर विपर्यासपूर्वक अर्थात ज्यारे अमुक जातना ईपत्पुरोवात वगेरे पवनो वहे (वाय) छे त्यारे ते ज जातना बीजा ईपत्पुरोवात वगेरे नथी वहता ['वेछं नाइक्कमइ 'ति] वेळने ओळंगतो नथी, कारण के, वायराना द्रव्योतं सामर्थ्य ज तेवा प्रकारने छे अने वेळने स्थमाव पण तेवो ज छे।

ईपत्पुरोदात-श्रे मंद-पथ्य. मुडावात.

द्वैप्य-सामुद्रिक

स मर्थ्य-स्वभः

वायुओ.

- ८. प्र०—अंत्थि णं मंते ! ईसिंपुरेवाया, पच्छा वाया, मंदा ब्राया, महावाया वायंति ?
 - ८.- ज्० हंता, अतिथ.
 - ९. प्रo- क्या णं भंते ! ईसिंपुरेवाया० जाव-वायंति ?
- २. उ०--गोय्मा ! जया णं वाउयाए अहारियं रियंति, तया णं ईसिंपुरेवाया० जाव-वायंति.
 - २०. प्रo अत्थि णं भंते ! ईसिंपुरेवाया ० ?
 - १०. उ०-हिता, अदिथ.
 - ११. प्र०--कया णं भंते। ईसिंपुरेवाया ?
- ११. उ०--गोयमा ! ज्या णं वाउयाए उत्तरिकरियं रियइ, तया णं ईसिंपुरेवाया जाव-वायंति.
 - १२. प्र०--अस्थि णं मंते ! ईसिंपुरेवाया० १
 - १२. उ०--हंता, अत्थि.
 - १३. प्र०-क्या णं भंते ! ईसिंपुरेवाया, पच्छा वाया० ?

- ८. प्र०—हे भगवन् ! ईषत्पुरोत्रात, पृथ्यवात, मंदवात अने महावात छे ?
 - ८. उ०--हे गौतम ! हा, छे.
- ९. प्र०—हे भगवन् ! ईषत्पुरोवात वगेरे वायुओ क्यारे वाय छे !
- ९. उ०--हे गौतम ! ज्यारे बायुकाय पोताना स्वभावपूर्वक गति करे छे त्यारे ईषत्पुरोवात वगेरे वायुओ वाय छे.
 - १०. प्र०--हे भगवन् ! ईषत्पुरोवात वगेरे वायुओ छे ?
 - १०. उ०--हे गौतम ! हा, छे.
- ११. प्र०-हे भगवन् ! ईपत्पुरोवात वगेरे वायुओ क्यारे वाय छे ?
- ११. उ०—हे गौतम! ज्यारे बायुकाय उत्तर क्रियापूर्वक— वैक्रिय शरीर बनावीने-गति करे छे त्यारे ईषतपुरोवात वगेरे बायुओ वाय छे.
 - १२. प्र०-हे भगवन् ! ईषत्पुरोवात वमेरे वायुओ छे !
 - १२. उ०--हे गौतम ! हा, छे.
- १३. प्र०--हे भगवन् ! ईषत्पुरौवात वगेरे वायुओ क्यारे वाय छे ?

^{9.} मूलच्छायाः —अस्ति भगवन् ! ईषत्पुरोवाताः, पथ्याः वाताः, मन्दाः वाताः, महावाताः वान्ति? हन्त, अस्ति. कदा भगवन् ईषत्पुरोवाताः । बावत् –वान्ति ? गौतम ! यदा वायुकायो यथारीतं रीयते, तदा ईषत्पुरोवाताः । यावत् –वान्ति अस्ति भगवन् ! ईषत्पुरोवाताः । हस्त, अस्ति भगवन् ! ईषत्पुरोवाताः । वैवत्पुरोवाताः । वैवत्पुरोवाताः । वैवत्पुरोवाताः । वैवत्पुरोवाताः । इषत्पुरोवाताः । विवत् भगवन् ! ईषत्पुरोवाताः । इषत्पुरोवाताः । विवत् । विवत

१२. उ०—गीयमा! जया णं वाउकुमारा, वाउकुमारीओ अपणो वा, परस्स वा, तदुभयस्स वा अद्वाए वाउकायं उदीरेंति, तया णं ईसिंपुरेवाया, जाव-वायंति.

१४. प्र०-वाउयाए णं भंते 1 वाउयायं चेव आणमंति वा, पाणमंति वा० १

१४. उ०--जहा खंदए तहा चत्तारि आलावगा नेयव्वा अणेगसयसहस्स, पुद्वे उदाइ, ससरीरी निक्समइ. ?३. उ०—हे गौतम! ज्यारे वायुकुमारो अने वायुकुमारीओ पोताने, बीजाने के बन्नेने माटे वायुकायने उदीरे छे त्यारे ईक्तपुरोवात वगेरे वायुओ वाय छे.

१४. प्र०--हे भगवन् ! ह्युं, वायुकाय, वायुकायने ज श्वासमां ले छे अने नि:श्वासमां मूके छे !

१४. ७०—हे गौतम ! ए संबंधे बधुं स्कंदक उदेशकमां कहा। प्रमाणे जाणवुं यात्रत्—(१)अनेक लाखतार मरीने, (२) स्पर्श पान्या पछी, (३) मरे छे अने (४) शरीर सहित नीकळे छे, ए रीते चारे आलापक कहेता.

२. अथ वातानां वाने प्रकारान्तरेण वातस्करपत्रयं स्त्रत्रयेण दर्शयन्नाह:-' अत्य णं ' इत्यादि. इह च प्रथमवानयं प्रस्तावनार्थम्—इति न पुनरुक्तमित्याशङ्कनीयम्. ' अहारियं रियंति ' ति रीतं रीतिः स्वभाव इत्यर्थः—तस्यानितक्रमेण यथारीतम्—रीयते गच्छिति—यथा स्वाभाविक्या गत्या गच्छितीत्यर्थः. ' उत्तरिकिरियं ' ति वायुक्तायस्य हि मूल्झरीरमौदारिकम्, उत्तरं तु वैक्तियम्. अत उत्तरा उत्तरशरीराश्रया क्रिया गतिलक्षणा यत्र गमने तदुत्तरिक्तियम्, तद्यथा भवतीत्येवं रीयते गच्छिति. इह चैकस्त्रेणेव वायुवानकारणत्रयस्य वक्तुं शक्यत्वे यत् स्त्रत्रयकरणं तद् विचित्रत्वात् स्त्रगतेरिति मन्तव्यम्. वाचनान्तरे खाद्यं कारणं महावातवर्जितानाम्, द्वितीयं तु मन्दवातवर्जितानाम्, तृतीयं तु चतुर्णामध्यक्तिति. वायुकायाधिकारादेवेदमाहः—' वाउयाए णं ' इत्यादि ' जहा संदए ' इत्यादि तत्र प्रथमो दर्शित एव. ' अणेगे ' इत्यादिर्दितीयः. स चैवमः—' वाउयाए णं मंते ! वाउयाए चेव अणेगसयसहस्तखुत्तो उद्यायित्ता उद्यायिता तत्थेव मुज्जो मुज्जो पचायाइ ! हता, गोयमा ! '. ' पुट्ठे उदाइ ' ति तृतीयः स चैवमः—' से मंते कि पुट्ठे उदाइ, अपुट्ठे उदाइ ? गोयमा ! पुट्ठे उदाइ, नो अपुट्ठे '. ' ससरीरी ' इत्यादिश्चतुर्थः. स चैवमः—' से मंते ! किं ससरीरी निक्तवमइ, असरीरी ! गोयमा ! सिय ससरीरी ' इत्यादि.

-समाधान.

-समाधान. स्रूती अने वाचना.

नी भलामण-

२. हवे पवनोना बहुवा (वावा) मां पवनोनां त्रण स्वरूप बने छे, अने प वातने। बीजे प्रकारे त्रण सूत्र द्वारा द्वीवे छेः १ अल्थि णं ' इलादि] गं०—आ सूत्र तो आगळ आवी गयुं छे ते छतां फरीवार तेने अहीं शा माटे द्वीव्युं? समा०—चाछ प्रकरणमां ए सूत्र ध्रस्तावनारूपे मूत्र छे अने तेने फरीवार दर्शाववानुं पण ए ज कारण छे माटे अहीं पुनरित थइ छे एम गणवानुं नथी। [' अहारियं ' ति] वायुओ, पोतानी स्वाविकमा गतिथी वहे (वाय) छे. [' उत्तरिकरियं ' ति] वायुकायनुं मूळ शरीर तो औदारिक छे अने वैक्रिय शरीर एनं उत्तर शरीर छे माटे कहे छे के, जे गमन उत्तर शरीरने आश्रीने थतुं होय—उत्तर शरीरपूर्वक थतुं होय—ते गमन 'उत्तरिकय' कहेवाय, अर्थात् वायुओं वैक्रिय शरीरवंडे वाय छे. शं०—आयुने वावानां त्रण कारणो एक ज सूत्र द्वारा जणावी शकाय छे तो पण ते माटे त्रण सूत्रो शा माटे कर्या १ समा०—सूत्र करवानी खूबी विन्त्र छे ! माटे ए रीते थयुं छे. बीजी वाचनामां तो ए त्रणे कारणो जूदा जूदा वायुने वहवानां दर्शाव्यों छे:—पेछं कारण महावायु सिवाय अन्य वायुओने वहवानुं छे, बीजुं कारण महावायु सिवाय अन्य वायुओने वावानुं छे अने त्रीत्र कारण चरे वायुओने व्यावनुं छे अने ए हेतुथी त्रणे सूत्रो जूदां करवां ए व्याजबी छे. वायुकाय संबंधे वायुकाय संबंधे एक बीजी वात जणाववाने कहे छे के, [' खाडवाए णं ' इत्यादि.] [' जहा खंदए ' इत्यादि.] वायुकाय संबंधे जे त्रण आळापक कहेवाना कक्षा छे तेनां प्रथम आळापक तो देखाड्यो, जा हैं ['अणेग '— इत्यादि.] ए बीजो आळापक छे अने ते आ प्रमाणे छे:—' से मंते! किं पुटे उदाइ ता तत्थेव मुज्जो मुज्जो प्रचायाइ १ हंता गोयमा ! ' [' पुटे उदाइ 'तो] ए त्रीजो आळापक छे अने ते आ प्रमाणे छे:—' से मंते! किं ससरीरी निक्षमइ, असरीरी १ गोयमा ! सिय ससरीरी ' इत्यादि.] ए चोथो आळापक छे अने ते आ प्रमाणे छे:—' से मंते! किं ससरीरी निक्षमइ, असरीरी शोयमा ! सिय ससरीरी ' इत्यादि.

ओदन विगेरे.

१५. प्र०— अह मंते ! उदणी, कुम्मासी, सुरा एए णं किं— १५. प्र०—हे मगवन् ! ओदन, कुल्माव अने मदिरा, ए सरीरा ति वत्तव्वं सिया ? त्रणे द्रव्यो क्यां जीवनां शरीरो कहेवाय ?

^{9.} मूलच्छायाः—गौतम ! यदा वायुकुमाराः, वायुकुमार्थः आत्मनो वा, परस्य वा, तदुभयस्य वा अर्थाय वायुकायम् उदीरयन्ति, तदा कृष्यस्युरोवाताः, यावत्—वान्ति. वायुकायो भगवन् ! वायुकायं चैव आनन्ति वा, प्राणन्ति वा ० १ यथा स्कन्दके तथा चत्वारः आलापकाः ज्ञातव्याः, अनेकशतसदस्यम्, स्पृष्टम् उदवति, सशरीरी निष्कामति.

१. जूओ भ० प्र० खं० पृ० २२६.

^{ी.} अथ भगवन् ! ओदनः, क्रल्मापः, सुरा एवे किंशरीरा इति वक्तव्यं स्यातः - अनु

१५. उ०-मीयमा ! उदण्णे, कुम्मासे, सुराए य जे घणे दन्ते एए णं पुन्त्रभावपत्रवणं पडुच वणस्सइजीवसरीरा, तओ पच्छा सत्थातीं आ, सत्थपरिणामिआ, अगणिज्झामिया, अगणि-झूसिया, अगणिसेविया, अगणिपरिणामिया अगणिजीवसरीरा ति वत्तव्यं सिया, सुराए य जे दवे दव्वे एए णं पुट्यभावपन्नवणं पडुच आउजीवसरीरा, तओ पच्छा सत्थातीआ, जाव-अगणि-कायसरीरां इ वत्तव्वं सिया.

१६. प्र०--अह णं भंते! अये, तंबे, तउए, सीसये, उवले, कसिंडिया-एए णं किंसरीरा इ वत्तव्वं सिया ?

१६. ७०--गोयमा ! अये, तंबे, तउए, सीसए, उवले, कसदिआ-एए णं पुञ्चभावपत्रवणं पडुच पुढवीजीवसरीरा; तओ पच्छा सत्थातीआ, जाव-अगणिजीवसरीरा इ वत्तव्वं सिया.

ं १७. प्र०--अह णं भंते ! अड्डी, अड्डिज्झामे, चम्मे, चम्म-ज्झाम, रोम, रोमज्झामे, सिंगे, सिंगज्झामे, खुरे, खुरज्झामे, नखे, नखज्झामे-एए णं किंसरीरा इ वत्तव्वं सिया ?

१७. ड०--गोयमा ! अही, चम्मे, रोमे, सिंगे, खुरे, नहे-एए णं तसपाणजीवसरीरा. अद्विज्ञामे, चम्मज्ञामे, रोम-ज्ञामे, सिंग-खुर-णहज्झामे-एए णं पुष्त्रभावपत्तवणं पडुच तस-पाणजीवसरीराः तओ पच्छा सत्थातीआ, जाव-अगणि ति वत्तव्वं सिया.

१८. प्र०-अह भंतें ! इंगाले, छारिए, भुसे, गोमए-एए णं किंसरीरा इ वत्तव्वं सिया ?

१८. उ०-गोयमा ! इगाले, छारिए, बुसे, गोमए-एए

१५. उ०-हे गौतम! ओइन, कुल्माव अने मदिरामां जे चन (कठण) पदार्थ छे ते पूर्वभाव प्रज्ञापनानी अपेक्षाएं बनस्पति जीवनां शरीरो छे. अने ज्यारे ते ओदन बगेरे द्रव्यो (खाणीया वगेरे) शस्त्रोथी कूटाय छे, शस्त्रोधी परिणमित-नवा आकारनां धारक-धाय छे अने अग्निजी तेना वर्णी (रंगी) बदलाय छे, अग्निथी इसित-पूर्वना स्वभावने छोडनारां-थाय छे, अग्निथी नवा आकारनां धारक बने छे त्यारे ते द्रव्यो अग्निनां शरीरो कहेवाय हे, तथा सुरा (मदिरा)मां जे प्रवाही पदार्थ छे ते पूर्वभाव प्रज्ञापनानी अपेक्षाए पाणीना जीवनां शरीरो छे अने ज्यारे ते प्रवाही भाग शस्त्रथी कूटाय छे यावत्-अग्निथी जुरा रंगने धारण करे छे त्यारे ते भाग, अग्निकायनां शरीरो छे एम कहेवाय छे.

१६. प्र०-हे भगवन् ! छोढ़ं, तांबुं, त्रपु-कछाइ, सीसुं, बळेलो पत्थर-कोपलो अने कसहिका-काट, ए बधां द्रव्यो कया जीवनां शरीरो कहेवाय ?

१६. उ०—हे गौतम ! छोडं, तांबुं, कळाइ, सीसुं, कोयछो अने काट, ए बधां पूर्व भाव प्रज्ञापनानी अपेक्षःए पृथिवीना जीवनां शरीरो कहेवाय अने पछी-शस्त्र द्वारा कूटाया पछी-यावत्-अग्निना जीवनां शरीरो कहेवाय.

१७. प्र० — हे भगवन् ! हाडकुं, आगथी विकृत-बगडेल→ थएल हाडकुं, चामडुं, आगधी विकृत थएल चामडुं, रंबाडां, आगथी विकृत थंएल हंवाडां, खरी, आगथी विकृत थएल खरी, नख, अने बळेल नख; ए बधां कया जीवनां शरीरो कहेवाय ?

१७. उ०-हे गौतम ! हाडकुं, चामडुं, हंवाडां, खरी अने नख, ए बर्ग त्रस जीवनां शरीरो कहेवाय अने बळेळ हाडकुं, बळेल चामडुं, बळेल रंगाडां, बळेल खरी अने बळेल नख, ए बधां पूर्व भाव प्रज्ञापनानी अपेक्षाए त्रस जीवनां शरीरो कहेवाय अने पछी-शस्त्र द्वारा संघद्दित थया पछी-यावत्-अग्निना जीवनां शरीरो कहेवाय.

ं १८. प्र०—हे भगवन् ! अंगारो, राख, भुंसो अने छाणुं, ए बधां कया जीवनां शरीरो कहेवाय ?

१८. उ० - हे गौतम ! अंगारो, राख, मुंसो अने छाणुं, ए णं पुन्वभावपत्रवणं पडुच एगिदियजीवसरीरप्ययोगपरिणामिया बघां पूर्व भाव प्रज्ञापनानी अपेक्षाए एकेंद्रिय जीवनां शरीरो

१. मूळच्छायाः--गौतम ! ओदने, कुल्माषे, सुन्याथ यानि धनानि हव्याणि एतानि पूर्वभावप्रज्ञापनां प्रतीत्य वनस्पतिजीवशरीराणि, ततः पश्चात् शस्त्रातीतानि, शस्त्रपरिणामितानि, अभिष्यामितानि, अभिज् (इर्) वितानि, अभिसेनितानि, अभिपरिणामितानि अभिजीवशरीराणि इति वक्तव्यं स्मात्, सुरायाश्च यानि द्रशे द्रव्याणि एतानि पूर्वभावप्रज्ञापनां प्रतीत्य अञ्जीवशरीराणि, ततः पश्चात् शस्त्राऽतीतानि, यावत्-अग्निकायशरीराणि, इति वक्तव्यं स्मात्. अथ भगवन् ! अयः, ताम्रम्, त्रपुः, सीसकम्, उपलः, कटः, एते किंशरीरा इति वक्तव्यं स्मात् ? गीतम ! अयः, ताम्रम्, त्रपुः, सीसकम् , उपलः, कटः-एते पूर्वभावप्रज्ञापनां प्रतीत्य पृथिवीजीवशरीराः, ततः पश्चात् श्रह्माऽतीताः, यावत्-अग्निजीवशरीराः इति वक्तव्यं स्यात् . अथ भगवन् ! अस्थि, अस्थिध्यामम्, चर्म, चर्मध्यामम्, रोग, रोमध्यामम्, धहगम् , शहध्यामम्, धुरम्, धुरध्यामम्, नलः, नलध्यामम्, एतानि किंशरीराणि इति वक्तव्यं स्यात् ? गौतम । अस्य, चर्म, रोम, शहगम्, क्षरः, नखः-एते त्रसप्राणजीवशरीराणि. अस्थिध्यामम्, चर्मव्यामम्, रोमध्यामम्, श्टर्ग-क्षर-नखध्यामम्, एतानि पूर्वभावप्रहापनौ प्रतीत्य त्रसप्राणनीवसरीराणि ; ततः पश्चात् सस्रातीतानि, यावत्-अप्तिः इति वक्तव्यं सात्. अथ भगवन् ! अङ्गारः, क्षारकम्, बुसम्, ओमयम्-एते किंशरीत इति वक्तव्यं स्यात् ? गौतम ! अङ्गारः, क्षारकम्, बुसम्, गोमयम्-एते पूर्वभाव-प्रज्ञापनां प्रतीत्य एकेन्द्रियजीवशरीरप्रयोगपरिणामिताः-अनु०

वि⁹, जान-पंचिदियजीवसरीरणओगपरिणामिया नि. तओ पच्छा कहेवाय अने यावत्-पथासंभव पंचेदिय जीवनां शरीरो पण सत्थातीया, जान-अगणिजीवसरीरा इ वत्तवं सिया. कहेवाय. तथा शस्त्र द्वारा संघटित थया पछी यावत्-अग्निना जीवनां शरीरो कहेवाय.

३. वायुकायश्चिन्तितः, अथ वनस्पतिकायादीन् शरीरतश्चिन्तयन् आहः—' अह ' इत्यादि. ' एए णं ' ति एतानि. ' णं ' इसछंकारे. ' किंसरीर ' ति केषां शरीराणि. ' सुराए य जे घणे ' ति सुरायां द्वे द्रव्ये स्याताम्-धनद्रव्यम् , द्रवद्रव्यं च , तत्र यद् धनद्रव्यम् ' पुञ्चभावपत्रवणं पडुच ' ति अतीतपर्यायप्ररूपणामङ्गीकृत्य वनस्पतिशरीराणि, पूर्वं हि ओदनादयो वनस्पत्यः. ' तओ पेच्छ ' ति वनस्पतिजीवशरीरवाच्यत्वाऽनन्तरमग्निजीवशरीराणीति वक्तव्यं स्यादिति संबन्धः. किंभूतानि सन्ति शहसाहः-' सत्यातीय र ति रास्त्रेण उद्खल-मुशल-यन्त्रकादिना करणभूतेनातीतानि अतिक्रान्तानि पूर्वपर्यायमिति रास्त्रातीतानि. 'सत्थपरिणापिय ' ति शस्त्रेण परिणामितानि कृतानि नवपर्यायाणि रास्त्रारिणामितानि. ततश्च 'अगणिज्झामिय 'ति वहिना ध्यामितानि स्थामीकृतानि स्वकीयवर्णत्याजनात्, तथा ' अगाणिझूसिय ' ति अग्निता झोषिताने पूर्वस्वभावक्षपणात्, अग्निता सेवितानि वा 'जुनी प्रीति-सेवनयोः' इसस्य घातोः प्रयोगात्. 'अगणिपरिणामियाइं 'ति संजाताग्निपरिणामानि औष्ण्ययोगात्. अथवा 'सत्थातीआ ' इत्यादी शस्त्रमिरेव. 'अगणिज्झामिया ' इत्यादि तु तह्रचाख्यानमेवेति. 'उवले 'ति इह दम्धपापाणः. 'कसष्टिय 'त्ति कट्टः. ' **आ**हुज्झामें ' ति अस्थि च तद् ध्यामं च अग्निना ध्यामलीकृतम् आपादितपर्यापान्तरमित्यर्थः. ' इंगाले ' इत्यादि. अङ्गारो निर्ज्विलितेन्धनम्. ' छारिए ' ति क्षारकं भस्त. ' मासि ' ति बुसम्. ' गोमए ' ति छगणम्. इह च बुस-गोमयौ भूतार्थायानुइत्या दग्वावस्थौ प्राह्मौ, अन्यथा अग्निध्यामितादिवक्ष्यमाणविशेषणानामनुपपत्तिः स्यादिति. एते पूर्वभावप्रज्ञापनां प्रतीस्य एकेन्द्रियजीवैः शरीरतंया प्रयोगेण खळापारेणं परिणामिता ये ते तथा-एकेन्द्रियशरीराणि-इत्पर्थः. 'अपः 'समुचये. 'यावत् ' करणाद् द्वीन्द्रियजीवशरीरप्रयोगपरिणामिता अपि-इत्यादि दर्यम् द्वीन्द्रियादिजीवशरीरपरिणतत्वं च यथासंभवमेव, न तु सर्वपदेषु-इति, तत्र पूर्वमङ्गारो भरम च एकेन्द्रियादिशरीररूपं भवति, एकेन्द्रियादिशरीराणामिन्धनत्वात्. बुसं तु यत्र-गोधूमहारेतावस्थायामेकेन्द्रियशरीरम्, गोमयस्तु तृणाचवस्थायामेकेन्द्रियश्चरीरम्, द्वीन्द्रियादीनां तु गत्रादिभिभेक्षणे द्वीन्द्रियादिशरीरमपि.

३. आगळना प्रकरणमां वायुकाय संबंधे चिंतन कर्युं छे अने हवे वनस्पतिकाय विगरेना शरीर संबंधी चिंतन करतां जणावे छे के, ['अह ं इत्यादि] ['एए णं''ति] ए [किंसरीर 'ति] कोनां शरीरो छे १ ['सुराए य जे घणे 'न्ति] सुरा-दारु मां वे जातनी चीजो छे. एक तो कठिन वस्तु-गोळ-अने बीजी प्रवाही वस्तु-पाणी. तेमां जे कठिन वस्तु छे ते, ['पुव्यभावपन्नवणं पडुच 'त्ति] तेना जूना आकारनी अपेक्षाए वनस्पतिनां शरीरो छे. कारण के, चोखा तथा गोळ वगेरेनी पूर्वावस्था वनस्पतिरूप छे. ['तओ पच्छ 'ति] तेओ वनस्पतिनां शरीरो कहवाय त्यार पछी अग्निजीवनां शरीरो कहेवाय छे-एम संबंध करवो. तेओ (चोखा वगेरे) केवा थया पछी अग्निनां शरीरो कहेवाय ? तो कहे छ के, [' सत्थातीय ' ति] खाणीयो, सांबेछं वगेरे यंत्रोवडे कूटाया पठी अर्थात् खाणीयो वगेरे यंत्रोवडे चोखा वगेरे पदार्थनी आगली अवस्था बदलाया पछी ते चोखा वगरे 'शस्त्रातीत ' कहेवायः ['सत्थपरिणामिय ' ति] शस्त्रवडे अरिणाम--नवा आकार-ने पामेला-चोखा बगेरे ' शस्त्रपरिणामित ' कहेवाय, त्यार बाद [' अगणिज्झामिय ' ति] तेओनो रंग छुटी गयो-बदली गयो-होवायी अग्निवेड काळा करेला, तथा [' अगणिज्झसिय ' ति] पूर्वनो स्वभाव सपी गएलो होवाथी ' अधिक्षोषित ' कहेवाय अथवा अधिजोषित-अधिथी सेवाएल कहेवायः ['अगणिपरिणामियाइं 'ति] हवे तेओ उनां थयां छे माटे अभिना परिणामत्राळां कहेवाय अथवा 'शस्त्रातीत ' विगरे शब्दोमां वपराएला शस्त्र शब्दनो अधि अर्थ ज समजवोः ['अगणिझामिया '] इत्यादि शब्दोनुं विवेचन तो अधि आवी गएलुं ज छे ['उवले ' ति] अहीं 'उपल 'शब्दनो अर्थ 'बळेलो पथरो 'छे. ['कसहिय 'ति] कह-काट, ['अहिज्झामे 'ति] अग्निवडे पर्यायान्तर-बीजा . स्वरूप-ने पामेलुं हाडकुं अने तेनुं ध्याम-बळेलो भाग, ['इंगाले' इत्यादिः] अंगार-बळेल इंघणुं-अंगारो, ['छारिए'त्ति] राख, ['भुसि' ति] भुंसो-कुंवळ, ['गोमए' ति] छगण-छाण, आ स्थळे 'भुंसो 'अने 'छाण 'ए बन्ने बळेलां लेवां, जो एम न करवामां आवे तो आगळ कहेलां ' अभिध्यामित ' वंगरे विशेषणो अणचटतां व्यर्थ अश्च जाय छे. ए बन्ने (कुंबळ अने छाण) पूर्वनी अपेक्षाए एकेंद्रिय जीवनां शरीरो छे अर्थात् एकेंद्रिय जीवोए पोतानी कियावडे तेओने पोतानी साथे ['परिणामिया वि³ 'ति] परिणमावेला छे-एथी ज ए, एकेंद्रिय जीवोनां शरीरो गणाय छे. अहीं 'यावत्' शब्द मूक्यो छे माटे 'बेइंद्रिय जीवोए पोतानी साथे परिणमावेळा ' इत्यादि बात पण

]4- **기회]**약기

શસ તીત.

मग्नि—शस्त्र.

परिणामित.

१. मूलच्छायाः—अपि, यावत्-पञ्चिन्द्रियजीवशरीरप्रयोगपरिणामिताः अपि. ततः पश्चात् शस्त्राऽतीताः, यावत्-अग्निजीव-शरीराणि इति वक्तव्यं स्वात्ः—अनु०

१. अत्र मूले 'कसिटय 'ति दृश्यते, अस्यार्थः श्रीटीकाकारेण 'कहे.' इति कृतः, कृष्टश्च लोहादीनां मलः—यो भाषायां 'काट 'शब्देन ख्यातः. भगवतीअवच्पर्यां तु 'कसिट्टयां स्थाने सकिहिका (१) दृश्यते, अर्थश्वास्य तत्र टीकाकारवत् 'कहं दिति कृतः—अयमेव अर्थः सुसंगतोऽत्र, तथाऽपि केचित् कषपिट्टका—कसिट्टया—इरयेतयोः साधर्म्यम् अवलोक्य 'कहं 'इसर्थे पकार—पकारौ आरोप्य 'कषपृट्ट 'इति लपन्ति—कषपृट्ट इति च भाषायाम् 'कसोटी शब्देन ख्यातः पाषाणविशेषः—अनु०

१. अहींनो 'णं 'शन्द अलंकारसूचक छे. २. आ शब्दमां प्रीति अने सेवा अर्थनाळो 'खुव 'धातु वपराएलो छे. ३. 'अपि ' शब्दनो इस्मुचय अर्थ छे:—श्रीअभय०

समजवी. 'बेइंदिय जीनीए शरीररूपे परिणमावेछ 'ए अर्थनो संबंध बधा पदो साथे न करवो, पण ज्यां ते घटी शके तेम होय त्यां ज करवो, तेमां अंगारो अने राख, ए बने, तेनी पहेली अनस्थामां एकेंद्रियनां शरीररूपे हतां, कारण के, अंगारो के राख (लीला लाकडामांथी थएल सूका) लाकडानी बने छे अने ते लीखें लाकडुं एकेंद्रिय जीन होय छे माटे ते अंगारा के राखने एक इंद्रियना शरीररूपे जणावनी ते खोढ़ें नथीं। सुनो पण, तेनी पहेली स्थितिमां एकेंद्रिय जीनना शरीररूप हतों, कारण के ते, लीला जन अने घडंमांथी बने छे अने लीला जन तथा वर्ड एकेंद्रिय छे ए बान सुपसिद्ध ज छे. छाण ए, एकेंद्रियनुं शरीर गणाय छे. कारण के, ज्यारे गणाय वर्गर पशुओ वास, मुंगों के खाण वर्गरे खाय छे त्यारे ते ज चीजोमांथी छाण नीपने छे अने ते बधी चीजो एकेंद्रिय जीनस्त छे मटे छाणने एकेंद्रियनुं शरीर कहेंनामां हरकत नथीं। वळी ज्यारे गाय वर्गरे पशुओ वे इंद्रियवाळा (जे जीवने चामडी अने जीभ एवी वे ज इंद्रियो छे एवा) जीवनुं भक्षण करे छे त्यारे ते छाण, बेइंद्रिय जीवनुं शरीर कहेंनाय छे. कारण के, ए छाण बेइंद्रिय जीवना शरीरनुं बनेल छे. ए रीते जेटली इंद्रियवाळा जीवनो आहार गाय वर्गरे पशुओ करे एटली इंद्रियवाळा जीवनो शरीर तेने (छाणने) गणावुं.

लवण समुद्र.

?९. प्र०—लैवणे णं भंते ! समुद्दे केवइयं चक्कवाल-

१२. उ० - एवं णेयव्वं, जाव-लोगहिई, लोगाणुमावे.

- सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति भगवं जाव-विहरइ.

१९. प्र०—हे भगवन् ! स्वण समुद्रनो चक्रवाल विष्कंभ केटलो यह्यो छे !

. १९. उ०—हे गौतम ! ए प्रमाणे-पूर्वे कहा। प्रमाणे-जाणवुं यावत्-टोकस्थिति, लो हानुभाव.

—हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे एन कही भगवान् गीतम यावत् – विहरे छे.

भगवंत-अज्ञसुद्दम्मसामिपणीए सिरीभगवदंसुते पंचमसये दुइओ उदेसी सम्मत्ती.

४ . पृथिव्यादिकायाधिकारादप्येष्कायरूपस्य छवणोद्धेः खरूपमाहः—' छवणे णं ' इत्यादि. ' एवं णेयव्यं ' ति उक्ताभिछा-पानुगुणतया नेतव्यं जीवाभिगमोक्तं छवणसमुद्रसूत्रम्. किमन्तम् १ इत्याहः—' जन्न छोग –' इत्यादि. तचेदम्ः '' केवइयं

'' लवणे णं भंते ! समुद्दे कि.संठिए पण्णते ?

गोयमा ! गोतित्थसंठिते, नावा-संटाणसंठिते, सिप्पि-संपुडसंठिए, आस खंधसंठिते, वलभिसंठिते—वहे-वलयागारसंटाणसंठिते पण्णते.

लवणे ण भंते ! समुद्दे केवतियं चक्कवालविक्खंभेणं ? केवितयं परिक्खेत्रेणं ? केवितयं उन्तेहेणं ? केवितयं उस्सेहेणं ? केवितयं सन्वरमेणं पण्णते ?

गोयमा ! ठनणे णं समुद्दे दो जोयणसय-सहस्साई चक्कवालिव बंभेणं, पण्णरस जोयणसयसहस्साई, एकासीतिं च सहस्साई, सतं च इगु(ण)यालं किंचि विसेसूणे परिक्खेवेणं, एगं जोयणसहस्सं उन्वेधेणं, सोलस जोयणसह-स्साई उस्सेहेणं, सत्तरस जोयणसहस्साई सन्वग्गेणं पण्णतः.

जइ णं भेते ! लवणसमुद्दे दो जोयणसतसहस्याई चक्कवालविक्खंमेण, पण्णरस जोयणसतसहस्साई एकासीति च सहस्याई, सतं च इगु(ण)यालं किंति विसेसूणे परिवखेवेणं, एगं जोयणसहस्सं उन्वेधेणं; सोलस जोयणस-हस्साई उस्सेधेणं, सत्तरस जोयण-सहस्साई सन्दर्गणं पण्णते कम्हा णं भेते ! लवणसमुद्दे जंबुद्देवं नो उविलेति, नो उप्पीलेति नो चेव णं एकोदगं करैति ?

गोयमा । जंबुद्दीवे णं चीत्रे मरहे-रवण्सु वासेसु अरहंत-चक्कविट्ट - इस्टदेक्, वासुदेवा, चारणा, विव्वाधरा, समणा, समणीओ, सावया,

" हे भगवन् ! लवण समुद्रनुं संस्थान (आकार) केंद्रं कहां छे !

हे गौतम! गोतीर्थ जैवं, नौकानी जेवं, छीपना संपुटनी जेवं, अश्वस्कंधनी जेवं, वलभीनी जेवं, वृत्त अने बलयना आकारनं कधुं हे.

हे भगदन्! छवण समुद्रतो चक्रवाल विष्कंभ केटलो कहा। छे ! परिक्षेप केटलो कहा। छे ! उद्देच केटलो कहा। छे ! उत्सेप अने सर्वाप्र केटलुं कहां छे !

है गीतम । लवण समुद्रनी चकवालविष्कंभ बे लाख योजननी छे, पन्नर लाख, एकाशी हजार अने एकसंने ओगणवाळीश योजन उपरांत थोडो घणी वधारे ओछो परिक्षेग छे, एक हजार योजन उदेश छे, सोळ हजार योजन उरसेंध छे अने सत्तर हजार योजन सर्वे प्र कह्युं छे.

है भगवन् ! जो लवणसमुद्रतो चक्रागळविष्टं म बे लाख योजनतो हे, पत्तर लाख, एकाझी हजार अने एकसोने औ। णचाळीश योजन उपरांत थोडो घणो वधारे ओहो परिक्षेप छे, एक हजार योजन उद्देश हे, सोळ हजार योजन उत्सेघ छे अने सत्तर हजार योजन सवीप कहुं छे तो है भगवन् ! ए लवण समुद्र (एवडो मोटो होवाथी) आ जंब्रीप नामना द्रीपने शा माटे खुबाबतो नथी, शा माटे सबोळतो नथी अने शामाटे जलमय करी शकतो नथी ?

हे गौतम! (आ) जंबूद्रीप नामना द्वीपमां भरत अने ऐरवत क्षेत्रीमां अरहंतो, चक्रवर्तिओ, वळदेवो, वासुदेवो, चारणो, विद्याघरो, श्रमणो,

१. मूलच्छायाः — लवणो भगवन् । समुद्रः कियान् चकवालविष्कम्भेण प्रज्ञप्तः ? एवं ज्ञातव्यम् , यावत्-क्षेकस्थितिः, लोकानुनावः तदेवं भगवन् ! , तदेवं भगवन् ! इति भगवान् यावत्-विद्रति.

१. आ बाबतने लफेती विगतवार हकीकत जीवाजीवाभिगम सत्रनी जीजी प्रतिपत्तिमां (स॰ पृ॰ ३२४) मोधाएली छे अने तेमांनी केटलीक सा प्रमाण छे:—

परिक्लेवेणं ? गोयमा ! दो जोयणसयसहस्साइं चक्कवालिक्खंभेणं. पत्ररस सयसहस्साइं, एक्कासीयं च सहस्साइं, सयं च इगुणयालं किंचि विसेसूणं परिक्खेवेणं पण्णत्ते. '' इत्यादि. एतस्य चान्ते '' कम्हा णं मंते ! लवणसमुद्दे चंत्रुद्दीवे नो उन्धीलेट् ! '' इसादि-प्रश्ने '' गोयमा ! जंबुदीवे दीवे भरहे-रवएसु वासेसु अरहंता, चक्कवड़ी '' इसारेहत्तरप्रन्थस्याऽन्ते '' लंगाड्डिइ '' इसादि द्रष्टव्यम् इति.

भगवत्सुधर्मकार्मित्रणाते श्रीभगवतीस्त्रं पद्यभशते द्वितीय उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरिवतं विवरणं समाप्तम्,

रुवणसमुद्र अने जीवाभिगम.

8. पृथिवीकाय, वनस्पतिकाय विगेरेना शरीर संबंधी हकीकत आगळना प्रकरणमां जणावी छे अने हवे अप्काय (पाणी) रूप लवणस-सुद्रतं खरूप जणावतां कहे छे के, [' लवणे णं ' इत्यादि.] [' एवं णियव्यं ' ति] जीवीभिगम नामना सूत्रमां आवेलुं लवण समुद्र संबंधी सूत्र, कहेला पाठने अनुसरतं जाणवं, ते क्यां सुधी जाणवं ? तो कहे छे के, [' जाव लोग-' इत्यादि.] ते आ प्रमाणे:-- ' तेनो घरावो केटलो कहा। छे १ हे गौतम! ने लाख योजन तो तेनी चक्रवाल विष्क्रम छे अने तेनी घेरावी पन्नर लाख, एकाशी हजार अने ओस मचालीस सी (१) योजन करतां थोडो घणो ववारे कक्षो छे ' इत्यादिः ए सूत्रनी छेवटे जणाव्युं छे के, ' हे भगवन् ! लवण समुद्र, जंबूद्वीपने नथी हुबाइतो तनुं शुं कारण ? ' इत्यादि प्रश्नना जवाबमां जणावे छे के-' हे गौतम ! जंबूद्वीप नामना द्वीपमां भरत अने ऐरवत क्षेत्रमां अरहती अने चक्रवर्तिओ महापुरुषोः विगरे महापुरुषो थाय छे अने तेओना प्रभावथी लवण समुद्र जंबूद्वीपने डुशाडी शकतो नथी ' तथा त्यार पछी जणाव्युं छे के, ' एवा प्रकारनी लोकस्वभाव छे एथी पण लवण समुद्र जंबुद्धीपने खुबाडी शकतो नथी ' इत्यादि समज्बं.

> बेडारूपः समुदेऽखिळजळचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् द्रायी यः सदुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बृहको दान्ति-शान्योः-द्यात् श्रीवीरदेवः सक्वशिवसुखं भारहा चाम्मसुख्यः॥

सावियाओ, मणुया एगधचा-(म्मा ?), पगतिभद्या; पगतिविणीया, षगतिउवसंता, पगतिपयणुकोह-माण-माया-लोभा, मिउ-मह्वसंपना, अलीमा, भइगा, विणीता-तेसि णं पणिहाते लवणे समुद्दे जंतुदीवं दीवं नो उवीहेर्ते, नो उप्पीहेरि, नो चेव णं एगोदगं करेरि " इसादि.

श्रमणीओ, श्रावको, श्राविकाओं अने एक धर्मवाळा (१) मनुष्यो रहे छे, जेओ खभावे भद्र, विनीत, अने उपरांत होय छे, खभावथी ज जेओना कोधादि कषायों मंद द्येय छे, जेओ सरळ अने कीमळ होय छे तथा जेओ जितेंदिय, भद्र, अने नम्र होय छे-तेवा मनुष्योंना प्रभावधी लवण समुद्र, जंब्दीपने डुयाडतो नथी, झबोळतो नधी अने जळमय करी शकतो नथी " इलादि:-शनु०

शतक ५.-उद्देशक ३.

अन्यती(विको .- जालग्रंथिकानुं उदाहरण .- एक समये आ भव अने परभवना अ युष्यनुं वेदन .- ए विषे अन्यतीथिकोनो मतः - ए मत मिथ्या - भिन्न भिन्न समये ते बन्ने आयुष्योनुं वेदन प्रवो≖िनमतं–नेरियक्कोमां संक्रमभारों आयुष्यसहित संक्रमे के आयुष्यस्हित संक्रमे १-अ युष्यसहित संक्रमे.-ए अध्युष्प, एके वर्श करेलुं १ पूर्व भवमां.--याव : वैमानिक.-जीवमात्रने उदेशी योनि अने आयुष्य संबंधे विचार,----

१. प्र०-- अंच उत्थिया णं मते । एवम १३ वसंति, भासंति, पण्णवंति, एवं परूबेतिः-से जहा नामए जालगंठिया सिया, आणुपुर्विंगिदियो, अर्ण रगिहिया, परंपरगिहिया, अन्नमन्नगिहिया, अन्नमचगरुयत्ताए, अन्नमचभारियत्ताए, अन्नमचगरुयसंभारिय-त्ताए, अत्रमत्रघडताए जाव-चिद्वइ, एवापेव बहूणं जीवाणं बहुसु आजाइसहस्सेसु बहूई आउयसहस्साई आणुपव्विगढियाई, जान-चिहंति. एगे वि य्ंणं जीवे एगेणं समयेणं दो आउयाइं पडिसंवेदेइ, तं जहाः-इहंभवियाउयं च परभवियाउयं च. जं समयं इहमनियाजयं पिंडसंवेदेई तं समयं परमानियाजयं पिंडसं-वेदेइ, जाय-से कहंमेयं मंते ! एवं ?

१. प्र०--हे भगवन् ! अन्वतीर्थिको एम कहे छे, भाष छे, जणावे छे अने प्ररूपे छे के, जेम कोई एक जाळ होय, ते जाळमां कमपूर्वक गांठो दीघेळी होए, एक पछी एक एव वगर आंतरे ते गुंथेळी होय, परंपराए गुंथेळी होय, परस्पर गुंथेळी होप एवी ते जाळ जेम विस्तारपणे, परस्पर भारपणे, परस्पर विस्तार तथा भारपणे अने परस्पर समुदायपणे रहे छे अर्थात् जाळ तो एक छे पण तेमां जेम अनेक गांठो परस्पर वळगी रहेली छे तेम कमे करीने अनेक जन्मो साथे संबंध धरावनारां एवा घणां आउखांओ घणा जीवो उपर परस्पर क्रमे करीने गुंथाएलां छे-यावत्-रहे छे अने तेम होत्राथी तेमांनो एक जीव पण एक समये बे आयुष्यने अनुभवे छे. ते आ प्रमाणे:-एक ज जीव आ भवनुं आयुष्य अनुभवे छे तेम ते ज जीव पर भवनुं पण आयुष्य अनुभवे छे-जे समये आ भवने पंण आयुष्य अनुभवे हे ते ज सगये परं भवतुं पण आयुष्यं अनुभवे छे. यावत्-हे भगवन् ! एते केवा रीते !

एवमाइक्खामि, जाव-परूवामि:-जहा नामए जालगंठिया जे तेओए कहीं छे) ते बधु तेओं असत्य कहे छे. हे गौतम !

?. इ०--गोयमा ! जं णं ते अनडिश्या तं चेव पर- . . उ०--हे गीतम ! ते अन्यतीर्थिको जे कोई कहे छे भवियाउयं च. जे ते एवमाहंसु तं मिच्छा, अहं पुण गोयमा ! (ते बधुं पूर्व प्रमाणे कहेबुं यावत-पर भवनुं आयुज्य, ए प्रमाणे

^{ी.} मूलच्छायाः--अन्ययूथिकाः' भगवेन् ! एवम् आख्यान्ति, भावन्ते, प्रज्ञापयन्ति, एवं प्रह्तपयन्तिः-- सा यथा नाम जालेबन्थिका स्यात्, आनुपूर्वीप्रथिता, अनन्तरप्रथिता, परंपरप्रथिता, अन्योन्यप्रथिता, अन्योन्यगुरुकतया, अन्योन्यभारिकतया, अन्योन्यगुरुकसंभारिकतया, अन्योन्यघटतया यावत्-तिष्ठति, एवम् एवं बहुनां जीवानां बहुषु आजातिसहस्रेषु बहूनि आयुष्कसहस्राणि आनुपूर्वाप्रियतानि, यावत्-तिष्ठन्ति. एँकोऽपि च जुवि•एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रतिसंवेदयति. तदाथाः—इहमबाऽऽयुष्कं च. परभवाऽऽयुष्कं च, यं समयं इहमवाऽऽयुष्कं प्रतिसंवेदयति तं समयं पर्भवाऽऽयुःकं अतिसंवेदयति, थावत्-तत् कथम् एतद् भगवन् ! एवम् ! गौतम ! यत् ते अन्ययूथिकाः तचेव परभवाऽऽ्युष्कं च. ये ते एवम्-आहुः तद् मिश्या अहं:पुनर्गीतम ! एवम् आख्यामि यावत्-प्रकायामिः--्यथा नाम जालग्रन्थिकाः---अनु ०

सिया, जाव-अनम नवड ताए चिट्ठति, एवामेव एगमेगस्स जीवस्स बहुहिं आजाइसहस्तेहिं बहुइं आउ प्रसहस्साइं आणुपुट्यि-गढियाइं जात्र चिट्ठति. एगे वि य णं जीवे एगेणं सम्एणं एगं आउयं पिंडसंवेदेइ. तं जहा:-इहमीवयाउयं वा, परमावियाउयं या; जं समयं इहमियाउयं पिंडसंवेदेइ नो तं समयं परमिव-याउयं पिंडसंवेदेइ, जं समयं परमिवियाउयं पिंडसंवेदेइ नो तं समयं इहमियाउयं पिंडसंवेदेइ; इहमित्याउयस्स पिंडसंवेयणाए नो परमावियाउयं पिंडसंवेदेइ, परमिवयाउयस्त पिंडसंवेयणाए नो इहमित्याउयं पिंडसंवेदेइ. एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पिंडसंवेदेइ. इहमित्रियाउयं वा, परमिवयाउयं वा.

हुं तो वळी एम कहुं छुं यावत्-प्ररूपुं छुं के, जेम कोइ एक जाळ होय अने ते यावत्-अन्योन्य समुदायपणे रहे छे ए ज री। क्रने करीने अनेक जन्मो साथे संगंप घरावनारां एवा घणां आउलांओ एक एक जीव उपर सांकळीना मकोडानी पेठे परसार क्रमे करीने गुंधाएलां होय छे अने एम होवाथी एक जीव एक समये एक आयुष्यने अनुभवे छे. ते आ रीते:—ते जीव आ भवनुं आयुष्य अनुभवे छे अथवा तो पर भवनुं आयुष्य अनुभवे छे पण जे समये आ भवनुं आयुष्य अनुभवे छे ते समये परभवनुं आयुष्य अनुभवे छे ते समये परभवनुं आयुष्य अनुभवे छे ते समये आ भवनुं आयुष्य अनुभवे छे ते समये आ भवनुं आयुष्य अनुभवे छे ते समये आ भवनुं आयुष्य अनुभवे वेदवाथी पर भवनुं आयुष्य अनुभवतो नथी—आ भवना आयुष्य ने वेदवाथी पर भवनुं आयुष्य वेदातुं (वेदतो) नथी अने पर भवना आयुष्यने वेदवाथी आ भवनुं आयुष्य वेदातुं (वेदतो) नथी अने पर भवना आयुष्यने वेदवाथी आ भवनुं आयुष्य वेदातुं (वेदतो) नथी ए प्रमाणे एक जीव एक समये एक आयुष्यने अनुभवे छे ते आ प्रमाणे:—आ भवनुं आयुष्य अनुभवे छे के पर भवनुं आयुष्य अनुभवे छे

१. अनन्तरोक्तं लवणसमुद्रादिकं सत्यम्, सम्यग्जानिप्रतिपादितत्वात्. मिथ्याज्ञानिप्रतिपादितं तु असत्यमपि स्यादिति दर्शयंस्तृतीयोदेशकस्य आदिसूत्रमिदमाहः—' अन्नउत्थिया णं ' इत्यादि. ' जालगंडिय ' त्ति जालं मतस्यवन्धनम् , तस्यैव प्रन्थयो यस्यां सा जालग्रन्थिका. किंखरूपा सा ? इलाह:-' आणुपुनिगढिय ' वि. आनुपूर्व्या परिपाटया प्रथिता गुम्फिता आनुचितप्रस्थी-नामादी विधानाद्-अन्तीं चत्रानां च कमेणान्त एव करणात्, एतदेव प्रपञ्चयनाहः—' अणन्तरगडिय ' ति प्रथमप्रन्थीनामनन्तरं ब्बवस्थापितैप्रैन्थिमिः सह प्रथिता अनन्तरप्रथिता, एवं परंपरैर्व्यविहिः सह प्रथिता परंपरप्रथिता. किमुक्तं भवति १*९ अनमनगृद्धिय* १ त्ति अन्योत्यं परस्परेण एकेन प्रस्थिना सङ् अन्यो प्रति :--अन्येन च सह अन्य:-इत्येयं प्रथिता अन्योन्यप्रथिता. एवं च ' अनमन्नगरुयत्ताए ' ति अन्योन्येन प्रत्थनाद् गुरुकता विस्तिर्णता अन्योन्यगुरुकता—तया, ' अन्नमन्नभारियत्ताए ' ति अन्योन्यस्य यो भार. स विद्यते यत्र तद्रयोग्यभारिकं तद्भावस्तत्ता तया. एतस्यैव प्रत्येकोत्तार्थद्वयस्य संयोजनेन तयोरेव प्रकर्षमभिधातुमाहः-' अवम्चगरुयसंभारियत्ताए ' ति अन्योन्येन गुरुकं यत् संभारिकं च तत् तथा, तद्भावस्तता तया. 'अचमचघडताए ' ति अन्योद्भयं घटा समुद्रायरचना यत्र तदन्योन्यघटाकं तद्भावस्तता तया ' चिह्नइ ' ति आस्ते-इति दृष्टान्तः. अथ दार्षान्तिक उच्यते:-' एवाऐंव ' ति अनेनैव न्यायेन बहूनां जीवानां संबन्धीनि ' बहुसु *आजाइसहस्से*सु ' ति अनेवे.षु देवादिजन्मसु प्रतिजीवं क्रमप्रकृषेषु अधिकरणभूषेषु बहू ने आयुष्यसहस्राणि—तःस्वामिजीयानामाजातीनां च तृहुसहस्रसंख्यातत्वात्ः ' आनुपूर्वीप्रिथितानि ' इत्यादि पूर्ववर् व्यास्पेयम्, नवरम् –इह भारिकावं कर्मपुद्रलापेक्षया वाच्यम्, अथैतेपामहीयां को वेदनविविः ? इत्याहः–'एगे वि य ' इसादि. एंको भि च जीवः, आस्तामनेकः. 'एकेन समयेन ' इसादि प्रथमशयक्ष्वत्. अत्रोत्तरम्:-चे ते एवमाहंसु ' इसादि. िथ्यात्वं चैपारेवम्ः यानि हि बहूनां जीवानां बहूनि आयूपि जालग्रियकावत् तिष्टन्तिः तानि यथास्वं जीवप्रदेशेषु संबद्धानि स्यरसंबद्धानि वा ?, यदि संबद्धानि, तदा कथं भिन्नभिन्नजीवस्थितानां तेषां जाटग्रयिकाकरपना करुंपितुं शक्या ? तथाऽपि तत्करुपने र्ज.बानामपि जाटग्रन्थिकाव.हपस्वं स्यात्-तरसंबद्धत्वात् , तथा च सर्वजीवानां सर्वातुः -संवेदनेन (सर्वमवमवनप्रसङ्ग इति. अथ जीवानाम्--असंबद्धानि अत्यूषि, तदा 'तद्वशाद् देवादिजनम रहित न स्थाद्--असंबहत्वादेवेति. यचोक्तम्:-- एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुपी वेदयति, 'तदपि मिध्या. आयुर्दयसंवेदनेन युगपद् भवद्रयप्रसङ्ग िति. ' अहं पुण गोयमा ! ' इसादि. इह पक्षे जालप्रन्थिका संकलिकामात्रम्, 'एगमेगस्स ' इसादि, एकैकस्य जीवस्य-न तु बहूनाम्-बहुघाऽऽजातिसहस्रेषु क्रमप्रहृत्तेषु थतीतकालिकेषु तत्कालापेक्षया सन्सु बहुनि आयुं: सहस्राणि अतीतानि वर्तमानभवान्तानि--अन्यभविकमन्यभविकेन प्रतिबद्धमित्येवं सर्वाणि परस्परं प्रतिबद्धानि भवत्ति, न पुनरेवःभवे एव बहूनिः 'इस्भिषयाज्यं व 'ति वर्तमानभवायुः. 'पर्भिषयाज्यं व 'ति प्रभवप्रायोग्यं यद् वर्तमानभवे निवद्धं तच प्रभवे गतो वेदयति तदा व्यपदिश्यते ' परमानियाउयं व ' ति.

१. मृलच्छायाः— स्यात, यावत्—अन्यान्यघटतया तिष्टन्ति, एकमेव एकैवस्य जीवस्य बहुभिराजातिसहस्नैः बहूनि आयुष्वमहस्मणि आरुप्वीप्रथितानि यावत्—तिष्टन्तिः एकोऽपि च जीव एकेन समयेन एकम् आरुष्कं प्रतिसंवेदयति. तद्यथाः—इहभवाऽऽयुष्कं वा, परभवायुष्कं वा; यं
समयं इहभवायुष्कं प्रतिसंवेदयति नो तं कमयं परभव ऽऽयुष्कं प्रतिसंवेदयति, यं समयं परभवायुष्कं प्रतिसंवेदयति नो तं समयं परभव ऽऽयुष्कं प्रतिसंवेदयति, यं समयं परभवायुष्कं प्रतिसंवेदयति नो तं समयं परभवायुष्कं प्रतिसंवेदयति, परभवाऽऽयुष्कं स्वतिसंवेदयति नो हृद्भवायुष्कं प्रतिसंवेदयति, परभवाऽऽयुष्कं स्व प्रतिसंवेदयाति नो हृद्भवायुष्कं प्रतिसंवेदयति, परभवाऽऽयुष्कं स्व प्रतिसंवेदयति, परभवायुष्कं वाः—अतुष

१. आगळ जणावेली-लवण समुद्र विगरेनी-हकीकत साची छे, कारण के, ते हकीकत सम्यक् ज्ञानवाला पुरुषोए जणावी छे अने जे बात मिथ्यादृष्टि पुरुषोए जणावेल होय छे ते वात खोटी पग होय छे-अर्डी एवी एकाद खोटी वातने देखाडतां त्रीजा उद्देशकनुं आ आदिसूत्र कहें छे के, ['अन्नउत्थिया णं 'इत्यादिः] [' जालगंठिय ' ति] माछलांने पकडवानुं साधन ते जाळ, अने जेमां तेनी जेवी गांठो होय छे ते जालगंधिका अने जाळग्रंथिका अर्थात् एक जातनी गुंथेली जाळी, ते केवी जातनी ? तो कहे छे के, [' आणुपुर्विगिद्धिय ' ति] क्रमवार गुंथेली अर्थात् जेमां े तेनुं वर्णन. जे गांठ पहेली जोइए तेने पहेली गुंथेली अने जे गांठ छेडे जोइए तेने छेडे गुंथेली छे. ए ज वातने विगतवार कहे छे के, ['अणंतरगढिय 'ति ने जे पहेली पहेली मांठोनी अणआंतरे-तद्दन पास-रहेली गांठो साथे गुंथेली छे ते ' अनंतरप्रथित ' कहेवाय, ए रीते जे, वचली वचली गांठो साथे गुंधेली होय ते 'परंपरमधित ' कहेवाय- तात्पर्य ए छे के, [' अज्ञमन्नगढिय ' ति] जे परस्पर गुंधेली -एक साथे बीजी अने बीजी साथे त्रीजी एम एका बीजी गांठो साथ गुंथेली छे ते 'अन्योन्यप्रथित ' कहेवाय, अने (एवी जालप्रंथिका) ए रीते [' अन्नमन्नगरुयत्ताए ' ति] परस्पर गंथणी करवाथी थएल विस्तारवडे, ['अन्न जमारियत्तार्'ति] परस्परना बोजाने लइने थएल भारेपणावडे, हमणां कहेल बन्ने विशेषणोनो जूदो जूदो अर्थ भेगो करवाथी जे अर्थ थाय छे तेने ए बन्ने विशेषणोना प्रकर्षने -जगाववाने कहें छे के, [' अन्नमन्नगरुयसंमारियताए ' ति] परस्परना विस्तारपणावडे अने भारेपणावडे, [' अन्नमन्नधडताए 'ति] परस्पर समुदायनी रचनावडे [' चिट्टह 'ति] रहे छे-होय छे. ए रीते जालगंथिकानुं उदाहरण देखाडचुं छे. हवे दार्टीतिक - जे माटे उदाहरण दर्शाव्युं छे ते पदार्थ - ने जणावे छे के, [' एवामेव ' ति.] ए ज रीते घणां जीवो संबंधी, ['बहुसु आजाइसहस्सेसु ' ति] प्रत्येक जीव प्रति कमधार प्रवर्तेष्ठां एवां देवादिकना अनेक अवतारनां घणां हजार आउखांओ (आउखांओना स्वामिओ अने अवतारो घणा छे माटे आउखांओ पण घणां कहां छे.) ' आनुपूर्वीप्रथित ' वेगरे विशेषणोनी व्याख्या तो पूर्वनी पेठे समज्जी. विशेष ए के, आ पक्षे कर्मपुत्रलनी अपेक्षाए भारेपणुं समजवुं ए आयुष्योने वेदवानो कयो प्रकार छे? तो कहे छे के, [' एगे वि यं ' इत्यादि.] अनेक जीव तो नहीं, पण ' एक जीव, एक समये ' इत्यादि वधुं प्रथम शतकेनी पेठे जाणदुं. आ स्थळे जवाब आ रीते छेः- ['जे ते एवं आुंसु' इत्यादि. | तेओनुं कहेवुं आ रीते खोटुं छे:-जे-घणां जीवोनां घणां-आउखांओ जालश्रंथिकानी पेठे रहे छे ते ययां आउखांओ, जीवना प्रदेशों साथे रीतसर संबंध धरावे छे १ के संबंध नथी धरावतां १ जो ते आउखांओ जीवना प्रदेशो साथे रीतसरनो संबंध धरावे छे तो जालगंधिकानी पंठे तेनी कर्पना करवी ज खोटी छे. कारण के, ते बधां आउखांओ जूदा जूदा जीवो साथे जोडाएलां छे अने तेथी ज ते बधानुं जूदापणुं होवाने लीघे तेनी कल्पना जालग्रंथिका जेवी करवी ते खोटी छे. तेम छतां कदाच जालग्रंथिकानी जेवी कल्पना करवामां आवे तो वधा जीवोनो संबंघ एग जालगंथिकानी जेयो मानवो जोइए. कारण के, आयुष्योनो सीघो संबंघ जीवो साथे छे तेथी ज्यां सुपी जीवोनो परस्पर संबंध जालशंथिका जेत्रो न मानवामां आवे त्यां सुधी जालशंथिकानी कल्पता आयुष्यने घटती नथी माटे ते कल्पना आयुष्येन लागु पाडतां 🔤 दोना संबंध माटे पण तेत्री ज कल्पना करवी जोइए अने जो जीत्रो माटे पण तेवी ज कल्पना करवामां आवे तो संसारना बधा जीवो द्वारा एक साथे बधी जातनां आयुष्यो भोगवावां जोइए अने तेम थवाथी एक साथे अनेक भवो भोगववानो प्रसंग आवे तेम हे. माटे आयुष्यो संबंधे जालशंथिकानी कल्पना करवी ए ज खोटुं हे. जो कदाच एम मानवामां आवे के, ते आयुष्यो, जीव साथे संबंध धरावतां नथी तो आयुष्यना कारणथी जीवोनो देवादि गतिमां जे अवतार थाय छे ते संभवी शकरो नहीं. कारण के, जीव अने आयुष्यो बच्चे कोइ पण प्रकारनो संबंध न होवाथी आयुष्य निर्मितक जुरा पण असर जीवने थइ शकशे नहीं-साधारण नियम प्रमाण जे बने परस्वर संबंध होय ते ज बे परस्पर एक बीजाने असर करी शके तेम छे अने अहीं तेम न होत्राथी आयुष्यंथी उत्पन्न थता अन्नतार वगेरेनी असंभव थइ जेशे. माटे जीव अने आयुष्यो वचे संबंध तो मानवो ज जोइए. वळी, जे कयुं छे के, 'एक जीव एक समये वे आयुष्योने अनुभवे छे 'ते पण खोदुं छे. कारण के, एम मानवाधी एक साथे वे भव भोगववानो प्रतंग आवी जाय छे अने एम यतुं नथी माटे एक जीवने एक समये वे आयुष्य भोगववानुं मानवुं ते खोदुं हे. [' अहं पुण गोयमा ! ' इत्यादि.] आ पक्ष मां ' जालग्रंथिका ' नो मात्र 'सांकळी' अर्थ करवी. [! एममेगस्स ' इत्यादि.] घणा जीयोने नहीं पण एक एक जीवने अनेक आयुष्योनो मात्र सांकळ जेवो संबंध होय छे अर्थात् एक जीव द्विति कमबार प्रवर्तेळां एवां अनेक जन्मोनां आ भवना छेडा सुधीनां भूतकाळे थर गएलां (भूतकाळनी अपेक्षाए हयाती धरावनारां) हजारो आउखांओ मात्र सांकळ जेवो संबंध धरावे छे-एक भवना आयुष्यनी साथे बीजा मवनुं आयुष्य प्रतिबद्ध छे अने तेनी साथे त्रीजुं आयुष्य प्रतिबद्ध छे अने ए रीते ए बघों प्रतिबद्ध हे एटले एक पछी एक आयुष्य अर्नुभवमां आव्ये जाय हो. एण एक ज भवमां ज बधां आउखांओ प्रतिबद्ध नथी. ['इहभवियाउयं व ' ति] वर्तमान-चालु-भवनुं आयुष्य, ['परभवियाउयं व 'त्ति] चालु भवमां पण परभवमां भोगववाने योग्य बांधेल आयुष्य ते परभविक आयुष्य; ज्यारे जीव परभवे जाय छे त्यारे ते, ते आयुष्यने भोगवे छे माटे कहेवाय छे के, [' परभवियाउयं व ' त्ति.]

नैरियकादि अने आयुष्यः

२. प्रo-जीवे णं मंते ! जे भविए नेरहएसु उववाजित्तए से ण कि साउए संकमइ ?

२. ७०-गोयमा ! साउए संकमइ, नो निराउए संकमइ.

३. प्रठ—से णं भंते ! आउए काहें कडे, काहें समाइण्णे ?

२. प्र०-हे भगवन्! जे जीव नरके जवाने याग्य हाय, हे भगवन् ! जुं ते जीव, अहींथी आयुष्य सहित थइने नरके जाय !

२. उ०-हे गौतम! नरके जवाने योग्य जीव अहींथी आयुज्य सहित थइने नरके जाय, पण आयुष्य विनाना न जाय.

३. प्र०-- हे भगवन् ते जीवे, ते आयुष्य क्यां बांध्युं अने ते आयुष्य संबंधी आचरणो क्यां आचर्यां ?

१. जुओ भ० प्र० खं० प्र० २०४. १.मूलच्छायाः —जीवा भगवन् ! यो भव्यो नैरियकेषु उपपृत्तुं स कि साऽऽयुष्कः संकामति ? गैतिम ! सायुष्कः संकामति, नो निराऽऽयुष्कः संकामति. तद् भगवन् १ आयुष्कं कुत्र कृतम्, कुत्र समाचीर्णम् १:--अनु०

- **३. ७०--गीयमा ! पुरिमे भवे कडे, पुरिमे भवे समाइ**ण्णे; एवं जाव-वेमाणियाणं दंडओ.
- ४. प्र०—से णूणं मंते ! जे जं मविए जोणि उववाजित्तए से तमाउयं पकरेड़, ते जहा-नेरइयाज्यं वा, जाव-देवाज्यं वा?
- ४. उ० हंता, गोयमा ! जे जं भविए जोणि उववाजितए से तमाउयं पकरेइ, तं जहा-नेरइयाउयं वा, तिरि-मणु-देवाउयं वा. नेरइयाउयं पकरेमाणे सत्तविहं पकरेइ. तं जहाः -रयणप्प-भापुढविनेरइयाज्यं वा, जाव-अहेसत्तमापुढविनेरइयाज्यं वा, तिरिक्सजोणियाउयं पकरेमाणे पंचिवहं पकरेइ, तं जहा-एगिं-दियति।रिक्खजोणियाउयं वा भेदो सन्त्रो भाणियन्त्रो. मणुस्साउयं दुविहं, देवाउयं च उविवहं.

—सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति.

- ३. उ० हे गौतम ! ते जीवे, ते आयुष्य पूर्व भवमां बांध्युं अने ते आयुष्य संबंधी आचरणा पण पूर्व भवमां आचर्या. ए प्रमाणे यावत्-वैमानिका सुधी दंडक कहेवी.
- ४. प्र०--हे भगवन्! जे जीव, जे योनिमां उपजवाने योग्य होय, ते जीव, ते योनि संबंधी आयुष्य बांधे ? जेमके; नरक योनिमां उपजवाने योग्य जीव नरक योनिनुं आयुष्य बांघे यावत्—देवयो-निमां उपजवाने योग्य जीव देवयोनिनुं आयुष्य बांधे ?
- ४, उ० हे गौतम! हा, तेम करे अर्थात् जे जीव, जे योनिमां उपजवाने योग्य होय, ते जीव, ते योनि संबंधी आयुष्य बांधे-नरकने योग्य जीव नरकनुं आयुष्य बांधे, तिर्यंचने योग्य जीव तिर्यंचनुं आयुष्य बांधे, मनुष्यने योग्य जीव मनुष्यनुं आयुष्य बांधे अने देवने योग्य जीव देवनुं आयुद्य बांधे. जो नरकनुं आयुष्य वांधे तो ते, सात प्रकारना नरकमांधी कोइ एक प्रकारना नरक संबंधी आयुष्य बांधे--रत्नप्रमापृथिवी-नरकनुं आयुष्य के यावत् -अधःसप्तमपृथिवी-सातमी नरक-नुं आयुष्य बांधे. जो ते, तिर्यंचनं आयुष्य बांघे तो पांच प्रकारना तिर्यंचमांथी कोइ एक तिर्यंच संबंधी आयुष्य बांधे—एकेंद्रिय तिर्यंचनुं आयुष्य इत्यादि-ए संबंधी बघो विस्तार-भेद-विशेष-अहीं कहेवा. जा ते, मनुष्यनुं आयुष्य बांधे तो ते बे प्रकारना मनुष्योगांथी कोइ प्रकारना मनुष्यनुं आयुष्य बांधे अने जो ते, देवनुं आयुष्य बांधे तो -चाक प्रकारना देवोमांथी कोइ एक प्रकारना देवोनुं आयुष्य बांधे.

- हे मगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे एम कही यावत्-विहरे छे.

भगवंत-अज्बं सहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसते पंचमसमये तहओ उदेसी सम्मत्तो.

२. आयुःप्रस्तावाद् इदमाह:--' जीवे णं ' इत्यादि. ' से णं भंते ! ' ति अथ तद् भदन्त !. ' काहिं कडे ' ति का भने बद्धम्. 'समाइण्णे 'त्ति समाचरितं तद्धेतुसमाचरणात्. 'जे जं भिष् जोणिं उत्तरिज्ञत् 'त्ति विभक्तिपरिणामाद् यो यस्यां योनावुत्पत्तुं योग्य इसर्थः, 'मणुस्साउयं दुविहं ' ति संमूर्छिम--गर्मन्युत्कान्तिकभेदाद् द्विधा. ' देवाउयं चडाव्वहं ' ति भवनपत्या-दिमेदादिति.

भगवरस्रधर्मसामित्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पद्मभशते तृतीय उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविह्नितं विवरणं समाप्तम्,

२. आयुष्यनुं प्रकरण चाळतुं होबाथी आ प्रकरणमां पण आयुष्य संबंधी बीजी बात कहेवाने औसारु आ सूत्रेश्कहें छे के, [' ज़ीवे णं ' इत्यादि.] [' से णं भंते ! ' ति] हवे हे भगवन् ! ते ['कहिं कडे ' ति] कया भवमां बांघेल छे हीने ['समाइण्णे ' ति] क्या भवमां ए आयुष्यने नांधवानां कारणोने आचरणमां मेल्यां छे ? ['जे जं भविए जोणिं उववजित्तए 'ति] जे योनिमां जे जीव उपजवाने योग्य होय. ['मणुस्साउयं दुविहं 'ति] एक संमूर्छिम अने बीजा गर्भज ए रीते मनुष्यना बे प्रकार छे माटे मनुष्यनुं आयुष्य बे प्रकारनुं कह्युं छे. ['देवाउयं चंउिंवहं ' ति] भवनपति, वानव्यंतर, व्योतिषिक अने वैमानिक, ए रीते देवना चार भेद होवाथी देवनुं आयुष्य चार प्रकारनुं कर्युं छे.

बेडारूपः समुदेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् द्यायी यः सदुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्त्योः -द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मार्रहा चाम्सुह्यः ॥

१. अही ' योनिम् ' ए बीजी विभवितनं रूप छेल पण अर्थ वशे विभक्तिना फेर बदले करवाना नियम होवाधी ते वीजीना रूपने सप्तमीनं

क्ष अर्थातः ' बान्याम् ' समजीने तेना अर्थ ' यानिमां ' समजवाना छे:-- श्रीअभयव

वयां कर्यु ?

प्यंचा प्रकार.

मूलच्छायाः—गौतम! पूर्विस्मन् भवे कृतम्, पूर्वेस्मन् भवे समाचीर्णम्; एवं यावत्—वैमानिकानां दण्डकः. तद् नूनं भगवन् । यो यां भव्यो योनिम् उपपर्हं स तद् आयुः प्रकराति, तथथा:-नैरियकाऽऽयुष्कं वा, यावत्-देवाऽऽयुष्कं वा १ हन्त, गैातम ! यो यां भव्या योनिम् उपपरहं स तद् आयुः प्रकरे।ति, तद्यथाः-नैरियकायुःकं वा, तिर्थग्-मनुज-देवायुःकं वा. नैरियकायुःकं प्रकुर्वन् सप्तविधं प्रकरोति. तद्यथाः-रत्नप्रभाष्ट्रियिनीर-विकाऽऽयुष्कं वा, यावत्-अधःसप्तमप्रथवीनैरियकाऽऽयुष्कं वा, तिर्थग्योनिकाऽऽयुष्कं प्रकृवेन् पद्यविधं प्रकरोति, तद्यथाः-एकेन्स्यितिर्ययोनिकाऽऽयुष्कं वा भेदः सर्वो भणितव्यः. मनुष्याऽऽयुष्कं द्विविधम्, देवाऽऽयुष्कं चतुर्विधम्, तदेवं भगवन् ! तदेवं गगवत् ! इतिः—अनु ?

्शतक ५.–उद्देशक ४.

ष्ठमस्य मनुष्य, शब्दो सांसळे १-हा.-शंख,-शंप.-शंखका.-खरसुखी.-पोता.-परिपरिया.-पणव.-पडह.-संसा.-होरंस.-भेरि.-झहरी.-दुंदुमि -तत.-वितत.-धन-शुंदिर.-रपशंपला शब्दो संसळाय के अस्पशोपला १-रपशंपला -आर्गत-अवांग्गत-प्रव्यो संसळाय के पार्गन शब्दो संसळाय १-मनुष्योने आर्गत शब्दो संसळाय.-के।ळिने दथा शब्दो संसळाय.-केवली मित पण जाण-अमित पण जाणे.-हवंत्र, सदा अने संवंधा केवली कर्न मांगोने जाणे.-ज्ञमस्य हसे १-उतावळो थाप १-हा.-केवली हसे १-उतावळो थाय १-ना.-हसवानुं कारण मोहनीयनो उदय.-इसतां केटली कर्नमृत्यते वंधाय १-पांत के आठ.-यावत्-वैमानिक.-छग्नस्य उंघ १-उसी उसी उंचे १-इा.-निदा करतां केटला व.मै वंधाये १-सात के आठ.-यावत्-वैमानिक.-दिगिणमेथी शक्दा स्थीनो गर्भ शी रीते अदलावदल करे १-योनि बाटे गर्भने वहार कालीने वीला गर्भाश्यमा मूके.-नस्य वाटे के संवाडा वाटे गर्भने फेरवी शके १-हा.-गर्भने वांदा वांधा न थाय.-गर्भने वदलनारो कापकूप वरे अने गर्भने सहय करीने वदलावे.-अतिमुक्तक श्रमणनो हतात.-महावीर पासे आवेला वे देवो.-महावीरना सातसी अंतेवातिओ सिद्ध धशे.-पोतम अने महावीर वस्र थण्ळी प्रदेवों लगती वातचीत.-देवो संयत के असंयत बहेवाय १-मोसंयत कहेवाय.-देवोनी विविष्ट मावा-अर्थमागधी.-केवली अंतकरने जाणे जूए १-हा.-छग्नस्य अंतकरने जाणे जूए १-हा.-अल्डा-काणे जूए १-हा.-केवळी, प्रणीत मन अने वचनने धारे १-पारे.-केवळिना ए मन अने यचनने वैमानिको जाणे १-तोह क्र.केव्स अने चरमिलकोना वे सेद-मायी-सिथ्यादृष्ट-श्रमायी सन्यग्दृष्टि.-अननतरोपपन्नत्र-परंपरोपपन्नत.-पर्यात-अवशीत.-उपशुक्त-अनुपनुक्त.-अनुसरीपपातिक देवो पोताने आसने रह्या रह्या केवळी साथे वातचित करे १-हा.-अही रहेळो केवळी के बाद कहे तेने त्या रहेला अनुसरोपपातिको जाणे-जूए १-हा.-प्रमुक्तरीपपातिक देवे उपशातमोह-श्रीणमोह.-केवळी आदानो-इंद्रियो हारा जाणे-जूए १-ना.-केवली के आकाशपदेशोमां स्थित होय पछी पण स्था ज स्थित, होय के केम १-ना.-प्रयोगसह-श्रव्या.-चीटपूर्या एक घडामांथी हजार वहा वरे १-हा.-जरकीरको भेद-विहार.--

१. प्र 3—छं उमत्थे णं मंते ! मणुस्ते आउडिज्जमाणाइं सहाइं सुणेइ ? तं जहा:-संख्तसहाणि वा, सिंगसहाणि वा, संस्वियतहाणि वा, खरमुहीसहाणि वा, पोयासहाणि वा, परि-िगिरियासहाणि वा, पणवसहाणि वा, पडहसहाणि वा, मंभास-हाणि वा, होरंगसहाणि वा, भिरसहाणि वा, झहरीसहाणि वा, दुंदुभिसहाणि वा, तथाणि वा, वितयाणि वा, घणाणि वा, झुसराणि वा ?

१. प्र०—हे भगवन्! छद्यस्य मनुष्य, वगाडवामां आवता शब्दोने सांभळे छे, ते आ प्रमाणे:—ते मनुष्य, शंखना शब्दोने, रणशिंगाना शब्दोने, शंखलीना शब्दोने, काहलीना शब्दोने, काहलीना शब्दोने, काहलीना शब्दोने, डोलना शब्दोने, ढोलना शब्दोने, ढोलना शब्दोने, ढोलनीना शब्दोने, ढोलना शब्दोने, ढोलनीना शब्दोने, ढका-डाक-डाकला-ना शब्दोने, होरंभना शब्दोने, मोटी ढकाना शब्दोने, झालरना शब्दोने, होरंभना शब्दोने, तत-तांतवाळा-(वीणा वगेरे)—वाजाना शब्दोने, वितत-ढोल -वाजाना शब्दोने, नकर वाजाना शब्दोने अने पोलां वाजाना शब्दोने सांभळे छे ?

^{ा.} मूलच्छायाः—छंदास्थो भगवन् ! मनुष्यः आजोड्य (कुट्य) मानान् सब्दान् शृणोति ! तराथाः—शब्खशब्दान् वा, शृक्षशब्दान् वा, शृक्षिकाशब्दान् वा, खरमुंखीशब्दान् वा, पोताशब्दान् वा, परिपरिता (का) शब्दान् वा, पणवशब्दान् वा, पटद्शब्दा^{न्} वा, भग्भाशब्दान् वा, प्रिम्भशब्दान् वा, पणवशब्दान् वा, पटद्शब्दा^{न्} वा, भग्भाशब्दान् वा, प्रोतिकार्यान् वा, प्रतितानि वा, प्रवानि वा, श्रुषिराणि वा शः—अनुक

- ?. उ०-हैता, गोयमा ! इन्डमस्थे णं मणुस्से आउडि-जमाणाइं सद्दाइं सुणेइ. तं जहाः-संखसद्दाणि वा, जाव-झुसराणि वा.
 - २. प्र०—ताई मंदे 1 कि पुड़ाई सुणेइ, अपुड़ाई सुणेइ ?
- २. उ०—गोयमा ! पुट्टाई सुणेइ, नो अपुट्टाई सुणेइ, जाव-नियमा छिद्दिसि सुणेइ.
- रे. प्रo छउंगरथे णं भंते ! मण्से कि आरगयाई सदाई सुणेइ, पारगयाई सदाणि सुणेइ !
- रे. उ० —गोयमा ! आरगयाइं सदाइं सुणेइ, नो पारगयाइं सदाइं सुणेइ.
- ४. ४०— जहा णं भंते! छउमत्थे मणूसे आरगयाई सद्दाई सुणेइ, णो पारगयाई सद्दाई सुणेइ; तहा णं भंते! केवली मणुस्से कि आरगयाई सद्दाई सुणेइ, णे पारगयाई सद्दाई सुणेइ?
- ४. उ०—गोयमा ! केवली णं आरगयं वा, पार्गयं वा, सम्बदूरमूलमणंतियं सद्दं जाणइ, पासइ.
- ५. प्र०—से केणडेणं तं चेव केवली णं आरगवं वा, पारगयं या, जाव-पासइ ?
- ५, उ० गोयमा ! केवली ण पुरिश्यमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ; एवं दाहिणेणं, पचित्थमेणं, उत्तरेणं, उहुं, अहे मियं पि जाणइ, अगियं पि जाणइ; सच्वं जाणइ केवली, सब्वं पासइ केवली; सब्वओ जाणइ, पासइ; सब्वकालं सब्वभावे आणइ केवली, सब्वभावे पासइ केवली; अणंते णाणे केवलिस्स, अणंते दंसणे केवलिस्स; निब्बुडे नाणे केवलिस्स, निब्बुडे दंसणे केवलिस्स से तेणक्षेणं जाय-पासइ.

- १. उ०—हे गौतम ! हा, छन्नस्थ मनुष्य, वगाडवामां आवता शब्दोने सांभळे छे. अने ते पण पूर्वे वह्यां एटटां बधां वाजां ओना शंखधी वावत्—पोटां व.ज.ओना शब्दंने पण सांभळे छे.
- २. प्र०—हे भगवन् ! युं ते शब्दो कोन साथे अधहाया पछी संभळाय छे के अधङाया विना संभळाय छे ?
- २. उ०—हे गौतम ! ते सन्दो कान साथे अथडाया पछी संभळाय छे, पण अथडाया विना नथी संभळाता. अने ते यावत्— अथडाया पछी छ ए दिश.मांथी संभळाय छे.
- ३. प्र० हे भगवन् ! शुं हबास्य मनुष्य, ओरे रहेला राब्दोने सांभळे छे के परे रहेला- इंद्रियोना विषयधी दूर रहेला— शब्दोने सांमळे छे ?
- ३. ड०—हे गौतम! छग्नस्थ मनुष्य, ओरे रहेला शब्दोने समिळें छे, पण परे रहेला शब्दोने सांमळतो नथी.
- 8. प्रo—हे भगवन् ! जेन छब्नस्य मनुष्य ओरे रहेटा शब्दोने सांमळे छे अने परे रहेटा शब्दोने सांमळतो नथी तेम क्षे केवळी गनुष्य ओरे रहेटा शब्दोने सांमळे छे अने परे रहेटा शब्दोने नथी सांमळतो ?
- ४. उ०—हे गौतम! केवळी तो ओरे रहेटा अने परे रहेटा आदि अने अंत विनाना शब्दने—सर्व प्रकारना शब्दनेय जाणे छे अने मूए छे.
- ५. प्र०—हे भगवन् ! 'ओर रहेटा अने परे रहेटा शब्दने पण यावत्-(ते ज प्रमाणे कहेवुं) केवळी जाणे छे अने जिल् छे ' एनुं शुं कारण ?
- ५ ट०—हे गौतम! केवळी जीव पूर्व दिशानी मित बस्तुने पण जाणे छे अने अमित बस्तुने पण जाणे छे, ए प्रमाणे दिशानी, पश्चिप दिशानी, उत्तर दिशानी, उर्व्य दिशानी अने अभी दिशानी पण मित बस्तुने तथा अमित बस्तुने केवळी जाणे छे अने ज्यू छे. केवळी बधुं जाणे छे अने बधुं जूर छे. केवळी बधी तरफ जाणे छे अने जूए छे. केवळी सर्व काळे सर्व पदार्थो—भावो—ने जाणे छे अने जूए छे, केवळीन अनंत झान अने बर्शन छो अने बेवळिनुं ज्ञान अने दर्शन कोइ जातना पडदा (आवरण) बाळुं नथी माटे ते कारणथी 'यावत् —जूए छे 'एम कहां छे.

१. मूलच्छाया:—हन्त, गौतम! छद्मस्थो मनुष्यः आजोड्य (कुट्य)मानान् सब्दान् राणोति. तद्यथाः—शङ्खराब्दान् वा, यावत्—शुविराणि वा. तान् भगवन् ! कि स्रष्टान् शुणोति, अस्ष्रप्टान् राणोति ? गौतन ! स्प्रप्टान् राणोति, नो अस्प्रप्टान् राणोति; यावत्—नियमात् पद्दिशं शुणोति. छद्यस्थो भगवन् ! मनुष्यः किम् आराद्गतान् शब्दान् राणोति, पारगतान् शब्दान् शुणोति ? गौतम ! आराद्गतान् शब्दान् शुणोति, नो पारगतान् शब्दान् शुणोति. यथा भगवन् ! केवली मनुष्यः आराद्गतान् शब्दान् शुणोति नो पारगतान् शब्दान् राणोति; तथा भगवन् ! केवली मनुष्यः किम् आराद्गतान् शब्दान् राणोति, नो पारगतान् शब्दान् राणोति, नो पारगतान् शब्दान् राणोति, नो पारगतान् शब्दान् राणोति ? गौतम ! केवली आराद्गतं वा, पारगतं वा सर्वद् मूलम् अनन्तिकं शब्दं जानाति, पर्यति, तत् केनाऽर्थेन तर्वव केवली आराद्गतं वा, पारगतं वा यावत्—पर्यति ? गौतम ! केवली पीरस्त्येन मितम् अपि जानाति, अमितम् अपि जानाति, एवं दक्षिणेन, पश्चिमेन, उत्तरेण, जर्थम्, अभो मितम् अपि जानाति, अमितम् अपि जानाति, पर्यति; सर्वकालं सर्वभावान् जानाति केवली, सर्वभावान् पर्यति केवली; अनन्तं हानं केवलिनः, धननां दर्शनं केवलिनः, निर्वतं विश्वतं दर्शनं केवलिनः, तत् वेनाथेन यावत्—पर्यतिः— अतु०

१. अनन्तरोदेशके अन्यय्थिकछद्मस्यमनुष्यवक्तव्यता उक्ताः चतुर्थे तु मनुष्याणां छद्मस्थानाम्, केवलिनां च प्रायः सा उच्यते, इत्येवंसंबन्धस्याऽस्य इदमादिसूत्रम्-' छउमत्थे णं ' इत्यादि. ' आउडिजमाणा इं ' ति '' जुड बन्धने '' इति बचनाद् आजोडयमानेभ्यः-आसंबध्यमानेभ्यो मुख-हस्त-दण्डादिना सह शङ्ख-पटह--झक्वर्यादिभ्यो वाद्यविशेषेभ्यः, आकुट्यमानेभ्यो वा-एम्य एव ये जाताः शब्दारते आजोड्यमाना एव, आकुट्यमाना एव वा उच्यन्ते, अतस्तान् आजोड्यमानान्, आकुट्यमानान् वा शब्दान् शृणोति, इह च प्राकृतत्वेन शब्द-शब्दस्य नपुंसकनिर्देश:. अथवा 'आउडिजमाणाइं 'ति आकुट्यमानानि - परस्परेणाऽभिहन्य-मानानि. 'सदाइं 'ति शब्दानि शब्दद्रव्याणि. शङ्खादयः प्रतीताः. नवरम्—'संखिय 'त्ति शङ्किता—ह्स्वः शङ्खः, 'खरुमुहि ' ति काहला, 'पोया ' महती काहला, 'परिपिरिय 'ति कोलिकपुटकाऽवनद्रमुखो बाद्यविशेषः. 'पणव 'ति भाण्डपटहः, लघुपटहो वा; तदन्यस्तु पटह इति. 'मंम 'त्ति ढका. 'होरंम 'ति रूढिगम्या. 'मेरि 'ति महाढका. 'झल्हि '्ति वलयाऽऽकारो वाद्यविशेषः, 'दुंदु।हिं ृत्ति देववाद्यविशेषः, अथ उक्ता-ऽनुक्तसंग्रहद्वारेण आहः—' तताणि वा ' इत्यादि, ततानि वीणादिवाद्यानि, तज्जनितशब्दा अपि तताः, एवम् अन्यदपि पदत्रयम्, नवरमयं विशेषस्ततादीनाम्:-''्ततं वीणादिकं ह्रेयं विततं पटहादिकम्, घनं तु कांस्यतालादि वंशादि शुनिरं मतम्, '' इति. ' पुष्टाइं सुणेइ ' इस्यादि तु प्रथमशते आहाराधिकारवद् अवसेयम् इति. ' आरगयाइं ' ति आराद् भागस्थितान् इन्द्रियगोत्तरमामतान् इत्यर्थः. ' पारगयाइं ' ति इन्द्रियविषयात् परतोऽवस्थितान् इति. ' सब्बद्रमूलमणांतियं ' ति सर्वथा दूरं विप्रकृष्टम् , मूलं च निकटं सर्वदूर-मूलम् ; तद्योगात् शब्दोऽपि सर्वदूरमूलः , अतस्तम्-असर्थं दूरवर्तिनम्, असन्ताऽऽसनं च इसर्थः. अन्तिकमासनम्, तिनिषेधादनन्तिकम्, नजोऽल्पार्थत्वाद् नाऽसन्तमन्तिकम्-अदूराऽऽ-सन्नमित्यर्थः; तद्योगात् शब्दोऽप्यनन्तिकः, अतस्तम्. अथवा 'सव्व 'त्ति अनेन 'सव्वओ समन्ता ' इत्युपलक्षितम्. ' दूरमूलं ' ति अनादिकमिति हृदयम्, 'अणातियं 'ति अनन्तिकमित्यर्थः, 'मियं पि 'त्ति परिमाणवद् गर्भजमनुष्यजीबद्वव्यादि-इत्यादि. ' अमियं पि ' त्ति अनन्तम् , असंख्येयं वा वनस्पति-पृथिवीजीवद्रव्यादि. ' सन्वं जाणह ' इत्याद्विद्वद्याद्यपेक्षया उक्तम्. अथ कस्मात् ' सर्वं जानाति केवली ' इत्यायुच्यते ? इत्यत आहः—' अणंते ' इत्यादि. अनन्तज्ञानमनन्तार्थविषयत्वात् ; तथा ' निब्बुडे माणे केवालिस्स ' ति निर्दतं निराऽऽवर्णं ज्ञानं केवलिनः क्षायिकत्वात्-शुद्धमित्यर्थः. वाचनान्तरे तु ' निब्बुडे, वितिमिरे, विसुद्धे 🖫 🔝 विशेषणत्रयं ज्ञान-दर्शनयोरभिधीयते, तत्र च निर्वृतं निष्ठां गतम्, वितिमिरम्-क्षीणाऽऽवरणम्, अत एव विशुद्धम् इति.

अगमळनां उद्देशकमां अन्य मतवाळा छग्नस्थ मनुष्योंनी हकीकत कही छे हवे आ चोथा उद्देशकमां तो छग्नस्थ अने केवृळि मनुष्य संबंधी वक्तस्थला कहेंवी ए समुचित छे-ए रीते तीजा अने चोथा उद्देशक वसे संबंध छे- आ उद्देशकनुं प्रथम सूत्र आ छे:—[' छउनस्थे ले ' हत्यादि.] [' आउडिजेमाणाई''ति] मुख साथ शंखनो संयोग थवाथी, हाथ साथ होलनो संयोग थवाथी अने लाकडानां कटकां (दंड) साथ झालरनो संयोग थवाथी तथा एवा कोई बीजा पदार्थों साथ अनेक जातनां वाजांओनो संयोग थवाथी अथवा वगाडवानां साथनस्थ अनेक प्रकारना पदार्थों बंड क्रूटाता-अथडाता-भटकाता-अनेक प्रकारनां वाजांओथी थता शब्दोने के शब्दहव्योने सांभळे छे- शंख वगेरे शब्दोनो अर्थ प्रतिद्ध छे. विशेष ए के, [' संख्यिय 'ति] शंखिका-नानो शंख, [' खरमुहि 'ति] काहली, [' पोया ']—मोटी काहली, [' परिपिरिय 'ति] सुव्वरना चामडाधी मटेल मोहावाळुं एक जातनुं वाजुं, [' पणव 'ति] मांडनो ढोळ अथवा नानो ढोळ, पणवधी जूदो ते ' पटह ' कहेवाय छे, [' मंभ 'ति] ढका—डाकली, [' होरंभ 'ति] ए शब्दनो अर्थ स्विद्धी जाणवानो छे. [' मेरि 'ति] मोटी डाक, [' झहारि 'ति] एक प्रकारनं वलोयाना आकार जेल्वे वाजुं-झालर, [' खुँदैहि'ति] देवनुं एक प्रकारनं वाजुं. हवे कहेळ अने नहीं कहेळ वयां वाजांओने सामटां कहे छे के, [' तताणवां किंतु 'तत' वगेरेमां विशेष आ छे के, ' वीणा ' वगेरे ' तत ' कहेवाय छे जे एना शब्दो पण 'तत' कहेवाय छे ए रीते बीजां पण श्रम पदो जाणवां किंतु 'तत' वगेरेमां विशेष आ छे के, ' वीणा ' वगेरे ' तत ' कहेवाय छे ले वगेरे 'वितत' कहेवाय, कांसी अने ताल वगेरे 'वन' कहेवाय अने वंश (पायो) वगेरे ' शुपर-पोर्ड वाजुं ' कहेवाय छे . [' शुहाइं सुणेइ '] ए वधा पाठनी व्याख्या, आगळ प्रथम शतकमां आवेल आहार अधिकारनी पेठे जाणवी हैं ' आरगयाइं 'ति] ओरे रहेलां-इदियोधी लह शकाय तेवां, [' पारगयाइं 'ति] परे रहेलां-इदियोधी लह शकाय तेवां, [' पारगयाइं 'ति] परे रहेलां-इदियोधी लह शकाय तेवां, [' सव्वदूरमूल्लमंतियं ' ति] सर्वदूरमूल्ल एटले अना वह पासे नही रहेल अनादिना अने [' अणंतियं ' ति] सर्वदूरमूल एटले अनादिना अने [' अणंतियं ' ति]

संधेगत्रन्य सब्दो

दांखिका-खरमुखी-पेका-मंभा-मेरी झालर-दुंदुभि,

तत विगेरे. प्रथम-शतक.

सर्वद्रसृह.

यास्कना आ प्राचीन उक्षेत्र उपरथी ए वार्जु लांकिक होय एम स्पष्ट जणाय छे-पण ए पर्णु ज जुर्जु धएउं होवाथी एने दिव्य गणवामां आये छे. ४. जुओ भग० प्र० सं० प्र० ५८-६०:—अतु०

^{9.} आ शब्द ' जुड बन्धने ' अथवा ' कुट ' धातु उपस्थी बनेलो छे. २. आर्षताने लीधे शब्दना विशेषण तरीके पण अहीं नपुंसकलिए वपराएलं छे:—श्रीअभय०

३. टीकाकारश्रीए तो दंदुभिने देवतुं वाजुं जणाव्युं हे. ए विषे महर्षि शास्क आ प्रमाणे जणाने हे:

^{ं &}quot; दुन्दुभिः " । ८

[&]quot; दुन्दुभिरिति शब्दानुकरणम्. हमो भिन्न इति या, दुन्दुभ्यते श्री स्थात् शब्दकर्मणः "

^{&#}x27;दं दु भि 'ए अवाजनं अनुकरण छै. अथवा ते, झाडना एक भागने भेदीने बनाववामां आवे छे माटे 'हुमो भिनः' नो अर्थ एण एमां घटी शके छे अथवा ए, 'दंदुभ ' धातु उपरंथी बनेलो शब्द छे:— (प्र० ६७७-६७८)

[.] ५. अई रिन 'नो 'अस्प 'अर्थ छे. ६. 'सब्प 'एटले 'सर्वतः '-श्रीअभयः

-अमितं. अंत विनाना शब्दने. ['मियं पि 'त्ति] मापवाछुं-गर्भज मनुष्य अने जीय द्रव्य वगेरेने-जाणे छे-इत्यादि. [' अमियं पि ' ति] माप विनानं-अनंत अयवा असंख्य एवा वनस्पति तथा पृथिवीना जीव द्रव्यादिकने-जाणे छे. [' सच्यं जाणहः' इत्यादि.] ए हकीकत द्रव्यादिकनी अपक्षाए क्रिहेल छे. शं०-केवळी जी । बधुं जाणे छे तेनुं शुं कारण ? समा०-[' अणंते ' इत्यादि.] केवळिनुं ज्ञान अनंत पदार्थने यहण करतुं होबाथी बाबना. अनंत छे, [' निच्चुडे नाणे केवळिस्स ' ति] कर्मनो-तद्दन नाश थया पछी थयुं छे माटे केवळिनुं ज्ञान आवरण विनानुं-शुद्ध-छे, बीजी वाचनामां तो-' निच्चुडे वितिमिरे विसुद्धे ' एवां त्रण विशेषणवाळो पाठ छे, तेमां निच्चुड-निर्हत-पूरे पूरुं, वितिमिर-नाश थएल आवरणवाळुं, एवं छे माटे जे विश्वद्ध.

छद्मस्य अने केविलनुं इसवुं अने उंघवुं

- ६. प्र०-- छंडमस्थे णं भंते । हसेज वा, उस्तुयाएज वा ?
 - ६. उ०- हंता, (गोयमा 1) हसेन ना, उस्सुयाएन ना.
- ७, प्र०--जहा में भंते ! छउमत्थे मणुस्से हसेख, जाव--उस्सुयाएज तहा में केवली वि हसेज वा, उस्सुयाएज वा ?
 - ७. उ०--गोयमा ! णो इणहे समहे.
- ८. प्र०—से केणहेणं भंते ! जाव-नो णं तहा केवली eतेज वा, जाव-उस्सुयाएज वां ?
- ८. उ० गोयमा! जं णं जीवा चरित्तमोहाणेजस्स कम्मस्स उदएणं हसंति वा, उस्सुयायंति वा; से णं केवालस्स निश्य, से तेणहेणं जाव-नो णं तहा.(केवली) हसेज वा, उस्सुयाएज वा.
- ९. प्र०—जीवे णं भंते ! हसमाणे षा, उस्सुयमाणे वा कइ कम्मपयडीओ बंधह !
- ९. उ०-गोयमा ! सत्तविहवंधए वा, अङ्गविहवंधए वा. एवं जाय-वेमाणिए; पोहत्तएहिं जीवेगिंदियवज्ञो तियभंगो.
- १०. प्र० छउमत्थे णं भंते ! मणुस्ते निदाएज वा, पय-लाएज वा ?
 - १०. उ० हंता, निहाएज वा, पयलाएज वा.

- ्६. प्र०—हे भगवन् ! छग्नस्य मनुष्य हसे अने काइ पण लेबाने उताबळो थाय ?
- ६. उ०--हे गौतमं ! हा, ते हसे अने उतावळो पण थाय खरो.
- ७. प्र०—हे भगवन् ! जेम छद्मस्य मनुष्य हसे अने उतावळो थाय तेम केवळी पण हसे अने उतावळो थाय ?
- ७. उ० —हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नथी-छग्नस्य मनुष्यनी पेठे यावत्—केवळी न हसे अने उतावळो पण न धाय.
- ८. प्र०-भगवन् ! इबस्य मनुष्यनी पेठे केवळी हसे नहीं अने उतावळो थाय नहीं तेनुं शुं कारण ?
- ें ८. उ०—हे गौतम ! दरेक जीवो चारित्रमोहनीय कर्क उदयधी हसे छे अने उतावळा थाय छे अने केकळन ता चारित्रमोहनीय कर्मनो उदय ज नथी माटे ते काइणाथी छग्नस्थ मनुष्यनी पेठे यावत् —केवळी हसता नथी तेम उतावळा. पण थता नथी.
- ९. प्र०—हे भगवन्! हसतो अने इतावळो थते। जीव
 केटला प्रकारना कर्मोने बांधे !
- ९. उ०—हे गाँतम! तेवा प्रक्रारना जाव सात प्रकारना कर्मोने बांधे के आठ प्रकारनां कर्मोने बांधे. ए प्रमाणे यावत्—विमानिक सुधी समज्ज्ञवं. तथा ज्यारे घणा जीवोने आश्रीने उपलो प्रश्न पूछाय त्यारे तेमां कर्मना बंध संबंधी त्रण भांगा आवे; पण तेमां जीव अने एकेंद्रियों न लेवा.
- १०. प्रक्र, है भगवन् ! छग्नस्थ मनुष्य निद्रा ले-उंघे अने उभी उद्गार्थ ?
- १०. उ०-हे गौतम ! हा, ते उंघे अने उमा उमा पण उंघे.

१. मूलच्छायाः — छदास्थी भगवन ! मनुत्यो हसेद् वा, उत्सुकायेत वा ? हन्त, गातमं ! हसेद् वा, उत्सुकायेत वा. यथा भगवन् ! छदास्थी समुध्यो हसेत्, यावत्—उत्सुकायेत तथा केवली अपि हसेद् वा, उत्सुकायेत वा ? गातम ! नाऽयस् अर्थः समर्थः तत् केनाऽर्थेन भगवन् ! यावत्—नो तथा केवली अपि हसेद् वा, उत्सुकायेत वा. गातम ! यद् जीवाः चारित्रमोहनीयस्य कर्मणः उद्देन हसन्ति वा, उत्सुकायन्ते वाः तत् केवलिनः नास्ति, तत् तेनाऽर्थेन यावत्—नो तथा केवली हसेद् वा, उत्सुकायेत वा. जीवो भगवन् ! हसन् वा, उत्सुकायमानो वा कित कर्मप्रकृतीः बष्नाति ? गातम ! सप्तविधवन्धको वा, अष्टिवधवन्धको वा एवं यावत्—वैमानिकः । प्रकृतिः जीव-एकेन्द्रियवर्षः त्रिभद्गः छदास्थो भगवन् ! मनुष्यो निद्रायेत क्षा, प्रवल्योत वा ! इन्त, निद्रायेत वा, प्रवल्योत वा: —अनुष्

उदएणं निहायंति वा, पयलाइंति वा; से णं केविलस्सं नित्थः प्रश्लोत्तरो जणाच्या हता, नेम निद्रा संबंधे पणः ते बन्ने संबंधे अवं तं चेव.

११. प्र०-जीवे णं मंते ! निदायमाणे वा, पयलायमाणे या कइ कम्मप्पगडीओ बंधइ !

११. उ०-गोयमा । सत्तविह्वंधए वा, 'अडुविह्वंधए या; एवं जाव-वेमाणिए; पोहत्तिएसु जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो.

— जैहा हसेज वा तहा, णवरं-दरिसणावराणिजस्स कम्मस्स — जेम आगळ हसवा वगेरे विषे केवळी अने छग्नास्थ-संबंधे प्रश्नोतरो जाणवा. विशेष ए के, छदास्य मनुष्य दर्शनावरणीय कर्मना उदयथी निदा ले छे अने उभी उभी उंघे छे अने ते दर्शनावरणीय कर्मनो उदय केबळिने नथी माटे तें, छबास्थनी पेठे निद्रा हेतो नथी. (इत्यादि बीजुं बधुं ते ज प्रमाणे जाणवुं.)

> ११. प्रo — हे भगवन् ! निश्चा लेतो के उभो उभो उंघतो जीत्र केटली कर्म प्रकृतिनो बंध करे (बांधे) ?

> ११. उ०--हे गौतम ! ते जीव सात कर्म प्रकृतिनो बंध करे के आठ कर्म प्रकृतिनो बंध करें (बांधे). ए प्रमाणे यावत्--वैमानिक सुधी जाणवुं. तथा ज्यारे घणा जीवोने आश्रीने उपलो प्रश्न पूछाय त्यारे तेमां कर्मना बंध संबंधी त्रण भांगा आवे, पण तेमां जीव अने एकेंद्रिय न लेवा.

२. अथ पुनरिष छद्मस्थमनुष्यमेवाऽऽश्रिसाहः—' छउमत्थे ' इसादि. ' उस्तुयाएज ' ति अनुत्सुक उत्सुको भवेद् उत्सुकायेत विषयाऽऽदानं प्रति औत्सुक्यं कुर्याद् इत्यर्थः. ' जं णं जीव ' ति यसात् कारणाद् जीयाः. ' से णं केवाहिस्स नित्य ' ति तत्पुन-**श्वारित्रमोहनीयं कर्म केवलिनो नास्ति इसर्थः. ' एवं जाव-वेमााणिए** ' ति एवमिति जीवाऽभिलापवद् नारकादिर्दण्डको वाच्यो यावद् बैमानिक इति. स चैवम्:-" नेरहए णं भंते ! हसमाणे वा, उस्सुयमाणे वा कइ कम्मपयडीओ बंधङ ? गोयमा ! सत्तविहबंधए वा, अद्विहबंधए वा '' इत्यादि. इह च पृथित्र्यादीनां हासः प्राग्भविकतत्परिणामाद् अवसेय इति. ' पोइतिएहिं ' ति पृथक्लसूत्रेषु बहुंबज्ञनसूत्रेषु " जीवा णं भंते ! हसमाणा वा, उस्सुयमाणा वा कइ कम्मपयडिओ बंधति १ गोयमा ! सत्तविहबंधगा वा, अहविह-्षंघगो या '' इत्यादिषु ' जीवे-गिंदिय० ' इत्यादि. जीवपदम् , एकेन्द्रियपदानि च पृथिव्याद्वीनि वर्जियत्वा अन्येषु एकोन्विंशतौ नारकादिपदेषु त्रिकभङ्गो मङ्गत्रयं वाच्यम् , यतो जीवपदे, पृथिव्यादिपदेषु च बहुत्वाद् जीवानां सप्तविधवन्धकाश्च, अष्टविधवन्धकाश्च इसेवम्-एक एव भङ्गको लभ्यते. नारकादिषु तु त्रयम् , तथाहिः—सर्व एव सप्तविधवन्धकाः स्युरिलेकः, अथवा सप्तविधवन्धकाश्च अष्टविधवन्धकश्च इत्येवं द्वितीयः, अथवा सप्तविधवन्धकाश्च अष्टविधवन्धकाश्च-इत्ये वं तृतीय इति. अत्रैव छवास्य-केवल्यधिकारे इदम-परमाहः—' छडमत्थे ' इसादि. ' निहाएज व ' ति निहाम्-सुखप्रतिबोधलक्षणां कुर्योद्-निहायेत, ' प्रयलाएज, व ' ति प्रचलाम् ऊर्धिस्यतिदाकरणलक्षणां कुर्यात्-प्रचलायेत.

२. हवे फरीने पण छश्रस्थ मनुष्य संबंधे ज कहे छ के-['छउमत्थे 'इत्यादि] ['उस्सुयाएजा 'ति] कोइ पण चीजने लेवा माटे उतावळ करे-उत्सुक थाय, ['जं णं जीव 'त्ति] कारण के, जीवो. ['से णं केवलिस्स नित्थ 'ति] वळी ते चारित्रमोहनीय कर्म-केविळिन ंनथी. ['एवं जात्र वेमाणिए' ति] जीवनी वक्तव्यतानी पेठे नारकथी मांडीने वैमानिक सुनी वक्तव्यता कहेवी. ते आ रीतेः⊸' नेरइए णं भंते ! हसमाण वा, उरसुयमाण वा कइ कम्मपयडीओ बधइ ? गोयमा! सत्तविहबंबए वा, अट्टविहवंघए वा ' इत्यादि, शं० -- मूळमां हसवा संबंधी सुत्रनी पाठ बधा संसारी जीवो संबंधे घटाववानो कहा छ तो ते केम बनी शकशे ? कारण के बधा जीवोमां पृथिवी, पाणी बगेरेना पण जीवो आवी जाय छे अने तिंभों तो हसी शकता ज नथी, अने एम होवाथी उपलो पाठ बधा जीवो गाटे केम घटी शके ? समा०--मूळनो-हसवा संबंधीनो-पाठ बधा जीवों माटें घटी शके छे- पृथिवी वगरेना जीवो माटे पण संगत थह शके छे. जो के पृथिवी वगेरेना जीवो पोतानी चालु स्थितिमां हसी शकता नथी, पण तेओ, तेओना कोइ पण पूर्व भवमां कोइ बार जरूर हसा हरो तो तेने अपेक्षीने उपलो पाठ तेओ संबंधे घटावयी. ['पोहत्तिएहिं देति] बहुवचन संबंधी सूत्रोमां-' जीवा णं भंते ! हसमाणा वा, उस्सुयमाणा वा कइ कम्मपयडीओ- बंधंति ? गोयमा ! सत्तविहबंधगा वा, अडविहबंधगा वा '-[' जीवेगिंदिय-' इत्यादि.] जीव अने एकेंद्रिय-पृथिवी वगरे-पद छोडी देवां अने बाकीनां १९ नारक वर्गरे-पदोमां त्रण मांगाओं कहेवा. कारण के, जीवो अने पृथिवी वर्गरेना जीवो घणा छ माटे तेमां एकवचनवाळो मांगो संभवतो तथी, पण 'सात प्रकारना वंधको-बांबनाराओ-अने आठ प्रकारना बंबको ' एवी एक ज भांगी संसवे हे. नारक वगेरेमां तो त्रण भांगा संभवे छे:--पहेलो मांगो-बधा य सात प्रकारनुं कर्म बांधनारा, बीजो भांगो-बधा य सात प्रकारनुं कर्म बांधनारा अने एक आठ प्रकारनुं कर्म बांधनार, त्रीजो भांगो-बधा य सात प्रकारनुं कर्म बांधनारा अने बधा य आठ प्रकारनुं कर्म बांधनारा. अहीं छग्नस्त अने केवलिनो अधिकार चालतो होवाथी ते संबंधे मा एक बीजी बात कहें छे:--[' छउमत्ये ' इत्यादि.] [' निद्दाएज व ' ति] सुखे जागी शके एवी रीते उंघे, [' पयलाएज व 'ति] उभी उभी उंचे, (जे उंघ उभा उमा लेकाम तेने 'प्रचला 'कहे छे.)

केर्राह्में नयी नारकथी देव

पृथिबी विंगेरे

भांगाओ.

निद्रा अने

^{9.} मूलच्छायाः — यथा हसेद् वा तथा, नवरम् –दर्शनाऽऽवरणीयस्य कर्मणः उदयेन निद्रायन्ते वा, प्रचलायन्ते वा; तत् केवलिनो नास्ति. अन्यत् तंबव. जीवो भगवन् ! निदायमाणो वा, प्रचलायमानो वा कति कमित्रकृतीः बध्नाति ? गातम ! सप्तविधवन्धको वा, अष्टविधवन्धको वा, एवं मानत्-् बैमानिकः; पृथक्त्वेषु जीव-एकेन्द्रियवर्षः त्रिभङ्गः--अञ्च०

शकदूत हरिणेगमेषी देव.

?२. प्र०—हैरी णं भंते ! हरिणेगमेसी सकदूए इत्थीगन्मं संहरमाणे ।किं गम्भाओ गन्मं साहरइ ! गन्माओ जोणि साहरइ ! जोणीओ जोणि साहरइ !

?२. उ० —गोयमा ! नो गव्भाओ गव्मं साहरइ, नो गब्भाओ जोणिं साहरइ, नो जोणिओ जोणिं साहरइ, परामुसिय, परामुसिय अव्याबाहेणं अव्याबाहं जोणिओ गब्भं साहरइ.

? ३. प्र०-पम् णं मंते । हरिणेगमेशी सकस्त णं दूए इत्थीगन्मं नहिंसिरंसि वा, रोमकूत्रंसि वा साहिरिचए वा, नीह-रिचए वा ?

? ३. उ० — हंता पभू, नो चेव णं तस्त गन्भस्त किंचि वि आवाहं वा, विवाहं वा उप्पाएजा, छविच्छेदं पुण करेजा, ए सुहमं च णं साहरेज वा, नीहरेज वा. १२. प्र०—हे भगवन ! इंद्रनो संबंधी शक्तनो दूत हिरिनेगमेथी नामनो देव ज्यारे स्त्रीना गर्भनुं संहरण करे छे त्यारे खोना गर्भनुं संहरण करे छे त्यारे खों एक गर्भाशयमांथी गर्भने छड़ने बीना गर्भाशयमां मूके छे ! गर्भथी छड़ने योनि द्वारा बीजी (स्त्री) ना उदरमां मूके छे ! योनि द्वारा गर्भने बहार काढ़ीने बीजा गर्भाशयमां मूके छे ! के योनि द्वारा गर्भने पेटमांथी काढीने पाछो ते ज रीते (योनि द्वारा ज बीजीना) पेटमां मूके छे !

१२. उ०—हे गौतम! ते देव, एक गर्भाशयमांथी गर्भने छइने बीजा गर्भाशयमां मूकतो नथी, गर्भथी छइने योनि वाटे गर्भने बीजीना पेटमां मूकतो नथो, तेम योनिवाटे गर्भने बहार काढीने पाछो योनिवाटे (गर्भने) पेटमां मूकतो नथी, पण पोताना हाथ वडे गर्भने अडी अडीने अने ते गर्भने पीडा न थाय तेवी रीते योनि द्वारा बहार काढीने बीजा गर्भाशयमां मूके छे.

१३. प्र०—हे भगवन् ! शक्तनो दूत हरिनैगमेषी देव स्त्रीना गर्भने नखनी टोच बाटे या तो हंबाडाना छिद्र बाटे अंदर मूंकवा के बहार काढवा समर्थ छे ?

?३. उ०-हे गौतम ! हा, ते तेम करवाने समर्थ छे. उपरांत ते देव गर्भने कांइ पण ओछी के वधारे पीडा थवा देती नथी तथा ते गर्भना शरीरनो छेद-शरीरनी कापकूप-करे छे अने पछी तेने घणो सूक्ष्म करीने अंदर मूके छे के बहार काढे छे.

३. केवल्यधिकारात् केविलिने महावीरस्य संविधानकमाश्रिल इदमाहः — 'हरी ' इलादि. इह च यद्यपि महावीरसंविधानाऽभि-धायकं पदं न इस्यते, तथापि 'हरिनैगमेषी ' इति बचनात् तदेवाऽनुमीयते, हरिनैगमेपिणा भगवतो गर्भःन्तरे नयनात्. यदि पुनः सामान्यतो गर्भहरणिवयक्षा अभविध्यत् तदा 'देवे णं भंते ! ' इत्यवश्यदिति. तत्र हरिरिन्दः, तस्तंविधावाद् हरिनैगमेपी—इति नाम. 'सक्द्र्ण ' ति शक्द्र्तः—शकाऽऽदेशकारी, पदाति-अनीकाऽधियतिः, येन शकाऽऽदेशाद् भगवान् महावीरो देवानन्दागर्भात् विश्वलागमें संहत इति. ' इत्थीगम्मं 'ति स्त्रियाः संवन्धी गर्भः—सजीवपुद्गलिण्डकः स्त्रीगभः, तम्—' संहरमाणे 'ति अन्यत्र नयन्, इह चतुर्भिक्तिनः तत्र गर्भाद् गर्भाशयाद् अवधेः, गर्भ गर्भाशयान्तरं संहरति प्रवेशयति नार्भ सजीवपुद्गलिण्डलशणमिति प्रकृतम् इत्येवः तथा गर्भाद् अवधेयोनि गर्भिनिगमद्वरं संहरति-योग्या उदरान्तरं प्रवेशयति इत्यर्थः—२. तथा योनितो योनिद्वारेण गर्भ संहरति-गर्भाशयं प्रवेशयति इत्यर्थः—३. तथा योनितो योनेः सकाशाद् योनि संहरति—नयति—योग्या उदराद् निष्काश्य योनिद्वारेणैव उदराऽन्तरं प्रवेशयति इत्यर्थः—३. तथा योनितो योनेः सकाशाद् योनि संहरति—नयति—योग्या उदराद् निष्काश्य योनिद्वारेणैव उदराऽन्तरं प्रवेशयति इत्यर्थः—४. एतेषु शेषिनिधेन तृतीयमनुजानकाहः—' परामुसिय ' इत्यादि. परामुश्य परामुश्य तथाविधकरणव्यापारेण संस्पृश्य संस्पृश्य स्थानितो निर्गमनं स्त्रीमिति प्रकृतम्, यचेह योनितो निर्गमनं स्त्रीमस्थिते—सुसंसुस्त्रेवः स्रिः योनितो वोनिद्वारेण निष्काश्य गर्भे गर्भासीति प्रकृतम्, यचेह योनितो निर्गमनं स्त्रीमसंस्थेकं तञ्जोकच्याराऽनुवर्तनात्, तथाहिः—' पर्मूणं ' इत्यादि. ' नहसिरंसि ' ति नखाग्ने. ' साहरित्तए ' ति संहर्ते प्रवेशयितुम्, ' नीहारितए ' ति विभक्तिविपरिणामेन नख-शिरस्तो रोमकूपाद् वा निहर्ते निष्काशयितुम्, ' आवाहं ' ति इत्यद्वाधाम्, ' स्रवन्यं च लं ' इति स्रक्षमित्यं च व्यति स्वार्यः कुर्याद्वारान्तर्ता, ' ए सुर्यं च लं ' इति स्रक्षमित्यं च व्यति स्वार्यः सुर्यं स

^{9.} मूलच्छायाः—इरिभेगवन् ! हरिनैगमेषिः शकदतः स्त्रियाः गर्भ संहरन् किं गर्भाद् गर्भ संहरति, गर्भाद् योनि संहरति, योनितो गर्भ संहरति, योनितो गर्भ संहरति, योनितो योनितो योनितो योनितो योनितो योनितो गर्भ संहरति, पराष्ट्रय अव्यायाधेन शव्यायाधे योनितो गर्भ संहरति, प्रमुश्य अत्यायाधेन शव्यायाधे योनितो गर्भ संहरति, प्रमुर्भगवन् ! हरिनैगमेषिः शक्तस्य दूतः स्त्रीगर्भ नख्तिरित वा, रोमकूपे वा, संहर्तुं वा, निहर्तुं वा ! हन्त, प्रमुः; नो वैव तस्य मुर्भत्त-किन्विद अपि आदार्था वा, विवाधां वा उत्पाद्वेत, छविच्छेदं पुनः कुर्यात्, इति सूक्ष्मं व संहरेद्-वा, निहरेद् वाः—अनु०

ं ३. आगळना प्रकरणमां केवळी संबंधे हकीकत कही छे. तो हवे आ. प्रकरणमां पण श्रीमहाबीर (देवळी) नुं उदाहरण लड्ने आ बात कहे छे के ---['हरी ' इत्यादि.] शं० --- आ ठेकाणे मूळमां ' महाबीर ' शब्द तो नयी तो पछी अहीं कहेवामां आवती बात महाधीर शंका. संबंधे छे एम शाथी जणाय ? समा० -- जो के, अहीं मूळमां ' महावीर ' नुं नाम नथी जणाव्युं तो पण ' हरिनैगरेषी ' देवनुं नाम आववाथी समाधान. आ बात महावीर संबंध होय एवं अनुमान थवं शृक्य छे. कारण के, ज्यारे महावीर गर्भावस्थामां हता त्यारे तेनी फेरबद् ते ते देवे करी हती. जो कदाच अहींनी हकीकत महाबीर संबंधे न घटावयानी होत तो स्वकार मूळनी अंदर हरिनैगमेषिनुं नाम न ळखत, पण सामान्य रीते को इन पण देवनुं निरूपण करत अने तेम न करतां जे ए देवनुं ज नाव जगान्युं छे तेथी आ हकी कर्त मैहाबीरने माटे घटाववी एवं आगळनुं अनुमान महाबीर.

१. टीकाकारश्री जणावे छे के, '' आ सूत्र, श्रीमहावीरना गर्भापहारने लगतुं छे. '' ते बाबतना टेकामां तेओ आ एक दलील पण जणावे छे के-." सूत्रना मूळमां सामान्य देवनी उहेख नहि करतां शकदूत हरिणेगमेवी देवनो गर्भना बदलावनार तरीके उहेख करेलो छे अने महावीरनो गर्भ ६द%वा -माटे ए ज देव आव्यो हतो तेथी आ सुत्रमां महावीरनं न म न होवा छतां पण आ उल्लेख महावीरने ज बंघ बेसते आदे छे. " आ उल्लेख विषे आपणे कांद्र खतंत्रपणे विचारीए ते पहेलां ते उड़ेखने लगतो ऐतिहासिक समय विचारीए ते ठीक गणाशे. अंग-यंथीमां आ उड़ेख आचारांग सूत्रना . तह्न छेवटना भागमां भावना-चृलिकामां आये छे. व्याख्याप्रज्ञप्ति-भगवती-सूत्रमां आ उहेख उत्तना सूत्रमां नोंघाएलो छे. ए सिताय आर्यश्री-भद्रबाहुरवित कल्पसूत्रना मूठमां पण ए हकीकत नोंबाएछी छे--- हो रीते आचार-अंग, भगवती अने कलासूधमां ए हकीकत नोंबाएछी छे. नेवी वीगतथी बीजा अंगोमां ए हकीकतनी नोंच जडती नथी. भाषा-शःखनी हिष्टए आचार-अंग सूत्र बीजां सूत्री करतां विशेष प्राचीन छे अने एम अनुभव पण थाय छे एथी कदाच आपणे आचार-अंगमां अंतने भागे आवता आ मभापहारचा उहेखने विशेष प्राचीनता आपीए-पण तेम करतां भाचार्य श्रीहेमचंद्रजी आपणने अटकाने छे अने तेओ पोताना शब्दोमां आ प्रमाणे जणावे छेः [नीचेना उहेल्लमां आचार-अंगमां आवेली भावना⊸ चूलिका 'क्या वखते बनी '? तेने लगती एक दंतकथा परिशिष्ट पर्वना नवमा सर्गमां ८३ थी १०१ श्लोकमां आचार्यश्रीए नोंधेली छे, ते उपरधी आपणे ते चूळिकानो काळ वीरास्-वीजो सैको कल्पी शकीए छीए-अने तेथी ज तेने आचार-अंगतुं श्रीभद्रवाहुजीना समयनुं उमेरण गणी सकीए छीए. 🖯 🕙

68

64

८६

ون

30

९२

९३

३५

٩ **६**

3,19

" ततोऽयुक्ताः पुनस्तत्र खरूपस्थं निरूप्य च, वर्गन्दरे स्थ्उभद्रं ज्येष्टा चःख्यविजां कथाम्. श्रीयकः सममस्माभिद्धिामाद्त किं लसा, क्षुपाव'न् सर्वदा कर्तु नैकमक्तमपि क्षमः. मयोक्तः पर्श्वणायां प्रलाख्याद्यय पार्शीम्, स प्रत्याख्यातवानुक्ती मया पूर्वेऽवधा पुनः. रवं प्रखाख्याहि पूरीर्ध पर्वेदमतिदुर्रुभम्, इयान् कालः सुखं चैत्य-परिपाट्याऽपि यास्यति. प्रवापादि तथैवाऽसा समयेऽभिहितः पुनः, तिष्टेवानीमस्लगाधीमत्यकारीत् तथैव सः. प्रचासन्नाऽधुना राज्ञिः सुखं सुप्तस्य यास्यति, तत् प्रवाख्याह्मकार्थमित्युक्तः से इक्रोत् तथा. ततो निशीये संप्राप्ते समस्त् देव-गुरूनसा, क्षुत्वीडया प्रसरन्त्या विषद्य त्रिदिवं यया. ऋषिचातो गयाऽकारी-त्युताम्यन्ती ततस्त्वहम् , पुरः ध्रमणसंघत्य प्रायश्चित्तय . संधे प्रज्यस्यद् व्यथायीदं भवत्या शुद्धभ वया, प्रायिधित्तं ततो नेह कर्तव्यं किञ्चिद्स्ति ते. ततोऽहमिखको वं च साक्षादाङ्गाति चेजिनः, तते हृद्यसंवित्तिज्ञायते सम नान्यथा. सकतः संघः कायोत्सर्गमदादथ, एय शासनदेव्योक्तं ब्रुत कार्यं करोमि किम् ! जिनगर्भमिमां संघोऽप्येवमभाषिष्ट साऽऽहयनिविंध्नगत्यथं कायोरसर्गेण तिष्ठतः संघे तत् प्रतिपेदाने मां साऽनेवीद् जिनात्तिके. ततः सीमन्धरः खामी भगवान् वन्दितौ मया-भरतादागताऽऽवयं निर्देशिखवद्ञिनः, ततोऽ इं छित्रसंदेहा देव्याऽऽनीता निजाशयम्. धीसंघायोपदां प्रवीद्-मन्मुखेन प्रसादभाक्, श्रीमान् सीमंधरखामी चरवार्यध्ययनानि च. भावना च विमुक्तिश्व रतिकलामथाऽ।रम, तथा विचित्रचर्या च तानि चैतानि नामतः. अध्येकया वाचनया मया तानि धुतानि च, उद्गीतानि च संघाय तत् तथाख्यानपूर्वकम्. 🕄 ९ अभाराहरू चुले हे आधमध्ययनद्वयम्,

" श्रीस्थूलभद्रनी बहेनोए तेमने-स्थूलभद्रने-खरूपस्य जोइने बांद्या अने तेमांनी मोटी बहेने शोतानी वात आ प्रवाणे कही: (८३) भाइ श्रीयके अमारी साथे दीक्षा लीघी हती, किंतु ए कोइ दिवस एकावर्णु पण न करी शके एवी क्षुत्रावान हमेश रहेती. (८४) में श्रीयकने वहां के आज पनुसणमां पाहपीनो नियम कर-तेणे पण ते नियम कथा ए निय-मनी अवधि पूरी थये फरीवार में कहां के, (८५) आज तुं पूर्वार्थ-हारेमड्ड -कर-आ पर्व घणुं दुर्लभ छ अने एटलो वखत तो चेखपरिपाक्ष करता पण चाल्यो जशे.(८६) एतो पण एणे स्वीकार कर्या. पछी वखत थये करी -बार में कह्युं के, हवे तो अपार्ध-अवदू-ने करी नाख-तेणे पण तेम ज कर्युं. (८७) पछी फरीबार में कह्युं के, इवे तो रात्री पासे ज छे अने ते सूतां सूतां सुखे चाली जहाे माटे उपवास ज करी नाख अने तेणे पण खरेखर उपवास क्यां. (८८) त्यार पछी मधरात धरे देव अने गुरूओं ने याद करतां करतां भूखनी पीडाथी एणे देह छोड़चो अने खर्मनो आग्रय -लीघो. (८९) मने खेद थयो के, अरे रे में आ ऋषिदल्या करी अने ए माटे में श्रीश्रमणसंघ पासे प्रायश्चित्तनी याचना करी. (९०) संघे कहां के, हे श्रमणि । तमो विशुद्ध भावे इतां तेथी तमारे आ माटे कांइ प्रायश्चित्त करवानुं नथी. (९१) त्यार पछी में कह्युं के, जो साक्षात् जिन ज आ विषे खुडासो करे तो मने निरांत थाय-निह तो नहि. (९२) आ माटे ए बखते सकळ संघे काउसग्ग (कायोत्सर्ग-ध्यान) कर्या अने-तेथी शासनदेवीए आवीरे कहुं के, बोलों हुं काम करुं ! (९३) संघे पण कहुं के आ साध्वीने जिननी पासे लह जा, पछी देवीए कहा के निर्विधने माटे हु आबुं त्यां सुधी वाउसग्गे रही. (९४) संधे तेम कर्यु अने देती मने-(ए साध्वीने) जिननी पासे लड् गइ. पंछी खां जड्, में भगवान् सीमंधर खामिने वंदना करी. (९५) जिने कहुं के, '' आ साध्वी भरतक्षेत्रधी आवेली छे अने निदाष छ." खार पछी मार्गे संशय टक्री गयो अने देवी मने मारे स्थाने लावी. (९६) कृपाळु कीमंधर खामिए मारा मुख द्वारा श्रीमंघने चार अध्ययनो मेट तरीके मोकल्यां छे. (९७) ते चार् अध्ययनो-नां नाम आ छेः भावना, विमुक्ति, रतिकल्प [वर्तमानमां (रतिवावय)] अने दिचित्रचर्या [वर्तमानमां (विविक्तनर्या)] (९८) में ए चारे अध्ययनोने ए ६ ज वाचना द्वारा धरी राख्यां अने जेम हतां तेमः श्रीसंघ पासे संभळावी दीघां. (९९) पैलानां वे अध्ययनोने आचार अंगनी चूला तरीके संघे योज्यां अने बीजां वाकीनां बेने दशवैकालिकनी साथे संघे

रामद्ति. नेदा**–त्रिश**ला. र्भे दहलदाना वार प्रकार.

टढ थाय छे. जे, इंद्रनो संबंधी होय ते 'हरि 'कहेवाय. हरिनैगमेषी पण इंद्रनो संबंधी छे माटे ते 'हरि 'कहेवाय छे. ['सक्कदूए 'ति] हिरिनैगमेषी देव शकनी आज्ञाने माननार अने पायदळ सेनानो उपरि छे माटे ते 'शकदूत ' कहेवाय. ते हरिनैगमेषिए इंद्रनी आज्ञाथी गर्भावस्थामां रहेटा भगवान् महाबीरनी फेरवणी करी हती—तेओंन देवानंदाना गर्भमांथी त्रिशलाना गर्भमां मूक्या हता. ['इत्थीगब्मं' ति] स्रीनो गर्भ-जीवसहित-जीववाळो-पुद्रलिपंड, तेने [' संहरमाणे ' ति] बीजे ठेकाणे लइ जतो. आ स्थळे गर्भने फेरववाना चार प्रकार छे:---

१. गर्भाशयमांथी गर्भने लड्ने बीजा गर्भाशयनां मूकवो.

२. गर्भाशयमांथी गर्भने लद्दने योनिवाटे बीजा गर्भाशयमां मूकवो.

३. योानवाटे गर्भने बहार काढीने बीजा गर्भाशयमां मूकवो.

8. योनिवाटे गर्भने बहार काढीने योनिवाटे ज बीजा गर्भाशयमां मूकवो.

आ चार रीतिमांथी मात्र एक ज बीजी रीत गर्भनी फेरबदली माटे अहीं उपयोगी गणी छे अने ते माटे कहे छे के, ['परामुसिय' इत्यादि] धोताना हाथनी तेत्रा प्रकारनी कियावडे पीडा न थाय तेम स्रीना गर्भने अडकी अडकीने योनिवाटे बहार काढीने बीजा गर्भाशयमां मूके छे. शं० - देवनी शक्ति धणी विचित्र होयं छे अने तेथी ते, गमें ते ठेकाणेथी गर्भने बहार काढी शके छे तो पछी तेणे योनिवाटे ज गर्भने केम बहार काढथे। १ समा० —काची के पाको कोइ पण प्रकारनो गर्भ खाम।विक रीते योनिवाटे ज बहार आवे छे एवीं जातनी प्रथा लोकोमां जणाय छे तो ते प्रथाने अनुसरीने अहीं देवे पण तेम कर्डी छे. आगळना प्रकरणमां गर्भनी फेरबदली संबंधी हकीकत कही छे अने हवे ते संबंधे नक्ष म. देवना सामर्थ्यनीं बाबत जणावतां कहे छे के, ['पभूणं 'इत्यादि.] ['नैहसिरंसि 'त्ति] मखना अग्र भाग-नखनी टोच-थी ['साहिरित्तए 'ति] गर्भने प्रवेशाववा-अंदर दाखल करवा-अने ते ज वाटे ['नीहिरित्तए 'ति] गर्भने बहार काढवा ते देव समर्थ छे. कापक्र. ['आबाहं 'ति] थोडी पीडाने, ['विबाहं 'ति] वधारे पीडाने. ['छविच्छेदं 'ति] बळी शरीरनी कापकूप करीने ते देव गर्भनी कश्य है. फेरबद्रित करे छे. कारण के, कापकूप कर्या सिवाय नखनी टोवने मार्गे गर्भने दाखळ करवी ए अशक्य छे. ['ए सुहमं च णं 'ति] गर्भने घणो सूक्ष्म करीने तेनी फेरबद्ली थाय छे.

आर्य श्रीअतिमुक्तकः

ते णं काले णं, ते णं समए णं समणस्त भगवओ महावी-रस्स अंतेशासी अइमुत्ते णामं कुमारसमणे पगइभद्दए, जाव-विणीए. तए णं से अइमुत्ते कुमारसमणे अत्र या कयाई महाव्-दिकायांसि निवयमाणांसि कवलपिंडम्गह-स्यहरणमायाए वहिया संपद्विए विहाराए. तए णं अइमुत्ते कुमारसमणे वाहयं वहमाणं पासइ, पासित्ता महियाए पार्ति बंधइ, बंबिता ' णाविया मे, णाविया मे ' नाविओ विव णावमयं पडिग्गह्नं उद्गंसि कड़ पव्याहमाणे, पंच्याहमाणे अभिरमर, तं च थेरा अदनख, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता एवं वदासीः---

ते काले, ते समारे श्रमण भगवंत महावीरना शिष्य अतिमु-क्तक नामना कुमारश्रमण, जेओ खभावे भोळा अने यावत्-विनयवाळा हता. ते अतिमुक्तक कुमारश्रनण अन्य कोइ दिवसे भारे वरसाद वरसती हती त्यारे पोतानी काखमां पात्रुं अने रजोहरण टइने बहार विहार माटे (वडी शंकाना निवारण माटे) चाल्या. त्यार पढ़ी बहार जतां ते अतिमुक्तक कुमारश्रनणे वेता पाणीनुं एक नानुं खाबोचियुं जोयुं-तेने जोया-पछी ते खाबो-चिया फरती एक माटीनी पाँळ बांधी अने 'आ मारी नाव छे, आ मारी नांव छे ' ए प्रमाणे नाविकर्ना पेठे पोताना पात्रने नावरूप करी-पाणीमां नाखी ते कुमारश्रमण प्रवाहे छे-पाणीमां तरावे छे-ए रीते ते, रमत रमे छे. हवे ए एकारना बनावने स्थविरोए जोयो अने जोया पछी तेओए जे तरफ श्रीमहावीर स्वामी छे ते तरफ आवीने आ प्रमाणे कहां के:---

दशरेकालिकस्यान्यदथ संघेन योजितम्. ९०० इलाह्याय रथ्लभद्रानुहाता निजमाश्रयम्."१०१

जोडी दीधां. (१००) ए प्रमाणे कहीने श्रीस्थ्लम् इनी अनुमतिधी ए साध्वी पोताने आश्रये पाछी आवी. " (१०३)

श्रीहेमचंद्रजीना आ उद्येखमां आपणे गर्भापहारने लगती दंतकथा जेवी ए हक्कितनी विजित्र उररति जोद सकीए छीए. एमां खुरी तो ए छे के, ए इकीकत श्रीकीर परी बसें वरसे बहार आवी अने वली श्रीसीमंघर तीर्थकरना श्रीमुख्यी ए इकीकत प्रकट यह (१) !!! दिगंबर संप्रदाय ए इकीकत ने स्वीकारतो नथी तथी अने अनेक महापुरुपोनां जीवनमां एवी एवी अवाकृतिक हकीकतों मेळाइ गई छे तथी आ हकीकतने विशेष सिद्ध करवानो प्रवास करवो ए समयभक्षण सिवाय बीलुं कहुं नथी. वळी आ हकीकत देवनी मारफत एक छुमंतरनी पेठे थयानी लेख मळती होवाथी एनी अप्रकृतिकता तरी आवे छे:—अनु०

- १. अहीं सातमी विभक्तिने पांचमी विभक्तिना अर्थमां समजवानी छे:--भ्रीअमय०
- रू देव माटे तो ' ए अज्ञक्य छे ' एम कहेवं मर्भागहारने पण अज्ञक्य कहेवा बरोबर छे:-अनु०
- १. मूळच्छायाः---तिस्मन् काले, तिस्मन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तेवासी अतिमुक्तो माम कुमारश्रमणः प्रकृतिसद्दक्षी यावत्--विनीतः. ततः स अतिमुक्तः कुमारश्रपणोऽन्यदा कदाचिद् महावृष्टिकाये निपतमाने कक्षाप्रतिष्रह—रजोहरणम् आदाय बहिः संप्रस्थि । विहाराय. ततः अितमुक्तः कुमारधमणः वाहकं वहमानं पश्यति, दङ्घा मृतिकया पालिं बधाति; वद्ष्वा 'नौका मम, नौका मम ' नाविक इव नावम् अयं प्रतिप्रहरूम् उदके कृत्वा प्रवाह्यन्, प्रवाह्यन् अभिरमते, तं च स्थविराः अद्राधुः, येनैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तेनैव उपाणक्वित, उपागम्य पूर्वम् अंवादिषुः—अनु•

. १४. प्र०—एवं खलु देवाणुष्पियाणं अंतेवासी अइमुत्ते णामं कुमारसमणे भगवं, से णं भंते ! अइमुत्ते कुमारसमणे कातिहिं भवरगहणेहिं सिज्झिहिति, जाव—अंतं करेहिति ?

१४. उ०—अजो ! ति समणे भगवं महावीरे ते थेरे एवं वयासी:-एवं खलु अजो ! ममं अंतेवासी अइमुत्ते णामं कुमार-समणे पगइभद्दए, जाव-विणीए, से णं अइमुत्ते कुमारसमणे इमेणं चेव भवग्गहणेणं सिन्झिहिति, जाव अंतं करिहिति; तं मा णं अजो ! तु-भे अइमुत्तं कुमारसमणं हीलेह, निंदह, खिसह, गरहह, अवमन्नह; तुन्भे णं देवाणुष्पिया ! अइमुत्तं कुमा-रंसमणं अगिलाए संगिण्हह, अगिलाए उविगण्हह, अगिलाए मत्तेणं, पाणेणं, विणएणं वेयाविद्यं करेह. अइमुत्ते णं कुमार-समणे अंतकरे चेव, अंतिमसरीरिए चेव; तए णं ते थेरा भगवंतो समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वृत्ता समाणा समणं भगवं महावीरं वंदंति, नमंसंति; अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगि-ण्हांति, जाव-वेयाविद्यं करेंति.

१४. प्र०—हे देवानुप्रिय ! भगवान् अतिमुक्तक नामे कुमारश्रमण आपना शिष्य छे. तो हे भगवन् ! ते अतिमुक्तक कुमारश्रमण केटला भवो कर्या पछी सिद्ध थशे यावत् सर्वे दु:खोनो नाश करशे !

१४. उ० — हवे श्रमण भगवंत महावीरे ते स्थावरोने आ प्रमाणे कह्युं के: — हे आर्थो ! स्वभावे भोळो यावत् — विनयी एवो मारो शिष्य अतिमुक्तक नामनो कुमारश्रमण आ भव पूरो करीने ज सिद्ध थशे यावत् — सर्व दुःखोनो नाश करशे. माटे हे आर्थो ! तमे ते अतिमुक्तक कुमारश्रमणने हीलो नहीं, निंदो नहीं, खिंसो नहीं, वगोवो नहीं अने तेनुं अपमान पण करो नहीं. किंतु हे देवानुप्रियो ! तमे ग्लाने राख्या सिवाय ते कुमारश्रमणने साच्यो, तेने सहाय करो अने तेनी सेवा करो. (कारण के) ते अतिमुक्तक कुमारश्रमण सर्व दुःखोनो नाश करनार छे अने आ छेला शरीरबालो छे—आ शरीर छोड्या पछी तेने बीजी वार शरीरधारी थवानुं नथी. श्रमण भगवंत महावीरे ते स्थविरोने पूर्व प्रमाणे कह्या पछी ते स्थविरोने पूर्व प्रमाणे कह्या पछी ते स्थविरोने श्रवं प्रमाणे कह्या पछी ते स्थविरोए श्रमण भगवंत महावीरने वंदन कर्युं अने नमन कर्युं अने पछी ते स्थविरोए श्रीमहावीरनी आज्ञा प्रमाणे ते अतिमुक्तक कुमारश्रमणने विना ग्लानिए साचव्या अने यावत्—तेओनी सेवा करी.

- 8. अनन्तरं महावीरस्य संबिध गर्माऽन्तरसंक्रमणळक्षणमाश्चर्यमुक्तम्. अथ तिच्छिष्यसंबधि तदेव दर्शियृतुमाहः—'ते णं ' इसादि. 'कुमारसमणे 'ति षड्वर्षजातस्य प्रव्रजितस्वात्. आह चः—'' छेव्बरिसो पव्यइओ निग्गथं रोइऊण पावयणं '' ति. एतदेव आश्चर्यमिह, अन्यथा वर्षाऽष्टकाद् आराद् न प्रवच्या स्यादिति. 'कक्सपिडिग्गह—रयहरणमायाए ' ति कक्षायां प्रतिप्रहक्तम्, रजोहरणं च आदायेस्पर्यः. 'णाविया मे ' ति 'नौका द्रोणिका मम इयम्—इति विकल्पयन् ' इति गम्यते. 'नाविओ विव नावं ' ति नाविक इव नौवाहक इव नावं द्रोणीम्. 'अयं ' ति असौ अतिमुक्तकमुनिः प्रतिप्रहकं प्रवाहयन्तिरमते; एवं च तस्य रमण्किया बालाऽवस्थावलाद् इति. 'अदक्षु 'ति अदाक्षुर्दष्टवन्तः—ते च तदीयामस्यन्ताऽनुचितां चेष्टां दृष्ट्वा तमुपहसन्त इव मगवन्तं पप्रच्छुः. एतदेवाहः—'एवं खलु ' इसादि. 'हीलेह ' ति जासाशुद्घाटनतः. 'निंदह ' ति मनसा. 'शिंसह ' ति जनसमक्षम्. 'गरहह ' ति तत्समक्षम्. 'अवमबह 'ति तदुचितप्रतिपत्यकरणेन. 'परिभवह 'ति कचित्पाठस्तत्र परिभवः समस्तपूर्वोक्तपद (दा) करणेन. 'अगिलाए ' ति अग्लान्या अखेदेन, 'संगिण्हह ' ति संगृहीत—स्वीकुरुत. 'उपिण्हह ' ति उपगृहीत उपष्टमं कुरुत. एतदेवाह—'वेयाविषयं ' ति वैयाहत्यं कुरुत 'अस्य '—इति शेषः. 'अंतकरे चेव ' ति भवच्छेदकरः, स च दूरतरभवेऽपि स्याद् अत आहः—'अतिमसरीरिए चेव ' ति चरमशरीर इसर्थः.
- 8. आगळना प्रकरणमां महावीर संबंधी गर्भनी फेरबदली थवारूप आश्चर्यनी ह्कीकत जणावी छे तो हवे आ प्रकरणमां पण महावीरना शिष्य संबंधी अचंबो पमाडनारी एक वातने देखांडवाने कहे छे के, ['ते णं 'इत्यादिः] ['कुमारसमणे 'ति] छ वर्षनी उमरे दीक्षित थएल छे माटे कुमारश्रमणः कहुं छे के, '' (अतिमुक्तक कुमारश्रमणः) निर्धेथना प्रवचन उपर रुवि करीने छ वर्षनी उमरे प्रवजित थएल छे ' अने ए ज बात अचंबो पमाडे तेवी छे. कारण के, आठ वरसनी उमर थया पहेलां दीक्षा होवी संभवती नथी. ['कक्खपडिग्मह-रयहरण-

कुमारश्रमण. छ वर्षे **यीक्षा**.

^{9.} मूलच्छायाः—एवं खळ देवानुगियाणाम् अन्तेवासी अतिमुक्तो नाम कुमारश्रमणो भगवान्, स भगवन्! अतिमुक्तः कुमारश्रमणः कितिभः भवमहणैः सेत्स्यितं, यावत्—अन्तं करिव्यति ? आर्थाः ! इति श्रमणो भगवान् महावीरस्तान् स्थविरान् एवम् अवादीतः—एवं खळ आर्थाः ! मम अन्तेवासी अतिमुक्तो नाम कुमारश्रमणः प्रकृतिभद्रकः, यावत्—विनीतः, स—अतिमुक्तः कुमारश्रमणः अनेन च एव भवग्रहणेन् सेत्स्यितं, यावत्—अन्तं करिव्यति; तद् मा आर्थाः ! यूयम् अतिमुक्तं कुमारश्रमणं हीलयतं, लिन्दतं, खिसतः, गईध्वम्, अवमन्यव्वम्; यूयं देवाऽनुष्रियाः ! अतिमुक्तं कुमारश्रमणम् अग्लानतया संग्रहणीतं, अग्लानतया उपगृहणीतं, अग्लानतया भक्तेन, पानेन, विनयेन—वैयादृत्यं कुकतः अतिमुक्तः कुमारश्रमणोऽन्तवस्थिवं, अन्तिमक्तरियवः ततस्ते स्थविराः भगवन्तः श्रमणेन भगवता महावीरेण एवम् एकाः सन्तः श्रमणं भगवन्तं ग्रहावीरं यन्दन्ते, नमस्यन्ति । अतिमुक्तं कुमारश्रमणम् अग्लानतया संग्रहणन्ति, यावत्—वैयादृत्यं कुर्वन्तिः—अनु०

१. प्रव छा०-पड्नधेः प्रवितिते नैर्पन्यं रोचयित्वा प्रवचनम्:-अतु०

रमत्र.

मायाए 'ति] कालमां पात्रुं अने रजोहरणने ठइने. ['णाविया में 'ति] आ मारी होडी छें 'एम विकल्प करती ' ए अर्थ, गम्य छे. के पात्रानी ['नाविधो वित्र नात्रं 'ति] नाविक-नाव हंकारनार-खारवा-नी पेठे नावने. ['अयं 'ति] आ अतिमुक्तक मुनि पात्राने पाणीमां वेतुं-वहतुं-मूकतो रमत करे छे-ते बालक होबाथी एवा प्रकारनी रमत करे छे. [' अदक्खु ' ति] स्थविरोए तेने जोयो अने तेनी तद्दन अनुचित चेष्टाने जोइने जाणे तेनो उपहास करता न होय तेम तेंओए भगवानने पूछ्युं. ए ज वातने कहे छे के, ['एवं खलु' इत्यादि.] ['हीलेह ' निह विगेरे. ति] तेनी नातजात खुड़ी करीने निंदो (नहीं), ['निंदह 'ति] मनथी तेनी निंदा करो (नहीं), ['खिंसह 'ति] माणसोनी पासे तेतुं वाँकुं बोलो (नहीं), ['गरहह 'ति] तेनी पासे तेनो अवर्णवाद कहो (नहीं), ['अवमनह 'ति] तेनी उचित अुश्रुवा नहीं करवारूप तेनं अपमान (न करो), कोइ डेकाणे 'परिभवह' एवो पाठ छे तेनो अर्थ- पूर्वे कहेल निंदा वगेरेथी तेनो परिभव (न करो), ['अगिलाए ' ति] खेद कर्या सिवाय ['संगिण्हह ' ति] तेनो स्वीकार करो, [' उविगण्हह ' ति] तेने सहायता टेको-आयो, ए ज वातन कड़े छे के, ['वेयावडियं'ति] तेनुं वैयावृत्त्य-सेवा चाकरी-करो. ['अंतकरे चेव'ति] ते अंतकर— (पोताना जन्ममरणरूप) संसारनो नाश करनार छे, केटठाक अंतकरो एवा होय छे के, जेओ ठांबे काळे जन्तमरणनो नाश करी शके छे, पण आ अंतकर एवा नयी, माटे कहे छे के, ['अंतिमसरीरिए चेव 'ति] आ अंतकर तो चरन शरीरवाळो छे- जेने हवे पछी एक पण शरीर धारण करवानुं नथी, पण आ ज तेनुं छेहुं शरीर छे.

सेवा करो. मंत्रकर. तिमरारीती.

बे देवो अने महावीर.

—ते ण काले णं, ते णं समये णं महासुकाओ कपाओ, महा-सम्माओ महाविमाणाओ दो देवा महिंडिया, जाव-महाणुमागा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं पाउच्मूत्रा; तए णं ते देवा समणं भगवं महावीरं मणसा चेव वंदंति, नगंसंति; मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं पुच्छंतिः---

१५. प्र०--कइ णं भंते ! देवाणुष्पिआणं अंतेवासीसयाइं सिज्झिहिंति, जाव-अंतं करेहिंति ?

१५, उ०-तए णं समणे भगवं महावीरे तेहि देवेहिं मणसा पुट्टे तेसिं देवाणं मगसा चेन इमं एयारूनं वागरणं वागरेइ, एवं खलु देवाणु प्यया ! ममं सत्त अंतेवासिसयाई सिन्झिहिंति, जाव अंतं करेहिंति. तए णं ते देवा समणेणं भगवया महावीरेगं मणसा पुट्टेणं, मणसा चेव इमं एयाह्न्यं वागरणं वागरिया समागा हट्ट-तुट्टा, जाव-हयहियया, समणं भगवं महावीरं वंदंति, णमंतंति, वंदित्ता, णमंतित्ता मणसा चेव सुस्तूसमाणा, णमंसमाणा, अभिमुहा जाव-पज्जुवासंति.

---तै णं काले णं, ते णं समये णं समणस्स मगवओ महावी-जाणू, जाव-विहरइ. तए णं तस्त भगवओ गोयमस्त झाणंत-

—ते काले, ते समये महाशुक्र नामना देवलोकथी महासर्गः (स्वर्ग) नामना भोग्रा विमानथी मोटी ऋदिवाळा यावत्-मोटा भाग्यवाळा बे देवो श्रमण भगवंत महावीरनी पासे प्रादुर्भूत थया. ते देवोए श्रमण भगवंत महावीरने मनधी ज वंदन अने नमन कर्युं तथा मनधी ज आ प्रकारना प्रश्नो पूछ्याः---

१५. प्र० हे भगवन् ! आप देवानु प्रियना केटला सो शिष्यो सिद्ध थशे यावत्-सर्व दु:खनो अंत आणशे ?

१५. उ०--सार पछी-ते देवोए मनयी ज प्रश्नो पूछ्या पछी-श्रमण भगवंत महावीरे पण ते देवोने तेओना सवालना जवाबो मनधी ज आध्याः —हे देवानुप्रियो ! मारा सातसे शिष्यो सिद्ध थशे यात्रत्-सर्व दुःखोनो नाश करशे. ए रीते मनथी पूछाएछ एवा श्रमण भगवंत महावीरे ते देवोने तेओना सवाछना जवाबो मनथी ज आप्या तथी ते देवो हर्षवाळा, तोषवाळा अने यावत्-हतहदयवाळा थइ गया, अने तेओए अमण भगवंत महावीरने वंदन कर्युं, नमन कर्युं अने मनथी ज पर्श्वपासना करवानी इच्छावाळा, नमता यावत्-ते देवो सम्मुख धइने पर्युपासना करवा लाग्या.

—ते काले, ते समये अमण भगवंत महावीरना मोटा शिष्य रस्स जेड्डे अंतेवासी इंदमूई णामं अणगारे जाव-अदूरसामंते उडूं- इंद्रभूति नामना अनगार यावत्-श्रीमहावीरनी पासे उभडक बेसीने यावत्-विहरे-रहे-छे. पछी ध्यानांतरिकामां-ध्याननी समाप्तिमां रियाए वट्टमाणस्स इमेयारूवे अज्झतिथए, जाव-समुष्पज्ञितथा:- वर्तता अर्थात् पूरेपूरुं ध्यान ध्याई रह्या पछी ते भगवान् गौतम-

भ. मूलच्छायाः--तिस्मन् काले, तिस्मन् समये महाशुकात् कल्यात्, महास्व (स) गीद् महाविमानाद् द्वी देवी महर्थिकी, यावत्-महासुमागी श्रमणस्य भगवते। महाबीरस्य अन्तिकं प्रादुर्भूताः, ततः ता देवा श्रमणं भगवन्तं महावीरं मनसा चैव वन्देते, नमस्यतः, मनसा चैव इद्म् एतदूर्व व्याकरणं पृच्छतः-कति भगवन् ! देवानुत्रियाणाम् अन्तेवासिशतानि सेत्स्यन्ति, यावत्-अन्तं करिष्यन्ति ? ततः श्रमणा भगवान् महावीर-स्ताभ्यां देवाभ्यां मनसा पृष्टः तयाः देवयाः मनसा चैव इदम् एतर्र्षं व्याकरणं व्याकराति, एवं खछ देवाऽनुभिया ! मम सप्त अन्तेवासिशतानि सेन्खन्ति, यावत्-अन्तं करिष्यन्ति, ततस्ता देवा श्रमणेन भगवता महावीरेण मनसा एहेन, मनसा चैव इमानि एतद्ग्राणि व्याकरणानि व्याकृता सन्तै। हृष्ट तृष्टी, यावत्-हृत्रहृदयी श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्देते, नमस्यतः, वन्दित्वा, नमहियत्वा मनसा चैव शुत्रूषमाणा, नमस्यन्ता असिमुँखा शानत्-पर्वेगासाते. तिरमन् काले, तिरमन् समये अमणस भगवते। महाबीरस्य ज्येक्टाइन्तेवासी इन्द्रभूतिनीम अनगारे। यावत्-अदूरसामन्तः कंदें जातुः यावत्-विद्रतिः ततस्त्रसं भगवतो मैातमस्य ध्यानान्तरिकायां वर्तमानस्य अयम् एतद्रूप आध्यारिमके। यावत् समुद्रयतः-अतु

तैए णं अम्हें समणेणं भगवया महावीरेणं मणसा चेव पुट्ठेणं मणसा चेव इमं एयां रूवं वागरणं वागरिया समाणा समणं भगवं महावीरं वंदामो, नमंसामो, वंदित्ता, नमंसित्ता; जाव-पज्जुवा-सामो ति ऋहु भगवं गोयमं वंदंति, नमंसंति, वंदित्ता, नमंसित्ता जामेव दिसं पाउच्भूया तामेव दिसि पिडिगया.

' हे देवानुप्रियो ! मारा सातसें शिष्यो सिद्ध थशे यावत्—सर्व दुःखोनो नाश करशे ' ए रीते अमे मनयी ज पूछेळ प्रश्नोना जवाब पण अमने श्रमण भगवंत महावीर तरप्तथी मन द्वारा ज मळ्या तेथी अमे श्रमण भगवंत महावीरने वांदीए छीए, नमीए छीए अने यावत्—तेओनी पर्युप्तसना करीए छीए, एम करीने (कहीने) ते देवो भगवान् गौतमने वांदे छे, नमे छे अने पछो तेओ जे दिशामांथी प्रकट्या हता ते ज दिशामां अंतर्धान थइ गया.

५. यथाऽयम् अतिमुक्तको भगविद्यञ्चोऽन्तिगर्शारोऽभवत्—एवमन्येऽि यावन्तस्तिद्यिष्ट्या अन्तिमर्शाराः संवृत्तास्तावतो दर्शयितुं प्रस्तावनामाहः—' ते णं ' इत्यादिः महाशुक्रात् सप्तमदेवलोकात्, ' झाणंतरियाए ' ति अन्तरस्य विच्छेदस्य करणमन्तरिकाः, ध्यानस्याऽन्तरिका ध्यानान्तरिका—आर्ब्धध्यानस्य समाप्तिः—अपूर्वस्याऽनारम्भणमित्यर्थः, अतस्तस्यां वर्तमानस्यः ' कष्णाओ ' ति 'देवलो-कात्, ' सग्गाओ ' ति स्वर्गाद् देवलोकदेशात् प्रस्तटाद् इत्यर्थः ' विमाणाओ ' ति प्रस्तटैकदेशाद् इति. ' वागरणाइं ' ति व्याक्रियन्ते इति व्याकरणानि प्रश्नार्थाः अधिकृता एव कल्पविमानादिलक्षणाः.

गगरंतना शिष्यो.

ध्यानांतरिका.

4. जेम अतिमुक्तक नामे अनगार भगवंतना चरमशरीरी शिष्य हता तेम बीजा पण अंतिमशरीरवाळा जेटला शिष्यो भगवंतने हता तेटलाने देखाडवाने लगतो प्रस्ताव करतां कहे छे के, ['ते णं' इत्यादि.] महाशुक्र नामना सातमा देवलोकथी, ['झाणंतरियाए' चि] चालु कियाने अटकावी देवी-विच्छेद करवो ते अंतरिका-कोइ पण कियानी समाप्ति करवी ध्याननी समाप्ति ते ध्यानांतरिका अर्थात् आरंभेल ध्याननी समाप्ति करी अने नया ध्याननी शरुआत न करवी ते-ध्यानांतरिका, तेवी स्थितिमां वर्तता गौतमने ['कपाओ' चि] देवलोकथी, ['सम्गाओ' चि] देवलोकना कोइ एक भागथी-पायडाथी, ['विमाणाओ' चि] देवलोकना पाथडाना एक भागथी। ['वागरणाइं'ति] स्फुट करवा योग्य बाबतो-'कया कल्पथी तेओ आवे छे' क्या विमानथी तेओ आवे छे 'इत्यादि चालु ज बातो।

नोसंयत देवो अने अर्धमागधी भाषा.

१६. प्र०—भेंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदाति, नमंसति, जाव-एवं वयासी:--देवा णं भंते ! संजया ति वंत्तव्वं ।सिया ?

१६. उ०-गोयमा ! णो तिणड्डे समड्डे, अध्भवसाणमेयुं.

१७. प्र०-देवा णं भंते ! असंजता ति वत्तव्वं सिया ? १७. उ०-गोयमा ! णो तिणहे समहे, निद्वुरवयणमेयं.

?८. प्र७—देवा णं भंते ! संजयाऽसंजया ति वत्तव्वं सिया?

१८. उ०---गोयमा ! नो इण्डे समड्डे, असब्भूयमेयं देवाणं.

१९. प्र०--से कि खाइ णे मंते ! देवा इाति वत्तव्यं सिया? १९. ड०--गोयमा ! देवा णं नो संजया इ वत्तव्यं सिया. १६. प्र०—' हे भगवन्!' एम कही भगवान् गौतमे अभण भगवत महावीरने यावत्—आ प्रमाणे कह्युं के, हे भगवन्! देवो संयत कहेवाय ?

१६. उ०—हे गौतम! ना-ए अर्थ समर्थ नथी-देवोने संयत कहेवा ए खोटुं छे.

१७. प्र०-हे भगवन् ! देवो असंयत कहेवाय ?

'१७. उ०--हे गौतम! ना-(कारण के) ' देवो असंयत 'छे ' ए कथन निष्टुर वचन छे.

१८. प्र० — हे भगवन् ! देंबो संयतासंयत कहेवाय !

१८. उ० — हे गौतम ! ना-ए समर्थ नथी—देबोने संयता-संयत कहेवा ए अछतुं छतुं करवा जेवुं छे-खोटुं छे.

१९, प्र०—हे भगवन् ! त्यारे हवे देवोने केवा कहेवाः? १९. उ०—हे गौतम ! देवोने नोसंयत कहेवा.

^{9.} मूलच्छायाः—ततः आवां श्रमणेन भगवता महावीरेण मनसा चैव पृष्टेन, मनसा चैव इदं एतद्भूपं व्याकरणं व्याकृती सन्ता श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दावहे, नमस्यावः; विन्दिता, नमिर्यावा, यावत्—पर्युपास्वहे इति कृत्वा भगवन्तं गातमं वन्देते, नमस्यतः, विन्दिता ममिरियत्वा यामेव दिशं प्राहुर्भूता तामेव दिशं प्रतिगताः २. भगवन् ! इति भगवान् गीतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति यावत्—एवम् अवादीतः—देवाः भगवन् ! संयता इति वक्तव्यं स्यात् ? गातम ! नाऽयम् अर्थः समर्थः, अभ्याद्यानम् एतत्. देवा भगवन् ! असंयताः इति वक्तव्यं स्यात् ? गातम ! नाऽयम् अर्थः समर्थः, अस्याद्यानम् एतत्. देवा भगवन् ! असंयताः इति वक्तव्यं स्यात् ? गातम ! नाऽयम् अर्थः समर्थः, अस्याद्यानम् एतत् देवा भगवन् ! नाऽयम् अर्थः समर्थः, अस्यात् स्वतः इति वक्तव्यं स्यात् ? गातम ! नाऽयम् अर्थः समर्थः, अस्यात् एतद् देवानाम्, तत् कि द्यातं भगवन् ! देवा इति ववतव्यं स्यात् ! गातम ! देवाः नीसंयता इति वक्तव्यं स्यातः समर्थः,

एवं सलु दो देवा महिन्धिया, जाव-महाणुमागा समणस्स भग-वओ महावीरस्स अंतियं पाउच्भूआ, तं नो खलु अहं ते देने जाणामि, कयराओ कप्पाओ वा, सम्गाओ वा, विमाणाओ वा कस्स वा अत्थस्स अष्ठाए इहं हव्वं आगया; तं गच्छामि णं भगवं महावीरं वंदामि, नमंसामि, जाव-पज्जवासामि; इमाइं च णं एयां छ्वाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामि ति कहु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता उद्घाए उद्देइ, जाव-जेणेव समणे भगवं महावीरे, जाव-पज्जवासइ. गोयमादि ! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी:-से णूणं तव गोयमा ! झाणंतिरयाए वह-माणस्स इमेयारूवे अज्झित्थए, जाव-जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वं आगए, से णूणं गोयमा ! अद्दे समद्दे ? हंता, अत्थि. तं गच्छाहि णं गोयमा ! एए चेव देवा इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरेहिति.

---तए णं भगवं गोयमे समणेणं भगवया महाविरेणं अब्भणुनाए समाणे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, जेणेव ते देवा तेणेव पहारेत्थ गमणाए. तए णं ते देवा भगवं गोयमं एज्जमाणं पासंति, पासित्ता हट्टा, जाव-हयिहयया, खिप्पामेव अब्भुट्टोति, अब्भुट्टित्ता खिप्पामेव पचुवागच्छंति, पचुवागच्छित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छंति, उवागाच्छित्ता जाव-णमंसित्ता एवं वयासी:-एवं खलु भंते! अन्हे महामुक्काओ कप्पाओ, महास-गाओ विमाणाओ दो देवा महिद्धिया, जाव-पाउच्भूआ; तए णं अन्हे समणं भगवं महावीरं वंदामो, नमंसामो, वंदिता, नमं-सित्ता मणसा चेव इमाइं एयाक्त्वाइं वागरणाइं पुच्छामो:-कइ णं भंते! देवाणुप्पियाणं अंतेवासीसयाइं सिज्झिहिंति, जाव-अंतं करिहिंति? तए णं समणे भगवं महावीरे अन्हेहिं मणसा पुट्टे, अन्हे मणसा चेव इमं एयाक्त्वं वागरणं वागरेइ:-एवं खलु देवाणुप्पिया! मम सत्त अंतेवासीसयाइं, जाव-अं ं करेहिंति,

इंद्रभूति-ने आ प्रकारनो संकल्प यावत्-उत्पन्न थयोः- भोटी ऋद्भिवाळा यावत्—मोटा प्रभाववाळा बे देवो श्रमण भगयंत महावीरनी पासे प्रादुर्भूत थया हता. तो हुं ते देवोने जाणतो नथी के, तेओ क्या करूपयी, क्या खर्मथी अने क्या विमानथी शा कारणे शीघ अहीं आव्या ? माटे जाउं अने भगवंत महावीरने वांदुं, नमुं अने यावत्-तेओनी पर्युपासना करं तथा एम कर्या पछी हुं मारा पूर्वप्रकारना आ प्रश्नो पूछीश ' एम विचारीने, उभा थइने जे तरफ श्रमण भगवंत महावीर छे ते तरफ जइने यावत्-तेओनी सेवा करे छे. हवे श्रमण भगवंत महावीरे 'गौतमादि साधुओ ! ' एम संबोधी भगवान् गौतमने आ प्रमाणे कह्युं के-हे गौतम! ज्यारे तें ध्याननी समाप्ति करी लीधी त्यारे तारा मनमां आ प्रकारनो संकल्प थयो हतो के ' हुं देवो संबंधी हकीकत जाणवा माटे श्रमण भगवंत महावीर पासे जाउं अने यावत्—ते ज कारणथी तुं मारी पासे अहीं शीव्र आव्यो छे ' केम हे गौतम ! में कहुं ए बराबर छे ने ? गौतमे कहुं के, 'हे भगवन्! ते बराबर छे. ' पछी भगवंत महावीरे कह्युं के, तारी शंकाने टाळ-वाने सारु हे गौतम ! तुं (ए देवोनी पासे) जा, अने ए देवो ज तने ए संबंधेनी पूरी माहिती संभळावशे.

—खार पछी श्रमण भगवंत महावीर तरमथी एवा प्रकारनी अनुमित मळवाने छीचे भगवान् गौतमे श्रमण भगवंतने बांदी, नमी अने जे तरफ पेछा देवो हता ते तरफ जवानो संकल्प कयों, हवे ते देवो भगवान् गौतमने पोतानी पासे आवता जोइने हर्ष-वाळा यावत् हतहृदयवाळा थया अने शीघ्र ज उमा थइ तेंओनी सामे गया—ते देवो, ज्यां भगवान् गौतम हता त्यां आव्या—अने तेओने वांदी, नमी ते देवोए आ प्रमाणे कहां:—हे भगवन् ! महाशुक्र नामना कल्पधी, महास(ख)र्म विमानथी मोटी ऋदिवाळा यावत्—अमे वे देवो अहीं प्रादुर्भूत थया छीए अने (पछी) अमे श्रमण भगवंत महावीरने वांदीए छीए, नमीए छीए अने मनथी ज आ प्रकारना प्रश्लो पूछीए छीए—'हे भगवन् ! आप देवानुप्रियना केटला सो शिष्यो सिद्ध थशे यावत्—सर्व दुःखनो नाश करशे ?' आ रीते अमे श्रमण भगवंत महावीर मनथी ज तेनो जवाव आप्यो के

१. मूळच्छायाः — एवं खल्ल हां देवा महांवको, यावत्-महानुभागा अनणस्य भगवता महावीरस्य अन्तिकं प्राहुभ्ता, तद् ना खल्ल अहं ती देवा जानामि, कतरस्मात् कलाद् वा, स्वर्णद् वा, विमानाद् वा कस्य वा अर्थस्य अर्थाय अत्र शीप्रम् आगताः, तद् गच्छामि भगवन्तं महावीरं बन्दे, नमस्यामि, यावत्-पर्युपासे; इमानि च एतद्र्पाणि व्याकरणानि प्रक्ष्यामि इति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संग्रेश्य उत्थया उत्तिष्ठति, यावत्—येनैव अमणा भगवान् महावीरः, यावत्-पर्युपास्ते. गैतमाद्यः । अमणा भगवान् महावीरा भगवन्तं गैतिमम् एवम् अवादीतः—तद् नृनं तव गैतमः! ध्यानान्तरिकायां वर्तमानस्य अयम् एतद्र्पा आध्यात्मकः, यावत्—येनैव मम अन्तिकं तेनैव शोग्रम् आगतस्तद् मृनं गैतमः! अर्थः समर्थः ? हन्त, अस्ति. तद् गच्छ गैतमः! एता एवं देवा इमानि एतद्र्पाणि व्याकरणानि व्याकरिष्यतः; तदो भगवान् गैतमः अमणेन भगवता महावीरेण अभ्यनुज्ञातः सन् अमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यतिः; येनैव तो देवौ तेनैव प्रधारितवान् गमनाय. ततस्तो देवौ भगवन्तं गैतमं आयन्तं पश्यतः; दृष्वा हृष्टा, यावत्—हतहृद्या क्षिप्रम् एव अभ्यात्मायः विकानम् येनैव भगवान् गैतमस्तिनेव जगागच्छतः, उपागम्य यावत्—नमस्यत्वा एवम् अवादीतः—एवं खल्ल भगवन् ! आवां महाश्चकात् कल्पात्मकात् वेत्यानाद् द्वा देवौ महर्विका, यावत्—प्रद्वभूताः, ततः आवां अमणं भगवन्तं महावीरं वन्दावहे, नमस्यावः; वन्दित्वा, नमस्यितः मनसा वेव इमानि एतद्र्पाणि व्याकरणानि प्रच्छावः—कति मगवन्। देवानुभियाणाम् अन्तेवासिशतानि सेत्स्यन्ति, यावत्—अन्तं करिष्यन्ति ? ततः अमणे। भगवान् महावीरः आवाभ्यां मनसा पृष्टः, आर्वा मनसा नेव द्वम् एतद्र्यं व्याकरणं व्याकरणं व्याकरणानि प्रच्यानियाः । मम सप्त अन्तेवासिशतानि यावत्—अन्तं करिष्यन्तिः करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्ति यावत्—अन्तं करिष्यन्ति वावत्—अन्तं करिष्यन्ति वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः वावत्—अन्तं करिष्यन्तिः स्ववत् व्याकरणं व्याकर्यां मनसा पृष्टः, आर्वा मनसा विव

् २०. ४०—देवा णं भंते ! कयराए भासाए भासंति, कयरा चा भासा भासिज्ञमाणी विसिस्सइ ?

२०. उ०—-गोयमा! देवा णं अद्धमागहाए भासाए भासंति, सा वि य णं अद्धमागहा भासा भासिज्ञमाणी विृसिस्सइ. २०. प्र०—हे भगवन्! देवो कई भाषामां बोले छे? अथवा देवो जे भाषानो प्रयोग करे छे ते भाषाओमां विशिष्टरूप् कई भाषा छे?

२०. उ०—हे गौतम ! देवो अर्धमागधी भाषामां बोले छे अने त्यां बोलाती भाषाओमां पण ते ज भाषा—अर्धमागधी भाषा—विशिष्टरूप छे.

६. देवप्रस्तावाद् इदमाह:-'देवा णं 'इत्यादि. 'से किं लाइ णं मंते ! देवा इ वत्तव्यं सिय ' ति. 'से ' इति अथाऽर्थ:. 'किं 'इति प्रश्नार्थ:. 'खाइ ' ति पुनर्रथ:. 'णं 'वाक्याङंकारार्थ:. देवा इति यद् वस्तु तद् वक्तव्यं स्यादिति. 'नीं संजया इ वत्तव्यं सियं ' ति 'नो संयता' इत्येतद् वक्तव्यं स्यात् , असंयत्शब्दपर्यायत्वेऽपि 'नोसंयत 'शब्दस्याऽनिष्ठ्रवचनत्वाद् मृतशब्दाऽपेक्षया प्रलोकीभूतशब्दवद् इति. देवाऽधिकारादेव इदमाह:-'देवा णं ' इत्यादि. 'विसिस्सइ ' ति विशिष्यते-विशिष्टाः भवति इत्यर्थ:. 'अद्यमागह ' ति भाषा विष्ठ षड्विधा भवति. यदाह:--

" प्राकृत—संस्कृत—मागध—पिशाचभाषा च शौरसेनी च, षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादप्रश्रंशः " तत्र मागधभाषालक्षणम् किञ्चित्, किञ्चित् प्राकृतभाषालक्षणं यस्यामस्ति सा अर्धं मागध्या इति व्युत्पत्याऽर्धमागधी इति.

६. आगळना प्रकरणमां देव संबंधे हकीकत जणावी छे अने आ प्रकरणमां पण ते ज संबंधे हकीकत जणावतां आ सूत्र कहें छे के—['देवा णं' इत्यादि.] ['से' किं खाई णं' मंते! देवा ह वत्तव्यं सिय 'ति] अर्थात् हे भगवन्! देवो ए शुं- कहेचाय् ? ['नो संजया ह वत्तव्यं सिय 'ति] देवो 'नोसंयत ' कहेवाय. शं०—'असंयत ' अने 'नोसंयत ' ए बन्ने शब्दनो अित सरखो ज छे तेम छतां देवो 'नोसंयत ' कहेवाय अने, 'असंयत ' केम न कहेवाय ? सगा०—जा 'मृत—मरेल ' अने 'देवगत थएल ' ए बन्ने शब्दोनो अर्थ तो सरखो ज छे तो पण 'मरेलो ' कहेवा करतां 'देवगत थएलो ' कहेवुं जेम साक्-अनिष्ठर—लागे छे तेम 'असंयत् करेवा करतां 'नोसंयत ' कहेवुं मीठुं लागे छे माटे ज 'असंयत 'ने बदले 'नोसंयत ' शब्द वापर्यो छे. देवनो अधिकार चाल होवाथी ज आ एक बीजी वात कहे छे के, ['देवा णं ' इत्यादि.] ['विसिस्सह 'ति]—विशेषल्य होय छे—प्रमाणमां विशिष्ट—वधारे होय छे. ['अद्यागह 'ति] अर्थमागधी. भाषाना सुख्य छ प्रकार छे. कह्नुं छे के—''प्राकृत, संस्कृत, मागधी, पैर्शाची—पिशाच भाषा, शारैसनी अने

जे भाषा मगधमां बोलाती होय ते मागधी कहेवाय. पूर्व समये मगधदेशनी राजधानीतुं नाम राजगृह (राजगिर) हतुं. वर्तमानमां कालीयी गंगानी सामे कांठाना क्रिशने मगध कहेवामां आवे छे. वर्तमानमां मगधमां चालती भाषा, प्राम्य हिंदीभाषा साथे लगभग मळती जणाय छे. भाचार्यं श्रीहेमचंह प्राकृतभाषा करतां मागधीमां जे कांइ विशेषता छे ते आ प्रमाणे जणावी छे:—

मागधीमां---

- १. 'र 'ने बदले 'ल 'वपराय छे:—नर⊸नल.
- २. 'सं ' ने बदले 'शं ' नपराय छे: हंस-हश.
- ३. , स्ख, स्त, स्म, स्क, स्ट, स्त अने स्फ जेवा संयुक्त अक्षरी पण मागधीमा वपराय छे.
- s. '.र्थ '.ने बदले 'स्त 'वपराय छे:—अर्थ-अस्त.
- ५. 'ज ', ' द्य ' अने ' य ' ने स्थाने ' य ' वपराय छे:--जनपद-यणवद, मदा-मध्य, यथा-यधा,
- ६. 'न्य''ण्य''इ 'अने ' ख'ने स्थाने ' डब ' वपराय छे:—मन्यु-मङ्ख. पुण्य-पुड्व. प्रज्ञा-पड्या. अङ्गलि-अङ्गले.
- ७. 'छ 'ने बदले 'श्व 'वपराय छे:--गच्छ-गश्च.
- ८. 'क्ष' ने बद्छे ४क वपराय छे:--राक्षस-ल४क्श.
- क्यांय 'क्ष्ंने बदले 'स्क 'पण नपराय छे:—प्रेक्षते-पेस्कदि.

६. भ्रेग्राचीभाषातुं स्वरूप आ प्रमाणे छेः—

ं ज़ें भाषा पिशाचदेशोमां चालती होय ते पैशाची कहेवाय. पिशाचदेशोनां नाम आ छेः पांड्य, केकय, बाल्हीक (अफगानीस्थान विगेरे), सिंह, (सिंहल), नेपाल, कुंतल, सुदेष्ण, बोट, गांधार (कंदहार), हैय अने कन्नोजन.

वैशाचीमां---

मागधीनो छट्टो फेरफार कायम रहे छे.

- 'ण 'ने चदले 'न 'वपरायु छे:--गुण-गुन.
- 'द'ने बदछे 'तः ' वपराय छ:---मदन-मतन.
- ' छ ' ने बद्छे ' ळ ' वपराय छे:—शील-शील_।

१. मूलच्छायाः—देवा भगवन् ! कत्रया भाषया भाषन्ते, कतरा वा भाषा भाष्यमाणा विशिष्यते ? गौतम ! देवाः अर्धमागध्या भाषया भाषन्ते, साऽपि च अर्धमागधी भाषा भाष्यमाणा विशिष्यतेः—अनु०

रे. 'से ' नो अर्थ 'हवे' छे. २. 'किम् ' नो अर्थ 'प्रश्न' छे. ३. 'साइ ' नो अर्थ ' वळी ' छे. ४. ' णं ' बाक्यालंकार माठे छे. ५. मागधीभाषानुं खरूप आ प्रमाणे छे:—

अरधंक. देशनी भिन्नताना कारणने लहने घणा भेदवाळी थएल-छट्टी अंपश्रंश भाषा " ते छ भाषामांनी मागधी भाषानुं अने प्राक्कत भाषानुं कांहक, कांहक जेमां लक्षण छे ते 'अर्धमागधी भाषा कहवाय अर्थात् जे भाषामां थोडुं घगुं मागत्री भाषानुं निशान होय अने थोडुं घगुं प्राकृत भाषानुं निशान अर्थमागधी. होय ते 'अर्धमागबी भाषा कहेवाय आ प्रमागनी अर्थ 'अर्थमागधी '—' मागधीनुं अडधुं ' ए प्रकारे ' अर्धमागधी ' शब्दनी व्युत्पत्ति उपरंथी तरी आवे छे.

केवली अने छद्मस्य विगेरे.

२१. प०—कैवली ण भंते ! अंतकरं वा, अंतिमसरीरियं वा जाणह, पासहं ?

२१, प्र. — हे. भगवन् ! केवली मनुष्य, अंतकरने वा चरम्शरीरवाळाने जाणे, जूए ?

२१. उ०--हंता, गोयमा ! जाणइ, पासइ.

२१. ड० — हा, गौतम ! जाणे अने जूए.

- ५. 'ड 'ने वदले 'तु 'वपत्य छे:--कुडुम्ब-कुर्तुंब.
- ६. 'से 'ने बदले 'रिय 'वपराय छे:--भायी-भारिया.
- v. ' स्न ' ने बदले ' सिन ' वपराय छे:---स्नान--सिनान.
- 'ष्ट 'ने बदले 'सट 'वपराय छे:—कष्ट-कसट. चूलिका-पैशाची—
- ९. वर्गना त्रीजा अक्षरने बदले पेली वपराय छे:--नगर-नकर.
- १०. वर्गमा चोथा अक्षरने बदले बीजो वपराय छे:--मेच-मेख,

शारसेनी भाषानुं खरूप आ प्रमाणे छः —

जै भाषा शरसेन देशमां चालती होय ते शारसेनी कहेवाय. पूर्व समये श्रूरसेन देशनी राजधानीत नाम मधुरा हत. वर्तमानम् मधुरा अने सेनी भासपास बोलाती भाषाने ' व्रजभाषा ' कहेवामां आवे छे. ए शारसेनी भाषायां प्राकृत करतां जे कांद्र खास भित्रता छे ते आ है:—

शोरसेनीमां---

- अनादिमां रहेला 'त 'ने बदले 'द 'वपराय छे:—तात-ताद.
- २. ए ज प्रकारे 'थ 'ने स्थाने 'ध 'वपराय छे:--नाथ-नाध.
- र्य 'ने बदले 'य्य 'वपसय छे:—सूर्य-सुध्य.

मागधी विगेरे भाषाओना विशेष परिचय माटे श्रीहेमचंद्रजीतुं प्राष्ट्रतं-व्याकरण जोवानी भलामण छे. शहीं हो मात्र खास खास विशेषता ज जणानी हे.

- 1. श्रीहेमर्चंद्रजीना समयनी अपश्रंश भाषानी नमुनो आ प्रमाणे छैः—
- जसु दयणविणिजिउ न ससंकु अप्याणु निसिहिं दंसइ स-संकु, जसु नयणकंतिजियलज्ञभरिण वणवासु पवनय नाइ हारेण. ८
- ज़ सहिं केसघण कराणवन्न ने छप्पय मुहपंकय पवन, भुवणिक्रवीरकंदण्यचणुह संदूरिम विदेवहि जासु भमुह.
- अंसु अहर-इरियमे।हग्गसार नं विद्रुप सेवर जलहि खार, जस दंतगंति संदेर रेंदु नहु सीओसर तु वि लहर कुंटु.

असर्णगुल्नि पक्षव नहपसूण जम्र सरलभुयाउ लगाउ न्ण, घणपीणतुंपथणभारसत्तु जम्र मज्झु तणुत्तणु नं वित्तु. । १९ (कुमारपालप्रतिबाध एक ৮৮৫०

वधू माटे जुओ श्रीहेमचंदजीतुं आठमा अध्यायतुं चोशुं पादः -- अतु॰

२. अर्धमागधीतुं खरूप था प्रमाणे छे:—

'मागध्या अर्धम् '-अर्धमागधी-ए ब्युत्पत्ति अर्धनागधी शब्दनी छे-ए ब्युत्पत्तिथी बनती अर्ध गागधी शब्द एन सार्गी सूचने छे के अभाषामां बराबर अडधी मागधी भाषा अने वरावर अडधी बीजी बीजी भाषाओं मिश्रित थएली होय ते ज भाषा अर्धनागधी शब्द में से बीजी को आपणे शब्दोनों हिसाब लगावीए तो एम कली शब्दाय के, जे भाषामां सो शब्दोमां पवास शब्दों तो मागबी माषाना अने पवास शब्दों बीजी बोजी भाषामा-प्राक्ति, पाली, शारसेनी अने पैशाची विगेरेना मिश्रित थएला होय ते ज भाषा 'अर्धनागधी ' शब्दनों अर्थ धारण करी शुक्ते छे. 'अर्थमागधी ' ना सक्य विषे लखतां आर्थ श्रीजनदासमदत्तरजीए निशीयवूर्णमां (लि० भां० प्र० १५०) जणाव्युं छे के—" मगद्द विषयमा सानिवर्द अद्यागदं; अहवा अद्वारसदेसीमादाणियतं अद्यागवं " अर्थात् मगधदेशनी अडधी आषामां निवंधाएल ते अर्थमाग्यः, अश्वा अद्वार प्रकारनी देशी भाषामां नियत थएल ते अर्थमाग्यः" ए विषे पोताना 'प्राकृतसर्वस्य 'मां महिष् मार्केडेयजी जणावे छे के—" शारसेन्या अद्वारताद् स्थमेव अर्थमाग्यी " (प्र० १०३) मगयदेश अने श्रारतेन देश पासे पासे होवाने लीधे मगयनी (मागबी) भाषाने श्रूरतेन देशनी भाषाने (शिरसेनीनों) संपर्क थएल होवाथी मागधी भाषाने ज अर्थमागधी समजवानी छे. शारसेनी भाषामां प्राकृततं अने पालीतुं केंद्र के मिश्रण रहेतुं(छै) होवाथी तेना संपर्कवाळी मागधीभाषामां पण ते मिश्रण संभवे छे. एटले 'मागब्या अर्थम्' वाळी ब्युत्पतिने जरा पण आंच आवती होय तेम जुणातुं नथी.

अहीं, जे देवोनी पण अर्धमामधी भाषा होवानं जणावां छे ते मात्र वर्णन वा भाषा-प्रशंसा ज लागे छे. अथवा तो एम लागे छे के, जे संप्रदेशिन जे चीज पूज्य के त्रिय होय ते चीज, तेओ देवोने पण पूज्य के त्रिय होवानं लख्या सिवाय रहेला नथी-जेम 'राम 'ने जैनो जैन कहे छे, बाद्धो बाद्ध कहे छे अने वैदिको वैदिक कहे छे-ए ज रीते-' इन्द्र ' विषे आगळ जणावाइ मधुं छे. पांडवोने माटे पण एम ज छे, शहआतमां जैनना मूळ मंथो ए भाषामां लखाया हशे एथी जैनो ए भाषाने विशेष पूज्य अने देवभाषा कहेवा लाग्या तेम वैदिकोने संस्कृतनाषा त्रिय होवायो तेओए तेन (संस्कृतने) ने विशेष पण एम ज कहां-एटले आवा उछेखोमां मात्र सांत्रदाथिकता सिवाय बीजो कशो भास आवतो लागतो नथी:—अर्जु०

🔫: मूलच्छायाः -केवली भगवन् ! अन्तकरं वा, अन्तिमशरीरकं वा जानाति, पश्यति १ हन्त, गौतम । जानाति, पश्यतिः-अञ्च

२२. प्र०—जहा णं भंते ! केवली अंतकरं वा, अंतिम-सरीरियं वा जाणइ, पासइ तहा णं छउम्स्थे वि अंतकरं वा, अंतिमसरीरियं वा जाणइ, पासइ ?

२२. ७०—गोयमा ! णो इणहे समद्वे, सोचा जाणइ, पासति; पमाणओ वा.

२३. प्र०--से किंतं सोचा ?

२३. उ०---सोचा णं केवलिस्स वा, केवलिसावयस्स वा, केवलिसावियाए वा, केवलिउवासगस्स वा, केवलिउवासियाए वा; तप्पविखयस्स वा, तप्पविखयसावगस्स वा, तप्पविखयसावियाए वा; तप्पविखयउवासगस्स वा, तप्पविखयउवासियाए वा; से तं सोचा.

२४. प्र०--से किंतं पमाणे ?

२४ उ०—पमाणे चडिन्दहे पण्णत्ते, तं जहाः-पचक्ते, अणुमाणे, ओवम्मे, आगमे; जहा अणुओगदारे तहा णेयव्यं पमाणं, जाव-'तेण परं नो अत्तागमे, नो अणंतरागमे, परंपरागमे.'

२२. प्र०—हे भगवन् ! जे प्रकारे केवळी मनुष्य, अंत-करने वा चरमशरीरवाळाने जाणे अने जूए ते प्रकारे छगस्थ मनुष्य, अंतकरने वा अंतिमशरीरवाळाने जाणे, जूए ?

२२. उ०—हे गौतम! ते अर्थ समर्थ नथी. तो पण सांभळीने अथवा प्रमाणथी छदास्थ मनुष्य पण अंतकरने धा चरमदेहिने जाणे अने जूए.

२३. प्र०—' सांभळीने ' ते हुां ?

२३. उ०— सांभळीने एटले केवली पासेथी, केवलिना अपनक पासेथी, केवलिनी आविका पासेथी, केवलिना उपासक पासेथी, केवलिनी उपासिका पासेथी, केवलिना पाक्षिक—स्वयंबुद्ध—पासेथी, स्वयंबुद्धना आवक पासेथी, स्वयंबुद्धनी आविका पासेथी, स्वयंबुद्धनी उपासिका पासेथी, स्वयंबुद्धनी उपासिका पासेथी सांभळीने. ए ' सांभळीने ' शब्दनी अर्थ थयो.

२४. प्र०—'प्रमाण 'ते शुं?

२४. उ० — प्रमाण चार प्रकारनुं छे. ते जेमके, प्रसक्ष, अनुमान, औपम्य — उपमान अने आगम. जे प्रकारे 'अनुयोगै हार 'सूत्रमां प्रमाणसंबंधे छस्युं छे ते प्रकारे जाणवुं, यावत् — ' त्यारबाद नो आत्मागम, नो अनन्तरागम, परंपरागम '.

भा प्रमाणो विषे विगतवार इकीकत श्रीअनुयोगद्वार सूत्रमां (पृ० २११-२१९ स०) आ प्रमाणे छे:—

प्रव-" से किं तं णाणगुणप्यमाणे ?

उ॰—णाणगुण्यमाणे चउक्विहे पण्णसं, तं-जहाः पचक्ले, अणु-माणे, उबम्मे, आगमे.

प्र०---से किं तं पचक्र हैं।

उ•-पचक्षे दुविहे पण्णते, तं-जहाः इंदिअपचक्षे अ, णोइदिअ-पचक्षे अ.

प्र०-से किं तं इंदियपचक्खे ?

उ०-- इंदियपचक्ले पंचित्रहे पण्णते. ×

प्र० - से किं तं नो इंदियपचक्खे ?

ड०—नोइंदियपचक्ले तिविहे पण्णते, तं-जहाः भेहिणाण० मण• पच्चव० केवलणाण० × × ×

प्र०—से किं तं अणुमाणे ?

उ०-अणुमाणे तिविहे पण्णते, तं-जहाः पुन्ववं, सेसवं, दिव्वसाहम्मवं. .

प्र॰—से किंतं पुब्नवं ?

उ०---पुब्बवं--

माया पुर्त जहा नहुं जुवाणं पुणरागयं, काइ पचिभिजाणेजा पुब्वलिंगेण केणइ.

तं-जहा-खत्तेण वा, वणेण वा, लंखणेण वा, मसेण वा, तिलएण वा-से तं पुब्ववं.

प्र॰--से किं तं सेसवं ?

उ॰—सेसवं पश्चविदं पण्णतं, तं-जहा-कज्जेणं, कारणेणं, गुणेणं, अवयवेणं अभासएणं.

प्र•--सें कि तं कज़ेणं ?

प्र•--हानगुणप्रमाण से शुं ?

उ॰—झानगुणप्रमाणना चार प्रकार जणावेला छे, ते जैसकेः प्रश्वक्ष, अनुमान, उपमा अने आगम.

प्र०—प्रसक्ष ए शुं ?

उ०--प्रस्ता ने प्रकार जणानेला छे, ते जेमके, इंद्रियप्रसक्ष भने नोइंद्रियप्रसक्ष

प्र०-इंद्रियप्रसम्ब ए शुं रै

उ०-इंद्रियप्रसक्ता पांच प्रकार जणावेला छे. (ए पांचे सप्ट छे.)

प्र- नोइंद्रियप्रत्यक्ष ए शुं है

उ०—नोइंदियप्रस्थाना त्रण प्रकार जणावेला छे-अवधिहान, मनः-पर्यवहान, केवलहान-

प्र०-अनुमान ए शुं ?

उ॰-अनुमानना त्रण प्रकार जणावेला छः-पूर्ववत्, शेषवत् अने हष्टसाधर्म्यवत्.

प्र०--पूर्ववत् ए शुं ?

उ०—पूर्ववत्-नं खरूप आ छेः—जेम भागीने फरी आदेला पुत्रने माता कोइ जातना पूर्वना निशानथी ओळखी काढे छे–क्षतवडे, मणवडे, लांछनवडे, मसवडे, तलवडे-ए पूर्ववत्-अनुमान.

प्र०--शेषवत् ए अं ?

उ॰—शेषवत्-ना पांच प्रकार शा रीते छे:-कार्यद्वारा, कारणद्वारा, गुणद्वारा, अवयवद्वारा अने आश्रयद्वारा (यतुं ज्ञान-समजण.)

प्रवन्तर्भेद्वारा (थतं ज्ञान) ए शं ?

१. मूलच्छायाः—यथा भगवन् 1 केवली अन्तकरं वा, अन्तिमशरीरकं वा जानाति, पश्यितः तथा छद्मस्थोऽपि अन्तकरं वा, अन्तिमशरीरकं, वा जानाति, पश्यितः तथा छद्मस्थोऽपि अन्तकरं वा, अन्तिमशरीरकं, वा जानाति, पश्यितः पश्यितः श्रांतमः । नाऽयम् अधः समर्थः, श्रत्वा जानाति, पश्यितः प्रमाणतो वा. तत् किं तत् श्रुत्वा १ श्रुत्वा केवलिनो वा, केवलिश्रावकस्य वा, केवलिश्राविकायाः वा, केवल्युपासकस्य वा, केवल्युपासकस्य वा, केवल्युपासकस्य वा, केवल्युपासकस्य वा, केवल्युपासिकायाः वा, तत्पाक्षिकस्य वा, तत्पाक्षिकशावकस्य वा, तत्पाक्षिकशाविकायाः वा तस्य तत् श्रुत्वाः तत् किं तत् प्रमाणम् १ प्रमाणं चतुर्विधं प्रक्षसम्, तद्यथाः—प्रसक्षम्, अनुमानम्, औपम्यम्, आगमः; यथा अनुयोगद्वारे तथा ज्ञातव्यम् प्रमाणम्, यावत्—तेन परं नो आत्मागमः, नो अनन्तरागमः, परंपरागमः—अनुः

२५..प्र०—केवली णं मंते ! चरिमकम्मं वा, चरिमणिजारं वा जाणइ, पासइ ?

२५. उ०—हंता, गोयमा! जाणइ, पासइ, जहा णं भंते! केवली चरिमकम्मं वा, जहा णं अंतकरेणं वा आलावगो तहा चरिमकम्मेण वि अपरिसेसिओ णेयच्चो.

उ०-कजोणं-संखं सहेणं. भेटि ताडिएणं. वसमं ढकिएणं. मोरं केका-,इएणं. हवं हेसियेणं. गयं गुलगुलाइएणं. रहं घणघणाइएणं-से तं कजोणं.

. प्र॰—से कि तं कारणेणं ?

ड०—कारणेणं-तंतवो पहस्स कारणं-न पढो तंतुकारणं. वीरणा कड-स्स कारणं-न कडो वीरणकारणं. मिध्पिडो घडस्स कारणं-न घडो मिध्पिड-कारणं-से तं कारणेणं.

प्र०-से कि तं गुणेणं ?

उ॰—गुणेणं-सुवर्ण्णं निकसेणं. पुष्फं गंधेणं. स्वर्ण रसेणं. महरं आसा-रण्णं. वस्थं फासेणं-से तं गुणेणं.

प्रo-से किंतं अवयवेणं ?

उ० — अवयवेणं - महिसं सिंगेणं कुकुडं सिहाएणं. हिश्चं विसाणेणं. बराहं दाढाए. मोरं पिच्छेणं. आसं खुरेणं. वग्चं नहेणं. चंमरिं वालगोणं. बाण्डं लंगूळेणं दुपयं मणुस्सादि. चउप्पयं गवमादि बहुपयं गोमिआमादि. सीहं केसरेणं. वसहं कुकुहेणं. महिला वलयबाहाएं.

> परिअर्बवेण भड़ जाणिज्ञा महिलिअं निवसणेणं, सित्थेण दोणपागं कवि च एकाए गाहाए-से तं अवयवेणं.

प्र॰—सं कि तं आसएणं ?

उ॰—आसएणं—अग्गि धूमेणं. सलिलं बलागेणं. वृद्धि अब्यविकारेणं. य कुरुपुत्तं सीलसमायारेणं—

इज्ञिताकारिते हेंथेः कियया भाषितेन च, नेत्र-वक्त्रविकारेश महातेऽन्तर्गतं मनः-

से तं आसएणं-से तं सेसवं.

प्र०-से कि तं दिहसाहम्मवं !

उ०-दिहसाहम्मवं दुविहं पण्णतं, तं-जहाः सामन्नदिहं च, विसेसदिहं च.

प्रo—से किं तं सामनदिहं ?

उ॰—सामसदिहं-जहा एगो पुरिसो तहा बहवे पुरिसा. जहा बहवे पुरिसा तहा एगो पुरिसो. जहा एगो करिसावणो तहा बहवे करिसावणा. कहा बहवे करिसावणा तहा एगो करिसावणो-सै तं सामण्यदिहं.

प्रठ—से कि तं विसेसदिहं ?

इ०-विसेसदिह से जहा नाम केइ पुरिसे बहुण पुरिसाण मज्हो पुन्व-दिह पश्चिमजाणेजा-अथं से पुरिसे. बहुण करिसावणाणं मज्हो पुन्वदिहं करिसावणं पश्चिमजाणेजा-अथं से करिसावणे. तस्य समासओ तिविहं गहुणं सवह, तं जहाः अतीयकालगहुणं, पहुपण्णकालगहुणं, अणागय-कालगहुणं.

प्र०-- से कि तं अतीयकालगहणं ?

'उ०-अतीयकालगहणं-उत्तणाणि वणाणि, निष्पण्णसस्सं वा मेइणि, पुण्णाणि अ कुण्ड-सर-णई-बीहिआ-तडागाई पासिता तेणं साहिज्ञह, जहां - खुड़ी आसी-से तं अतीयकालगहणं.

् प्र०—से कि तं पडुप्पणाकालगहणं ?

२५. प्र०—हे भगवन् ! केवली मनुष्य, छेला कर्मने वा छेली निर्जराने जाणे, जूए ?

२५. उ० — हे गौतम! हा, जाणे, जूए.—'हे भगवन्! जेम केवली, छेला कर्मने जाणे 'ए प्रश्ननो (आलापक) जेम अंतकर ' विषेनो आलापक कह्यो तेम 'छेला कर्म 'ना प्रश्न साथे पण पूरो आलापक जाणवो.

उ॰—शब्दवडे शंखतुं, ताडितवडे भेरिनुं, ढिकतवडे बळदनुं, केकावडे मोरनुं, हणहणाटवडे घोडानुं, गुलगुलाटवडे हाथीनुं घणघणाटवडे रथनुं झान-ते कार्यद्वारा थतुं ज्ञान.

ं प्र०-कारणद्वारा (थतुं ज्ञान) ए छुं ?

उ॰—तांतणाओं कपडानुं कारण छे-कपडुं तांतणानुं कारण नथी. घासनी सळीओ सादडीनुं कारण छे-सादडी ए सळीओनुं कारण नथी. माटीनो विंडलो घडानुं कारण छे-घडो ए विंडलानुं कारण नथी-ते कार्य-द्वारा थतुं ज्ञान.

प्र०--गुणद्वारा (थतुं ज्ञान) ए शुं ?

.उ०—निकप-कसवा-वृढे सोनानुं, गंधवडे फूलनुं; रसवडे छण-मीठा नुं, खादवडे मदिरानुं अने सर्शवडे वस्रनुं ज्ञान-ते गुणद्वारा धतुं ज्ञानः

प्र-अवयवद्वारा (थतुं ज्ञान) ए हुं ?

उ॰—शिंगडावडे पाडातुं, शिखावडे कुकडातुं, दंतुशळवडे हाथितुं, दाडावडे वराहतुं, पीछांवडे मोरतुं, खरी (डाबला)वडे घोडातुं, नखवडे वाघतुं, वाळना जत्थावडे चमरितुं, पुंछडावडे वानरतुं, वे पगवडे मतु-ध्यादितुं, चारपगवडे गाय विगेरेतुं, घणा पगवडे कानखजूरादिकतुं, याळवडे सिंहतुं, कोंदवडे वळदतुं, हाथना वलयवडे श्लीतुं, परिकरबंधवडे सुमटतुं, वलवडे श्लीतुं, एक चडेला दाणावडे आखा द्रोणपाकतुं अने एक गाथावडे कवितुं झान-ते अवयवद्वारा थतुं ज्ञान.

प्र०-अध्यद्वारा (थतुं ज्ञान) ए हुं ?

उ॰—धूमद्वारा अभिनं, बलाहकद्वारा पाणिनं, बादळाना विकारद्वारा वृष्टिनं, सदाचारद्वारा कुलपुत्रनं ज्ञान—

इंगित, आकारित, चेय, कियां भाषित अने आंख तथा मोहाना विकारी द्वारा अंदरनुं मन समजी शकाय छे--

ते आश्रीयद्वारा थतुं ज्ञान-ते शेषवत्.

प्र०-रष्टसाधम्येवत् ए हुंः ?

उ॰ -- दष्टसाधर्म्यवत्ना ने प्रकार छेः सामान्यदृष्ट अने निशेषदृष्ट.

प्र०-सामान्यदष्ट ए शुं ?

उ०—सामान्यदृष्ट आ छे:-जेम एक पुरुष तेम घणा पुरुष. जेम घणा पुरुष देम एक पुरुष. जेम एक कार्पापण तेम घणा कार्षापण. जेम घणा कार्षापण तेम एक कार्पापण-ते सामान्यदृष्ट.

प्र०---विशेषहष्ट ए युं ?

उ० — विशेषदृष्ट आ छे: -- जेम कोइ पुरुष घणा पुरुषोनी वसे पोतामा ओळखिताने ओळखी छे-आ ते पुरुष, घणा कार्षापणो मसे पूर्वे जोएला कार्षापणने ओळखी छे-आ ते कार्षापण, आमां संक्षेपे करीने त्रण जाततुं प्रहण थाय छे: -- अतीतकालप्रहण, वर्तमानकालप्रहण अने अनागतन्कालप्रहण.

प्र०—अतीतकालग्रहण ए शुं ?

उ०— अतीतकालप्रहण एटले-घासथी भरेला वनने, अनाज्यी भरेली जमीनने अने पाणीथी भरेलां कुंड, सरोवर, नदी, वाव अने तळावोने जोइने एम कहेवाय के-सुब्दि सारो वरसाद-धई हती ते अतीतकालप्रहण.

प्र॰—प्रत्युत्पन्नकालमहण ए शुं 🤻

भ ा. मूलच्छायाः केवली भगवन् । चरमकर्म वा, चरमनिर्जराचा जानाति, पश्यति ? हन्त, मातम । जानाति, पश्यति, यथा अगवन् । केवली चरमकर्मणाऽपि अपरिशिष्टी ज्ञातव्यः —अनु०

२६. प्र० — केवली णं मंते ! पणीयं मणं वा, वइं वा धारेज ?

२६. उ०-हंता, धारेज.

२६. प्र०-हे भगवन् ! केवली मनुष्य, प्रकृष्ट मनने वा, प्रकृष्ट वचनने धारण करे ?

२६. उ०---हा, धारण करे.

उ०---पहुष्पणकालगहणं-सार्डं गोयरगगयं विच्छडिअपउरभत्तपाणं पासित्ता तेण साहिजइ, जहा-सुभियखे वट्टइ, से तं पडुप्पणकालपहणं.

प्र•—से किं तं अणागयकालगद्दणं ?

उ॰--अणागयकालगहण-

अन्मस्स निम्मलत्तं कसिणा य गिरी सविज्वा मेहा, थणिअं वाउच्यामी संझा रत्ता पणिद्धा य.

बारणं वा महिंदं वा अण्णयरं वा पसत्थं उप्पायं पासित्ता तेणं साहिजाइ, जहा-सुबुद्धी भविस्सइ-से तं अणाययकालगहणं. एएसि चेव विवजासे ति-बिहं गहणं भवइ. तं-जहा-अतीयका० पहुष्पण्णका० अणागयका०.

- प्र०--से किंतं अतीयकालगहणं ?

उ०-अतीयका० नित्तिणाइं वणाणि, अनिष्पण्णसस्यं वा मेइणि, हुकाणि अ कुंड-सर-नई-दीहिअ-तडागाई पासिता तेण साहिज्जइ, जहा-**कु**बुढ़ी **आसी-**से तं अतीयकालगहणे.

प्र•—से कि तं पहुपण्णकालगहणं ?

७०—पडुपर्न० साहं गोयरम्गग्यं भिक्खं अलभमाणं पासिसा तेणं **साहि**ज्जह, जहा दुव्भिक्खे वष्टइ-से तं पहुप०.

प्र-से किंतं अणागयकालगहणं ?

ड॰--अणागय०

धूमायंति दिसाओ संविअमेइणी अपहिबद्धा, वाया नेरइया खल्च कुनुहिमेवं निवेयंति.

अग्गेयं ना, नायव्यं वा अण्णयरं वा अप्पस्थ-उप्पायं पासिसा तेणं साहिज्जइ, जहा-कुबुद्दी भविस्सइ-से तं अणागयकालगहणं-से तं विसेस-दिई-से तं₀दि़दसाहम्मवं-से तं अणुमाणे.

प्र०-से किंतं उबस्मे ?

उ०-उयम्मे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-साहम्मोधणीए अ, बेहम्मो-वणीए अ.

प्र-से कि तं साहम नेगीए ?

अ० —साहम्मोवणीए तिविहे पण्णते, तं जहा-किविसाहम्मोवणीए, पायसाहम्मोवणीए, सन्वसाहम्मोवणीए.

प्र - से किं तं किंचिसाहम्मोवणीए ?

उ०---विचिसाहम्मोवणीए-जहा मंदरो तहा सरिसधो, जहा सरिसबो तहा मंदरी. जहा समुद्दी तहा गीप्पयं, जहा गीप्पयं तहा समुद्दी. जहा आह्यो तहा खजोतो, जहा खज्जोतो तहा आह्यो. जहा चंदो तहा कुमुदो, जहां कुमुद्दी तहा चंदी-से तं किंचिसाहम्मीवणीए.

प्रव—से कि तं पायसाहम्मोवणीए ?

उ०-पायसाइम्मोवणीए-जहा गो तहा गवको, जहा गवको तहा गो-से तं पायसाहम्मो०.

प्रव -- से कि तं सन्वसाहम्मोवणीए ?

ुउ॰—सन्वसाहम्मे उवम्मे नित्थ, तहावि तेणैव तस्सोवम्मं कीरइ. जहा अरिहंतेहिं अरिहंतसरिसं कयं. चक्कविष्टणा चक्कविष्टसिरेसं कयं. बल-देवेण बलदेवसरिसं कयं. वासुदेवेण बासुदेवसरिसं कयं. साहुणा साहुस-रिसं क्यं-से तं सब्बसाहम्मे-से तं साहम्मोबणीए.

प्र०—से किं तं बेह∓मोवणीए ?

सब्बबेहम्मे.

प्रवन्ते कि तं किंचिवेहम्म १

उ॰-वेहम्मोवणीए तिविहे पण्णते, तं जहा-लिविवेहम्मे, पायवेहम्मे,

उ०-प्रत्युत्पनकालग्रहण एटले साधुनी गोचरीमां आवेला विस्तृत-प्र-चुर-अन्नपानने जोइने एम कहेवाय के−सुभिक्ष वर्ते छेन्ते प्रत्युत्पन्नकालप्रहण.

प्र - अनागतकालबहण ए शुं ?

उ॰—अनागतकालग्रहण एटले वादळातुं निर्मळप्रणुं, काळा पर्वतो, विजळीवाळा मेघो, मेघनो गगडाट, वायुश्रमण अने राती तथा चिकणी संध्या, वारुण, माहेंद्र के बीजो कोइ प्रशस्त उत्पात जोइने. एम कहेनाय के-घरसाद सारो थशे-ते अनागतकालप्रहण. ए त्रणे प्रहुणो विपरीतरीते पण थाय छे. ए त्रणे विपरीत प्रहणोनां नाम पूर्वेनी जेवां जे छे.

प्र०-विपरीत अतीतकालप्रहण ए शुं ?

उ०-तृण विनानां वनो, अनाज विनानी जमीन अने पाणी विनानां-सूकां-कुंड, सरोवर, नदी, वाव अने तळाव विगेरेने जोइने एम कहेवाय के-पूर्वे वरसाद न हतो-ते अतीतकालविपरीतशहण.

प्र०—विपरीत वर्तमान कालग्रहण ए शुं ?

उ० - साधुनी गोचरीमां भिक्षा नहीं मळती जोईने एम कहेवाय के, दुकाळ वर्ते छे.—ते विपरीत वर्तमानकालग्रहण.

प्र-विपरीत अनागत कालप्रहण ए शुं?

उ०-दिशाओ धूम जेवी जणाय, संवृत मेदिनी अप्रतिबद्ध (१) जणाय, नैक्ट्रंतना वायुओ जणाय तो कुरृष्टिनां निशान छे.

अमिल्णना, वायव्यखूणना के बीजा कोई अप्रशस्त उत्पातने जोइने एम कहेवाय के, दुकाळ धरी-ते विपरीत अनागत कालशहण-ते विशेष-दृष्ट-ते दृष्टसाधर्म्यवत्-ए रीते अनुमाननी पूरी व्याख्या छे.

प्र०-उपमा ए शुं ?

उ०--उपमा बे प्रकारनी छेः साधम्येथी थती उपमा अने वैधम्यंशी थती उपमा.

प्र०—साधर्म्यथी थती उपमा ए शुं :

उ०-साधमर्थथी थती उपमा त्रण प्रकारनी छे:-किंचित्साधमर्थथी थती, प्रायः साधम्येथी थती अने सर्वे साधम्येथी थती.

प्र०--किचित्साधर्म्यथी थती उपमा ए शुं ?

उ॰—किंचित् साधम्भेथी थती उपमा आ छेः-जेम मंद्र वेम सरसब अने जेम सरसव रोम मंदर. जेम समुद्र तेम खाबोचियुं अने जेम खाबो-चिष्ठं तेम समुद्र. जेम सूर्य तेम खज्ओ अने जेम खज्ओ तेम सूर्य, जैन चंद्र तेम कुमुद अने जेम कुमुद तेम चंद्र-ए बधी उपमा किंचित् साध-∓र्यथी थएली छे.

प्र०--प्रायः साधम्येथी थती उपमा ए. शुं ?

उ०--प्रायः साधर्म्यथी यती उपमा आ छे:--जेम गाय तेम गवय अने जेम गवय तेम गाय-ते प्रायः साधम्बंधी शती उपमा.

प्र०-सर्वे साधर्म्यथी थती उपमा ए शुं १

उ०---सर्वे साधर्म्यमां उपमा नथी-तेमां ते बडे ज तेनी उसा अपाय छे. जेम के-अरिहंतीए अरिहंत जेवुं कर्युं. चक्रवर्तिएं चक्रवर्ति जेवुं कर्युं, बलदेवे बलदेव जेवुं कर्युं, वासुदेवे वासुदेव जे**वुं कर्युं, साधुए साधु** जेवं कर्तुं. ते सर्व साधम्यें-ते सर्व साधम्येथी थती उपमा.

प्र०—वैधर्म्यथी धती उपमा ए जुं ?

उ॰—वैधार्यथी थती उपमा त्रण प्रकारनी छे:-किंचित् वैधार्येधी धती उपमा, प्रायः वैधार्यथी थती उपमा अने सर्वे वैधार्यथी यती उपमा.

प्र॰--किचित् वेधर्यथी थती उपगा ए शुं ?

१. मूलच्छायाः-केवली अगवन् । प्रणीतं मनो वयाका ना धारवेत् ? इन्त, धारवेत् :-अनु ।

२७. प्र०—जैहा णं मंते ! केवली पणीयं मणं चा, वइं चा **धारे**ज्ञ तं णं वेमाणिया देवा जाणांति, पासंति ?

२७. ड॰—गोयमा ! अत्थेगतिया जाणंति, पासंति; अ-ंस्थेगातियां ण जाणंति, ण पासंति.

२८. प्र०-से केणडेणं जाव-न पासंति ?

दि उ०—गोयमा ! वेमाणिया दुविहा पण्णता, तं जहाः—माइमिच्छादिद्वीउववचगा य, अमाइसम्मदिद्वीउववचगा यः, तत्थ णं जे ते माइमिच्छादिद्वीउववचगा ते न याणंति, न पासंति; तत्थ णं जे ते अमाइसम्मदिद्वीउववचगा ते ण जाणंति, पासंति. [से केणहेणं एवं युच्चर्—अमाईसम्मदिद्वी जाव—पासंति? गोयमा ! अमायीसम्मदिद्वी दुविहा पचता,—अनंतरोववचगा यः, परंपरोववचगा यः, तत्थ णं अणंतरोववचगा न जाणंति, परंपरोवचचगा जाणंति. से केणहेणं भंते ! एवं वुच्चर्—परंपरोववचगा जाव—जाणंति? गोयमा ! परंपरोववचगा दुविहा पचता:—पज्ज-त्मा यः, अपज्जत्तगा यः, पज्जत्ता जाणंति, अपज्जत्ता न जाणंति.] एवं अणंतर-परंपर-पज्जत्ता-ऽपज्जत्ता यः, उवजत्ता अणुव-ख्ताः, तत्थ णं-जे ते उवजत्ता ते जाणंति, पासंतिः, से तेणहेणं तं चेव.

२७. प्र०—हे भगवन् ! केवली मनुष्य, जे प्रकृष्ट मनेने बा, प्रइष्ट बचनने धारण करे छे तेने वैमानिक देवो जाणे छे, जूए छे ?

२७. उ०—हे गौतम ! केटलाको जाणे छे, जूए छे, केटलको नथी जाणता, नथी जोता.

२८. प्र०-ते केबी रीते यावत्-नथी जोता ?

२८. उ०—हे गौतम ! वैमानिक देवो वे प्रकारना कहार छे, ते जेमके: मायिमिध्यादृष्टिपणे उत्पन्न थ्येटा अने अमायिस स्यग्दृष्टिपणे उत्पन्न थ्येटा, तेओमां जे मायिमिध्यादृष्टिपणे उत्पन्न थ्येटा छे तेओ नथी जाणता, नथी जोता अने जेओ अमायी सम्यग्दृष्टिपणे उत्पन्न थ्येटा छे तेओ जाणे छे—जूए छे.

['अमायी सम्यग्दृष्टि यावत्-ज्रू छे ' तेम कहेवानुं शुं कारणः हे गौतम! अमायी सम्यग्दृष्टि देवो बे प्रकारना कहेला छे, ते जेमके; अनंतरो ग्रद्धक अने परंपरोप्यत्वक. तेमां जे अनन्तरोप्यत्वक छे तेओ नथी जाणता अने जेओ परंपरोप्यत्वक छे तेओ जाणे छे.

हे भगवन् ! ' परंपरोषपणका देवो यावत्-जृए छे ' तेम कहेवानो सो अर्थ् ?

हे गौतम ! परंपरोपपन्नक देवो वे प्रकारना कहेला छे, ते जेमके; पर्यात अने अपर्यात. तेमां जेओ पर्यातो छे तेओ जाणे छे अने अपर्यातो नथी जाणता.]

ए प्रमाणे अनन्तर उत्पन्न थयेला, परंपराए उत्पन्न थयेला, पर्याप्तरूपे उत्पन्न थयेला, अपर्याप्तरूपे उत्पन्न थयेला, उपयोगवाला, अनुपयुक्त—उपयोग विनाना, ए प्रकारना वैमानिक देवो छे, तेमां जे उपयोगवाला—सावधानतावाला—छे तेओ जाणे छे, माटे ते हेतुथी ते ज—केटलाक जाणे छे अने केटलाक नथी जाणता.

ड़ -- किंचिवेह मे-जहा सामलेरो न तहा बाहुलेरो, जहा बाहुलेरो न तहा सामलेरो-से तं किंदिवेह मो.

प्र- से किंतं पायचे हमें ?

ड॰--पायवेहम्मे-जहा वायको न तहा पायको, जहा पायको न तहा बायसी-मुं तं पायवेहम्मे.

प्रं - से कि तं सब्ब बेहर में ?

उ०—सञ्बवेहमी उवमी नृतिध, तहा वि तेणेय तस्सीवमां कीरइ-जहां णीएणे णीअंसरिसं कयं, दासेणं दारासरिसं कयं, काकेण काकसरिसं कयं, साणेण साणसरिसं कयं, पाणेणं पाणसरिसं कयं—से तं सञ्बचेहमी—से तं वेहमीवशीए—से तं उवमी.

प्रवें से कि तं आगमे ?

ड०—आगमे दुविहे पण्णते, तं जहा-शेइए अ, लोउत्तरिए अ.

लोइए × जहा-भारहं, रामायणं, जाव चत्तारि वेशा संगोवंगा.

लोड्न्सिए × जहा-दुवालसंगं गणिपिडगं-आयारी जाव दिद्विवाओं × से तं मणिगुणपमाणे.

उ॰-- विचित् वैधर्म्यथी थती उपमा आ छे:-जेम शाबलेय छे तेम बाहुलेय नथी अने जेम बाहुलेय छे तेम शाबलेय नथी.

प्र०-प्रायः वैधर्म्यथी थती उपमा ए हां ?

उ॰---प्रायः वैधर्म्यथी थती उपना आ छे:--जेम वायस छे तेम पायस नथी, जेम पायस छे तेम वायस नथी-ते प्रायः वैधर्म्यथी थती उपनाः

प्र०-सर्वे वैधर्म्यधी यती उपमा ए शुं ?

ड० — सर्व वैधम्यधी यती उपमामां उपमा नथी. तो पण तेनी साथे तेनी उपमा अपाय छे. जेग-नीचे नीच जेवं कर्युं, दासे दास जेवं कर्युं, कागडे कागडा जेवं कर्युं, कृतरे कृतरा जेवं कर्युं, चंडाळे चंडाळ जेवं कर्युं ते सर्व वैधम्यं – ते सर्व विधम्यं – ते सर्व विधम्यं – ते सर्व वैधम्यं – ते सर्व विधम्यं – ते सर्व वि

प्र०--आगम ए हां ?

उ०--आगम वे प्रकारनी कहेली छै: - लैकिक अने लोकोत्तर.

लैकिक-भारत, रामायण यावत्-अंगोपांगसहित चार वेद.

छोकोत्तर-द्वादशांग गणिपिटक-शाचार अंग यावत्-दृष्टिवाद-ते ज्ञांन-गुणश्माण. (प्रमाणनी ब्याख्या पुरी,-):—अनु०

२९. प्र०-पैम् णं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा इहगएणं केवलिणा सिंद आलावं घा, संसावं वा करेत्तए ?

२९. उ०--हंता, पमू.

३०. प्र०-से केणडेणं जाव-पमू णं अणुत्तरोववाइया दंवा, जाव-करेत्तए ?

३०. उ०-गोयमा ! जं णं अणुत्तरीववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा अद्वं वा, हेउं चा, पिसणं वा, कारणं वा, वागरणं या पुच्छंति, तं णं इहगए केवली अहं वा, जाव-वागरणं वा वागरेइ; से तेणडेणं०.

३१. प्र० — जं णं भंते ! इहगए चेव केवली अडं ना जाव-वागरेइ तं णं अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा जाणंति, पासंति ?

३१. उ०--हंता, जाणंति, पासंति.

३२. प्रo —से केणडेण जाव-पासति ?

३२. उ० — गोयमा ! तेसि णं देवाणं अणंताओ मणोदन्वन-ग्गणाओं लद्धाओं, पत्ताओं, अभिसमन्नागयाओं अवंति से तेण-ट्टेणं जं णं इहगए केवली जाव-पासंति-त्ति.

३३. प्र० - अणुत्तरोववाइया णं भंते । देवा किं उदिन-मोहा, उवसंतमोहा, खीणमोहा ?

३३. उ०--गोयमा ! नो उदित्रमोहा, उवसंतमोहा, णो खीणमोहा.

३४. प्र.—केवली णं मंते ! आयाणेहिं जाणइ, पासइ ?

.३४. उ०--गोयमा ! नो तिणहे समहे.

३५. ४०--से केणहेणं जाव-केवली णं आयाणेहिं न जाणइ, न पासइ ?

३५. उ० — गोयमा ! केवली णं पुरित्थमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ, जाव-निब्बुडे दंसणे केवलिस्स से तेणहेणं.

₹६. प्र०—केवली णं भंते! अस्ति समयंक्षि जेस् आगास-

२९. प्र०--हे भगवन् ! अनुत्तरविमानमां उत्पन्न थयेला देवो त्यां ज रह्या छता, अहिं रहेंछा केवली साथे आंलाप, संलाप करवाने समर्थ छे ?

२९. उ०---हा, समर्थ छे.

३०. प्र०--ते क्या हेतुथी यावत्-अनुत्तरविमानना देवो यावत्-करवा समर्थ छे ?

३०. उ०—हे गौतम! त्यां ज-पोताने स्थानके रहेला ज-अनुत्तर विमानना देवो जे अर्थने, हेतुने, प्रश्नने, कारणने बा व्याकरणने पूछे छे तेनो-ते अर्थनो, हेतुनो यावत्-व्याकरणनो उत्तर अहिं रहेलो केवली आपे छे, ते हेतुथी,

३१. प्र०—हे भगवन्! अहिं रहेलो केवली अर्धनो यावत्-जे उत्तर आपे ते उत्तरने त्यां रहेला ज अनुत्तर विमानना देवो जाणे, जूए ?

३१. उ०--हा, जाणे, जूए.

३२. प्र०—ते क्या हेतुथी यावत्-जूए ?

३२. उ० - हे गौतम ! ते देवोने अनंती मनोद्रव्यवर्गणाओं लब्ध छे, प्राप्त छे, विशेष ज्ञात होय छे ते हेतुथी अहिं रहेलो केवली जे कहे छे तेने तेओ (जाणे छे) यावत्-जूए छे.

३३. प्र०—हे भगवन् ! अनुत्तरविमानना देवो कुं उदीर्ण-मोहनाळा छे, उपशांतमोहनाळा छे के क्षीणमोहनाळा छे ?

३३. उ० — हे गौतम ! उदीर्णमोहवाळा नथी, श्रीणमोहवाळा नधी पण उपशांतमोहबाळा छे.

३४. प्र०--हे भगवन् ! केवली मनुष्य आदानी--इन्द्रियो-वडे जाणे, जूए?

३४. उ० — हे गौतम ! ते अर्थ समर्थ नथी.

३५. प्र०—ते क्या हेतुथी यायत्-केवली इन्द्रियोवडे जाणतो नधी, जोतो नथी ?

३५ उ०-हे गौतम! केवली पूर्वः दिशामां मित पण जाणे छे, अमित पण जाणे छे यावत्-केवलिनुं दर्शन, आवरण रहित छे, माटे ते हेतुथी ते इन्द्रियोवडे जाणतो के जोतो नथी.

३६. प्र०-हे भगवन् ! केवली, आ समयमां जे आकाश-पदेसेसु हत्थं या, पायं वा, याहं वा, ऊरुं वा ओगाहित्ता णं प्रदेशोमां हाथने, पगने, बाहुने अने ऊरुने अवगाही रहे, अने

१. मूलच्छायाः—प्रभुः भगवम् ! अनुत्तरौपपातिकाः देवास्तत्रगताश्चैव सन्तः इहगतेन केवलिना सार्थम् आलापं वा, संलापं वा कर्तुम् ? इन्त्, प्रभुः. तत् केनार्थेन यावत्-प्रभुः अनुत्तरीपपातिकाः देवाः यावत्-कर्तुम् ? गैतिम ! यद् अनुत्तरीपपातिकाः देवास्तत्रगताश्चैव सन्तोऽर्थं वा, हेतुं बा, प्रश्नं वा, कारणं वा, व्याकरणं वा पृच्छन्ति, तद् इद्दगतः केवली अर्थं वा, यावत्—व्याकरणं वा व्याकरोति; तत् तेनार्थेन यद् भगवन् I इहगतथेव केवली अर्थ वा, यावत्-व्याकरोति, तद् अनुसरौपपातिका देवास्तत्रगताथेव सन्ते। जानन्ति, पश्यन्ति ? हन्त, जानन्ति, पश्यन्ति तत् केनार्थेन यावत्—पर्यन्ति ? गातम ! तेषां देवानाम् अनन्ताः मनोद्रव्यवर्गणा रुज्धाः, प्राप्ताः, अभिसमन्वागता भवन्ति तत् तेनार्थेन यद् इहगतः केवली यावृत्-परयन्ति-इति. अनुत्तरीपपातिका भगवन् ! देवाः किम् उदीर्णमोदाः, उपशान्तमोहाः, क्षीणमोहाः ? गीतम ! नो उदीर्णमोहाः, ्रञ्जकान्तमोह्यः, नो क्षोणमोहाः. केवली भगवन् ! आदानैः जानाति, पश्यति ! गैरतम ! नाऽयम्-अर्थः समर्थः तत् केनार्थन यायत्⊸केवली आदानैने जानाति_{क में} प्रयति १ गातम ! केवली पारस्त्येन मितम् अपि जानाति, अमितम् अपि जानाति, यावद्-िर्वृतं दर्शनं केवलिनसात् तेनार्थनः फेवली भगवन् । अस्तिन् समग्रेः येषु आकाशप्रदेशेषु हस्तं वा, पादं वा, बाहुं वा, अरं वा, अवगासः--अनुः

www.jainelibrary.org

चिंइति; पभू णं केवली सेयकालांसि वि, तेसु चेव आगासपएसेसु जे समयमां रहे ते पछीना-भविष्यःकाळना-समयमां ते ज हत्यं वा, जाव-ओगाहिता णं चिट्टित्तए ?

३६. उ०-गोयमा ! णो तिणहे समहे.

२७. प्र०-से केणहेणं भंते ! जाव-ओगाहित्ता णं चिद्वित्तए ?

२७. उ०-गोयमा! केविहस्स णं वीरिय-सजोग-सद्दव्याए चलाइं उवकरणाइं भवंति, चलोवकरणद्वयाए य णं केवली अस्सि · समयंसि जेसु आगासपएसेसु हत्थं वा, जाव--चिट्टाति; णो णं हस्तवगेरे अंगो चळ होताथी चालु समयमां जे आकाश प्रदेशोमां पम् केवली सेयकालंसि वि तेसु चेव जाव-चिट्टित्तए, से तेणद्वेणं जाव-प्चइ-केवरी णं अस्ति समयंसि जेस् आगासपदेसेस् जाव-चिह्नति णो णं पभू केवली सेयकालांसि वि तेसु चेव आ-गासपदेसेसु हत्थं वा, जात--चिट्टित्तए.

आकाशप्रदेशोमां हाथने यावत्-अवगाहीने रहेवा केवळी समर्थ छे?

३६. उ०-हे गीतम ! आ अर्थ समर्थ नधी.

३७. प्र०-हे भगवन् ! ते क्या हेतुथी, यावत्-केवली आ समयमां जे आकाशप्रदेशोमां यावत्-रहे छे पछीना-भविष्यकाळना -समयमां ए ज आकाशप्रदेशोमां केवळी हाथने यावत्-अवगाही रहेवा समर्थ नथी ?

३७. उ० — हे गौतम! केवलिने वीर्यप्रधान योगवाळं जीव द्रव्य होवाथी तेना हस्तवगेरे उपकरणी-अंगो-चल होय छे अने हाथने यावत् अवगाही रहे छे, ए ज आकाश प्रदेशोमां चालु-समय पछीना भविष्यत्काळना समयभां केवली हाथ वगेरेने अव-गाही यावत् रहेवा समर्थ नथी, माटे ते हेतुथी एम कह्युं छे के, केवली आ समयमां यावत्-रहेवा समर्थ नथी.

७. केविल-इट्मस्थस्य वक्तव्यताप्रस्तावे एव इदम् आहः—' केविली णं ' इत्यादि, यथा केविली जानाति तथा छद्मस्थो न जानाति, कथंचित् पुनर्जानाति इत्यपि-इत्येतदेव दर्शयन्नाहः-' सोचा ' इत्यादि. ' केवालिस्स ' ति केवलिनो जिनस्य े अयम् अन्तकरो भविष्यति ' इत्यादि वचनं श्रुत्वा जानातीति. ' केविलिसावगस्स व ' ति जिनस्य समीपे यः श्रवणार्थी सन् श्रुणोति तद्वाक्यानि-असौ केवलिश्रावकः-तस्य वचनं श्रुत्वा जानाति. स हि किल जिनसमीपे वाक्यान्तराणि शृष्वन् ' अयमन्तकरो भविष्यति ' इत्यादिकमपि वाक्यं शृशुयात् , ततश्च तद्वचनश्रवणाद् जानाति इति. ' केवालिजभसगरस व ' ति केवलिनम् उपास्ते यः श्रवणाऽनाकाङ्क्षी, तदुपासनमात्रपर: सन् असी केवल्युपासकः-तस्य वचः श्रवा जानाति, भावना प्रायः प्राग्वत्. ' तपानिल-यस्स व ' त्ति केवलिपाक्षिकस्य स्वयंबुद्धस्य इत्यर्थः. इह च श्रुत्वेति वचनेन प्रकीर्णकं वचनमात्रं ज्ञाननिमित्ततयाऽवसेयम् , न तु आगम-रूपम्, तस्य प्रमाणप्रहणेन प्रहीष्यमाणत्वाद् इति. ' पमाणे ' ति प्रमीयते येनाऽर्थस्तत् प्रमाणम्, प्रमितिर्वा प्रमाणम्. ' पचवस्ते ' ति अक्षं जीवम्, अक्षाणि च इन्द्रियाणि प्रति गतं प्रत्यक्षम्. 'अणुमाणे 'ति अनु-लिङ्गग्रहण-संबन्धसारणादेः पश्चात्-मीयतेऽनेन इसनुमानम्, 'ओवम्मे ' ति उपमीयते सदशतया गृह्यते वस्तुं अनया इत्युपमा, सैव औपम्यम्, ' आगमे ' ति आगच्छति गुरुपार्र-पर्भेण इसागमः, एषां-स्वरूपं शास्त्रलाघवार्थम् अतिदेशत आहः—' जहा ' इसादि. एवं चैतत्स्वरूपम्–द्विविधं प्रसक्षम्–इन्द्रिय– मोइन्द्रियभेदात्. तत्र इन्द्रियप्रत्यक्षं पश्चयाः-श्रोत्रादि-इन्द्रियभेदात्. नोइन्द्रियप्रत्यक्षं त्रिधाः-अविश्व-आदिभेदाद् इति. त्रिविधम् अनुमानम्:-पूर्वत्रत् , शेषवत् , दष्टसाधर्म्यवचेति. तत्र पूर्ववतः-पूर्शेपटब्धाऽसावारण्टक्षणाद् मात्रादिप्रमातुः पुत्रादिपरिज्ञानम् . शेषवत्ः-यत् कार्यादिलिङ्गात् परोक्षार्यज्ञानम् , यथाः-मयूरोऽत्र, केकायिताद् इतिं. दष्टसाधर्यवत्ः-यथा एकस्य कार्पापणादेर्दर्शनाद् . अन्येऽपि एवंविधा एव इति प्रतिपत्तिः—इस्यादि. औपम्यम्:—यथा गौर्गवयस्तया–इस्यादि. आगमस्तु द्विधाः—छौकिक—छोकोत्तरमेदात्. त्रिविधो वाः—सूत्रा-ऽर्थो-भयभेदात्. अन्यथा वा त्रिधाः—आत्मागमा-उनन्तरागम-परंपरागमभेदात्. तत्राऽऽत्मागमादयोऽर्थतः क्रमेण जिन-गणधर-तिच्छिष्याऽपेक्षया दृष्टव्याः. सूत्रतस्तु गणधर-तिच्छिष्य-प्रशिष्याऽपेक्षया इति. एतस्य प्रकरणस्य सीमां कुर्वनाहः - ' जान'-इत्यादि. ' तेण परं ' ति गणधरशिष्याणां सूत्रतोऽनन्तरागमः, अर्थतस्तु परंपरागमः; ततः परं प्रशिष्याणाम् इत्यर्थः. केवली-तरप्रस्तावे एव इदम् अपरमाहः-' केवली णं ' इत्यादि. चरमकर्म यच्छंलेशीचरमसमयेऽनुभूयते, चरमनिर्जरा तु यत् ततोऽनन्तरसमये जीव-प्रदेशेम्यः परिशटति-इति, 'पणीयं 'ति प्रणीतं शुभतया प्रकृष्टम्, 'धारेज 'ति धारयेद् व्यापारयेद् इत्यर्थः. एवं 'अणंतर ' इत्यादि. अस्याऽयमर्थः—यथा वैमानिका दिविधा उक्ताः, मायिमिध्यादृष्टीनां च ज्ञानिविधः, एवम् अमायिसम्यग्दृष्ट्योऽनन्तरो-पपन्नक-परंपरोपपत्रकमेदेन द्विधा वाच्याः-अनन्तरोपपन्नकानां च ज्ञाननिषेधः, तथा परंपरोपपत्रका अपि पर्याप्तका-ऽपर्याप्तकमेदेन द्विधा वाच्याः. अपर्याप्तकानां च ज्ञाननिषेधः, तथा पर्याप्तका उपयुक्ताऽनुपयुक्तभेदेन द्विधा वाच्याः. अनुपयुक्तानां च ज्ञाननिषेधश्व

१. मूलच्छायाः—तिष्टति, प्रभुः केवली एष्यत्कालेऽपि तेषु चित्र आकाशप्रदेशेषु इस्तं वा, यावत्–अवगाह्य स्थातुम् १ गोतम । नाऽयम् अर्थः समर्थः. तत् केनार्थेन भगवन् ! यावत्-अवसाह्य स्थातुम् ? गातम ! केनलिनो वीर्यसयोगसद्दव्यतया चलानि उपकरणानि भवन्ति, चलोपक-रणार्थतया च केवली अस्मिन् समये येषु आकाशप्रदेशेषु हस्तं वा, यावत्–तिष्ठति नो प्रमुः केवली एष्यत्कालेऽपि तेषु एव यावत्∽स्थातुम्, तत् तेनाथेन ्यादत्-उच्यते-केवली अस्मिन् समये येषु आकाशप्रदेशेषु यादत्-तिष्ठति नो प्रभुः केवली एप्यत्कालेऽपि तेषु एव आकाशप्रदेशेषु हस्तं वा पानत्-स्थातम् :--अन्०

इति. वाचनान्तरे तु इदं सूत्रं साक्षादेव उपलम्पते इति. 'आलावं व' ति सक्रजल्पम्, 'संलावं व' ति मुहुर्मुहुर्जेक्षं मानसिकमेव इति. ' लद्धाओं ' ति तदवधेर्विपयमावं गताः. ' पत्ताओं ' ति तदविधना सामान्यतः प्राप्ताः परिच्छिना इसर्थः. ' अभिसमण्णागयाओं ' त्ति विशेषतः परिच्छिनाः, यतस्तेषाम् अवधिज्ञानं संभिन्नछोकनाडीविषयम्, यच छोकनाडीप्राहकं तद् मनोवर्गणाप्राहकं भवत्येव, यतो योऽपि लोकसंख्येयभागविषयोऽविधः सोऽपि मनोद्रव्यप्राही, यः पुनः संभिन्नलोकनाडीविषयोऽसौ कथं म्नोद्रव्यप्राही न भविष्यति ? इष्यते च लो कसंख्येयमागाऽवधेर्मनोद्रव्यप्राहित्वम्. यदाहः—" संसेर्जनणोद्व्ये भागो लोग-पिलयस्स बोद्धव्यो " ति. अनुत्तरसुराधिकाराद् इदमाहः- अणुत्तरा- इत्यादि. ' उदिण्णमोह " ति उत्कटवेदमोहनीयाः. ' उवसंतमोह' ति अनुत्कटवेदमोहनीयाः-परिचारणायाः कथंचिदप्यभावात् , नतु सर्वथा उपशानतमोहाः, उपशमश्रेणेस्तेषाम-भावात्, ' नो सीणमोह ' ति क्षपकश्रेण्या अभावाद् इति. पूर्वतनसूत्रे केवल्यधिकाराद् इदमाहः – ' केवली ' इत्यादि. ' आयाणेहिं ' त्ति आदीयते गृह्यतेऽर्थ एमिरिति आदानानि इन्द्रियाणि तर्न जानाति केयलित्यात्. ' असि समयंसि ' ति अस्मिन् वर्तमाने समये. ' ओगाहित्ता णं ' ति अवगाह्य आक्रम्थ. ' सेयकालंसि वि ' ति एष्यत्कालेऽपि. ' बीरियसजोगसद्दव्वयाए ' ि वीर्यम्-बीर्याऽन्तरायक्षयप्रभवशक्तिः, तत्त्रधानं सयोगम्-मानसादिव्यापारयुक्तम्, यत् सद् विद्यमानं द्रव्यं जीवद्रव्यं तत् तथा वीर्यसद्भावेऽपि जीवद्रव्यस्य योगाद् विना चलनं न स्याद् इति-संयोगशब्देन सद्दव्यं विशेषितम्, 'सद्' इति विशेषणं च-तस्य सदा सत्ता-ऽवधारणार्थम्. अथवा स्व आत्मा, तद्रूपं द्रव्यं स्वद्रव्यम्, ततः कर्मधारयः. अथवा वीर्यप्रधानः सयोगो योगवान् वीर्यसयोगः, स चासौ सद्रव्यश्च मन:प्रमृतिर्वगणायुक्तो वीर्यसयाग-सद्रव्यः-तस्य भावस्तत्ता तया हेतुभूतया. 'चलाइं ' ति अध्यिराणि. *' उवकरणाइं '* ति अङ्गानि. *' चलोवगरणहुयाए य* ' त्ति चलोपकरणलक्षणो योऽर्थस्तद्भावश्चलोपकरणार्थता—तया. च शब्दः पुनर्थः.

७. केवलिनी अने उद्मास्थनी वक्तव्यताना प्रस्तावमां ज आ ['केवली पं '] इत्यादि सूत्र कहे छे अने जे प्रकार केवली जाणे छे ते प्रकारे छदास्य जाणतो नथी तो पण कांइक रीते जाणे छे, ए वातने दर्शावतां सूत्रकार ['सोचा '] इत्यादि सूत्र कहे छेर ['केविलस्स व ' ति] केविलनी-जिननी-पासेथी ' आ अंतकर थरो ' इत्यादि वचन सांमळीने नाणे हे. [' केविलसावगस्य व ' ति] सांमळवानी अर्थी थह जिननी पासे तेना वाक्योंने जे सांगळे ते 'केवलिश्रायक ' तेनुं बचन सांमळीने जाणे. कारण के, ते केवलिश्रायक जिननी पासे बीजां अनेक वाक्यो सांभळतो ' आ—अमुक मनुष्य—अंतकर थशे ' इत्यादि वाक्य पण सांभळे अने तथी ते-केवलिशावक-ना वचनने सांभळीने जाणे. ि केवलिउवासगस्स व ' ति] सांभळवानी इच्छा विनानोः मात्र केविलनी उपासनामां तत्पर थई जे केविलने उपासे ते 'केविल्युपासक ' तेनुं वचन सांभळीने जाणे छे. प्रायः भावना पूर्व पेठे जाणवी. [' तत्पिखयस्स च ' ति] केविलना पक्षना मनुष्यनुं स्वयंबुद्धनुं. अहिं ' शुत्वा ' एटले सांभळीने अर्थात् ते अवण, ज्ञान-जाणवा-सुं निमित्त होवाथी मात्र साधारण वचनरूप छे, पण ते 'वचन' आगम प्रमाणरूप नथी, कारण के, आगम प्रमाणरूप वचन विषे तो हुवे पछी प्रमाणना मेदो आवशे तेमां कहेवानुं छेर् ['पमाणे 'ति] जेनाथी अर्थ-पदार्थ-जाणी शकाय ते प्रमाण अथवा ' जाणवुं ' ते प्रमाण. [' पच्चक्खें ' ति] जीव प्रत्ये गयेछुं एटले जीव साथे सीधो संबंध धरावतुं अने इन्द्रियो प्रत्ये गयेछुं .एटले इन्द्रियो द्वारा जीव साथे संबंध धरावतुं ते प्रत्यक्ष अर्थात् अक्ष-जीव, इन्द्रियोनी सहाय विना ज जीवने जे ज्ञान थाय ते प्रत्यक्ष अने :अक्ष-'इन्द्रियो, इन्द्रियोनी सहायता वडे ज जीवने जे ज्ञान थाय ते पण प्रचक्षः [' अणुमाणे ' ति] अनु एटले हेतुनुं ब्रहण अने संबन्ध-व्याप्ति-नुं स्मरण कर्या पछी जे वर्डे पदार्थनुं ज्ञान थाय ते अनुमान. ['ओवम्मे ' ति] जे वर्डे, सरखाइथी पदार्थनुं ग्रहण थाय ते उपमा अने उपमा ए ज औपम्य. [' आगमे ' ति] जे गुरुपरंपराए आवे ते आगनः ए चारे प्रमाणोनुं स्वरूपः, शास्त्रना लाधव माटे अतिदेशथी-बीजा शास्त्रनी तुल्यता वडे मूळकार जणावे छे-[' जहा ' इत्यादि.] अने ए खरूप आ प्रमाणे छेः ते चारे प्रमाणोमां प्रत्यक्ष प्रमाण वे प्रकारनुं छे, एक रैन्द्रियप्रत्यक्ष अने बीज़ं नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष. तेमां ' श्रोत्र ' वगरे पांच इन्द्रियो होवाधी इन्द्रिय प्रत्यक्ष पांच प्रकारनुं छे, अने नोइन्द्रियप्रस्यक्षं, तेना ' अवधि, मनःपर्यय अने केवल ' एम त्रण भेद होवाशी त्रण प्रकारनुं छे. अनुमान प्रमाण त्रण प्रकारनुं छे, एक पूर्ववत् , बीजुं शेषवत् अने त्रीजुं दृष्टसाधर्म्यवत्. पूर्ववत् एट छे पूर्व उपलब्ध मुख्य लक्षण-निशान-थी माता वरेगरे प्रमातृजनने पुत्र वरेगरेनुं जे ज्ञान धाय ते ' पूर्ववत् ' अनुमान कहेवाय. शेषवत् एटले कार्य वर्गरेनी निशानीओथी परोक्ष पदार्थनुं ज ज्ञान थाय ते ' शेषवत् ' अनुमान कहेवाय. जेमके, अहिं केका-वित होवाथी-मयूरनो शब्द होवाथी-मयूर होबो जोइए. दृष्टसाधर्म्यवत् एटले एक पदार्थना खरूपतुं निरीक्षण करवाथी एवा खरूपवाळा बीजा पदार्थों पण ए प्रकारना छे एवं जे ज्ञान ते ' दृष्टसाधर्म्यवत् ' अनुमान कहेवाय, जेमके, एक कार्षापण-एंशी रितभारना एक कर्ष-ने जोवाथी एना जेवा जे बीजा ते पण कार्पापण कहेवाय. ' जेवी गाय छे तेवो गवय छे ' इत्यादि ज्ञान ' औपम्य ' कहेवाय. आगमना छौकिक अने लोकोत्तर एवा वे प्रकार छे अथवा सूत्र, अर्थ अने सूत्रार्थ एवा वण प्रकार छे अथवा, आत्माऽऽगम, अनन्तरागम अने परंपरागम एम बीजी रीते पण आगम त्रण प्रकारनो छे. अर्थनी अपेक्षाए जिनने आत्मागम, गणधरने अनंतरागम अने गणधरना शिप्योने परंपरागम कहेवाय, सूत्रनी अपेक्षाए तो गणधरने आत्मागम, गणधरना शिष्योने अनंतरागम अने गणधरना शिष्यना शिष्योने परंपरागम. अहीं साक्षी तरीके क्याबिटा आ प्रकरणनी हद बताबता सूत्रकार कहे छे के, [' जात्र ' इत्यादि.] [' तेण परं ' ति] सूत्रथी गणधरना शिष्योने अनंतरागम अने अर्थथी तेओने परंपरागम, त्यार बाद तेना प्रशिष्योने-ए पाठ सुची. केवलिना अने बीजाना प्रस्तावमां ज आ की जुं-['केवली णं '] इत्यादि कहे छे. जे शैलेशीने छेछे समये अनुभवाय ते चरमकर्भ अने त्यार पछी लगोलगना समय जीव प्रदेशोधी जे छुटुं पडे-खरी पडे-ते ती चरम-

केवळि-श्रावक-

केवळि-उपासक. स्तयंबुद्ध.

प्रमाण. प्रत्यक्ष.

अनुमान. उपमाः आगमः अनुयोगद्वारः

पृर्वेदत्. शेववत्-दृष्ट-साथस्यवत्.

कार्धावण. गवय.

चरमक्री-

www.jainelibrary.org

वरम-निर्जरा. निर्जरा. ['पणीर्यं'ति] प्रणीत-शुभपणे प्रकृष्ट. ['घारेज 'ति] घारण करे-व्यापृत करे~['एवं अणंतर-' इत्यादि] आनो आ अर्थ. छे, मायी अमायी. जैम वमानिक देवो वे प्रकारना कहा छ, माथिमिण्यादृष्टिओने ज्ञाननो निषेध छे-तेओ जाणता नथी. ए प्रमाणे अमाथिसम्यग्दृष्टिओ, अनन्तरो-पपन्नक अने परंपरोपपन्नक एम वे प्रकार कहेवा. तेमां अनन्तरोपपन्नको नथी जाणता, तथा पर्याप्त अने अपर्याप्त एम वे प्रकारे परंपरोपपन्नकने जाणवा, अने तेमां अपर्याप्तो नथी जाणता, तथा पर्याप्तो, उपयुक्त अने अनुपयुक्त एम वे प्रकारे कहेवा अने तेमां अनुपयुक्तो नथी जाणता न्वीजी बीजी बाचना. वाचनामां तो आ अर्थवाळुं मूळसूत्र, मूळमां साक्षात् ज देखाय छे. ['आलातं व 'ति] एक वार बोळवुं ए आलाप, ['संलावं व 'ति] काठाप-संकाप. वारंवार मानसिक बोलवुं ते ज संलाप [' लढाओ ' ति] तेना अवधिना विषयपणाने पामेली-तेना अवधिज्ञानवडे जणाय तेवी । [' पत्ताओं ' त्ति] तेना अवधिज्ञानवडे सामान्यरूपे जाणेली. ['अभिसमण्णागयाओ ' ति] विशेषे करी परिछिन्न-ज्ञात-थयेली. कारण के, तेओना अवधि-ज्ञाननो विषय संभिन्नलोकनाडी छे, अने ज अवधिज्ञान लोकनाडीतुं ग्रहण करनारुं होय छे ते मनोवर्गणानुं ग्राहक होय ज छे. केमके, जे अवधि-ज्ञाननो विषय लोकनो संख्येय भाग होय ते अवधिज्ञान मनोद्रव्यनुं ब्राहक-जाणनारं-पण होय छे. तो वळी ज अवधिज्ञाननो विषय संभिन्न-समस्त-छोकनाडी छे ते अवधिज्ञान मनोद्रव्यनुं जाणनारुं होय एमां तो कहेवुं ज शुं ? वळी जे अवधिज्ञाननो विषय छोकनो संख्येय भाग छे ते अवधिज्ञान मनोद्रव्यतुं जाणनारुं छे, ए प्रमाणे इष्ट पण छे. कह्युं छे जे, " छोकना अने पल्योपमना संख्येय भागने जाणनारो अवधि मनो-द्रव्यनो माहक-जाणनार-होय छ, एम जाणवुं. " अनुत्तरसुरनो अधिकार चालु होवाथी आ-['अणुत्तरा-' इत्यादि] सूत्र कहे छे. [' उदिणा-मोह ' ति] जेंओने वेद मोहनीय उत्कट छे, [' उवसंतमोह ' ति] कोइ रीते पण मैथुननो सद्भाव न होवाथी तओने वदमोहनीय अनुत्कट छे, माट तेओ उपरामेल मोहवाळा छे पण तेओने उपराम श्रेणी न होवाथी तेओ सर्वथा उपरांतमोह नथी. ['नो खीणमोह 'त्ति] क्षपक श्रेणीनो अभाव होवाथी तेओ क्षीणमोह नथी. आ सूत्रथी आगळना सूत्रमां केवलिनो अधिकार होवाथी आ-['केवली 'इत्यादि] सूत्र कहे छे, ['आयाणेहिं' ति] जेओ वडे पदार्थनुं आदान-ग्रहण-थाय ते आदान-इंद्रियो, तेओवडे, पोते केवली होवाथी जाणता नथी. [' असिं सम्यंसि ' त्ति] आ वर्तमान-चालु-समयमां [' ओगाहित्ता णं ' ति] अवगाहीने-आक्रमीने [' सेयकालंसि वि ' ति] भविष्यत्कालमां पण. [' वीरियस-

जोगसद्व्ययाए ' ति] वीर्यातरायना नाशथी उत्पन्न थएली शक्ति ते वीर्य, जमां वीर्य मुख्य छ एवं मानस वगेरे व्यापारथी युक्त विद्यमान जे जीव द्रव्य ते 'वीर्यसयोग सद्-द्रव्य ' कहैवाय, वीर्यनो सद्भाय होय तो एण योगो-व्यापारो-विना चलन न थर शके माटे 'सयोग ' शब्द वह

सद्-द्रव्यने विशेषित कर्यु छे अने द्रव्यतं ने ' सत् ' ए विशेषम छे ते द्रव्यनी सत्ताना अववारण माटे छे, अथवा वीर्यप्रवान, मानसादि योगयुक्त आत्मरूप द्रव्य ते ' वीर्य सयोग खद्रव्य ' कहेवाय, अथवा वीर्यप्रधान योगवाळो एवो अने मन वगेरेनी वर्गणायुक्त ते ' वीर्यसयोग सद्व्य '-कहेवाय, तेपणुं ते 'वीर्यसयोगसद्रव्यता' अने तद्रृष हेतु बड़े. ['चलाइं 'ति] अस्थिर. ['उवगरणाइं 'ति] अंगो. ['चलोवगरणह्याए र्यं ' ति]

बिसी अने इंद्रियो.

त्री**र्व**ेसयोग-सद्रथ्यः

चेड-उपक(य.

चौदपूर्वी.

२८. ४०--पैमू णं भंते ! चोइसपुब्वी घडाओ घडसहस्सं, पडाओ पडसहस्सं, कडाओं कडसहस्सं, रहाओं रहसहस्सं, छत्ताओ छत्तसहस्सं, दंडाओ दंडसहस्सं, अभि।निव्यद्देता उवदं-सेचए ?

अस्थिर अंग सरूप जे अर्थ तेषणे अर्थात् अंगो अस्थिर होवाथी.

२८. ७०--हंता, पभू.

३९. प्र०-से केणद्वेणं पभू चउहसपुन्वी, जाव-उवदसेत्तए?

३९. उं०--गोयमा ! चउइसपुव्यिस्स णं अणंताइं दव्याइं उक्करियाभेएणं भिज्जमाणाइं, लद्धाइं, पत्ताइं, अभिसमण्णागयाइं भवंति, से तेणहेण जाव-उवदंसेत्तए.

--सेवं भंते ! सेवं भंते ! ।ति.

३८. प्र० — हे भगवन् ! चौदपूर्वने जाणनार-श्रुत केवली मनुष्य, एक घडामांथी हजार घडाने, एक पटमांथी हजार पटने, एक सादरीमांथी हजार सादरीओने, एक रथमांथी हजार रथने, एक छत्रमांथी हजार छत्रने अने एक दंडमांथी हजार दंडने करी देखाडवा समर्थ छे ?

३८. उ०--हा, समर्थ छे.

३९. प्र० -- ते केवी रीते, चौदपूर्वी यावत्-देखाडवा समर्थ छे?

२९. उ० - हे गौतम! चौदपूर्विए, उत्करिका भेदवडे मेदातां अनंत इच्यो प्रहण योग्य कर्यां छे, प्रह्यां छे अने ते इच्योने घटादिरूपे परिणमायवा पण आरंभ्यां छे, माटे ते हेतुथी यावत्-देखाडवा समर्थ छे

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे (एम कही-यावत् विहरे छे.)

भगवंत-अजाबुहम्मसामिपणीए सिरीभगवर्द्युते पंचमसये चउरथो उदसो सम्मत्तो.

१. 'च ' शब्दनो ' वळी ' अर्थ छे: — श्रीअभय ०

१. मूलच्छायाः—प्रभुः भगवन् ! चतुर्देशपूर्वी घटाद् घटसहस्रम्, पटात् पटसहस्रम्, कटात् कठसहस्रम्, रथाद् रथसहस्रम्, छत्रात् ू छत्रसहस्रम् , दण्डाद् दण्डसहस्रम् अभिनिवेरयं, उपदर्शयितुम् ! हन्त, प्रभुः. तत् कैमार्थेन प्रभुः चतुर्दशपूर्वा यावस्–उपदर्शयितुम् ! गैातमः! श्रतुर्दशपूर्विणः अनन्तानि इत्याणि उत्करिकामेदेन शिद्यमानानि छज्नानि, श्राप्तानि, अभिसमन्यागतानि सनन्ति, तस् तैनार्थेन गावसू-उपदर्शगितुम्, तदेवं भुगुषन् । तदेवं भगवन् ! इतिः —अतु०

अनुतरिकाः

८. केवर्ल्यधकारात् श्रुतकेवितम् अधिकृत्याहः-' घडाओ घडसहस्सं' ति घटाद् अवधेर्घटं निश्रां कृत्वा घटसहस्रम्, ' अभिनियद्देता ' इति योगः, अभिनिर्वर्त विधाय श्रुतसमुत्थङ्गन्थिविशे गेण उपदर्शयितुं प्रभुरिति प्रश्नः. ' उक्कारियामेएणं ' ति इह पुद्रलानां भेदः पश्चवा भवति—खण्डादिभेदात्. तत्र खण्डभेदः—खण्डशो यो भवति लोष्टादेरियः प्रतरभेदः अभ्रषटलानाम् इयः ·चूर्णिकामेदः तिलादिचूर्णवत् अनुतदिकामेदः-अवटतटमेदवत् । उत्करिकामेदः-एरण्डवीजानामिवेति । तत्र उत्करिकामेदेन मियमा-मानि. ' लखाई ' ति लब्धिविशेषाद् ग्रहणविषयतां गतानि. ' पत्ताइं ' ति तत एव गृहीतानि. ' अभिसमण्गागयाइं ' ति घटादि-रूपेण परिणमयितुम् आरब्धानि, ततरतैर्वटसहस्रादि निर्वर्तयति, आहारकशरीरवद् निर्वर्ट्य च दर्शयति जनानाम्. इह चोत्करिकाः मेदग्रहणं तिक्कितानामेव द्रव्याणां विवक्षितघटादिनिष्पादनसामध्यमिस्ति-नाऽन्येषामिति कृत्वा--इति.

भगवत्सुधर्मस्वामिश्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पद्मममते चतुर्थं उद्शके श्रीअनयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

ॅ८. केवलिना अधिकारथी श्रुत केवलिनो अधिकार कहे छेः [' घडाओ घडसहस्सं ' ति] एक घडामांथी–एक घडाने सहायभूत पक्रमांथी करीनें तेमांथी हजार घडाने. ['अभिनिवद्देता'] करी, श्रुतथी उत्पन्न थयेली एक प्रकारनी लब्बि वडे देखाडवा समर्थ छे १ ए प्रश्न छे. [' उक्करियामेएणं ' ति [अहिं पुद्रलोतुं खंड वगेरे प्रकारथी पांच प्रकारतुं मेंदन होय छे. तेमां ढेफां वगेरेनी पेठे दुकडे दुकडारूपे पुद्रलोना मेदावाने ' खंडमेद ' कहे छे, अश्रपटलनी पेठे पुद्रलोना मेदावाने ' प्रतरमेद ' कहे छे, तल वगरेना चूर्यनी पेठे पुद्रलोना मेदावाने 'चूर्णिकामेद 'कहे छे, कूवाना कांठानी तराडोनी पेठे पुद्रलोना मेदावाने 'अनुतिटिकाभेद ' कहे छे, एरडाना बीजनी पेठे पुद्रलोना भेदाबाने उत्कीरिका भेद कहे छे; तेमां उत्करिका भेदवड़े भेदातां. ['लद्धाइं'ति] लिव्धिविशेपवड़े ब्रह्ण करवाने योग्य करेलां. ['पत्ताइं' ति] तेथी ज मह्यां ['अभिसमण्णागयाइं 'ति] घटादिरूपे परिणमाववाने आरंभ्यां, तेथी ते वडे हजार घट वगेरे बनात छे अने आहारकशरीरनी पेठे बनावी माणसोने देखाडे छे. उत्करिका भेदवडे भेदाएलां द्रव्यो, इच्छेला घट वॅगरे पदार्थोंनुं निष्पादन करवा समर्थ **क्रे, पण**्डीलां भेदवडे भेदाएठां द्रव्यो, इष्टकार्य करवा समर्थ नथी माटे अहिं ' उत्करिकामेद ' नुं प्रहण कर्युं छे.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् द्यायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी । असाकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शानयोः-दशात् श्रीवीरदेवः सक्षलशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

१. अहीं जणावेला ' उत्करिका ' मेद विषे प्रज्ञापना सूत्रना अस्यारमा भाषापदगां (५० २६६-स०) सविस्तर नोंघ आ प्रमाणे छे:---

" तेसि णं भंते ! दव्वाणं कतिविहे मेए पण्यत्ते ?

गोयमा ! पंचविहे भेए पण्णत्ते, तंजहाः खंडभेदे, पयरभेदे, चुण्णिया-मेदे, अणुतडियामेदे, उक्तियामेदे.

से किं तं खंडमेदे ?

खंडभेदे जं णं अयखंडाण ना, तउखंडाण वा, तंबखंडाण वा, सीस-खंडाण वा, रययखंडाण वा, जातरूवखंडाण वा खंडएण मेचे भवति-से तं खंडभेदे.

से कि तं पयरभेदे ?

पयरमेंदे जं णं वंसाण वा, वेसाण वा, मलाणं वा, कदलीथेभाण वा, अडमपडलाण वा, पयरेणं मेदे भवति-से तं पयरमेदे.

से कि तं चुण्णियाभेदे ?

चुिणयाभेदे जं णं तिलचुण्णाण वा, मुग्वचुण्णाण वा, मासचुण्णाण वा, पिष्पलीचुण्णाण वा, सिरीयचुण्णाण वा, सिंवबेरचुण्णाण वा चुण्णिया-भेदे भवइ-से तं चुण्णियाभेदे.

से किं तं अणुतं डियामेवे ?

जं णं अगडाण वा, तडामाण वा, दहाण वा, नदीण वा, वावीण वा, पुनखरिणीण वी, दीहियाण वा, गुंजालियाण वा, सराण वा, सरसराण वा, संरपंतियाण ना, सरमर्द्धतियाण वा अणु विषा भेदे अनति-से नं अणु-त्रिवागेदे.

हे भगवन् ! ते द्रव्योनो भेद केटला प्रकारनो कह्यो छे ?

हे गातम! मेदना पांच प्रकार कहा छे. ते जेमकेः खंडमेद, प्रतर्मेद, चूर्णिकामेद, अनुतटिकामेद अने उत्करिकामेद.

खंडभेद ए∙शुं ∮

लेखाना कटकाओनो, तरवाना कटकाओनो, तांबाना कटकाओनो, सीसाना कटकाओनो, रूपाना कटकाओनो अने सोनाना कटकाओनो जै खंडे खंडे मेद ते खंडमेद.

प्रतरभेद ए शुं ?

वांसडाओनो, नेतरोनो, नलोनो, केळनां थडोनो अने अभ्रपटलोनों जे प्रतरे प्रतरे भेद-ते प्रतरभेद.

चूर्णिकाभेद ए शुं ?

तलना चूर्णनो, (चूर्ण-स्रोट) सगना चूर्णनो, अडदना चूर्णनो, पिपलीना चूर्णनो, मरीना चूर्णनो अने शृंगबेरना चूर्णनो जे भेद-ते चूर्णिकाभेद.

अनुतिहिका भेद एं शुं है

कूवाओनो, तळायोनो, धराओनो, पहाडी नदीओनो, बाबोनो, पुष्करि-णीओनो, सीधी नदीओनो, वांकी नदीओनो, सरोवरोनो, दरेके दरेक सरो-वरोनो, सरोवरनी हारोनो अने नीकोवाळी सरोवरनी हारोनो जे भेद ते-अनुतृदिका भेद.

से किं तं उक्करियाभेदे ?

उत्करिकाभेद ए शुं ?

जं णं मूसाण वा, मंहूसाण वा, तिलसिंगाण वा, मुरगसिंगाण वा, मूषोनो, मंहूसोनो, तलनी शिंगोनो, अडदनी शिंगोनो अने एरडाना माससिंगाण वा, एरंडवीयाण वा फूडिता उक्करियामेदे भवति-से तं बीजोनो जे फूटीने मेद थाय छे-ते उत्करिकामेद. उक्करियामेदे."

ा आं प्रकरणनी टीका करतां टीकाकार श्रीमलयगिरिजीए जे प्रमाणे संक्षेपमां जणाव्युं छे ते आ छे:—

" लोहाना दुकहानी पेठे जे मेद छे ते खंडमेद, भोजपत्रना मेदनी पेठे जे मेद छे ते प्रतरमेद, पडेला लोहनी पेठे जे वेशाई जाय ते वृश्विकामेद, शेरहीनां छोशांनी पेठे जे मेद छे ते अनुतरिकामेद अने खेंचवानी (?) पेठे जे मेद छे ते उत्करि(हि)कामेद, ":—अनु०

शतक ५.-उद्देशक ५.

मात्र संयमयी सिद्धि थाय १-प्रथम शतक चतुर्थ उदेशक,-अन्यतीथिकवक्तव्यता,-ते मिथ्या.-स्वमत,-एवंभूत वेदना.-अनेवंभूत वेदना.-नैरिय कादि-वेमानिक.-संसारमंडल.-कुडकरो केटला ?-सात.-तीर्थंकरनी माताओ.-पिताओ.-शिष्याओ.-चक्रवर्तिनी माताओ.-स्वीरहन.-बलरेवो.-वासुदेवेनी मान ताओ.-पिताओ. प्रतिशञ्ज शे विनेरे.-समवायस्त्र,-विद्यार.--

- समयं केवलेणं संजमेण० ?
- ?. ७०--जहा पढमसए चउत्थुदेसे आलावगा तहा मयव्वाः, जाव-अलमत्थु त्ति वत्तव्वं सिया.
- ?. प्र०--छेउमत्थे णं भंते ! मणूसे तीय-मणंतं सासयं १. प्र०--हे भगवन् ! छद्मस्थ मनुष्य, वीती गवेला शास्त्रता अनंत काळभां मात्र संयमवडे (सिद्ध थयो ?)
 - १. उ०---जेम प्रथम शतकमां चैतुर्थ उदेशकमां आलापक कह्या छे तेम अहिं पण ते आलापक कहेवा यावत् ' अलमस्तु ' एम कहेवाय ' त्यां सुधी.
- १. अनन्तरोहेशके चतुर्दशपूर्वविदो महानुभावता उक्ता. सं च महानुभावत्वाद् एव छदास्थोऽपि सेत्स्यति इति कस्याऽप्याऽऽशङ्का स्यात्, अतस्तदपनोदाय पश्चमोदेशकस्य इदमादिस्त्रम्:-' छउमतथे णं ' इत्यादि, ' जहा पढमसए ' इत्यादि, तत्र च छदास्थः भाधोत्रधिकः, परमाधोविविकश्च केवलेन संपमादिना न सिध्यति—इत्याद्यर्थपरं तावनेपं यावद् ' उत्पन्नज्ञानादिधरः केवली अल्मस्तु ' इति वक्तव्यं स्याट्-इति. यचेदं पूर्वाऽधीतमपि इहाऽधीतं तत् सम्बन्धविशेपात् . स पुनरुदेशकपातनायाम् उक्त एवेति.
- १. आगळना उद्देशकमां चौदपूर्वीनी महानुभावता कही छे, अने ए महानुभावपणाथी ते चौद पूर्वी छन्नस्थ होय तो पण सिद्ध धश एवी आशंका थाय माटे ते आशंकानी परिहार करवा पंचम उद्देशकनुं आ-['छउमत्थे णं 'इत्यादि] सूत्र छे. ['जहा पढमसंए ' इत्यादि.] तेमां छद्मस्य एटले आधोवधिक अने परमावधिक, 'एकला संयमादिवडे सिद्ध न थाय ' इत्यादि अर्थ परत्वेतुं ते सूत्र त्यां सुधी लेंबु, ज्यां सुधी 'उत्पन्नज्ञानादिनो थारण करनार केवली 'अलमस्तु 'एम कहेवाय 'आ वात एकवार आगळ प्रथम शतकना चोथा उद्देशकमां आत्री गइ छे तो पण अहीं ए विषे फरीने जे कहुं छे ते संबंध विशेषथी कहुं छे अने ते संबंध उद्देशकनी शरुआतमां ज कहा। छे.

प्रथमशतक,

एकवार आग आबी गुर्यु

अन्यतीर्थिको.

भूयं वेदणं वेदेंति से कहमेयं भंते ! एवं ?

२. प्र० — अंच अध्या णं भंते ! एवं आइक्षंति, जाव - २. प्र० — हे भगवन्! अन्यतीर्थिको एम कहे छे यावत् प्ररूपे परूबोंति सच्चे पाणा, सच्चे भूआ, सच्चे जीवा, सच्चे रात्ता एवं- छे के, सर्व प्राण, सर्व भूत, सर्व जीव अने सर्व सस्त्रो एवंभूत-जैम कर्म बांध्युं छे ते प्रमाणे-वेदनाने अनुभवे छे, हे भगवन्! ंते एम केवी रीते छे ?

१. मूलच्छायाः — छद्माथो भगवन् ! मनुष्योऽतीतम् , अनन्तम् , शाश्वतं समयं केवलेन संयमेन ? यथा प्रथमशते चतुर्थे।देशके आलापङ्गास्त्या इतिन्याः, यावत्-अलमस्तु इति वक्तव्यं स्यात्: १. जुओ भगवती प्रथम खंड (पृ० १३७-१३८):-अनु० २. अन्ययूथिकाः भगवन्। एवम् आख्यान्ति, यानत्-प्ररूपयन्ति सर्वे प्राणाः, सर्वे भूताः, सर्वे जीवाः, सर्वे सत्त्वाः एवंभूतां वेदमां वेदमन्ति, तत् कथमेतद् भगवन् े एवम्

२. उ०—गीयमा ! जं णं ते अन्नउश्थिया एवं आइक्संति, जाव-वेदेंति, जो ते एवं आहंसु, मिच्छा ते एवं आहंसु; अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्सामि, जाव-परूवेमि अत्थेगइया पाणा, भूया, जीवा, सत्ता एवंभूयं वेयणं वेयंति; अत्थेगइया पाणा, भूया, जीवा, सत्ता अणेवंभूयं वेदणं वेदेंति.

३. प्र०-से केंगहेणं अत्थेगइया-तं चेव उचारेयव्वं ?

३. उ०—गोयमा । जे णं पाणा, भूया, जीया, सत्ता जहा कडा कम्मा तहा वेदणं वेदेंति ते णं पाणा, भूया, जीया, सत्ता एवंभूयं वेदणं वेदेंति, जे णं पाणा, भूया, जीया, सत्ता जहा कडा कम्मा नो तहा वेदणं वेदेंति ते णं पाणा, भूया, जीवा, सत्ता अनेवंभूयं वेयणं वेयंति; से तेणद्वेणं तहेव.

४. प्र० — नेरइया णं भंते ! कि एचंभूयं वेयणं वेयांत, अणेवंभूयं वेयणं वेयांति ?

४. उ० —गोयमा ! नेरइया ण एवंभूयं पि वेयणं वेदेंति, अणेवंभूयं पि वेयणं वेदेंति.

५. प्र०-से केणहेणं तं चेव ?

५. उ०—गोयमा ! जे णं नेरइया जहा कडा कम्मा तहा वेदणं वेयांति ते णं नेरइया एवंभूयं वेयणं वेदेंति, जे णं नेरइया जहा कडा कम्मा णो तहा वेदणं वेदेंति ते णं नेरितया अणवंभूयं वेयणं वेदेंति; से तेणहेणं, एवं जाव-वेमाणिया—

- २. उ०—हे गौतम! ते अन्यतीर्थिको जे ए प्रमाणे कहे छे यायत्—वेदे छे, जे तेओ ए प्रमाणे कहे छे ते एम खोटुं कहे छे, वळी हे गौतम! हुं तो एम कहुं छुं यावत् प्ररूपुं छुं के केटलाक प्राणो, भूतो, जीवो अने सस्वो एवंमूत-ए प्रकारे-पोताना कर्म प्रमाणे—वेदनाने अनुभवे छे अने केटलाक प्राणो, भूतो, जीवो अने सस्वो अनेवंमूत—जेम कर्म बांध्युं छे तेथी जूदी—वेदनाने अनुभवे छे.
 - ३. प्र०--ते क्या हेतुथी-केटलाक० इत्यादि ते ज कहेबुं ?
- ३. उ० हे गौतम! जे प्राणो, भूतो, जीवो अने सत्त्वो करें छां कमीं प्रमाणे वेदना अनुभवे छे ते प्राणो, भूतो, जीवो अने सत्त्वो एवंभूत वेदनाने अनुभवे छे अने जे प्राणो, भूतो, जीवो अने सत्त्वो करें छां कमीं प्रमाणे वेदना नथी अनुभवता ते प्राणो, भूतो, जीवो अने सत्त्वो अनेवंभूत वेदनाने अनुभवे छे, ते हेतुथी तेम ज कहां छे.
- ४. प्र०—हे भगवन्! नैरियको छुं एवंभूत वेदनाने वेदे छे के अनेवंभूत वेदनाने अनुभवे छे ?
- ४. ४० हे गौतम ! तेओ एवंभूत वेदनाने पण अने अनेवंभूत वेदनाने पण अनुभवे छे.

५. प्र०-ते क्या हेतुथी ?

५. उ०—हे गौतम! जे नैरियको करेलां कर्म प्रमाणे वेदना वेदे छे तेओ एवंभूत वेदना वेदे छे अने जे नैरियको करेलां कर्म प्रमाणे वेदना नधी वेदता तेओ अनेवंभूत वेदनाने वेदे छे ते हेतुथी एम कह्युं छे. ए प्रमाणे यावत् वैमानिक सुधीना—

२. स्वयृथ्यवक्तव्यताऽनन्तरम् अन्ययृथिकवक्तव्यतास्त्रम्. तत्र चः—' एवंभूयं वयेणं ' ति यथाविधं कर्मनिबन्धनम् , एवंधूताम्—एवंप्रकारतया उत्पन्नां वेदनाय् असातादिकमीद्यं वेदयन्ति-अनुभवन्ति. गिथ्यात्वं च एतद्वादिनाम् एवम्ः—निह यथा बद्धं
तथेव सर्वं कर्माऽनुश्र्यते, आयुष्कर्मणा व्यक्षिचारात्. तथाहिः—दीर्वकालाऽनुभवनीयस्याऽपि आयुष्कर्मणोऽल्पीयसाऽपि कालेनाऽनुभवो
भवति, कथनन्यथा अपमृत्युव्यपदेशः स्वंजनप्रसिदः स्यात् शक्यं वा महासंयुगादौ जीवलक्षाणामपि एकदा एव मृत्युक्पपदेतिइति. ' अणेवंभूयं पि ' ति यथा वद्धं कर्म न एवंभूता अनेवंभूता अतस्ताम् , श्रूयन्ते हि आगमे कर्मणः स्थितिधात—रसघातादय
इति. ' एवं जाव—वेमाणिया—' एवम् उक्तक्रमेण वैमानिकाऽवसानं संसारिजीवचक्रवालं नेतव्यमिस्पर्थः.

२. खतीर्थिकनी वक्तव्यता पछी अन्यय्थिकनी वक्तव्यताने लगतुं सूत्र छे, तेमां ['एवंभूयं वेयणं'ति] जे प्रकारनुं कर्म बांध्युं छे ए प्रकारनी उत्पन्न थयेली वेदनोन-अशाता वेदनीय वगरे कर्मना उदयने अनुभये छे. ए बादिओनी असत्यता आ प्रमाण छे:

ा **वेदनाः** स्टिस्तः

१. मूलच्छायाः—गातम ! यत् तेऽन्ययृथिकाः एवम् आंख्यानित यावद् वेदयनितः ये ते एवम् आहुः, मिध्या ते एवम् आहुः. अहं पुनगाँतम ! एवम् आख्यामि, यावत्-प्ररूपयामि अस्येककाः, प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः एवम्तां वेदनां वेदयनितः अस्येककाः प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः अनेवंभूतां वेदनां वेदयनितः तत् केनाऽथेंन अस्येककाः तच्चेव उचारयितव्यम् ? गातम ! ये प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः यथा कृतानि कर्माणि तथा वेदनां वेदयनित ते प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः एवभूतां वेदनां वेदयनितः ये प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः यथा कृतानि कर्माणि नो अथा वेदनां वेदयन्ति ते प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः अनेवंभूतां वेदनां वेदयन्ति, अनेवंभूतां वेदनां वेदयन्ति, अनेवंभूतां वेदनां वेदयन्ति, अनेवंभूताम् अपि वेदनां वेदयन्ति, अनेवंभूताम् अपि वेदनां वेदयन्ति, तत् केनाऽथेन तच्चेव ? गातम ! ये नैरियकाः यथा कृतानि कर्माणि तथा वेदनां वेदयन्ति ते नैरियकाः एवंभूतां वेदनां वेदयन्ति, ये नैरियकाः यथा कृतानि कर्माणि नो तथा वेदनां वेदयन्ति ते नैरियकाः अनेवंभूतां वेदनां वेदयन्ति, तत् तेनाऽथेंन एवं यावत्-वैमानिकाः—अनु०

^{9.} आ इकीकत विशेष विचारणीय जणाय छे-जो के टीकाकारशीए आ संबंधे खुलासी करवा प्रयत्न क्यों छे तो पण ए विशेष अगम्य कुणाय छे:—अनु०

आयु कर्ममां व्यभिचार (तेना वेदनमां फारफेर थतो) होवाथी जेम बांध्या छे ते प्रकारे बयां कर्मी नथी अनुभवातां, ते ज दर्शावे छैं: लांबा काळ सुधी अनुभववा थोग्य बांधेहुं आयुष्य कर्म थोडे काळे पण अनुभवी लेवाय छे, जो एम न होय तो अपमृत्यु कमोत नी। कमोत-व्यवहार जे सर्वजनप्रसिद्ध छे ते केम थह शके ? अथवा भयंकर मोटा संग्राम वर्गरे स्वळमां लाखो जीवोना प्राण एक ज काळ जाय ते केम बने-टाखो जीबोतुं एक काळे मृत्यु केम बने ? ['अणेवंभूयं पि'त्ति] जे प्रकारे कर्म बांध्यु छे ते प्रकारे नहि तेने-अनेवंभूत वेदनान कर्मनो स्थितिघात, रसघात वर्गरे आगमगां संगळाय छे तथी पण अनेवंभूत वेदनानो अनुभव सत्य ठरे छे. ['एवं जाव स्थितवाता दि.-वेमाणिया-'] कहेली रीत प्रमाणे वैमानिकना छेडा वाळुं समस्त संसारी जीवनुं चक्रवाळ जाणी लेवुं.

कुलकर विगेरे.

--- संसीरमंडलं नेयव्वं-

६. प्र० — जंबूही वे णं भंते ! इह भारहे वासे इमीसे उस्स-**पिर्णी**ए समाए क*इ* कुलगरा होत्था ?

६. उ०--गोयमा ! सत्तै. एवं चेत्र तित्थयरमायरो, विर्थरो,

---संसार-मंडळ विषे समजवानुं छे.

६. प्र०-हे भगवन् ! जंबूद्वीपमां आ भारत वर्षमां आ अवसर्पिणीना काळमां केटला कुळकरो धया ?

६. उ॰—हे गौतम! सात कुलकर थया, ए प्रमाणे

१. मूलच्छायाः—संसारमण्डल ज्ञातब्यम्, जम्बुद्वीपे भगवन् ! इद्द भारते वर्षे अस्याम् अवसर्षिण्यां समायां कति कुळकसः अभवन् ? भातम ! सप्त. एवं चैव तीर्थकरमातरः, पितरः--अनु०

आ शब्द माटे टीकाकारश्रीए जणाब्युं छे के —

"अथवा इह स्थाने वाचनान्तरे कुलकर-तीर्थंकरादिवक्तव्यता दृश्यते."

" अथवा बीजी वाचनामां आ ठेकाणे कुलकर अने तीर्थंकर विगेरेनी वक्तव्यता कहेली है. "

टीकाकारजीना आ उहेख उपरथी एम साफ जणाय छे के, 'संसारमंडलं नेयन्वं 'ए शब्दनी संबंध ' जाब बेमाणिया ' शब्द साथे घटी शकतो नथी. कारण के, आ स्थळे के बीजे अनेक स्थळे जे हकीकतने जीव मात्रमां लागु करवाना उेखो मळे छे लां बधे ' जाव-वैमाणिया ' ए शब्द छेवट आवे छे अने ए सब्द जे हकी कत्तनें छेडे आवेलो होय ते हकीकत जीव मात्रने लागु थाय छे-कोइ स्थळे आ यंथमां जीव मात्रने लगता उहेंखोनी नोंधमां 'जान-चेमाणिया 'शब्द उपरांत बीजो कोइ शब्द नोंधेलो जणातो-जणायो-नथी माटे ज अहीं अमे 'संसारमंडलं नेयब्वं ' ए शब्दने ' जाब-वैमाणिया ' राब्दथी छूटो पार्डाने जणावेलो छे अने ' ए प्रमाणे वैमानिक सुधीना सगस्त संसारमंडळ विषे समजवानुं छे ' एवो टीकाकारशीए जणावेस्रों बीजो अर्थ बताववा माटे पण ए बन्ने शब्दो वचे एक मोटी आडी ओळी सुकेली छे-आ जातनो फेरफार असे मूळमां अने भाषांतरमां-बन्ने ठेकाणे जणाव्यो छे वळी वाचनाने लगता टीकाकारना आ अने बीजा अनेक उहेखी द्वारा एम पण कळी शकाय छे के, आ वाचनाओमां केटली बधी विचित्रता छे-जाणे नवीनता ज न होय (१):-अनु०

२. कुलकर विगेरे विषे श्रीसमवायांगसूत्रमां (स॰ प्ट॰ १५०-१५५) सविस्तर नींघाएलं छे. तेमांनुं केटलंक-अहीं उपयोगी-आ प्रमाणे छै:---

" जंबुद्दीने णं दीने भारहे नासे इमीसे ओसप्पिणीए समाए सत्त कुलगरा होस्था. तं जहाः---

पडमेत्थ विमलवाहण [चक्खुम जसमं चडत्थमभिचंदे, तत्तो परेणइए मरुदेवे चेव नामी य.] " कुलकरनी खीओः

श्तेंसि ण सत्तण्हं कुलगराण सत्त भारिआ होत्था. तं जहाः---चंदजसा चंदकंता [सुरूव-पडिरूव चक्खकंता य, सिरिकंता मरदेवी कुलगरपत्तीण नामाइं.]

३, तीर्थंकरनी माताओः

" जंबुद्दीने णं दीने भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए चडनीसं तित्थ-गराणं मायरो होत्था. तं जहाः-

> महदेवी विजया सेणा [सिद्धत्था मंगला सुसीमा य, पुरुवी छक्खणा रामा नंदा थिण्ह् जया सामा. सुजसा सुब्वय अइरा सिरिया देवी पभावई पडमा, वृष्पा सिना य वामा तिसला देवी य जिणमायाः "]

४. तीर्थंकरना पिताओः

'' जबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चडवीसं तिरंथ-गराण पियरो होत्था. तं जहाः--

> णाभी य जियसन्तु य [जियारी संवरे इय, महे घरे पइंडे य महरोणे य खिए. सुगीचे दछरहे विण्हू वसुपुने य खतिए, क्यवम्मा सीहसेणे माण् विस्ससेणे इय. सूरे सुदंसणे कुंमे सुमित विवए समुद्दविजये य, हासा य आससेणे य सिद्धस्ये चिय खिए."

" जंबूद्रीपमां, भारतवर्षमां आ अवसर्पिणीमां सात कुलकर धया हता. तेनां नामः

विमलवाहन, चक्षमान्, यशोमान्, अभिचंद्र, प्रसेनजित्, मंरुदेव अने नाभि. "

ए साते कुलकरोने (एक एकने एक) एम सात स्त्रीओ इती. तेनां नामः चंद्रयशा, चंद्रकांता, सुरूपा, प्रतिरूपा, चक्षुकांता, श्रीकांता अने महदेवी.

" जंबूदीपमां, भारतवर्षमां आ अवसर्पिणीमां चीवीश तीर्थंकरोनी माताओं धइ हती. तेना नामः

मरुदेवी, विजया, सेना, सिद्धार्था, मंगला, सुसीमा, पृथ्वी, ढक्ष्मणा, रामा, नंदा, विष्णु, जया, स्यामा, सुयशा, सुवता, अचिरा, श्री, देवी, प्रभावती, पद्मा, वप्रा, शिवा, वामा अने जिनमाता त्रिशला देवी. "

" जंबुद्वीपमां भारतवर्षमां आ अवसर्पिणीमां चोवीश तीर्थंकरोना ि^पताओ थया इता. तेनां नामः

नाभी, जित्रशत्रु, जितारि, संवर, मेघ, धर, प्रतिष्ठ, महसेन क्षत्रिय, सुधीय, रहरूप, विष्णु, वसुपूज्य क्षत्रिय, कृत्वर्मा, सिंह्सेन, भानु, विश्वसेन, सूर, सुदर्शन, कुंभ, सुमित्र, विजय, समुद्रविजय, अश्वसेन राजा अने सिद्धार्थ क्षत्रिय. "

वार्सुदेवा, वासुदेवमायँरो, पिर्वरो; एएसिं पडिसर्त्तू जहा समवाए नामपरिवाडीए तहा णेयव्या.

--सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव--विहरइ.

पैढमा सिस्सिणीओ, चक्कवेंहिमायरो, इत्थिँरयणं, वलेंदेवा, तीर्थकरोनी माताओ, पिताओ, पहेली चेलीओ, चक्कवर्तीनी माताओ, ह्यीरत्न, बलदेवी, वासुदेवी, वासुदेवनी माताओ, पिताओ; एओना प्रतिशत्रुओ-प्रतिवासुदेवो वगेरे जे प्रमाणे ' समन्राय ' सूत्रमां नामनी परिपाटीमां छे ते प्रमाणे जाणवुं. —हे भगवन् ! ते ए प्रमाशे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, एम कही यावत् विहरे छे.

भगवंत-अज्ञसहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते पंचमसये पंचमी उदेसी सम्मत्तीः

१. मूलच्छायाः—प्रथमाः सिष्याः, चकवर्तिमातरः स्त्रीरत्नम्, बलदेवाः, बासुदेवाः, वासुदेवमातरः, पितरः, एतेषां प्रतिशत्रवः, यथा समवाग्रे नामपरिपाट्या तथा झातव्यांः तदेवं भगवन् ।, तदेवं भगवन् । इति यावद्-विहरातिः-अनु०

२. तीर्थंकरोनी पहेली चेलीओ:

" एएसि णं चडवीसाए तित्थगराणं चडवीसं पढमसिस्सिणी होतथा. सं जहाः---

> बंभी य परमु सामा अजिया कासवी रई सोमा, सुमणा बारुणी सुलसा धारणी धरणी य धरणिधरा. पढन-सिवा सुयी तह अंजुया भावियप्या य रक्खी य, बंधुवती पुष्फवती अजा अमिला य अहिया. अविखर्णा पुष्फचूला य चंदणऽज्ञा य आहियाउ, - उदितोदियकुलवंसा, विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेदा, तिरथप्पवत्तयाणं पढमा सिस्सी जिणवराणं. "

२. चक्रवर्तिनी माताओः

" जंबुद्दीवे भारहे वासे इमीसे ओसिव्यणीए बारस चक्कविद्यायरी होत्था. तं जहाः

सुनंगला, जसवती, भद्दा, सहदेवी, अइरा, सिरी, देवी, तारा, जाला, मेरा, वप्पा चुछणि, अपच्छिमा. "

४. चकदर्तिनां स्त्रीस्त्नोः

" एएसिं बारसण्हं चक्कवटीणं बारस इत्थिरयणा होतथा. तं जहाः पडमा होइ सुभद्दा भद्द सुभंदा जया य तिजया य, किण्हिं सूरिति पडमिरी वसंघरा देवी। रुच्छिमई कुरुमई इत्थीरयणाण नामाई.

५. बलदेवनां नामोः

[" अयले विजयें भद्दे सुष्यमे य सुदंसणे, आणंदे णंदणे पडमे रामे यावि अपच्छिमे. "-टी०]

ध. बागुदेवनां नामीः

[' तिविहे य दुविहे य सबभू पुरिस्तमे पुरिससीहे, तह पुरिसपुं अर्रिए दत्ते नारायणे कण्हे. "-ही०]

७. बासुदेवनी माताओः

" अंबुद्दीवे णं णव वासुदेवमायरी होत्था. तं जहाः मियावई उमा चेव पुह्वी सीया य अम्मया, रुच्छिमई सेसमई केकई देवई तहा.

८. बासुरेवना पिताओः

" जंबुद्दीवे० नववलदेव–नववासुदेवितरो होत्था. तं जहाः पयावई य वंशो ं सोमो रहो सिवो सहसितो य, क्षांगितिहो य दसरहो नवनो भणिओ य वसुदेवो, 🏻

९. वासुरेवना प्रतिशत्रुओः

" एएसि नवण्हं बासुदेवाणं नव पडिसत्तू होतथा तं जहाः अस्तरगी वे [तारए मेरए महुकेढवे निसंभे य, बिलि पहराए तह रावणे य नवमे टी०] जरासंधे."

''ए चोनीश तीर्थंकरोनी साथी पहेलां थएली (एवी) चोनीश चैलीओ इती, तेनां नामः

बाबी, फल्यु, स्थामा, अजिता, कास्थपी, रति, सोमा, सुमना, बाहणी, सुरुसा, घारणी, घरणी, घरणिघरा, प्रथम-शिवा, शुची, ऋजुका, रक्षी, बंधुवती, पुष्पवती, आर्या अमिला, अधिका, यक्षिणी, पुष्कचूला अने आर्या चंदना—ए बधी उत्तम कुल-वंशवाळी, विशुद्ध वंशवाळी अने गुणोथी युक्त इती. "

'' जंबूदीपमां, भारतवर्षमां आ अवसर्पिणीमां बार चक्रवर्तिनी माताओ इती. तेनां नागः

सुमंगला, यशोमती, भद्रा, सहदेवी अचिरा, श्री, देवी, तारा, ज्वाला, मेरा, वप्रा अने अपश्चिमा चुह्रणि. "

ए बार चकवर्तिओने बार झीरत्नो हतां. तेना नामः

सुभदा, भदा, सुनंदा, जया, विजया, कृष्यश्री, सूरश्री, पद्मश्री, बसुधरा, देवी, रूक्मीतती, कुरुमती."

''अचल, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनंद, नंदन, पदा अने राम.''

" त्रिष्टुष्ठ, द्रिष्टुष्ठ, स्वयंभु , पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुरुषपुंडरीक, दत्त, नारायण अने कृष्ण. "

'' जंबूद्वीपमां० नव वासुदेवनी माताओ इती. तेनां नामः मृगावती, उसा, पृथ्वी, सीता, अम्मया, स्थमीवती, शेषवती, केक्सी अने देवकी. "

'' जंबूदीपमां० नय वासुरेवना पिताओ हता. तेनां नामः प्रजापति, ब्रह्म, सोम, रुद्र, शिव, महाशिव, अग्निशिख, द्शर्थ अने वसुदेव. ''

ए नव वासुदेवना नव प्रतिशत्रको हता तेनां नामः अक्षत्रीव, तारक, मेरक, मधुकेटम, निशुंभ, वर्लि, प्रमराज (१), रादण अने जरासंघ. "

आ प्रमाणेनी अने आ रुखेली हकीकतनी साथे शब्दशः मळती आवती हकीकत (य॰ प्रं०) आवश्यकनियंक्तिना शहआतना भागमां पण क्षणावेली है. उपर जणावेलां नामी उपरांत वीजां पण अनेक नामो श्रीसमवाय-अंग सूत्रमां नोंघेलां है अने ते आ प्रमाणे है:--

३. ' संसारमण्डलं नेयन्वं 'ति अथवा इहस्थाने वाचनाऽन्तरे कुलकर—तीर्थकरादिवक्तस्थता दश्यते, ततश्च संसारमण्डलसञ्देन पारिभाषिकसंज्ञया सा इह सूचिता इति संभाव्यते.

भगवत्सुधर्मसामित्रणीते श्रीगगवतीसूत्रे पद्यमशते पद्यम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समासम्.

३. ['संसारमंडलं नेयव्यं 'ति] अथवा वाचनांतरमां आ ठेकाणे कुलकर, तीर्थकर वर्गरेनी वक्तव्यता देखाय छे तेथी जैन परिभाषामां प्रसिद्ध एवा 'संसारमंडल 'शब्दवडे ते अहिं सूचित करी छ एम संभवे छे.

थ्रइ गएला कुलकरोः

" जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे तीयाए उस्सिपणिए सत्त कुलगरा होत्था. तं जहा---

मित्तदामें सुदामें य सुपासे य सर्यंवमे, विमलघोसे सुघोसे य महाधोसे य सत्तमे.

ं जंबुद्दीने णं दीने भारहे नासे तीयाए ओसन्विणेए दस कुलगरा होत्था. तं जहाः—

> सयंज्ञे सयाक य अजियसेणे अणंतसेणे य, क्जासेणे भीमसेणे महाभीमसेणे य सत्तमे. दढरहे दसरहे सयरहे.

जंबुद्दीये णं दीवे सारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए चडवीसं तित्थगरा होस्था. तं जहाः---

उसम-अजिय-संभव-अभिणंदण-सुमइ-प्रसम्पह-सुपास-चंद्ष्पभ-सुविहि-पुष्पदंत-सीयल-सिजंस-वासुपुज-विमल-अगंत-ध्रम्म-संति-कुंधु-अर-मिल-मुणिसुव्वय-णमि-णेमि-पास-वङ्गाणा य.

तीर्थंकरोने मळेली भिक्षाओं अने वसुधाराः

" संवच्छरेण भिक्खा [लदा उसमेण लोंबणाहेण, सेसेहि बीयदिवसे लदाओ पहमभिक्खाओ × सब्दोसें पि जिणाणं जहियं लद्धांउ पहमभिक्खांड, तद्यं वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ बुद्धाओ."

तीर्थंकरोनी साथे दीक्षा छेनासः

" एको भगवं वंरो [पासो मही य िहं तिहि सएहिं, भगवं पि वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं निक्खतो. उग्गाणं भोगाणं राइण्णाणं [च खत्तियाणं च, चडहि सहस्सेहिं उसभो सेया उ सहस्सपरिवारा. "

तीर्थंकरोनां चैल्य-बृक्षोः

"एएसिं चउव्बीसाए तिस्थगराणं चउवीसं चेइयहक्खा होस्थाः तं जहाः नग्गोह-पत्तिवणो साल-पियए पियंगु-छत्तोहे, सिरिसे य नागहक्खे माली य पिलक्खुहक्खे यः हिंदुग-पाडल-जंबू-आसरथे खळु तहेव दहिवणो, नंदीहक्खे तिउए अंबयहक्खे असोने यः चंपय बउले य तहा वेडसहक्खे य आप्हेरको, साले य बहुमाणस्य चेइयहक्खा जिणक्षाणं.

तीर्थंकरना प्रथम शिष्योः

एएसि चउन्वीसाए तित्थगराणं चउन्वीसं पढमसीसा होस्था. तं जहाः—

पढमेऽतथ उसमसेणे बीइए पुण होइ सीहसेणे य, चारू य वज्ञणामे चमरे तह सुन्वय विद्रूमे. दिण्णे य वराहे पुण आणंदे गोधुमे सुहम्मे य, गंदर जसे आरिट्टे चकाह सयंसु कृंगे य. इदे कुमे य सुमे वरदते दिण्ण इदमूई य, उदितोदितकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहि उववेया. सिथणवस्त्याण पढमा सिस्सा जिणवराणं. जंबूद्वीपमां भारत वर्षमां वीती गएली उत्सापंणीमां सात कुलकरो थया हता. तेनां नामः

सित्रदाम, सुदाम, सुपार्थ, खयंप्रभ, विगलघोष, सुघोष अने सातमो पहायोषः

जंबूदीपमां भारतवर्षेगां वीती गएली अवसर्पिणीमां दस कुलकरो थया हता. तेनां नामः

खयंजल, शतायु, अजितसेन, अनंतसेन, कार्यसेन, भीमसेन अने सातमो महाभीगसेन, दढरथ, दशरथ अने शतरथ.

जंबूद्रीपमां भारत वर्षमां आ अवसर्पिणीयां चोवीश तीर्थंकरो थया इता. तेनां नामः—

ऋषभ, अजित, संभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुनार्थ, चह्रप्रभ, सुविधि-पुष्पदंत, शीतल, श्रयांस, बासुपूज्य, विमल, अनंत, धर्म, शांति, कुंधु, अर, गहि, मुनिसुवत, निम, नेमि, पार्थ अने वर्धमान.

' लोकनाथ एवा श्री ऋषमदेवजीने एक वस्से भिक्षा मळी हती अने बाकीना बधा तीर्थंकरोने बीजे दिवसे (दीक्षाने वळते दिवसे-) मिक्षा मळी हती. बधा य जिनेश्वरोने ज्यां प्रथम भिक्षा मळी छे लां वधे शरीर-प्रमाण वसुधाराओं वस्सी हती. ''

भगवान बीरे एकछाए दीक्षा लीधी हती अने पार्श्वनाथ तथा महिनाथे त्रणसें पुरुषो साथे दीक्षा लीधी हती, वासुप्डय भगवाने छसें पुरुषो साथे, श्रीऋषभदेवस्वामिए चार हजार पुरुषो साथे अने बाकीना दरेक तीयकरे हजार हजार पुरुषो साथे दीक्षा लीधी हती—तीर्थंकरोनी साथे दीक्षा छेनारा उन्नकुलना, भोगकुलना, राजन्यकुलना अने क्षत्रियकुलना पुरुषो हता.

जे दृक्षी पासे बेसीने तीर्थंकरोने केवळबोघ थयो हतो ते दृक्षोने चेख-दृक्षो कहेदामां आवे छे अने एवां चेखदृशी तीर्थंकरना अनुक्रम प्रमाणे चोदीक होय छे तेनां नामः

वड, सादड, शाल, शियक, पियंगु, छन्। घ, शिरीष, नाग्यक्ष, माली, हक्षतुं झाड-पिएलो, तिंदुग, पाटल, जांबुडो, अश्वत्य, द्धिपणे, नेदीयक्ष, तिलक, आमयुक्ष अने अशोक, चंपक, बकुल, चेत्सवृक्ष, धातकीवृक्ष अने छेहा तीर्थंकर वर्धगानने शालवृक्षनी छायामां बेक्षीने केवलवेध प्रकट्यो हतो.

ए चेवीश तीर्थंकरोना प्रथम प्रथम थएल शिष्योनां चोवीश नाम आ प्रमाणे छे:---

पहेला ऋषभसेन, बीजा सिंहसेन, पछी चार, वजनाभ, चमर, धुनत, विदर्भ, दत्त, दराह, आनंद, गोस्तुम, सुधर्भ, मंदर, यश, अरिष्ट, चकाम, खयंभू, कुंभ, इंद्र, कुंभ, शुभ, वरदत्त, दत्त अने इंद्रभूति. ए चोनेशे उच्चकुळ-वंशमा, विशुद्धवंशना अने गुणोथी युक्त हता अने तीर्थप्रवर्तक जिनवरीना प्रथम शिष्यो हता.

बार चक्रवर्तिओः

'' जंबुद्दीवे बारस चक्कवटी होत्था. तं जहा— भरहो सगरो मधव [सणकुमारो य रायसदूलो, संती कुंथू य अरो य हवद सुभूओ य कोरव्वो. नवमो य महापउमो हरिसेणो चेव रायसदूलो, जयनामो य नरवई बारसमो बंभदत्तो य.

भविष्यमां थनारा तीर्धकरोः

" जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सिष्पिणीए चउन्बीसं तिस्यगरा भविस्संति. तं जहाः

> महापउमे सूर्दिवे सुपासे य सयं गमे, सन्दाणुभूदे अरहा देवरसुए य होक्खइ. उदए पेटालपुते य पोट्टिले सतिकत्ति य, सुणिसुन्वए य अरहा सन्दमाविक जिणे. अममे निक्साए य, निष्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्ते समाही य आगमिरसेण होक्खइ. संवरे अणियटी य विजए विमलेति य, देवोववाए अरहा अणंतविजए इय. एए सत्ता चउन्वीसं भरहे वासिम केवली, आगमिरसेण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा.

थनारा तीर्थकरोनां पूर्वभःनां नामोः

"एएसि णं चउन्हीसाए तित्थकराणं पुन्तभविया चउन्वीसं नामधेजा भविस्तंति, तं जहाः

सेणिय सुनास उदए पोहिल अणगार तहा दढाऊ य, कित्य संखे य तहा नंद छुनंदे य सतए य. बोद्धव्या देवई य सच्च तह वासुदेव बलदेवे, रोहिणि सुलसा चेव तत्तो खलु रेवई चेव. तत्ते हवइ सयाली बोद्धव्ये खलु तहा भयाली य, दीवायणे य कण्हे तत्तो खलु नारए चेव. अंबड दाहमडे य साई बुदे य होइ बोद्धव्ये, भावी-तित्थगराणं णामाइं पुव्यभवियाइं."

थनारा बार चकवर्तिओः

" जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सिष्णिए बारस चक्क-बहुणो भविरसंति. तं जहाः

> भरहे य दीहदंते गृहदंते य सुद्धदंते य, सिरिउते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे. पउमे य महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चैव, वरिट्ठे बारसमे बुते आगमिस्सा भरहाहिवा. "

ऐरवत क्षेत्रमां थएठा तीर्थंकरोः

" अंबुद्दीवे णं एरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउन्वीसं तिस्थयरा द्वीरथा. तं जहाः

> चंदाणणं सुनंदं अग्गीसणं च नंदिसेणं च, इसिदिण्णं चन्रहारिं पंदिमो सोमचंदं च. बंदामि जुन्तिसणं अजियसेणं तहेन सिनसेणं, बुदं च देनसम्मं सथयं निनिखत्तसत्यं च. असंजलं जिणनसहं वंदे य अणंतयं अमियणाणं, उनसंतं च धुयरेयं वंदे खल्ल गुत्तिसणं च. अतिपासं च सुपासं देवेसरवंदियं च महदेवं, निक्नाणमयं च वरं सीणदुहं सामकोहं च. जियरामगिरोणं यंदे सीणरायमगिउतं च, बोक्कसियपिज्ञदोसं नारिसेणं गयं सिद्धि. ''

जंबुद्वीपमां बार चक्रवर्तिओ थदा हता. तेनां नागः

भरत, सगर, मधवा, सनरक्षमार राजशार्द्छ, शांति, कुंधु, अर, कैारव्यं सुभूव, नवमो महावद्म, हरियेण राजशार्द्छ, जयनरपति अने बारमो ब्रह्मदत्त चक्रवर्तीः

जंबूद्वीपमां भारतवर्षमां आवती उत्सर्पिणीमां चोवीश तीर्थंकरो थनारा । छे. तेनां नामः

महापद्म, श्रृ/देव, सुपार्श्व, खयंत्रम, अईन् सर्वानुभूते, देवश्वत, उदय, पेढालपुत्र, पोट्डिंड, रातकीर्ति, सुनिस्ता अईन्, सर्वमाववित्-जिन, असम, निष्कषाय, निष्पुलाक, निर्मम, दित्रगुप्त, समापि, संवर, अनिवृत्ति, विजय, विमल, देवोपपात अने अनंतविजय.

[अभिधानचितामणिकोशमां पण आ नामो केटलाक फेरफार साबै नोंधाएलां छे]

ए बधा-चोबीरी-भारत वर्षमां धर्मतीर्थना देशक-केवळी थनारा छे.

" ए धनारा चोवीश तार्थंकरोनां पूर्वभवनां चोवीश नाम आं प्रमाणे है:

े श्रेणिक, सुविश्वे, उदय, विद्वि अनगार, इहायु, कार्तिक, शंख, नंद, सुनंद, शतक, देविक, सत्यिकि, वासुदेव, बळदेव, रोहिणी, सुलसा, रेवती, शताळि, भयालि, द्वैपायन, बारद, अंबड, दाहमड अने सुद्ध एवा खाति."

" जंबूदीपमां भारतवर्षमां आवती उत्सार्पणीमां बार चक्रवर्तिओ थनारा छे. तेनां नामः

भरत, दीर्घदन्त, गृहदन्त, शुद्धदन्त. श्रीयुक्त, श्रीभूति, श्रीसोम, पद्म, महापद्म, विमलवाहन, विपुलवाहन अने वारमा भारताधिप वरिष्ठ."

" अंबूद्वीपमां ऐरवत वर्षमां आ अवसर्विणीमां चोबीश तीर्थंकरो इता. तेनां नामः

चंद्रानन, सुनंद्र, अग्निसेन, नंदिसेन, ऋषिदत्त, व्यवहारी, सोमचंद्र, युक्तिसेन, अजितसेन, शिवसेन, युद्ध एवा देवसमा, निक्षित्रश्च एवा सतत, असंज्यल-जिनवृत्रम, अमितइ नी अनंतक, धूनरज एवा उपशांत, मुप्तिसेन, अतिपार्थ, सुपार्थ, देवेश्वरवंदित—नहदेव, निर्वाण पामेला—वर, श्लीणदुःख-१यामकोष्ट, जितराग-अग्निसेन, श्लीणराग-अग्निसस, बोतराग-द्वेष अने सिद्धिने पामेला एवा वारिषेण-ए वधःने अमे वांदीए छीए. "

क्षा सिवाय समवाय-सूत्रमां आ स्थळे बीजी घणी भूत-भविष्यने रुगती वाणीओ नोंघेली छे-पण अमे तो आवश्यक एटली ज अहीं जणावी छे:—अनु व वेडारूप: समुद्रेऽखिळजळचरिते क्षार्भा^{रे} भवेऽस्मिन् द्वायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाहैतजीवी तपस्वी । अस्मः कं बीरवीरोऽनुगतनएवरो वाहको दान्ति-शान्योः – द्वात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाम्मुख्यः ॥

शतक ५ उद्देशक ६.

जीवोनी अल्पायुष्यतानो हेतु.-हिसा.- मृषावाद.-अमण-माह्मणने अनुचित दान.-जीवोनी दीर्घ युष्यतानो हेतु.-अहिसा.-सल.-उचित पदार्थनुं दान,-अशुभ-दीर्घायुष्यतानो हेतु.-शुभदीर्घायुष्यतानो हेतु.-करियाणुं अने तेने लगती वेचनार-लेनारने लगती क्रिया.-चार विकल्प.-अक्षिकायची महाक्रिया विगेरे.-पुरुष अने धनुष्यने लगती क्रियाओ.-अन्यती धेंथोनुं मत.-तेनी असल्यता.-जीवाभिगम.-आधावभीदि आहार लेनारने धती हानि.
-कीतकृत.-स्थापित. कान्तारभक्त-दुर्भिक्षभक्त-वार्दलिकाभक्त-ग्रानभक्त-श्रयातर्पिड.-राजपिड-आराधना अने विराधना.-आचार्य-उपाध्यायनी गति.-खोटा बोलानां दमों-हे मगवन् ते ए प्रमाणे.--

- १. प्रo नेह णं मंते ! जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ?
- १. उ०—गोयमा ! तिहिं ठाणेहिं, तं जहाः—पाणे अइवा-एत्ता, मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा, माहणं वा अफासुएणं, अणेसाणिक्वेणं असण-गाण-सग्इम साइमेगं पडिलाभेत्ताः, एवं स्कृ जीवा अप्याउचताए कम्मं पकरेति.
 - २. प्र०-कह णं भंते ! जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ?
- २..उ०—गोयमा । ति।हें ठाणेहिं, तं जहाः-नो पाणे. अइवाइत्ता, नो मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा, माहणं चा पासु-एसणिज्ञेणं असण-पाण-साइम-साइमेणं पडिलाभेत्ता; एवं खलु जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति.

- १. प्र०—हे भगवन् ! जीवो, थोडा जीववानुं कारणभूत कर्म केवी रीते बांधे छे ?
- १. उ० हे गौतम ! त्रण स्थानोवडे जीवो थोडा जीववातं कारणभूत कर्म बांधे छे, ते जेमके, प्राणोने मारीने, खोटुं बोटीने अने तथाका श्रमण वा ब्राह्मणने अप्राप्तुक, अनेपणीय खान, पान, खादिम तथा स्वादिम पदार्थों वडे प्रति अभीने पूर्वोक्त कर्म बांधे छे. अर्थात् ए त्रण हेतुथी जीवो थोडा जीववानं कारणभूत कर्म बांधे छे.
- २. प्र०—हे भगवन्! जीवो छांबाकाळ सुधी जीववानुं कारणभूत कर्म केवी रीते बांधे छे ?
- २. उ०—हे गौतम! त्रण स्थानो वडे जीवो छांबा काळ सुथी जीववानुं कारणभूत कर्म बांधे छे, ते जेमके, प्राणीन नहि मारीने, खोटुं नहि बोछीने अने तथारूप श्रमण वा बाह्मणम प्रासुक, एपणीय खान, पान, खादिग तथा खादिम पदार्थों धंडे प्रतिलाभीने; ए प्रमाणे त्रण हेतुथी जीवो छांबा काळ सुधी जीववानुं कारणभूत कर्म बांधे छे.

१. मूलच्छायाः—कथं भगवन् ! जीवाः अल्पाऽऽयुष्कतायै कमें प्रकुर्वन्ति ? गैातम ! त्रिभिस्खानैः, तद्यथाः-प्राणान् अतिपास, स्पा उत्तवा, तथारूपं श्रमणं वा, बाह्यणं वा अप्रामुकेन, अनेपणीयेन अश्चन-पान-खादिम-खादिमेन प्रतिलाभ्यं एवं खलु जीवा अल्पाऽऽयुष्कताये वर्म प्रकुर्वन्तिः कथं भगवन् ! जीवा दीर्घाऽऽयुष्कताये कमें प्रकुर्वन्तिः श्वाणं वा, नाह्यणं वा प्रामुके-परीयेन अवान-पान-खादिम-खादियेन प्रतिलाभ्य, एवं खलु जीवा दीर्घाऽऽयुष्कताये कमें प्रकुर्वन्तिः—अनुः वाह्यणं वा प्रामुके-परीयेन अवान-पान-खादिम-खादियेन प्रतिलाभ्य, एवं खलु जीवा दीर्घाऽऽयुष्कताये कमें प्रकुर्वन्तिः—अनुः

- ं ३. प्र०—कैंह णं मंते ! जीवा असुमदीहाउयत्ताए कम्मं पकरिति ?
- ३. उ०—गोयमा! पाणे अइवाएता, मुतं वइत्ता, तहारूवं समणं वा, माहणं ना हीलित्ता, निंदित्ता, खिसित्ता, गरहिता, अवमित्रता अत्रयरेणं अमणुत्रेणं, अभीतिकारएणं असण-पाण-खाइम-साइमेग पडिलाभेत्ता; एवं खलु जीवा असुभदीहाउयत्ताः कम्मं पकरेति.
- ४. प्रo कह णं भंते ! जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरित ?
- ४. उ० गोयमा ! नो पाणे अइवाइत्ता, नो मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा, माहणं वा धंदित्ता, नमंसित्ता, जाव-पज्जुवा-सित्ता; अत्रगरेगं मणुवेगं, पीइकारएणं असण पाण-खाइम-साइ-भेणं पिंडलाभेत्ता-एवं खलु जीवा सुभदीहाउयत्ताए पकरेति.

- ३. प्र०—हे भगवन् ! जीवो अज्ञुभरीते छांबाकाळ सुधी जीववानुं कारणभूत कर्म केवी रीते बांधे छे !
- ३. उ०—हे गौतम! जीबोने मारीने, खोटुं बोळीने अने तथारूप श्रमणनी वा माह्मणनी हीळना करीने, ानेंद्रा करीने, छोक समक्ष फजेती करीने, तेनी सामे गहीं करीने अने तेनुं अपमान करीने तथा एवा कोइ एक अप्रीतिना कारणरूप अमनोश —खराब अशनादियडे प्रतिलाभीने जीबो नक्की ए प्रमाणे यावत्—करे छे.
- ४. प्र०—हे भगवन् ! जीवो शुभप्रकारे लांबा काळ सुधी जीववानुं कारणभूत कर्म केवी रीते बांधे छे ?
- 8. उ०—हे गौतम! प्राणोने नहि मारीने, खोटुं नहि बोलीने अने तथारूप श्रमणने वा ब्राह्मणने वांदीने यात्रत्—तेने पर्युपासीने तथा एवा कोइ एक कारणथी—मनोज्ञ, प्रीतिकारक अशन, पान, खादिम अने खादिम ए चार जातना आहार वडे प्रतिलामीने; ए प्रमाणे जीवो यावत्—लांबुं साहं दीर्घायुष्य बांधे छे.
- १. अनन्तरोदेशके जीवानां कर्मवेदना उक्ता, पष्टे तु कर्मण एव वन्धनिवन्धनिवशेषमाह, तस्य चादिस्त्रम् इदम्-'कह् णं ' इत्यादि. 'अप्पाज्यनाए ' ति अल्पम् आयुर्धस्य असी अल्पाऽऽयुक्तः, तस्य भायस्तना, तस्ये अल्पाऽऽयुक्ततायै—अल्प-जीवान् अतिवत्यनिवन्धनिमस्पर्थः, अल्पाऽऽयुक्ततया वा कर्म आयुक्तरुक्षं प्रकुर्गन्ति—वध्वन्ति ? 'पा गे अङ्गएत ' ति प्राणान् जीवान् अतिपात्य-विनाश्य. 'मुसं वङ्ग ' ति मृपावादम् उत्त्वा, 'तहास्त्वं ' ति तथाविधस्वमावं भिक्तदानीचितपात्रम् इत्यर्थः, 'समणं य ' ति श्राम्यति तपस्यति इति श्रमणोऽतस्तम्, 'माहणं व ' ति 'मा हन ' इत्येवं योऽन्यं प्रति विक्ति, स्वयं हनन्निवतः सन् असी मा-हनः; ब्रह्म वा ब्रह्मचर्यं कुशलाऽतुष्ठानं वाऽस्याऽस्ति इति ब्राह्मणः—अतस्तम्, वाशब्दौ समुचये, 'अक्तमुएणं ' ति न प्रमता असवः—असुगतो यस्मात् तद् अप्रासुक्तं—सजीवम् इत्यूर्यः. 'अगेसणिकेणं ' ति एष्यते इत्येवणीयं कल्प्यं तन्निवेधाद् अनेषणीयम्—तेन अश्वादिना प्रसिद्धेन; 'पाडिरामेत्त ' ति प्रतिर्द्धार्थः उत्यादि एतत् त्रयं जवन्यायुष्पत्तं भवति. अथवा इह आपेक्षिकी अल्पाऽऽयुष्कता प्राह्मा. यतः किञ्च जिनाऽऽमणाऽभिसंस्कृतमतयो मुनयः प्रथमवयतं भोगिनं कंचन मृतं दृष्ट्वा वक्तारो भवन्ति-न्त्नमनेन भवान्तरे किश्चिद् अञ्चमं प्राणिचातादि चाऽऽसेवितम्, अकल्पं वा मुन्भियो दत्तं येनाऽयं भोग्यपि अल्पायुः संवृत्त इति. अन्ये खाद्धः—'' यो जीवो जिन—साधुगुणपञ्चपातितया तत्पुजार्थं पृथिव्यावार्यमेण स्वमःण्डाऽस्तर्यादिक्तंपादिना, आधाकर्मादिकरणेन च प्राणातिपातादिषु वर्तते, तस्य वथादिवर्ति-निरवयदाननिमिताऽऽयुष्काऽभेक्षा इयम् अल्पाऽऽयुष्कताऽवरतेया.
- 9. आगळना उद्देशकमां जीबोनी कर्मवेदना कही छे. ह्ये आ छट्ठा उद्देशमां तो कर्मना ज बंधना कारण विशेषो कहे छे, अने तेनुं आ['कह णं ' इत्यादि] आदि सूत्र छे. ['अप्पाउयत्ताए 'ति] जेनुं थोडुं आयुष्य छे ते अल्पायुष्क अने तेपणुं ते अल्पायुष्कता तेने माटे अर्थात् अल्पजीवननुं कारणरूप, अथना थोडा समय सुधी आयुष्यपणे रहेनारं आयुष्यरूप कर्म नांधे छे. ['पाणे अहनाएत'ति] जीबोनो विनाश करीने.
 ['ससं वहत्त 'ति] खोटुं बोलीने. ['तहारूवं 'ति] मित्त करवाने अने दान देवाने उचित-पात्र-रूप-['समणं वं'ति]श्रमण-तप करनारने, ['माँहणं व 'ति] पोते हणवाथी निष्टृत्त थयो छतो जे बीजा प्रत्ये 'न हण 'ए प्रभाणे बोले ते 'मा-हन ' अथवा, जे ब्रह्म-ब्रह्मचर्यने अथवा कुन्नल अनुष्टानने धारण करे ते ब्राह्मण-तेने. ['अष्मासुष्णं 'ति] अप्रासुक (अ=निह, प्र-प्रगत-गएला, असु=पाण) जीवसहित
 तथा ['अणेसणिजेणं 'ति] एपणीय एटले द्रस्प, जे कर्प्य न होय-अगरस्य होय ते अनेपणीय एवं जे प्रसिद्ध अशनादि-ते बंडे
 ['पडिलाभेत्त 'ति] लाभवाळो करीने अर्थात् अभण के ब्राह्मणने एवं सदोष-सजीव-भीजनादि आपीने. हवे उपसंहार करता ['एवं ' इत्यादि]

प्राणातिपात. सृपाव.द. श्रमण-त्रोणस. अत्र.सुक. अनेपणीय.

१. मूलच्छायाः—कथं भगवन् ! जीवा अग्रुमदीर्घाऽऽयुष्कताये वर्गं प्रकुर्वन्ति ? गैतिम ! प्राणान् अतिपाल, मृषा उत्तवा, तथाह्तं श्रमणं वा, अस्ति वा, हीलिखा, निन्देला, खिसिखा, गहिंखा, अवमन्यः अन्यतरेण अमनोक्षेन, अप्रीतिकारकेण अश्वन-पान-खादिम-खादिमेन प्रतिलाभ्य एवं खिल जीवा अग्रुभदीर्घाऽऽयुष्कताये कर्म प्रकुर्वन्ति कथं भगवन् ! जीवाः ग्रुमदीर्घाऽऽयुष्कताये कर्म प्रकुर्वन्ति ? गैतिम ! नो प्राणान् अतिपाल, नो मृषा उत्तवा, तथाह्तं श्रमणं वा, ब्राह्मणं वा वन्दिला, नमस्यिला, यावत्-पर्युगास्य अन्यतरेण मनोक्षेन प्रीतिकारकेण अश्वन-पान-खादिम-खादिमेन प्रतिलाभ्य एवं खल जीवाः शुभदीर्घाऽऽयुष्कताये प्रकुर्वन्तिः—अनु०

आ बन्ने स्थळे वपराएल 'वा 'शब्दनो ' समुचय ' अर्थ छे:—श्रीअमग.

सूत्र कहे छे. ए प्रमाणे कहेल खरूपवाळी त्रण कियावडे. अहीं आ भावार्थ छेः एक प्रकारना आत्माना परिणामवंडे ए त्रणे कियानुं कळ ओहामां ओछुं आयुष्य छे, अथवा, अहीं अमुक अपेक्षावाळी अल्पायुष्कता लेवी, कारण के, जिनागुममां अभिसंस्कृत मतिवाळा मुनिओ कोइ प्रथम वयवाळा-नानी उमरना-भोगीने मरेलो-मृत-जोइने बोले छे के, चोक्कस ते मरनारे वीजा भवमां प्राणिघात वगेरे अधुभ कांइ कर्युं छे-हरो. अथवा मुनिओने अणखपती वस्तुनुं दान आप्युं छे-हरो. जेथी आ भोगी मनुष्य पण दुंका आयुष्यवाळो थयो. बीजाओ तो बीजाओ. कहे छे के, '' जे जीव, जिन अने साधुना गुमो तरफ पोताना पक्षपातियणाने लीवे तेओनी पूजा माटे पृथिवी वगेरेना आरंभ वडे, पोताना करियाणामां असत्य उत्कर्षण वडे अने ' आधाकर्म ' विगेरेना करवा वडे ' प्राणातिपात ' विगेरे कियाओमां रहे छे तेने, वधादि कियाओथी विराम पामवाने लीघे मळता अने निरवद्यदान रूप निमित्तथी-निरवद्यदान देवाथी-मळता आयुष्यनी अपेक्षाए आ अल्प आयुष्यपणं होय छे '' ए प्रमाणे जाणवं .

भथ नैवम्, निर्विशेषणत्वात् सूत्रस्य, अस्पाऽऽयुष्कत्वस्य च क्षुलुक्षभवप्रहणरूपस्याऽपि प्राणातिपातादिहेतुतो युज्यमानत्वात्, अतः कथमभिधीयते सविशेषणप्राणातिपातादिवर्ती जीवः, आपेक्षिकी च अल्पायुष्कता इति ? उच्यते, अविशेषणत्वेऽि सूत्रस्य ंप्राणातिपातादेविशेषणमवश्यं वाच्यम्, यत इतस्तृतीयसूत्रे प्राणातिपातादित एव अशुभदीर्घाऽऽयुष्कतां वक्ष्पति. नहि सामान्यहेतोः कार्यवैषम्यं युज्यते, सर्वत्रानाश्वासप्रसङ्गात्. तथाः-" समैणोवासयस्स णं भंते! तहारूवं समणं वा, माहणं वा अफासुएणं, अणेसिंगिकोणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पिंडलाभेमाणस्स ।किं कज्जइ ? गोयमा ! बहुतरिया निजरा कज्जइ, अप्पतरे से पावे क्रम्मे कज्ज '' ति-इति वक्ष्यमाण्वचनाद् अवसीयते-नैवेयं क्षुत्रक्षभवग्रहणरूपाऽल्पाऽऽयुष्कता-न हि खल्पपाप बहुनिर्जरानि-बन्धनस्य अनुष्ठानस्य क्षुलुकभवग्रहणनिमित्तता संभाव्यते, जिनपूजाद्यनुष्ठानस्य अपि तथाप्रसङ्गात्. नन्वेवं धर्मार्थं प्राणातिपात-मुषावादा-ऽप्रासुकदानं च कर्तव्यम् आपन्तम् इति, अत्रोच्यते-आपद्यतां नाम भूमिकाऽपेक्षया, को दोषः? यतः, यतिधर्माऽशक्तस्य गृहस्थस्य द्रव्यस्तवद्वारेण प्राणातिपातादिकम् उक्तमेव प्रवचने, दानाऽधिकारे तु श्रूयते द्विविधाः श्रमणोपासकाः—संविद्यमाविताः. .खुड़ध्कदृष्टान्तुभाविताश्च भवन्ति. यथोक्तम्:–'' संविक्नमावियाणं लोखयदिष्टंतभावियाणं च, मोत्तूण खेत्तकाले भावं च काहिति सुद्धत्यं. '' तत्र छुन्यकदष्टान्तमाविता अगमार्थाऽनिमञ्जलाद् यथाकथित्रद् ददति. संविग्नमावितास्तु आगमञ्जलात् साधुसंयम-बाधापरिहारित्वात् , तदुपष्टम्भकत्वाच औचित्येन. आगमश्चैवम्:- ' संथरणिम असुद्धं दोण्ह वि गेण्हंत-देन्तयाणऽहियं, आउर-दिइंतेणं तं चेव् हियं असंथरणे. '' तथा '' नायाँगयाणं कप्पणिज्ञाणं अच-पाणाइणं दन्वाणं '' इत्यादि. अथवा इहाऽप्रासु-कदानम् अल्पाऽऽयुष्कतायां सुख्यं कारणम् , इतरे तु सहकारिकारणे इति व्याख्येयम् प्राणातिपातन-मृषावादनयोदीनविशेषणत्वात् , तथाहि:-प्राणान् अतिपासाऽऽधाकमीदिकरणतो मृषा उक्ता यथा- भोः साधो ! सार्थिमिदं सिद्धं मकादि कल्पनीयं वः, अती नाउनेपणीयम् इति शङ्का कार्या दित. ततः प्रतिलम्य तथा कर्म कुर्वन्ति इति प्रक्रम इति. गर्मारार्थे च इदं सूत्रमतोऽन्ययादि। यथागमं भावनीयम् इति।

जेम आ अन्योतुं कथन छे ए प्रमाणे न होतुं जोइए, कारण के, सूत्र निर्तिशेषण छे अर्थात् सूत्रमां एवुं कोइ विशेषण नथी जेथी ' अमुक प्रकारना प्राणातिपातथी बीजानी अपेक्षाए अल्पायुष्कपणुं होय ' एवो अर्थ नीकळी शके तथा जो अहीं गमे ते अल्पायुष्यपणुं ज लेवुं होय तो प्राणातिपातादि हेतुथी मळतुं अलकभवप्रहणरूप अल्पायुष्यपणुं पण बंध बेसी शके छे. माटे ए प्रमागे केम कही शकाय के, ' अमुक प्रकारना ·विशेषणवाळा प्राणातिपातादिमां रहेनारो जीव ' अने ' अपेक्षावाळुं अल्पायुष्कपणुं ' ? (समा०) कहीए छीएः जो के सूत्र विशेषण विनानुं छे तो पण तेने शाणातिपात वगेरेनुं विशेषण चोक्कस रीते कहेनुं जोइए, कारण के, आ सूत्रधी त्रीजा सूत्रमां ' प्राणातिपातादियी ज अशुभ दीर्घ आयुष्यपणुं थाय छे ' एम कहेरी, बळी, सामान्य हेत्थी कार्यमां विषमतानी योग थतो नथी. जो सामान्य हेत्थी पण कार्यमां विषमतानो योग थाय तो बचे अनाश्वास थवानो प्रसंग आवशे. वळी, '' हे भगवन्! श्रमणोपासक, तथारूप श्रमणने या बाह्यणने अप्राप्तुक अने अकल्पनीय अशनादिवडे प्रतिलाभे तो तेने (अमणोपासकने) शुं थाय? हे गौतम! ते अमणोपासकने घणी निर्जरा थाय अने थोडुं पाप कर्म थाय " ए प्रमाणना आगळ उपर आवनार वचनथी ज.णी शकाय छे के, अहीं कहेलुं आ अल्प आयुष्यपणुं क्षुलकभवग्रहणरूप नथी. वळी, जे अनुष्ठान धोडा पार्यनुं अने वह निर्जरानुं कारण होय ते अ़्लक भवना प्रहणमां निमित्त थाय ए संभवी शकतुं नथी, कदाच जो तेवा अनुष्ठानने अ़्लक भवना ब्रहणमां निमित्तरूप मानीए तो ' जिनपूजा ' विगरे अनुष्ठानोने पण क्षुक्षक भवना ब्रहणमां निमित्तभूत थवानो व्रसंग आवरो-माटे अहीं कहेल अल्पायुष्कपणुं क्षुह्नकभवग्रहणरूप न लेतां आपेक्षिक-अपेक्षावाळुं-अल्पायुष्काणुं लेवुं-ए तात्पर्य छे. वळी वहे छे के, ए प्रकारना-पूर्वोक्त तात्पर्यथी तो एवं नीकळे छे के, धर्मने माटे प्राणातिपात करवो, मुषावाद बोलवो अने अप्रामुक दान करवं-देवं. परंतु ते त्रणे कियाओ तो सारी नथी. माटे ए तात्पर्य युक्तियुक्त केम होइ शके हैं अहीं कहीए छीए के, भूमिकानी-हदनी-योग्यतानी-अपेक्षाए धर्मने माटे प्राणातिपातादि विगेरे करवुं पड़े तो पण भले, तेमां शुं दोप छे ?, कारण के, यतिधर्म पाळवामां अशक्त गृहस्थेन द्रव्यस्तव करवानुं उपदेशेलुं होवाथी ते द्वारा

बीजाओप कहे बराबर नथी.

१. प्र० छाः-श्रमणोपासकस्य भगवन् ! तथारूपं श्रमणं वा, ब्राह्मणं वा अप्रामुक्तेन, अनेषणीयेन अरान-पान-खादिम-छादिमेन प्रतिलाभयतः किं क्रियते ? गीतम ! बहुतरिका निर्जरा कियते, अल्पतरं तस्य पापं कमं क्रियते-इति. २. संविध-भावितानां छब्धकदृष्टान्तभावितानां च, मुक्त्या क्षेत्र-काला भावं च कथयन्ति शुद्धार्थम्. ३. संखरणे अशुद्धं द्वशोरपि एषद्-ददतोरहितम् , आतुरदृष्टान्तेन तचैत्र हितम्-असंखरणे. ४. न्यायागतानां करुपनीयानाम्-अझ-पानादीनां द्रव्याणाम्:--भनु०

ममणोपासको. गगमने जाणता ममणोपासको. माणातिपातादि करवार्त प्रवचनमां कहुं ज छे. दानना अधिकारमां तो संभळाय छे के, अमणोपासको वे प्रकारना छे, एक संविग्नभावित अने बीजा छुञ्चकदृष्टांत भावित, जेम कहुं छे के, "संविग्नभावितोना अने छुञ्चकदृष्टांतभावितोना (आहारने) क्षेत्र, काळ अने भावने मूकीने (सुनिओ) शुद्धार्थ कहे छे "तेमां आगमना अर्थने न जाणता होवाथी छुञ्चकदृष्टांत भावित अमणोपासको जेम तेम दान दे छे अने आगमने जाणता होवाथी संविग्नभावित अमणोपासको, मुनिओनी संयम-बाचाना परिहारक होवाथी अने तेना उपष्टंभक (टेको देनारा) होवाथी मुनिओने उचिततापूर्वक दान दे छे, आगममां आ प्रमाणे छच्युं छे के "संस्तरमाण होय निर्वाहन थई शकतुं होय न्यारे छेनार अने देनार ए बेनें अशुद्ध छे तथा अहित छे अने आतुरना उदाहरणथी ते ज अशुद्ध, असंस्तरमाण होय त्यारे हित छे " वळी "न्यायथी आवेळां अने कल्पनीय स्वपतां—अन्नपानादि दृव्योनुं दान हितरूप छे " अथवा आ सूत्रनी एवी व्यास्था करवी के, अल्पआयुष्यपणानुं मुख्य कारण तो अप्रामुक दान छे अने बीजां—प्राणातिपात, मुघावाद—ए बे—सहकारी कारण-साधारण-कारण छे, कारण के, प्राणातिपात अने मुधावाद ए बन्ने दानिकयामां विशेषणरूप छे. दानिकृयामां ते—प्राणातिपात अने मुधावाद विशेषणपणे केवी रीते छे ते दर्शांचे छेः प्राणोने मारीने 'आधाकर्म' वंगरे करवाथी खोडुं बोल्यो, जेमके, 'हे साधु! आ भात वंगरे, में पोताने मांटे सिद्ध-तैयार—कर्या छे माटे तमारे ते खपे तेवा छे तथी तेमां अणखपतादिनी शंका न करवी ' एम कहीने पछी ते दान देनार आवके साधुने प्रतिलाभयो, आ प्रमाणे करवाथी—तथाप्रकारना अल्पायुष्कना कारण रूप कर्मने करे छे—बांचे छे, ए प्रकम—चाछु वात—छे. आ सूत्र गंभीर अर्थवाछुं छे माटे आगमनी रीते बीजे प्रकारे पण तेनी भावना करवी.

नंत्रीय सर्वेशा हं

भथ दीर्घाऽऽयुष्कताकारणानि आहः- कह णं र इत्यादि. भवति हि जीवदवादिमतो दीर्घमायुः, यतोऽत्राऽपि तथैव भवन्ति दीर्घाऽऽयुषं दृष्वा वक्तारः-जीवदयादि पूर्वं कृतमनेन तेनाऽयं दीर्घाऽऽयुः संकृतः. तथा सिद्धमेव वधादिविरतेः दीर्घमायुः, तस्य देवगतिहेतुत्वाते. आह चः—-'' अणुष्वय-महव्वएहि य बालतवोऽकामनिज्जराए य, देवाउयं निबंधइ सम्मदिष्टी य जो जीवो. '' देवगतौ च विवक्षया दीर्घमेवाऽऽयुः. दानं चाऽऽश्रित्य इहैव वक्ष्यतिः—'' समैणोवासयस्स णं मंते! तहारूषं समणं वा, माहणं **वा फा**सुएणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पिडलाभेमाणस्स ।कें कजाइ ! गोयमा ! एगंतसो निजारा कजाइ '' त्ति. यच निर्जरा-कारणं तद् विशिष्टदीर्घाऽऽयुष्कारणतया न विरुद्धं महावतवत्-इति व्याख्यानान्तरमपि पूर्ववद् एवेति. अथाऽऽयुष एव दीर्घस्य सूत्रहरोन शुभाऽशुभत्वकारणानि आहः—' कह णं ' इत्यादि प्राग्वत्. नवरम्:-श्रमणादिकं हीलनादिकरणतः प्रतिलभ्य इत्यक्षरघटना. तत्र हीलनं जात्याद्युद्घाटनतः इत्सा, निन्दनं मनसा, खिंसनं जनसमक्षम्, गईणं तत्समक्षम्, अपमाननम् अनभ्युत्थानादिकरणम्, अन्यतरेण-बहुनाम् एकतमेनाऽमनोज्ञेन खरूपतोऽशोभनेन कदनादिना-अत एवाऽप्रीतिकारकेण. भक्तिमतस्तु अमनोञ्चमपि मनोज्ञमेव, मनोज्ञफलवात्. इह च स्त्रेऽशनादि प्रासुका-ऽ-प्रासुकादिना न विशेषितम् , हीलनादिकर्तुः प्रासुकादिविशेषणस्य दानस्य फलविशेषं प्रत्यकारणत्वेन मत्सरजनितहीलनादिविशेषणानाम् एव च प्रधानतया तत्कारणत्वेन विबक्षणात्. वाचनान्तरे तु अफासुएणं अणेसणिज्ञेणं 'ति दश्यते. तत्र च प्रामुकदानमपि हीलनादिविशेषितम् अञ्चभदीचीऽऽयुष्कारणम्, अप्रामुकदानं तु विशेषतः इत्युपदर्शयता ' अफासुएण ' इत्याद्युक्तम् इति. प्राणातिपात--मृषावादनयोदीनविशेषणपक्षव्याख्यानमपि घटते एव. अवहादानेऽपि प्राणातिपाता देईश्यमानत्वाद् इति. भवति च प्राणातिपाता देरशुभदीर्घाऽऽयुः, तेषां नारकगतिहेतुःवात्. यदाहः —'' मिच्छौदिही महारंभ-परिगाहो, तिव्वलोभ-निस्सीलो निरयाउयं निबंधइ पावमई राइपरिणामो. " नरकगती च विवक्षया दीर्घमेवाऽऽयुः. विपर्ययसूत्रं प्रागिवः नवरमः--इहाऽपि प्रासुका--ऽप्रासुकतया दानं न विशेषितम्, पूर्वसूत्रविपर्ययत्वाद् अस्य, पूर्वसूत्रस्य च भनिशेषणतया प्रवृत्तत्वात् , न च प्रासुका--ऽप्रासुकदानयोः फलं प्रति न विशेषोऽस्ति, पूर्वसूत्रयोस्तस्य प्रतिपादितत्वात्. तस्माद् इह प्रासुकै--वर्णीयस्य कल्पप्राप्तौ, इतरस्य चेदं फलमबसेयम्. बाचनान्तरे तु 'कासुएणं ' इत्यादि दश्यते एवेति. इह च प्रथममह्पायु-स्सूत्रम्, द्वितीयं तद्विपक्षः, तृतीयमञ्जभदीवांयुस्सूत्रम्, चतुर्थं तु तद्विपक्ष इति.

शंषा शादुष्यनां कारणो. हवे लांबा आयुष्यनां कारणो कहे छे: ['कह णं ' इत्यादि.] जीवदया विगेरे घर्मथी जे युक्त होय तेनुं लांबुं आयुष्य थाय छे, कारण कें, अहीं पण दीर्घ आयुष्यवाळाने जोड बोलनारा होय छे—बोले छे के, आ पुरुष भवांतरमां जीवदयादिरूप धर्म कयों छे—हसे—जेथी ते लांबा आयुष्यवाळो थयो छे. तो ते प्रकारे निश्चित जथयुं के, प्राणातिपातादि अधर्मथी अटकवारूप किया, जीवने देवगतिनुं कारण होवाथी-तेथी—लांबुं आयुष्य मळे छे, अने कह्युं छे के, "जे सम्यग्दृष्टि जीव होय ते अणुव्रतोवडे अने महाव्रतोवडे तथा बालतप अने अकामनिर्जरावडे देवनुं आयुष्य बांधे छे. " अने विवक्षावडे देवगतिमां लांबुं जाआयुध्य होये छे. दानने आश्रीने अहीं ज कहेशे के, "हे भगवन! तथारूप अमण या ब्राह्मणने प्राप्तक अने खपतां अश्रनादि घडे प्रतिलाभता श्रमणोपासकने हुंश्याय ? हे गौतम! एकांतथी निर्जरा थायः" अने महाव्रतनी पेठे जे निर्जरानुं कारण छे ते विशिष्ट दीर्घ आयुष्यना कारणपणे विरुद्ध नथी होतुं, ए प्रमाणे बीर्जु व्यास्थान पण पूर्वनी पेठे ज समजी लुंतुं. हुवे लांबा आयुष्यनां ज श्रमाशुभपणानां कारणोने कहे छे, ['कह णं ' इत्यादि] ए बधुं पूर्वनी परेठे समजनुं, विशेष, 'श्रमणादिकने हीलनादिपूर्वक प्रतिलाभी 'ए प्रमाणे अक्षरनी घटना करवी, तेमां हीलन एटले जाति बगेरेने उघाडी पाडीने निंदा करवी, निंदन एटले मनवडे निंदा करवी,

होतनादि,

[ं] १. प्र० छाः—अणुत्रत-महात्रतैश्व बालतपोऽकामनिर्जरया च देवायुर्निब्धाति सम्यग्द्रिष्टश्च यो जीवः. २. श्रमणोपासकस्य भगवन् ! तथारूनं श्रमणं वा, ब्राह्मणं वा प्राह्मकेनं अशन-पान-सादिम-सादिमेन प्रतिलाभयतः कि कियते ? गीतम् । एकान्तशो निर्वरा कियते -इति. ३. गिथ्याद्दृष्टिमेहा-दृष्क-परिमगुरसीमसोम-निर्ह्योसः, निर्यायुष्कं निष्धादि पापमसी राह्मपरिणामः—अञ्च

खिंसन एटले लोकसमक्ष निंदा करवी, गईण एटले तेनी सामे निंदा करबी, अपमानन एटले 'अभ्युत्यान ' बगेरे न करबुं, ए प्रमाणे एमांना कोइ एक कारणथी. खरूाथी जे सारुं नहिं ते अमनोश-खरान अन्नादि-ते वहे, माटे ज अधीति कारकवहे; भक्तियाळा अमणी: पासकतुं कदन्न-खराव अन्न-पण मनोज्ञ-शुम फळदायक-होताथी मनोज्ञ-सुंदर-ज छे, अहीं आ सूत्रमां अशनादिने 'प्रासुक के अत्रासुक ' ए प्रकारे विशेषित नथी कर्द्वे, कारण के, मुनिनी ही छना बगेरे करनारना प्रामुक वगेरे विशेषणवाळा दानने फल विशेष प्रति अकारणपणे अने मत्सरथी उत्पन्न थयेलां हीलनादि विशेषणोने ज मुख्यपणे अशुम लांबा आयुष्यना कारणपणे विवक्षित कर्यो छे. बीजी वाचनामां तो [' अफासुएणं इत्यादि] 'अशन ' विगेरेना ' अने गणीय अने अपासुक ' एवां वे विशेषणी देखाय छे, तेमां जे ते विशेषणी आत्यां छे ते 'प्रासुक दान पण हीलनादिथी विशेषित होय तो अञ्चभ दीर्व आयुष्यनुं कारण छे अने तेनुं अप्रायुक्त दान तो विशेषे करी अञ्चभ दीर्घ अप्युष्यनुं निदान-कारण-छे? एम दर्शाववा शास्त्र होरे मूक्यां छे. प्राणातिपातने अने मृतावादने दानविशेषणपञ्चां व्याख्यान पण घटे ज छे, कारण के, अवज्ञा करीने दान देवामां पण प्राणातिपातादि कियाओं देखाय छे अने प्राणातिपात वेगरे नैरियक गतिमां हेतु हो ग्राधी तेनाथी अञ्चम दीर्घ आयुष्य थई शके छे, कहूं छे जे '' पारमां मतिवाळो, राद्र परिणामवाळो, महारंभ परिवहवाळो, तीव्र लोभवाळो, शीलविनानो अने मिथ्याद्द बीव नैरियकनुं आयुष्य बांधें छे " विवक्षावडे नैरियक गतिमां लांबुं ज आयुष्य होय छे. विपर्यय सूत्र पूर्वनी पठे जाणवुं, विशेष ए के, अहीं पण दानने ' प्रासुक अने अप्रासुक 'ए प्रमाणे विशेषित कर्युं नथी, कारण के, आ सूत्र पूर्व सूत्र करतां विपरीत छे तथा आ सूत्र अने पूर्व सूत्र अविशेषणपणे प्रवृत्त छे. आथी एम न समजदं के प्रामुकदानना अने अप्रामुकदानना फलमां कांइ विशेष नथी, कारण के. पूर्वना बन्ने स्वमां ते फल विशेषने प्रतिपादित क्यों छे, माटे अहीं प्राप्तक अने एषणीय दानथी देवलोकनी प्राप्ति थाय छे तो तथी विपरीत--बीजा--दानधी आ पळ -अशुभ दीघीयुष्य--नरक-रूप फळ थाय छे तेम जाणवुं, बीजी वाचनामां तो 'प्रासुक 'वगरे विशेषणो देखाय ज छे. अहीं पहेलुं अल्पायुनुं सूत्र छे बीजुं तेना विप्यनुं— बीजी वाचना. दीर्घ आयुष्यतुं-सूत्र छे, त्रीजुं अशुभ दीर्घ आयुष्यतुं सूत्र छे अने चोथुं तेना विपक्षतुं-शुभ दीर्घआयुष्यनुं-सूत्र छे.

ग्रहपति अने भांडः

५. प्र० -- गौहावइस्स णं भंते ! भंडं विकिणमाणस्स केइ भंडं अवहरेजा, तस्स णं भंते ! तं भंडं गवेसमाणस्स किं आरं-भिया किरिया कजइ, परिग्गहिया, मायावित्तया, अपचवस्वाण-किरिया, मिच्छादंसणवत्तिया ?

५. उ० - गोयमा ! आरंभिया किरिया कजाइ, परिग्ग-हिया, मायावत्तिया, अपचवस्वाणिकरिया मिच्छादंसणिकरिया सिय कजइ, सिय नो कजइ; अह से भंडे अभिसमनागए भवइ, तओं से य पच्छा सच्चाओं ताओं पयणुईभवंति.

५. प्र०--गाहापइस्स णं भंते ! भंडं विकिणमाणस्स कइए भंडे साइजेजा, भंडे य से अण्वणीए सिया, गाहावइस्स णं भंते ! ताओ भंडाओ कि आरंभिया किरीया कजड़, जाय-ाम-च्छादंसणिकरिया कजाइ, कइयस्स वा ताओ भंडाओ, किं आरं-भिया किरिया कजाइ, जाय-मिच्छादंसणिकिरिया कजाइ ?

६. उ०—गोयमा ! गाहावइस्स ताओ मंडाओ आरंभिया 'किरिया' कज्जइ, जाव-अपचक्खाण ०-मिच्छादंसणवित्तया किरिया

५. प्र० — हे भगवन् ! करियाणानो विक्रय-वेचाण-करता कोइ गृहस्थनुं कोइ माणस ते करियाणुं चोरी जाय तो हे भगवन् ! ते करियाणांनु गवेषण करनार ते गृहस्थने छुं आरंभिकी किया लागे के परिग्रहिकी किया लागे के मायाप्रस्थिकी किया लागे के अप्रत्याख्यानिकी क्रिया लागे के मिथ्यादर्शनप्रस्यिकी क्रिया लागे ?

ं ५. उ०—हे गौतम! आरंभिकी, परित्रहिकी, मायाप्रत्ययिकी अने अप्रयाख्यानिकी किया लागे अने मिध्यादर्शनप्रस्थिकी क्रिया कदाच लागे अने कदाच न लागे अने हवे ग्वेपण करतां ज्यारे ते चोराएछं करियाणुं पाछुं मळी आवे त्यार पछी ते बधी कियाओं प्रतनु धइ जाय छे.

६. प्र०---हे भगवन् ! कारियाणाने वेचता गृहस्थनुं भांड--करियाणुं, करियाणुं खरीद करनारे खरीदां-तेने माटे सत्यंकार-खात्री-बानुं आप्युं पण हजु ते करियाणुं अनुपनीत छे-छइ जवायुं नथी अर्थात् ते वेचनारने त्यां छे, तो ते वेचनार गृहपतिने ते करियाणाथी कुं आरंभिकी यावत् मिध्यादर्शनप्रस्थिकी किया टागे ?, अने ते खरीदनारने ते करियाणाथी शुं आरंभिकी यावत् – मिध्यादर्शनप्रस्ययिकी क्रिया लागे ?

६. उ० —हे गौतम! ते गृहपतिने ते भांड-करियाणा-धी आरंभिकी यावत्-अप्रसाख्यानिकी क्रिया छागे, अने मिथ्या-

१. मूलच्छायाः---गृहपतेभंगवन्! भाण्डं विक्रीणानस्य कोऽपि भाण्डम् अपहरेत्, तस्य भगवन्! तद् भाण्डं गवेषयतः किम् आरिभकी किय कियते, पारिप्रहिकी, म यात्रखया, अप्रसाख्यानिकचा, मिध्यादर्शनप्रस्था ? गातम । आरम्भिकी किया कियते, पारिप्राहिकी, मायाप्रखया, अप्रसाख्यानिकया, मिथ्यादर्शनिकया स्यात् कियते, स्याद् नो कियते. अत तद् भाण्डम् अभिसमन्यागतं भवति, ततस्तस्य च पश्चात् सवीः ताः प्रतमुकीभवन्ति. गृहपते-भगवन् ! भाण्डं विकीणानस्य कथिको भाण्डानि स्वाद्येद् , भाण्डानि च तस्य अनुपनीतानि स्युः, गृहपतेभगवन् ! तेभ्यो भाण्डेभ्यः किम् आरम्भिकी ्रकियां कियते। यावद् मिध्यादरीनकिया कियते ? क्रयिकसा वा तेम्यो भाण्डेम्यः किम् आरम्भिकी किया क्रियते, यावद् मिथ्यादरीनकिया क्रियते ? मैतिम । एइपर्तैः तेभ्यो भाष्डेभ्यः आरम्भिकी किया कियते, यावद् अप्रलाख्यान ०-मिथ्यादरीनप्रलया कियाः-अनु०

www.jainelibrary.org

सिय कजाइ, सिय नो कजाइ; कहयस्स ताओ सन्वाओ दर्शनप्रययिकी किया कदाच छागे अने कदाच न छागे अने पयणुईभवाते.

७. प्र० — गाहावइस्स णं भंते ! भंडं विकिणमाणस्स, जाव-भंडे से उवणीए सिया, कइयस्स णं भंते ! ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कजड़, जान-मिच्छादंसणवित्या किरिया कजइ; गाहावइस्त वा ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कजइ, जाव-मिच्छादंसणवित्तया किरिया कजइ ?

७. ४०—गोयमा ! कइयस्स ताओ भंडाओ हेड्डिलाओ चत्तारि किरियाओं कर्जाति, मिच्छादंसणवात्तिया किरिया भगणाए; गाहावइस्स णं ताओ सच्याओ पयणुईभवंति.

८. प्र०--गाहावइस्स णं भंते ! भंडे जाव-धणे य से अणुवणीए सिया ?

· . ८. उ०—एयं पि जहा भंडे उपणीए तहा नेयव्वं च**उ**त्थो आलावगो, धणे य से उवणीए सिया जहा-पढमो आलावगो, भंडे य से अणुवणीए सिया तहा नेयव्वो पडम-चउत्थाणं एको गमो, बितिय-तइयाणं एको गमो.

खरीदकरनारने ते बधी कियाओ प्रतनु होय छे.

७. प्र०-हे भगवन् ! भांडने वेचता गृहपतिने त्यांथी यावत् ते भांड उपनीत कर्युं-खरीद करनारे पोताने त्यां आण्युं-होय त्यारे ते खरीद करनारने ते मांड्यी क्यं आरंभिकी किया बगेरे पांच कियाओं अने गृहपतिने ते मांडधी हुं आरंभिकी वगेरे पांच कियाओ छागे ?

७. उ० -- हे गौतम! ते भांडथी ते खरीद करनारने हेठळनी-मोटा प्रमाणवाळी-चारे कियाओ छ गे अने मिथ्यादृष्टि होय तो मिध्यादर्शनप्रत्ययिकी किया छागे अने मिध्यादृष्टि न होय तो मिध्या-दर्शनप्रत्ययिकी किया न छागे ए प्रमाणे मिध्यादर्शन-कियानी मजनावडे गृहस्थने ते बधी क्रियाओ ओछा प्रमाणमां होय छे.

८. प्र०-हे भगवन ! गृहपति-घरधणि-ने भांड यावत —धन न मळ्युं होय (तो केम ?)

८. उ०--ए रीतें पण जेम उपनीत-सोंपेल भांड-संबंधे कहुं छे तेम समजबुं-चोथो आछापक समजबो. 'जो धन उपनीत होय तो ' जेम अनुपनीत भांड विषे प्रथम आछापक कहा छे तेम समजवुं-प्रथम अने चतुर्थ आलापकनो समान ग्रम समजवो अने बीजा अने त्रीजां आछापक्षनो समान गम समज्बो.

२. अनन्तरं कमेवन्धिक्रया उक्तां, अथ क्रियान्तराणां विषयनिरूपणाय आहः--' गाहावइस्स ' इत्यादि. गृहपति:- गृही. ' मिच्छादंसणिकरिया सिय कज्जइ ' इत्यादि. मिध्यादर्शनप्रत्यया किया त्यात् कदाचित् कियते भवति, त्याद् नो कियते-कदाचिद् नो भवति. यदा मिध्यादृष्टिः गृहपितस्तदाऽसौ भवति, यदा तु सम्यग्दृष्टिस्तदा न भवति इत्यर्थः. अथ क्रियासु एव विशेषम् आहः--' अह ' इत्यादि. 'अथ'इति पक्षान्तरचोतनार्थः. ' से मंडे ' ति तद्माण्डम् , ' अभिसमन्नागए ' ति गवेषयता छब्धं मवति, 'तओ ' त्ति तत:- समन्वागमनात् ' से ' ति तस्य गृहपते:-पश्चात् समन्वागमनानन्तरमेव ' सव्वाओ ' ति यासां संभवोऽस्ति ता आरम्भिक्यादिकियाः, ' प्यणुईभवंति ' ति प्रतनुकीभवन्ति हस्वीमवन्ति, अपहृतभाण्डगवेषणकाले महत्यस्ताः आसन्-प्रयत्नविशेष-परत्वाद् गृहपतेः, तल्लाभकाले तु प्रयत्नविशेषस्योपरतत्वाद् इस्वीभवन्ति इति. '*कङ्ए भंडं साङ्*जेज' त्ति क्रयिको प्राहको भाण्डं स्वादयेत् सत्यंकारदानतः स्वीकुर्यात्. 'अणुवणीए सिय 'त्ति ऋविकायाऽसमर्वितं स्वात्, 'कइयस्स णं ताओ सच्वाओ पयणुईभवंति ' ति अप्राप्तभाण्डत्वेन तद्गतक्रियाणाम् अल्पत्वाद् इति, गृहपतेस्तु महत्यः—माण्डस्य तदीयत्वात्. क्रियिकस्य भाण्डे समर्पिते महत्यस्ताः, गृहपतेस्तु प्रतनुकाः, इदं भाण्डस्याऽनुपनीतो-पर्नातभेदात् सूत्रद्भयम् उक्तम् . एवं वनस्याऽपि वाच्यम् . तत्र प्रथमम् एयम्:—'' गाहावइस्स णं भंते ! भंडं विकिणमाणस्स कइए भंडं साइब्बेंब्बा, घणे य से अणुवणीए सिया, कइयस्स णं भंते ! ताओ धणाओ कि आरंभिया किरिया कज्जइ ५, गाहावइस्स णं ताओ धगाओ कि आरंभिया किरिया कज्जइ ५ १ गोयमा ! कइयस्स तओ धणाओ होडिलाओ चत्तारि किरियाओ कर्जाति, गिच्छादंसणाकिरिया भयणाए; गाहावहस्स णं काओ सब्बाओ पयण्ईभवंति. " धनेऽनुपनीते क्रियकस्य महत्यस्ताः भवन्ति, धनस्य तदीयत्वात्. गृहपतेस्तु तास्तनुकाः, धनस्य तदानीम् अतदीय-त्वात्. एवं द्वितीयसूत्रसमानम् इदं तृतीयम्, अत एबाऽऽहः-' एयं पि जहा मंडे जनणीए तहा णेयव्वं ' ति द्वितीयसूत्रसमतया इसर्थे:. चतुर्थे व्वेवम् अध्येपम्:-' गाहावइस्स णं भंते ! भंडं विकिणमाणस्स कइए भंडं साइज्जेजा, धणे य से उंवणीए सिया;

१. मूलन्छायाः – स्यात् त्रियते, स्याद् नो कियते; क्रयिकस्य ताः सर्वाः प्रतनुकीभवन्तिः गृहपतेर्भगवन् ! भाव्डं विकीणानस्य यावद्-भाव्डं तस्य उपनीतं स्थात्, कथि ध्सं भगवन् ! तस्माद् भाण्यात् किन् अ.रिक्की किया कियते यावत्-मिण्यादर्शनप्रस्या किया कियते १ मृह्यतेवी तस्माद् भाण्डात् किम् आरम्भिकी किया कियते यावत्-मिथ्यादर्शनप्रथमा किया कियते ? भातम ! कयिकसा तसाहु भाण्डाहु अधस्तनाधतसः कियाः क्रियुन्ते, मिह्यादर्शनप्रथया किया धननया. गृह्यतेः ताः सर्वाः प्रतिस्ति। गृह्यतेर्भगवन् । भाण्डं यावत्-धनं च तसा अनुगनीतं स्याद् ? एतुर्पि पृथा भार्दम् उपनीति तथा हात्व्यम्-चतुर्थः आसापकः, धनं च तस्य उपनीति साद् यथा प्रथमः आसापकः, भार्वं च तस्य अनुपनीते सादि तदा हातव्यः प्रथम-चतुर्शयोः एको गमः, द्वितीय-तृतीययोः एको गमः--अनु०

गाहावइस्स णं भते! ताओ धगाओं किं आरंभिया किरिया कज्जइ ५ ? कइयस्स वा ताओं धणाओं किं आरंभिया किरिया कज्जइ ५ शोयमा! गाहावइस्प ताओं धगाओं आरंभिया ४, गिच्छादंसणवित्तया किरिया सिय कज्जइ, सिय नो कृज्जइ, कइयस्स णं ताओं सञ्ज्ञों पयणुईभवंति. १ धने उपनीते धनप्रस्मात्वात् तासां मृहपतेर्महत्यः, क्रियक्स्य तु प्रतनुकाः, धनस्य स्तरानीम् अतदीयत्वात्, एवं च प्रयमसूत्रसमम् इदं चतुर्थम्, इसेतदनुसारेण च सूत्रपुस्तकाऽक्षराणि अवगन्तव्यानि.

२. हमणां कर्मबंधनी किया कही, हवे बीजी क्रियाओना विषयोने निस्तवा ['गाहावइस्स 'इत्यादि.] सूत्रो कहे छे, गृहपति एटले गृहपति. गृहवाळो-गृहस्थ ['मिच्छाइसणिकिरिया सिय कजाइ ' इत्यादि.] मिथ्या दर्शनना हेतुवाळी किया कदाचित् थाय अने कदाचित् न थाय, ज्यारे गृहपति मिथ्यादिष्ट होय त्यारे मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी किया लागे अने ज्यारे गृहपति सम्प्रस्टि होय-मिथ्यादर्शनवाळो न होय-त्यारे मिथ्यादर्शनप्रत्यियकी किया न लोगे. हवे कियामां ज विशेष कहे छे: ['अह 'इत्यादि.]'अध ' ए शब्द पक्षांतरने स्वववा मूक्यो छे. ['से मंडे' ति] ते मांड ['अभिसमण्णागंए' ति] गवेषण करतां मळ्युं होय ['तओ 'ति] मळ्या पछी, ['से 'ति] मांड. ते घरधणिने, ए भांड मळ्या पछी तुग्त ज ['सव्वाओं कि] जेओनो संभव छेते वधी कियाओं ['पयणुईभवंति कि.] दंकी थाय छे, चौराएल भांडने भोतवानी वेळाए ते गृहस्थ विशेष प्रयत्नवाळी होवाथी ते कियाओ मोटी होय छे अने ज्यारे ते चौराएल करियाणुं हाथ आवे त्यारे ते गृहस्थ प्रयत्नथी अटकेलो होवाथी ते कियाओ दुंकी-ओछी-थाय छे. ['कइए '] ग्राहक ['मंडं साइजेज 'ति] ग्राहक. ' भांडने-करीयाणाने पोते खरीखं छे ' ए प्रमाणे सत्यंकार-बातुं आपीने स्वीकारे. ['अणुत्रणीर 'ति] ज्यां सुधी खरीदनारने सींखुं नथी. [' कइयस्स णं ताओ सव्याओं पयणुईभवंति ' ति] करीयाणुं अशाह होवाथी ते संबंधनी कियाओ ओछी होय छे, अने जेने त्यां करीयाणुं पड्युं छे एवा गृहस्थने तो, तेर्नु पोतानुं करीयागुं होत्राथी ते कियाओं मोटारूपमां होय छे, ज्यारे ते करीवाणुं, खरीदनारने सोंपाय छे त्यार खरीदनारने ते कियाओं मोटारूपमां होय छे अने घरधणीने तो ओछी होय छे. नहि सोंग्रेठ अने सोंप्रेठ एम व प्रकारनुं मांड होवाथी आ वे सूत्र ते परत्वे कह्यां छे, ए प्रमाण धन संबंधे पण वे सूत्र कहेवां, तेमां पहेलुं सूत्र आ प्रमाण छः—''हे भगवन् ! करीवाणाने वेंचनार गृहस्थनुं प्रथम सूत्र. करीयाणुं, कोइ खरीदनार खरीद करे अने तेनुं (मृत्यरूप) धन हजु न एळ्युं होय तो खरीद करनारने ते धनथी छुं आरंभिकी खगरे क्रियाओं लागे अने ते करीयाणाना घणी गृहपतिने ते धनथी शुं आरंभिकी वगेरे कियाओ लागे १, हे गौतम कि धनथी ते खरीदनारन हेठली मोटा प्रमाणवाळी-चार कियाओं लागे अने मिथ्यादर्शन किया भजनावडे-लागे अने न पण लागे, अने करीयाणावाळा घरधणीने ते बधी कियाओ ओछा प्रमाणमां लागे. " ज्यां सुधी धन सोंपायुं नथी त्यां सुधी खरीद करनारनुं धन होवाथी ते कियाओ तेने मोटा रूपमां लागे अने ते धन, सोंपाया पहेलां वेचनार गृहवतिनुं न होवाथी तेने ते कियाओं ओला प्रमाणमां लागे. ए प्रमाण आ त्रीजुं सूत्र बीजा सूत्रनी समान समज्बुं, माटे ज कहे छे:--[' एयं पि जहा भंडे उयणीए तहा नेयव्यं ' ति] बीजा सूत्रनी साथे समपणे समजवुं. चोथुं सूत्र तो ए प्रमाणे भणवुं: — ''हे चेथुं सूत्र. भगवन् ! करीयाणाने वेचता गृहस्थतुं करीयाणुं कोइ खरीद करनार खरीदे अने धन पण उपनीत-सोंपेलुं होय तो हे भगवन् ! ते धनथी त करीयाणाबाळा गृहपतिने शुं आरंभिकी बंगेरे कियाओं लागे ?, अने ते धनथी ते खरीद करनारने शुं आरंभिकी बंगेरे कियाओं टाने ? हे गै।तन ! गृहपतिने ते धनथी आरंभिकी वगेरे कियाओं छाने अने मिध्यादर्शनप्रत्ययिकी किया छागे अने न पण छागे तथा ते धनधी खरीद करनारने ते बधी कियाओं ओछा प्रमाणमां लागे. कारण के, ते कियाओं धनहेतुक छे माटे धन सोंपाया बाद गृहपतिने मोटा प्रमाणमां लागे अने ते वखते -सोंपाया पछी-धन, खरीदनारनं न होबाथी तेने ते कियाओ ओछा प्रमाणमां लागे, अने ए प्रमाण प्रयम सूत्र-समान आ चतुर्थ सूत्र छे. अने ए अनुसारे सूत्र पुस्तकना अक्षरो अवगमवाना-जाणवाना-छे.

अग्निकाय.

९. प्र०—अंगिणकाए णं भंते ! अहुणोज्जिलए समाणे महाकम्मतराए चेव, महािकरिय महासय-महावेदणतराए चेव भवइ;
अहे णं समए समए बोकािसेज्जमाणे, बोकािसेज्जमाणे चरिमकालसमयांसि इंगालब्भूए, मुम्मुरब्भूए, छारियब्भूए; तओ पच्छा
अप्पक्तम्मतराए चेव अप्पिकरिया-ऽऽसव-अप्पवेयणतराए चेव
भवइ ?

९. उ०—हंता, गोयमा ! अगणिकाए णं अहुणुजलिए समाणे तं चेय. ९. प्र० — हे भगवन् ! हमणा जगवेलो अग्निकाय, महा-कर्मवाळो, महाक्रियावाळो, महाआश्रव्वाळो, महावेदनावाळो, होय छे, हवे ते अग्नि समये समये—क्षणे क्षांग—ओडो थतो होय, बुझातो होय अने छेले क्षणे अंगःरह्तप थयो, मुर्मुरह्तप थयो, भस्महत्प थयो त्यार बाद ते अग्नि अस्पक्तम्वाळो, अस्पिक्रयावाळो अस्पआश्रववाळो अने अस्पवेदनावाळो थाय ?

९. उ०—हा, गौतम! हमणा जगवेलो अग्निकाय० ते ज कहेबुं.

www.jainelibrary.org

३. कियाऽधिकाराद् इदमाहः—' अगाणि ' इत्यादि. ' अहुणोज्जिलिए ' ति अधुनोज्ज्बलितः—सद्यः प्रदीप्तः, ' महाकम्मतराए '

For Private & Personal Use Only

Jain Education International

मूलच्छोयाः—अप्तिकायो भगवन् ! अधुनोज्जबलितः सन् महाक्मैतराय चैव, महाक्रिया-महाऽऽस्व-महावेदनतराय चैव भवति; अध सम्बद्धाः समेयोव्येपकृष्यमाणः, व्यपकृष्यमाणश्चरमकालसमये अङ्गारभूमः, सुमुरभूतः, छारिक (भल्मी)भूतः, ततः पश्चाद् अल्पकमैतराय चैव, अल्पकिया — --श्चरपाऽऽसंबद्धिः अल्पविद्यन्तराय चैव मवति ? हन्त, गातमः । अग्निकायोऽश्चनोज्जवलितः सन् तचैवः—अगु०

ति विध्यायमानाऽनलाऽपेक्षयाऽतिशयेन महान्ति कर्माणि ज्ञानाऽऽवरणादीनि बन्धमाश्रित्य यस्याऽसौ महाकर्मतरः, एवम् अन्यान्यपि. नवरमः—िक्रिया दाहरूपा, आश्रयो नवकर्मोपादानहेतुः, वेदना पीडा भाविनी तत्कर्मजन्या, परस्परशरीरसंबाध—जन्या वा. वोक्किसिक्जमाणे कि व्यपकृष्यमाणोऽपकर्पं गन्छन् , 'अप्यकम्मतराए कि अङ्गाराद्यवस्थाम् आश्रिय, अल्पशन्दः स्तोकार्थः, रक्षाऽवस्थायां तु अभावार्थः.

महाकर्मतर. महाकियतरः

३. कियाना अधिकारथी आ ['अगणी ' इत्यादि.] सूत्र कहे छे:—['अहुणोज्जलिए ' ति] हमणां जमवेलो. ['महाकम्मतराए ' ति] ओलवाता अमिनी अपेक्षाए जे, बंधने आश्री घणां मोटा ज्ञानावरणीयादि कर्म-बंधनो हेतु होवाथी महाकर्मतर छे. ए प्रमाणे बीजां पण विशेषणो जाणवां. विशेष ए के:—दाहने—बळवाने—िकयारूप समजवो, जेथी अमि महाश्रियतर छे अने नवीन कर्माने ग्रहण करवामां हेतु ए आश्रव समजवो, जेथी अमि महाश्रवतर छे, हवे पछी थवानी अने तेना कर्मश्री उपजती पीडा ते वेदना अथवा परस्पर शरीरना संवाधथी उपजती पीडा ते वेदना, जेथी अभिकाय महावेदनावाळो छे, [' वोक्रिस ज्ञामाणे ' ति] अपकर्ष पामतो — ओठो थतो. [' अप्यकम्मतराए ' ति] अंगारादि अवस्थाने आश्री अल्पकर्मवाळो छे, अहिं 'अल्प ' शब्दनो ' स्तोक—धोडुं ' ए अर्थ छे अने ज्यारे अमिनी भरमावस्था होय त्यारे अमि अल्पकर्मतर —कर्मरहित छे अर्थात् अभिना भरमावस्थावाळा पक्षमां ' अल्प ' शब्दनो ' अभाव ' अर्थ करवो.

पुरुष अने धनुष्यः

१०. प्र०—पुैरिसे णं भंते ! घणुं परामुसइ, परामुसित्ता उसुं परामुसइ, परामुसित्ता ठाणं ठाइं, ठिता आयतकत्राययं करेति, उड्ढूं वेहासं उसुं उध्विहइ, तए णं से उसुं उड्ढूं वेहासं उब्विहिए समाणे जाइं तथ्य पाणाइं, भृयाइं, जीवाइं, सत्ताइं अभिहणइ, वत्तेति, लेसोति, संघाएइ, संघट्टेति, परितावेइ, किलामेइ, ठाणाओ ठाणं संकामेइ, जीवियाओ ववरोवेइ, तए णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए !

१०. उ० — गोयमा । जावं च णं से पुरिसे धणुं परामुसइ, परामुसित्ता जाव-उिवहइ, तावं च णं पुरिसे काइयाए जाव-पाणाइवायिकिरियाए पंचिहें किरियाहिं पुढ़े, जेसिं पि च णं जीवाणं सरीरेहिं धगुं निव्वतिए ते वि च णं जीवा काइयाए, जाव-पंचिहें किरियाहिं पुढ़े, एवं धगु पुढ़े पंचिहें किरियाहिं, जीवा पंचिहें, णहाक पंचिहें, उमू पंचिहें, सरे, पत्तणे, फले, णहाक पंचिहें.

??. प्र०—अहे णं से उसू अष्पणी गुरुयत्ताए, भारियत्ताए, गुरुसंभारियत्ताए, अहे वीससाए पचीवयमाणे जाइं पाणाइं, जाव-जीवियाओ ववरोवेइ तावं च णं से पुरिसे कतिकिरिए?

११. उ०--गोयमा! जावं च णं से उसुं अपणो

१०. प्र०—हे भगवन् ! पुरुष धनुत्यने ग्रहण करे, ग्रहण करी बाणने ग्रहण करे, तेनुं ग्रहण करी स्थान प्रत्ये बेसे— धनुष्यथी बाणने फेंकती वेळानुं आसन करे—तेम बेसी फेंकवा प्रसारेळा बाणने कान मुधी आयत करे—खेंचे, खेंची उंचे आकाश प्रत्ये बाणने फेंके, त्यार बाद ते उंचे आकाश प्रत्ये फेंकाएछं बाण, त्यां आकाशमां जे प्राणीने, भूतोने, जीबोने, सत्त्रोने, सामा आवता हुणे, तेओनुं शरीर संकोची नाखे, तेओने श्लिष्ट करे, तेओने परस्पर संहत करे, तेओने थोडो स्पर्श करे, तेओने चारे कोरथी पीडा पमाडे, तेओने क्ळांत करे, तेओने एक स्थानथी बीजे स्थाने छइ जाय अने तेओने जीवितथी च्युत करे तो हे भगवन्! ते पुरुष केठळी कियावाळो छे ?

१०. ड० -- हे गौतम! यावत्-ते पुरुष धनुष्यने ग्रहण करे छे यावत् तेने फेंके छे, तावत् ते पुरुष कायिकी कियाने यावत् प्राणातिपातिकी कियाने अर्थान् पांचे कियाने फरसे छे. अने जे जीवोना शरीरो द्वारा धनुष्य बन्युं छे ते जीवो पण यावत् पांच कियाने फरसे छे, ए प्रमाणे धनुष्यनी पीठ पांच कियाने फरसे छे, दोरी पांच कियाने, ण्हारु पांच कियाने, बाण पांच कियाने, शर, पत्र, फल अने ण्हारु पांच कियाने फरसे छे.

११. प्र० — अने हवे ज्यारे पोतानी गुरुता वहे, पोताना मारेपणा वहे, पोतानी गुरुतता अने संभारता वहे ते बाण खमान्वयी नीचे पडतुं होय त्यारे त्यां (मार्गमां आवतां) प्राणोने यावत् जीवितथी च्युत करे त्यारे ते पुरुष केटली किया वाळो होय !

११. उ०-हे गौतम। यावत् ते बाण पोतानी गुरुतावडे

१. गूलच्छायाः —पुरुषो भगवन् ! धनुः पराष्ट्यति, पराष्ट्रय इपुं पराष्ट्यति, पराष्ट्रय स्थाने तिष्ठति, स्थाने रिथला आयतकणांऽऽयतं करोति, कर्ष्वं विहायति इषु र उल्किपति, ततः तस्मिन् इथा जर्ष्वं विहायति उल्किपते सति यान् तत्र प्राणान्, भूतान्, जीवान्, सत्त्वःन् अभिहन्ति, वर्तयति, स्थानात् स्थानं संकायति, जीविताद् व्यारोपयति ततो भगवन् ! स पुरुषः कतिक्रियः ? गातम ! यावच स पुरुषो धनुः पराष्ट्रति, पराष्ट्रय यावद् उत्थिपति तावच स पुरुषः कायिक्या यावत् प्राणाऽतिपातिक्रयया पद्यभिः कियाभिः स्पृष्टः, येषाभि च जीवानां शरीरैः धनुः निवंतितं तेऽिष च जीवाः कायिक्या, यावत् पद्यभिः कियाभिः स्पृष्टः, एवं धनुः स्पृष्टं पद्यभिः, क्षयाभिः, स्पृष्टः, स्पृष्टं पद्यभिः, इषुः पद्यभिः, रारः, पत्रणम्, फलम्, सायुः पद्यभिः, अधः स इषुः आत्मनो गुरुकत्या, भारिकतया, गुरुगंभारिकत्याः अधः विक्सया प्रस्वपतन् यान् प्राणान् यावत्–जीविताद् व्यपरोपयति तावच स पुरुषः कितिक्रयः ? गौतम ! सावच स इषुः आत्मनः—अनु०

गुरुयत्ताए, जाव-ववरोवेइ तावं च णं से पुरिसे काइयाए, जाव यावत् जीवोने जीवितथी च्युत करे तावत् ते पुरुष कायिकी यायत् -चउहिं किरियाहिं पुद्धे; जोसें पि य णं जीवाणं सरीरेहिं धणू चार क्रियाने फरसे छे अने जे जीवोना शरीरथी धनुष्य बनेछं छे निन्नात्तिए ते नि जीना चउहिं किरियाहिं, थणु पुट्टे चउहिं, ते जीनो पण चार कियाने, धनुष्यनी पीठ चार कियाने, दोरी जीवा चडाहैं, ण्हारू चडाहें, उसू पंचहिं, सरे, पत्तणे, फले, ण्हारू पंचहिं, जे वि य से जीवा अहे पद्योवयमाणस्स उवग्गहे भटंति ते वि य णं जीवा काइयाए, जाव-पंचिहं किरियाहिं जे जीवो आवे छे ते जीवो पण कायिकी यावत् पांच कियाने पुद्धाः.

चार कियाने, ण्हारु चार कियाने, बाण पांच कियाने, शर, पत्रण, फल अने ण्हारु पांच क्रियाने अने नीचे पडता बाणना अवग्रहमां फरसे छे.

- ४. क्रियाऽधिकारादेव इदमाहः ' पुरिसे णं ' इत्यादि. अपरामुसइ ' ति परामृशति-गृह्णाति, ' आयतकनाययं ' ति भायतः क्षेपाय प्रसारितः-कर्णायतः-कर्णं यावद् आकृष्टस्ततः कर्मधारयाद् आयतकर्णायतः, अतस्तम् इषुं बाणम्, ' उषुं वेहासं ' ति ऊर्धम् इति वृक्षशिखरायमेक्षयाऽपि स्यात्, अत आहः—विहायसि इत्याकाशे, ' उन्विहह ै ति ऊर्ध्वं विजहाति ऊर्ध्वं क्षिपति— इसर्थः. 'अभिहणइ ' ति अभिमुखमागच्छतो हन्ति, 'वत्तेइ ' ति वर्तुलीकरोति शरीरसंकोचाऽऽपादनात्, 'छेसेइ 'ति . श्लेषयति आत्मनि श्लिष्टान् करोति, 'संघाएइ 'ति अन्योऽन्यं गात्रैः संहतान् करोति, 'संघड्डेइ 'ति मनाक् स्पृशति, 'परिताचेइ ' ति समन्ततः पीडयति ' किलामेइ ' ति मारणान्तिकादिसमुद्घातं नयनि, ' ठाणाओ ठाणं संकामेइ ' ति खस्थानात् स्थानान्तरं नयति, ' जीवियाओ ववरोवेइ ' ति च्युतजीवितान् करोतीति. ' किरियाहिं पुढे ' ति कियाभिः स्पृष्टः-कियाजन्येन कर्मणा बद इसर्थः, ' धणु ' त्ति धनुर्दण्डगुणादिसमुदायः. ननु पुरुषस्य पञ्च क्रियाः भवन्तु, कायादिव्यापाराणां तस्य दश्यमानवात्; धनुरादे-निर्वर्तकशरीराणां तु जीवानां कथं पञ्च क्रियाः ? कायमात्रस्याऽपि तदीयस्य तदानीम् अचेतनत्वात्, अचेतनकायमात्रादिष् बन्धा-उन्युपगमे सिद्धानामपि तत्प्रसङ्गः, तदीयशरीराणामपि प्राणातिपातहेतुःलेन लोके विपरिवर्तमानलात्- किंच, यथा धनुरादीनि कायिक्यादिकियाहेतुत्वेन पापकर्मबन्धकारणानि भवन्ति तजीवानाम्, एवं पात्र-दण्डकादीनि जीवरक्षाहेतुत्वेन पुण्यकर्मनिबन्धनानि स्युः ? न्यायस्य समानत्वाद् इति. अत्रोच्यतेः—अविरतपरिणामाद् बन्धः, अविरतिपरिणामश्च यथा पुरुषस्याऽस्ति एवं धनुरादि-निर्वर्तकशरीरजीवानामपि इति; सिद्धानां तु नास्यसौ इति न बन्धः. पात्रादिजीवानां तु न पुण्यबन्धहेतुः वम्, तद्वेतोविवेकादेस्तेषु अभावाद् इति. किंच, सर्वज्ञवचनप्रामाण्याद् यद् यथोतं तत्तथा श्रद्वेयमेव-इति. इषुरिति शर-पत्र-फलार्दिसमुदायः, ' अहे णं से उसु ! इसादि. इह धनुष्मदादीनां यद्यपि सर्वित्रियासु कथिबद् निमित्तभावोऽस्ति, तथापि विवक्षितवधं प्रति अमुख्यप्रवृत्तिकतयाः विवक्षित-वधिकयायास्तैः कृतत्वेनाऽविवक्षणात् , शेषिक्रियाणां च निमित्तभावमात्रेणाऽपि तत्कृतत्वेन विवक्षणाचतस्त्रस्ता उत्ताः. बाणादिजीवशरीराणां तु साक्षाद् वधिक्रयायां प्रवृत्तःवात् पञ्चेति,
- 8. कियानो अधिकार चालु होवाधी ज आ-['पुरिसे णं ' इत्यादिः] सूत्र कहे हैं. ['प्रामुसइ ' ति] ग्रहण करे, ['आयत-कन्नाययं ' ति] फेंकवा माटे प्रसारेलुं ते आयत अने ते प्रसारेल, कान सुधी खेंचेलुं माटे आर्यतकणीयत, ते बाणने [' उद्घे बेहासं ' ति] उंचे, कृक्षनी टोचनी अपेक्षाए पण उंचे कहेवाय माटे कहे छे के ' विहायसि ' एटले आकाशमां [' उध्विहइ ' ति] उंचे फेंके छे. ['अभिहणइ' ति] सामे आवताने हणे छे, [' वत्तेह ' ति] बीजाना शरीरने संकोची नाखवाथी गोळ करे छे, [' छेसेह ' ति] आत्मामां-पोतामां-शिष्ट करे छे ~एक बीजाने चोंटाडी दे छे, ['संघाएइ' ति] परस्पर गात्रोनी साथे संहत~भेगा–करे छे, ['संघट्टेइ 'त्ति] थोडो स्पर्श करे छे, ['परितावेइ ' त्ति] चारे कोरथी पीडा पमाडे छे, ['किलाभेइ ' ति] मारणांतिक वगेरे समुद्घातने पमाडे छे, ['ठाणाओ ठाणं संकामेइ ' ति] पोताना स्थानथी स्थानांतरे छइ जाय छे, ['जीवियाओ ववरोवेइ 'ति] जीवितथी च्युत करे छे, ['किरियाहिं पुट्टे 'ति] कियाथी उत्पन्न थता कर्मवडे बद्ध थयो, [' घणु ' ति] दंड अने दोरा वगरेनो समुदाय ते धनुष्य. पुरुषमां ' फेंकवुं ' वगेरे कायादिव्यापारो देखाता होवाथी पुरुषने पांच कियाओ लांगे ते भले, पण जे जीवोनां शरीरथी धनुष्य वंगेरे बनेलां छे ते जीवोने पांच किया केम लांगे १ कारण के, ते जीवनुं शरीर मात्र पण, केंकवानी बेळाए अचेतन छे; कदाच एम मानवामां आवे के, जे जीवनुं मात्र अचेतनशरीर पण कांइ किया करे तो तथी थतो कर्मबंघ ते जीवने थाय तो सिद्धना जीवोने पण कर्मनंधनो प्रसंग आवशे; कारण के, सिद्धना जीवोनां मृतक-शरीरो पण लोकमां-जगतमां-प्राणातिपातमां हेतुपणे विपरिवर्तमान छे. वळी, कायिकी बगेरे कियामां हेतुभूत होवाधी जेम धनुष्य विगेरे, तेना जीवोने पाप कर्मबंधनां कारणो छे; ए प्रमाणे जीवरक्षामां हेतु होवाधी पात्र, दंडक विगेरे पदार्थी पण जे जीवना शरीरथी बनेलां छे ते जीवने पुण्यबंधमां कारण भवां जोइए; कारण के, उभयस्थळे न्यायनी समानता छे. अहिं समाधान कहीए छीएः कर्मबंध, अविरतपरिणामथी थाय छे, जेम अविरत परिणाम पुरुषने छे तेम जे जीवनां शरीरथी धनुष्य बंगरे निपजेलां छे ते जीवने पण अविरत परिणाम छे; माटे बन्नेने कर्मबंघनुं कारण अविरत खभाव होवाथी कर्मबन्ध थवामां वांधो नथी अने सिद्धोने तो कर्मबंघनुं

अभिहणे. शिष्ट करे. परितपावे.

जीवित-हीन करे धनुः.

अचेतर**–शरीरा**र्ह ए कियाओ रीते लागे.

मूलच्छायाः — गुरुवतया, यावत् – व्यंपरोपयति तावच स पुरुषः कायिक्या, यावत् – चतस्भिः कियाभिः स्षृष्टः, येषामपि च जीवानां शरीरैः धनुः निर्वर्तितं तेऽपि जीवाः चतस्रभिः कियाभिः, धनुः स्पृष्टं चतस्रभिः, जीवा चतस्रभिः, झायुश्वतस्रभिः, इषुः पत्रभिः, शरः, पत्रणम् , फलम् , स्नायुः प्रश्विमः; येऽपि च तस्य जीवाः अधः प्रत्यवपततोऽवग्रहे वर्तन्ते तेऽपि च जीवाः कायिक्या, यावत्-पन्नभिः कियाभिः स्पृष्टाः--अनुव

^{1.} अहिं ' आयत ' अने ' कर्णायत ' शब्दनो कर्मधारय-समास करवो:---श्रीअभय o

कारण ते अविरत परिणाम न होवाथी कर्मबंध थशे नहि. अने जे जीवोनां शरीरथी पात्र वगेरे बने छे ते जीवोमां पुण्यबन्धनुं कारण विवेक -बचन प्रमाण, बगेरे न होवाथी ते जीवोने पुण्यवंधनुं हेतुपणुं नथी। वळी, (एम कंइ नहि पण) सर्वज्ञना वचनमां प्रमाणता होवाथी जे जेम तेओए कच्चं छे ते तेम श्रद्धवुं ज शर, पत्रण अने फलनो समुदाय ते इषु. [' अहे मं से उसु ' इत्यादि.] यद्यपि अहीं को इपण रीते धनुष्मत् वेगेरे पदार्थी सर्व कियामां निमित्तरूप छे तो पण अहीं प्रस्तृत वध प्रत्ये तेओनां अमुरूप प्रवृत्तिकपणाथी 'विवक्षित वधिकया तेओए करी छे ' एम न विवक्ष्युं होवाथी अने बीजी कियाओमां तेओनो मात्र निमित्त भाव होवाथी पण 'ते कियाओ तेओए करी छे 'एम विवक्षण होवाथी चार किया कहेली छे, जे जीवना शरीरथी बाण वसेरे बन्यां छे ते जीवने तो पांच क्रिया लागे, कारण के, बाणादिरूप जीव-शरीरो तो साक्षात्-मुख्यपण वध कियामां मवर्तेलां छे.

अन्यतीर्थिको.

१२. प्र०—अंच उत्थिया णं भंते ! एवं आतिक्खंति, जाव— पर्वित से जहा नामए जुनइं जुनाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेजा, चक्स्स वा नाभी अरगाउत्ता-सिया एवामेव ,जाव-चत्तारि पंच जोयणसयाइं बहुसमाइण्णे मणुयलोए मणुस्सोहिं-कहमेयं मंते ! एवं ?

📍२. उ०—गोयमा 🖡 जं जं ते अन्नउश्थिया, जाव-मणुस्सेहितो-जें ते एवं आहंसु, मिच्छा. अहं पुण गोयमा! एवं आइक्लामि एवामेव जाव-चत्तारि, पंच जोयणसयाई बहुसमा-इने निरयलोए नेरइएहिं.

१३. प्रo नेरइयाणं भंते ! कि एगत्तं पमू विअन्वित्तएं, पुहुत्तं पभू विडव्वित्तए ?

१३, उ०—जहा जीवाभिगमे आलाबगोः तहा नेय्य्यो, जाव-दुरहियासे.

१२. प्र०-हे भगवन् ! अन्यतीर्थिको ए प्रमाणे कहे छे यावत् प्ररूपे छे के, जेम कोइ युवतिने युवान हाथमां हाथ प्रहीने, (उमेला) होय अथवा जेम आराओथी भीडाएली चक्रनी नाभी होय ए प्रमाणे ज यावत् चारसें पांचसें योजन सुधी मनुष्य छोक, मनुष्येथी खीचोखीच मरेछो छे, हे भगवन् ते ए प्रमाणें केम होई शके ?

१२. उ० हे गौतम ते अन्यतीर्थिको जे यावत् मनुष्योथी, जे तेओ ए प्रमाणे कहे छे ते खोटुं छे, हे गौतम! हुं बळी आ प्रमाणे कहुं छुं के, ए ज प्रमाणे यावत् चारसा पांचसा योजन सुधी निर्य लोक, नैरियकोथी खीचो खीच भरेलो छे.

१३. प्र० — हे भगवन् ! छुं नैरियको एकपणुं विकुर्ववा समर्थ छे के बहुपणुं विकुर्ववा समर्थ छे?

१३. उ० - जेम जीवाभिगम सूत्रमां आलापक छे ते आला-पक यावत् ' दूरहियास ' शब्द सुधी अहिं जाणवी.

५. अथ सम्यक्प्ररूपणाऽधिकाराद् मिथ्याप्ररूपणानिरासपूर्वेकं सम्यक्प्ररूपणामेव दर्शयन्नाहः—' अन्नजिर्थया ' इत्यादि. ^{*} बहुसमाइण्णे ' ति अलम्तम् आकीर्णः, मिथ्यात्वं च तद्वचनस्य विभङ्गज्ञानपूर्वकत्वाद् अवसेयम् इति. ' नेरइएहिं ' इत्युक्तम्,

१. नैरयिको विषे अहीं जीवाभिगम-सूत्रना जे आलापकनी भलामण करवामां आवी छे ते आलाएक (स०-ए० ११७)मां आ प्रमाणे छे:— " इमीसे णं भंते ! रयणप्यभाए पु॰ नेरतिया कि एकत्तं पम् विउव्दिन तए, पुहुत्तं पि पभू विउन्वित्तए ?

गोयमा। एगत्तं पि पभू, पुहुत्तं पि पभू बिउन्दिसए. एगत्तं विउन्देमाणा एगं महं भोगगरस्वं ना, एवं मुसंढि-करवत्त-असि-सत्ति-हरू-गता-मुसरु-चक-णाराय-कुंत-तोमर-मूर-लउड-भिडमाला य जाव भिडमालाहवं था. पृहुतं विउन्वेभाणा मोरगरह्वाणि वा जाव-भिंडमालह्वाणि वा. ताई संखेजाई, णो असंखेलाई, संबदाई, नो असंबदाई; सरिसाई, नो असरिसाई विउन्वंति-विउन्वित्ता अग्णमण्णस्स कायं अभिहणमाणा अभि-हणमाणा वेयणं उदीरेंति-उज्जलं, विउलं, पगाढं, ककसं, कड्यं, फहसं, निहरं, चंइं, तिब्बं, दुवखं, दुशं, दुरहियासं " ति.

" हे भगवन् ! आ रत्नप्रभा नरकमां नैरियको शुं एकताने विकुर्ववा समर्थ छे के बहुताने विकुर्ववा समर्थ छे ?

गौतम ! तेओ एकताने पण विकुर्वा शके छे अने बहुताने पण विकुर्वी शके छे. एकताने विकुर्वता एक मोटा मोघरीना, मुहंदिना, करवतना, तरवारना, शक्तिना, इळना, भदाना, मुशळना, चक्रना, नाराचना, कुंतना, तोमरना, शूळना, लाकडीना अने यावत्-भिडमाळना, रूपने विकुर्वा शके छे अने बहुताने विकुर्वता घणां मोघरीनां रूपोने यावत्-भिंडमाळनां रूपोने विकुर्वा शके है. ते रूपो संख्येय होय छे-असंख्येय नधी होतां, संबद्ध होय छे-असंबद नथी होतां, सहश होय छे-असदश नथी होतां-ए रूपोने विकुर्वाने एक बीजाना शरीरने अभिहणता अभिहणता वेदनाने उदारे छे, ते चेदना-उद्भवल, विपुल, प्रगाह, कर्कश, कडुक, पर्य, निष्ठर, चंड, तीन, दुःख, दुर्ग अने हुरधिसहा होय छै। "--अद्

Jain Education International

१. मूलच्छायाः--अन्ययूथिका भगवन् ! एवम् आख्यान्ति, यावत्-प्रहरवित स यथा नाम युवति युवा इस्तेन इस्तं गुळीयात्, चक्रस्य वा माभी अरकाऽऽयुक्ता स्यात्, एवमेव यावत्-चत्वारि, पश्च योजनशतानि बहुसमाकीणां मनुष्यलोको मनुष्यैः-कथमेतद् भगवन् ! एवम् ? गातम ! थत् तेऽन्ययूथिका यावत्-मनुष्यैः-ये ते एवम् आहुः, मिध्या. अहं पुनर्शितम ! एवम् आख्यामि-एवम् एव यावत् चत्वारि, पञ्च योजनशतानि बहु-समाकीणां नरकलोको नैरियकैः नैरियकाः भगवन् ! किम् एकत्वं प्रभवो विकुर्वितुम् , पृथक्तवं प्रभवो विकुर्वितुम् ? यथा जीवाऽभिगमे आलापकस्त्रया ब्रात्ववी यावत्-दुर्घाससम्ः -- अनु०

अतो नारकवक्तव्यतासूत्रम्-' एगत्तं 'ति एकत्वं प्रहरणानाम् , ' पृहुत्तं 'ति पृथक्त्वं बहुत्वं प्रहरणानामेत्र. ' जहा जीवाभिगमे ' इत्यादि, आलापकश्चेवमः--'' गोर्यमा ! एगत्तं पि पहू विउब्वित्तए, पुहुत्तं पि पहू विउब्वित्तए; एगत्तं विउब्बमाणा एगं महं मोग्गररूवं वा, मुसुंदिरूवं वा '' इत्यादि. '' पुहेतुं विउन्वमाणा मोग्गररूवाणि वा '' इत्यादि. '' ताँईं संखेजाईं, नो असंखेजाइं, एवं संबद्धाइं-सरीराइं विडाव्विति, विडव्वित्ता अन्नमनस्स कायं अभिहणमाणा, अभिहणमाणा वेयणं उदीरेति, उज्जलं, विउलं, पगाढं, ककसं, कडुयं, फरुसं, निद्धुरं, चंडं, तिब्वं, दुक्खं, दुग्गं, दुरिह्यासं '' ति. तत्रोञ्ज्वलां विपक्षलेशेनांऽपि अकलङ्किताम्, विपुलां शरीरव्यापिकाम्, प्रमादां प्रकर्षवतीम्, कर्कशां कर्कशद्रव्योपमाम्-अनिष्टाम्-इलर्थः. एवं कतुकाम्, परुषाम्, निष्ठुरां चेति; चण्डां रौद्राम्, तीवां झगिति शरीरव्यापिकाम्, दुःखाम् असुखरूपाम्, दुर्गौ दुःखाऽऽश्रयणीयाम् अत एव दुर्धिसह्याम् इति.

५. हवे सम्यक्प्ररूपणानो अधिकार होवाथी मिथ्याप्ररूपणाना निरासपूर्वक सम्यक्प्ररूपणाने ज दर्शावता [' अन्नउत्थिया ' इत्यादि] स्त्र कहे छे, ['बहुसमाइण्णे' ति]. अत्यंत आकीर्णः तेनुं-अन्यतीर्थिकनुं-आ वचन विभंगज्ञानपूर्वक होवाथी तेमां असत्यता जाणत्रीः ['नेरइएहिं'] ए प्रमाणे कह्युं माँटे`नारकनी बक्तव्यतानुं सूत्र कहे छेः—['एगत्तं'ति] प्रहरणो~शस्त्रो-नुं एकपणुं, ['पुहुत्तं'ति] प्रहरणोनुं बहुपणुं. ['जहा जीवाभिगमे ' इत्यादिं.] जीवाभिगममां आवेळो आळापक आ प्रमाणे छेः—'' हे-मौतम ! एकपणुं पण विकुर्ववा समर्थ छे अने बहुपणुं पण विकुर्ववा समर्थ छे; एकपणानुं विकुर्वण करता तेओ एक मोटुं मुद्गररूप वा मुसुंढिरूप '' इत्यादि. '' बहुपणानुं विकुर्वण करता तेओ घणां मुद्रररूपो " इत्यादि. ते वधां संख्येय होय ९ण असंख्येय न होय, ए प्रमाणे संबद्ध शरीरोने विकुर्वे छे, विकुर्वीने एक बीजाना शरीरने अभिधात करता तेओ वेदनाने उदीरे छे, ते वेदना उज्ज्वल, विपुल, प्रगाह, कर्वश, कटुक, परुष, निष्टुर, चंड, तीब, दु:खरूप, दुर्ग अने दुस्सह होय छे-उच्चल एटले वेदनानो विपक्ष सुख, तेना अंशथी पण अक्लेकित अर्थात् स्वमात्र पण सुखरहित, आखा शरीरमां व्यापेळी वेदना ते विपुळ वेदना, प्रगाढ-प्रकर्षवाळी, कर्कश-कर्कश पदार्थ जेवी अर्थात् अनिष्ट, ए प्रमाणे कटुक, परुष, निष्टुर, चंड-रोद्र-मयंकर, तीत्र-शोधपेण शरीरमां व्यापनारी, दुःख-असुखखरूप, दुर्ग-दुःखपूर्वक आश्रय करवा योग्य माठे ज दुस्सह

आधाकर्मादि आहार.

—औहाकम्मं ' अणवजे 'त्ति मणं पहारेत्ता भवति, से णं तस्स ठाणस्स अणालोतियपडिकंते कालं करेइ-निध्य तस्स आराहणा, से णं तस्स डाणस्स आस्रोतियपिडकंते कालं करेइ -अरिथ तस्स आराहणा-एएणं गमेणं नेयव्यं- कीयगडं, ठावियं, रइयगं, कंतारभत्तं, दुब्भिनसभत्तं, वद्दियाभत्तं, गिलाणभत्तं, सेजायरापिंडं.

१४. प्र०--आहाकम्मं ' अणवजे 'गत्त बहुजणस्स मञ्झे भासिता, सयमेव परिभुंजित्ता भवति से णं तस्स ठाणस्स जाव-अस्थि तस्स आराहणा ?

-- ' आधाकर्म अनवद्य-निष्पाप-छे ' ए ग्रमाणे जे, मनमा समजतो होय ते जो आधाकर्म स्थानविषयक आछोचन अने प्रतिक्रमण कर्या विचा काळ करे तो तेने आराधना नधी अने जो ते स्थानविषयक आछोचन अने प्रतिक्रमण करी काछ करे तो तेने आराधना छे. ए गम प्रमाणे कीतकृत-साधु माटे मृह्य श्रापैनि अणिलं भोजन, स्थापित-साधु माटे राखी मेलेलं भोजन, राचित-साधु माटे लाडवा वगेरे रूपे करेलो लाडवानो भूको वगेरे, कांतारभेक्त-जंगलमां साधुना निर्वाह माटे तैयार करेलो आहार, दुर्भिक्षभक्त-दुकाळ वखते साधुना निर्वाह माटे तैयार करेलो आहार, दुार्दन होय-वरसाद आवतो होय-त्यारे साधु माटे तैयार करेला आहार ते वार्दलिकाभक्त, ग्लान माटे रांघेली आहार, शय्यातरापिंड, राजपिंड, ए बधी जातना आहार माटे जाणवुं.

१४. प्र०—' आधाकर्म आहार निष्पाप छे ' ए प्रमाणे जे घणा माणसानी वचे बोले अने पोते आधाकर्मने खाय तो तेम ंबोलनारं तथा खानार ते विषे यावत् तेने आराधना छे ?

प्रविद्याला क्रिक्त क्रि २. पृथवस्वं विकुर्वभाणा सुदूररूपाणि वा. ३. तानि संख्येयानि, नो असंख्येयानि, एवं संबद्धानि शरीराणि विकुर्वन्ति, विकुर्व्य अन्योऽन्यस्य कायम् अभिन्नन्तः, अभिन्नन्तः वेदनाम् उदीरयन्ति, उज्ज्वलाम्, विपुलाम्, प्रगाढाम्, कर्वशाम्, कटुकाम्, परुषाम्, निष्ठराम्, चण्डाम्, तीवाम्, दुःखाम्, दुर्गाम् , दुर्धियासाम्-(दुर्धिसह्याम्)ः — अनु०

१. मूलच्छायाः—ेआधाकर्म, 'अनवर्षम् ' इति मनः प्रधारयिता भवति स तसात् स्थानाद् अनालोचितप्रतिकान्तः कालं करोति नास्ति तस्य आराधना, स तसात् स्थानाद् आलोचितप्रतिकान्तः कार्लं करोति अस्ति तस्य आराधनाः एतेन गमेन इतिव्यम्-कीतकृतम् , स्थापितम् , रचितम् , कान्तारभक्तम् , दुर्भिक्षभक्तम् , बार्दलिकाभक्तम् , ग्लानभक्तम् , शर्म्यातरपिण्डम् , आधाकमे ' अनवद्यम् ' इति बहुजनस्य मध्ये भाषित्वा स्वयमेव पिद्भित्र भवति स तस्य स्थानस्य यावत्-भक्ति तस्य भाराधना १:--अनु०

१४. उ०-एयं पि तह चेव, जाव-रायपिंड.

. १५. प्र०—आहाकम्मं अणवज्जे 'ति अनमन्नस्स अणु-प्यदावतित्ता भवइ, से णं तस्स० !

१५. उ०-एयं तह चेवं जाव-रायपिंडं.

१६. प्र०—आहाकमां णं 'अणवजे 'ति बहुजणमञ्झे पत्रवहत्ता भवति से णं तस्त जाव-अत्थि आराहणाः ?

१६. उ०--जाव-रायपिंडं.

१४. उ०-ए पण ते ज प्रमाणे जाणवुं यावत्-राजपिंड.

े १५ उ०—ए पण ते ज प्रमाणे जाणवुं यावत्—राजिएंड.

१६ प्र०—' आधाकर्म निष्पाप छे ' ए प्रमाणे घणा माणसोने जे जणाबनार होय, तेने यावत् आराधना छे ?

१६. उ०-यावत्-राजिपंड (पेटे जाणी लेवुं.)

६. इयं च वेदना ज्ञानादाऽऽराघनाविरहेण भवति इति आराधनाऽभावं दर्शयितुमाहः—'आहाकम्मं' इत्यादि. 'अणवज्जे' ति अनवद्यमिति, 'मणं पहारेत्त ' ति मानसं प्रधारियता स्थापिता भवति. 'रहयगं' ति मोदकचूर्णादि पुनमेदिकादितया रिवतम् औदिशिकभेदरूपम्. 'कंतारमत्तं' ति कान्तारम् अरण्यम्, तत्र भिक्षुकाणां निर्वाहार्थं यद्विहितं भक्तं तत् कान्तारभक्तम्, एवम् अन्यान्यपि. नवरमः—वादिलिका मेघदुर्दिनम्, 'गिलाणभत्तं' ति ग्लानस्य निरोगार्थं भिक्षुकदानाय यत् कृतं भक्तं तद् ग्लानभक्तम्, आधाकर्मादीनां सदोपत्वेन आगमेऽभिहितानां निर्दोपताकल्पनम्, तत एव स्वयं भोजनम्, अन्यसाधुम्योऽनुष्रदापनम्, समायां निर्दोपतामणनं च विपरातश्रद्धानादिक्तपत्वाद् मिथ्यत्वादि, ततश्च ज्ञानादीनां विराधना स्कुटा एव इति.

६. आ वेदना, ज्ञानादिनी आराधना न करी होय त्यारे थाय छ माटे आराधनाना अभावने दर्शावया [' आहाकरमं ' इत्यादि] सूत्र कहे छे, [' अणवज्जे ' ति] अनवध—निष्पाप, ए प्रमाणे [' मणं पहारेत्त ' ति] मनने धारण करनार होयं. [' रइयमं ' ति] रचितक—रचेतुं—उदाहरण तरीके; भांगीने भूको थइ गएठा ठाडवानो फरीने साधने माटे ठाडवो वाळवो — जे औदिशक भेदरूप छे, [' कंतारभत्तं ' ति] अरण्यमां भिक्षुओना निर्वाह माटे जे बनावेतुं भक्त ते कांतारभक्त, ए प्रमाण बीजां पण जाणां, विशेष ए के, वार्दितका एटेठे मेधदुर्दिन [' गिठाणमत्तं ' ति] ग्लाननी निरोगतार्थे भिक्षुकने देवा माटे करेतुं भक्तः ते ग्लानभक्तः आगममां सदोषपणे कहेता आधाकमीदिक आहारोनुं निर्दोषपणे कल्पतुं अने तथी ज पोते तेनुं भोजन करतुं, बीजा साधुओने अनुप्रदापन करतुं तथा सभामां तेनुं निर्दोषपणुं कहेतुं, ते वधुं विपरीत श्रद्धानादिरूप होवाथी मिथ्यात्मादिरूप छें। अने तथी ज्ञान वर्गरेनी विराधना स्पुटरूपे ज छे.

भक्त-वार्द-१क्त-रहान-

रचितक.

विराधनाः

आचार्य-उपाध्याय.

१७. प्रच—औयरिय-उवज्झाए ण भते ! सविसयंसि गणं अगिलाए संगिण्हमाणे, अगिलाए उवगिण्हमाणे कहीं स्वग्ग-हणेहिं सिज्झति, जाय-अंतं करेति !

१७. उ० — गोयमा ! अत्थेगतिए तेणेव भवगाहणेणं सि-ज्झति, अत्थेगतिए दोचेणं भवग्गहणेणं सिज्झति, तचं पुण भवग्गहणं णाइक्साति. १७. प्र०—हे भगवन् ! पोताना विषयमां, शिष्ययगेने खेद रहितपणे स्वीकारता, खेदरहितपणे सहाय करता आचार्य अने उपाध्याय केटलां भवप्रहणो करी सिद्ध थाय यावत् अंतने करे?

१७. उ०—हे गौतम ! केट्लाक ते ज भववडे सिद्ध थाय, केटलाक वे भव प्रहण करी सिद्ध थाय-पण त्रीजा भवप्रहणने अंतिक्रमे नहि.

७. आधाकर्मादीश्व पदार्थान् आचार्यादयः सभायां प्रायः प्रज्ञापयन्ति—इत्याऽऽचार्यादीन् फलतो दर्शयन् आहः—-' आयिरए' इत्यादि. ' आय्रिय - उवज्झाए णं ' ति आचार्येण सहोपाध्यायः—आचार्यो—पाध्यायः, ' साविसयांसि ' ति स्वविषयेऽर्थदान— सूत्रदानलक्षणे, ' गणं ' ति शिष्यवर्गम् ' अगिलाए' ति अखेदेन संगृह्णन्-स्वीकुर्वन्—उपष्टम्भयन्. द्वितीयः, नृतीयश्च भवो मनुष्यभवो देवभवाऽन्तरितो दश्यः, चारित्रवतोऽनन्तरो देवभव एव भवति, न च तत्र सिद्धिरस्ति इति.

रे. मूर्लच्छायाः -- एतंदिप तथा चैव यावत्-राजिपण्डम् . आधाकर्म, 'अनवद्यम् 'इति अन्योऽन्यस्य अनुप्रदापियता भवति स तस्य० ? एतत् तथा चैव यावत् राजिपण्डम् . आधाकर्म "अनवद्यम् 'इति बहुजनमध्ये प्रज्ञापियता भवति स तस्य यावत्-अति आराधना ? याकृत्-राजिपण्डम् . २. आचार्योपाध्यायो भगवन् ! स्वविषये गणम् अग्लानतया संगृहन् , अग्लानतया, उपगृहन् कतिभिर्भवप्रहणेः सिध्यति, युवत्-अन्तं करोति ? भातमे ! अस्त्येककस्तेनव भवष्रदणेन सिध्यति, अस्त्येकको द्वाभ्यां भवप्रदणाभ्यां सिध्यति, तृतीयं पुनर्भवग्रहणं नाऽतिकामितिः --अनु०

७. आधानमोदिपदना अर्थीने प्रायः आचार्य वगेरे मोटा माणसो समामां जणांव छे मोट-हवे फल्रथी आचार्यादिने दर्शावता [' आयरिए ' हत्यादि] सूत्र कहे छे, ['आयरिय-उवज्झाएणं ' ति] आचार्यनी साथ उपाध्याय ति आचार्योपाध्याय [' सविसयंसि ' ति] अर्थो देवर अने सूत्रो देवारूप पोताना विषयमां [' गणं ' ति] शिष्य वर्गने [' अगिलाए ' ति] असेद पूर्वक स्वीकारता, सहायता करता. बीजो अने बीजो मनुष्य भव देवभवना आंतरावाळो जाणयो, कारण के, चारिववाळो लागलो देवभवमां ज जाय छे, त्यां सिद्धि नथी.

अ(चार्द-उपाध

देशभव.

मृषावादी.

१८. प्र०—जे णं मंते ! परं अलिएणं, असन्भूएणं, अन्भ-क्लाणेणं अन्भक्ताति तस्त णं कहप्पगारा कम्मा कर्जाति ?

१८. उ० —गोयमा ! जे णं परं अलिएणं, असंतरयणेणं, अस्तरयणेणं, अस्तरयणेणं अध्भवसाति तस्स णं तहणगारा चेव कम्मा कर्जाति, जरथेव णं अभिसमागञ्छइ तत्थेव णं पडिसंवेदेति तओ से पच्छा वैदेति.

--सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति.

१८. प्र०—हे भगवन् ! जे बीजाने, खोटा बोठवाबडे, असद्भृत बोठवावडे, अभ्याख्यान—मोठे मोढ दोष प्रकाशवा—वडे दूषित कहे, ते केवा प्रकारनां कर्मी बांधे छे ?

१८. उ०-गौतम! ते तेवा प्रकारनां ज कर्मो बांधे छे, ते ज्यां जाय छे त्यां ते कर्मोने वेदे छे, पछी ते कर्मीने निर्जरे छे,

े —हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे, छे, (एम कही श्रमण भगवंत गींतम विहरे छे.)

भगवंत-अज्ञहरमसःसिवणीए सिरीभगभईसुते पंचमसये सहो उदेसी सम्मत्तो.

८. पराऽनुप्रहस्याऽनन्तरं फलमुक्तम्, अथ परोपघातस्य तदाहः — ' जे णं ' इत्यादि. ' अलिएणं ' ति अलीकेन भूतिहन्त्रस्यण पालितब्रह्मचर्यसाधुविषयेऽपि ' नाऽनेन ब्रह्मचर्यमनुपालितम् ' इत्यादिरूपेण, ' असम्भूएणं ' ति अभूतोद्भावनरूपेण
' अचीरेऽपि चौरोऽयम् ' इत्यादिना, अथवा अलीकेन असत्येन, तच द्रव्यतोऽपि भवति—लुन्धकादिना मृगाद्येन् पृष्टस्य जानतोऽपि
नाऽहं जानामि—इत्यादि. अत एवाऽऽहः — असङ्गतेन दुष्टाऽभिसंधित्वाद् अशोभनरूपेण ' अचौरोऽपि चौरोऽयम् ' इत्यादिना,
' अन्भक्ताणेणं ' ति आभिमुख्येन आख्यानं दोपाऽऽविष्करणम् अभ्याख्यानम् – तेन अभ्याख्याति – ब्रूते. ' कहण्यार ' ति
कथंप्रकाराणि किंप्रकाराणि इत्यर्थः, ' तहण्यगारे ' ति अभ्याख्यानफलानि इत्यर्थः, ' जत्थेव णं ' इत्यादि. यत्रैव मानुषत्वादी
अभिसमागन्किति—उत्पचते तत्रैव प्रतिसंवेदयित अभ्याख्यानफलं कर्म, ततः पश्चाद् वेदयित निर्जर्यति – इत्यर्थः.

भगवरस्थमंस्वानिप्रणीते श्रीयगवतीसूत्रे पश्चमशते षष्ठ उद्देशके श्रीअभगदेवसूरिवरिवर्त विवरणं समासम्.

८. ए प्रमाण बीजा उपर करेल उपकारने अनंतर-साक्षात्-फळ कहुं; हवे बीजाने उपघातनुं फळ कहे छे:—['जे णं ' इत्यादि.] ['अलिएणं 'ति] 'जे साधुए ब्रह्मचर्य पाळ्युं होय तेने विषे कहेनुं के आणे ब्रह्मचर्य नथी पाळ्युं 'ए प्रमाणे सत्य वातना अपलापरूप अलीक वहे, ['असब्सूएणं 'ति] जे चोर न होय तेने 'आ चोर छे 'एम कहेनारूप-न थयेळने उद्यानक्ष्य-ते असद्भुत—ते वहे अथवा अलीक-स्रोटुं अने ते 'कोइ शीकारी वंगरेथी मृगो विषे पूछाएळो अने मृगोने जाणनारो एण एम बोठे के हुं मृगोने जाणतो नथी 'एने रूरो इत्याथी होय माटे कहे छे के, अहीं विवक्षित स्रोटुं एवा प्रकारने नथी एण असद्भुत् ए छे तुष्ट अभिगाय होनायी अक्षोननरूप, चोर न होय तेमां एण 'आ चोर छे 'ए प्रमाणे आरोप करवारूप ते अलीक छे. ['अब्भवखाणेणं 'ति] सामे, दोयोना प्रकट करवारूप कथन ते अभ्याख्य न ते वहें बोले, ['कहप्पगार 'ति] केवां प्रकारनां, ['तहप्पगार 'ति] अभ्याख्यान फळवाळां, ['जत्थे-व णं 'हत्यादि.] ज्यां मनुष्य वंगरे योनिमां उत्यन्न थाय त्यां अभ्याख्यान फळ कर्मने प्रतिसंवेदे छे, त्यार पछी निर्जरे छे.

अलीक. असङ्गतः

अभ्याख्यान.

निर्देश छे.

^{9.} मूलच्छायाः —यो भगवन् ! परम् अलीकेन, असद्भूतेन, अभ्याख्यानेन अभ्याख्याति तस्य किंप्रकाराणि कमाणि कियन्ते ! गातम ! यः परम् अलीकेन, असद् (असल्य) वचनेन, अभ्याख्यानेन अभ्याख्याति तस्य तथाप्रकाराणि चैव कमीणि कियन्ते, यत्रैव अभिसमागच्छति तत्रैव ्यतिसंवैदय्ति, ततः स पश्चाद् वैदयति. तदेवं भगवन् ! , तदेवं भगवन् ! इतिः—अतु०

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सहुणानां परकृतिकरणाद्वेतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शानयोः—दयात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चाम्रमुख्यः ॥

शतक ५.-उद्देशक ७.

है भगवन् ! परमाणु कंपे ? ते ते भावे परिणमे ? कदाच कंपे-परिणमें-कदाच ून कंपे-्त परिणमें.-ए प्रताणे हिप्रदेशिक स्कंप:-देशतः कंपन-अव्यत-्त्रिप्रदेशिक स्कंथ.-चतुष्प्रदेशिक स्कंथ.-पंच प्रदेशिक स्कंथ-यादत्-अनंतप्रदेशिक स्कंथ.-देशाश्रित, विवल्पो.-परमाणु अने अतिथारा.-पुरमाणु क्टेशय ?-नी.-ए प्रमाणे यावत-असंहंपप्रदेशिक स्कंध-अनंत प्रदेशिक स्कंध अने असिधारा.-ते छेदाय ?-इ।-ना.-ए प्रमाणे अग्नि अने परमाणु विगेरे,-पुःकरसंवर्धक मेव अने परमाणु विगेरे,-मंगा महानदी अने परमाणु विगेरे -परमाणु अर्थ सिहा छै ? मध्य सिहत छै ? प्रदेश सिहत छै ? तेम नथी.-ए प्रमुखे दिप्रदेशिक स्कंध.-त्रिप्रदेशिक स्कंप.-द्विप्रदेशिक स्कंपती पेठे सम प्रदेशवाळा अने त्रिप्रदेशिक स्कंपती पेठे विषम प्रदेशवाळा.-संख्येय प्रदेशिक रहंब.-असंख्येय अदेशिक स्कंप अने अनंत प्रदेशिक रहंच-परमाणु परमाणुनी पुरस्पर स्पर्शना - नव विकल्प.-परमाणु अने दिप्रदेशिकनी स्पर्शना -परमाण अने त्रिप्रदेशिकनी रपर्शना -ए प्रमाणे यावत्-परमाणु अने अनन्तप्रदेशिकनी स्पर्शना -दिप्रदेशिक अने परमाणुनी स्पर्कना - द्विप्रदेशिक अने द्विप्रदेशिकनी स्पर्कना - द्विप्रदेशिक अने त्रिप्रदेशिकनी स्पर्कना - त्रिप्रदेशिक अने परमाणुनी स्पर्कना - त्रिप्रदेशिक अने द्विप्रदेशिकनी स्पर्शना - त्रिप्रदेशिक अने त्रिप्रदेशिकनी स्पर्शना - ए प्रमाणे यावत् - अनंत प्रदेशिकनी स्पर्शना - परमाणु पुदलनी कालतः स्थिति - एक ंसमयं अने असंख्य काल.-सकेष एक प्रदेशावगाढ पुद्रलंनी काछत: सिटि.-एक समय अने आविलकानी असंख्य भाग.-१ प्रमाण यावत-असंख्य प्रदेशावगाढ -एक प्रदेशावगाढ निष्कंप पुद्रलनी कालतः स्थिति,-एक समय अने असंख्य काल.-एक गुण काळा पुद्रलनी कालतः स्थिति,-एक समय अने असंख्य काल.-ए प्रमाणे यावत-अनंत गुणे का छं पुद्रल.-वर्ण-नंध-रक्ष-रपर्श.-सृक्ष्मं परिणाभ.-बादर परिणाम.-शब्द परिणते पुंद्रलेनी कालतः स्थिति - एक समय अने आवितिकानो असंस्य भाग - भूशब्दपरिणतः पुद्रल - परमाणु पुद्रहनो अंतरकाल - एक समय अने असंस्य काल -द्विप्रदेशिक स्कंपनी अंतरकाल.-एक समय अने अनंत काल.-अनंत प्रदेशिक.-एक प्रदेशावगृह सक्ष्य पुरुलनो अंतरकाल,-एक समय अने असंख्य कालु.-ए रीते असंख्य प्रदेशावगाढ.-एक प्रदेशावगाढ निष्कंप पुद्रलनो, अंतरकाल,-एक समझ अने आविलकानो असंख्य भाग.-ए रीते असंख्य-प्रदेशावगाद.-वर्णादिनो अंतरकाल.-सन्दपरिणत पुद्रलनो अंतरकाल -एक समय अने असुंस्प्रकाल.-असन्द परिणत पुक्रल.-दन्यस्थानायु-क्षेत्रस्था-नायु-अवगाइनास्थानायु अने भावस्थानायुनी अल्प बहुता -तैरविको आरंभी अने परिचही है १- हा.-असुरोको परिचह अंगे आरंभ-पृथिवीकायादिनो आरंभ.-शरीर-वर्म-भवन-देवो-देवीओ-मनुष्यो-पनुष्णीओ-तिर्यचो-तिर्यचणीओ-आसन-झयग-भाज-मात्र-पात्र-प्रक्रिमेरे असुरोनो परिग्रह.-वैदेदियादिनो आरंभ अने परिंगह.-पंचैदियनो प्रश्चह∸टेक-कूट-वापी अने वन विगेरे.-देवकुल-आश्रम-प्रपा-रतूप अने₌गोपुर विगेरे.-प्रांसाय्-गृह-शरण–लेण–आपण-छंगाटक–त्रिक–चतुष्क अने मह।पथ विगेरे.–शकट–रथ∸यान अने मेना विगेरे.–लोढी–कडांबुं अने कडछी विगेरे,-वानव्यंतरो. ज्योतिषिको.-वैमानिको.-पांच हेतु अने पांच अहेतु.-हे भगवन् ! ते ए प्रमागे.-

रै. प्र०—पैरमाणुपोग्गले णं भेते ! एयति, वैयति; जाव-तं तं भावं परिणमति ? १ प्रत्मेह भगवन् । परमाणु पुद्रल कंपे, विशेष कंपे यावत्—ते ते भावे परिणमे?

?. उ०—गोथमा! सिय एयति, वेयति, जाव-परिणमति; सिय णो एयति, जाव-णो परिणमति.

१. उ० — हे गौतम! कदाच कंपे, विशेष कंपे यावत् परिणमे अने कदाच न कंपे यावत् न परिणमे.

र. मूलच्छायाः --परमाणपुद्रको भग्नम् !- एजते, वेष (व्येज) तेः यावत्-त त भाव-परिणमति ? मौतम । साद् एजते, वेपते, यावत्-परिणमति; साद् तो एजते, यावत्-नो परिणमतिः ---अतः

- २. म० -- दुर्णेएसिए ण भंते ! संधे एयति, जाव-परिणमइ!
- २. ड० गोयमा ! सिय एबति, जाव-परिणमाति, सिय णो एयति, जाव-णो परिणमति; सिय देसे एयति, देसे नो एयति.
 - रे. प्र०--तिप्पएसिए णं भंते ! संघे एयति ?
- रे. ड॰ गोयमा ! सिय एयति, सिय नो एयति, सिय देसे एयति—नो देसे एयति, सिय देसे एयति—नो देसा एयंति; सिय देसा एयंति—नो देसे एयति.
 - ४. प्र०-चडप्पणसिए णं भंते ! संघे एयति ?
- ४. ड॰—गोयमा! सिय एयति, सिय नो एयति, सिय देंसे एयति—णो देसे एयति, सिय देसे एयति—णो देसा एयति, सिय देसे एयति—णो देसा एयति, सिय देसा एयति—ना दसा एयति, जहा—चडप्पएसिओ तहा पंचपएसिओ, तहा जाव—अणंतपएसिओ.

- २. प्रo—हे भगवन्! वे प्रदेशनो स्कंघ कंपे यावत्— परिणमे ?
- २. उ०—हे गौतम! कदाच कंपे यावत्-परिणमे-१. कदाच न कंपे यावत्-न परिणमे-२. तथा कदाच एक भाग कंपे, एक भाग न कंपे-३.
 - ३. प्र०--हे भगवन् ! त्रण प्रदेशवाळी स्कंध कंपे ?
- ३, उ०— हे गौतम! कदाच कंपे-१. कदाच न कंपे-२. कदाच एक भाग कंपे, एक भाग न कंपे-३. कदाच एक भाग कंपे, बहु देशो न कंपे-४. कदाच बहु भागो कंपे, एकं भाग न कंपे-४.
 - ४. प्र०—हे मगवन्! चार प्रदेशवाळो स्कंघ कंपे छे?
- 8. उ० हे गौतम! १ कदाच कंपे. २ कदाच न कंपे. ३ कदाच एक भाग कंपे अने एक भाग न कंपे. ४ कदाच एक भाग कंपे अने बहु भागों न कंपे. ५ कदाच बहु मागों कंपे अने एक भाग न कंपे. ६ कदाच घणा भागों कंपे अने घणा भागों न कंपे— जेंग चार प्रदेशवाळा है कंप माठे कहुं तेम पांच प्रदेशवाळा हकंप सुधीना दरेक हकंपे माठे जाणहुं.
- १. षष्टोदेशकान्यस्त्रे कर्मपुद्रअनिर्जरा उक्ता, निर्जरा च चलनम्—इति सप्तमे पुद्रलंचलनम् अधिक्वय इदमाहः—''परमाणु—' इत्यादि. 'सिय एयति ' ति कदाचिद् एजते, कादाचित्कत्वात्—सर्वपुद्रलेख एजनादिधमाणीम् दिप्रदेशिके त्रयो विकृत्यः—१ स्याद् एजनम् , २ स्याद् अनेजनम् , ३ स्याद् देशेन एजनम्—देशेनाऽनेजनं चेति; क्ष्यंशत्वाक्तस्यति. त्रिप्रदेशिके पश्च-आवास्त्यः त एव, क्ष्यपुक्तस्याऽपि तदीयस्य एकस्यांशस्य तथाविधपरिणामेन एकदेशतया विविक्षतत्वात् , तथा ४ देशस्य पुजनम् , देशयोश्चाऽनेजनम्— इति चतुर्थः तथा ५ देशयोरेजनम् , देशस्य चाऽनेजनमिति पश्चमः एवं चतुष्प्रदेशिकेऽपि, नवरमः—पट् , तत्र षष्टो देशयोः एजनम् , प्रदेशयोरेव चाऽनेजनमिति.
- १. छट्टा उदेशकना छेला सूत्रमां कर्मपुद्रलनी निजरा कही छे अने ए निजरा चलनरूप छ माट हवे सातमा उदेशकमां पुद्रलोनी चलन कियानो अधिकार करी आ—['परमाणु—' इत्यादि.] सूत्र कहे छे. ['सिय एयर 'ति] कदाच कंपे, कारण के, दरेक पुद्रलोमां कंपलुं वंगरे धर्मी कादाचित्क छे. द्विपदेशिक स्कंध, वे भागवाळी छे माटे ते वे प्रदेशवाळा स्कंधमां त्रण विकल्प छे:—१ कदाच कंपलुं, २ कदाच न कंपलुं, ३ कदाच एक भागवडे कंपलुं अने एक भागे न कंपलुं. त्रण प्रदेशवाळा स्कंधमां पांच विकल्प छें. ते पांच विकल्प आ प्रमाणे छे:— अण प्रदेशवाळा स्कंधमां वीजा परमाणुनो एक आंश्रा—जे द्वचणुकरूप छे—तेने पण एकदेशपणे विवस्तेलों छे. कारण के, ते जातनुं परिणमन पण धर शके छे माटे अहीं पूर्वे वे प्रदेशवाळा स्कंधमां कसा ते ज त्रण विकल्पो जाणवा, तथा 'एक भागनुं कंपलुं अने वे भागनुं न कंपलुं 'ए चोथो विकल्प छे अने 'वे भागनुं कंपलुं अने एक भागनुं न कंपलुं 'ए पांचमो विकल्प छे. ए प्रमाणे चार प्रदेशवाळा स्कंधमां पण जाणी लेखुं, विशेष ए के, तेमां छ विकल्प थशे, तेमां पांच विकल्प तो हमणां कहा ते जाणवा अने 'वे मागनुं कंपन अने वे प्रदेशनं—वे भागनुं—अकंपन 'ए प्रमाणे छट्टो विकल्प छे.

परमाणुपुत्रलादि अने असिंधाराः

५. ४०--पैरमाणुपोगाले ण भंते । असिघारं वा, खुरधारं षा ओगाहेजा ?

५.-प्र०—हे भगवन् । परमाणुपुत्रलं, तरवारनी धारनी या सजायानी धारनी आश्रय करें ?

मागु अने स्कं-ग्रेमा कंपनने ट-ातो विचार.

। विक्व दिव्हराः

Jain Education International

^{9.} मूलच्छायाः—द्विप्रदेशिको भगवन् ! स्कन्ध एजते, यांवत्-परिणमिति ? गीतम ! स्योद् एजते, यांवत्-परिणमिति; स्याद् नो एजते, यांवत् विष्यते, यांवत् नो एजते, यांवत् नो एजते, यांवत् नो पत्रते, यांवत् नो पत्रते, यांवत् नो पत्रते, यांवत् ने पत्रते, स्याद् वेश एजते, स्याद् वेश एजते श्रिवेशिको भगवन् ! स्कन्ध एजते ? गीतम ! स्याद् एजते, स्याद् देश एजते नो देश एजते स्याद् देश एजते, स्याद् देश एजते स्याद् देश एजते स्याद् देश एजते । स्याद् देश एजते स्याद् देश एजते स्याद् देश एजते नो देश एजते । स्याद् देश एजते स्याद् देश एजते । स्याद् देश एजने । स्याद् । स्याद् देश एजने । स्याद् । स्याद् । स्याद् । स्याद् । स्याद । स्याद् । स्याद् । स्याद् । स्याद् । स्याद् । स्याद् । स्याद । स्याद् । स्याद । स्याद् । स्याद ।

५. उ०--हैता, ओगाहेज्या.

६. प्र० -- से णं भंते ! तरशे छिजेजा वा, भिजेजा वा?

६. ७० -- गोयमा ! णो तिणहे समद्वे, नौ खलु तत्थ सत्थं कमति, एवं जाद-असंखेजपएसिओ.

७. प्र०--अणंतपएसिए णं भंते! खंधे असिधारं वा, खुरधारं वा ओगाहेज ?

७. उ०-- हता, ओगाहेज.

८. प्र०—से णं तत्थ छिजेज वा, भिजेज वा

८. उ०--गोयमा! अत्थेगइए छिज्जेज बा, भिज्जेज वा; अत्थेगइए नो छिज्जेज वा, नो भिज्जेत वा; एवं अगणिक यस्स अञ्झेमञ्झेणं, तिहं णवरं 'श्लियाएउत्त' आणियव्वं, एवं पुक्तलः-संवद्टगस्स महामेहस्स अञ्झेमञ्झेणं, ताहिं 'उल्ले सिया,' एवं गंगाए महानईए पिंडसोयं हव्वं आगच्छेज्जा, तिहं विणिहायं आंवज्जेजन, उदगावत्तं वा, उदगांधदुं वा औगाहेज्ज से णं तत्थं परियावज्जेजन. ५. उ०—हा, आश्रय करे.

६. प्र॰—हे भगवन्! ते धार उपर आश्रित परमाणु पुद्रल छेदाय, भेदायं?

६. ड० —हे गौतम! ते अर्थ समर्थ नथी—नक्की, ते परमाणु पुद्रलमां, शस्त्र कमण करी शके नहि, ए प्रमाणे यावत्—असंख्य प्रदेशवाळा स्कंधो माटे समजी लेवुं अर्थात् एक परमाणु या असंख्यप्रदेशवाळो स्कंध शस्त्रद्वारा छेदाय नहि तेम मेदाय नहि.

७. प्र०—हे भगवन्! अनंतप्रदेशवाळो स्कंध तरवारनी धारनो या सजायानी धारनो आश्रय करे?

७. उ०--हा, आश्रय करे.

८. प्र०—ते तरवारनी या सजायानी धार उपर भाश्रित अनंतप्रदेशवाळो स्तंघ छेदाय, भेदाय?

८. उ० — है गौतम! कोइ एक छेदाय अने भेदाय, तथा कोइ एक न छेदाय अने न भेदाय. ए प्रमाणे प्रमाणु पुद्रल्थी अनंत प्रदेशवाळा स्त्रंध सुधीना दरेक पुद्रलो प्रके 'अग्निकायनी बचोवच प्रवेश करे 'ए प्रमाणेना प्रश्नोत्तरो बरवा, विशेष, ज्यां संभवे लां 'छेदाय, भेदाय 'ने बदले 'बळे 'ए प्रमाणे 'कहेवुं. ए प्रमाणे 'पुष्करसंवर्त नामना मोटा मेधनी बचोवच प्रवेश करे 'ए प्रमाणेना प्रश्नोत्तरो करवा, ते स्थळे 'छेदाय, भेदाय 'ने बदले 'भीनो थाय ' एम कहेवुं; ए प्रमाणे गंगा महानदीना प्रतिश्रोत—प्रवाह—मां, शीध ते प्रमाणु पुद्रलादि आवे अने ल्यां प्रतिस्खलन पामे 'अने 'उदकावर्त या उदक बिंदु प्रत्ये प्रवेश करे अने ते (प्रमाण्यादि) ल्यां नाहा पामे 'ए, संबंधे प्रश्नोत्तरो करवा.

२. पुद्रलाऽधिकारादेव इदं सूत्रवृन्दमः—'परमाणु ' इसादि. 'ओगाइंज्ज ' ति अवगृहित आश्रयेत, 'छिदोत ' द्विधामार्व यायात्, 'भिद्येत ' विदारणभावमात्रं यायात्. 'नो खलु तत्थ सत्थं कमिति ' ति परमाणुत्वात्, अन्यथा परमाणुत्वमेव न स्याद् इति, 'अत्थेगइए छिज्जेज्ज ' ति तथाविधवादरपरिणामत्वात्, 'अत्थेगइए नो छिज्जेज्ज ' ति सूक्ष्मपरिणामत्वात्, 'अल्थे सिय ' ति आर्दो भवेत्, 'विणिहायं आवज्जेज्ज ' ति प्रतिस्खलनम् आपदोत, 'विरियावज्जेज्ज ' ति पर्यापदेवत विनश्येत्.

२. पुद्रलंनो अधिकार होवाथी ज आ ['परमाणु' इत्यादि] सूत्रनो समूह कहें छे, ['ओगाहेंज 'त्ति] आश्रय करे. 'छिधेत ' एटले द्विधाभावने पामें ने कटका थाय; 'भियेत ' एटले कक्त चीरा जेतुं पड़े. ['नो खंख तत्थ सत्थं कमित 'ति] परमाणुपणाने लीधे नकी तेमां (-परमाणुमां) शक्ष प्रवेश करी शके नहि, अन्यथा—जो परमाणुमां पण शक्ष प्रवेश करे-तो ते परमाणु कहेवाय ज नहि. ['अत्थेगइए छिजेज 'ति] तेवा प्रकारतं मोटुं परिणाम होवाथी केटलाक छेदाय अने ['अत्थेगइए नो छिजेज 'ति] स्क्ष्म परिणाम होवाथी केटलाक केदाय, ['उक्षे सिय 'ति] मीनो थाय. ['विणिहायमायजेज 'ति] प्रतिस्खलन पामे, ['परियायजेज 'ति] विनाश पामे.

पर्माणुनां शस्त्र पेसे. सःम-बाद्यर प

माम.

र. मूलच्छायाः—हन्त, अवगाहेत. तद् भगवन् ! तत्र छियेत् वा, भियेत वा ? गौतम ! नाऽयम् अर्थः समर्थः, नो खल तत्र शलं कामति, एवं यावत्-असंख्येयप्रदेशिकः अनन्तप्रदेशिको भगवन् ! स्कन्धः अतिधारां वा, क्षुष्धारां वा अवगाहेत ? हन्त, अवगाहेत. तत् तत्र छियेत वा, भियेत वा ? गौतम ! अरत्येककः छियेत वा, भियेत वा; अरत्येकको नो छियेत वा, नो भियेतं वा; एवम् अनिकायस्य मध्येमध्येन, तत्र नवरम्- ध्मायेत-अणित्यम्,एवं पुष्कलसंवर्तवस्य महामेषस्य मध्यंमध्येन, तत्राऽद्यः स्यात्-एवं गङ्गायाः महानयाः प्रतिक्षोतः शीव्रम् आगच्छेत्, तत्र विविधातम् शाययेत, उदकाद्वर्दं वा, उदकाद्वरदं वा अवगाहेत तस्मात् तत्र पर्यापयेतः—अनु०

परमाणुपुद्रलादिना विभागो.

- ९. प्र०--परमाणुपोग्गले ण भंते ! । के संअड्डे, समज्हे, सपएसे; उदाहु अणड्रे, अमन्त्रे, अपएसे ?
- ९. उ०--गोयमा ! अणड्डे, अमन्झें, अपएसे; नो सअड्डे, नो समज्झे, नो सपएसे.
- १०. प्र०--दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे किं सअड्डे, समज्झे, सपएसे; उदाहु अणड्डे, अमज्झे, अपएसे ?
- १०. उ०--गोयमा ! सअङ्के, अमञ्झे, सपएसे; णो जणडुे, णो समज्झे, जो अवरसे.
 - ११. प्र०—तिप्पएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा !
- ११. ड०-गोयमा ! अणड्रे, संमज्झे, संपएसे; नो सअड्रे, णो अमज्हो, णो अपएसे, जहाँ दुप्पएसिओ तहा जे समा ते भाणियव्या, जे विसमा ते जहा तिप्पएसिओ तहा भाणियव्या.

- १२. ४० संखेजपएसिए णं भते ! कि संघे सर्वेड्डे, पुच्छा ?
- १२. उ०--गोयमा ! सिय सअड्डे, अमज्झे, सपएसे; सिय अणडे, समञ्झे, सपएसे; जहा संसेजपएसिओ तहा असंसेज-परासिओ वि, अणंतपरिसओ वि.
- ३. ' दुष्पएसिए ' इत्यादि. यस्य स्कन्धस्य समाः प्रदेशाः स सार्धः, यस्य तु विषमाः स समध्यः, संख्यैयप्रदेशिकादिस्तु स्कन्धः समप्रदेशिकः--इतरश्चः तत्र यः समप्रदेशिकः स साधीऽर्मध्यः, इतरस्तु विपरीत इति.
- ३. [' दुप्पएसिए ' इत्यादि.] जे स्कंधना समसंस्थावाळा-वेकी संस्थावाळा-वे, चार, छ, आठ, इत्यादि सस्थावाळा-प्रदेशो होय ते स्कंध सार्ध-अर्ध सहित-कहेवाय अने जे स्कंधना विषमसंख्यायाळा-एकी संख्यायाळा-त्रण, पांच, सात, इत्यादि संख्यायाळा-प्रदेशो होय ते स्कंध समध्य-मध्यभाग सहित-कहेवायः संख्येयप्रदेशवाळी, असंख्येयप्रदेशवाळी, अने अनंतप्रदेशवाळी स्कंध, समप्रदेशिक-समप्रदेशवाळी अने विषमप्रदेशवाळो पण होय; तेमां जे समप्रदेशवाळो होय ते सार्घ छ अने अमध्य-मध्यरहित-छे अने जे विषमप्रदेशवाळो होय ते समध्य छै अने अनर्ध−अर्धभाग रहित−छे∙

- ९. प्र०--हे भगवन् ! शुं परमाणु पुद्रल, सार्ध-अर्ध सहित-छे, मध्य सहित छे अने प्रदेश सहित छे के अर्थ रहित छे, मध्य रहित छे अने प्रदेश रहित छे ?
 - ९. उ०-हे गौतम ! परमाणु पुद्रल अनर्द है, अमध्य छे अने अप्रदेश छे पण सार्ध नधी, समध्य नधी अने सप्रदेश नथी.
 - १०. प्र० हे भगवन् ! वे प्रदेशवाळी स्कंध, हां साध, समध्य अने सप्रदेश छे के अनर्ध, अमध्य अने अप्रदेश छैं ?
 - १०. उ० हे गौतम ! ते वे प्रदेशवाळी स्कंध, सार्ध छे, सप्रदेश के अने मध्य रहित छे पण अनर्ध नथी, समध्य नथी अने अप्रदेश नथी.
 - ११. प्र० हे भगवन् ! त्रण प्रदेशवाळो स्तंध-(ए विषे) ए प्रमाणे प्रश्न करवो,
 - ११. उ०-हे गौतम ! ते त्रण प्रदेशवाळो स्कंध अनर्ध छे, समध्य छे अने सप्रदेश छे पण सार्घ नथी, अमध्य नथी अने अप्रदेश नथी. जेम, बे प्रदेशवाळा स्कंधने माटे सार्घादि विभाग दर्शाव्यो छे, तेम जेओ सम स्कंधो छे एटले समसंख्यावाळा-वैकी संख्यावाळा (चार प्रदेशवाळा, आठ प्रदेशवाळा इत्यादि) स्कंधों छे, तेने माटे जाणी लेवुं अने जेओ विषम स्कंधों छे-एकी संख्यावाळा (पांच प्रदेशवाळा, सात प्रदेशवाळा इत्यादि) स्कंधो छे तेने माटे, जेम त्रण प्रदेशवाळा स्कंध संबंधे कहाूं तेम जाणतुं.
 - १२. प्र० हे भगवन् ! संख्येयप्रदेशवाळी स्कंध शुं सार्ध छे ? (इत्यादि प्रश्न करवो.]
 - १२. उ०-हे गौतम! कदाच सार्घ होय, अमध्य होय अने सप्रदेश होय; कदाचे अनर्ध होय, समध्य होय अने सप्रदेश होय. जेम संख्येय प्रदेशवाळी स्कंध कहारे तेम असंख्येय प्रदेशवाळी स्कंध अने अनंत प्रदेशवाळी स्कंध पण जाणी लेवी.

१. मूलच्छायाः--परमाणुपुद्रलो भगवन् ! कि सार्थः, समध्यः, सप्रदेशः; उताहो अनर्थः, अमध्यः, अप्रदेशः ? गीतम ! अनर्थः, अमध्यः, अप्रदेशः; नो सार्थः, नो समध्यः, नो समदेशः. दिप्रदेशिकः स्कन्धः कि सार्थः, समध्यः, सप्रदेशः; उताहो अनर्थः, अमध्यः, अप्रदेशः ? गीतमः ! सार्थ:, अमध्यः, सप्रदेशः; नो अनर्थः, नो समध्यः, नो अप्रदेशः. त्रिप्रदेशिको अगवन् ! स्कन्धः पुन्छा ? गौतम । अनर्थः, समध्यः, सप्रदेशः; नो सार्थः, नो अमध्यः, नो अप्रदेशः, यथा द्विप्रदेशिकस्तथा ये समास्ते भणितव्याः, ये निषमास्ते यथा त्रिप्रदेशिकस्तथा भणितव्याः. संख्येयप्रदेशिको शुगवन् ! स्कन्धः कि सार्धः, प्रच्छा ? गीतम ! स्यात् स-अर्धः, अमध्यः, सप्रदेशः; स्याद् अनर्धः, समध्यः, सप्रदेशः; यथा संख्येयप्रदेशिकसाम्रा ः त्रवेद्येयप्रदेशिकोऽपि, अनम्तप्रदेशिकोऽपिः—धतु०

।संस्या-अर्थ-|संख्या-मध्य-

परमाणुपुद्रलादिनी परस्पर स्पर्शनाः

१२. प्र०—परमाणुपोरगले ण भंते ! परमाणुपोरगलं फुस-माणे कि देसेणं देसं फुसइ १, देसेणं देसे फुसइ २, देसेणं सव्वं फुसइ २, देसेहिं देसं फुसइ, ४ देसेहिं देसे फुसइ ५, देसेहिं सव्वं फुसइ ६, सव्वेणं देसं फुसइ ७, सव्वेणं देसे फुसइ ८, सव्वेणं सव्वं फुसइ ९ ?

१३. उ०—गोयमा! णो देसेणं देसं फुसइ १, णो देसेणं देसे फुसइ २. णो देसेणं सन्नं फुसइ ३. णो देसेहिं देसं फुसइ ४. नो देसेहिं देसे फुसइ ५. नो देसेहिं सन्नं फुसइ ६. नो सन्नेणं देसं फुसइ ७. णो सन्नेणं देसे फुसइ ८. सन्नेणं सन्नं फुसइ ८. सन्नेणं सन्नं फुसइ ९. एवं परमाणुपोग्गले दुष्पएसियं फुसमाणे सत्तम—णव-मेहिं फुसइ, परमाणुपोग्गले तिष्पएसियं फुसमाणे निपच्छिमएहिं तिहिं फुसइ, जहा परमाणुपोग्गले तिष्पएसियं फुसाविओ एवं फुसावेअन्नो जाव—अणंतपएसिओ.

१४. प्र०—दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे परमाणुपोग्गलं फुस-माणे पुच्छा ?

?४. उ०—तिय-नवमेहिं फुसइ, दुणएसिओ दुणएसियं फुसमाणो पढम-तिय-सत्तम-नवमेहिं फुसइ, दुणएसिओ तिप्य-एसियं फुसमाणो आइछएहि य, पिछछएहि य तिहिं फुसइ, मिझमएहिं तिहिं विपिडिसेहेयव्वं, दुणएसिओ जहा तिप्पएसियं फुसाविओ एवं फुसावेअव्यो जाव-अणंतपएसियं.

१५. प्र०—तिपएसिए ण भंते ! खंधे परमाणुपोन्गलं फुस-माणे पुच्छा ? १३. प्र०—हे भगवन् ! परमाणु—पुद्गलने स्पर्श करतो परमाणु पुद्गल, शुं एक भागवडे एक भागवो स्पर्श करे १, एक भागवडे घणा भागोनो स्पर्श करे २, एक भागवडे सर्वनो स्पर्श करे ३, घणा भागो द्वारा एक देशने स्पर्श ४, घणा देशो द्वारा घणा देशोने स्पर्शे ५, घणा देशोद्वारा सर्वने स्पर्शे ६, सर्ववडे एक भागने स्पर्शे ७, सर्ववडे घणा भागोने स्पर्शे ८, के सर्ववडे सर्वने स्पर्शे ९ ?

१३. इ०—हे गौतम! १ एक देशथी एक देशने न स्पर्शे, २ एक देशथी वणा देशोने न स्पर्शे, ३ एक देशथी सर्वने न स्पर्शे, ४ वणा देशोथी एकने न स्पर्शे, ५ वणा देशोथी वणा देशोथी सर्वने न स्पर्शे, ७ सर्वथी एक देशने न स्पर्शे, ६ वणा देशोथी सर्वने न स्पर्शे, ७ सर्वथी एक देशने न स्पर्शे, ८ सर्वथी घणा देशोने न स्पर्शे, ९ पण सर्वथी सर्वने स्पर्शे, ९ पण सर्वथी सर्वने स्पर्शे, ए प्रमाणे वे प्रदेशवाळा स्कंपने स्पर्शतो परमाणु-पुद्गळ सातमा अने नवमा विकल्प वहे स्पर्शे एटळे ७ सर्व वहे एक मागने स्पर्शे यातो ९ सर्व वहे सर्वने स्पर्शे, वळी, त्रण प्रदेश थाळा स्कंपने स्पर्शतो परमाणु-पुद्गळ छेल्ला त्रण—७ ना, ८ मा अने नवमा विकल्पवहे स्पर्शे एटळे ७ सर्वथी एक देशने स्पर्शे, ८ सर्वथी वणा भागोने स्पर्शे अने ९ सर्वथी सर्वने स्पर्शे, जे प्रकारे त्रण प्रदेशवाळा स्कंपने परमाणु पुद्गळनो सार्श कराव्यो ते प्रकारे चार प्रदेशवाळा, पांच प्रदेशवाळा यावत्—अनंत प्रदेशवाळा स्कंपनी साथे परमाणु—पुद्गळनो स्पर्श कराव्यो.

१४. प्र०-हे भगवन्! परमाणुपुद्गलने स्पर्शतो बे प्रदेश-वाळो स्कंघ केवी रीते स्पर्शे १ प्रश्न करवो.

१४. उ०—(हे गौतम!) त्रीजा अने नवमा विकल्प वर्डे स्पर्शे. एवी रीते वे प्रदेशवाळा स्कंघने स्पर्शतो द्विप्रदेशिकस्कंघ प्रथम, तृतीय, सप्तम अने नवमा विकल्प वर्डे स्पर्शे; त्रण प्रदेश-वाळा स्कंघने स्पर्शतो द्विप्रदेशिकस्कंघ पेळा त्रण विकल्पो वर्डे अने छेळा त्रण विकल्पो वर्डे स्पर्शे अने वच्छा त्रणे पण विकल्पो वर्डे प्रतिषेध करवी, जेम द्विप्रदेशिकस्कंघने त्रण प्रदेशवाळा स्कंघनी स्पर्शना करावी ए प्रमाणे चार प्रदेशवाळा, पांच प्रदेश-वाळा यावत—अनंत प्रदेशवाळा स्कंघनी स्पर्शना करावती.

१५. प्र०—हे भगवन् ! परमाणुपुद्गळने स्पर्श करतो त्रण प्रदेशवाळो स्कंध केवी रीते स्पर्शे ? ए प्रश्न करवो.

^{9.} मूलच्छायाः—परमाणुद्भलो भगवन् । परमाणुद्भल स्प्रामानः कि देशेन देशं स्प्रशंति, देशेन देशान् स्प्रशंति, देशेन सर्व स्प्रशंति, देशैः देशं स्प्रशंति, सर्वेण देशं स्प्रशंति, नो देशैः देशं स्प्रशंति, नो देशैः देशं स्प्रशंति, नो देशैः देशं स्प्रशंति, नो देशैः सर्वे स्प्रशंति, नो देशैः देशं स्प्रशंति, नो देशैः सर्वे स्प्रशंति, नो देशैः देशं स्प्रशंति, नो देशैः देशं स्प्रशंति, नो देशैः सर्वे स्प्रशंति, नो सर्वेण देशान् स्प्रशंति, सर्वेण सर्वं स्प्रशंति; एवं परमाणुपुद्भलो द्विप्रदेशिकं स्प्रशानः सप्तमः—नवमाभ्यां स्प्रशंति, परमाणुपुद्गलिप्रदेशिकं स्पर्शानः एवं स्पर्शयित्वयो यावत्—अनन्तप्रदेशिकः द्विप्रदेशिको भगवन् । स्दन्यः परमाणुपुद्गले स्प्रशानः प्रथमं परमाणुपुद्गले स्प्रशानः परमाणुपुद्गले स्पर्शानः परमाणुपुद्गले स्पर्शानः परमाणुपुद्गले स्पर्शानः परमाणुपुद्गले स्पर्शानः परमाणुपुद्गले स्पर्शानः अविष्य तिभिः स्पर्शाति, दिप्रदेशिको द्विप्रदेशिकं स्पर्शानः प्रथमं विप्रदेशिकं स्पर्शानः परमाणुपुद्गले स्पर्शानः अविष्य तिभिः स्पर्शाति, मध्यमैकिभिः विप्रतिषेधियत्वयम् , द्विप्रदेशिको यथा तिप्रदेशिकं स्पर्शितः एवं स्पर्शितव्यः, यावत्—सुनन्तप्रदेशिकम्. त्रिप्रदेशिको भगवन् । स्कन्धः परमाणुपुद्गले स्प्रामानः पर्द्याः—अनु०

१५. उ०-तैतिय-छट्ट-नषमेहिं फुसइ, तिपएसिओ दुपए-सियं फुसमाणो पडमएणं, ततिएणं, चउत्थ-छट्ट-सत्तम-नवमेहिं फुस इ, तिपएसिओ तिपएसिअं फुसमाणो सब्बेसु वि ठाणेसु जाव-अणंतपरसिएणं संजो**एयव्यो, जहा तिपरसिओ एवं जा**व-अणंतपएसिओ भाणिअन्तो.

१५. उ०—(हे गौतम!) त्रीजा, छहा अने नवमा विकल्प वडे स्पर्शे, द्विप्रदेशिकने स्पर्शे करतो त्रिप्रदेशिकस्कंध, प्रथम तृतीय, चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम अने नवमा विकल्पो बडे स्पर्शे; पुसई, जहा तिपएसिओ तिपएसिअं पुसाविओ एवं तिप्पएसिओ अिप्रदेशिकने स्पर्श करतो त्रिप्रदेशिक स्कंध सर्व स्थानोमां स्पर्शे एटले नवे विकल्पवडे स्पर्शे. जेम त्रिप्रदेशिकने त्रिप्रदेशिकनो स्पर्श कराव्यो ए प्रमाणे त्रिप्रदेशिकने चार प्रदेशिक, पांच प्रदेशिक यावत्-अनंत प्रदेशिक सुधीना बधा स्कंधो साथे संयोजवो अने जेम त्रिप्रदेशिक स्कंध परले कह्युं तेम यावत्-अनंतप्रदेशिक सुधीना स्कंध परत्वे कहेतुं.

४. १ परमाणुपोरमले ण भंते! १ इत्यादि, १ किं देसेणं देसं १ इत्यादयो नव विकल्पाः, तत्र देशेन स्वकीयेन, देशं तदीयं स्पृशति, देशेन इत्यनेन देशम्, देशान्, सर्वम् इत्येवंशब्दत्रयपरेण त्रयः. एवं देशैरित्यनेन देशम्, देशान्, [सर्वम्-३]. सर्वेण इसनेन च त्रय एवेति. स्थापना--

१. देशेन देशम्.

४. देशै: देशम् .

७. सर्वेण देशम् .

२. देशेन देशान्.

५. देशैः देशान् .

८. सर्वेण देशान .

३. देशेन सर्वम् .

६. देशै: सर्वम् .

९. सर्वेण सर्वम् .

अत्र च 'सर्वेण सर्वम् ' इसेक एव घटते, परमाणोर्निरंशत्वेन शेषाणाम् असंभवात् , ननु यदि 'सर्वेण सर्वं स्पृशति ' इत्युच्यते तदा परमाण्योः एकत्वाऽऽपंत्तेः कथमपराऽपरपरमाणुयोगेन घटादिस्कन्धनिर्वृत्तिरिति ? अत्रोच्यतेः—' सर्वेण सर्वं स्पृशति ' इति कोऽर्थः— े स्वात्मना तौ अन्योऽन्यस्य लगतः, न पुनरर्धादंशेन-अद्धीदिदेशस्य तथोरमावात् , घटाद्यमावाऽऽपत्तिसतु तदैव प्रसञ्यत यदा तयोरेकला-- SSपतिः, न च तयोः सा, खरूपमेदात् . 'सत्तम-नवमेहिं फुयइ 'ति 'सर्वेण देशम् , ' 'सर्वेण सर्वम् ' इसेता याम्-इसर्थ:. तत्र यदा द्विप्रदेशिकः प्रदेशद्वयाऽवस्थितो भवति तदा तस्य परमाणुः ' सर्वेण देशं स्पृशति,' परमाणोः तदेशस्यैव विषयत्वात् , यदा तु द्विप्रदेशिकः परिणामसौक्ष्म्याद् एकप्रदेशस्थो भवति तदा तं परमाणुः ' सर्वेण सर्वं स्पृशति ' इत्युच्यते. ' निपच्छिमएहिं तिहिं फुसइ ' ति त्रिप्रदेशिकम् असौ स्पृशंस्त्रिभिरन्त्यैः स्पृशति, तत्र यदा त्रिप्रदेशिकः प्रदेशत्रयस्थितौ भवति तदा तस्य परमाणुः— ' सर्वेण देशं स्पृशति, ' परमाणोस्तदेशस्यैव विषयत्वात् . यदा तु तस्यैकत्र प्रदेशे है। प्रदेशी, अन्यत्र एकोऽवस्थितः स्यात् तदा एकप्रदेशस्थितपरमाणुद्धयस्य परमाणोः स्पर्शविषयत्वेन 'सर्वेण देशौ स्पृशति 'इत्युच्यते. ननु द्विप्रदेशिकेऽपि युक्तोऽयं विकल्पः, तत्राऽपि प्रदेशद्वयस्य स्पृश्यमानत्वात् ? नैवम् , यतस्तत्र द्विप्रदेशमात्र एवाऽत्रयवीति कस्य देशौ स्पृशति ?, त्रिप्रदेशिके तु त्रयाऽपेक्षया द्वयस्य स्पर्शने एकोऽवशिष्यते, ततश्च ' सर्वेण देशौ ' त्रिप्रदेशिकस्य स्पृशतीते व्यपदेशः साधुः स्याद् इतिः यदा तु एकप्रदेशाऽवगा-ढोऽसौ तदा ' संबेण सर्व स्पृशति ' इति स्यादिति. ' दुप्पएसिए णं ' इसादि. ' तइय-नवमे। हें फुसह ' ति यदा द्विप्रदेशिको द्विप्रदेशस्यस्तदा परमाणुं 'देशेन सर्व स्पृशति ' इति तृतीयः. यदा तु एकप्रदेशाऽयगाढोऽसौ तदा ' सर्वेण सर्वम् ' इति नवमः. ' दुप्पएसिओ दुप्पएसियं ' इत्यादि. यदा द्विप्रदेशिको प्रत्येकं द्विप्रदेशावगाढौ तदा ' देशेन देशम् ' इति प्रथमः, यदा तु एकः एकन्न, अन्यस्तु द्वयोस्तदा ' देशेन सर्वम् ' इति तृतीय:. तथा ' सर्वेण देशम् ' इति सप्तमः. नवमस्तु प्रतीत एवेति-अनया दिशाऽन्ये-ऽपि व्याख्येया इति.

8. ['परमाणुपोग्गले णं भंते ! ' इत्यादिं.] [' किं देसेणं देसं ' इत्यादि –] नव विकल्पो छे, तेमां देशवडे एटले पोताना भागवडे, रेना-बीजा परमाणुना-देशनो स्परी करे. 'देशेन 'ए शब्द साथ 'देशम्, देशान्, अने सर्वम्'ए त्रण शब्दो जोडवाथी त्रण विकल्प थाय, ए प्रकारे 'देशैः 'ए शब्द साथे 'देशम्, देशान्, सर्वम्, ए त्रण शब्दो जोडवाथी बीजा त्रण विकल्प थाय अने 'सर्वेण ' ए शब्द साथे ंदेशम्, देशान्, सर्वम्, ए त्रण शब्दो जोडवायी अन्य त्रण विकल्प थाय, ए प्रकारे सर्व मळी नव विकल्प थाय. ते नव विकल्पो करवानी रीत आ प्रमाणे छे:---

९. एक देश बीजा देशने.

8. अनेक देशो एक देशने.

७. आखो माम एक देशने.

२. एक देश बीजा देशोने.

५. अनेक देशो अनेक देशोने.

८. आखो भाग घणा देशोने.

३. एक देश आखा भागने.

६. अनेक देशो आखा भागने.

९. आखो भाग आखा भागने.

[😦] १. मूलच्छायाः —तृतीय-पष्ट-नवमैः स्प्राति, त्रिप्रदेशिको दिप्रदेशिकं रश्शमानः प्रथमेन, चत्रीयेन, चतुर्थ-षष्ट-सप्तम-नवमैः स्शाति, त्रिप्रदेशिक कलिप्रदेशिक स्वशामानः सर्वेषु अपि स्थानेषु स्पृशति, यथा त्रिप्रदेशिकस्थिप्रदेशिकं स्पार्शत एवं त्रिप्रदेशिको यावत्-अनन्तप्रदेशिकेन संयोजियतव्यः, यथा त्रिप्रदेशिकः एवं यावत्-अनन्तप्रदेशिको भणितव्यः-अनु०

ते नवे विकल्पोमां अहिं एक छेछो-नवमो-' सर्वेण सर्वम् 'ए एक विकल्प ज घटे छे, प्रगः बीजा विकल्पो घटता नथी. कारण के. परमाणु, अंश-माग-रहित छे माटे बाकीना विकल्पोनी परमाणुमां असंभव छे शं० - जो कदाच ' सर्वेण सर्वम् ' एटले ' बवा बडे बवाने शंका. स्पेर्री ' ए विकल्प स्वीकारवामां आत्रे तो, वे परवाणुनी एकता थइ जाय छे, अने ते एकता थवाश्री जुदा जुद्दा परमाणुओना योगश्री ने घट वर्गेर स्कंघो बने छे ते केम बनरो है समाठ--'सर्वेग सर्वे स्ट्राति 'ए विकलातो एवो अर्थ नथी के, वे परमाणुत्रो परस्यर मळी जाय, पण ते बे सत्तावान. परमाण परस्पर एक बीजानी स्पर्श पोते समस्त खात्मबंडे. करें, कारण के, परमाणुओगां अर्ध वेगरे विभाग नथी माटे ते परमाणुओ अर्ध बगेरे भागवंडे सार्शी शकता नथी. वळी, घटादि पदार्थना अभावनी आपति तो त्यारे ज होइ शके ज़्यारे ते वे परमाणुओनी एकता थई जती होय. परंत ते बन्ने परंमाणुओना खल्पनी जुदाइ होवाथी ते बेनी एकता थती नथी, अने तेम होवाथी पूर्वोक्त आपत्ति आवती नथी. िसत्तम-नयमेहिं फुसइ 'ति] ७ ' सर्ववडे देशने 'अने ९ ' सर्ववडे सर्वने 'ए वे विकरत्वडे स्पर्धे छै. तेगां ज्यारे वे प्रदेशवाळी स्क्रीय, आंकाराना द्विप्रदेशिक अने • वे प्रदेशमां रहेरो होय त्यारे परमाणु, ते स्कंधना देशने सर्वबडे-पोजाना समस्त आत्माबडे-स्पर्ते छ (७) कारण के, परमाणुनो विषय, ते स्कथना देशनो ज छे अर्थात् आकातना वे प्रदेशमां स्थित द्विपदेशिक स्कंबना देशने ज परमाणु स्पर्शी शके छे अने ज्यारे ते द्विप्रदेशिक स्कंध परिमाजनी सुक्ष्मताथी आकाराना एक प्रदेशमां स्थित होय त्यारे 'परमाणु, पोताना सर्वात्मवडे ते स्कंवनां सर्वात्मने अडे छे ' (९) ए प्रमाव कहेवांन के. [' निपच्छिमएहिं तिहिं फुसइ ' ति] त्रण प्रदेशवाळा सँकंधने स्पर्शतो ए परमाणु, तद्दन छेला त्रण विकलवडे अंड छे, तेमां ज्यारे विप्रदेशिक अने कुण देरेशवाळी स्कंघ आकाशना जण प्रदेशमां रहें हो हो वारे परमाणु, पोताना सर्वात्मुबंदे तेना एक देशने अंडे हे; कार्ण के, परमाणुने तमे प माणु. प्रकारे रहेला ते त्रिप्रदेशिक स्कंधना देशने ज अङ्जानुं सामर्थ्य छे (७) ज्यारे ते त्रिप्रदेशिक स्कंधना वे प्रदेश, एक आकार प्रदेशमां रहेला होय अने बीजो एके प्रदेश अन्यत्र रहेलो होय त्यारे तो एक आकाश प्रदेशमां रहेला ने परमाणुने अडवातुं सामर्थ्य एक परवाणु मं होवाधी ' पोर्ताना बधावड़े वे देरीने अड़े हे ' एम कहेवाय हे (८) रां०-- पौताना बयांत्र डे वे देशीने अड़े हे ! आ विकर्ण जैम त्रिवंशिक स्कंधमां घटाव्यी का का तिम वे प्रदेशवाळा रकंधमां पण घटवो जोइए, कारण कें, त्यां पण ते दिप्रदेशिंक रकंधना वन्ने प्रदेशोने ते परमाणु पोताना सर्ववडे अडे छे. माटे ते विकल्प द्विप्रदेशिक स्कंधमां केम दर्शाव्यो नथी ? समा०--ते प्रमाणे द्विप्रदेशिक स्कंधमां घटतुं नथी. कारण के, त्यां द्विप्रदेशिक स्कंध पोते ज सम.पान. अवयवी छे पण कोइनो अंश नथी माटे एम केम कहेवाय के, 'बधावडे वे देशोने अडे छे 'अने विपदेशिक स्कंपमां तो वंग प्रदेशनी अपेक्षाए बेनो स्पर्श करतां एक प्रदेश बाकी रहे छे अर्थात् तेना जे बे परमाणु-एक आकाश प्रदेशमां रहेटा छे ते बन्ने, जुदा आकाश प्रदेशमां हिट तेना एक परमाणुना वे अंशो-देशो-छे, अने एक परमाणु ते वे देशोने अंडे छे माटे 'सर्ववडे वे देशोने अंडे छे 'ए प्रकारनी व्यादेश-कहेबुं-संगत छे? ज्यारें ए त्रिप्रदेशिक स्कंध, आकाशना एक प्रदेशमां स्थित होय त्यारे तो (९) ' सहस्त आत्मवडे समस्त आत्माने अडे छे ' ए नवनो विकल्प कहेवाय. ['दुप्पएसिए मं ' इत्यादि.] ['तदय-नवमेहिं, फुसद 'ति] ज्यारे द्विप्रदेशिक स्कंघ, आकाशना वे प्रदेशमां रहेली होय त्यारे .पोताना एक देशवडे परमाणुना सर्वातमने स्पर्श करे छे, माटे त्यां ' एक भागवड़ सर्वने अडे छे ' ए त्रीजो विकल्प लागे अने ज्यारे ते हिंपदेशिँक रकंघ, आकाशना एक प्रदेशमां स्थित होय त्यारे पोताना सर्वात्मवंडे परमाणुनाः सर्वात्मने अंडे छे, माँटे त्यां व सर्ववंडे सर्वने अंडे छे ५ ए नवमो विकला लागे. [' दुप्पएसिओ दुप्पएसियं ' इत्यादि.] ज्यारे वेत्रे द्विप्रदेशिक स्कंधी पाँते प्रत्येक प्रत्येक वन्ते आकाश प्रदेशमां स्थित होक त्यारे दिन्ने शिक अने परस्पर एक भागवेड एक भागने अंड छे, माटे त्यां १ एक देशवेड एक देशने अंड छे १ ए प्रथम विकल्प लागे, अने ज्यारे एक द्विप्रदेशिक स्कंध, एक आकाश प्रदेशमां स्थित होय अने बीजो द्विपदेशिक स्कंध, बे आकाश प्रदेशमां होय त्यारे ' एक देशवडे सर्वने अडे छे ' ए त्रीजो भंग लागे छे; कारण के, वे आकाश प्रदेशमां स्थित द्विप्रदेशिक स्कंघ, पोताना एक भागवडे एक आकाश प्रदेशमां रहेला द्विप्रदेशिक स्कंघना सर्व भागोने स्पर्शी शके छे. तथा ' सर्वत्रहे देशने अहे छे ' ए सातमो विकल्प जाणवी, कारण के, एक आकाश प्रदेशमां स्थित द्विप्रदेशिक स्कंध पीताना सर्वात्मवहे वे आकाश प्रदेशमां स्थित द्विपदेशिक स्कंघना एक देशने अहे छे. नवमो विकल्प तो प्रतीतः संस्पष्ट-जे- छे-आ दिशावहे-आ प्रकारे-बीजाओनुं पण ध्याख्यान करवं.

परमाणु अने द्विप्र-देशिक.

दिप्रदेशिक.

परमाणुपुद्गलादिनी संस्थिति

१६. प्रo—पैरमाणुपोग्गले णं भंते ! कालओ केवाचरं होइ ?

१६..उ०--गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अ-संखेळां कालं. एवं जाव-अणंतपएसिओ.

१७. प्र०-एगपएसोगाडे णं भंते । पोग्गलं सेए तिम ष्ट्रे, अन्याम चा ठाणे कालओ केनचिरं होइ?

१६. प्र०—हे भगवन्! परमाणुपुद्रछ, काळथी क्यां सुधी रहे?

१६. उ०— हे गौतम ! परमाणुपुद्रल, ओछागां ओछुं एक सगय सुधी रहे अने वधारेमां वधारे असंख्य काल सुधी रहें; ए प्रमाणे यावत् अनंतप्रदेशिक सुधीना स्कंघ माटे समजी लेर्बुं. 🔧

१७, प्र० — हे भगवन् ! एक आकाश प्रदेशमां स्थित पुद्रल, उंगां होय ते स्थाने अथवा बीजे स्थाने काळथी क्यां सुधी सकंप रहें ?

१: मूळच्छायाः - परम णुपुद्रको भगवन् । कालतः कियविरं भवति १ गीतम । जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन असंख्येयं कालम् , एवं यावतः अनन्तप्रदेशिकः. एकप्रदेशावगाढो भगवन् । पुरुषः सेजलास्मिन् वा स्थाने, अन्यस्मिन् वा स्थाने कालतः कियन्तिरं भवतिः—अनु

१७. उ०-गीयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोर्सणं आवित्याए असंखेजइभागं, एवं जाव-असंखेजपएसोगाहे.

१८. प्र०-एगपएसोगाढे णं भंते ! पीग्गले निरेए कालओ केवचिरं होइ ?

१८. उ०—गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्तोसेणं असंखेजं कालं, एवं जाव-असंखेजपएसोगाढे.

१९. ४०—एगगुणकालए णं भंते ! पोग्गले कालओ केवचिरं होइ ?

१९, उ०-गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अ-संखेजं कालं; एवं जाव-अणंतगुणकालए, एवं वण्ण-गंध-रस-कासं जाव-अर्णतगुणलुक्खे; एवं सुंहुमपरिणए पोरगले, एवं बादरप-रिणए पोग्गले.

२०. प० —स इपरिणए णं भंते ! पोग्गले कालओ केवाचिरं होइ ?

२०. ७० - गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवितयाए असंखेजइभागं; असदपरिणए जहा एगगुणकालए.

१७.. उ॰ —हे गौतम! जवन्यथी एक समय सुधी अने वधारेमां वधारे आवलिकाना असंख्येय भाग सुधी सकंप रहे, ए प्रमाणे यावत् आकाशना असंख्येय प्रदेशमां स्थित पुद्रल माटे पण जाणवुं.

१८. प्र०-हे भगवन् ! एक आकाश प्रदेशमां अवगाढ पुद्रल काळथी क्यां सुधी निष्कंप रहे 🚉 🔻

१८. उ०-हे गौतम ! जघन्य एक समय अने विधारेजी वधारे असंख्येय काळ सुधी निष्कंप रहे, ए प्रमाणे यावत् असंख्येय प्रदेशावगाढ पुद्रल माटे पण जाणवुं.

१९. प्र० — हे भगवन् ! पुद्रल एकगणुं काळुं, काळथी व्यां सुधी रहे ?

१९. उ०-हे गौतम । जघन्यथी एक समृय सुधी अने वधारेमां वधारे असंख्येय काळ सुधी रहे, ए प्रमाणे यावत् अनंत गुण काळा पुद्रल माटे जाणवुं-ए प्रमाणे वर्ण, गंध, रस अने स्पर्श यावत् अनंतगुण रूक्ष पुद्रल माटे जाणवुं, ए प्रमाणे स्क्मपरिणत पुद्रल माटे अने बादरपरिणत पुद्रल माटे जाणवू.

२०. प्र०--हे भगवन् ! शब्दपरिणत पुद्रस्र, काळथी क्यां सुधी रहे ?

२०. उ० — हे गौतम ! ओछामां ओछुं एक समय सुची भने वधारेमां वधारे आवलिकाना असंख्येय माग सुधी रहे-अशन्दपरिणत पुद्रल, जेम एकगुण काळुं पुद्रल कह्युं, तेम समजबुं.

५. पुद्रलाऽधिकारादेव पुद्रलानां द्रव्य-क्षेत्र-भावान् कालतिक्षेत्रतयति. तत्र 'परमाणु ' इत्यादि द्रव्यचिन्ता, 'जक्षोसेणं असंखेजं कालं ' ति असंख्येयकालात् परतः पुद्रलानाम् एकरूपेण स्थित्यभावात्. ' एगपएसोगाडे णं ' इत्यादि क्षेत्रचिन्ता. ' सेए.' त्ति सैजः सकम्पः, ' तम्मि वा ठाणे 'ति अधिऋत एव, ' अवस्मि व 'ति अधिऋताद् अन्यत्र, ' उक्कोसेणं आवित्याए असंखेजहभागं ' ति पुद्रलानामाऽऽकस्मिकत्वाचलनस्य न निरेजत्वादीनामिव असंख्येयकालत्वम्, ' असंखेजपएसाँगाढे ' ति अनन्त-प्रदेशाऽवगादस्य असंभवाद् असंख्यातप्रदेशावगाढ इत्युक्तम्, ' निरेए ' ति निरेजो निष्प्रकम्पः.

काळनी दृष्टिप पुद्रल.

५. पुद्रलनो अधिकार होवाथी ज पुद्रलोनां द्रव्य, क्षेत्र अने भावोने काळनी दृष्टिथी चिंतवे छे, तेमां [' परमाणु '] इत्यादि द्रव्यनी चिंता छे. [' उक्कोसेणं असंखेजां कालं ' ति] असंख्येय काळ सुधी. कारण के, असंख्य काळ पछी पुद्रलोनी एकरूपे स्थिति नथी रहेती. ['एगपएसोगाढे णं'] इत्यादि क्षेत्रनो विचार छे. ['सेए' ति] कंप सहित, ['तम्मि वा ठाणे' ति] आधेकृत स्थानमां - जे स्थानमां होय त्यां, [' अन्नाम्म व ' ति] अधिकृत स्थानधी बीजे स्थाने. [' उक्नोसेणं आवित्याए असंसेज्ञाहभागं ' ति] पुद्रलोनुं आकस्मिकपणुं होवाथी निष्कंपत्वादिनी पेठे कंपननो-चलननो-असंख्येय काळ होतो नथी. ['असंखेज्जपएसोगाहे 'त्ति] कोइ पण पुद्रल अनंत प्रदेशावगाढ निकंत, न होवाथी ' असंख्यात प्रदेशावगाढ 'एम कक्षुं छे [' निरेए ' ति] निध्यकंप-कंप विनानुं

९. मूलच्छायाः-गोतम ! अधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन आवलिकायाः असंख्येयभागम्-एवं यावत्-असंख्येयप्रदेशाऽत्रगाढः. एकप्रदेष्ट्र द्दनुगकासकः—अवु०

बगाढी भगदन् ! पुद्रलो निरेजः कालतः कियबिरं भवति ! गीतम ! जघन्येन एकं समयम्, उक्क्टेनाऽसंख्येयं कालम् । एवं यावत्-असंख्येयेप्रच शावगाढः. एकगुणकालको भगवन् ! पुद्रलः कालतः कियविरं भवति ? गौतम ! जपन्येन एकं समयम्, उत्कृष्टेनाऽग्रंख्येथं कालम् ; एवं यावत्-अनन्तगुणकालकः, एवं वर्ण-गन्ध रस-स्वर्शम, यावत्-अनन्तगुणक्कः; एवं सूक्ष्मपरिणतः पुद्रलः, एवं बादरपरिणतः पुद्रलः. शब्दपरिणतो अगवन् ! पुद्रलः कालतः कियबिरं भवति ? गीतम ! जघन्येन एकं सगयम् , उरकृष्टेन आवलिकायां असंद्येयभागम् ; अशब्दगरियतो यथा

परमाणुपुद्रलादि अने अंतरकाल.

- ं २१. प्र०—पैरमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवचिरं होइ ?
- २१. उ० गोयमा । जहणोणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेजं कालं.
- २२. प्र०—दुप्पएसियस्स णं भंते ! खंषस्स अंतरं कालओ केविचरं होइ ?
- २२. उ०—गोयमा! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, एवं जाव-अणंतपरासिओ.
- २३. प्र०—एगपएसोगाढस्स णं भंते ! पोग्गलस्स सेयस्स अंतरं कालओ केयाचिरं होइ !
- २३. उ०—गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोरेणं अ-संसेजं कालं; एवं जाय-असंस्थेजपएसोगाढे.
- २४. ४०—-एगपएसोगाडस्स णं भंते ! पोग्गलस्स निरेयस्स अंतरं कालओ केवचिरं होइ !
- २४. उ०--गोयमा ! जह मेंगं एगं समयं, उक्कोसेणं आ-विश्याए असंस्थेज्यहभागं; एवं जाव-असंस्थेजपएसोगाढे, वन गंध-रस-फास-सुहुमपरिणय-बायरपरिणयाणं-एतेसि वं चेव संचि-हुणा तं चेव अंतरं पि भाणियव्वं.
- २५. प्र०--सद्परिणयस्स णं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवाचिरं होइ ?

- २१. प्र०—हे भगवन् ! परमाणुपुद्रलने काळथी केटलुं लांबुं अंतर होय एटले के जे पुद्रल, परमाणु रूपे छे ते परमाणुपणुं त्यजी स्कंधादि रूप परिणमे अने पालुं तेने परमाणुपणुं प्राप्त करतां काळथी केटलुं लांबुं अंतर होय?
- २१. उ०—हे गौतम ! ओछामां ओछुं एक समय अंतर अने वधारेमां वधारे असंख्येय काळ सुधीनुं अंतर छे. अर्थात् परमाणुरूप पुद्रछने परमाणुपणुं छोडी करीवार परमाणुपणुं प्राप्त करतां ओछामां ओछो एक समय अने वधारेमां वधारे असंख्येय काळ छागे छे.
- २२. प्र०—हे भगवंन् ! द्विप्रदेशिक स्कंपने काळथी केटछं छांबुं अंतर होय ?.
- २२. उ०—हे गौतम! जघन्य एक समय अने उत्कृष्ट्यी अनंत काळनुं अंतर छे, ए प्रमाणे यावत् अनंत प्रदेशिक्सकंघ सुधी जाणी लेवुं.
- २३. प्र० हे भगवन् ! एक प्रदेशमां स्थित सकंप पुद्रलने काळथी केटलुं लांबुं अंतर होय एटले एक प्रदेशमां स्थित सकंप पुद्रल पोतानुं कंपन पडतुं मेले तो तेने करीथी कंपन करतां केटलो काळ लागे !
- २३. उठ हे गौतम । जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यकाळ सुधीनुं अंतर होय अर्थात् ते पुद्गळ ज्यारे पोताना कंपथी अटके अने फरीथी कंपनुं शरु करे तेटलामां ओछामां ओछो एक समय अने वधारेमां वधारे असंख्य काळ लागे, ए प्रमाणे यावत् असंख्यप्रदेशस्थित स्कधी माटे पण समजी लेनुं.
- २४. प्र०—हे भगवन् ! एक प्रदेशमां स्थित निष्कंप पुद्रस्ते काळथी केटलुं संबं अंतर होय अर्थात् एक निष्कंप पुद्रस्य पोतानी निष्कंपता छोडी दे अने तेने फरीथी निष्कंपता प्राप्त करवामां केटलो काळ लागे ?.
- २४. उ०—हे गौतम! जबन्यथी एक समय अने उत्क्रष्टथी आविलकानो असंख्येय भागं, ए प्रमाणे यावत् असंख्य प्रदेश स्थित स्कंधो माटे पण समजी लेवुं. वर्ण, गंय, रस, स्पर्श, स्क्मपरिणत अने बादरपरिणतोने माटे जे तेओनो संचिद्वणा—स्थिति—काळ कह्यों छे ते ज अंतर काळ छे, एम कहेवुं.
- २५. प्र०—हे भगवन् ! शब्दपरिणत पुद्रलने काळथी केटलुं छांबुं अंतर होय ?.

^{9.} मूलच्छायाः—परमाणुपुद्रतस्य भगवन् । अन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ? गौतम ! जघन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेनाऽसंख्येयं कालम् कियचिरं शितम ! जचन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेनाऽनंतं कालम् , एवं यावत् – अनन्त- प्रदेशिकः एकप्रदेशावगादस्य भगवन् ! पुद्रलस्य सैजस्याऽन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ? गौतम ! जघन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेनाऽसंख्येयं कालम् ; एवं यावत् – असंख्येयप्रदेशावगादः एकप्रदेशावगादस्य भगवन् ! पुद्रलस्य निरेजस्याऽन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ? गौतम ! जवन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेनाऽप्रदेशावगादः एकप्रदेशावगादस्य भगवन् ! पुद्रलस्य निरेजस्याऽन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ? गौतम ! जवन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेनाऽऽविकाया ससंख्येयभागम् ; एवं यावत्—असंख्येयप्रदेशावगादः , वर्ण-गन्य-रस-स्पर्ध-स्थपरिणत्—वादरपरिणतानाम्—एतेषां यच्चेवस्यस्थानं तच्चेवाऽन्तरमपि भणितव्यम् , शब्दपरिणतस्य भगवन् ! पुद्रलस्याऽन्तरं कालतः कियचिरं भवति शः—अनु०

२५. उ० — गोयमा ! जहनेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असं-

२६. प्र०—असद्परिणयस्स णं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवाचिरं होइ !

२६. उ०—गोयमा ! जहनेणं एगं समयं, उक्नोसेणं आव-्रियाए असंक्षेज्जहभागं.

२७. प्०—एयस्त णं भीते । द्व्वहाषाज्यस्स, खेत्तहाणा-उयस्स, ओगाहणहाणाज्यस्स, भावहाणाज्यस्स कयरे कयरे जान-विसेसाहिया ?

२७. उ०—गोयमा! सम्बत्थोवे क्षेत्तहाणाउये, ओगाहण-हाणाउए असंखेजगुणे, दथ्वहाणाउंएं असंखेजगुणे, भावहाणाउए असंखेजगुणे.

> — खेत्तोगाहणदव्ये, भावद्वाणाउयं च अप्य-बहुं, खेत्ते सव्यत्थोवे, सेसा ठाणा असंखेजगणा.

२५. ट० हे गौतम ! जघन्यधी एक समय अने उत्कृष्टधी असंख्य काळ अंतर होय एटले जे पुद्रल शब्दरूपे परिणम्युं होय, पाछुं फरीवार तेने शब्दरूपे परिणमवामां ओछामां ओछुं एक समय अने वधारेमां वधारे असंख्य काळ जोइए.

२६. प्र०—हे भगवन्! अशब्दपरिणत पुद्रलने काळथी केटलुं लांबुं अंतर होप?

्र६. उ० — हे गौतम! जघन्यथी एक समय अने उद्ध्रष्टथी आवित्रिकानी असंस्थेय भाग अंतर होय एउले अशब्दपरिण्त पुद्रलने पोतानी अशब्दपरिण्तवणानी स्वभाव मूकी पालुं ते ज स्वभावमां आवतां ओछामां ओछुं एक समय अने वधारेमां वधारे आवित्रिकानी असंस्थेय भाग काळ छागे.

२७. प्र०--हे. भगवन्! ए द्रव्यस्थानायु, क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु अने भाषस्थानायु ए बधामां कर्यं कोनाधी यावत् विशेषाधिक छे ?

२७. उ०--हे गौतम ! सर्वथी थोडुं क्षेत्रस्थानायु छे, ते करतां असंस्थागण क्ष्याहनास्थानायु छे, ते करतां असंस्थागण द्रव्यस्थानायु छे, अने ते करतां भावस्थानायु असंस्थागण छे.

—-क्षेत्र, अवगाहना, द्रव्य अने भावस्थानायुनुं अल्प बहुत्व कहेवुं, तेमां क्षेत्रस्थानायु सर्वथी अल्प छे अने बाकीनां स्थानो असंख्येयगुणां छे.

६. 'परमाणुगेग्गलस्त ' इत्यादि. परमाणोरपगते परमाणुत्वे यदर्परमाणुत्वेन वर्तनम् अ(आ) परमाणुत्वपरिणतेः तर्दन्तरम्स्तन्यसंबन्धकालः, स च लक्षितोऽसंख्यात इति. द्विप्रदेशिकस्य तु शेपस्कन्धसंबन्धकालः, परमाणुकाल्य अन्तरहालः—स-च
तेपामनन्तत्वात्, प्रत्येकं चोत्कर्षतोऽसंख्येवस्थितिकत्वाद् अनन्तः. तथा यो निरेजस्य कालः स संजस्य अन्तरामिति कृत्या उनते
सेजस्याऽन्तरमुर्त्कर्पतोऽसंख्यातः काल इति. यस्तु संजस्य कालः स निरेजस्य अन्तरम् इति कृत्योक्तं निरेजस्याऽन्तरमुर्त्कर्पतोऽसंख्यातः काल इति. यस्तु संजस्य कालः स निरेजस्य अन्तरम् इति कृत्योक्तं निरेजस्याऽन्तरमुर्त्वर्पताः काल इति. यस्तु संजस्य कालः स निरेजस्य अन्तरम् इति कृत्योक्तं निरेजस्याऽन्तरम् व पुनाईगुणकालत्वादीनाम्
अनन्तत्वेन तदन्तरस्य अनन्तत्वम्—चचनप्रामाण्यात्, सूक्ष्मादिपरिणतानां तु अवस्थानतुत्वस्त्रेवाऽन्तरम्, यतो यदेव एकस्याऽनस्यानं
तदेवाऽन्यस्याऽन्तरम्, तच्च असंख्येयकालमानमिति. 'सइ ' इत्यादि तु सूत्रसिद्धम् . 'एयस्प णं मंते ! द्व्यङ्गाणाजयस्त ' नि
द्वयं पुद्रलद्वयम् , तस्य स्थानं मेदः—परमाणु—द्विप्रदेशिकादि, तस्य आयुः स्थितिः, अथवा द्वयस्याऽणुत्वादिभावेन यत् स्थानम्
अवस्थानम् , तद्वप्मायुर्द्वयस्थानायुक्तस्यः ' लेत्त्वराणाजयस्तः ' ति क्षेत्रस्य आकाशस्य स्थानं मेदः पुद्रलावगाहकृतः, तस्य आयुः
स्थितः, अथवा क्षेत्रे एकप्रदेशादौ स्थानम्—यत् पुद्रलानाम् अवस्थानम् तद्पमायुः क्षेत्रस्य, अवगाहनास्यान् को मेदः !
उन्यति—क्षेत्रमनगाढमेव, अवगाहना ति विवक्षितक्षत्राद् अन्यत्राऽपि पुद्रलानाम्, मावस्तु क्षाल्वादिः नतुं क्षेत्रस्य, अवगाहनायाश्च को मेदः !
उन्यति—क्षेत्रमनगाढमेव, अवगाहना तु विवक्षितक्षत्राद् अन्यत्राऽपि पुद्रलानां तर्वपरिमाणाऽवगाहित्वम् इतिः 'क्यरे ' इत्यादि
कण्डम्, एषां च परस्ररेणाऽल्य-वद्वत्व्याल्या गाथानुसारेण कार्या, ताश्च इमाः—

" खेत्तोगाहर्णदेव्ये भावठाणाउ अप्य-बहुयत्ते, थोवा असंखगुणिया तिथि य सेसा कहं नेया ! खेताऽमुत्तत्ताओं तेण समं बंधपचयाभावा, तो पोग्गलाण थोवो खेतावड्डाणकालो ओ. "

१. मूलच्छायाः —गौतम् । जघन्येन एकं समयम्, उत्कृष्टेनाऽछंख्येयं कालम्, अशब्दपरिणतस्य भगवन् । पुद्गलसाऽन्तरं कालतः कियिच्चरं भगवि ? गौतम् । जघन्येन एकं समयम्, उत्कृष्टेनाऽऽविकाया असंख्येयमागम्, एतस्य गगवन् । द्रव्यस्थानादुष्कस्य, क्षेत्रस्थानाऽऽयुष्कस्य, स्वगाहनास्थानाऽऽयुष्कस्य, भावस्थानाऽऽयुष्कस्य, कतरः कतरो यावत्—विशे गऽधिकः ? गैतिम । सर्वस्तो कः क्षेत्रस्थानाऽऽयुष्कः, अवगाहनास्थानायु क्षेत्रस्थानाऽऽयुष्कोऽसंख्येयगुणः, भावस्थानाऽऽयुष्कोऽसंख्येयगुणः क्षेत्रा-ऽगाहना-द्रव्यम् , भावस्थानाऽऽयुष्कं च अल्प बहु, स्वतं सर्वस्तोकम्, शेषाणि स्थानानि असंख्येयगुणानिः अञ्चल

भः प्र॰ छा॰—क्षेत्रा-प्रवंगाहर्न-द्रव्ये-भावस्थानायुरल्पबहुकत्वे, स्तोका असंख्यगुणितास्त्रीण च शेषाः कथं नेयाः १ क्षेत्राप्रमूर्तत्वात् तेन समं विस्थाप्रस्थयाभावात्, सतः पुरूलावां स्तोकः क्षेत्रावस्थानकालस्तुः—अनु०

अयमर्थः-क्षेत्रस्य अमूर्तत्वेन क्षेत्रेण सह पुद्रलानां विशिष्टबन्धप्रत्ययस्य स्नेहादेरभावाद् नैकत्र ते चिरं तिष्ठन्ति इति शेषः. यस्माद् एवं तत इत्यादि व्यक्तम् . अथाऽनगाहनायुर्वेहुत्वं भाव्यतेः——

"अष्मिलोत्तगयस्म वि तं चिय माणं चिरं पि संघरइ, ओगाहणानासे पुण खेतचत्तं फुडं होइ." इह पूर्वाऽर्धेन क्षेत्राद्धाया अधिका अवगाहनाद्धा इत्युक्तम्. उत्तरार्धेन तु अवगाहनाद्धातो नाऽधिका क्षेत्राद्धा—इति. कथम् एतदेवम् १ इत्युच्यते:——

" ओगाहणीववद्या खेत्तद्वा आक्रियाऽववद्या य, न उ ओगाहणकालो खेत्तद्वामेत्तसंबद्धो." अवगाहनायाम्-अगमनिक्रयायां च नियता क्षेत्राद्धा-विवक्षित-अवगाहनासद्भाव एव, अिक्रयासद्भाव एव च तस्या भावात्-उक्तव्यतिरेके च अभावात्-अवगाहनाद्वा न क्षेत्रमात्रे नियता, क्षेत्राद्धाया अभावेऽपि तस्या भावादिति. अथ निगमनम्:---

'' जर्महा तत्थ—ऽण्णत्थ य स चिय ओगाहणा भने खेत्ते, तम्हा खेत्तदाओ—वगाहणदा असंखगुणा.'' अथ द्रव्याऽऽयुर्वेहुत्वं भाव्यते:—

" संकोर्चें—विकोएण व उवरिमयाए विगाहणाए वि, तित्त्रियमेत्ताणं चिय चिरं पि द्व्याणऽवत्थाणं. " संकोचेन, विकोचेन चोपरतायाम् अपि अवगाहनायां यावन्ति द्रव्याणि पूर्वमासन् तावतामेव चिरमपि तेषाम् अवस्थानं संभवति, अनेनाऽविगाहनानिवृत्तौ अपि द्रव्यं न निवर्तते इत्युक्तम्. अथ द्रव्यनिवृत्तिविशेषेऽविगाहना निवर्तते एव इत्युच्यते:——

" संघाय-भेयओ वा दन्नोवरमे पुणाइ संखित्ते, नियमा तह्न्नोगाहणाए नासो न संदेहो." संघातेन, पुद्रलानां भेदेन वा तेषामेव यः संक्षिप्त:-स्तोकावगाहनः स्कन्ध:-नतु प्राक्तनाऽवगाहनः, तत्र यो द्रव्योपरमो द्रव्याऽन्यधात्वम् , तत्र सति न च संघातेन न संक्षिप्तः स्कन्धो भवति, तत्र सति सृक्ष्मतरत्वेनाऽपि तत्परिणतेः-श्रवणात्-नियमात् तेपां द्रव्याणाम् अवगाहनाया नाशो भवति, कस्माद् एवम् १ इत्यत उच्यते:--

"ओगाहर्षा दन्वे संकोय-विकोयओ य अवधदा, न उ दन्वं संकोयण-विकोयण-मित्तिम्म संबद्धं."
अवगाहनाद्वा द्रव्येऽवबद्वा नियतत्वेन संबद्धा, कथम्? संकोचाद् विकोचाच-संकोचादि परिह्नस्य इत्यर्थः. अवगाहना हि द्रव्ये संकोच-विकोचयोरभावे सित भवति, तस्सद्भावे च न भवति; इत्येवं द्रव्ये अवगाहना अनियतत्वेन संबद्धा इत्युच्यते 'द्रुमत्वे खदिरत्वम् इव' इति. उक्तविपर्ययमाह-न पुनर्द्रव्यं संकोचन-विकोचनमात्रे सत्यप्यवगाहनायां नियतत्वेन संबद्धम्, संकोचन-विकोचाम्याम् अवगाहनानिष्टत्ताविप द्रव्यं न निवर्तते इत्यवगाहनायां तिवयतत्वेनाऽसंबद्धम् इत्युच्यते, 'खदिरत्वे द्रुमत्ववत् ' इति. अथ निगमनमः---

''जम्हीं तत्थण्णत्थ च दव्वं भोगाहणाए तं चेव, दव्यद्धाऽ संखगुणा तम्हा ओगाहणद्धाओ.'' अथ भावायुर्वेहुत्वं भाव्यतेः—

" संघार्य-भेयओ या दव्योवरमे वि पज्जवा संति, तं कासिणगुणिवरामे पुणाइ दव्यं न ओगाहो." संघातादिना द्रव्योपरमेऽपि पर्यवाः सन्ति, यथा घृ (मृ) ष्टपटे शुक्छादिगुणाः—सकछगुणोपरमे तु न तद् द्रव्यम्, न चात्रगाहनाऽनुवर्तते— अनेन पर्यवाणां चिरं स्थानम्, द्रव्यस्य तु अचिरम् इत्युक्तम्. अथ कस्मादेवम् ! इत्युच्यतेः—

" संघाय-भेय-वंधाणुवत्तिणी निचमेव द्व्वद्धा, न गुणकालो संघाय-भेयमेत्तद्धसंबद्धो." संघात-भेदलक्षणाभ्यां धर्माभ्यां यो बन्धः संबन्धः, तदनुवर्तिनी तदनुसारिणी, संघाताद्यभाव एव द्व्याद्धायाः सद्भावात्, तद्भावे चाऽभावाद्, न पुनर्गुणकालः संघात-भेदमात्रकालसंबद्धः, संघातादिभावेऽपि गुणानामनुवर्तनाद् इति. अथ निगमनम्ः—

" जैहा तत्थ-ऽण्णत्थ य दब्वे खेत्तावगाहणासु च, ते चेव पज्जवा संति तो तदझा असंखगुणा."

'' आह अणेगंतोऽ यं दथ्वोवरमे गुणाणऽनत्थाणं, गुणविष्परिणामिम य दब्बविसेसो य णेगंतो. "

१. प्र॰ छा॰:--अन्यक्षेत्रगतस्यापि तदेव मानं चिरमपि संधरति, अवगाहनानाशे पुनः क्षेत्रान्यत्वं स्फुटं भवति. २. अवगाहनावबद्धा क्षेत्राद्धा अकियावबद्धा च, न तु अवगाहनावछः क्षेत्राद्धामात्रसंबदः. ३. यसात् तत्राऽन्यत्र च सा एव अवगाहना भवेत् क्षेत्रे, तसात् क्षेत्राद्धातोऽवगाहनाद्धा असंख्यगुणा. ४. संकोच-विकोचेन वा उपरतायाम् अवगाहनायामपि, तावन्मात्राणामेव जिरमि इव्याणामवस्थान १. ५. संधात-भेदतो वा इव्योपरमे पुनः संक्षिते, नियमात् तद्द्रव्यावगाहनाया नाशो न संदेहः. ६. अवगाहनादा इव्ये संकोच-विकोचतश्च अवगद्धा, न तु इव्यं संकोचन-विकोचनमात्रे संबद्धम्. ७. यसात् तत्रान्यत्र वा इव्यम् अवगाहनायां तच्चेत्र, इव्याद्धाऽसंख्यगुणा तसाद् अवगाहनाद्धातः. ८. संघात-भेदतो वा इव्योपरमेऽपि पर्यवाः सन्ति, तत् कृत्रन्तुणविरामे पुनईव्यं न अवगाहः. ९. संघात-मेद-वन्धानुवर्तिनी नित्यमेत्र इव्याद्धा, न गुणकालः संघात-भेदमात्राद्धसंबदः. १०. वसात् तत्र अन्यत्र च इव्ये क्षेत्रावगाहनाद्ध च, ते एव पर्यवाः सन्ति ततस्वदद्धा असंख्यगुणाः आह् अनेकान्तोऽयं इव्योपरमे गुणानामवस्थानम्, गुणविपरिणामे च इव्यविशेषक्ष नैकान्तः-अनु०

्द्रव्यविशेषो द्रव्यविपरिणामः.----

" विप्परिणयैम्मि दन्वे कम्मि गुणपरिणई भवे जुगवं, काम्मि वि पुण तदवरथे वि होइ गुणविप्परीणामो. भचइ सचं कि पुण गुणबाहल्ला न सञ्चगुणनासो, दब्बस्स तदण्यते वि बहुतराणं गुणाण ठिइ '' ति.

क्षेत्रस्थानायु. अवगहना अने गाथाओ.

क्षेत्रसा० सर्वधी अस्प.

व्यवगावनी अधि-₽FI.

द्रग्यायुत्तं बहुत्व.

संबोद-विकोच.

द्रव्यान्यथास्यः

६. ['परमाणुपोग्गलस्सं' इत्यादि.] ज्यारे परमाणुनुं परमाणुपणुं चाह्युं जाय त्यारथी मांडीने करीवार परमाणुपणे परिणमन थवा सुधी -भूतपूर्वपरमाणुने जे अपरमाणुपणे रहेवुं पडे छे अर्थात् प्रथम परमाणु-अवस्था अने बीजी भाविनी परमाणु-अवस्था ए बेनो जे वचलो काळ छे र्कां संबंधकाळ. ते 'स्कंध-संबंध-काळ ' कहेवाय, ते वधारेमां वधारे असंख्यात छे. बे प्रदेशवाळा स्कंधने तो बाकीना स्कंधरूपे थयानो काळ अने प्रमाणुरूपे अंतरकाळ, थवानो काळ ते अंतरकाळ छे अने ते अंतरकाळ अनंत छे, कारण के, बाकीना सर्व स्कंघो अनंत छे तथा ते प्रत्येक स्कंघनी वधारेमां वधारे असंस्ययकाळ स्थिति छे, तथा जे निष्कंपनो काळ छे ते सकंपनो अंतरकाळ छे, एम धारीने कहुं छे के, सकंपने वधारेमां वचारे असंस्थात काळ अंतर छे अने जे सकंपनी काळ छे ते निष्कंपनी अंतर काळ छे एम धारीने कर्नुं छे के, निष्कं ने वदारेमां वचारे आविष्ठकानी असंख्यात माग बचनशामाण्य. अंतरकाळ छे. एकगुणकाळकत्यादिनुं अंतर एकगुणकाळकत्यादिना काळनी समान ज छे. पण वचनशामाण्य होवाथी द्विगुण काळत्वादिनी अनंतताने लड्ने ते अंतरनी अनंतता इंग्र नथी. सूक्ष्मादिपरिणतोनुं अंतर तेना अवस्थानकाळनी तुल्य ज छे, कारण के, जे एकनुं अवस्थान छे ते बीजानुं अंतर छ अने तेनुं मान असंख्येय काळ छे. ['सहे ' इत्यादि] तो सूत्र मिद्ध छे — सूत्र उपरथी ज स्पष्ट प्रकारे ज्ञात शाय छे. द्रव्यस्थानावु. [' एयस्स ण भंते ! द्व्बद्वाणाउयह्य ' ति] द्व्य एटले पुद्रल द्व्य, तेनो परमाणु, द्विपदेशिक वरेहे रूपे जे भेद-तेनी जे स्थिति अथवा द्वव्यनुं अगुत्यादिभावे जे अवस्थान, तरूप आधु ते 'द्रव्यस्थानायु ' कहेत्राय, तथा ['खित्तद्वाणाउयस्य 'ति] क्षेत्रनो एटले आकाशनो पुद्रलोना अवगाहशी थएलो जे भेद, तेनी जे स्थित अथवा एकप्रदेशादि क्षेत्रमां पुद्रलोतुं जे अवस्थान, तद्रूप जे आयु ते क्षेत्रस्थानायु कहेवाय, ए प्रमाणे अवगाहना श्रानायु अने भावस्थानायु पण समज्ञां। विशेष ए के, अमुक मापवाळा स्थानमां पुद्रहोतुं जे अवगाहिषणुं—रहेवुं—च्यापवापणुं—ते अवगाहना भावस्थानातु. कहेवाय अने पुद्रलोनो इपामत्वादि धर्म छे ते भाव कहेवाय. शं० —क्षेत्र अने अवगाहनामां एवो शो भेद छे १ जेथी ए अन्नेने जूदा जूदा रंका-समाधान. समजाववामां आवे छे. समा०---पुद्रलोशी अवगाड-व्याप्त-होय ते ज क्षेत्र कहेवाय अने विवक्षित-अमुक खास-क्षेत्रयी बीजा क्षेत्रमां एण पुद्रलोनुं ते क्षेत्रना माप प्रमाणे. रहेवुं.ते अवगाहना कहेवाय अर्थात् पुद्रलोनो, पोताना आधार स्थळ समान ने एक प्रकारनो आकार ते तो अवगाहना कहेवाय छे अने पुरलो जेमां रहे ते क्षेत्र कहेवाय, ए प्रमाणे क्षेत्रन अने अवगाहनानुं जुदापणुं स्पष्ट जणाय छे. ['कयरे ' इत्यादि.] ए मूळ भाग स्पष्ट छे. ए बधानी एक बीजा साथे जे अल्प-बहुता दर्शाववी छे ते नीचेनी गाथाओने अनुसारे दर्शाववी, ते गाथाओ आ प्रमाणे छे:---'' क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु, द्रव्यस्थानायु अने भावस्थानायु ए बधाना अल्प-वहुत्वमां क्षेत्रस्थानायु सर्वथी थोडुं अने बाकीना त्रण असंख्य गुण छे, एम केवी रीते जाणवुं ? " तेनो उत्तर कहे छे के, " क्षेत्रनुं अमूर्तपणुं छे एटले क्षेत्र मूर्तिमान्-आकारधारी-नथी माटे ते क्षेत्रमां तेनी चौकादा. (क्षेत्रनी) साथे पुद्रलोना बंधनुं कारण (चीकाश) न होवाथी पुद्रलोनो क्षेत्रावस्थान काळ थोडो छे. आ गाथानो विगतथी अर्थ आ प्रमाणे छे:— क्षेत्र अमूर्तिमान् होवाथी अने तेथी ज तेमां, पुद्रलोना विशिष्ट बंधनुं कारण स्नेह-चीकाश-वगेरे न होवाथी ते पुद्रलो एक ज क्षेत्रमां लांबा काळ सुधी रहेतां नथी, जे कारणथी ए प्रमाणे छे ते कारणथी क्षेत्रस्थानायु सर्वथी अल्प छे--इत्यादि वधुं स्पष्ट छे. हवे अवगाहनास्थानायुनी अधिकता विचारीए छीए--'' एक स्थळथी अन्यं क्षेत्रमां गएठा पुद्गलनुं पण ते ज मान, त्यां लांबो काळ रहे छे, अने वळी जो अवगाहनानो नाश थाय तो क्षेत्र भिन्नता थाय ते स्फुट छे. '' आ गाथागां पूर्वार्घवडे ' क्षेत्राद्धा करतां अवगाहनाद्धा अधिक छे ' एम कह्युं, अने उत्तरार्घवडे तो ' अत्रगाहनाद्धा करतां क्षेत्राद्धा अधिक नथी ' एम कहां. एम केवी रीते छे ? तेना उत्तरमां कहेवाय छे केः—'' पुद्गलोनो क्षेत्रावस्थानकाळ-अमुक क्षेत्रमां नियत रीते स्थित रहेवानो कळ-अवगाहनाथी अने क्रियारहितपणाथी अवबद्ध छे अर्थात् पुद्रल, अमुक स्थळे नियत त्यारे ज रही शके निष्कय. ज्यारे ते अमुक अवगाहनामां होय अने तद्दन निष्किय-किया विनानं-होय माटे पुदलोनं एकत्रावस्थान अवगाहनाथी अने निष्क्रियपणाधी अवबद्ध छे पण तेथी उलदुं एटले अवगाहनाकाळ, क्षेत्रावस्थानकाळ मात्रमां संबद्ध नथी " ताल्पर्य ए छे के, ज्यारे पुद्रलोनी कोइ पण अमुक जातनी अवगाहना होय अने ते पुद्रलो पोते निष्क्रिय (हलनचलनरहित) होय त्यारे ज ते पुद्रलोनुं क्षेत्रावस्थान नियत होय छे अने जो तेम न होय एटले तेओनी कोइ पण अमुक जातनी अवगाहना न होय अने तेओ (पुद्रलो) निष्किय न होय तो ते पुद्रलोनुं क्षेत्रावस्थान संभवी शक तु नथी, ज्यारे पुद्रलोनुं क्षेत्रावस्थान अवगाहना अने निष्क्रियताने आधीन छे त्यारे तथी उलदुं एटले अवगाहना, क्षेत्रमात्रमां नियत नथी, डरसंहार, कारण के, क्षेत्राद्वाना अभावमां पण अवगाहना होय छे. हवे उपसंहार करे छे:-- '' जे कारणथी ते क्षेत्रमां अथवा बीजा क्षेत्रमां अवगाहना तेनी ते ज रहे छे माटे क्षेत्राद्धा करतां अवगाहनाद्धा असंख्यगुण छे " हवे द्रव्यायुना बहुत्वनी विचार करे छे, " संकोचवडे अने विकोच-पहोळा-थवापणें जो के अवगाहना उपरत थाय छे तो पण जिटलां होय तेटलां ज द्रव्योनुं लांबा काळ सुधी अवस्थान रहे छे " तात्पर्य ए छे के, संकोचधी अथवा विकोचधी अवगाहना उपरत थाय तो पण जिटलां दृथ्यो पहेलां हतां तेटलां ज दृथ्योनुं लांबा काळ सुधी अवस्थान संभवे छे अर्थात् अवगाहना निवर्ते-न रहे-तो पण द्रव्यो नथी निवर्ततां अने तेथी उलदुं ज्यारे द्रव्यनी अमुक प्रकारनी निवृत्ति थाय छे त्यारे अवगाहनानी संवात-मेद. निवृत्ति चोक्रस थाय छे. ए संबंधे कहेवाय छे के, " वळी, ज्यारे संघात अथवा भेदथी द्रव्य संक्षित थाय छे अने तेम थया बाद द्रव्यनो उपरम थाय छे त्यारे ते द्रव्यनी अवगाहनानो नाश नियमा— चोक्कस थाय छे तेमां संदेह नथी " तत्त्व ए छे के, पुद्रलोना संघातवडे या पुद्रलोना भेदवंड ते पुद्रलोनो जे स्कंध, प्रथमनी जेवी अवगाहनावाळो नहि पण संक्षिप्त-स्तोक-दुंकी-अवगाहनावाळो थाय छे अने तेम थया पछी ते रकंघमां द्रःयान्यभारव थाय छे एटले पूर्वे जे स्थितिए ते द्रव्य हतुं, ते स्थितिए ते स्कंघमां द्रव्यनुं रहेवुं धतुं नथी अने तेम थवाथी ते द्रव्योनी

१. प्र० छा०-विपरिणते द्रव्ये कस्मिन् गुणपरिणतिर्भवेद् युगपत् , कस्मिन्नपि पुनस्तद्वस्थेऽपि भवति गुणविपरिणामः भण्यते सत्यं कि पुनर्गु-णवाहुत्यात् न सर्वग्रणनाशः, इव्यस्य तदन्यस्वेऽपि बहुतराणां ग्रणानां स्थितिः-इतिः-अनु०

अवगाहनको नाश चोकस थाय छे. कदाच कोइ कहे के, संघातथी तो पुद्रलोनो स्कंघ संक्षित-दुंको थतो नथी तो तेम नथी, पण संघात थया पछी पुद्रलोने स्क्ष्मतर परिणाम थाय छे-एम सांभळ्युं छे माटे पूर्वे कड्डं छे के, संघातथी पुद्रलोनो दुंको स्कंध थाय छे अने तेम थवाथी अवगा-हमानी नाम चोक्कस थाय छे. ते शाथी ए प्रमाणे थाय छे तो कहे छे के:-- " संकीच अने विकाच सिवायनी स्थितिमां, अवगाहनादा दृव्यमां संबद्ध हे एटले ज्यारे द्रव्य, संकोच अने विकोच रहित होय त्यारे तेमां अवगाहना संबद्ध छे पण ज्यारे संकोच अने विकोच होय त्यारे द्रव्यमां अवगाः ना संबद्ध नथी होती अर्थात् संकोचन अने विकोचनना अभावमां द्रव्यमां अवगाहना रहे छे अने ते संकोचनादिनी विद्यमानतामां द्रव्यमां द्विगाहना नथी रहेती-ए प्रमाणे द्रव्य अने अवगाहनानुं सहचरपणुं अनियत छे पण द्रव्यं, संकोचन अने विकोचन मात्रमां संबद्ध नथी एटले संकोचन, विकोचन होय के न होय तो पण द्रव्य तो कायम ज रहे छे " आ गाथानी निष्कर्ष आ प्रमाणे छे के, संकोचने अने विकोचने परिहरी अवगाहनादा, द्रव्यमां (नियंतपणे) संबद्ध छे एटले निम वृक्षपणामां खदिर-खर-पणुं रहे छे तेम ज्यारे संकोचनो अने विकोचनो अभाव होय त्यारे द्रव्यमां अवगाहना रहे छे पण ज्यारे संकोचनी अने विकोचनी हाजरी होय त्यारे द्रव्यमां अवगाहना नधी रहेती, ए प्रकारे द्रव्यमां, अनियतपणे अवगाहना संबद्ध छे. हवे द्रव्य माटे तेथी उलुद्धं कहे छे के, वळी द्रव्य तो संकोचन अने विकोचन मात्र होय तो पण नियतपणे अवगाहनामां संबद्ध नथी अर्थात् जैम खदिरपणामां वृक्षपणुं संबद्ध छे तेम संकोचन अने विकोचन द्वारा अवगाहनानो नाश थया बाद पण द्रव्यनी निवृत्ति नथी थती माटे ज अवगाहनामां द्रव्य नियतपणे संबद्ध नथी एम कहेवाय छे. हवे उपसंहार कहे छे:-- " जेथी, त्यां, अन्यत्र अथवा अवगाहनामां द्रव्य तेनुं ते ज छे तथी अवगाहनादा करतां द्रव्यादा असंख्यगुण छे. हवे मात्रायुना बहुएणानी विचार करीए छीए: — संघातथी अथवा मेदथी द्रव्यनो उपरम थाय तो पण पर्यवो विद्यमान रहे छे, अने जो बधा गुणोनो उपरम थाय तो तो द्रव्य पण न रहे अने अवगाहना पण न रहे '' ताल्पर्य ए छे के, जम बृष्ट-साफ करेला पटमां शुक्रादि गुणो छे तेम संघातादि द्वारा द्रव्यनी उपरम थाय तो पण पर्यवीनी सत्ता रहे छे, अने जो सर्वगुणोनो उपरम थाय तो ते द्रव्य रहेतुं नथी अने अवगाहना पण अनुवर्तती नथी, आ वातथी एम स्पष्ट जणाय छे के, पर्यवोनुं अवस्थान चिर-लांबा-काळ सुधी छे अने द्रव्यतुं तो अचिरकाळ सुधी अवस्थान छे, एम शाथी कही शकाय ? तो कहे छे के, " द्रव्याद्धा, हमेशा ज संघात वंघनी अने भेदबंधनी पाछळ चालनारी छे अने गुणकाल, संधातादा अने भेदादा मात्रमां संबद्ध नथी " अर्थात्—संघात अने भेदरूप वे धर्मी द्वारा थतो जे संबंध, तेने अनुसरनारी द्रव्याद्धा छे, कारण के, ते (द्रव्याद्धा) संघातादि न होय त्यारे ज होय छे अने ते (संघातादि) होय त्यारे नथी होती. अने वळी गुणकाल, मात्र संघात अने भेदना काळमां संबद्ध नथी, कारण के, संघातादि होय तो पण गुणोनुं अनुवर्तन थाय छे. उपसंहार कहे है:-- " जेथी, त्यां, अन्यत्र अने द्रव्यावस्थानमां, क्षेत्रावस्थानमां तथा अवगाहनावस्थानमां तेना ते ज पर्यची छ माटे भावावस्थानायु असंख्यगुण छे " कहुं छे के, " द्रव्यनो उपरम थया बाद गुणोनुं अवस्थान रहे छे, आ अनेकांत छे अने गुणनो विपरिणाम थया बाद जे इच्यविशेष छे ते नैकांत छे " इच्यविशेष एटले इच्यनो विपरिणाम. " ज्यारे इच्य विपरिणामने पामे त्यारे क्ये स्थळे एकी साथे गुणनी परिणति थाय बळी क्ये तद्वस्थ-तेवे-स्थळे पण गुणनो विपरिणाम थाय ? " " साचुं कहीए छीए के, बळी, द्रव्यमां गुणोनुं बाहुत्य होवाथी सर्वगुणनो नाश थतो नथी अने तेनुं अन्यत्व थाय छे तो एण घणा गुणोनी स्थिति रहे छे. "

द्रव्यादा असंख्यगुण.

पर्यवोनं अवस्थान.

भावायुना बहुपणाः नो विचारः

नैरयिकोनो परिमह.

२८. प्र०—नेरैइया णं भंते ! किं सारंभा, संपरिग्नहा; उदाहुं अणारंभा, अपरिग्नहा ?

२८. उ०--गोयमा ! नेरइया सारंभा, सपरिग्गहा; णो अणारंभा, णो अपरिग्गहा.

२९. प्रं - से केण - जाव-अपरिग्गहा ?

२९. उ० — गीयमा ! नरइया ण पुढिविकायं समारंभित, जान-तसकायं समारंभित; सरीरा परिग्गहिया भवति, कम्मा परिग्गहिया भवति, सिचत्ता-ऽिचत्त-मीसियाइं दव्वाइं परिग्ग-हियाइं भवति-से तेणहेणं तं चेव गीयमा !

२८. प्र० — हे भगवन् ! नैरियको शुं आरंभ सहित छे, परिप्रह सहित छे के अनारंभी अने अपरिप्रही छे ?

२८. उ०—हे गीतम! नैरियको आरंभवाळा छे अने परिप्रहवाळा छे पण अनारंभी अने अपरिप्रही नधी.

२९. प्र०—हे भगवन् ! तेओ, क्या हेतुथी परिप्रह्वाळा छे अने यावत्-अपरिप्रही नथी ?

२९. उ० — हे गौतम! नैरियको पृथिवीकायनो यावत् त्रस-कायनो समारंभ करे छे, तेओए शरीरो परिगृहीत कर्यो छे, कर्मी परिगृहीत कर्यो छे अने तेओए सचित्त, अचित्त अने मिश्र द्रव्यो परिगृहीत कर्यो छे माटे ते हेतुथी हे गौतम! तेओ परिगृही छे ' इसादि ते ज कहेवुं.

७. अनन्तरम् आयुरुक्तम् , अथाऽऽयुष्मत आरम्भादिना चतुर्विशतिदण्डकेन प्ररूपयन्नाहः-- ' नेरइए ' इत्यादि.

१. मूळच्छायाः—नैरयिका भगवन् ! किं सारम्भाः, सपरिप्रहाः, उताहो अनारम्भाः, अपरिप्रहाः ! गीतम ! नैरियकाः सारम्भाः, सपरिप्रहाः, नो अनारम्भाः, नो अपरिप्रहाः. तत् केन० यावत्-अपरिप्रहाः ! गीतम ! नैरियकाः पृथिवीकायं समारभन्ते, यावत्-त्रसकायं समारभन्ते; वारीराणि परिगृहीतानि भवन्ति, कर्माणि परिगृहीतानि भवन्ति, सवित्ता-ऽचित्त-मिश्रितानि द्रव्याणि परिगृहीतानि भवन्ति-तत् तेनाऽर्थेन स्वत्व गातम !:—अनु०

बोदीश दंग्क.

७. हमणां आयुष्य कह्यं, हवे आयुष्यवाळा जीवोने आरंभादि प्रश्नो द्वारा चोवीस दंडकवंडे प्ररूपता [निरहए १] हत्यादि सूत्र कहे छे.

असुरोनो अने एकेंद्रियोनो परिवह.

'३०. प्र०— भैसुरकुमारा णे भंते ! कि सारंभा पुच्छा ?'

ं ३०. उ०—गोयमा ! असुरकुमारा सारंभा, सन्दिरगहाः; णी अणारंभा, अपरिग्गहा.

रे १. प्र०—से केण्हेणं ?

रें?. उ०--गोयमा! असुरकुमारा णं पुढविकायं समारंभति, ३१. उ०-हे गौतम! असुरकुमारो पृथिवीकायमो समान परिग्गहिया भवंति, भवणा परिग्गहिया भवंति; देवा, देवीओं, परिगाहिया भवंति: आसण-सदण-भंड- अमत्तो-वगरणा परिग्न-हिया भवन्ति, सचित्ता-अचित्त-मीसियाइ दव्वाइ परिग्गहियाइ भवाति-से तेणहेणं तहेच, एवं जाव-थणियक्मारा.

--एगिंदिया जहां नेरइया.

३०. प्र०-हे भगवन्! असुरकुमारो आरंभवाळा है ? इत्यादि प्रश्न करवी.

३०. उ०--हे गौतम ! असुरकुमारो आरंभवाळा छे; परि-प्रहवाळा छे पण अनारंभी के अपरिप्रही नथी:

३१. प्र०—(हे भगवन्!) ते शा हेतुथीं ?

जान-तसकायं समारंगंति, सरीरा परिग्गहिया भवंति, कम्मा रंभ-वध-करे छे यावत् त्रसकायनो वध करे छे; तेओए शरीरो परिगृहीत कर्या छे, कर्मी परिगृहीत कर्या छे, भवनो परिगृहीत मणुस्सा, मणुस्सीओ, तिरिक्खजोणिया, तिरिक्खजोणिणीओं कर्या छे, देवो, देवीओ, मनुष्यो, मनुषीओ, तिर्यंचिणीओ परिगृहीत करी छे, आसन, शयन, भांडो, मात्रको अने उपकरणो परिगृहीत कर्यों छे अने सचित्त, अचित्त अने मिश्र द्रव्यो परिगृ हीत कर्यों छे माटे ते हेतुथी तेओने परिग्रहवाळा कहा। छे-ए अमाणे यावत्-स्तनितकुमारो माटे पण जाणवुं.

- जेम नैरियको माटे कहाँ तेन एकेन्द्रियो माटे जाणवं

८. ' मंडमत्तोवगरण ' ति इह भाण्डानि मृण्मय-भाजनानि, मात्राणि, कांस्यभाजनानि, उपकरणानि छौही, कडुल्छुकादीनि एकेन्द्रियाणां परिप्रहोऽप्रत्याख्यानाट् अवसेयः.

माटीनां अने कांसा-नां वासणी. श्केंद्रियो,

८. [' भंडमत्तोवगरण ' ति] भांडो —माटीनां वासणी अने मात्रो एटले कांसाना वासणी तथा उपकरणो एटले लोढी, कडायुं, कडछी वगेरे. प्रत्याख्यान न करेलुं होवाथी एकेन्द्रियो परिग्रही छे, एम जाणवं.

बेइंद्रिय विगेरेनो परिप्रह.

२२. प्र०--बेइंदिया ण भर्ते ! कि सारंभा, सपरिग्गहा ?

३२. उ०--तं चेव जाव-सरीरा परिग्गहिया भवंति, बाहिरिया भंड-मेत्तो-वगरणा परिग्गहिया भवति, एवं जाव-चडरिंदिया.

१२. प्र०--पंचिंदियतिरिक्खजोणिया णं भंते ! !

हैं है. उ०--तं चैव जाव-कम्मा परिग्गहिया भवति,

३२. प्र० — हे भगवन् ! वेइंद्रिय जीवी हां सार्म अने सपरिग्रह- छे ?

३२. उ०—(हे गौतम!) ते ज कहेवुं यावत् तेओए शरीरी परिगृहीत कर्यों छे अने बाह्य भांड, मात्र, उपकरणो परिगृहीत कर्यों छे, ए प्रमाणे यावत् चर्डरिंद्रिय जीव सुधीना दरेक जीव माटे जाणी लेबुं.

३३. प्रव —हे भगवम् ! पंचेन्द्रिय तिर्थंचयोनिको इं आरंभी छे ! इसादि ते ज प्रश्न करवो.

३३. उ०-(हे गीतम!) ते ज कहेवुं अर्थात् तेओए टंका, कूडा, सेला, सिहरी, पन्मारा परिग्गहिया भवाति, जल-थल- कर्मी परिगृहीत कर्यी छे, पर्वतो, शिखरो, शैलो, शिखर्वाळा

९. मूलच्छायाः - असुरकुमोरा भगवन् ! कि सारम्भाः, पृच्छा ! गीतम । असुरकुमाराः सारम्भाः, सर्परिप्रहाः, नी अनारम्भाः, अपरिप्रहाः, सस् केनाऽर्थेन ? गौतम ! असुरकुमाराः पृथिवीकार्यं समारभन्ते, यावत्-त्रसकारं समारभन्ते, शरीराणि परिगृहीतानि भवन्ति, कर्माणि परिगृहीतानि भवन्ति, भुवनानि परिगृहीतानि भवन्ति, देवाः, देव्यः, मनुष्याः, मनुष्यः, तियंग्योनिकाः, तिर्यग्योनिकतः परिगृहीता भवन्ति, आसन-शयत-भाण्डा-इमत्रो-पकरणानि परिगृहीतानि भवन्ति, सचित्ता-इचित्त-मिथितानि इच्याणि परिगृहीतानि भवन्ति-तद् तेनाऽथेन तथैव, एवं यावत्-स्तनित-मासः. एकेन्द्रियाः यथा नैरियकाः. २. द्वीन्द्रिया भगवन् ! किं सारम्भाः, सपरित्रहाः ? तचैव यावत्-शरीराणि परिगृहीतानि भवन्ति, बार्सानि माण्डा-Sमत्रो-पकरणानि परिगृहीतानि भवन्ति, एवं यावत्-चतुरिन्द्रियाः पश्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका भगवन् ! ? तच्चेव यावत्-कर्माणि परिशृहीतानि भवन्ति, दक्काः, कूटाः, शैलाः, शिखरिणः, प्रारभाराः, परिगृहीता भवन्ति, जल-स्थल-:--अनु०

विंट-गुह-लेणा परिग्गहिया भवंति, उच्झर-निज्झर-चिल्लट-पल्लट-विषणा परिग्गहिया भवन्ति, अगड-तडाग-दह-नइओ, वावि-पुक्सिरिणी, दीहिया, गुंजालिया, सरा, सरपंतियाओ, सरसरपं-तियाओ, विलपंतियाओ परिग्गहियाओ भवंति; अरामु-ज्ञाणा, काणणा, वणा, वगसंडा, वणराईओ परिग्गहियाओ भवंति; क्यारावाळो प्रदेश—ए बधानुं तेओए प्रहण कर्युं छे, क्वो, तळाव, देवज्ला-SSसम-पवा-थूभ खाइय-परिखाओ परिग्गहियाओ भवंति, पागार अष्टालग-चरिय दार-गोपुरा परिग्गहिया भवंति, पासाद-घर-सरण-लेण-आवणा परिग्गहिया भवंति, संगड-रह-जाण-चर-परपा-लेण-आवणा परिग्गहिया भवंति, संगड-रह-जाण-चर-चउम्मुह-महापहा परिग्गहिया भवंति, संगड-रह-जाण-चर-चउम्मुह-महापहा परिग्गहिया भवंति, संगड-रह-जाण-लेण-गिल्लि-थिल्लि-सीय-संदमाणियाओ परिग्गहियाओ भवंति, लोही-लोहकडाह-कडुच्छ्या परिग्गहिया भवंति, भवणा परिग्ग-हिया भवंति, देवा, देवीओ, मणुस्सा, मणुस्सीओ, तिरिक्ल-ओणिया, तिरिक्सओणिणीओ; आसण-संयण-संड-मंड-सचिता-ऽपित-मीसियाई दव्बाई परिग्गहिया भवंति—से तेणहेणं.

स्थल, बिल, गुहाँओ अने पहाडमां कोतरेल घरो तेओए परिगृ-हीत कर्यों छे, पर्वतथी पडता पाणीना झरा, निर्झरो, कचरावाळा पाणीयाळुं एक प्रकारनुं जलस्थान, आनंद देनारुं जलस्थान, क्याराबाळो प्रदेश-ए बधानुं तेओए प्रहण कर्युं छे, क्बो, तळाव, धरो, नदीओ, चोखंडी वाव, गोळ वाव, घोरीयाओ, वांका धो-रीयाओ, तळावो, तळावनी श्रेणिओ, एक तळावथी बीजा तळा-. मां अने बीजा तळावथी त्रीजा तळावमां पाणी जाय ए प्रकारनी तळावनी श्रेणीओ अने बिलनी श्रेणीओ तेओर परिगृहीत करी छे, आराम, उद्यान, कानन-मामनी पासेनां बना, मामनी दूरनां वनो, बनखंडो अने दृक्षनी श्रेणीओ तेओए परिमृहीत करी छे. देव्कुर, आश्रम, परब, स्तूम, खाइ अने परिखाओ परिगृहीत करी छे, प्राकार-किलो, अहालक-जरुखा, चरिय-घर अने किलानी वश्चेनो हिस्ति विगेरेने जवानो मार्ग,-खडकी अने शहेरता दरवाजा परि-गृहीत कर्या छे, देवभुवन अथवा राजभुवन, सामान्य घर, हुंपडां, पर्वतमां कोतरेलुं घर, अने हाटो परिगृहीत कर्या छे, शृंगाटक-सिंगोडाना आकारनो मार्ग $-\Delta$, ज्यां त्रण होरी भेगी थाय ते त्रिकमार्ग-⊥, ज्यां चार शेरी मेगी थाय ते चतुल्क- िा मार्ग, चत्वर-ज्यां सर्व रस्ता भेगा थाय ते चोक-ग्र , चार दरवाजावाळा देवकुळ बगेरे अने महामार्गी परिगृहीत कर्या छे, शकट-गाडुं,-यान, युग, गिलि-अंबाडी,-थिलि-घोडानुं पलाण-, डोळी अने मेना-सुखपाल परिगृहीत कर्या छे, लोढी, लोढानु कडायुं अने कडछानो परिग्रह कर्यो छे, भवनपतिना निवासो परिगृहीत कर्या छे, देवो, देवीओ, मनुष्यो, मनुष्णीओ, तिर्यंचो, तिर्यंचणीओ, आसन, शयन, खंड, भांड, तथा सचित, अचित अने मिश्र इच्यो परिगृहीत कर्यों छे, माटे ते हेतुथी तेओ आरंभी अने परिप्रही छे.

---जहा तिरिक्खजोणिया तहा मणुस्सा वि भाणियव्या, वाणमंतर-जोड्डस-वेमाणिया जहा भवणवासी तहा नेयव्वा. —जेम तिर्यंचयोनिमा जीवा कथा तेम मनुष्यो पण कहेवा, तथा वाणमंतरो, ज्योतिषिओ अने वैमानिकों, जेम भवनवासी देवो कथा तेम जाणवा.

बाहिरिया मंडमत्तोवगरण ' ति उपकरणसाधर्म्याद् द्वीन्द्रियाणां शरीररक्षार्थं तत्कृतगृहकादीनि अवसेयानि. 'टंक ' ति छिन्नदृङ्कृताः, 'कूड ' ति कूटानि शिखराणि, हस्यादिवन्धनस्थानानि वा. 'सेल ' ति मुण्डपर्वताः, 'सिहरि ' ति शिखरिणः— शिखरवन्तो गिरयः, 'पन्मार ' ति ईषदवनता गिरिदेशाः, 'लेण ' ति उत्कीर्णपर्वतगृहम्, 'उज्झर ' ति अवझरः पर्वततटाद् उदकस्याऽधः पतनम्, 'निज्झर ' ति निर्झर उदकस्य स्रवणम्, 'निष्हल ' ति चिक्छिष्टिमिश्रोदको जलस्थानविशेषः; 'पहल ' ति प्रत्हादनशीलः स एव, 'पण्णिण ' ति वेदारवान्, तटवान् वा देशः, ''केदार एव ''

१. मूलच्छायाः— -विल-गुहा-लयनानि परिगृहीतानि भवन्ति, उज्झर-निर्झर-चिक्खल्ल-पहनल-वर्षाणानि परिगृहीतानि भवन्ति, क्ष्यड-तडाग-द्रह-नदः, वापी-पुष्करिण्यः, दीर्विकाः, गुझालिकाः, सरांति, सर पद्धयः, सरस्सरःपङ्कयः, बिलपङ्कयः परिगृहीता भवन्ति; आरागो-खानानि, काननानि, वनानि, वनखण्डानि, वनराज्यः परिगृहीता भवन्ति, प्राकार--अष्टालक-चरिका-द्वार-गोपुराणि परिगृहीतानि भवन्ति, प्रासाद-गृह-शरण-लयना-ऽऽपणाः परिगृहीता भवन्ति, श्वझाटक-चिक-चतुष्क-चरवर-चतुमुख-महापथाः परिगृहीता भवन्ति, शकट-रथ-यान-युग्य-गिल्ल-थिल्ल-शिविका-स्पन्दमानिकाः परिगृहीता भवन्ति, लौही-लोहकटाह-कडुच्छ-(का) यानि-परिगृहीतानि भवन्ति, भवनानि परिगृहीतानि भवन्ति, देवाः, देव्यः, मनुष्याः, मनुष्यः, तिर्थग्योनिकाः, तिर्थग्योनिसदः, आसन-रायन-खण्ड-भाण्ड-सच्चित्ता-ऽचित्त-मिथितानि द्व्याणि परिगृहीतानि भवन्ति-तत् तेनाऽर्थेन- यथा तिर्थग्योनिकास्तथा मनुष्या अपि भगित्वयाः,
वानव्यन्तर-ज्योतिष्कु-वैमानिका यथा भवनवासिनस्तथा नेतव्याः.—अनु०

इस्रन्ये. 'अगड' ति कूणः, 'वावि' ति वापी चतुरस्रो जलाशयिवशेषः, 'पुक्सिरणी' पुष्किरणी–वृत्तः स एव, पुष्किरवान् वा. 'दीहिय' ति सारिणः, 'गुंजालिय' ति वक्तसारिण्यः, 'सर' ति सरांसि—स्वयंसंभूत जलाशयिवशेषाः, 'सरपंतियाओ ' ति सरःपङ्कयः, 'सरसरपंतियाओ ' यासु सरःपिङ्किषु एकस्मात् सरसोऽन्यस्मिन्—अन्यस्माद् अन्यत्र एवं संचारकपाटकेन उदकं संचरित ताः सरःसरःपङ्कयः, विलपङ्कयः प्रतीताः, 'आराम' ति आरमन्ति येषु माधत्रीलतादिषु दम्पत्यादीनि ते आरामः, 'जजाण' ति द्यानानि पुष्पादिमद्वक्षसंकुल्लानि उस्तवादी बहुजनभोग्यानि, 'काणण' ति काननानि सामान्यवृश्चसंयुक्तानि नगराऽऽस्तवानि, 'वण' ति वनानि नगरविप्रकृष्टानि, 'वणसंदाई' ति वनखण्डा एक वातीयवृक्षसम्हान्मकाः, 'वणराइ' ति वनराजयो वृक्षपङ्क्तयः, 'साह्य' ति खातिका उपिर विस्तीर्णा, अधः संकटखातरूपाः, 'परिह' ति परिखाः अधः, उपि च समखातरूपाः, 'अष्टालग' ति प्राक्तारोपरि आश्रयविशेषाः, 'चरिय' ति चरिका गृह—प्राक्तारान्तरो हस्त्यादिप्रचारमार्गः, 'दार' ति द्वारम्—खडिकका, 'गोउर' ति गोपुरं नगरप्रतोली, 'पासाय' ति प्रातादा देवानाम्, राज्ञां च भवनानि; अथवा उत्सेधबहुलाः प्रासादाः, 'घर' ति गृहाणि सामान्यजनानाम्, सामान्यानि वाः, 'सरण' ति शरणानि तृणप्रयाऽक्तस्तिवानि, 'आवण' ति आपणा हृद्यः, शृङ्गाटकम्—स्थापना—∆ त्रिकम्—स्थापना—⊥ चतुष्कम्—स्थापना—∏ चत्वरम्—स्थापना—में चतुर्मुखं चतुर्मुखदेवकुलकादि, 'महापह' ति राजमार्गः, 'सगड' इत्यादि प्राग्वत् . 'लोहि' ति लौही मण्डकादिपचनिका, 'लोहकडाहि' ति कवेली, 'कडुच्छुय' ति परिवेपणाद्यशे भाजनविशेषः, 'भवणः,' ति भवनपतिनिवासाः.

९. ['बाहिरिया भंडमत्तोवगरण ' ति] उपकारनी समानताथी—एटले जेम मनुष्योनां घरो मनुष्योनी रक्षा करनारां होवाथी तेओनां उपकरणोमां लेखाय छे तेम--शरीरनी रक्षा माटे बेइन्द्रियोए करेलां घरोने पण तेओनां उपकरण समजवां. [' टंक ' ति] टांकणाथी छेदाएल पर्वतो, ['कूड' ति] शिखरो अथवा हाथी वगरेने बांधवानां स्थानो, ['सेळ' ति] मुंड पर्वतो-सूका पर्वतो, ['सिहरि' ति] शिखरबाळा पर्वतो, क्षेण-उब्हार. ['पब्सार' ति] थोडा नमेला पर्वतना भागो, ['लेण' ति] पर्वतमां कोतरेलुं घर, ['उज्झर' ति] ज्यां पर्वतना तटथी पाणी नीचे पडतुं निर्जर. होय ते स्थान, [' निज्झर ' ति] ज्यां पाणी चूतुं होय ते स्थान, [' चिछल ' ति] कचरावाळा पाणीयाळुं एक जातनुं जलस्थान, [' पछल ' ति] आनंद देवाना स्वमाववाळुं एक जातनुं जलस्थान, ['विष्पण'ति] क्यारावाळो प्रदेश अथवा तटवाळो प्रदेश, कोइ तो 'विष्पण' केदार. शब्दनो ''केदार '' ज अर्थ करे छे, ['अगड 'ति] कूबो, ['यावि 'ति] चोखंडो जलाशय--चोखंडी वाब, { पुक्खरिणि 'ति] मोळ बाब-दीविका- जलाशय-गोळवाव अथवा कमळवाळी चोखंडी वाव, ['दीहिय'त्ति] सारणिओ-घोरियाओ, ['गुंजालिय'त्ति] वांका घोरियाओ, ['सर' धोरिया— ब्राबी. ति] तळावो—जेमां स्वयमेव जल उत्पन्न थयुं छे तेवा जलाशयो, ['सरपंतियाओ 'ति] तळावनी श्रेणिओ, ['सरसर्पंतियाओ 'ति] ज तळावनी श्रेणीओमां संचारक पाटकवडे एक तळावशी बीजे तळावे अने बीजेशी त्रीजे तळावे पाणी जतुं होय ते सर:सर:पंक्ति कहेवाय, आ ाम. बिलनी श्रेणीओनो अर्थ प्रतीत छे, ['आराम 'ति] जे स्थानोमां, द्राक्षालता बगेरे लताओमां दंपतीओ कीडा करे ते आराम, ['उजाण 'ति] उत्सवादिना समये बहु माणसो द्वारा भोगवातां अने पुष्पादिवाळा बृक्षोधी भरपूर ते उद्यान, [' काणण ' ति] नगरी नजीक रहेळां साधारण कानत-वन. वृक्षो सहित ते कानन, ['वण ' ति] नगरथी दूर रहेलां ते वन, ['वणसंडाई ' ति] एक जातना वृक्षोना समूहरूप ते वनखंड, ['वणराइ ' त्ति] बृक्षोनी हारो, ['खाइय' ति] उपर पहोळी अने नीचे सांकडी खोदेळी खाइ, ['परिह' ति] नीचे अने उपर सरखी रीते खोदेळी तेपरिखा, अटारी-चरिया, ['अडालय' ति] किला उपर रहेला एक प्रकारना आशरा-झरुखा, ['चरिय'ति] चरिका एटले घर अने किलानी वचे हाथी वगेरेने ज़बानो मार्ग, ['दार'त्ति] खडकी, ['गोउर'त्ति] नगरना दरवाजा-(पोळ), ['पासाय'त्ति] राजानां घर के देवोनां घर अथवा पोल-प्रासाद-**घर**-छापरां. प्रासाद-उंचां घरो, [' घर ' त्ति] सामान्य घर अथवा साधारण माणसोनां घर, [' सरण ' ति] घासमय छापरां-झुंपडां,-[' आवण ' ति] शंगाटक-विक. हाटो, रांगाटक एटले सिंगोड़ं-जे रस्तो सिंगोडाने घाटे त्रिकोण जेवो होय तेन पण अहीं रांगाटक वहारे हे, ते रांगाटकनो आकार आ प्रमाले चतुष्क-चलर. छैं: △. तरभेटाने अहीं त्रिक कहेलों छे अने तेनो आकार आ प्रमाणे छे: ⊥. चतुष्क एटले चोक अने ए चोकनो आकार आ प्रमाणे छे: चत्वर-ए एक जातना मार्गतुं नाम छे अने तेनो घाट आ प्रमाणे छेः 🚌 चार मुखवाळां देवकुळ वरेगरेने ' चतुमुंख ' कहेवामां आवे छे. महापथ. [' महापह ' ति] राजमार्ग-सरियाम रस्तो, [' सगड '] इत्यादिनो अर्थ पूर्ववत् जाणी छेवो, [' लोहि ' ति] मांडा पकाववानी लोढी, होडी-कहछो. [' छोहकडाहि ' ति] छोढानुं कडायुं, ['कडुच्छुय ' ति] पीरसवा माटेनुं एक प्रकारनुं भाजन-कटछो,-[' भवण ' ति] भवनपतिनां

हेतुओ (?)

-- पंच हेज पण्णत्ता, तं जहा:-हेजं जाणइ, हेजं पासइ, -- पांच हेतुओ कहा छे, ते जेम के, हेतुने जाणे छे, हेतुने हेजं बुज्झइ, हेजं अभिसमागच्छति, हेजं छजमत्थमरणं मरइ. जुए छे, हेतुने सारी रीते श्रह्मे छे, हेतुने सारी रीते प्राप्त करे छे, हेतुने सारी रीते प्राप्त करे छे,

For Private & Personal Use Only

निवास स्थानोः

^{9.} मूलच्छायाः—पश्च हेतवः प्रश्तप्ताः, तथयाः-हेतुं जानाति, हेतुं पश्यति, हेतुं बुध्यते, हेतुम् अभिसगागच्छति, हेतुं छद्मस्थमरणं भियतेः—भृतु•

- —पंचे हेऊ पनता, तं जहाः-हेउणा जाणर, जाव-हेउणा छजमत्थमरणं मरइ.
- पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा:-हेउं ण जाणइ जाव-अचाणं मरणं मरइ.
- —पंच हेड पण्णता, तं जहाः-हेडणा ण जाणइ जाव-हेडणा अनाणमरणं ति मरति.
- —पंच अहेउ पण्णता, तं जहा:-अहेउं जाणइ, जाव-अहेउं केबालिमरणं मरइ.
- —-पंच अहेउ पण्णत्ता, तं जहा:-अहेउणा जाणइ, जाय-अहेउणा केवलिमरणं मरइ.
- पंच अहेड पन्नता, तं जहा:-अहेडं न जाणइ, जाय-अहेडं छडमत्थमरणं मरइ.
- —पंच अहेउ पत्रता, तं जहाः-अहेउणा न जाणइ, जाव--अहेउणा छउमत्थमरणं मरइ.
 - सेवं भंते !, सेवं भंते ! त्ति.

- --- पांच हेतुओ कह्या छे, ते जेम के, हेतुए जाणे छे, यावत् हेतुए छग्रस्थमरण करे छे.
- —पांच हेतुओं झहा छे, ते जेम के, हेतुने न जाणे, यावत् हेतुवाळं अज्ञानभरण करे.
- —पांच हेतुओ कह्या छे, ते जेम के, हेतुए न जाणे यावत् हेतुए अज्ञानमरण करे.
- —पांच अहेतुओ कहा। छे, ते जेमके, अहेतुने जाणे छे यावत् अहेतुवाळुं केवलिमरण करे छे.
- —पांच अहेतुओ कह्या छे, ते जेमके, अहेतुए जाणे यायत् अहेतुए केवलिमरण करें.
- -- पांच अहेतु कहा। छे, ते जेमके, अहेतुने न जाणे यावत्-अहेतुवाळुं डकस्थमरण करे.
- पांच अहेतु कहा। छे, ते जेमके, अहेतु ए न जाणे, यावत् अहेतुए छवास्थमरण करे.
- —हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे (एम कही श्रमण भगवंत गौतम विचरे छे)

भगवंत-अज्ञ पुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते पंचमसये सत्तमो उदेसो सम्मत्तोः

१०. एते च नारकादयः छद्मस्थलेन हेतुव्यवहारिकलाद् हेतव उच्यन्ते इति तद्भेदान् निरूपयन् आहः—'पंच हेऊ ' इसादि. इह हेतुषु वर्तमानः पुरुषो हेतुरेव-तदुपयोगाऽनन्यत्वात् . पञ्चविधत्वं चाऽस्य क्रियामेदाद् इसत आहः--- हेउं जाणइ ' ति हेतुं साध्याऽविनाभूतं साध्यनिश्चयार्थं जानाति—विशेषतः सम्यम् अवगन्छति—सम्यग्दछित्वाद् , अयं पञ्चविधोऽपि सम्यग्दछि-र्भन्तव्य:, मिथ्यादष्टेः सूत्रद्वयात् परतो वक्ष्यमाणत्वाद् इत्येकः. एवं हेतुं पश्यित सामान्यत एवाऽवबोधाद् इति द्वितीयः. एवं बुध्यते सम्यक् श्रद्धत्ते-बोधेः सम्यक्श्रद्धानपर्यायत्याद् इति तृतीयः. तथा हेतुम् अभिसमागच्छति साध्यसिद्धौ व्यापारणतः सम्यक् प्राप्तोति इति चतुर्थः तथा 'हेउं छउमत्थ-' इत्यादि. हेतुरध्यवसानादिर्मरणकारणम्-तद्योगाद् मरणमपि हेतुरतस्तं हेतुगद्-इत्यर्थः, छग्नस्थमरणम्, न केवलिमरणम् ; तस्याऽहेतुकत्यात् , नाऽपि अज्ञानमरणम् , एतस्य सम्यग्ज्ञानित्यात्—अज्ञानमरणस्य च वक्ष्यमाणत्यात् , म्नियते करोति इति पञ्चमः. प्रकासन्तरेण हेतून् एवाऽऽहः—' पंच ' इत्यादि-हेतुना अनुमानोत्थापकेन जानाति, अनुमेयं सम्यग् 'अवगच्छति सम्यग्दृष्टित्वाद् एक:. एवं पश्यति इति द्वितीय:. एवं बुध्यते-श्रद्धत्ते इति तृतीय., एवम् अभिसमागच्छति प्राप्नोति-चतुर्थः. तथाऽकेविलिवात् , हेतुना अध्यवसानादिना छदास्थमरणं म्रियते इति पञ्चमः. अयं मिध्यादृष्टिम् , आश्रित्य हेतृन् आहः—' पंच ' इत्यादि. पञ्च क्रियामेदात्, हेतवो हेतुच्यवहारित्यात् , तत्र हेतुं लिङ्गं न जानाति, नञः कुत्सार्थत्याद् असम्यग् अवैति-मिध्यादृष्टित्यात् , एवं न पश्यति, एवं न बुध्यते, एवं नाऽभिगच्छति. तथा हेतुम् अध्यवसानादिहेतुयुक्तम् अज्ञान रणं न्रियते करोति-मिध्यादृष्टित्वेना-Sसम्यग्ज्ञानत्वाट् इति. हेतून् एव प्रक्षारान्तरेणाऽऽहः—' पंच ' इत्यादि. हेतुना लिङ्गेन न जानाति असम्यगवगम्छति एवम् अन्येऽपि चत्वार: अय उक्तविपक्षमूतान् अहेतून् आह 'पंच 'इत्यादि. प्रत्यक्षज्ञानित्वादिनाऽहेतुव्यवहारित्वाद् अहेतवः—क्रेवलिनः, ते च पञ्च क्रियामेदात् , तद्यथाः—' अहे उं जाणइ ' ति अहेतुभावेन सर्वज्ञत्वेनाऽनुमानाऽनपेक्षत्वाद् धूमादिकं जानाति, खस्याऽननुमानोः त्थापकतया इत्यर्थः- अतोऽसौ अहेतुरेव. एवं 'पश्यति ' इत्यादि. तथा 'अहेतुं केवालिमरणं मरइ ' ति अहेतुं निर्हेतुकम्— अनुपक्रमत्वात् केवलिमरणं म्रियते करोति इत्यहेतुरसी पञ्चम इति. प्रकारान्तरेणाऽहेतून् एवाऽऽहः—' पंच ' इत्यादि तथैव, . नवरम्:—अहेतुना हेत्वभावेन केविलित्वाद् जानाति योऽसौ अहेतुरेव इति. एवं पस्यति इत्यादयोऽपि. '*अहेउणा केवालिमरणं मरइ* '

Jain Education International

www.jainelibrary.org

ति अहेतुना उपक्रमाऽमावेन केविलमरणं मियते, केविलनो निर्हेतुकस्यैव तस्य भावाद्—इति. अहेतून् एव प्रकारान्तरेणाऽऽहः—
'पंच अहेज ' इत्यादि. अहेतवः अहेतुव्यवहारिणः, ते च पञ्च ज्ञानादिभेदात् . तयथाः—'अहेउं न जाणइ 'ति अहेतुं न हेतुभावेन स्वस्थाऽनुमानाऽनुत्थापकतया इत्यर्थः, न जानाति न सर्वथाऽवगच्छिति—कथित्रद्धे एवाऽत्रगच्छिति इत्यर्थः—नजो देशप्रतिथेधार्थत्वात , ज्ञातुश्वाऽवथ्यादिज्ञानत्वात् कथित्रद्धे ज्ञानम् उक्तम् , सर्वथा ज्ञानं तु केविलन एव स्याद् इति. एवम् अन्यान्यि तथा 'छउमत्थमरणं मरइ 'ति अहेतुम् अध्यवसानादेरपत्रमकारणस्थाऽभावात् छद्मस्थमरणम् अकेविलत्वात् , नतु अज्ञानमरणम् , अवध्यादिज्ञानित्वेन ज्ञानित्वात् तस्येति. अहेतून् एवाऽन्यथाऽऽहः—' पंच ' इत्यादि तथैव, नवरमः—अहेतुना हेत्वभावेन न जानाति, कथित्रदेव अध्यवस्यति—इति गमनिकामात्रम् एवेदम् . अष्टानामध्येषां सूत्राणां भावार्थे तु बहुश्रुता विदन्ति इति.

भगवस्युधर्मस्वामिप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पश्चमशते सप्तम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

१०. छग्नस्थपणाने लहने हेतुना व्यवहार करनारा होवाथी, ए बधा नैरियक वगेरे जीवो (पण) हेतुओ कहेवाय, माटे हवे हेतुना भेदोने निरूपता [' पंच हेऊ '] इत्यादि सूत्र कहे छे, अहीं-आ सूत्रोमां, हेतुना उपयोग-ज्ञान-थी अभिन्न होवाथी, हेतुओमां वर्ततो पुरुष पण हेतु ज कहेवाय, अने कियानी जुराइ होवाथी ए हेतु पांच प्रकारना छे माटे कहे छे:--[' हेउं जाणइ ' ति] साध्यना निश्चय माटे, साध्या-विनाभृत-साध्यनी विना नहि रहेता-भता-साध्य साथे ज रहेनार हेतुने विशेषथी सारी रीते जाणे छे, सम्यग्दृष्टिपणुं होवाथी, आ पांचे प्रकारनो हेतु पण सम्यम्हिष्ट मानवी, कारण के, वे सूच पछी मिथ्यादृष्टि हेतु कहेवाड़ी-ए एक हेतु थयो. ए प्रमाणे, सामान्यपणे अवबीय होवाथी हेतुने जुए छे, ए बीजो हेतु थयो ए प्रमाण हेतुने सारी रीते बोधे छे-सद्दें छे, कारण के ' बुध ' धातु सम्यन्त्रद्धानो पर्याय-समानार्थ-छे, ए त्रीजो हेत थयो. तथा साध्यनी सिद्धिमां वापरवाथी हेतुने सारी रीते प्राप्त करे छे, ए चोथो हेतु थयो. तथा [' हेउं छउमस्य ~' इंत्यादि.] हेतु एटले मरणना कारणरूप अध्यवसाय बगरे, भरणनो, हेतु साथे संबंध होवाथी मरण पण हेतु कहेवाय, माटे ते हेतुने एटले हेतुवाळा छबास्य मरणने करे छे; अहेतुक होवाथी, केवलिमरण अहीं न लेयुं, तेम आ हेतु सम्यग्ज्ञानी होवाथी अने अज्ञान मरण आगळ कहेवामां आवशे माटे अज्ञान मरण पण न छेवुं-ए पांचमो हेतु थयो. बीजे प्रकारे हेतुओने ज कहे छे:---[' पंच ' इत्यादि.] अनुमानना उत्पन्न करनार हेतुबडे अनुमयवस्तुने सम्यगृहृष्टि होनाथी सारी रीते जाणे छे, ए एक ए प्रमाणे जुए छे, ए बीजो. ए प्रमाणे बोधे छे एटछे श्रद्धे छे-ए त्रीजो. ए प्रमाणे सारी रीते प्राप्त करे छे, ए चोथो तथा अकेवली होवाथी अध्यवसायादिरूप हेतुए छन्नस्थ मरण करे छे-ए पांचमी. हवे मिण्यादृष्टिने आश्रीने हेतुओने कहे छे:--[' पंच ' इत्यादि] हेतुनो व्ययहारी होवाथी जीव पण हेतु कहेवाय, कियानो भेद होवाथी ए हेतु पांच छे, तेमां मिथ्यादृष्टिपणाथी हेतुने नथी जाणतो एटले ' नन् ' कुत्सार्थवाळो होवाथी असम्यक् प्रकारे हेतुने जाणे छे-ए एक. ए प्रमाणे नथी जोतो २. ए प्रमाणे, श्रद्धा नथी करतो ३. ए प्रमाणे प्राप्त नथी करतो ४. तथा मिथ्यादृष्टिपणाने लीघे असम्यग् ज्ञानी होवाधी अध्यवसानादि हेतु सहित अज्ञान मरण करे छे ५. बीजी रीते हेतुओंने ज कहे छे:--[' पंच ' इत्यादि.] हेतु एटले निशान-ते वडे-हेतु वडे-सम्यक् प्रकारे जाणतो नथी, ए एक अने ए प्रमाणे बीजा पण चार हेतु श्रो समजवा हवे कहेला हेतुओथी विपक्षभूत हेतुओने कहे छे:--[' यंच ' इत्यादिः] केवलज्ञानिओने सघलुं प्रत्यक्ष होय छे--माटे तेवा प्रत्यक्ष ज्ञान धरावता केवलज्ञानिओने कांइ पण जीवा के जाणवा कोइ हेतु-निशान-नी जरूर रहेती नथी तेथी तेओ (केवळज्ञानिओ) अहेत-हेतुनी जरूर विनाना-कहेवाय छे अर्थात् प्रत्यक्ष ज्ञानिपणाने लीधे हेतुना व्यवहारी न होवाथी केवलज्ञानिओ अहेतु कहेवाय छे. अने कियानो भेद होवाथी ते पांच छे. ते जेम के, [' अहेउं जाणह ' ति] सर्वज्ञपणाने लीधे अनुमाननी जरूर न होवाथी धूमादिक पदार्थीने अहेत समजे छे-अभिने जाणवा गाटे तेओने (धूमादिने) हेतुमावे जाणता नथी, कारण के, सर्वज्ञने पोताने अनुमान करवापणुं होतुं नथी तथी धूमादिक पदार्थी तेना कोठामां कोइ जातनुं अनुमान करावी शकता नथी माटे ज ते धूमादिक हेतुनी अपेक्षा विनाना सर्वज्ञ ' अहेतु ' कहेवार्थं. ए प्रमाणे ' जुए छे ' वेगरे त्रण अहेतुओं जाणवा तेम ज अनुपक्रमी एटले कोइ निमित्तथी मार्था न मरे तेवा होवाथी अहेतुक केवलिमरण करे छे--ए पांचमो अहेतु समजवो बीजे प्रकारे अहेतुओने ज कहे छे:--[' पंच ' इत्यादि.] तेम ज एटले पूर्वनी पेठे जाणवुं. विशेष ए कें, केंचली होवाथी, हेतु न होय तो पण वस्तुने जाण ए अहेतु ज कहेवाय, ए प्रमाण 'जूए छे ' इत्यादि ३ किया पण जाणी लेवी. [' अक्रेंडणा केविलमरणं मरइ ' त्ति] उपक्रम न होवाथी केविलमरण करे छे, कारण के, केविलेनं मरण निर्हेतिक होय छे. बीजे प्रकार अहेतुओने ज कहे छै:--[' पंच अहेऊ ' इत्यादि. अहेतुना व्यवहारी जीव पण अहेतु कहेवाय, ज्ञानादिनो-जाणवुं वगेरे कियाओनो-भेद होवाथी ते अहेतु पांच छे. ते जमके, [' अहेउं न जाणइ ' ति] धूमादि पदार्थी अनुमानना प्रादुर्भावक ज छे-एवी एकान्त-न् होत्राथी तेओने सर्वथा अहेतुभावे जाणता नथी पण कथंचित् ज जाणे छे, कारण/के, अहिं ' नज्, ' अल्प-निषेध-अर्थवाळो छे अने जाणनीर अवधि बगेरे ज्ञानवाळो होवाथी तेने सर्वथा ज्ञान नथी कह्युं पण कथंचिद, ज्ञान कह्युं छे, सर्वथा ज्ञान तो केवलिने ज होय छे, एम बीजा पण त्रण जाणी लेवा. तथा [' अहेउं छउमत्थमरणं मरइ ' ति] अध्यवसान वगेरे उपक्रम कारण न होवाधी अहेतु मरण अने ते ज मरण केवलिएणुं न होवाधी छक्षस्थ मरण कहेवाय, पण अवधि वंगरे ज्ञान हे वाथी तेना ज्ञानिपणाने लीघे अज्ञानमरण न वहेंवाय. अन्यथा-वीजे प्रकारे-अहेतुओने ज कहे छेः—['पंच'इत्यादि.] बधुं तेम ज-पूर्वनी पेठे-जाणवुं. विशेष ए के, अहेतुए कथंचित् ज जाणे छे. आ अहीं जणादेली टीका तो मात्र गमनिका-अक्षरार्थरूप-ज छे. अने आ आठे सूत्रोनो भावार्थ तो बहुश्रुतो न जाणे छे.

तो अक्षरार्थ छे-वार्थ तो बहु सतो जाणे.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वेतजीवी तपसी । अस्माकं वीरवीरोऽतुगतनस्वरो वाहको दान्ति-शान्त्योः-द्वात् श्रीवीरदेवः स्वल्शिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

शतक ५ उद्देशक ८.

सहाबीरना अंते ासी नारदपुत्र अने निर्मेथीपुत्र.-पुद्रलो शुं सार्थ छे ?-समध्य छे ?-समदेश छे ?- नास्दपुत्रना मते सर्व पुद्रलो सार्थ-समध्य अने सप्रदेश छे.-प नारदपुत्रना मत विषे निर्मेथीपुत्रनी सविस्तर चर्चा .-नारदपुत्रे कद्लेछ ए विषेनुं पोतानुं अजाणपणुं,-तेनी सत्य जाणवानी इच्छा -निर्मेथीपुत्रे नारदपुत्रने ए संबंधे आपेली सविस्तर समजग.-पुहलोनुं जुदी जुदी अपेक्षाप न्यूनाधिकपणुं-नारदपुत्रे निर्मथीपुत्र पासे पोताना अजाणपणाने लगती मागेली क्षमा.-विहार.-गीतम बोल्या-जीतो वधे हे १-हीणा थाय हे १-अतस्थित हे १-जीतो वधता नथी-धटता नथी-अवस्थित हे.-नेर्धिकोधी यावत्-वैमानिको सुवी पूर्वोक्त विचार.-सिद्धोनी वय-घट-स्थिरता दिवे विचार-जीगोनु अवस्थान वयां सुधी १-सर्व काल.-नैरियकोनुं वयवापणुं क्यां सुंधी १-एक समेंय-आविलकानो असंख्य भाग.-ए रीते घटवापेणुं -नैरियक्तीनुं अवस्थान क्यां सुधी १-एक समय-चोबीश सुहूरी.-एम साते ेमारकी.-तेने रुगती विशेषता.-ए रीते असुरकु गरोनी-एकेंद्रियोनी-वे दियोनी-यावत्-च३-इंद्रियोनी-संमूछिमोनी-गर्भजोवी-वानव्यंतरोनी-ज्योति-पिकोनी अने सौधर्भ ईशान।दिनी वध-घट-स्थिरत नी विच।रणा -ए जातनीं सिद्धोने लगतीं विचारणा.-शुं जीवो सोपवय छे?-सापचय छे?-सोपचय-सापचय छे ?-निरुपचय-निरपचय छे ?-जीवो निरुपचय-निरपचय छे.-ए प्रमाणे सिद्धीने लगती विचारणा.-कालनी अपेक्षाए जीव मात्रने लगती य जातनी विचारणा - हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे ---

--ते णं काले णं, ते णं समए णं, जाव-परिसा पडिगया. अंतेवासी णारयपुत्ते णामं अणगारे पगइभइए, जाव-विह्रुसतिः ते णं काले णं, ते णं समए णं समणस्स भगवओ महावरिस्स जाव-अंतेवासी नियंठिपुत्ते नामं अणगारे पगइभइए, जाव-विद्वरहः, तए णं से नियंठिपुत्ते अणगारे जेणामेव नारयपुत्ते अण-गारे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छइत्ता, नारयपुत्तं अणगारं निर्प्रथीपुत्रे-नारदपुत्र अनगारने आ प्रमाणे कह्युं:-एकं वयासी: —

१. प्र०—सम्बपोग्गला ते अज्जो ! किं सअडूा, समज्ज्ञा, सेपेएसाः, उदाह, अणजा, अमञ्ज्ञा, अपएसा १

गारं एवं वयासी:-सव्वयोग्गला मे अज्जो ! सअडूा, समज्ज्ञा, अनगारने एम कह्युं कें, मारा मत प्रमाणे-मारा घारवा प्रमाणे-

---ते काळे ते समये यावत्-सभा पाछी वळी. ते काळे, ते णं काले णं, ते णं समए णं समणस्त भगवओ महावीरस्स ते समये श्रमण भगवंत महावीरना शिष्य नारदपुत्र नामे अनगार, जेओ प्रकृतिभद्र यह यावन् विहरे छे, ते काळे, ते समये श्रमण भगवंत महावीरना शिष्य निर्प्रनथीपुत्र नामे अनुगार प्रकृतिमद्र थइ यावत् विहरे छे, पछी ते निर्धन्धीपुत्र नामे अनगार ज्यां नारदपुत्र अनगार छे त्यां आवे छे, अने त्यां आवीने तेमणे-

> १. प्र०-हे आर्य ! तमारा मते सर्व पुद्रलो ह्युं अर्ध सहित छे, मध्यसहित छे, प्रदेशसहित छे के अनर्ध, अमध्य अने अप्रदेश छे ?

?. उ०—अजो ! ति नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अण- 🐃 १. उ०—हे आर्थे ! एम कही नारदपुत्र अनगारे निर्प्रधीपुत्र

१. मूंरुच्छायाः — तरिमन् काले, तहिमन् समये, यावत् -पर्यत् प्रतिगताः तिरिमन् काले, तिरिमन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्याऽन्तेवासी नारदपुत्री नाम अनगारः प्रकृतिमद्रतः यावत्-विद्रंति. त्रिमन् काछे, तरिमन् समये ध्रमणस्य भगवतो महावीरस्य यावत्-अन्तेवासी निर्धन्थीपुत्री नाम-अनगारः प्रकृतिभद्रकः यावत्-विहरति; ततः सो निर्धन्थीपुत्रोऽनगारो येनैव नारदेपुत्रोऽनगारस्तेनैव उपागच्छति, तेनैव उपागम्य नारद्पुत्रम् अनगारम् एवम् अवादीतः-सर्वेषुद्गलास्ते आर्थे। कि सार्धाः, समध्याः,सप्रदेशाः; उताहोऽनर्धाः, अमध्याः, अप्रदेशाः ? आर्थे। इति नारदेषुत्रोऽनगारो मिर्धन्यीपुत्रम् अनगारम् एवम् अवाबीदः-सर्वपुद्रला मे आर्थ ! सार्थाः, समध्याः--अतु०

सैपएसाः; नो अणड्या, अमन्द्राः, अपएसाः

२. प्र०--तए णं से नियंठिपुत्ते अण्गारे एवं वयासी:-जइ अणडूा, अमज्हा, अपएसा किं दव्यादेसेणं अजी ! सव्यपोगंगला सअड्डा, समज्ज्ञा, सपएसा; नो अणड्डा, अमज्ज्ञा, अपएसा ? खेतादेसेणं अजो ! सब्दपोग्गला सअड्डा-तह चेव ? कालादेसेणं तं चेव ? भावादेसेणं तं चेव ?

२. उ०--तए णं से नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं एवं वयासी:-दव्वादेसेण वि मे अज्जो ! सव्वपोग्गला सअङ्ग, समज्ज्ञा, सपएसा; नो अणडूा, अमज्ज्ञा, अपएसा; खेतादेरीण सअर्ध, समध्य अने सप्रदेश छे पण अनर्ध, अमध्य के अप्रदेश वि, कालादेसेण वि, भावादेसेण वि एवं चेव.

—तए णं से नियंदिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी:-अइ णं हे अज्ञो ! दव्वादेसेणं मन्वपोग्गला, सअड्डा कह्युं के, हे आर्थ ! जो द्रव्यादेशयी सर्व पुद्रलो सअर्घ, समध्य सअडूा, समज्ज्ञा, सप एसा; एवं ते एगसमयद्वितिए वि.पोग्गळे .पण सअर्ध, समध्य अने सप्रदेश होवुं जोइए, वळी, हे आर्य ! वि पोग्गले सअहूँ, समन्त्रे, सपएसे तं चेव; अह ते एवं न पण सअर्ध इत्यादि ते जनते प्रकारना होवा जोइए, वळी हे आर्थ! ज्झा, सपएसा; नो अणडूा, अमज्झा, अपएसा; एवं खेत्त-काल- तो तारा मतमां एम होवाथी एकगुण काळुं पुद्रल पण संअर्ध भावादेसेण वि ' तं णं भिष्छा.

बधां पुद्रलो संअर्ध, समध्य अने सप्रदेश छे पण अनर्ध, अमध्य के अप्रदेश नधी.

२. प्र०-लार पछी ते निर्प्रधीपुत्र अनगार एम बेल्या के, णं ते अज्ञो ! सन्वयोग्गला सअड्डा, सेमज्झा, सपएसा; नो हे आर्थ ! जो तारा मतमां-तारा धारवा प्रमाणें-सर्व पुद्रलो सअर्घ, समध्य, सप्रदेश छे पण अनर्घ, अमध्य के अप्रदेश नधी तो हे आर्य ! हां द्रव्यादेशवडे सर्व पुद्रलो सअर्ध, समध्य अने सप्रदेश छे अने अनर्ध, अमध्य अने अप्रदेश नथी ? के हे आर्थ ! क्षेत्रादेशवडे सर्व पुद्रलो अर्धसहित बगेरे तथैव-पूर्व प्रमाणे छे ? के ते ज प्रमाणे कालादेशथी छे ! के ते ज प्रमाणे भावादेशथी छे !

> २. उ०--त्यारे ते नारदपुत्र अनगारे निर्प्रधीपुत्र अनगारने एम कह्युं के, हे आर्थ ! मारा मतमां इंच्यादेशथी पण सर्व पुद्रछो नथी; ए प्रमाणे, क्षेत्रादेशथी पण छे, का अदेशथी पण छे अने भावादेशथी पण छे.

----सारे ते निर्प्रंथीपुत्र अनगारे नारदपुत्र अनगारने एस समज्झा, सपएसा; नो अणडूा, अमज्झा, अपएसा, एवं ते अने सप्रदेश छे पण अनर्ध, अमध्य अने अप्रदेश नथी तो तारा परमाणुपोरगले वि संअङ्के, समञ्झे, सपएसे; णो अणङ्के, अमज्झे, सतमां ए प्रमाणे होवाथी परमाणुपुद्रल पण संअर्ध, समध्य अने अपएसे; जइ णं अब्जो ! खेतादेसेण वि सव्वपोग्गला सअडूा, सप्रदेश होवो जोइए पण अनर्ध, अमध्य के अप्रदेश न होवो जोइए, समज्झा, सपएसा; एवं ते एगपएसोगाढे वि पोग्गले सअडू, हे आर्य ! जो क्षेत्रादेशथी पण बधां पुद्रलो सअर्घ, समध्य अने समज्ले, सपएसे; जिंत पं अज्जो ! कालादेसेणं सन्वयोगाला सप्रदेश छे तो तारा मतमां एम होवाथी एकप्रदेशावगाढ पुद्रल सअहै, समज्झे, सपएसे-तं चैन, जइ णं अजो ! भावादेसेणं जो कालादेशथी ५ण सर्व पुद्रको सअर्घ, समध्य अने सप्रदेश छे सब्द्रपोग्गला सअडूा, समन्द्रा, सपएसा; एवं ते एगगुणकालए तो तारा मतमां ए प्रमाणे होवाथी एक सम्यनी स्थितिवाळां पुद्रलो भवति तो जं वयित 'दव्वादेसेण वि सव्वयोग्गला सअडूा, सम- जो भावादेशथी पण सर्व पुद्रलो सअर्घ, समध्य अने सप्रदेश छे इत्यादि ते ज प्रकारनं होतुं जोइए, हवे जो तारा मतमा एम न होय सो तुं जे कहे छे के, '' द्रव्यादेशवडे पण बधां पुंद्रलो सार्थ समध्य अने सप्रदेश छे पण अनर्भ, अमध्य अने अप्रदेश नथी, एं प्रमाणे क्षेत्रादेशवडे, कालादेशवडे अने भावादेशवडे प्रमा तुं कहे छे, " ते खोटुं थाय.

www.jainelibrary.org

१. मूरुच्छायाः--सप्रदेशाः; नोऽनर्धाः, अप्रदेशाः, ततः स निर्प्रन्थीपुत्रोऽनगारः एवम् अवारीतः-यदि ते आर्थ । सर्वपुत्छाः साधीः, समध्याः, सप्रदेशाः; नोऽनधीः, अमध्याः, अप्रदेशाः, किं द्रव्याऽऽदेशेनाऽऽर्थ ! सर्वपुद्रलाः साधीः, समध्याः, सप्रदेशाः, नोऽनधीः, अमध्याः, भप्रदेशाः ? क्षेत्राऽऽदेशेनार्य ! सर्वपुरूलाः सार्थाः, तथा नैव ! कालाऽऽदेशेन तच्चैव ! भावाऽऽदेशेन तच्चैव ! ततः स नारदपुत्रोऽनगारो निर्म-न्बीपुत्रमनगारम् एवम् अवादीतः-द्रव्याऽऽदेशेनाऽपि ममाऽऽर्य । सर्वपुत्रलाः सार्थाः, समध्याः, सप्रदेशाः; नोऽनर्थाः, अमध्याः, विप्रदेशाः; क्षेत्राऽऽदे-शेनाऽपि, कालाऽऽदेशेनाऽपि, भावाऽऽदेशेनाऽपि एवं नैव. ततस्स निर्मन्यीपुत्रोऽनगारी नारदपुत्रम् अनगारम् एवम् अवादीतः-यदि हे आर्य ! ह्रव्याऽऽदेशेन सर्वपुद्रलाः सार्थाः, समध्याः, सप्रदेशाः; नो अनर्षाः, अमध्याः, अप्रदेशाः, एवं ते परमाणुपुद्रलोऽपि सार्थः, समध्यः, सप्रदेशः, नी अनर्थः, अमध्यः, अप्रदेशः; यदि आर्थ । क्षेत्राऽऽदेशेन अपि सर्वपुद्गलाः साधीः, समध्याः, सप्रदेशाः; एवं ते एकप्रदेशावगाडोऽपि पुद्रतः सार्थः, समध्यः, सप्रदेशः, यदि आर्ये ! कालाऽऽदेशेन सर्वपुद्रलाः साधीः, समध्याः, सप्रदेशाः; एवं ते एकसमयरिथतिकोऽपि पुद्रलः साधीः, समध्यः, सप्रदेशः-तस्वैवः यदि आर्यः। भावाऽऽदेशेन सर्वपुर्देखाः, सार्धाः, समस्याः, सप्रदेशाः; एवं ते एकगुणकालकोऽपि पुद्गलः सार्धः,समस्यः, सप्रदेशः, तस्वैवः ें अब ते एवं न भवति ततो यद् वदिए ' इब्बाऽऽदेशेनापि सर्वपुद्गलाः सार्थाः, समध्याः, सप्रदेशाः; नोऽनर्थाः, अमध्याः, अप्रदेशाः; एवं क्षेत्र-काल-भावाऽऽदेशेनाऽपि 'तत् निध्याः---अंडु०

—तैए णं से नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं एवं वयासी:-नो खलु देवाणुण्यिया ! एयम इं जाणामो, पासामो, जइ णं देवाणुष्पिय णों गिलायंति परिक्रहित्तए तं इच्छामि णं देवाणुध्यियाणं अंतिए एयमद्वं सोचा, निसम्म जाणित्तए.

—तए णं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं षयासी:-दव्वादेसेण वि मे अज्जो ! सन्त्रे पोग्गला सपएसा वि, अपएसा वि-अणंता; खेत्तादेसेण वि एवं चेव, कालादेसेण वि, भावादेसेण वि एवं चेव; जे दव्वओ अपएसे से खेत्तओ नियमा अपएसे, कालओ सिय सपएसे, सिय अपएसे; भावओ सिय सपएसे, सिय अपएसे. जे खेत्तओ अपएसे से दब्बओ सिय सपएसे, सिय अपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए; जहां खेत्तओं एवं कालकों, भावओं. जे दव्यओं सपएसे से खेतओ सिय सपएसे, सिय अपएसे; एवं कालओ, भावओ वि. जे खेत्तओ सपएसे से दब्बओ नियमा सपएसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए; जहा दव्यओ तहा कालओ, भावओ वि.

- २. प्रo-एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं दव्वादेसेणं, खेता-देसेणं, कालादेसेणं,भावादेसेणं सपएसाणं, अपएसाणं कयरे, कयरे जाव-विसेसाहिया वा ?
- २. उ०—नारयपुत्ता ! सन्वस्थोवा पोग्गला भावादेसेणं अपएसा, कालादेसेणं अपएसा असंखेजगुणा, दव्यादेसेणं अपएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं अप्पएसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं चेव सपएसा असंखेजगुणा; दव्वादेसेणं सपएसा विसेताहिया, कालादेसेणं सपएसा विसेसाहिया, भावादेसेणं सपएसा विसेसा-हिया.

---तए णं से नारयपुत्ते अणगारे नियंदिपुत्तं अणगारं वंदइ,

--- सारे ते नारदपुत्र अनगारे निर्गंथीपुत्र अनगार प्रति एम कहुं के, हे देव नुत्रिय! ए अर्थने अमे जाणता नथी, जोता नथी; हे देशानुप्रिय! जो तमे ते अर्थने कहेतां ग्लानि न पामो तो हुं आप देवानुप्रियनी पासे ए अर्थने सांमळी, अववारी जाणवा इच्छुं छुं.

— त्यार बाद ते निग्धीपुत्र अनगारे नारदपुत्र अनगारने एम कहुं के, हे आर्थ ! मारा धारवा प्रनाणे द्रव्यादेशवडे पण सर्व पुद्रलो सप्रदेश पण छे अने अप्रदेश पण छे, तेओ अनंत छे; क्षेत्रादेशवडे पण एम ज छे; कालादेश अने भावादेशवडे पण ए प्रमाणे ज छे, जे पुद्रल, दव्यथी अप्रदेश छे, ते, नियमे करी-चोक्स-क्षेत्रधी अप्रदेश होय छे, कालधी कदाचित् सप्रदेश अने कदाचित् अप्रदेश होय अने भावशी पण कदाचित् सप्रदेश होय अने कदाचित् अप्रदेश होय. जे क्षेत्रथी अप्रदेश होय ते द्रव्यथी कदाच सप्रदेश हो। अने कदाच अप्रदेश हो।, कालथी तथा भावी एण भजनाए जाणवुं, जेम क्षेत्रथी कह्यं, तेम कालधी अने भावधी कहेंबुं. जे पुद्रल द्रव्यथी सप्रदेश होय ते क्षेत्रधी कदाच सप्रदेश होय अने कदाच अप्रदेश होय, एम कालथी अने भावथी पण जाणी लेवुं. जे पुद्रल क्षेत्रथी सप्रदेश होय ते, द्रव्यथी चोकस सप्रदेश होय अने कालथी तथा मावधी भजनावडे होय, जेम द्रव्यथी कहुं तेम कालथी अने भावधी एण जाणवुं.

३. प्र०—हे भगवन् ! द्रव्यादेशथी, क्षेत्रादेशथी, कालादेशथी, अने भावादेशथी सप्रदेश अने अप्रदेश ए पुद्रलोगां क्या क्या पुत्रलो यावत-थोडा छे, घणां छे, सरखां छे अने विशेषाधिक छे? ३. उ०—हे नारदपुत्र! भावादेशवडे अप्रदेश पुद्रलो सर्वथी थोडां छे, ते करतां कालादेशथी अप्रदेशो असंख्यगुण छे, ते करतां द्रव्यादेशयी अप्रदेशो असंख्यगुण छे, ते करतां क्षेत्रादेशयी अप्रदेशो असंस्य गुण छे, ते करतां क्षेत्रादेशथी सप्रदेशो असंस्य-गुण छे, ते करतां द्रव्यादेशयी सप्रदेशो विशेषाधिक छे, ते करतां काटादेशथी सप्रदेशो विशेषाधिक छे अने ते क्रतां भावादेशथी सप्रदेशो विशेषाधिक छे.

—स्यार पछी ते नारदपुत्र अनगार निर्प्रथीपुत्र अनगारने नमंसइ, वंदित्ता, नमंसित्ता एयं अहं सम्मं विणएणं मुज्जो मुज्जो वंदे छे, नमे छे; वंदी, नमी ए अर्थने-पोते कहेल अर्थने-माटे

१. मूलच्छायाः—तदा स नारदपुत्रोधनगारो निर्धन्थीपुत्रम् अनगारम् एवम् अवादीत्ः-नो खळु देवाधनुष्रियाः ! एतम् अर्थे जानामि, पश्यामि, यदि देवाऽनुप्रियोः नो ग्रायति परिक्यिपितुं तद् इच्छामि देवाऽनुष्रियाणाम् अस्तिके एतमर्थे शुःवा, निश्चम्य ज्ञानुम्, ततः स नियम्योपुत्रोऽनगारो नारदपुत्रम् अनगारम् एवम् अवादीत्:-इब्याऽऽदेशेन ऽपि मे आर्य ! सर्वे पुदूलाः सप्रदेशा अपि, अवदेशा अपि-अनन्ताः, क्षेत्राऽऽदेशेनाऽपि एवं चैव, कालाऽऽदेशेनाऽपि, भावादेशेनाऽपि एवं चैवः यो द्रव्यतोऽप्रदेशः स क्षेत्रतो नियमेनाऽप्रदेशः, कालतः स्यात् सप्रदेशः, स्याद् अप्रदेशः, भावतः स्यात् सप्रदेशः, साद् अप्रदेशः यः क्षेत्रतोऽप्रदेशः स द्रव्यतः सात् सप्रदेशः, साद् अप्रदेशः, कालतो भजन्या, भावतो भजन्याः, यथा क्षेत्रतः एवं कालतः, भावतः; यो द्रव्यतः सप्रदेशः स क्षेत्रतः स्यात् सप्रदेशः, स्याद् अप्रदेशः; एवं कालतः, भावनेऽपि. यः क्षेत्रतः सप्रदेशः स द्रव्यनो नियमेन सप्रदेशः, कालतो भजनया, भावतो भजनया; यथा द्रव्यतस्तथा कालतः, भावतोऽपि. एतेषां भगवन् ! पुद्रलानां द्रव्याऽऽदेशेन, क्षेत्राऽऽदेशेन, कालादेशेन, भावांऽऽदेशेन सप्रदेशानाम्, अप्रदेशानां कतरः कतरो यावत्-विशेषाऽधिको वा १ नारदपुत्र ! सर्वेत्तोकाः पुद्गत्याः भावाऽऽदेशेनाऽप्रदेशाः, कालाऽऽ-देशेनाऽप्रदेशा असंख्येयगुणाः, द्रव्याश्डदेशेनाऽप्रदेशा असंख्येयगुणाः, क्षेत्राऽडदेशेन अप्रदेशा असंख्येयगुणाः, क्षेत्रादेशेन एव सप्रदेशा असंख्येयगुणाः; द्रव्याऽऽदेशेन समदेशा विशेषाऽधिकाः, कालाऽऽदेशेन समदेशा विशेषाधिकाः, भावाऽऽदेशेन समदेशा विशेषाऽधिकाः. तदा स नारद्पुत्रोऽनगारो निर्प्रन्थीपुत्रम् अनगारं वन्दते, नमस्यति, वन्दित्वा, नमस्यत्वा एनमर्थं सम्यम् विनयेन भूयो भूयः-अतुः

सै।मेति, सामित्ता संजमेणं, तवसा अप्याणं भावेमाणे जाव- विनयपूर्वक वारंवार तेओनी पासे क्षमा मांगे छे, खमावी संयम विहरहः. अने तपबडे आत्माने भावता यावत्-विहरे छे.

१. सप्तमोदेशके पुद्रलाः स्थितितो निरूपिताः, अष्टमे तु त एव प्रदेशतो निरूप्यन्ते-इस्येवसंबन्धस्याऽस्य इदं प्रस्तावना-सूत्रम्:---' ते णं काले णं ' इत्यादि. ' दब्बादेसेणं ' ति द्रव्याकारेण द्रव्यत इत्यर्थ:--परमाणुःवाचाऽऽश्रित्य इति यावत्. 'खेत्तादेसेणं ' ति एकप्रदेशावमाढत्वादिना इसर्थ:. ' कालादेसेणं ' ति एकादिसमयस्थितिकत्वेन, ' भावादेसेणं ' ति एकगुणकालत्वादिना. ' सव्य-पोग्गला सपएसा वि ' इत्यादि. इह च यत् सविपर्ययसार्यादिपुद्रङाविचारे प्रकान्ते सप्रदेशाः, अप्रदेशा एव ते प्ररूपिताः-तत् तेपां प्ररूपणे सार्थत्यादि प्ररूपितमेव भवति इति ऋत्या-इत्यवसेयम् . तथाहि:-सप्रदेशाः सार्थाः, समध्या वाः इतरे तु अनर्धाः, अमध्या-श्वेति, ' अणंत ' ति तत्परिमाणज्ञापनपरं तत्खरूपाऽभिधानम्, अध द्रव्यतः—अप्रदेशस्य क्षेत्राद्याधित्याऽप्रदेशादित्वं निरूपयन्नाहः— ' जे दन्यओ अप्पएते ' इत्यादि. यो द्रव्यतोऽप्रदेशः परमाणुः, स च क्षेत्रतो नियमाद् अप्रदेशः, यस्माद् असौ क्षेत्रस्य एकत्रैव प्रदेशे अवगाहते. प्रदेशद्वयाद्यवगाहे तु तस्याऽप्रदेशत्वमेव न स्यात्. काळतस्तु यद्यसौ एकसमयस्थितिकस्तदाऽप्रदेशः, अनेकसमयस्थितिकस्तु सप्रदेश इति. भावतः पुनः यथेकगुणकालकादिस्तदाऽप्रदेशः, अनेकगुणकालकादिस्तु सप्रदेशः इति. निरूपितो द्रव्यतोऽप्रदेशः, अथ क्षेत्रतोऽप्रदेशं निरू । यन्नाहः — ' ने संत्रभो अप्यएसं ' इत्यादि, यः क्षेत्रतोऽप्रदेशः स द्रव्यतः स्यात् सप्रदेशः - इत्यणुकादेरपि एकप्रदेशाऽवगाहित्वात्, स्याद् अप्रदेशः—परमाणोरपि एकप्रदेशाऽवगाहित्वात्. 'कालओ भयणाए ' त्ति क्षेत्रतोऽप्रदेशो यः स कालतो भजनयाऽप्रदेशादिर्वाच्यः. तथाहिः—-एकप्रदेशाऽवगाढः एकसमयस्थितिकत्वाद् अप्रदेशोऽपि स्यात् , अनेकसमयस्थितिकत्वाच सप्रदेशोऽपि स्याद्-इति. ' भावओ भयगाए ' ति क्षेत्रतोऽप्रदेशो योऽसौ एकगुणकालकादित्वाद् अप्रदेशोऽपि स्यात्, असेकगुण-कालकादित्वाच सप्रदेशोऽपि स्याद्-इति. अथ कालाऽप्रदेशम्, भावाऽप्रदेशं च निरूपयन्नाहः-- जहा खेतओ एवं कालओ, भावओं '.त्ति यथा क्षेत्रतोऽप्रदेश उक्तः, एवं कालतः, भावतश्चाऽसौ वाच्यः. तथाहिः—' जे कालओ अप्पएसे से द्वाओ सिय सप्पर्से, सिय अप्पर्से ' एवं क्षेत्रतः, भावतश्च तथा ' जे भावओ अप्पर्से से दब्बओ सिय सप्पर्से, सिय अप्पर्से ' एवं क्षेत्रतः, कालतश्च इति. उक्तोऽप्रदेशः, अथ सप्रदेशमाहः--' जे दन्वओ सप्पएसे ' इत्यादि. अयमर्थः--यो द्रव्यतो द्वयणुकत्वादित्वेन सप्रदेशः, स क्षेत्रतः स्यात् सप्रदेशः--द्वर्यादिप्रदेशाऽनगाहित्वात्, स्याद् अप्रदेशः---एकप्रदेशावगाहित्वात्. एवं कालतः, भावतथः तथा यः क्षेत्रतः सप्रदेशो द्वयादिप्रदेशाऽवगाहित्वात् स द्रव्यतः सप्रदेश एव, द्रव्यतोऽप्रदेशस्य द्वयादिप्रदेशाऽवगाहित्वाऽभावात्. काळतः, भावतश्वासौ द्विघाऽपि स्याद्—इति. तथा यः कालतः सप्रदेशः स द्रव्यतः, क्षेत्रतः, भावतश्च द्विघाऽि। स्यात्. हथाऽपि यो मावतः सप्रदेशः स द्रव्य-क्षेत्र-कालैर्द्धिघाऽपि स्याद्-इति सप्रदेशसूत्राणां भावार्थ इति. अथ एपामेव द्रव्यादितः सप्रदेशा-ऽप्रदेशानाम् अरुप-बहुत्व-विभागमाह:---' एए।सि णं ' इत्यादि सूत्रसिद्धम् , नवरम् :--अस्यैव सूत्रोक्ताऽरुप-बहुत्वस्य भावनार्धं गाथाप्रपञ्चो **बृद्धोक्तोऽभिधीयते:--**-

> '' वो^डेछं अप्या-बहुयं दब्त्र—खेत्त-इ—मावओ वा वि, अपएस—सपएसाण पोग्गलाणं समासेणं. दप्वेणं पर गणू खेत्तेणेगपएसं ओगाढा, कालेणेगसमईया अपएसा पोग्गला होति. भोवेणं अपएसा एगगुणा जे हवंति वन्नाई.''

वर्णादिभिरित्यर्थः.

'' ते³ चिय थोवा जं गुणवाहुलं पायसो दव्वे. '' इब्ये प्रायेण द्वयादिगुणा अनन्तगुणान्ताः कालकत्वादयो भवन्ति. एवागुणकालस्वादयस्तु अल्पा इति भावः.

'' एँचो कालाएसेणं अप्पएसा भवे असंखगुणा, किं कारणं पुण भवे १ मचित-परिणामवाहुला. '' अपमर्थः—यो हि यस्मिन् समये यद्दर्ण-गन्ध-रस-स्पर्श-संघात-भेद-स्द्रमत्व-वादरत्वादिपरिणामान्तरमाऽऽपन्नः स तस्मिन् समये तद्पेक्षया कालतोऽप्रदेश उच्यते. तत्र च एकसमयस्थिति:-इति, अन्ये परिणामाश्च बहव इति प्रतिपरिणामं कालाऽप्रदेशसंभवात् तद्बहुलत्वमिति. एतदेव भाव्यते:—

" भौवेणं अपएसा जे ते कालेण हुंति दुविहा वि, दुगुणादओ वि एवं भावेणं जावऽणंतगुणा." भावतो ये-अप्रदेशा एकगुणकालस्वादयो भवन्ति ते कालतो द्विधाऽपि भवन्ति-सप्रदेशाः, अप्रदेशाश्च इत्यर्थः. तथा भावेन

१. मूलच्छायाः---क्षमयति, क्षमिखा संयमेन, तपसाऽऽत्मानं भावयन् यावत्-विहरतिः--अनु०

१. प्र॰ छाः व्हर्षेऽत्य-बहुत्वं द्रव्य-क्षेत्रा-ऽद्धा-भावतो वाऽपि, अप्रदेश-सप्रदेशानां पुद्रलानां समासेन. द्रव्येण परमाणवः क्षेत्रेण-एकप्रदेशम्बगादाः, काल्येनैकसमयिका अप्रदेशाः पुद्रला भवन्ति २. भावेन अप्रदेशा एवसुणा ये भवन्ति वर्णात्यः. ३. ते एव स्तोका यद् सुणवाहुत्यं प्रायशो द्रव्ये. ४. इतः कालाद्रेशेन अप्रदेशा भवेयुरसंख्यगुणाः, किं कारणं पुनर्भवेत् १ भण्यते-परिणामवाहुत्यात् . ५. भावेन भप्नदेशा ये ते कालेन भवन्ति द्विषा अपि, द्विगुणादयोऽपि एवं भावेन यावद्-अनन्तगुणाः अनु०

द्विगुणादयोऽपि अनन्तगुणान्ताः--- एवं १ इति द्विविधा अपि भवन्ति. ततश्चः--

" नौलाऽपएसयाणं एवं एक्के ओ हवइ रासी, एके कमुणठाणिम एमगुणकालयाईसुं." एकगुणकाल-द्विगुणकालादिषु गुणस्थानकेषु मध्ये एकैकस्मिन् गुणस्थानके कालाऽप्रदेशानाम् एकेको राशिभेवति, ततश्चाऽनन्तत्वाद् गुणस्थानकराशीनाम् अनन्ता एव कालाऽप्रदेशराशयो भवन्ति. अथ प्रेरकः—

'' औह अगंतगुणत्तणमेवं कालापएसयाणं ति, जं अणंतगुणठाणेसु होति रासी वि हु अणंता. ''

' एवं े इति-यदि प्रतिगुणस्थानकं काळाऽप्रदेशराशकोऽभिधीयन्ते इति. अत्रोत्तरम्:---

" भन्द एगगुणाण वि अणंतभागिम जं अणंतगुणा, तेणाऽसंखगुण चिय हवंति णाणंतगुणियत्तं." अयमिमप्राय:—यद्यपि अनन्तगुणत्वादीनाम् अनन्तराशयः, तथापि प्कगुणकालत्वादीनाम् अनन्तभाग एव ते वर्तन्ते—इति न तद्द्वारेण कालाप्रदेशानाम् अनन्तगुणत्वम्, अपि तु असंख्यातगुणत्वमेव इति.

" एँवं ता भावभिणं पड्ड कालापएसिया सिद्धा, परमाणुपोग्गलाइसु दब्वे वि हु एस चेव गमो." एवं तावद् 'भावं !-वर्णादिपरिणामं 'इमम् ' उक्तस्वरूपम् एकाद्यनन्तगुणस्थानवर्तिनमिस्पर्धः. प्रतीस्य कालाप्रदेशिकाः पुद्रलाः सिद्धाः, कालाप्रदेशता वा पुद्रलानां सिद्धा प्रतिष्ठिताः द्रच्येऽपि द्रच्यपरिणाममपि अङ्गीक्रय परमाण्यादिषु एप एव भावपरिणामोक्त एव गमः-च्याख्याः

'' ऐमें होड़ खेते एगपएसावगाहणाइसु, ठाणंतरसंकंति पडुच कालेण मरगणया.'' एवमेव द्रव्यपरिणामवद् भवति क्षेत्रे क्षेत्रमधिकृत्य एकप्रदेशावगाढादिषु पुद्गलभेदेषु स्थानान्तरगमनं प्रतीत्य कालेन कालाऽप्रदेशानां मार्गणा, यथा क्षेत्रतः, एवम् अवगाहनादितोऽपि-इत्येतदुच्यतेः—

'' संकोय-विकोयं पि हु पडुच ओगाहणाए एमेव, तह सुहुम-बायर-निरेय-सेय-सहाइपरिणामं.'' अवगाहनायाः संकोचम्, विकोचं च प्रतीय कालाप्रदेशाः स्युः, तथा सूक्ष्म-बादर-स्थिरा-ऽस्थिर-शब्द-मनः-कर्मादिपरिणाम च प्रतीरयेति.

" एवं जो सन्यो चिय परिणामो पुर्गालाण इह समये, तं तं पडुच एसिं कालेणं अप्पएसत्तं.'' ' एसिं ' ति पुद्रलानाम् इत्यर्थः.

> " कीलेण अप्पएसा एवं भावाऽपएसएहिंतो, होति असंखिज्जगुणा सिद्धा परिणामबाहुछा. एतो दन्वादेसेण अप्पएसा हवंतिऽसंखगुणा, के पुण ते ? परमाणू, कह ते बहुय ? ति तं सुणसु. अणु-संखेज्जग्एसिय-असंखगुण-अणंतप्पएसिया चेव, चडरो चिय रासी पोग्गलाण लोए अणंताणं. तैरियाऽणंतेहिंतो सुत्तेऽणंतप्पएसिएहिंतो, जेण-प्पएसट्टाए भणिया अणुओ अणंतगुणा."

अनन्तेभ्यो-ऽनन्तप्रदेशिकस्कन्धेभ्यः प्रदेशार्थतया प्रमाणवोऽनन्तगुणाः सूत्रे उक्तः. सूत्रं चेदम्:—'' सर्वेत्थोवा अणंतप्रशिस्या संधा दन्त्रहाए, ते चेव पएसहयाए अणंतगुणा, परमाणुपुग्गला दन्त्रहयाए पएसहयाए अणंतगुणा, संस्केजप्रसिआ संधा दन्त्रहयाए संस्केजगुणा, ते चेव पएसहयाए असंस्केजगुणा, ते चेव पएसहयाए असंस्केजगुणा, ते चेव पएसहयाए अंसंस्वेजपुणा, ते चेव पएसहयाए अंसंस्वेजपुणा ति. ''

" मंखें जैतिमे भागे संखेजपएसियाण वहाते, नवरमसंखेजपएसियाण भागे असंखड्मे." संख्येयतमे भागे ' संख्यातप्रदेशिकानाम्, असंख्याततमे भागे असंख्यातप्रदेशिकानाम् अणवो वर्तन्ते—उक्तसूत्रप्रामाण्याद् इति. " सैंड वि असंखेजपएसियाणं तेसि असंखभागत्ते, बाहुलं साहिजड फुंडमवसेसाहि रासीहिं."

Jain Education International

१. प्र० छाः—कालाऽप्रदेशक नामेवम् एकैकतो भवति राशिः, एकैकगुणस्थाने एकगुणकालकादिषु. २. आह् अनन्तगुणत्वमेवं कालाप्रदेशकानामिति, यद् अनन्तगुणस्थानेषु भवन्ति राशयोऽपि खल्ल अनन्ताः. ३. भव्यते एकगुणानामि अनन्तमागे यद् अनन्तगुणाः, तेन असंख्यगुणा एव भवन्ति नाऽनन्तगुणिकत्वम् । ४. एवं तावद् भावमिमं प्रतीत्य कालाप्रदेशकाः सिद्धाः, परमाणुपुद्गलादिषु द्वयेऽपि खल्ल एव एव एव एव भवः. ५. एवमेव भवति क्षेत्रे एकप्रदेशावगाहनादिषु, स्थानान्तरसंकान्ति प्रतीत्य कालेन मार्गणताः ६. संकोय-विकोयमपि खल्ल प्रतीत्य अवगाहनाया एवमेव, तथा सूक्ष्म-बादर-निरेज-संज-शब्दाद-परिणामम् । ७. एवं यः सर्वः एव परिणामः पुद्गलानमिह् समये, तं तं प्रतीत्य एपां कालेन अपदेशत्वम् । ८. कालेन अप्रदेशा एवं भावाऽप्रदेशकेभ्यः, भवन्तिः असंख्यगुणा सिद्धाः परिणामबाहुल्यात् । ९. इतो द्वव्यादेशेन अप्रदेशा भवन्ति-असंख्यगुणाः, के पुनस्ते १ परमाणवः, कर्वते बहुकाः १ इति तत् राणु. १०. अणु-संख्येपप्रदेशिक-असंख्यगुण-अनन्तप्रदेशिका एव, चत्वार एव राशयः पुदूलानां कोकेऽनन्तानाम् । ११. तथाऽनन्तेभ्यः सूत्रेऽन्तप्रदेशिकेभ्यः, येन प्रदेशार्थतया भणिताः अण्योऽनन्तगुणाः १२. सर्वकोका अनन्तप्रदेशिकाः स्कन्धा द्व्यार्थतया । १२. तथाऽनन्तेभयः सूत्रेऽन्तप्रदेशिकेभ्यः, येन प्रदेशार्थतया भणिताः अण्योऽनन्तगुणाः, पर्वत्येपप्रदेशिकाः स्कन्धा द्व्यार्थतया असंख्यगुणाः, ते एव प्रदेशार्थतया असंख्यगुणाः, असंख्येपप्रदेशिकाः स्कन्धा द्व्यार्थतया असंख्यगुणाः, ते एव प्रदेशार्थतया असंख्यगुणाः असंख्यगुणाः । असंख्येपप्रदेशिकानां वर्तन्ति, नवरमसंख्येपप्रदेशिकानां भागेऽसंख्यतमे । १४. सत्वपि असंख्येपप्रदेशिकानां तेषामसंख्यभागत्वे व्यवस्थते स्परमवन्तेषै राशिमिः--अद्वर्थ

संख्यातप्रदेशिका-ऽनन्तप्रदेशिकाऽभिधानाभ्याम्, इह च संख्यातप्रदेशिकराशेः संख्यातमागवार्तिवात् तेषां खरूपतो बहुत्वमवगम्यते, अन्यथा तस्याऽपि असंख्येयभागे, अनन्तभागे वा तेऽभविष्यन् इति.

" नेणिकैरासियो चिय असंखंगांगे ण सेसरासीणं, तेणाऽसंखेजगुणा अणवो कालापएसेहिं. " ' न शेषराश्योः' इत्यस्याऽयमर्थः —अनन्तप्रदेशिकराशेरनन्तगुणास्ते, संख्यातप्रदेशिकराशेरत् संख्यातमागे, संख्यातमागस्य च विवक्षया नाऽत्यन्तम्—अल्पता, कालतः सप्रदेशेषु, अप्रदेशेषु च वृत्तिमताम् अण्नां बहुत्वात्, कालाऽप्रदेशानां च सामियकत्वेन ऽत्यन्तम्लपत्वात् कालाऽप्रदेशेभ्योऽसंख्यातगुणावं द्रव्याऽप्रदेशानाम् इति.

'' ऐत्तो असंखगुणिया हवंति खेत्ताऽपएसया समये, जं ते तो सब्बे चिय अपएसा खेत्तओ अणवो. दुपएसियाइएसु वि पएसपिरवृद्धिएसु ठाणेसु, लन्भइ इक्किकों चिय रासी खेत्ताऽपएसाणं. एंतो खेत्ताएसेण चेव सपएसिया असंखगुणा, एगपएसोगिटि मोतुं सेसाऽवगाहणया. ते पुण दुपएसोगाहणाइया सब्बपेग्गला सेसा, ते य असंखेजगुणा अवगाहणहाणघाहुला. दैव्वेण होति एत्तो सपएसा पोग्गला विसेसाहिया, कालेण य मावेण य एमेव भवे विसेसाहिया. भावाइया वुट्टी असंखगुणिया जं अपएसाणं, तो सप्पएसियाणं खेत्ताइविसेसपिरवुट्टी. ''

एतद्भावना च वक्ष्यमाणस्थापनातोऽवसेया.

" मीर्साणं संकमं पइ सपएसा खेत्तओ असंखगुणा, भिणया सद्वाणे पुण थोन चिय ते गहेयव्वा."

मिश्राणाम् इति अप्रदेश-सप्रदेशानां मीलितानां संक्रमं प्रति अप्रदेशेम्यः, सप्रदेशेषु अल्प-बहुत्वविचारे संक्रमे क्षेत्रतः सप्रदेशाः असंख्येपगुणाः क्षेत्रतोऽप्रदेशेम्यः सकाशात्, खस्थाने पुनः केवलसप्रदेशचिन्तायां स्तोका एव ते क्षेत्रतः सप्रदेशा इति. एतदेव उच्यतेः—-

" से तेण सप्परमा थोना दव्यद्धभानाओ अहिया, सप्परमणा-बहुयं सङ्घाणे अत्थओ एवं. '' भर्थत इति व्याख्यानाऽपेक्षया.

" पैंडमं अपएसाणं बीयं पुण होइ सप्पएसाणं, तइयं पुण मीसाणं अप्प-बहुं अत्थओ तिनि " अर्थतो-व्याख्यानद्वारेण त्रीणि अल्पबहुत्वानि भवन्ति, सूत्रे तु एकमेव मिश्राऽल्प-बहुत्वम् उक्तमिति.

'' ठींणे ठाणे बहुइ भावाईणं जं अप्पएसाणं, तं चिय भावाईणं परिभस्साति सप्पएसाणं '' यथा किल कल्पनया लक्षं समस्तपुद्रलास्तेषु भाव-काल-इन्य-क्षेत्रतोऽप्रदेशाः क्रमेण एक- द्वि-पञ्च-दशसहस्रसंख्याः, सप्रदेशास्तु नथनवति-अष्टनवति-पञ्चनवति-नत्रतिसहस्रसंख्याः. ततश्च भावाऽप्रदेशेभ्यः कालाप्रदेशेषु सहस्रं वर्धते, तदेव भावसप्रदेशेभ्यः काल-सप्रदेशेषु हीयते, इत्येवम् अन्यत्राऽपि इति. स्थापना चेयमः—

भावतः	कालतः—	द्रव्यतः	क्षेत्रतः—
अप्रदेशा: १०००	२०००	५०००	80000
सप्रदेशाः—९९०००	९८०००	९५०००	90000

" अहँवा खेताईण जं अप्पएसाण हायए कमसो, तं निय खेताईणं परिवहूह सप्पएसाणं. "

^{&#}x27;' अवैरो-परणसिद्धा वुड्ढी हाणी य होइ दोण्हं वि, अप्पएस-सप्पएसाणं पोंग्गलाणं सलक्खणओ. ''

१. प्र० छाः— वैनैकराशेरेव असंख्यमागे न शेषराशीनाम्, तेन असंख्येयग्रणा अणवः कालाऽप्रदेशैः २. इतः असंख्यग्रणिता भवन्ति क्षेत्राऽप्रदेशता समये, यत् ते ततः सर्व एव अप्रदेशाः क्षेत्रतेऽणवः. ३. दिप्रदेशिकादिकेषु अपि प्रदेशारिवर्षितेषु स्थानेषु, लभ्यते एकैक एव राशिः क्षेत्राऽप्रदेशानाम्. ४. इतः क्षेत्रादेशेन एव सप्रदेशिका असंख्यग्रणाः, एकप्रदेशानगाढान् मुक्तवा शेषावगाइनता. ५. ते पुनार्द्विप्रदेशावगाइनादिकाः सर्वपुद्वाः शेषाः, ते च असंख्येयग्रणाः अवगाइनस्थानबाहुल्यात्. ६. द्वर्णेण भवन्ति इतः सप्रदेशाः पुद्रला विशेषाधिकाः, कालेन च भावेन च एवमेव भवेयुर्विशेषाधिकाः. ७. भावादिका वृद्धिरसंख्यगुणिता यद् अप्रदेशानाम्, ततः सप्रदेशिकानां क्षेत्रादिविशेषपरिवृद्धिः. ८. मिश्राणां संकर्म प्रति सप्रदेशाः क्षेत्रतः—असंख्यगुणाः, भणितः स्वस्थाने पुनः स्तोका एव ते प्रतिव्याः. ९. क्षेत्रेण सप्रदेशाः स्तोकाः द्व्या—ऽद्धाभावाद् अधिकाः, सप्रदेशाला—बहुकं स्वस्थाने अर्थत एवम् . १०. प्रथमम् अप्रदेशानां द्वितीयं पुनर्भवति सप्रदेशानाम्, तृतीयं पुनर्मिश्राणामल्य—बहु अर्थतस्रिणः. ११ स्थाने दथते भावादीनां यद्—अप्रदेशानाम्, तदेव भावादीनां परिश्रश्वति सप्रदेशानाम्, १२. अथवा क्षेत्रादीनां यद् अप्रदेशानां हीयते क्षनशः, तद् एव क्षेत्रादीनां परिवर्धते सप्रदेशानाम्, १३ अपरापरप्रतिद्वा युद्धिदेश भवति द्वरोर्षिः, अप्रदेश-सभ्देशयोः पुद्धल्योः खलक्षणतःः—अनुः

- '' तें' चेव य ते चडाहें वि जमुवचरिज्जंति पोरगला दुविहा, तेण उ वुडूी हाणी तेसि अत्रोत्रसंसिदा.'' चतुर्भिरिति भाव-कालादिभिः उपचर्यन्ते इति विशेष्यन्तेः---
- '' ऐएसिं रासीणं निदरिसणमिणं भणामि पचक्खं, बुद्धीए (वुड्ढीए) सन्वयोग्गला जावं तावाण लक्खाओ.'' कल्पनया यावन्तः सर्वेपुद्रलान्तावतां लक्ष इति.
 - '' ऐकं च दो य पंच य दस य सहस्साइं अप्पएसाणं, भावाइणं कमसो चउण्ह वि जहोवइट्टाणं.''
 - " णैवई पंचणवइ अद्वाणउई तहेव नवनवई, एवइयाइं सहस्साइं सप्पएसाण विवरीयं."
 - '' ऐएर्सि जहासंभवं अत्थोवणयं करिज्ञ रासीणं, सन्भावओ य जाणेज्ञा ते अणंते जिणाभिहिए '' त्ति.

१. ' सातमा उद्देशामां स्थितिनी अभेक्षाए पुद्रलो निरूप्या छे, आठमामां तो ते पुद्रलो ज प्रदेशनी अपेक्षाए निरूपाय छे ' ए प्रमाणेना संबंधवाळा आ आठमा उद्देशकनुं आ-['ते णं काले णं 'इत्यादि] प्रस्तावना सूत्र छे. ['दच्यादेसेणं 'ति] द्रव्यना प्रकारे-द्रव्यथी- दव्यादेश. द्रव्यनी अपेक्षाए परमाणुत्त वगेरेनो आश्रय करीने-ए निष्कर्ष छे. [' खेतादेसेणं ' ति] एकप्रदेशावगाढत्व-एक प्रदेशमां रहेवुं-इत्यादिनी क्षेत्रादेश. अपेक्षाए, ['काळादेसेणं 'ति] 'एक समय सुघी रहेवाप गुं 'इत्यादिनी अपेशाए, ['भात्रादेसेणं 'ति] 'एकगणुं काळापणुं 'इत्यादिनी काळादेश अते अपेक्षाए, [' सव्यपोग्गला सपएसा वि ' इत्यादि.] अहिं ' सार्घ अने अनर्घ ' ए प्रकारे वि रार्घय सहित पुद्रलनो विचार प्रकान्त -शरू-छे तो पण तेमां ते पुद्रलो सप्रदेशो अने अप्रदेशो ज निरूप्या छे तो आग्णे एम जाणवुं के सप्रदेश अने अप्रदेशना प्ररूपणमां सार्घत्व वरोखें प्ररूपण आवी गयुं छे माटे तेने जुदुं नथी कह्युं. तेने ज दर्शावे छे के, जेओ सादेश छे तेओ सार्थ अथवा समध्य छे अने जेओ तो इतर−अप्रदेश−छ तेओ सार्थ−समध्य. अनर्थ अने अमध्य छे. ['अणंत ' ति] आ 'अनंत 'शब्द, सप्रदेश अने अप्रदेश पुद्वलो तुं परिमाण जणावे छे अशीत् ए द्वारा परमाणुने लगता परिमाणना खरूपनुं अभिधान-कथन-छे. हवे द्रव्यथी अप्रदेश पुद्गलनुं क्षेत्रादिनी अपेक्षाए अप्रदेशादिनगुं निरूपता कहे छे:---[जे द्व्यओ द्रव्यथी अप्रदेश. अपएसे ' इत्यादि.] जे पुद्रल, द्रव्ययी अप्रदेश-परमाणुरूप-छे, ते क्षेत्रथी नियमे-चोक्कत-अप्रदेश होय छे, कारण के, ते पुद्रल, क्षेत्रना एक ज प्रदेशमां रहे छे, जो ने प्रदेश वमेरे प्रदेशोमां रहे तो तेमां अप्रदेशपणुं न होइ शके-ते अप्रदेश कहेवाय ज नहीं, कालथी तो जो ए, एक समयनी स्थितिवाळो छे तो अप्रदेश छे अने अनेक समयनी स्थितिवाळो होय तो सप्रदेश छे, वळी मानथी जो एकगुण काळो विगेरे प्रकारनो छे तो अप्रदेश छे अने अनेकगुण-स्थामादि छे तो सप्रदेश छे-ए प्रमाणे द्रत्यथी-द्रव्यती अपेक्षाए-अप्रदेश पुद्रलनुं निरूपण कर्युं. हवे क्षेत्रनी अपेक्षाए अप्रदेश पुद्रलने निरूपता कहे छे:— (' जे खेत्तओ अप्पएसे ' इत्यादि.] जे पुद्रल क्षेत्रथी अप्रदेश होय ते पुद्रल द्रव्यथी कदाचित् सप्रदेश क्षेत्रथी अप्रदेश. होय अने कदाचित् अप्रदेश होय, कारण के, द्वचणुकादि पण क्षेत्रना एक प्रदेशमां रहेनारा होवाथी द्रव्यथी सप्रदेश छे अने क्षेत्रथी अप्रदेश छे तथा परमाणु एक प्रदेशमां रहेनार होवाधी द्रव्यथी अप्रदेश छे तेम क्षेत्रथी पण अप्रदेश छे. ['कालओ भयणाए 'ति] जे पुहल क्षेत्रधी अप्रदेश छे ते कालथी भजनार कहेबुं अर्थात् कदाच सप्रदेश कहेबुं अने कदाच अप्रदेश कहेबुं, जेम के, कोइ पुद्गल एक प्रदेशमां रहेनार अने एक समयनी स्थितिवाळुं होवाथी कालनी अपेक्षाए अप्रदेश पण छे अने एवुं ज कोइ बीजुं पुदल एक प्रदेशमां रहेनाहं पण अनेक समयनी स्थितिवाळुं होवाथी काळनी अपेक्षाए सप्रेदरा पग छे. [' भावओ भयणाए ' ति] जे पुद्गल क्षेत्रकी अप्रदेश छे ते जो एकगुग स्यामादि होय तो भावधी पण अप्रदेश छे अने अनेकगुण स्यामादि होय तो क्षेत्रथी अप्रदेश पुद्रल पण भावथी सप्रदेश छे. हवे कालनी अपेक्षाए अने भावनी अपेक्षाए अप्रदेश पुद्रलने निरूपता कहें छे के, ['जहा खेतओ, एवं कालओ, भावओ ' सि] जेम क्षेत्रथी अपदेश पुद्रल कहुं तेम ए, कालथी अने भावथी कहेवुं. जेमके, 'ज पुद्रल कालथी अपदेश होय ते पुद्रल द्रव्यथी कदाच सप्रदेश पण होय अने अप्रदेश पण होय.' ए प्रमाणे क्षेत्रथी अने भावधी जाणबुं. तथा 'जे पुद्रल भावथी अप्रदेश होय ते द्रव्यथी कदाच सप्रदेश होय अने कदाच अन्देश होय. 'ए प्रमाणे क्षेत्रथी अने काळथी जाणवुं. अत्यार सुधी अप्रदेश पुद्रल विषे निरूपण कर्यु, हवे सप्रदेश पुद्रस्ते निरूपवा कहे छे:--[' जे दव्यओ सप्पएं े ' इत्यादि.] एनो आ अर्थ छे:---जे पुद्रस्त, द्वचणुकादिपणाने लींचे द्रव्यथी सप्रदेश छे ते पुद्रल क्षेत्रथी कदाच सप्रदेश होय अने कदाच अप्रदेश पण होय---जो वे प्रदेशमां रहेनाहं होय तो सप्रदेश होय अने एक प्रदेशमां रहेनारुं होय तो अप्रदेश होय. ए प्रमाणे काळथी अने भावथी पण जाणवुं. वळी, वे वियरे प्रदेशमां रहेनारुं होवाथी जे पुद्रल क्षेत्रथी सप्रदेश छे ते द्रव्यथी सप्रदेश ज होय, कारण के, जे पुद्रल द्रव्यथी अप्रदेश होय ते पुद्रल, वे वगेरे प्रदेशमां रही ज न शके, अने कालथी तथा भावथी ए पुद्रल द्विघा-बन्ने प्रकारे-पण होय; तथा जे पुद्रल कालथी सप्रदेश छे ते पुद्रल द्रव्यथी, क्षेत्रथी अने भावथी बन्ने प्रकारे पण होय, तथा जे पुद्रल भावधी सप्रदेश होय ते द्रव्यथी, क्षेत्रथी अने काळधी पण बन्ने प्रकारे होय--ए प्रमाणे सप्रदेशसूत्रीनो भावार्थ छे. हवे द्रव्यादिनी अपेक्षाए ए सप्रदेश--अप्रदेश पुद्रलोने लगती अल्य--बहुता विषेना विभागने दर्शावता कहे छे:—['एएसि णं ' इत्यादि.] ए मूळपाठ सूत्र सिद्ध छे-स्यष्टार्थ छे, विशेष ए के, आ अल्प-बहुपणाना विचार माटे बृद्धोए कहें हो। गाथानी विस्तार अहिं कहीए छीए:-- " द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी, अने भावथी पण अपदेश अने सप्रदेश पुद्रलोनुं अल्पत्व अने बहुत्व संक्षेत्रथी कहीश " परमाणु, द्रव्यथी अप्रदेश छे, एक प्रदेशमां रहेनार पुदूल, क्षेत्रथी अप्रदेश छे, एक समयनी स्थितिवाळुं पुदूल, कालबी अप्रदेश छे अने '' एकगुण कोइ पण वर्णवाळुं-एकगणुं काळुं या घोळुं या पीछुं वंगरे वर्णवाळुं-पुद्रल भावथी अप्रदेश छे '' 'वण्णाइं ' एटले वर्णादिवडे '' अने ते ज पुद्रलो–भावथी अप्रदेश पुद्रलो–सौथी

भावादेश.

कालथी अने भावधी अप्रदेश,

इव्यादिनी अपेक्षाए सप्रदेश.

१. प्र० छाः - ते चैव च ते चतुर्भिः पि यदुपचर्यन्ते पुद्गला दिविधाः, तेन तु वृद्धिर्हानिस्तेषां अन्योन्यसंसिद्धाः. २. एतेषां राशीनां निदर्शन-मिदं भणामि प्रसक्षम् , बुद्धा (बृद्धा) सर्वेषुदूला यावन्तस्तावतां लक्षाणि. ३. एकं च हे च पश्च च दश च सहस्र.णि, अप्रदेशानां भावादीनां क्रमज्ञञ्चतुर्णामपि यथोपदिष्टानाम् . ४. नत्रतिः पञ्चनवतिः अष्टानवतिः तथैव नवनवतिः, एतावन्ति सहस्राणि सप्रदेशानां व्रिपरीतम् . ५. एतेषां यथा-्मंभवम्-अर्थेषुनयं कुर्याद् राशीनाम् , सद्भावतश्च जानीयात् तान् अनन्तान् जिनाभिहितान्-इतिः --अनु०

थोड़ां छे, कारण के, प्रायः करीने द्रयमां गुणोनुं बाहुल्य रहे छे '' तात्पर्य ए छे के, द्विगुणथी मांडी अनंतगुण पर्यंत मापवाळा कालकरव-काळापणं-बंगरे गुणो जाजे भागे द्रव्यमां बहुळताए होय छे.अने एकगुणकाळुं बंगरे एकगणा गुणो तो अल्प होय छे, माटे द्रव्यथी अप्रदेश पुद्रछो सर्वशी थोड़ां कह्यां छे. '' ए करतां कालादेशथी अप्रदेश पुद्रलो असंख्यमुण छे, तेम थवामां वळी ह्युं कारण छे १ तो कहे छे के, परिणामनी बहुलता, तेम धवामां कारण छे '' तात्पर्य आ छे के, जे समये जे पुद्रल जे वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संघात, भेद, सुक्ष्मत्व अने बादरत्व वरेगरे रूप बीजा परिणामने पामेलुं होय, ते समये ते पुद्रल, ते अपेक्षाए कालथी अप्रदेश कहेवाय, वळी तेमां स्थित तो एक समयनी छे अने बीजा परिणामो तो घणा छे माटे दरेक परिणामे दरेक पुद्रल काल्यी अप्रदेश संभवतुं होवाथी तेनुं बहुएगुं छे, एनो ज विचार करे छे:—जे पुद्रलो भावथी अप्रदेश छे ते पुरुष्ठी काळथी बन्ने प्रकारना पण के एटले सपदेश पण के अने अपदेश पण के, तथा जे पुरुष्ठी मावधी, द्विगुणयी मांडी अनंतगुण पर्यंत वर्णादिवाळां छे ते दुद्रहो पण ए प्रकारे-कालथी-वे प्रकारना-सप्रदेश अने अप्रदेश छे " अर्थात् एकगुण कालत्वादिवाळां ने पुद्रलो भावथी अप्रदेश छे ते, कालथी वेचे प्रकारना पण होय के एटले सप्रदेश अने अप्रदेश पण होय छे, तथा जे पुदलो भावथी, द्विगुणधी मांडी अनंतगुण सुधीना वर्णादिवाळां छे ते पण ' एवं ' एटले ए प्रकार बन्ने प्रकारना छे एटले सप्रदेश अने अप्रदेश छे, तेथी करीने '' एकगुण कालादिरूप गुणस्थानोनी मध्ये एक एक गुणस्थानमां कालथी अप्रदेश पुद्रलोनो ए प्रमाणे एक एक ढगलो थयो ? तालर्य ए छे के, एकमुणकाळुं, द्विमुणकाळं इत्यादि मुणस्थानोनी मध्ये एक एक गुणस्थानमां कालथी अप्रदेश पुद्रलोनो एक एक दगलो थयो अने तेम धवाधी गुणस्थानकनी राशिना अगंतपणाने टइने कालथी अप्रदेश पुद्रलोना अनंत ढगला थाय छे. हवे प्रेरक-प्रतिवादी-कहे छे के, शास्त्रकार तो कालथी अप्रदेश पुद्रलोनुं असंस्यगुणपणुं कहे छे पण " ए प्रकारे कालधी अप्रदेश पुद्रलोनुं अनंतगुणपणुं थइ जक्षे. कारण के, अनंतगुणस्थानोमां राशिओ पण अनंत होय छे '' 'एवं ' एटले ए प्रकारे-दरेक दरेक गुणस्थानके कालथी अप्रदेश पुद्रलोनी राशिओ कहो छो-एम होवाथी अहिं उत्तर दर्शावे छे:-" कहेबाय छ के, ते अनंतराशिओ एकगुण कालत्वादिने पण अनंते भागे छ माटे ते असंस्यगुण ज थाय छे पण तेनुं (राशिओनुं) अनंतगुणपणुं थतुं नथी.'' आ अभियाय छे के, जो के, अनंतगुण कालत्वादिनी अनंत राशिओ छे तो पण ते राशिओ एकगुण कालत्वादिने अनंते। भाग ज वर्ते छे, माटे ते राशिओ द्वारा कालथी अप्रदेश पुद्रलोनुं अनंतगुणपणुं धतुं नधी, पण असंख्यातगुणपणुं ज छे. '' ए प्रमाणे आ वर्णादि परिणामरूप भावने अपेक्षी परमाणु पुद्रलादिमां कालथी अपदेशपणुं सिद्ध थयुं, तेम ज द्रव्यमां पण ए ज गम जाणवो '' अर्थात् ए प्रमाणे तो आ हमणां ज कहेबाएटा एवा वर्णादि परिणामरूप अने एकथी मांडी अनंतगुणस्थानवर्ती भावने अपेथी कालथी अप्रदेश पुद्रलो सिद्ध थयां अथवा पुद्रलोनुं कालथी अप्रदेशपणुं प्रतिष्ठित थयुं. द्रव्यमां पण, द्रव्य परिणामन अंगीकरी परमाण्यादि पुद्रलोगां ए ज भावपरिणामोक्त व्याख्या-गम-समजवी '' ए ज प्रमाणे क्षेत्राधिकारने आश्री एकप्रदेशावगाहनादिमां स्थानांतरना संक्रमने अपेक्षी कालवेड मार्गणा करवी '' तात्पर्य ए छे के, ए प्रमाण ज-द्रव्यपरिणामनी पेठे-क्षेत्रने अधिकरी एकप्रदेशावगाढ वमेरे पुद्रल भेदोमां खानांतरगमननी-बीजे खाने जवानी-अपेक्षाए कालथी अप्रदेशोनी जेम क्षेत्रथी एम अवगाहनादिथी' पण मार्गणा करती; एने ज कहे छे:—'' अवगाहनाना संकोच अने विकोचने पण अपेक्षी जेम कालाप्रदेश पुरलो छे एम सूक्ष्म, बादर, निष्कंप, सकंप अने शब्दादि परिणामने अनेक्षी तथा प्रकारना पुद्रलो-कालाप्रदेश पुद्रलो-छे 🗥 तस्व ए छे के, अयगाहनाना संकोच अने विकोचने अपेक्षी कालाषदेश पुद्रलो छे तेम सूक्ष्म, बादर, स्थिंग, अस्थिर, शब्द, मन अने कर्मादि पंरिणामने अपेक्षी काटापदेश पुद्रलो छे. '' ए प्रमाणे आ समये पुद्रलोनो, जे कोइ बधो परिणाम थाय छे, ते ते सर्व परिणामने अपेक्षी ए पुद्रलोनुं कालवंडे अप्रदेशपणुं छे '' ' एसिं ' एटल ए पुद्रलोनुं. '' ए प्रमाणे भावधी अप्रदेश पुद्रलो करतां कालधी अप्रदेश पुद्रलो, परिणामना बाहुल्यधी असंख्यगुण हिन्द थयां '' ' ए करतां द्रव्यादेशथी अप्रदेश पुद्रलो असंख्यगुण छे, वळी ते क्या ? तो कहे छे के, परमाणु, ते बहु केवी रीते छे १ तो कहे छे के, तेनी बहुत ने नीचे प्रमाणे जाणो " " लोकमां, अगु, संख्येयप्रदेशवाळुं, असंख्यगुण प्रदेशवाळुं अने अनंतप्रदेशवाळुं, ए चार प्रकारना अनंतपुंद्रहोनी चार राहिओ छे " तेमां, सूत्रद्वारा एम कहुं छे के, जेथी अनंतप्रदेशवाळा अनंतपुद्रहो करतां प्रदेशार्थनी अपेक्षाए अणुओ अनंतगुणां हे '' सूत्रमां, अनंतप्रदेशवाळा अनंत स्कंघो करतां प्रदेशार्थनी अपेक्षाए परमाणुओ अनंतगुणां कह्यां हे, ते सूत्र आ छे:--- '' द्रव्यार्थनी अपेक्षाए अनंत प्रदेशवाळा स्कंधो सौथी थोडा छे अने ते ज रकंघो, प्रदेशार्थनी अपेक्षाए अनंतगुण छे, परमाणु पुद्रलो द्रव्यार्थ प्रदेशार्थनी अपेक्षाए अनंतगुण छे, संस्थेयपदेशवाळा स्कंघो द्रव्यार्थनी अपेक्षाए संस्थेयगुण छे अने ते ज स्कंघो प्रदेशार्थनी ञ्चेश्वाए असंख्येयगुण छे, असंख्येय प्रदेशवःळा स्कंघो द्रव्यार्थनी अपेक्षाए असंख्यगुण छे अने ते ज स्कंघो प्रदेशार्थनी अपेक्षाए असंख्यगुण छे " " संस्यात देशवाळ ता संस्यातमे भागे वर्ते छे, विशेष ए के, असंस्यातप्रदेशवाळाना असंस्यातमे भागे छे " पूर्वोक्त सूत्रनुं प्रामाण्य होवाथी संख्यातप्रदेशवाळाना अणुओ संख्यातमे भागे रहे छे अने असंख्या प्रदेशिकना अणुओ असंख्यातने भागे रहे छे. '' ते असंख्यात प्रदेशवाळाचुं असंस्थामापणुं छे तो पण बाकीनी राशियो करतां स्कुट रीते बाहुल्य कहेवाय छे '' ' संस्थात प्रदेशवाळा अने अनंत प्रदेशवाळा ' ए व सिशाओं छे ते करतां अने अहीं संस्थात प्रदेशिकसिशना संस्थातमामवर्तिपणाने लहने खरूपथी तेथोनुं बहुगणुं जणाय छे, जो एम न हों र तो ते, तेना अहं रूरेय अथवा अनंते भागे होत. '' जे कारणथी एक राशिना ज असंख्यभागे छे पण बाकीनी वे राशिओना असंख्येय भागे नथी, ते कारणने टइने कालाप्रदेश करतां अणुओ असंख्यगुण छे. " 'बाकीनी व राशि नहि ' एनो आ प्रमाणे निष्कर्ष छे:--अनंत प्रदेशिकराशि करतां ते अनंतमुण छे, संस्थात प्रदेशिकराशिने तो संस्थात भागे छे अने विवक्षाए संस्थात भागनी अत्यंत अल्पता नथी, कारण के, काउधी सप्रदेश अने अप्रदेशमां वृत्तिवाळा अणुओनुं बहुपणुं छे अने कालाप्रदेशिक अणुओ मात्र एकसमयनी स्थितिवाळा होवाथी घणा ज ओड़ा छे तथा-तेम होत्राथी-कालाप्रदेश पुद्रलो करतां द्रव्याप्रदेश पुद्रलो असंख्यातगुण छे " सिद्धांतमां, एना करतां क्षेत्राप्रदेशपुद्रलो असंख्यगुण छे, कारण के, ते बधा य अणुओ क्षेत्रधी अप्रदेश छे " " द्विप्रदेशिकादिपदोमां पण प्रदेशपरिवर्धित स्थानोमां क्षेत्रधी अप्रदेश ने एक एक राशि प्राप्त थाय छे " ६थी एक प्रदेशावगाढ पुद्रलोने मूकी बाकीनी अवगाहनाए क्षेत्रादेशवडे ज सप्रदेशपुद्रलो असंख्यगुण होय छे " " वळी, ते द्विप्रदेशावगाहनादिक सर्व केष पुद्रलो, अवमाहनास्थाननी बहुलताने लीधे असंस्यगुण छे " " एना करतां द्रव्यथी सप्रदेशपुद्रलो विशेषाधिक छे, ए प्रमाणे ज कालथी अने भावथी विशेषाधिक छे " " जेथी करीने, अप्रदेशोनी भावादिकदृद्धि असंख्यगुण छे तेथी सप्रदेशोनी

सञ्जनं प्रामः व्यः

क्षेत्रादि विशेष परिवृद्धि छे '' आ बधो विचार हुवे पछी मुकवामां आवनारी स्थापनाथी जाणवो "मिश्रोना संक्रम प्रत्ये सप्रदेशो, क्षेत्रथी असंस्थंगुण कह्या छे, वळी, ते पोताना स्थानमां थोडा ज महण करवा '' तत्पर्य ए छे के, निम्न एटले साथें। मळेला अप्रदेश अने सम्देशपुद्धलो, तेना संक्रम प्रत्ये—अप्रदेशो करतां सप्रदेशो विषेना अल्प बहुत्वना विचारस्य संक्रममां-क्षेत्रथी सप्रदेशो, क्षेत्रथी अप्रदेशो करतां असंस्थ्यगुण छे. वळी, पोताना स्थानमां—मात्र सप्रदेश पद्धलो बिचारमां—ते-क्षेत्रथी सप्रदेश पुद्धलो—थोडा ज छे. ए ज कहीए छीए:— "क्षेत्रथी सप्रदेश पुद्धलो थोडा छे, द्रव्य, काळ अने भावनी अपेक्षाए सप्रदेश पुद्धलो अधिक छे अने स्थानमां—कोडनी अपेक्षा विना-सप्रदेश पुद्धलोनुं अल्प बहुत्व छे, ए प्रमाणे अर्थथी जाणवुं. अर्थथी एटले व्याख्याननी अपेक्षाए "पहेलुं अप्रदेशोनुं, बीजुं सप्रदेशोनुं, बळी, त्रीजुं मिश्रोनुं ए प्रमाणे अर्थथी त्रण अल्य बहुत्व छे '' अर्थथी एटले व्याख्यानद्वारा—त्रण अल्य बहुत्व छे, पण सूत्रमां तो एक ज मिश्रोनुं अल्प बहुत्व कह्यं छे, "स्थाने स्थान जे मावादिक अप्रदेशोनी वृद्धि थाय छे, ते ज मावादिक सप्रदेशोनी हानी थाय छे '' जेमके, कल्पना वडे सर्व पुद्धलो एक लाखनी संस्थावाळां छे, तेमां भावथी अप्रदेश पुद्धलो १००० छे, कालथी अप्रदेश पुद्धलो १००० छे अने क्षेत्रथी अप्रदेश पुद्धलो १००० छे, अने तेम होवाथी माव अप्रदेश करतां काल अप्रदेशोमां १००० वधे छे अने ते ज हजार संस्था माव सप्रदेशो करतां काल सप्रदेशोमां ओछी थाय छे, एम बीजे पण जाणी लेखुं, तेनी स्थापना—आकृति—आ छे:—

भावतः —	कालतः	द्रव्यतः—	क्षेत्रतः
अप्रदेश- १०००	अप्रदेश- २०००	अप्रदेश- ५, ००	अप्रदेश- १०००
सप्रदेश- ९९०००	सप्रदेश- ९८०००	सप्रदेश- ९५०००	सप्रदेश- ९००००

समजाववा माटे कल्पेली स्थापनाः

"अथवा क्षेत्रादि अप्रदेशोनी कमथी जे-जेटली-हानी थाय छे ते ज-तेटली ज-क्षेत्रादि-सप्रदेशोनी परिवृद्धि थाय छे " " अप्रदेश अने सप्रदेश बन्ने पुद्गलोनी पण परस्पर हानी अने वृद्धि सलक्षण-पोताना लक्षण-थी प्रसिद्ध थाय छे " " " जेथी, ते बन्ने प्रकारना पुद्गलो ते चार वडे उपचरित थाय छे तथी तो ते पुद्गलोनी परस्पर वृद्धि अने हानि संसिद्ध छे " चार वडे एटले भाव, काल, द्रव्य अने क्षेत्र वेडे, उपचरित थाय छे एटले विशेषित थाय छे " ए राशिओनुं प्रत्यक्ष आ उदाहरण कहुं छुं:—बुद्धिए एम कलो के, जेटलां पुद्रलो छे ते बधां मळीने एक लाख संख्याबाळां छे " कलानावडे, जेटलां पुद्रलो छे तेटलांनी एक लाख संख्याबाळां छे " कलानावडे, जेटलां पुद्रलो छे तेटलांनी एक लाख संख्या कलावी. " कमपूर्वक एक, बे, पांच अने दस हजार पुद्रलो यथोपदिष्ट भावादिक चारेनी पण अपेक्षाए अप्रदेशिक छे " " नेवुं, पंचाणुं, अट्ठाणुं तेम ज नवाणुं-एटलां हजार पुद्रलो मावादिक चारेनी अपेक्षाए विपरीत रीते-उलटे कमे-सप्रदेशिक छे " " जेम संसवे तेम ए राशिओनो अथोपनय करवो, अने सद्भावथी खरी रीते-एम जाणवुं के, श्रीजिनोए ते (राशि) अनंत कही छे."

जीवोनी वधघट.

- ४. प्र०—'भैते !' त्ति भगवं गोयमे समणं जाव-एवं बदासी:-जीवा णं भंते ! किं वडूंति, हायंति, अवद्विया ?
- ४. उ०—गोयमा ! जीवा णो वड्ढृंति, णो हायांति, अव-हिया.
- ५. प्र०—नेरइया णं गंते ! किं बहूंति, हायंति, अय-द्विया !
- ५. उ०- गोयमा ! नेरइया वड्ढांति वि, हायंति वि, अव-द्विया वि-जहा नेरइया वि एवं जाव-वेमाणिया.
 - ६. प्र०-सिद्धा णं भंते ! पुच्छा ?

- ४. प्र०--हे भगवन्! एम कही भगवंत गौतमे श्रमण भगवंत महावीरने एम कहां के, हे भगवन्! जीवो द्युं वधे छे, घटे छे के अवस्थित रहे छे?
- ४. उ० हे गौतम ! जीवो वधता नथी, घटता नयी पण अवस्थित रहे छे.
- · ५. प्र०—हे भगवन् ! नैरियको हुं बधे छे, घटे छे के अवस्थित रहे छे ?
- पं. उ० हे गौतम ! नैरियको वधे पण हो, घटे पण छे अने अवस्थित पण रहे छे. जेम नैरियको माटे कहां एम यावत् वैमानिक सुधीना जीवो माटे जाणवं.
- ६. प्र०—हे भगवन् ! सिद्धोनो प्रदन करवो अर्थात् तेओ वधे छे, घटे छे के अवस्थित रहे छे ?

१. मूलच्छायाः-भगवन् ! इति भगवान् गै।तमः श्रमणं यावत्-एवम् अवादीत्-जीवा भगवन् ! किं वर्धन्ते, हीयन्ते अवस्थिताः ? गै।तम ! कीवा नो वर्धन्ते, नो हीयन्ते, अवस्थिताः नरिवका भगवन् ! किं वर्धन्ते, हीयन्ते, अवस्थिताः ? गै।तम ! नैरियका वर्धन्तेऽपि, हीयन्तेऽपि, अवस्थिता अपि यथा नैरियकाः अपि एवं यावत्-वैमानिकाः, सिद्धा भगवन् ! पृच्छा ?:-अतु ः

- ६. उ०-गीयमा ! सिद्धा वडूंति, नो हायांति, अविद्या वि.
 - ७. प्र०---जीवा णं भंते ! केवतियं कालं अवहिया ?
 - ७. उ०--सञ्दं.
 - ८. प्र० नेरहया णं भंते ! केवतियं कालं वड्रांति ?
- ८. उ०-गोयमा ! जहण्मेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आ-*भुतियाए असं*खेजइभागं. एवं हायंति वा.
 - ९. प्र०—नेरइया णं भंते ! केवातियं कालं अवद्विया !
- ९. उ०-गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं; उक्रोसेणं यव्वाः; णवरं-अविद्वरसु इमं णाणतं, तं जहाः-रयणप्पभार पुढारीए अडयालीसं मुह्ना, सक्सप्पमाए चउहत राइंदिया णं, वालुयपमाए मास्रो, पंक्रपमाए दो मास्रो, धूमप्रभाए चत्तारि मासा, तमाए अङ्ग मासा, तमतमाए बारस मासा.
- —असुरकुमारा वि वडूांती, हायांति जहा नेरइया. अवड्रिया जहण्णेणं एकं समयं, उक्तोंसेणं अद्वचत्तालीसं मुहुत्ताः एवं दस-विहा वि.
- ---एगिंदिया वडूांति वि, हायांति वि, अविद्वया वि. एएहिं इभागं.
- ---वे-तिंदिया बड्रांते, हायंति, तहेव, अवद्विया जहण्णेणं एकं समयं, उक्कोरेणं दो अंतोमुहुत्ता. एवं जाव--चउरिंदिया. तं जहा:-संमुच्छिमपंचंदियतिरिक्ल जोणियाणं दो अंतोमुहुत्ता,

- ६. उ०--हे गौतम ! सिद्धो वधे छे, घटे निह अने अव-स्थित पण रहे छे.
- प्र०—हे भगवन्! केटला काळ सुधी जीवो अवस्थित रहे ?
 - ७. उ० (हे गौतम !) सर्वकाळ सुधी.
 - ८. प्र०-- हे भगवन्! नैरियको केटला काल सुधी वधे छे?
- ८. उ० -- हे गौतम ! जघन्यथी एक समय सुधी अने उत्कृष्ट्यी आवंलिकाना असंख्य भाग सुची नैरियक जीवा वधे छे. ए प्रमाणे घटवाना काळ पण तेटले। जाणवा.
- ९. प्र० हे भगवन् ! नैरियको केटला काळ सुधी अव-स्थित रहे छे?
- ९. उ० -- हे गौतम! जघन्ये एक समय सुधी अने चउचीसं मुहुता. एवं सत्तम् वि पुढवीमु वडूंति, हायंति-भाणि- उत्कृष्टथी चेविश मुहूर्त सुधी नैरियको अवस्थित रहे छे. ए प्रमाणे साते पण पृथ्वीओमां वधे छे, घडे छे, एम कहेबुं. विशेष ए के, अवस्थितोमां आ भेद जाणराः-ते जेमके, रत्नप्रमा पृथ्वीमां अडताळीश मुहूर्त, शर्कराप्रभामां चौद रात्रि दिवस, वालुकाप्रभामां एक मास, पंकायभामां बे मास, धूमप्रभामां चार मास, तमप्रभामां आठ मास, अने तमतमाप्रभामां बार मास अवस्थान काळ छे.
 - --जेम नैरियको माटे कह्युं एम असुरकुमारी पण वधे छे, घटे छे. अने जघन्ये, एक समय सुधी अने उत्कृष्ट्यी अडताळीश मुहूर्त सुधी अवस्थित रहे छे, ए प्रमाणे दसे प्रकारना पण भवनपति कहेवा.
- —एकेन्द्रियो वर्धे पण छे, घटे पण छे अने अवस्थित पण रहे तिहि वि जहण्णेणं एकं समयं, उक्कोसेणं आवित्याए असंखेज- छे, ए त्रणे वडे पण जघन्ये एक समय अने उत्कृष्टे आवित्यानो अंसंख्य भाग, एटलो काळ जाणवा.
- वे इंदियो, अने त्रे इंदियो ते ज प्रमाणे वधे छे, घटे छे; अने तेओनुं अवस्थान जघन्ये एक समय अने उत्क्रष्टे वे अन्तर्धृहूर्त अवसेसा सन्वे वडूंति, हायंति, तहेव, अविद्याणं णाणत्तं इमं, सुधीनुं जाणतुं. ए प्रमाणे यावत्-च अरिदिय सुधीना जीवो माटे जाणतुं. बाकीना बधा जीवों केटलों काल वये हो, केटलों काल घटे छे, ए गब्भवकंतियाणं चउव्नीसं मुहुत्ता, संमुच्छिनमणुस्साणं अङ्गचत्ता- बधुं तयैव-पूर्वनी पेठे-जाणवुं अने तेओना अवस्थान काळमां आ लीसं मुहुत्ता, गन्भवकंतियमणुस्साणं चडवीसं मुहुत्ता, वाणमं तर- प्रमाणे नानात्त्र—भेद-छे:—ते जेमके, सम्मूच्छिमपंचेंद्रिय तिर्यंचयो-जोइस-सोहम्मी-साणेसु अहचत्तालीसं मुहुत्ता, सणंकुवारे अहारस निकोनो अवस्यान काळ वे अंतर्मुहूर्त छे, गर्मज पंचेंद्रिय तिर्ध्वन-राइंदियाई-चत्तालिस य मुहुता, मा'हिंदे चउथीसं राइंदियाई- यो नेकोनो अवस्थान काळ ची शिश मुहूर्त छे, सम्मूर्छिम मनुष्योनो

१. मूलच्छायाः—गातम! सिद्धा दर्धनते, नो हीयन्ते, अवस्थिता अपि. जीवा भगवन्! कियन्तं कालम् अवस्थिताः? सर्वाध्द्वा. नैरियका भगवन! कियन्तं कालं वर्धन्ते ? गातम । जघन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेनाऽऽवलिकाया असंख्येयभागम् . एवं हीयन्ते वा. नैरियका भगवन् ! कियन्तं कालम् अवस्थिताः १ गैतिम ! अधन्येन एकं समयम् ,उत्कृष्टेन चतुर्विश्वतिः मुहूर्ताः. एवं सप्तसु अपि पृथिवीषु वर्धन्ते, हीयन्ते-भणितव्याः; नवरम्-क्षविष्यतेषु इदं नानात्वम् , तद्यथाः--रत्नप्रभायां ४थिव्याम् अष्टचत्वारिशत् मुहूर्ताः, शर्कराप्रभायां चतुर्देश रात्रिदिनानि, वालुकाप्रभायां मासः, पङ्कप्र-भायां है। मासा, धूमप्रभायां चत्वारी मासाः, तमायाम् अष्ट मासाः, तमस्तमायां द्वादश मासाः. असुरकुमारा अपि वर्धन्ते,हीयन्ते यथा नैरयिकाः, अवस्थिताः जघन्येन एकं समयम् , उत्दृष्टेनाऽष्ठचस्वारिशद् मुहूर्ताः, एवं दशविधा अपि, एकेन्द्रिया वर्धन्तेऽपि, हीयन्तेऽपि, अवस्थिता अपि, एतैस्त्रिभिरपि जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन आवितकाया असंख्येयभागम् . द्वि-त्रीन्द्रिया वर्धन्ते, हीयन्ते, तथैव, अवित्थिता जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन हैं। अन्तर्मुहूर्तै। एवं यावत्-चतुरिन्द्रियाः. अवशेषाः सर्वे वर्धन्ते, हीयन्ते, तथैव, अवस्थितानां नानात्वम् इदम् , तद्यथाः-संमूर्विछमपंचित्रयतिर्थग्योनिकानां दे। अन्तर्भुहूतीं, गर्भन्युतकान्तिकानां चतुर्विशतिः मुहूतीः, संमूर्विछममनुष्याणाम् अष्टचरवारिशद् मुहूतीः, गर्भन्युतका-न्तिकमनुष्याणाम् चर्त्तविकतिर्महूर्ताः, बानव्यन्तर-जयोर्तिषिक-सैधर्मे-कानेषु अष्टचरवारिशद् मुहूर्ताः, सनःकुमारेऽष्टाद्श रात्रिदिवानि ,चरवारिशच मुहूर्ताः, माहेन्द्रे चतुर्विशती रात्रिदिनानिः-अनु०

वीसै य मुहुत्ता, बंगलोए पंचचतालीसं राइंदियाइं, लंतए नउइ राइंदियाइं, महासुके साट्टें राइंदियसयं, सहस्तारे दो राइंदिय-सयाइं, आणय-पाणयाणं संखेजा मासा, आरण-ऽचुयाणं संखेजाइं वासाइं; एवं गेनेक्वदेवाणं, निजय-वेजयंत-जयंत-अपराजियाणं असंखेजाइं वाससहस्याइं, सन्बद्दासिखे पलिओवमस्स संखेज्यइ-भागो; एवं भागियव्वं वडूंति, हार्यति जहण्मेणं एकं समयं, उक्रोसेणं आवलियाए असंखेजइभागं, अवद्वियाणं जं मणियं.

१०. प्र०—सिद्धा णं भंते ! केवइयं कालं वडूंाति ?

१०. ७० — गोयमा ! जहण्णेणं एकं समयं, उक्कोसेणं अड्ड समया.

११. प्र०-केवइयं कालं अवद्विया ?

११. उ०--गोयमा! जहण्णेणं एकं समयं, उक्रोसेणं छम्मासा.

१२. प्रo--जीवा णं भंते ! किं सोवचया, सावचया, सोवचय-सावचया, निरुवचय-निरुवचया ?

१२. ७०—गोयमा ! जीवा णो सोवचया, नो सावचया, नो सोवचय-सावचया, निरुवचय-निर्वचया; एगिंदया ततियपदे, सेंसा जीवा चउाहें पदोहें भाणियच्चा.

१३. प्रज-सिद्धा णं पुच्छा ?

अवस्थान काळ अडतालीश्च मुहूर्त छे, गर्भज मनुष्योनो अवस्थान काळ चोवीश मुहूर्त छे; वानव्यंतर, ज्योतिषिक, सौधर्म अने ईशान देवलो हमां अवस्थान काळ अडतालीश मुहूर्त छे, सनस्कुमार देव-लोकमां अढार रात्रिदिवस अने चालीश मुहूर्व अवस्थान काळ छे, माहेंद्र देवटो इमां चोशीश रात्रिदिवस अने वीश मुहूर्व अवस्थान काळ छे, बसरो रामां पीस्ताजीश रात्रिदिवस अवस्थान काळ छे, ळांतक देवलो हमां नेवुं रात्रिदिवस अवस्थान काळ छे, महाशुक्र देवलोकमां एकसो साठ रात्रिदिवस अवस्थान काळ छे, सहस्रार देवछोकमां बसो रात्रिदिवस अवस्थान काळ छे, आनत अने प्राणत देवलोक्तमां संख्येय मासो सुधी अवस्थान काळ छे, आर्ग अने अच्युत देवलोकमां संख्येय वर्षी अवस्थान काळ छे, ए प्रमाणे प्रैवेयक देवोनो, विजय, वैजयंत, जयंत अने अपराजित देवोनो असंस्य हजार वर्षो सुवी अवस्थान काळ जाणवी, तथा, सवीर्थ सिद्धमां पल्योपमना संख्येय भाग सुधी अवस्थान काळ जागवो. अने एओ, जघन्ये एक समय सुधी अने उत्कृष्टे आवलिकाना असंस्य भाग सुधी वधे छे, घटे छे ए प्रमाणे कहेतुं अने-तेओनो अवस्थान काळ तो जे कह्यो ते जाणवो.

१०. प्र०—हे भगवन्! सिद्धो केटला काळ सुधी वधे छे?,

१०, उ०—हे गौतम ! जधन्ये एक समय अने उत्कृष्टे आठ समय सुधी सिद्धो वधे छे.

११. प्र०—(हे भगवन्!) सिद्धो केटला काळ सुधी अवस्थित रहे छे ?

११ उ० - हे गौतम । जघन्ये एक समय अने उत्कृष्टे छ मास सुधी सिद्धो अवस्थित रहे छे.

१२. प्र०—हे भगवन ! जीवो उपचय सहित छे, अपचय सहित छे, सोपचय सापचय छे अने उपचय रहित छे के अपचय रहित छे के

१२. उ० — हे गौतम! जीवो सोपचय-उपचय सहित-नथी, सागचय-अपचय-सहित-नथी, सो च्यू सापचय नथी, पण निरुपचय अने निरुपचय छे. एक्रेन्द्रिय जीवो त्रीजा पदमां छे एटले सोपचय अने सापचय छे, बाकीना जीवो चारे पदो वडे कहेवा.

१३. प्र०—(हे भगवन् !) सिद्धो केवा छे ? (पूर्वनी पेठे सोपचयादिनो प्रश्न करबो.)

www.jainelibrary.org

^{9.} मूलच्छायाः—विंशतिश्च सुहूर्ताः, बद्धालोके पश्चत्यारिशद् रात्रिदिनानि. लान्तके नवती रात्रिदिनानि, महाशुके पष्टी रात्रिदिनशतम्, सहसारे द्वे र त्रिदिनशते, आनत-प्राणतयोः संख्येया मासाः, आरणा-ऽच्युतयोः संख्येयानि वर्षाणिः एवं प्रवयकदेवानाम् , विजय-वैनयन्त- जयन्ता-ऽपराजितानाम् असंख्येयानि वर्षसहस्राणि, सर्वार्थिसिद्धे पल्यो । मस्य संख्येयभागः, एवं भणितव्यं वर्षन्ते, हीयन्ते जघन्येन एकं समयम् , अक्कृष्टेन।ऽऽविकाया असंख्येयभागम् , अवस्थितानां यद् भणितम् . सिद्धा भगवन् ! कियन्तं कालं वर्षन्ते ! गौतम ! जघन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन अष्टा समयान् . कियन्तं कालम्-अवस्थिताः ! गौतम ! जघन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन षद् मासान् जीवा भगवन् ! किं सोपचयाः, सापचयाः, सोपचय-सापचयाः, निरुपचय-निरपचयाः ! गौतम ! जीवा नो सोपचयाः, नो सोपचय-सापचयाः, निरुपचय-निरपचयाः , एकेन्द्रियास्तृतीयपदे, शेषा जीवाश्वद्धार्भः पदैभेणितव्याः सिद्धाः प्रच्छाः—अञ्च०

१२. उ० — गीयमा । सिद्धा सीवचया, नी सावचया, नी सीवचयसावचया, निरुवचय-निरवचया.

१४. प्र०—जीवा णं भंते ! केवातियं कालं निरुवचय-निरवचया ?

१४. उ०-गोयमा ! सन्त्रद्धं.

१५. प्र०--नेरइया णं भंते ! केवतियं कालं सोवचया ?

१५. उ०—गोयमा ! जहण्णेणं एकं समयं, उक्कोसेणं आ वित्रयाए असंखेज्जइभागं.

१६. प०--केवतियं कालं सावचया ?

१६. उ०--एवं चेव.

१७. प्र०--केवतियं कालं सोवचय-सावचया ?

१७. उ०--एवं चेव.

१८. प्र०-केवातियं कालं निरुवचय-निरवचया ?

१८. उ०—गोयमा ! जह नेण एकं समयं, उक्कोसेणं बारस मृहुत्ता. एगिदिया सच्ने सोवचया, सावचया सव्वद्धं, सेसा सव्ने सोवच्या ।वि, सावच्या वि, सोवच्य सावच्या वि, निरुवचय-निरयच्या वि जहण्णेणं एकं समयं, उक्कोसेणं आवित्याए असंखेजइभागं. अविद्विएहिं वक्कंतिकालो भाणियथ्वो.

१९. प्र०—सिद्धा णं भंते ! केवातियं कालं सोवचया ?

१९. उ०--गोयमा ! जहण्णेण एगं समयं, उक्कोसेणं अह

२०. ४०—केवातियं कालं निरुवचय-निरवचया !

२०. उ०--जहण्णेणं एकं समयं, उक्तोसेणं छ मासा.

१३. उ०—हे गौतम! सिद्धो सोपचय छे, सापचय नधी, सोपचय अने सापचय नथी, निरुपचय छे, निरुपचय छे.

१४. प्र०—हे भगवन्! जीवो केटला काळ सुधी निरुपचय अने निरुपचय छे?

१४. उ०—हे गौतम! सर्व काळ सुधी जीवो निरुपचय अने निरुपचय छे.

१५. प्र०—हे भगवन्! नैरियक्तो केंटला काळ सुधी सोपचय छे?

१५. उ० — हे गौतम! जधन्ये एक समय सुधी अने उत्कृष्टे आविलकाना असंख्य भाग सुधी नैरियको सोपचय छे.

१६. प्र०—(हे भगवन्!) नैरियको केटल काळ सुधी सापचय छे?

१६. उ०—(हे गौतम!) ए प्रमाणे-पूर्वोक्त सोपचयना काळ प्रमाणे सापचयनो काळ जाणवो.

१७. प्र०—(हे भगवन्!) नैरियको केटला काळ सुधी सोपचय अने सापचय छे?

१७. उ०—(हे गौतम!) ए प्रमाणे-पूर्वोक्त प्रमाणे जाणवुं.

१८. प्र०—(हे भगवन्!) नैरियको केटला काळ सुधी निरुपचय अने निरुपचय छे?

१८. उ०—हे गौतम! जधन्ये एक समय सुधी अने उत्कृष्टे बार मुहूर्त सुधी नैर्यिको निर्पचय अने निरुपचय छे. बधा एकेन्द्रिय जीवो सर्वकाळ सुधी सोपचय अने सापचय छे, बाकीना बधा जीवो सोपचय पण छे, सापचय पण छे, सोपचय अने सापचय पण छे. जधन्ये एक समय अने उत्कृष्टे आविलकानो असंख्य भाग छे, अवस्थितोमां ब्युत्कान्तिकाळ कहेवो.

१९. प्रo—हे भगवन्! सिद्धो केटला काळ सुधी सोपचय छे?

१९. उ० — हे गौतम! जघन्ये एक समय अने उत्कृष्टे आठ समय सुधी सिद्धो सोपच्चय छे.

२०. प्र०—(हे सगवन्!) तेओ (सिद्धो) केटला काळ सुधी निरुपचेय अने निरुपचय छे?

२०. उ०—(हे गौतम!) जवन्ये एक समय सुधी अने उत्कृष्टे छ मास सुधी सिद्धो निरुपचय अने निरपचय छे.

र. मूलच्छायाः—गातम ! सिद्धाः सोपचयाः, नो सापचयाः, नो सोपचयाः, निरुपचय-निरपचयाः. जीवा भगवन् ! कियन्तं कालं किरपचय-निरपचयाः ? गातम ! सर्वाद्धाः नैरियका भगवन् ! कियन्तं कालं सोपचयाः ? गातम ! जधन्येन एकं समयम्, उत्कृष्टेनाऽऽविकाया असं-रथेशभागम्. कियन्तं कालं सापचयाः? एवं चैव. कियन्तं कालं सोपचयाः ? गातम ! जधन्येन एकं समयम्, उत्कृष्टेन द्वादश मुहूतीन् . एकेन्द्रियाः सवें सोपचयाः, सापचयाः सर्वाद्धाः, श्रेषाः सवें सोपचया अपि, सापचया अपि, सोपचया अपि, सोपचयाः सर्वाद्धाः, श्रेषाः सवें सोपचया अपि, सापचया अपि, सोपचयाः स्वाद्धाः असंस्येयभागम् . अविधितैन्द्र्यंत्कान्तिकालो भणितव्यः. सिद्धा भगवन् ! कियन्तं कालं सोपचयाः ? गातम ! जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन अष्ट समयान् . कियन्तं कालं निरुपचय-निरपचयाः ? जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन अष्ट समयान् . कियन्तं कालं निरुपचय-निरपचयाः ? जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन अष्ट समयान् . कियन्तं कालं निरुपचय-निरपचयाः ? जधन्येन एकं समयम् , उत्कृष्टेन वष्ट् मासान्:—अनु०

--सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति.

—हे भगवन्! ते ए ग्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे. (एम कही यावत् विहरे छे.)

भगवंत-अज्ञ धुहम्मसामिपणीए सिरीमगवई धुते पंचमसये अहुनी उहेसी सम्मत्ती.

२. अनन्तरं पुद्रहा निरूपिताः, ते च जीबोपग्राहिणः, इति जीवांश्चिन्तयन्नाहः—' जीवा णं ' इत्यादि. ' नेरइया णं मंते 1 केव तियं कालं अविद्वया ? गोयमा ! जह केणं एकं समयं, उक्कोसेणं चडवीसं मुहुत्तं ति. ' कथम् ? सतसु अपि पृथिवीषु द्वादश मुहूर्तान् यावद् न कोऽपि उत्पद्यते, उद्वर्तते च-उत्कृष्टतो विरहकालस्य एवंह्यात्वाद् , अन्येषु पुनुद्वादशमुहूर्तेषु यावन्त अस्यद्यन्ते तात्रन्त एव उद्दर्तन्ते-इत्येवं चनुर्विशतिमुहूर्तान् यावद् नारकाणाभेकारिगाणत्वाद्-अविश्वतत्वम् -वृद्धि-हान्योरभाव इत्यर्थः. १वं रत्नप्रभादिशु यो यत्रोत्पादो-द्वर्तना-विरहकालश्च ुर्विशतिमुहूर्त।दिको व्युत्कान्तिपदेऽभिहितः स तत्र तेषु तत्तुस्यस्य, समसंख्यानाम् -उत्पादो-इर्तनाकालस्य मीलनाद् द्विगुणितः सन् अत्रस्थितकालोऽष्टचरवारिशद्मुहूर्तादिकः सूत्रोको भवति. विरह्कालश्च प्रतिपदम-बस्थानकालार्धभूतः स्वयमभ्यूह्य इति. 'एगिंदिया वडुंाति वि ' ति तेषु विरहाSभ वेSपि बहुतराणाम् उत्पादात् , अस्पतराणां चोद्रर्तनात्, 'हायंति वि ' ति बहुतराणाम् उद्वर्तनात्, अस्पतराणां च उत्पादात्, 'अविष्टया वि ' ति तुस्यानाम् उत्पादात्, उद्दर्तनाच इति. ' एतेहिं तिहि वि ' ति एतेषु त्रिष्यपि एकेन्द्रियवृद्ध्यादिषु आवलिकाया असंरुपेयो भागः, नतः परं यथायोगं वृद्ध्यादेरभावात्. ' दो अंतोमुहुत्त ' त्ति एकमन्तर्मुहूर्तं विरहकालः, द्वितीयं तु समानानाम् उत्पादी--द्वर्तनकाल इति. ' आणय-पाणयाणं संक्षेजा मासा, आरण-चुपाणं संखेजा नास त्ति ' इह निरहकालस्य संख्यातमास-वर्षरूपस्य द्विगुणत्नेऽपि संख्यातत्वनेव-इत्यतः संख्याता मन्सा इत्यादि उक्तम् . ' एवं गेवेज्जदेवाणं ' ति इह यद्यपि प्रैवेयकाऽयक्तनत्रये संख्यातानि वर्षाणां रातानि , मध्यमे सहस्राणि, उपरिमे रक्षाणि विरह उच्यते तथापि द्विगुणितेऽपि च संख्यातवर्षत्वं न विरुध्यते. विजयादिषु तु असंख्यातकारो विरहः, स च द्विगुणितोऽपि स एव. सर्वार्थसिद्धे पत्योपमसंद्येयभागः, सोऽपि द्विगुणितः संद्येयभाग एव स्यात्, अत उक्तम्:---' विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजियाणं असंखेजाइं वाससहस्साइं ' इत्यादीति. जीवादीन् एव भङ्गवन्तरेणाऽऽहः—' जीवा णं ' इसादि. सोपचयाः-सवृद्धयः-प्राक्तनेषु अन्येषाम् उत्पादात् , सापचयाः--प्राक्तनेभ्यः केपाश्चिद् उद्वर्तनात् सहानयः, सोपचय-सापचयाः—-उत्पादो-द्वर्तनाभ्यां वृद्धि-हान्योर्युगपद्भावाद् , निरुपचय-निरपचयाः-उत्पादो-द्वर्तनयोरभावेन वृद्धि-हान्योरभावात्. ननु उपचयो दृद्धिः, अपचयस्तु हानिः, युगपद् दूयम्, अद्वयं वाऽत्रस्थितत्वम्, एतं च शब्दभेदव्यतिरेकेण कोऽनयोः सूत्र्योर्भेदः १ उच्यते: -- पूर्वत्र परिभाणम् अभिप्रेतम्, इह तु तदनपेक्षम् उत्पादो - द्वर्तनामात्रम्, ततश्च इह तृतीयभङ्गके पूर्वोक्तहद्थ्यादिविकल्पानां त्रयमपि स्यात्, तथाहि:--बहुतरोत्पादे वृद्धिः, बहुतरोद्धर्तने हानिः, समोत्पादो-द्वर्तनयोश्चाऽवस्थितत्वम्-इत्येषं भेद इति. ' एगिंदिया ततियपदे ' ति सोपचय-सापचपा इत्यर्थः. युगपद् उत्पादो-दूर्तनाम्यां वृद्धि-हानिभावात्, शेषभङ्गकेषु ते न संभवन्ति, प्रत्येकम् उत्पादो-दर्तनयोक्तदिरहस्य चाऽभाषाद् इति. 'अविष्ठिएहिं 'ति निरुपचय-निरपचयेषु 'वक्रंतिकालो भाणियन्यो ' ति विरहकाली वाच्यः.

भगवरसुधर्मस्वामिप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पद्मगराते अष्टम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समासम्.

२. हमणां पुद्रलोनुं निरूपण कर्युं, ते पुद्रलो जीवोना उपग्राहक होय छे माटे हवे जीवोने चिंतवता ['जीवा णं' इत्यादि] सूत्र कहे छे. ['नेरइया णं मंते! केवइयं कालं अविद्या ? गोयमा! जहनेणं एकं समयं, उक्कोरेणं चउवीसं मुहुत्तं 'ति] हे मगवन्! निरियको केटला काळ सुधी अवस्थित रहे ?, हे गौतन! जघन्यथी एकसमय सु ते अने उत्कृष्टथी चोवीस मुहूर्त सूधी नैरियको अवस्थित रहे ते केवि रीते ? तो कहे छे के, साते पृथिवीओमां पण बार मुहूर्त सुधी कोई जीव उत्पन्न थाय निह अने कोइनुं उद्धर्तन-मरण-थाय निह-ए प्रकारने उत्कृष्ट विरह् काळ होवाथी तेटलो काळ नैरियको अवस्थित रहे छे तथी तथा बीजा बार मुहूर्त सुधी जेटला जीव नैरियकमां उत्पन्न थाय तेटला जीव उद्धर्ते-मरे-ए पण नैरियकनो अवस्थान काळ होवाथी ए प्रमाणे चोवीश मुहूर्त सुधी नरियकनी एकपरिमाणता होवाथी तेओनी अवस्थितता जाणवी-चृद्धि अने हानिनो अभाव जाणवो. एम रत्नप्रमादि पृथ्वीओमां त्यां व्युत्कांतिपदमां उत्पाद, उद्धर्तना काळ, समसंख्या चोवीश मुहूर्तनो कह्यो छे, त्यां रत्नप्रभा वंगरे पृथ्वीओमां, नैरियकोमां तेनी तुल्य-चोवीश मुहूर्त जेटलो-उत्पाद अने उद्धर्तना काळ, समसंख्या

नैर्यिकोनी अस्थान

एकेंद्रियों वधे छे.

एकेंद्रियो घटे छे. एकेंद्रियो अवस्थित छे.

अम्बत विगेरे खर्गो.

संख्यात-असंख्यात यः।ळ,

स्रोधचय.

साप ।यः निरुपचय-निरुपचय.

–चोवीश मुहूर्तनी संस्या–साथे मळवाथी द्विगुण थयो छतो अडतालीश मुहूर्तादिनो अवस्थित काळ थयो, अने ए सूत्रोक्त छे, अने विरहकाल तो दरेक १दे अवस्थान काळ करतां अङ्घो, स्वयमेव जाणवो. ['एगिंदिया वङ्कंति वि' ति] तेओमां विरह नथी, तो पण घणा उत्पन्न थता होवाथी अने थोडानुं मरण थतुं होवाथी 'तेओ वधे पण छे ' एम कबुं छे ['हायंति वि 'ति] घणानुं मरण थवाथी अने ओछानी उत्पत्ति होवाथी तेओ ' हीन पण थाय छे ' एम कक्षुं छे. [' अविद्या वि ' ति] सरखानी उत्पत्ति होवाथी अने सरखानुं मरण होवाथी 'तेओ अवस्थित पण छे ' एम कहां छे. ['एतेहिं तिहि वि ' ति] ए त्रणेमां एटले एकेन्द्रियोनी वृद्धिमां, हानिमां अने अवस्थितिमां आविलकानो असंस्थय भाग काळ छे, कारण के, त्यार पछी यथायोग दृद्धि वेगरे थती नथी. ['दो अंतोमुहुत्त 'ति] एक अन्तर्मुहूर्त विरह काल अने बीजो अंतर्मुहूर्त तो सरखी संख्यात्राळाओना उत्पादनो अने मरणनो समय छे. [' आणय-पाणयाणं संखेजा मासा, आरण-च्चुयाणं संखेजा वास' ति] अहिं संख्यात मास अने संख्यात वर्षरूप विरह काळने बमणो करीए तो पण तेनुं संख्यातपणुं ज रहे छे माटे 'संख्यात मास' इत्यादि कहुं छे. [' एवं मेवेज्जदेवाणं ' ति] जो के अहिं, प्रैवेयकना भीचला वण भागमां संख्यात शत वर्षो, मध्यम वण भागमां संख्यात हजार वर्षी अने उपरना त्रण भागमां संख्यात लाख वरस विरह काळ छे तो पण तेने बमणो कर्या बाद तेमां संख्यात वर्षपणानो विरोध नथी आवतो तथा विजयादिमां तो असंख्यात काळ विरह छे, पण तेने बमणो करीए तो पण तेनो ते ज-असंख्यात काळ रूप-रहे छे, सर्वार्थसिद्धमां पल्योपमनो संख्येय भाग विरह काळ छे, ते पण बमणो थइने संख्येय भाग रूप ज रहे छे, माटे ऋहां छे के, ' विजय, वैजयंत, जयंत अने अपराजितोनो असंख्य वर्ष सहस्रो छे ' इत्यादि, हवे बीजी रीते जीवोने ज कहे छे:-[' जीवा णं ' इत्यादि,] सोपचय-वृद्धि सहित अर्थात् पहेलाना जीवोमां-जेटला जीवो पहेलां होय-तेमां-बीजा नवा जीवोना उत्पाद्थी-आववाथी-संख्यानी वृद्धिने लीधे वृद्धि सहित, पहेलाना जीवोमांथी केटलाक जीवोना उद्धर्तन-गरण-थी संख्यानी घट थवाधी हानिसहित, उत्पाद अने उद्धर्तन द्वारा एक साथे वृद्धि अने हानि थवाथी सोपचय अने सापचय, उत्मादना अने उद्वर्तनना अभावने लड़ वृद्धि अने हानि न थवाथी निरुपचय अने निरपचय. शं०---मूळ शास्त्रकारे पूर्वमां वृद्धि, हानि अने अवस्थितिनां सूत्रो कह्यां छे अने अहिं उपचय, अपचय, उपचयापचय अने निरूपचय निरपचयनां सूत्रो कह्यां छे. तो ते प्रमाणे वे सूत्रो कहेवानी शी अगत्य छे ? कारण के, उपचय एटले वृद्धि, अपचय एटले हानि अने एक साथे उपचय के अपचय अथवा निरुपचय के निरपचय ते अवस्थिति ए प्रमाणे उपचयादि शब्दोनो वृद्धचादि शब्द साथे समान अर्थ होवाथी शब्दभेद विना आ बे स्त्रमां शुं भेद छे ? समा० -- प्रथमना सूत्रमां परिमाण अभिप्रेत छे एटले वृद्धि वरेगरेना प्रश्न सूत्रमां परिमाण कथन इष्ट छे अने आ उपचयादि सूत्रोमां तो परिमाणनी अपेक्षा विना मात्र उत्पाद अने उद्वर्तना विवक्षित छे, तेथी अहिं त्रीजा मांगामां पूर्वे कहेल बृद्धचादिना त्रणे विकल्पो थाय छे, ते जेमके, ज्यारे घणानो उत्पाद होय त्यारे वृद्धि, घणानुं मरण थाय त्यारे हानि अने ज्यारे समान उत्पाद अने उद्वर्तन होय त्यारे अवस्थित पणुं होय छे, ए प्रमाणे पूर्वसूत्र तथा आ सूत्रमां भेद छे. [' एगिंदिया तइअपए ' ति] अर्थात् एक साथे उत्पाद अने उद्वर्तन पर्केद्रियोः थवाने लीधे वृद्धि तथा हानि थवाथी एकेंद्रिय जीवो सोपचय अने सापचय छे, बाकीना भांगाओमां तो ते एकेन्द्रियो संभवता नथी, कारण के, तेओमां प्रत्येकनो उत्पाद, उद्वर्तन अने तेना विरह्नो अभाव छे. ['अयद्विएहिं'ति] निरुपचय अने निरपचयोमां ['वक्कंतिकालो भाणियव्यो ति] पूर्वे कहेलो विरह काल कहेबो.

> बिडारूपः समुद्रेऽखिल्जलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सहुणानां परकृतिवरणाद्वैतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बृहको दान्ति-शान्त्योः-द्वात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चाम्रुस्यः ॥

शतक ५.-उद्देशक ९.

राजगृह नगर ए शुं कहेबाय १-पृथिवी विगेरे राजगृह नगर कहेबाय -एव। कारणती नींथ.-दिवसे प्रकाश अने रात्रे अंधारुं होय १-हा.-एनुं शुं कारण १-ह्युभ पुद्रल अने अशुभ पुद्रल.–नैरविकोदे प्रकाश होय के अंधकार १–अंधारार.–तेनुं कारण–अशुभ पुद्रल.–अशुरकुमारोने प्रकाश.–पृथितीकाय .यावत्–तेइंदियोने अंधकार.–चर्डारद्रियोने प्रकार अने अंबकार.–ए रीते यावत्–मनुष्योने.–अ**ष्ठ**रकुमारोनी पेठे वथा भुवनपति विगेरे देवोने प्रकारा.– नारिक्षमां रहेला भैरियिकोने 'क.ळ ' नो ख्याल होय ?-ना,-एम केम ?- काळ ' नो ख्शल अहीं मर्खलोकनां छे माटे-ए रीते यावत्-पंचेद्रिय-तिर्यंचयोनिको विषे ५ण जाणबुं.-मनुभ्योने तो काळनो ख्याल होय छैं -देवोने काळनो ख्याल नथी होतो.-रार्थापस स्थविरो अने श्रमण भगवंत महात्रीर.-असंख्य लोक्सा अनंत रात्री-दिवसो शी शीते ?-पुरुषादानीय पार्श्व-अईतनी साक्षी-जीकस्वरूप.-पार्श्वापत्योने थएली श्रमण भगवंत महावीरनी 'सर्वज्ञ अने सर्वदर्श' तरीकेनी ओळख:ण.-चार याम मूकी पांच यामनो स्वीकार.-सिद्धत्व प्राम्नि -देवलोक्षोनी गणत्री-संग्रहगाथा-विद्यार.--

१. प्र०—ते ं णं काले णं, ते णं समएणं जाव-एवं नगरं रायगिहं ति पयुच्चइ, आउ नगरं रायगिहं ति पवुच्चइ, ज्ञाव-वणस्तर्इ, जहा-एयणुद्देसए पंचिदियतिरिक्सनोणियाणं वत्तव्वया तहा भाणियव्वा, जान-सचित्ता-ऽचित्त-मीसियाइं दब्बाइं नगरं रायगिहं ति पवुचइ ?

?. उo-गोयमा ! पुढवी वि नगरं रायगिहं ति पवुचइ, जाय-सिचा-ऽचित्त-मीसियाइं दन्वाइं नगरं रायगिहं ति पवुचइ.

१. प्र०--ते काले, ते समये यावत्-एम बोल्या:-हे श्यासी:- किं इदं भंते ! नगरं रायगिहं ति पवुच्चइ, किं पुढवी भगवन्! आ राजगृह नगर शुं कहेवाय ? शुं राजगृह नगर पृथिवी कहेवाय, जल कहेवाय, यावत् वनस्पति-जेम एजन उद्देशामां पंचेंद्रियतिर्यंचोना (परिप्रहनी) वक्तन्यता कही छे तेन अहिं कहेबुं अर्थात् शुं राजगृह नगर कूट कहेबाय, शैल कहेवाय, यावत् सचित्त, अचित्त अने मिश्रित द्रव्यो, राजगृह नगर कहेवाय?

> १. उ० — हे गौतम ! पृथिवी पण राजगृह नगर कहेवाय यात्रत्-सचित्त, अचित्त अने मिश्रित द्रव्यो राजगृह नग. कहेवाय.

१. मूलच्छायाः —तस्मिन् काले, तस्मिन् समये यावत्-एवम् अवादीतः —किम् इदं भगवन् । नगरं राजगृहम् इति प्रोच्यते, किं पृथिवी नगरं राजगृहम् इति श्रोच्यते, आपो नगरं राजगृहम् इति श्रोच्यते, यावत्-वनस्पतिः, यथा एजनोद्देशके पश्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां वक्तव्यता तथा भणितव्या, यावत्-सिचता-ऽचित्त-मिश्रितानि द्रव्याणि नगरम् राजगृहम् इति श्रोचयते १ गौतम ! पृथिव्यपि नगरं राजगृहमिति श्रोच्यते, यावत्-सिचत्ता-ऽचित्त-मिश्रितानि द्रव्याणि नगरं राजग्रहम् इति शोच्यते :-- अतु •

- २. प्र०-से केण हेणं ?
- २. उ०-गोयमा ! पुढवी जीवा इ य, अजीवा इ य णगरं
- २. प्र०—(हे भगवन्!) ते क्या हेतुथी?
- २. उ०--हे गौतम! पृथिवी, ए जीवो छे, अजीवो छे माटे रायिगहं ति पबुचह, जाव-सिचता-ऽचित्त-मीसियाइं दव्वाइं, ते राजगृह नगर कहेवाय छे यावत्-सचित्त, अचित्त अने मिश्र जीवा इ य, अजीवा इ य नगरं रायगिहं ति पवुचइ, से तेणहेणं द्रव्यो पण जीवो छे, अजीवो छे माटे राजगृह नगर कहेवाय छे, ते हेतुथी ते तेम ज छे.
- १. इदं किल अर्थजातं गौतमो राजगृहे प्रायः पृष्टवान् , बहुशो भगवतस्तत्र विहाराद्-इति राजगृहादिस्वरूपनिर्णयपरसूत्र-प्रपन्नं नवमोद्देशक्माहः-' ते णं ' इसादि. ' जहा एयणुद्देसए ' ति एजनोद्देशकोऽस्यैव पन्नमशतस्य सप्तमः, तत्र पन्नेन्द्रियतिर्य-ग्वक्तव्यंताः-'' टंका, कूडा, सेला, सिहरी '' इत्यादिका या उक्ता, सा इह भणितव्या इति. अत्रोत्तरम्:---' पुढवी वि नगरं ' इत्यादि. पृथिच्यादिसमुदायो राजगृहम् , न पृथिच्यादिसमुदायाद् ऋते ' राजगृह 'शब्दप्रवृत्तिः. ' पुढवी जीवा इ य , अजीवा इ य नगरं रायिगहं ति पनुचर ' ति जीवाऽजीवस्वभावं राजगृहम् इति प्रतीतम् , ततश्च विवक्षिता पृथिवी, सचेतना-ऽचेतनत्वेन जीवाश्च अजीव।श्रेति राजगृहम् इति प्रोच्यते इति.

१. आ बधो अर्थनो समूह भगवंत गौतमे भगवंत महावीरने जाजे भागे राजगृह नगरमां पूछ्यो हतो, कारण के, भगवंत महावीरनो घणो विहार राजगृहमां थयेलो छे माटे राजगृहादिना खरूपना निर्णय परत्ये आ नवमा उद्देशकमां सूत्रनो प्रयंच-विस्तार-कहे छे:--[' ते णं ' इत्यादि.] ['जहा एयणुदेसए ' ति] एजनोदेशक, ए आ पांचमौ शतकनो सातमो उदेश छे, तेमां ['टंका, कूडा, सेला, सिहरी 'इत्यादि] पंत्रम शतकको सप्तम पंचेंद्रियतिर्येचोनी यक्तव्यता छे ते वक्तव्यता अहिं कहेवी. अहिं उत्तर आपे छेः ['पुढवी वि नगरं ' इत्यादि.] पृथिवी वगेरेनो समुदाय ते उंद्रज्ञ. राजगृह नगर छे, कारण के, पृथिव्यादिना समुदाय विना राजगृह शब्दनी प्रवृत्ति थती नथी ['पुढती जीवा इ य, अजीवा इ य, नगरं रायगिहं ति पबुचह ' ति] राजगृह नगर जीवाजीय- स्वभाववाळुं छे ए प्रतीत छे माटे [मगधदेशमां वर्तमान ' बिहार ' नी नजीक आवेळी अने ' राजगिर ' नामथी ओळखाती जे]अमुक जमीन, पोताना सर्चेतनपणाने अने अचेतनपणाने छीधे जीव अने अजीवरूप हे, ते ' राजगृह ' ए प्रमाणे कहेवाय छे.

अंजवाळुं अने अंधारुं.

- ३. प्रo—से पूर्ण मंते ! दिया उज्जोए, राइं अंधयारे ?
- ३. ७०-- हंता, गोयमा ! जाव-अंधयारे.
- ४. प्रo-से केणहेणं ?
- ४. ड०—गोयमा ! दिया सुभा पोग्गला, सुभे पोग्गलपरि-णामे, राइं असुभा पोग्गला, असुभे पोग्गलपरिमामे-से तेणद्वेगं.
 - ५. प्रo नेरह्याणं मते । कि उज्जोए, अंधयारे ?
 - ५. उ०--गोयमा ! नेरइयाणं णो उज्जोए, अंधयारे.
 - ६. प्र० -- से केणहोणं ?
- ६. उ०-गीयमा ! नेरइयाणं असुमा पोग्गला, असुमे पोग्गलपरिणामे-से तेणड्डेणं.

- ३- प्र०-हे भगवन्! दिवसे उद्द्यीत अने रात्रिमां अंधकार होय छे ?
 - ३. उ०--हा, गौतम! यावत्-अंधकार होय छे.
 - ४. प्रo—ते क्या हेतुथी?
- ४, उ० हे गैतिम! दिवसे सारां पुद्रलो होय छे अने सारो पुद्रल-परिणाम होय छे, रात्रिमां अञ्चभ पुद्रलो होय छे अने अञ्चम पुद्रल-परिणाम होय छे-ते हेतुथी एम छे.
- ५- प्र० हे भगवन् ! शुं नैर्यिकोने प्रकाश होय छे के अंधकार होय छे ?
- ५. उ०--हे गौतम ! नैरियकोने प्रकाश नथी पर्ण अधकार छे.
 - ६. प्र०--ते क्या हेत्थी?
- ६. उ०--हे गौतम! नैरियकोने अञ्चभ पुद्रल छे अने अञ्चम-पुद्रल परिणाम छे, ते हेतुथी तेम छे:

१. मूलच्छाया: -- तत् केनाऽर्थेन् ! गौतम ! पृथिवी जीवाश्व अजीवाश्व नगरं राजगृहमिति प्रोच्यते, यावत्-सचित्तः-ऽचित्त-मिश्रितानि द्रव्याणि, जीवाश्च, अजीवाश्च नगरं राजगृहमिति प्रोच्यते, तत् तेनाऽथंन तचैव. २ तद् नून भगवन् ! दिवा उद्योतः, रात्रौ अन्धकारः १ हन्त, गौत्म । यावत्-अन्धकारः, रत् केनापूर्वेन १ गौतम । दिवा शुमाः पुदूलाः, शुमः पुदूलपरिणामः, रात्री अशुभाः पुदूलाः, अशुभः पुदूलपरिणामस्तत् तेनाऽर्थेन. नैरियकाणां भगवन् ! किम् उद्योतः, अन्धकारः ? गातम ! नैरियकाणां नो उद्योतः, अन्धकारः तत् केनाऽर्थेन ? गोतम ! नैरियकाणाम् अञ्चभाः पुद्रसाः, अञ्चभः पुद्रसपरिण्मस्तत् तेनाऽर्थनः--- अनु०

१. जूओ भगवती खं॰ २, पृ० (२१३-२३०):--अनु०

- ७. प्र०-अंसुरकुमाराणं भंते ! किं उज्जोए, अंघयारे ?
- ७. उ०-गोयमा ! असुरकुमाराणं उज्जोए, नो अंधयारे.
- ८. प्र०—से केणहेणं ?
- ८. उ०—गोयमा ! असुरकुमाराणं सुभा पोग्गला, सुभे पोग्गलपरिणामे–से तेणहेणं जाव-एवं वृचइ, जाव-थणियाणं.
 - —पुढविकाइया जाव-तेइंदिया जहा नेरइया.
 - ९. प्रo चडरिंदियाणं भंते । कि उज्जोए, अंधयारे ?
 - ९. उ०--गोयमा ! उज्जोए वि, अंधवारे वि.
 - १०. प्र०—से केणहेणं ?
- १०. उ०--गोयमा! चउरिंदियाणं सुमा-ऽसुभा य पोग्गला, सुभा-ऽसुभे य पोग्गलपरिणामे-से तेणहेणं एवं जाव-मणुस्साणं.
 - --वाणमंतर-जोइस-वेमाणिया जहा असुरकुमारा.

- ७. प्र०--हे भगवन्! हुं असुरकुमारोने प्रकाश छे, के अंधकार छे?
- ७. उ०—-हे गौतम ! असुरकुमारोने प्रकाश छे पण अंधकार नथी.
 - ८. प्र०--ते क्या हेतुथी ?
- ८. उ० हे गातम! असुरकुमारोने शुभ पुद्रको छे, शुभ पुद्रक परिणाम छे माटे ते हेतुथी यात्रत्—तेओने प्रकाश छे—एम कहेबाय छे. ए प्रमाणे यात्रत् स्तनितकुमारो सुधी जाणवं.
- --जेम नैरियको कहा तेम पृथ्वीकायथी मांडी यात्रत्-त्रे-इंद्रिय सुधीन। जीवो जाणवा
- ९. प्र०—हे भगवन् ! शुं चउरिदियोने प्रकाश होय छे के अंधकार होय छे ?
- ् ९. उ०--हे गौतम ? तेओने प्रकाश पण होय छे ने अंधकार पण होय छे.
 - १०. प्र०--ते क्या हेतुथी ?
- १०. उ०--हे गौतम ! चउरिद्रियोने शुभ तथा अशुभ पुद्रल होय छे अने शुभ अने अशुभ पुद्रल-परिणाम होय छे. ते हेतुथी तेम छे. ए प्रमाणे यावत्-मनुष्यो माटे जाणी लेवुं.
- ——जेम असुरकुमारो कहा। तेम वानव्यंतर, ज्योतिषिक अने वैमानिक माटे जाणवं.
- २. पुद्रलाऽधिकाराद् इदमाहः—'सं णूणं 'इलादि. 'दिवा सुहा पोग्गल ' ति दिवा दिवसे, शुमाः पुद्रला भवन्ति. किमुक्तं भवति ? शुमपुद्रलपरिणामः, स चाऽर्ककरसंपर्कात्. 'रित 'ति रात्रा. 'नेरहयाणं असुभपोग्गल ' ति तत्क्षेत्रस्य पुद्रल- शुमतानिमित्तभूतरिवकरादिप्रकाशकवस्तुवितत्वात्. 'असुरकुमाराणं सुभा पोग्गल ' ति तदाऽऽश्रयादीनां भाखरत्वात्. 'पुढिविकाइए ' इलादि. पृथिवीकाविकादयत्त्रीन्द्रियान्ता यथा नैरियका उक्तास्तथा वाच्याः, एषां हि नास्ति उद्योतः, अन्धकारं चाऽस्ति—पुद्रलानाम् अशुभत्वात्. इह चेयं भावनाः—एषाम् एतःक्षेत्रे सल्यपि रिवकरादिसंपर्के एषां चक्षुरिन्द्रियाऽभावेन दृश्यवस्तुनो दर्शनाऽभावात् शुभपुद्रलकार्याऽकरणेनाऽशुभाः पुद्रला उच्यन्ते, तत्रश्च एषामन्यकारनेविति. ' चउरिदियाणं सुमा—ऽसुमे पोग्गल ' ति एषां हि चक्षुरसद्भावेन रिवकरादिसद्भावे दृश्यार्थाऽवबोयहेतुत्वाच्छुभाः पुद्रलाः, रिवकराद्यभावे तु अर्थाऽवबोधाऽजनकत्वाद् अशुमा इति.
- २. पुद्रलोनो अधिकार होवाथी आ—['से णूणं 'इत्यादि] सूत्र कहे छे. ['दिवा सुहा पोग्गल 'ति] दिवसे सारां पुद्रलो होय छे, तात्पर्य शुं कह्युं ? तो कहे छे के, सूर्यना किरणना संबंधथी दिवसे सारा पुद्रलोनो परिमाम होय छे, ['रित्तें 'ति] रात्रिमां. ['नेरहयाणं असुमा पोग्गल 'ति] कारण के, ते नैरियकोनुं क्षेत्र, पुद्रलमा शुभपणाना निमित्तभूत सूर्यना किरणोना प्रकाशथी रहित छे. ['असुरकुमाराणं सुमा पोग्गल 'ति] असुरकुमारोना आश्रयो—रहेवाना स्थानको—वगेरेनुं भास्वरपणुं हो ग्राथी तेओ (असुरकुमारो) रहे छे त्यां शुभ पुद्रलो होय छे. ['पुद्रविकाइए 'इत्यादि.] जेम नैरियको कह्या तेम पृथिवीकायिकथी मांडी वीदिय सुधीना जीवो कहेवा, कारण के, एओने प्रकाश नथी अने अशुभ पुद्रलो होवाथी अंधकार छे, अहिं आ प्रमाणे विचार करको के, पृथिवीकायादि त्रेइंदियपर्यंतना जीवो आ क्षेत्रमां उ अने तेओने सूर्यना किरण वगेरेनो संबंध पण छे तो पण जे तेओने अंधकार कह्यों छे तेनुं वारण ए छे के, तेओने आंख इन्द्रिय न होवानें लीधे देखवा योग्य वस्तु देखाती नथी अने तेम छे माटे तेओ तरफ शुभ पुद्रलनुं कार्य न थतुं हो गाथी तेओने अपेक्षी अशुभ पुद्रलो कहेवाय छे माटे तेओ तरफ शुभ पुद्रलनुं कार्य न थतुं हो गाथी तेओने अपेक्षी अशुभ पुद्रलो कहेवाय छे माटे

दिवसे सारां पुद्रल. रातिष खराव पुद्रल. नैरविको.

असुरकुमा**र**े

पृथ्वी हायादि-त्रीद्रिय,

Jain Education International

१. मूलच्छायाः—असुरकुमाराणां भगवन् ! किम् उद्योतः, अन्धकारः ? गीतम ! असुरकुमाराणां उद्योतः, नो अन्धकारः . तत् केनार्थेन ? गीतम ! असुरकुमाराणां शुभाः पुद्रलाः, शुभः पुद्रलपरिणामस्तत् तेनार्थेन यावत्-एदम् उच्यते, यावत्-स्तितानाम्. पृथिवीकायिका यावत्-त्रीन्द्रयाः यथा नैरियकाः चतुरिन्द्रियाणां भगवन् ! किम् उद्योतः, अन्धकारः ? गीतम ! उद्योतोऽपि, अन्धकारोऽपि. तत् केनार्थेन ? गीतम ! चतुरिन्द्रियाणां शुभाऽशुभाश्च पुद्रलाः, शुभा-ऽशुभश्च पुद्रलपरिणामस्तत् तेनाऽर्थेन पवं यावत्-मनुष्याणाम्, वानव्यन्तर्-ज्योतिष्क-नैमानिका यथाऽसुरकुमाराः—अनुष्

चडरिदिय जीवो. एओने अंधकार ज छे. ['चउरिंदियाणं सुभासुभा योग्गल ' ति] चउरिंदिय जीवोने आंख होवाने लीवे रविकरणादिनो सद्भाव होय त्यारे दश्य पर्दार्थना ज्ञानमां हेतु होवाथी शुभ पुद्गलो कह्यां छे अने रविकिरणादिनो संसर्ग न होय त्यारे पदार्थज्ञानना अजनक होवाथी अशुभ पुद्गलो कह्यां छे.

नैरियकादिकनुं समय-ज्ञानः

- ११. प्र०— अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं तत्थगयाणं एवं पन्नायए, तं जहाः—समया इ वा, आवितया इ वा, उस्सिप्पणी इ वा, ओसप्पिणी इ वा ?
 - ११. उ०--णो तिणहे समहे.
- १२. प्र०-से केणहेणं जाव-समया इ वा, आवालिया इ वा, उस्सिप्पणी इ वा, ओसिप्पणी इ वा ?
- १२. उ० गोयमा ! इहं तेसिं माणं, इहं तेसिं पमाणं, इहं तेसिं पमाणं, इहं तेसिं एमंगं, तं जहा: —समया इ वा, से तेणहेणं जाव नो एवं पचायए, तं जहा: —समया इ वा, जाव उस्सपिणी इ वा, एवं जाव पंचिदियाति रिक्सजो-णियाणं.
- १२. प्र० अत्थि णं भंते ! मणुस्साणं इहगयाणं एवं पत्रायति, तं जहा:-समया इ वा, जाव-उस्सप्पणी इ वा ?
 - १३. उ०—हंता, आत्थ.
 - १४. प्र०—से केणहेणं ?
- १४. उ० गोयमा ! इहं तेसिं माणं, इहं तेसिं पमाणं, एवं पन्नायिन, तं जहा:-समया इ वा, जाव-ओसिप्पणी इ वा, से तेणद्वेणं०.
 - —वाणमंतर-जोइस-वेमाणियाणं जहा णेरइयाणं.

- ११. प्र०—हे भगवन्! त्यां ्गएळा—निरयमां स्थित रहेला-नैरियको एम जाणे के, समयो, आवलिकाओ, उत्सर्पिणीओ अने अवसर्पिणीओ ?
- ११. उ०—(हे गै।तम!) ते अर्थ समर्थ नथी अर्थात् ते नैरियको समयादिने जाणता नथी.
- १२. प्र०—(हे भगवन्!) ते क्या हेतुथी यावत्-समयो, आविल हाओ, उत्सर्पणीओ अने अवसर्पणीओ (नथी जणातां)?
- १२. उ—हे गौतमं ! ते समयादिनुं मान अहिं मनुष्यलोकमां छे, तेओनुं प्रमाण अहिं छे, अने तेओने आहें ए प्रमाणे जणाय छे, ते जेमके, समयो यावत् अवसार्पणीओ, ते हेतुथी यावत् नैरियकोने ए प्रमाणे जणातुं नथी, ते जेमके, समयो, यावत् अवसर्पिणीओ; ए प्रमाणे यावत् पंचेंद्रियतिर्यंचयोनिको माटे समजनुं.
- १३. प्र०—हे भगवन्! अहिं-मर्त्यकोत्तमां-गयेळा-रहेळा-मनुष्योने ए प्रमाणे ज्ञान छे, ते जेमके, समयो वा यावत् अवसर्पिणीओ वा?
 - १३. उ०--हा, (गौतम !) ए प्रमाणे ज्ञान छे.
 - १४. प्र०—(हे भगवन् !) तें क्या हेतुथी ?
- १४. उ०—हे गौतम! अहिं ते समयादिनुं मान अ्ने प्रमाण छे माटे ए प्रमाणे ज्ञान छे, ते जेमके, समयो यावत् अवसर्गिणीओ—ते हेतुथी तेम छे.
- जेम नैरियकोने माटे कह्युं तेम वानव्यंतर, ज्योतिपिक अने वैमानिक माटे समज्ञुं.
- ३. पुद्रला द्रव्यम्, इति तचिन्ताऽनन्तरं कालद्रव्यचिन्तासूत्रमः—'तत्थगयाणं' ति नस्के स्थितैः, षष्ट्यास्तृतीयार्थस्तृत् एवं पन्नायिति 'ति एवं हि प्रज्ञायते–इदं विज्ञायतेः—'समया इ व 'ति समया इति वा, 'इहं तेसिं 'ति इह मनुष्यक्षेत्रं तेषां समयादीनां मानं परिमाणम्—आदिसगतिसमिमव्यङ्गयत्वात् तस्य, आदिस्यगतेश्व मनुष्यक्षेत्रे एव भावाद्, नस्कादौ तु अभावाद् इति. 'इह तेसिं पमाणं ' ति इह मनुष्यक्षेत्रे तेषां समयादीनां प्रमाणं प्रकृष्टमानम्—स्क्ष्ममानम् इस्पर्यः तत्र मुहूर्तस्तावद् मानम्, तदपेक्षया लवः सूक्ष्मत्वात् प्रमाणम् , तदपेक्षया स्तोकः प्रमाणम् , लवस्तु मानम्—इस्येवं नेयम्—यावत् समय इति. तत्वश्व 'इह तेसिं ' इत्यादि, इह मर्सलोके मनुजैस्तेषां समयादीनां संबन्धि एवं वक्ष्यमाणस्वरूपं समयत्वादि एवं ज्ञायते, तद्यवाः—' मर्मण्यः वा ' इत्यादि.

^{9.} मूलच्छायाः—अस्ति भगवन्! नैरियकाणां तत्रगतानाम् ए ं प्रज्ञायते, तद्ययाः-सनया इति वा, आविलका इति वा, उत्सर्विणी इति वा, अवसर्विणी इति वा, अवसर्विणी इति वा श्नायते, अवसर्विणी इति वा श्नायते वा श्ना

इह च समयक्षेत्राद् बहिर्वर्तिनां सर्वेषामपि सम्याद्ञ्जानम् अवसेयम्, तत्र समयाद्विकालस्याऽभावेन तद्भवहाराऽभावात्. तथा पञ्चेन्द्रियतिर्वश्चः, भवनपति-व्यन्तर ज्योतिष्काश्च यद्यपि केलिद मनुष्यलोके सन्ति तथापि तेऽल्पाः-प्रायस्तदव्यवहारिणश्च, इतरे तु बहव इति तदपेक्षया 'ते न जानन्ति ' इत्युच्यते–इति.

३. अहीं हमणां जणावेलां पुद्रलो द्रव्य छे माटे तेनो विचार पूरो थया पछी लागलो ज काल द्रव्यनो विचार करवा माटे काल द्रव्यना विचारतं सूत्र कहे छे-['तत्थगर्थागं 'ति] त्यां नरकमां रहेलाओ वडे ['एवं पन्नायति 'ति] एम जणाय छे-जे आ आगळ कहेवामां आवनांरुं छे ते जणाय छे? ['समया 'इ व कि] 'समयो 'ए प्रमाण ['इहं तेसिं 'ति] ते समयादिनुं आ मनुष्य क्षेत्रमां मान-परिमाण-छे, कारण के, ते समसादिनी, सूर्यनी गतिथी अभिव्यक्ति थाँय छे अने सूर्यनी गति तो मनुष्य लोकमां ज छे पण नग्कादिमां नथी। [' इहं तेसिं पमाणं ' ति] आ मनुष्य क्षत्रमां ते समयादिकनं प्रमाणः अकृष्ट मान सूक्ष्म मान छे तेमां मुहूर्त तो मान छे अने तेनी-मुहूर्तनी-अपेक्षाए स्थम होवाथी ' लव र प्रमाण छे, ते लवनी अपेक्षाए स्रोक प्रमाण छे अने लव तो मान छे-ए प्रमाण ' समय ' सुधी जाणवुं. तेथी [' इहं तेसिं , इत्यादि] आ मत्यलीकमां मनुष्यो, आगळ कहेवामां आवशे तेतुं ते समयादिमंत्रंधि समयत्वादि खरूव जाणे छे, ते जेमके, ['समया इ वा ' इत्यादि..] आ स्थळे समय क्षेत्र-मनुष्य-क्षेत्र-थी बहार रहेनारा सर्व जीवोने पण समयादिनुं अज्ञान छे तेम जाणवुं, कारण के, मनुष्यक्षेत्रनी बहार समयादि काळ न होवाथी तेनो व्यवहार थर्ती नथी. तथा, जो के केटलाक पंचेंद्रिय तिथेची, भवनपतिओ, व्यंतने अने ज्योतिष्को पण मनुष्य लोकमां छे तो पण ते थोडा छे अने काळना अव्यवहारी छे अने बीजा तो घणा छे-ते घणानी अपेक्षाए कडुं छे के 'ते जाणता नथीः'

नरकमां रहेला.

स्वेनी गति. प्रमाण-मान.

मनुष्य क्षेत्रनी बहार अने मनुष्य लोक.

पार्श्वापत्य स्थविरो अने श्रीमहावीरः

१५. प्र०—ते णं काले णं, ते णं समये णं पासावाचिजा वा, उप्पञ्जंति वा, उप्पञ्जिस्संति वा ? विगन्छिसु वा, विगच्छ-न्ति वा, विगाच्छिस्संति वा ?

१५. उ०--हंता, अजो ! असंखेजे लोए अणंता राइंदिया, तं चेन.

१६. प्र०-से केणहेणं जाव-विगाच्छस्सांति वा ?

१६. उ०-से णूर्ण मे अज्ञो । पासेणं अरहया पुरिसादा-सासयंसि लोगंसि अणादियंसि, अणवदग्गंसि, परिचांसि, परिचु-डंसि, हेद्वा विश्वित्रंसि, मज्झे संखित्तंसि, उपि विसालंसि; अहे पलियंक्सं ठियंसि, मज्झे वरवहरविग्गहियंसि, उपि उद्धमुहंगाका-रसंठियंसि अणंता जीवचणा उप्पज्जिता उप्पज्जिता निलीयंति,

१५. प्र०— ते काले, ते समये श्रीपार्श्वनाथ भगवंतना थेरा भगवंतो जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छन्ति, अपत्य-शिष्य-स्थविर भगवंत, ज्यां श्रमण भगवंत महावीर छे उवागा²छत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिचा, त्यां आवे छे, आवी श्रमण भगवंत महावीरनी अदूरसाभते बेसी एवं वयासी:-से णूणं मंते ! असंखेजे लोए अणंता राइंदिया एम बोल्या:-हे भगवन् ! असंख्य छोकमां अनंत रात्रि-दिवस उपाजिसु वा, उपाजिति वा, उपाजिस्संति वा; निगन्छिसु वा, उत्पन्न थयां ! उत्पन्न थाय छे ! के उत्पन्न थशे ! अने नष्ट थयां ! विगच्छंति वा, विगच्छिस्संति वा; परित्ता राइंदिया उपाजिसु नए थाय छे ? के नष्ट थशे ? के नियत परिमाणवाळा रात्रिदिवसो उत्पन्न थयां ? उत्पन्न थाय छे ? के उत्पन्न थशे ? अने नष्ट थयां ? नष्ट थाय छे ? के नष्ट थरो ?

> १५. उ०--हा, आर्थ! असंख्यलोकमां अनंत रात्रि-दिवसो, वगेरे ते ज कहेवं.

१६. प्र०-हे भगवन् ! ते क्या हेतुथी यावत्-नष्ट थशे ? १६. उ० - हे आर्थ! ते निश्चयपूर्वक छै के, आपना णिएणं सासए लोए बुइए, अणादीए, अगवदग्गे, परित्ते परिवृद्धेः, (गुरुखरूप) पुरुषादानीय-पुरुषोमां प्राह्म-पार्श्व अर्हते लोकने हेड़ा विच्छिके, मज्झे संवित्ते, उदि विसाले; अहे पलियंकसंठिए, शास्त्रत कहा। छे, तेम ज अनादि, अनवरप्र-अनंत, परिमित, मज्झे वरवहरविग्गहिए, उणि उद्ममुइंगाकारसांठिए; तोसिं च णं अलोकवडे परिवृत, नीचे विस्तीर्ण, वचे सांकडो, उपर विशाल, नीचे पल्यंकना आकारनो, वचे उत्तम वन्नना आकारवाळो अने उपर उंचा-उभा-मृदंगना आकार जेवो होकने कहा। छे -तेवा प्रकारना शास्त्रत, अनादि, अनंत, परिच्न, परिच्न, नीचे विस्तीर्ण, मध्य संक्षिप्त, उपर विशाळ, नीचे पर्व्यकाकारे स्थित.

१. अहीं छही विभक्ति, त्रीजी विभक्तिना अर्थमां वपराएली छे:---श्रीक्षभय०

१. मूलच्छायाः - तस्मिन् ठाले, तस्मिन् समये पार्श्वाऽपलाः स्थविरा भगवस्तो येनैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तेनैव उपागच्छन्ति, उपागल श्रमणस्य भगवतो महावीरस्याऽदूरसामन्ते स्थित्वा एवम् अवादिषुः-तद् नूरं भगवन् ! असंख्येये लोके अनन्तानि रात्रिदिवानि उत्पन्नानि वा, उत्पद्यन्ते बा, उत्परस्यन्ते वा; विगतानि वा, विगच्छन्ति वा, विगमिष्यन्ति वा; धरीपानि साधिदिवानि उत्पन्नानि वा, उत्परायन्ते वा, उत्परस्यन्ते वा ? विगतानि वा, विगच्छन्ति वा, विगमिष्यन्ति वा? इन्त, आर्य! असंख्येये लोके अनन्तानि रात्रिदिवानि, तचेव. तत् केनाथेन यावत्-विगमिष्यन्ति वा ? तद् मूनं भवताम्-आर्थाः । पार्थेनाऽईता पुरुषादानीयेन शाक्ष्रो लोक उक्तः, अनादिकः, अनवनताप्रः, परीतः, परिवृतः, अधो विस्तीर्णः, मध्ये संक्षिप्तः, उपरि विशालः, अधः पल्यक्कसंस्थितः, मध्ये वर्वजविष्ठद्धितः, उत्तरि कर्ष्वेष्टद्धाकारसंस्थितः, तस्मिश्र शाश्वते लोकेऽनादिके, अनवनतामे, परीते, परिवृते, अधः विस्तीर्णे, मध्ये संक्षित्ते, उपरि विशाले, अधः पस्यद्वसंस्थिते, मध्ये वस्वज्ञविमहिते, उपरि ऊर्ध्वमृद्द्वाऽऽकारसंस्थिते अनन्ता जीवधना उत्पद्म, उत्पद्य निलीयन्तेः--अञ्च०

पैरित्ता जीवघगा उपाञ्चित्ता, उपाञ्चित्ता निलीशंति से णूणं भूए, उपाने, विगए, परिणए; अजीवेहिं लोकति, पलोकइ 'जे लोकड़ से लोए ? ' हंता, भगवं !. से तेणडेणं अज्जो ! एवं वुचड़-समणं भगवं महावीरं ' सञ्चन् सञ्चदरिसी ' पचिभिजाणांति.

—तए ण ते थेरा भगवंतो ममणं भगवं महावीरं वंदीत, · · स्यार बाद ते स्थविर भगवंतो श्रमण भगवंत महावीरने वंदे उस्संासनिस्सासेहि सिद्धा, जाय-सव्यदुक्खप्यहीणाः; अरथेगतियाः देवलोएसु उववचा.

वचे वर वज्रसमान शरीरवाळा अने उपर उभा मृदंगना आकारे संस्थित एवा छोकमां अनंता जीवधनो उपजी उपजीने नाश पामे छे अने परित्त-नियत-असंख्य जीवधनो पण उपजी उपजीने नाश' असंखंजे, तं चेव, तप्मामेइं च णं ते पासावचेजा थेरा भगवंतो पामे छे—ते छोक, भूत छे, उत्पन्न छे, विगत छे, परिणत छे. कारण के, ते अजीवो द्वारा छोकाय छे-निश्चित थाय छे, अधिक निश्चित-थाय छे माटे जे, प्रमाणयी लोकाय-जणाय-ते लोक कहेवाय १ हा,-मगवन् !. ते हेतुथी हे आयों ! एम कहेवाय छे कें, असंख्येय छोकमां ते ज कहेवुं. त्यारथी मांडी ते पार्धजिनना शिष्य स्थविर भगवती श्रमण भगवंत महावीरने 'सर्वज्ञ, सर्वदर्शी ए प्रमाणे प्रत्यमि-जाणे छे..

नमंसांति, बंदित्ता, नमंसित्ता एवं वयासी:-इच्छामि णं भंते । छे, नमे छे, वंदी, नमी एन बोल्या के, हे भगवन् ! तमारी तुरमं अंतिए चाउजामाओ धम्माओ पंच महन्वयाइं, सपाडिक्समणं पासे, चातुर्याम धर्मने मूक्की प्रतिक्रमण सहित पंच महावतोने ाम्मं जनसंगिजित्ता णं विहरित्तपः; अहासुहं-देशणुष्मियाः । नाः स्वीकारी विहरगः इच्छीए छीए, हे देवानुप्रियः! जेम सुख थाय तेम पिंडवंधं; तए णं ते पासाविका थेरा भगवंतो जाव-चरमोहें करो, प्रतिबंध न करो. सारे ते पार्धिजनना शिष्य स्थविर भगवंतो यायत् सर्वदुःखयी प्रहीण थया अने केटलाक देवलोकमां उत्पन्न थया.

. ४. कालनिरूपणाऽधिकाराद् रात्रिंदिवलक्षणकालविशेषनिरूपणार्थम् इदमाहः—' ते ण काले णं ' इसादि. तत्र *' असंस्*केंजे लोए ' ति असंख्यातेऽसंख्यातप्रदेशात्मकत्यात , छोके चतुर्दशर्ज्यातमेक-क्षेत्रछोके आधारभूने 'अणंता राइं-दिय ' ति अनन्त-परिमाणानि रात्रिंदिवानि अहोरात्राणि ' उपार्जिसु ' इत्यादि. उत्यन्तानि वा, उत्पचन्ते वा, उत्पत्यन्ते वा? पृच्छतामयम् अभिप्रायः— यदि नाम असंख्यातो छोकस्तदा कथं तत्राऽनन्तानि, तानि कथं भवितुम् अईन्ति, अल्यत्याद् आधारस्य, महत्त्वाच आवेयस्य इति. तथा ' परिता राइंदिय ' ति परीतानि नियतपरिमाणानि, नाडनन्तानि, इहाडयमिष्राय:--यद्यनन्तानि तानि तदा कथं परीतानि ? इति विरोधः. अत्र ' हंत ' इत्यायुत्तरम्. अत्र चाऽयम् अभिप्रायः – असंख्यातप्रदेशेऽपि छोकेऽनन्ता जीयाः वर्तन्ते, तथाविधस्यरूप-त्वात्-एकत्राऽऽश्रये सहस्रादिसंस्यप्रदीपप्रभा इव. ते च एकत्रैव समयादिकाले अनन्ता उत्पद्यन्ते, विनश्यन्ति च. स च समयादिकाल-स्तेषु साधारणशरीराऽवस्थायाम् अनन्तेषु, प्रत्येकंशरीराऽवस्थायां च परीतेषु प्रत्येकं वर्तते, तिलक्षणपर्यायरूपावात्तस्य, तथा च कालोऽन्नतः, परीतश्च भवति, इत्येवं चाऽसंख्येयेऽपि लोके रात्रिंदिवानि अनन्तानि, परीतानि च कालत्रयेऽपि युज्यन्ते इति. एतदेव प्रश्नपूर्वकं तत्संमत्तिनमतेन दर्शयनाहः — से णूणं ' इत्यादि. 'मे 'ति भवतां संबन्धिना, 'अजो ! 'ति हे आर्थाः !, ' पुरिसादाणीं : णं ' ति पुरुषाणां मध्ये आदानीय: —आदेय: पुरुषादानीय: —तेन. 'सासए ' त्ति प्रतिक्षणस्थायी -स्थिर इत्यर्थः, ' बुइए ' ति उक्तः. स्थिरश्च उत-तिक्षणाद् अध्यारभ्य स्याद् इत्यत आहः—' अणाइए ' ति अनादिकः, स च सान्तोऽपि स्यात्-भव्यव्यवत्, इसाहः--'अणवयरगे 'त्ति अनवदप्रोडनन्तः, 'पारित्ते 'त्ति परिमितः प्रदेशतः, अनेन छोकस्याऽसंख्येयत्वं पार्ध-जिनस्थाऽपि सम्मतम् इति दर्शितम्, तथा 'परिवृद्धे 'त्ति अलोकेन परिवृतः, 'हेटा विच्छित्रे 'ति सप्तरच्छितिस्तृतावात्, ' मज्झे संखित्ते ' ति एकरञ्जुविस्तारत्वात्, ' उप्पं विसाले ' ति ब्रह्मष्टोकदेशस्य पञ्चरञ्जुविस्तारुद्धवात् . एतदेव उपमानतः प्राहः— ' अहे पिलियंकसंिं अप ' चि उपरि संकीर्णत्वा--ऽधोविस्तृतत्वाभ्याम् , ' मञ्झे वर्वइरिवरगिहिए ^गित्त वर्वज्ञविद्वप्रहः शरीरम् आकारो मध्यक्षाम्खेन यस्य स तथा, सार्थिकश्च इकप्रस्मयः, ' उपि उद्भमुहंगागारसंटिए ' ति ऊर्वः - न तु तिरश्चीनो यो मृदङ्गस्तस्याऽऽकारेण संस्थितो यः स तथा—महक्ससंपुटाऽऽकार इसर्थः. ' अणंता जीवघण ' ति अनन्ताः प्रौरेमाणतः सूक्ष्मादिसाधारणशरीराणां विवक्षितत्वात्, सन्तत्यपेक्षया वाऽनन्तः--जीवसन्ततीनामपर्यवसानत्वात्, जीवाश्च ते घनाँध अनन्तपर्यायसमूहरूपावात्, असंख्येय-प्रदेशिषण्डरूपत्वाच जीवधनाः. किम् इति ? आहः— ' उपाजिता ' इति उत्पद्य- एत्पद्य निलीयन्ते –विलीयन्ते –विनश्यन्ति, तथा

१. मूलच्छाया -- परीताः जीवधनाः उत्पद्य, उत्पद्य निलीयन्ते, तद् नूनं भूनः, उत्पन्नः, विगतः, परिगतः, अत्रीवेटाक्यते; प्रजीवयते-' यो होक्यते स होकः ?' इन्त, भगवन् ! तत् तेनाऽथंन आर्याः ! एवम् उच्यते-असंख्येये, तचेवः तत्प्रभृति च ते पार्थाऽपत्याः स्थविरा भगवन्तः श्रमणं भगवन्तं महावीरं 'सर्वेज्ञः, सर्वेदशीं '(इति) प्रसमिजानन्तिः ततस्ते स्थविरा भगवन्तः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दन्ते, नमस्यन्ति, वन्दिस्वा, नमस्यित्वा एवम् अवादिषुः-इच्छामो भगवन् ! युष्माकम् अन्तिके चातुर्यामाद् धर्मात् पद्य महावतानि सप्रतिकमणं धर्मम् उतस्य विहर्तुम्; बथासुखं देवाऽनुष्रियाः ! मा प्रतिबन्धम्; ततस्ते पार्थापत्याः स्थिवरा भगवन्तो यावत्-चरमः उच्छ्वासं-निःश्वासैः सिद्धाः, यावत्-सर्वेदुःखप्रहीणाः, अस्रयेककाः देवलोकेषु उत्पन्नाः—अनुः

'पॅरिता ' प्रत्येकशरीराः अनपेक्षिता—ऽनीता—ऽनागत—संतानतया वा संक्षिताः जीववनाः—इत्यादि तथैव. अनेन च प्रश्ने यदुक्तम्ः— 'अणंता राइंदिया ' इत्यादि. तस्योत्तरं सूचितम् , यतोऽनन्त—परीतजीवसंबन्धात् काळविशेषा अप्रि अनन्ताः, परीताश्च व्यादिश्य-न्तेऽतो विरोधः परिहतो भवति इति. अथ छोकमेव स्वरूपत आहः—' ते मूए ' ति यत्र जीवयना उत्पद्य उत्पद्य विळीयन्ते स छोको भूतः—सद्भूतो भवनधर्मयोगात् , स चाऽनुत्पत्तिकोऽपि स्यात्—यथा नयमतेनाऽऽकाशम् , अत आहः—उत्पन्नः, एवंविश्वश्वाऽनश्वरोऽपि स्यात्—यथा विवक्षितघटाऽभावः, इत्यत आहः—विगतः, स चाऽनन्वयोऽपि किळ भवति, इत्यत आहः—परिणतः, पर्यायानतराणि आपनः, न तु निरन्वयनाशेन नष्टः. अथ कथम् अयम् एवंविधो निश्चीयते १ इत्यत आहः—' अजिविहे ' ति अजीवैः पुद्गलादिभिः सत्तां विश्वद्विरुत्यद्यमानैः, विगच्छद्विः, परिणमद्विश्च छोकाऽनन्यभूतैः—छोक्यते—निश्चीयते, प्रलोक्यते—प्रकर्षेण निश्चीयते भूतादिधर्मको-ऽयम् इति, अत एव यथार्थनामाऽसौ इति दर्शयत्वाहः—' जे लोकह से लोए ' ति यो छोक्यते विछोक्यते प्रमाणेन स छोको छोक-काद्याच्यो भवति—इति. एवं छोकत्वरूपाऽभिधायकपार्थजनवन्तसंस्मरणेन स्वत्रचनं भगवान् समर्थितवान् इति. ' सपडिक्कमणं ' ति आदिमा—ऽन्तिमजिनयोरेव अवश्यंकरणीयः सप्रतिक्रमणो धर्मः, अत्योवां तु कादाचित्कप्रतिक्रमणः. आह चः——

'' स्ंपिडिकमणो धम्मो पुरिमस्त य पिछमस्त य जिणस्त, मिज्झमगाण जिणाणं कारणजाए पिडिक्रमणं '' ति.

8. काल निरूपणनो अधिकार होवाथी रात्रि-दिवसरूप काल-विशेषने निरूपवा आ--['ते णं काले णं ' इत्यादि] सूत्र कहे छे. तेमां [' असंखे**जे होए ' ति**] असंख्यात प्रदेशस्य होवाथी असंख्यात होकमां एटले चौद रज्ज्वात्मक आधारभूत क्षेत्रहोकमां [' अणंता राइंदिय ' ति] अनंत परिमाणवाळां अहोरात्रो-रात्रि-दिवसो-[' उप्पर्जिसु ' इत्यादिः] उत्पन्न थयां, उत्पन्न थाय छे के उत्पन्न थशे ? आ प्रका पूछता ते स्थविरोंनी आ अभिप्राय जणाय छे के, जो, लोक असंख्यात छे तो तेमां अनंत रात्रि-दिवसो शी रीते होई शके ?वा शी रीते रही शके ? कारण के, लोकरूप आधार असंख्यात होवाथी अल्प छे, अने रात्रि-दिवसरूप आधेय अनंत होवाथी मोटुं छे माटे नाना आधारमां मोटुं आध्य दे.म संभवे ? तथा, ['परित्ता राइंदिय ' ति] परित्त एटले नियत परिमाणवाळां-अमुक परिमाणवाळां-पण अनंत नहि. अहिं आ अियाय छे के, जो ते रात्रिदिवसो अनंत होय तो 'परित्त ' केम होइ शके ? ए प्रमाणे परस्पर विरोध छे. अहिं ['हंता ' इत्यादि] उतर छ, अहिं आ अभिप्राय छे के, जैम एक आश्रय-घर वगेरे-मां हजारो दीवानी प्रभा समाइ शके छे तेनी पेठे, तेवा प्रकारने खरूप होवाथी असंख्य प्रदेशरूप लोकमां पण अनंत जीवो रहें छे अने ते जीवो एक ज समय वगेरे काळमां अनंत संख्यामां उत्पन्न थाय छे, नाश पामे छे ते समयादि काळ, साधारण शरीरनी अवस्थामां रहेला अनंत जीवोमां दरेक जीवमां अने प्रत्येक शरीरनी अवस्थामां रहेला परित्त-नियत-अधंख्यात-जीवोमां दरेक जीवमां रहे छे, कारण के, ते समयादि काळ जीवोनी स्थिति रूप-पर्याय रूप छे-ते प्रकारे काळ अनंत अने परित्त पण कहेवाय छे-ए प्रमाणे असंख्येय लोकमां पण रात्रिदिनो अनंत छे अने परित्त पण छे अने ए प्रमाणे होतुं, ए त्रणे काळमां योग्य छे, ए ज वातन ते स्थविरोने सम्मत जिनना मत वंडे प्रश्नपूर्वक दर्शावता ['से णूणं ' इत्यादि] सूत्र कहे छे. ['मे 'ति] आपना संबंधी, ['अजो !'ति] हे आर्थी ! [' पुरिसादाणीएणं ' ति] पुरुषोनी वचे आदेय-माननीय-ग्राह्म-ते पुरुषादानीय-तेणे [' सासए ' ति] (छोकने) प्रतिक्षण रहेनार-स्थिर-[' बुइए ' ति] कह्यों छे, केटलाक स्थिर पदार्थों एवा एण होय छे-जेओ उत्पन्न थया पछी स्थिर रहेनारा होय छे अर्थात् उत्पत्तिवाळा अने स्थिरतावाळा होय छे एण लोक तेवो नथी माटे कहे छे के, [' अणाइए ' ति] अर्थात् लोक आदि-उत्पत्ति-विनानो छे अने स्थिर छे. केटलाक आदि विनाना पदार्थी अंतवाळा होय छे पण लोक तो अंत विनानो छे माटे कहे छे के, [' अणवयस्मे ' ति] अनंत. [' परिते ' ति] प्रदेशथी परित्त छे, आ शब्दबंडे एम दर्शाव्युं के, भगवंत पार्श्वजिनने पण लोकनी असंख्येयता सम्मत छे. तथा ['परिवुडे ' ति] अलोकथी परिवृत, [' हेंद्रा विच्छिन्ने ' ति] सात रज्जु विस्तीर्ण होवाथी नीचे विस्तीर्ण छे, [' मज्ज्ञे संखिते ' ति] एक रज्जु विस्तीर्ण होवाथी वचमां संक्षिप्त छे, ['उपि विसाले 'ति] ब्रह्मलोकनी भाग पांच रज्जु विस्तीर्ण होवाथी उपर विशाल छे, ए ज वातने उपमाथी कहे छे के, ['अहे पिलयंकसंठिए ' ति] उपर संकीर्ण अने नीचे विस्तृत होवाधी नीचे पत्यंकना आकार जेत्रो छे, [' मज्झे वस्वइरियगैहिए ' ति] वचमां पातळो होवाथी लोकनो आकार उत्तम वज्रनी जेवो छे. [' उपिं उद्धमुइंगागारसंठिए ' ति] तीरछो-आडो -नहि एण उभो जे मृदंग, तेना आकारे लोक रहेलो छे अर्थात् वे कोडियाना संपुटने आकारे रहेलो छे. [' अणंता जीवघण ' ति] परिमाणथी अनंत अथवा जीव संतितिनुं अपर्यवसान होवाथी सुश्मादि साधारण शरीरोनी विवक्षाने लीघे संतितनी अपेक्षाए अनंत, अने अनंत पर्यायना समृहरूप होवाथी तथा असंख्या प्रदेशना पिंडरूप होवाथी धन एवा जे जीव ते जीवंधन कहेवाय आधी शुं कहे छे ? तो कहे छे के, [' उपजित्त ' ति] ते जीवधन उपजी रणजीने नाम आमे छे, तथा (रूपरिता ') प्रत्येक शरीरवाळा अने मृत, भविष्यत् काळना संतानपणानी अपेक्षा विनाना माटे ज संजित जीव-धना, इत्योदि-पूर्वनी पेठे समजवुं. आहें प्रश्नमां जे [' अणंता राइंदिया ' इत्यादि] कह्युं छे तेनो उत्तर आ कथन वहे सूचित थयो-अपाइ गयों. कारण के, अनंत अने परित्त जीवना मुंबंधिथी काल-विशेष पण अनंत अने परित्त, ए प्रकारे व्यपदेशाय छे माटे अमुकना संबंधधी अनंत अने अमुकना संबंधथी। परित्त थवामां विरोधनो परिहार थाय छै. हवे खरूपथी लोकने ज कहे छे, [' से भूप ' ति] ज्यां जीवधनो उत्पन्न यह नाश पामे ते लोक कहेवाय अने ते लोक भवन-सत्ता-धर्मना संबंधथी 'सद्भृत ' लोक कहेवाय, जैम नैयायिकना मतमां आकाश, अनुत्पत्तिक-उत्पत्ति-धर्म रहित-छे तेम ते लोक पण अनुत्पत्तिक होय माटे कहे छे के, ते लोक उत्पन्न छे; जुम विवक्षित घटाभाव-घटपश्वंसामाव-उत्पन्न छे अने अनश्वर छे तेम उत्पन्न पदार्थ एण अनश्वर होय माटे कहे छे के, लोक विगत-नाशशील छे; नाशशील पदार्थ एवी एण होय के, जे अनन्वय-

अराप्रस्त पूछताते स्थविरोनो आशय

एक घरमां हजारो दीवाः

स्थवितेता संदेवी पार्श्वजिनः शास्त्रज्ञः

अनंत-परीतः पार्वजिन्ती सम्म^तः लोकस्वहाः

अनंत जीवो.

अमुप्त अपेक्षा.

नैयायिक.

१, प्र॰ छाः—सप्रतिक्रमणो धर्मः पूर्वस्य च पश्चिमस्य च जिनस्य, मध्यमकानां जिनानां कारणजाते प्रतिक्रमणम्—इतिः—अनु॰

र, अहीं ' वरवहरितागहे ' ने बदले जे ' वरवहरितागिहए ' कर्यु छे ते खार्थिक ' इक ' प्रत्यम लागवाने लोधे कर्यु छे:-शीअभय०

परिणामी लोक. फ़ेंबंघ रहित-होय अर्थात् जेनो समूल नाश होय माटे कहे छे के, लोक परिणामी छे अर्थात् अनेक बीजा पर्यायोने प्राप्त थएलो छे पण तेनो निरन्तय नाश-समूल नाश-थयो नथी. हवे आ लोक एवा प्रकारनो छे, ते केवी रीते निर्श्चित थाय ? तो कहे छे के, ['अजीवेहिं'ति] सत्ताने घारण करनारां, नाश पामतां अने परिणामने प्राप्त करतां तथा जेओ (पुद्रलादि) लोकथी अनन्यभूत-अभिन्न छे, एवा अजीव-पुद्रलादि न्याथोंथी लोक निश्चित थाय छे, तथा 'आ भूतादिधर्भवाळो छे 'एम प्रकर्षे निश्चित थाय छे, माटे ज तेनुं 'लोक 'एवं नाम यथार्थ छे, ए वातने दर्शावता कहे छे के, ['जे लोकह, से लोए 'ति] जे प्रमाण द्वारा विलोकी शकाय ते लोक शब्दथी बान्य होइ शके, ए प्रमाणे लोक श्रीपार्थिजन. स्तस्पने कहेनार पार्श्वजिनना वचनने संभारवा द्वारा मगवंत महावीरे पोतानुं वचन समर्थित कर्युं. ['सपिडिक्कमणं 'ति] प्रथम अने अंतिम जिनने प्रतिक्रमण धर्म अवश्य करणीय छे अने बीजा बावीश जिनने तो प्रतिक्रमण धर्म कोइक दिवस कारणे करवा योग्य छे. कह्युं छे के, ''प्रथम जिननो अने पश्चिम-छेहा-जिननो धर्म प्रतिक्रमणसहित छे अने वचला जिनोने कारण थये प्रतिक्रमण छे.''

देवलोको.

१७. प्र०—कैइविहा णं भंते ! देवलोगा पत्रता ?
१७. उ०—गोयमा ! चउित्रहा देवलोगा पत्रता, तं
जहा:-भवणवासी वाणमंतर जोतिसिय-वेमाणियभेदेणं:-भवणवासी
दस्तिहा, वाणमंतरा अद्विहा, जोतिसिया पंचित्रा, वेमाणिया
दुविहा.

गाहाः— किमियं रायगिहं ति य उज्जोए अंधयार–समए य, पासंतिवासिपुच्छा रातिंदिय देवलोगा य.

- सेवं भंते !, सेवं भंते ! त्ति.

१७. प्र०—हे भगवन्! केटला प्रकारना देवलोक कहा। छे? १७. उ०—हे गौतम! चार प्रकारना देवलोक कहा। , छे ते जैन के, १ भवनवासी, २ वानव्यंतर, ३ ज्योतिषिक अने ४ वैमानिक एम चार भेर वहे:—तेमां भवनवासी दस प्रकारना छे, वानव्यंतरो आठ प्रकारना छे, ज्योतिषिको पांच प्रकारना छे, अने वैमानिको वे प्रकारना छे.

—हवे आ उदेशकनी संप्रह गाथा कहे छे: राजगृह ए शुं ? दिवसे उद्चीत अने रात्रीए अधकार केम ? समय विगेरे काळनी समजण कया जीबोने होय छे अने कया

जीवोने नथी होती ? रात्री अने दिवसना प्रमाण विषे श्रीपार्श्वजिनना शिष्योना प्रश्नो अने देवलोकने लगता प्रश्नो-आ उद्देशमां एटला विषयो आवेला छे.

—हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, ते ए प्रमाणे छे एम कही यावत्-विहरे छे.

भगवंत-अज्ञ सहस्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते पंचमसये नवमो उदेसो सम्मत्तो.

५. अनन्तरम् ' देवलोएस् उवववा ' इत्युक्तम् , अतो देवलोकप्ररूपणसूत्रम्:—' कतिविहा णं ' इत्यादि.

भगवत्सुधर्मसामिप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पद्यमशते नवम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

५. हमणां ['देवलोएसु उववन्ना'] अधीत् 'देवलोकमां गया 'ए प्रमाण जणाव्युं छे, तो हवे ते देवलोकोन लगतुं आ सूत्र कहे छेः देवलोक. ['कइविहाणं' इत्यादि.]

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सहुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्योः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाम्मुख्यः ॥

१. कितिया भगवन् ! देवलोकाः प्रक्षप्ताः ? गातम ! चतुर्विधा देवलोकाः प्रक्षप्ताः, तद्यथाः-भवनवासि-वानव्यन्तर-उद्येतिष्क-वैमानिकमेदेन:-भवनवासिनो दशविधाः, वानव्यन्तरा अष्टविधाः, ज्योतिष्काः पञ्चविधाः, वैमानिका द्विविधाः. गाथाः-किमिदं राजगृहमिति च उद्योतोऽन्धकार-समयश्च पार्थान्तेवासिष्ट्छा रात्रिदिवानि देवलोकाश्च. तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः-अनु०

शतक ५.-उद्देशक १०.

चंपा.-पंचम शतकनो प्रथम उद्देशक.-चंद्रनिरूपण.-शतक समाप्ति.

ते णं काले णं, ते णं समए णं चंपा नामं नगरी, जहा ते काले, ते समये चंपा नामे नगरी हती, प्रथम उद्देशक कही पढिमिल्लो उद्देसओ तहा नेयव्यो एसो वि, नवरं चंदिमा भाणि- तेम आ उद्देशक समजवी, विशेष ए के, चंद्री कहेवा. यन्त्रा.

भगवंत-अज्ञसुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुत्ते पंचमसये दशमो उदेसी सम्मत्तीः

१. अनन्तरोदेशकान्ते देवा उक्ताः, इति देवविशेषभूतं चन्दं समुद्दिश्य दशमोदेशकम् आह, तस्य चेदम् सूत्रमः-' ते णं कालेणं ' इत्यादि. एतच चन्द्राऽभिलापेन पञ्चमशत-प्रथमोदेशकवन्नयम् इति.

> श्रीरोहणादेरिय पञ्चमस्य शतस्य देशानिव साधुशब्दान्। विभज्य कुश्येव बुधोपदिष्ट्या प्रकाशिताः सन्मणिवद् मयाऽर्थाः॥

भगवत्सुधर्मसामित्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पद्यमशते दशम उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविश्चितं विवरणं समाप्तम्.

१. अनंतर-पासेना-उदेशामां छेवटे देवो कहाा, माटे देव विशेषरूप चन्द्रने उदेशीने आ दशम उदेशक कहे छे, तेनुं आ-['ते णं कालेणं ' इत्यादि] आदि सूत्र छे, अने पांचमा शतकमां जेम प्रथम उदेशैक कहाो छे, तेनी पेठे आ उदेशो चंद्रना अभिलापथी जणावो.

पंचम शतक-प्रश्म उद्देशक अने चन्द्र.

सुज्ञे जणावेली प्रथा प्रमाणे विवेच्युं आ शत पांचमुं अहीं, श्रीरोहणाद्वि-खडको ज जाणे कोशे करी भांगी मणी प्रकाश्या.

पश्चम शतक समाप्त.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वैतनीवी तपसी। अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वृहिको दान्ति-शान्खोः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः॥

१. मूलच्छायाः—तस्मिन् काले, तस्मिम् समये चम्पा नाम नगरी, यथा प्राथमिक उद्शकस्तथा झातव्य एषोऽपि, नवरम्-चन्द्रमसः भणितव्याः—अनु०

१. जूओ भग० द्वि॰ खं॰ ए० (१४३ थी १५६):—अनु०

'शतक ६-उद्देशक १.

वेदना.-आहार.-महाश्रव,-सप्रदेश,-तमस्काय.-भन्य.-शालि.-पृथिवी.-कर्म.-अन्यतीर्थिक.-महावेदनावाळो, महानिर्करावाळो १ के महानिर्करावाळो, महावेदना॰ वाळो १-ए वेमां कोण उत्तम १-प्रशस्तिर्जरावाळो. -छट्टी-सातमीमां रहेनारा नैरियको महावेदनावाळो १ -हा.-ते नैरियको श्रमणो करतां मोती निर्जरावाळा १-ना-एना कारणमां चोक्खा अने मेला वस्त्रनुं उदाहरण.-कर्दमराग.-खंजनराग.-नैरियकोनां पापो चीकणां-लोहारंगी एरणनो दाखलो.-श्रमणोनां कर्मो भोचां.-स्को पूलो अने अग्नि.-पाणीनुं टीपुं अने उनुं धंगधगतुं लोढानुं कड युं.-करणो केटलां १-वार-मनकरण.-यचन-वरण.-कायकरण.-कर्मकरण.-क्ष्यविकाय-औदारिक द्रारीखाळा-कर्मकरण.-करण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-कर्मकरण.-करण.-कर्

—-वेंथण-आहार-महस्सवे य सपएस तमुयाए भविए, साली पुढवी कम्म-अन्नउत्थि दस छहगम्मि सए.

-- १ वेदना, २ आहार, ३ महाआश्रवं, ४ सप्रदेश, ५ तम-स्काय, ६ भन्य, ७ शाली, ८ पृथिवी, ९ कर्म अने १० अन्ययूथिकवक्तव्यता, ए प्रमाणे दश उदेशा आ छहा शतकमां छे.

१. व्याख्यातं विचित्रार्थं पञ्चमं शतम्, अथ अवसराऽऽयातं तथाविधमेव षष्ठम् आरम्यते, तस्य च उदेशकार्थसंप्रहणी गाथेयम्:—'वेयणं ' इत्यादि, तत्र 'वेयणं ' ति महावेदनो महानिर्जरः—इत्याद्यंप्रतिपादनपरः प्रथमः, 'आहार ' ति आहाराद्य-धाऽभिधायको द्वितीयः, 'महस्तवे य' ति महाश्रवस्य पुद्रला बध्यन्ते इत्याद्यर्थाऽभिधानपरस्तृतीयः, 'सपएस ' ति सप्रदेशो जीवः, अप्रदेशो वा इत्याद्यर्थाभिधायकश्चतुर्थः, 'तमुयाए ' ति तमस्कायार्थनिरूपणार्थः पञ्चमः, 'भविए ' ति भव्यो नारकत्वादिना उत्पादस्य योग्यः—तद्वक्तव्यताऽनुगतः पष्ठः, 'सालि ' ति शाल्यादिधान्यवक्तव्यताऽऽश्चितः सप्तमः, 'पुद्धवि ' ति रानप्रभादिपृथिवीवक्तव्यताऽर्थोऽष्टमः, 'कम्म ' ति कर्मबन्धाऽभिधायको नवमः, 'अन्नउत्थि ' ति अन्यय्थिकवक्तव्यतार्थो दशम इति.

२. विचित्र अर्थवाळा पांचमा शतकनी व्याख्या करी, हवे अवसर प्राप्त अने तेश ज प्रकारना छट्टा शतकना विवेचननी शरुआत थाय छे आने ते छट्टा शतकना देशे उदेशाना अर्थोने संग्रह करनारी आ गांथा छे अर्थात् आ गांथामां, आ शतकमां जे जे विषयो आवनारा छे ते बधानो नामनिर्देश करेलो छे. ['वेयण क्रियाता क्रियाता क्रियाता क्रियाता क्रियाता होय ते वेशना. मोटी निर्जरावाळो होय के कम १ इत्यादि अर्थना प्रतिपादन परत्ये प्रथम उद्देशक छे. ['आहार 'ति] आहार वगेरेना अर्थने कहेनारो बीजो आहार. उद्देशक छे. ['महस्सवे य'ति] 'महाश्रववाळाने—मोटा आश्रववाळाने—पुत्रलो बंचाय छे विवास क्रियात क्रियात क्रियात छे महाश्रव. ['सपएस 'ति] 'जीव सप्रदेश छे के अप्रदेश छे १ वत्यादि अर्थनो अनिघायक चतुर्थ उद्देशक छे. ['तसुराए 'ति] तमस्कायने लगतां सप्रदेश. विवेचनने निरूपवा माटे पंचम उद्देशक छे. ['भविए 'ति] जे जीव, नारकाणे वा मनुष्यपणे—इत्यादिरूप उत्पन्न थवाने लायक होय ते तमस्काय. 'भव्य 'कहेवाय अने एवा भव्यनी वक्तव्यताने लगतो आ छट्टो उद्देशो छे. ['सालि 'ति] 'शालि ' वगेरे धान्यने लगता निरूपणने माटे भव्य.—श्र

१. मूलच्छायाः—वेदना-ऽऽहार-महाश्रवथ सप्रदेश-तमस्कायो भन्यः, शालिः पृथ्वी कमी-ऽन्ययूथिका दश षष्ठके शतेः—अतुष्

पृथिवी. आ सप्तम उद्देशक छे. ['पुढवि 'ति] रत्नप्रभा वगेरे पृथिवीनी वक्तव्यता माटे आठमो उद्देशक छे. ['कम्म 'ति] कर्मबंधनुं निरूपण वर्म.-अन्ययूविक. करवा माटे आ नवमो उद्देशक छे. अने दशमा उद्देशमां अन्यतीर्थिकना मतने लगती वक्तव्यता छे.

वेदना, निर्जरा अने वस्त्र.

- ?. प्रo-से णूर्ण भंते ! जे महावेदणे से महानिजारे, जे सेए जे पसत्थनिज्ञराए ?
 - ?. उ० हंता, गोयमा ! जे महावेदणे एवं चेवे.
- २. प्र०--छिट्ट-सत्तमासु णं भंते ! पुढवीसु नेरइया महा-वेदणा ?
 - २. उ०—हंता. महावेयणा.
- ३. प्र०-ते णं भंते ! समणेहिंतो निग्गंथेहिंतो महानिज्जरः तरा ?
 - ३. उ०--गोयमा ! णो तिणहे.
- ४. प्र० से केणड्डेणं भंते ! एवं वुचइ: जे महावेयणे, जाव-पसत्थनिज्ञराए ?
- उ०—गोयमा ! से जहा नामए दुवे वत्था सिया, एगे वत्थे ऋदमरागरत्ते, एगे वत्थे खंजणरागरत्ते; एएसि णं गौयमा 1 दोण्हं चत्थाणं कयरे वत्थे दुखोयतराए चेव, दुवामतराए चेव, दुपरिकम्मतराए चेत्रः, कयरे वा वत्थे सुद्धोयतराए चेत्रः, सुवामत-राए चेव, सुपरिकम्मतराए चेव; जे वा से वत्थे कद्दमरागरत्ते, जे वा से चरथे खंजणरागरत्ते ? भगवं ! तत्थ णं जे से बरथे कइमरागरत्ते, से णं (भंते !) यत्थे दुखोयतराए चेव, दुवा-मतराएं चेव, दुंप्परिकम्मतराएं चेय. एवामेव गोयमा ! नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं, चिक्कणीकयाइं, सिलिङ्घीकयाइं,

- १. प्र० हे भगवन् ! हवे ए छे के, जे महावेदनाव लो होय महानिजरे से महावेदणे; महावेदणस्स य, अपवेदणस्स य से ते महानिर्जरावाळो होय अने जे महानिर्जरावाळो होय ते महावेदना-वाळो होय अने महावेदनावाळामां तथा अल्पवेदनावाळामां ते जीव उत्तम छे जे प्रशस्तनिर्जरावाळो छे ?
 - १. उ० हा, गौतम! जे महानेद्नावाळो छे, ते ज-ए प्रमाणे ज जाणतुं.
 - २. प्र०—हे भगवन् ! छही अने सातमी पृथिवीमां नैरियको मोटी वेदनावाळा छे?
 - २. उ०ृ—हा, मोटी वेदनावाळा छे.
 - ३. प्र० हे भगवन् ! ते छद्वी अने सातमी पृथ्वीमां रहेनारा नैरयिको, अमण निर्प्रन्थो करतां मोटी निर्जरावाळा छे ?
 - ३. उ० हे गौतम ! ते अर्थ समर्थ नथी अर्थात तेम नथी.
 - ४. प्र० हे भगवन् ! ते एम शा हेतुथी कहेवाय छे के, जे महानेदनावाळो छे यावत् प्रशस्तनिर्जरावाळो ?
- उ० हे गौतम! ते जैमके; कोइ वे वस्त्रो होय, तेमांथी एक वस्त्र कर्दमना रंगधी रंगेलुं होय, अने एक वस्त्र खंजनना रंगथी रंगेलुं होय, हे गौतम ! ए वे वस्त्रीमां क्युं वस्त्र दुर्घौततर-दु:खथी धोवाय तेवुं, दुर्वाम्यतर-जेना डाघाओं दु खेथी जाय तेवुं अने दुष्प्रतिकर्मतर-कष्टे करी जेमां चळकाट अने चित्रामण थाय तेवुं अयीत् कर्मना रंगयी रंगेला अने खंजनना रंगयी रंगेला ए बे वस्त्रीमां क्युं वस्त्र दुर्विशोध्य छे? अने क्युं वस्त्र सुधीततर, सुवाम्यतर अने सुपरिकर्मतर छे ? हे भगवन् ! ते बेगां जे ए कर्दगना रंगथी रंग्युं छे ते वस्त्र दुर्धीततर, दुर्वाम्यतर अने दुष्वति कर्मतर छे, जो खिलीभूताई भवंति. संपगाढं पि य णं ते वेदणं वेदेमाणा णो एम् छे तो हे गौतम! ए ज प्रमाणे नैरियकोनां पाप कर्मी गाढीकृत – महानिजरा, नो महापजनसाणा भवंति. से जहा वा केइ पुरिसे गाढ करेलां-छे, चिक्कणीकृत-चिक्कणां करेलां-छे, श्रिष्ट करेलां छे, अहिंगराणें आउंडेमाणे महया महया सद्देगं, महया महया खिलीभूत—निकाचित करेलां -छे माटे ज तेओ संप्रगाढ पण वेदनाने घोसेणं, महया महया परंपराघाएणं णो संचाएइ तीसे अहिंग- वेदता मोटी निर्ज़राबाळा नथी, मोटा पर्यवसानबाळा नथी; अथवा रणीए केई अहा गायरे पोग्गले परिसाडितए. एवामेव गोयमा ! जेम कोइ पुरुष, भोटा मोटा शब्द वडे, मोटा मोटा घोष वडे, मेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं, जाबि-णो महापज्ञवसाणाइं मोटा निरंतर—उपराउपर धातवडे एरणने कूटतो-एरेणे, उपर

१. मूलच्छायाः-तद् नूनं भगवन्। यो महावेदनः स महानिर्जरः, यो महानिर्जरः स महावेदनः, महावेदनस्य च, अलावेदनस्य च स श्रेयान् यः प्रशस्तिनिर्जरा (य) कः ? इन्त, गातम ! यूर्ी महावेदनः एवं चैव. षष्ठी-सप्तम्योः भगवन् ! प्रथिव्योः नेर्यिका महावेदनाः ! इन्त, महावेदनाः. ते भगवन् । श्रमणेभ्यो निर्धन्यभ्यो महानिर्जरतीराः ? गातम ! नो अयमर्थः, तत् केनाऽर्थेन भगवन् ! एवम् उच्चतेः-यो महाविदनः, यावत्-प्रशस्त्रनिर्जरा-(य)कः ? गीतन ! तद् यथा नाम हे वले स्थाताम्, एकं वलं कर्दमरागरक्तम्, एकं वलं खञ्जनरागरक्तम्; एतयोगीतम ! द्वयोः वल्लयोः कतरद् वस्रं सुर्थै।ततरकं चैव, दुवीम्यतरकं चैव, दुव्परिकर्मतरकं चैव; कतरद् वा वस्रं सुधाततरकं चैव, सुवाम्यतरक चैव, सुवरिकर्मतरकं चैव; यदा तत् वस्रं कर्मसागरक्तम्, यहा तद् वस्त्रं खझनसागरक्तम्? भगवन् ! तत्र यत् तद् वस्त्रं कर्दनसागरकं तद् (भगवन् !) वस्त्रं दुधीततरकं चैव, दुवीम्धतरकं चैव, . दुष्परिकर्मतरकं चेव. एवमेव गातम! नैरथिकाणां पापानि कर्माणि गाढीकृतानि, चिक्रगीकृतानि, क्षिष्टीकृतानि, खिलीभूतानि भवन्ति. संप्रगाढामपि च तां ते वेदनां वेदयमाना नो महानिर्जराः, नो महापर्यवसाना भवन्ति. 'तद् यथा वा कोऽपि पुरुषोऽधिकरणीम् आकुहृयन् महता महता शब्देन, महता महता मे। वेण, महता महता परंपराघातेन नो संविजीति तस्या अधिकरण्याः कानपि यथाबादगन् पुदूलान् परिशाद्यितुम् एवमेव गीतम ! मेरिनकार्णा पापानि कमाणि गाढोक्कतानि, यानत्नो महापर्यवसानानिः—अनु •

सुद्धोयतराए चेव, सुवामतराए चेव, सुपरिकम्पतराए चेव, एवामेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं अहावायराइं कम्माइं सिढिलीकयाई, निहियाई कडाई, विष्परिगामियाई खिष्पामेव निद्धत्थाई भवंति. जावतियं तावतियं पि ते वेदणं वेदेमाणा महानिजारा, महापजायसाणा भवंति. से जहा नामए केइ पुरिते सुकं तणहत्थयं जाथतेयंसि पनिखनेजा, से नूणं गोयमा ! से सुके तणहत्थए जायतेयंसि पिक्सत्ते समाणे खिप्पामेव मसमता-विज्ञति ? हंता, मसमसाविज्ञति. एवामेव गोयमा ! समगाणं निरगंथाणं अहावायराई क्रम्माइं, जाव-महापज्जवताणा भवंति. से जहा नामए केइ पुरिसे तत्तंसि अयकवहांसि उदगविंदु, जान-हंता, विदंसं आगच्छइ, एवामेव गोयमा! समणाणं निग्गंथाणं, जाव महापज्जवसाणा भवंति, से तेणहेणं जे महावेयणे से महा-निजरं, जाव-निजराए.

भैवंति. भगवं ! तत्थ जे से वत्थे खंजणरागरते से णं वत्थे टीयतो-होय पण ते (पुरुष) ते एरणना स्थूल प्रकारना पुद्रलोने परिशटित-नष्ट-करवा समर्थ थतो नथी, हे गौतम! एज प्रकारनां नैरिविको नां पाप कर्मी गाढ करेलां यात्रत् महापर्यवसान नथी अने हे भगवन् ! तेमां जे वस्त्र खंजनना रंगथी रंगेलुं छे ते सुधौततर् छे, सुवाम्यतर् छे, अने सुप्रतिकर्मतर छे ए ज प्रमाणे हे गौतम ! अम्ण निर्प्रधोना स्थूलतर स्तंधरूप कर्मी, शिथिलीकृत-मंदविपाकवाळां हे, सत्ताविनानां छे, विपरिणामयाळां छे माटे शीघ्र ज विध्वस्त थाय छे अने जेटली तेटली पण वेदनाने वेदता ते अमण निर्पंथी मोटी निर्जरावाळा अने महापर्य-वसानवाळा थाय छे, जेम कोइ एक पुरुष घासना सूका पूळाने अग्निमां फेंके अने हे गीतम! ते नक्की छेके, ते अग्निमां फेंकवामां ' आवेलो घासनो सूको पूळो शीष ज वळी जाय? हा, ते बळी जाय, ए ज प्रमाणे हे गाँतम ! श्रमण निर्मन्थोना स्थूलतर स्कंध-रूप कर्मी यावत् ते श्रमणो मोटा पर्यवसानवाळ। थाय; जैम कोइ एक पुरुष धगधगता छोढाना गोळा उपर पाणीनुं टीपुं मूके यानत् ते विष्वंस पामे, ए ज प्रमाणे हे गौतम । श्रमण निर्प्रथोनां कर्मी यावत् ते श्रमण निर्प्रथी महापर्यवसानवाळा छे, ते हेतुथी एम कहेवाय छे के, जे महावेदनावाळो होय ते महानिर्जरा राळो होय यावत् प्रशस्तिनिर्जरावाळो होय.

२. ' से णूणं भंते ! जे महावेदणे ' इत्यादिः महावेदनः — उपसर्गादिसमुद्भूतविशिष्टपीडः, महानिर्जरो विशिष्टकर्मक्षयः, अनयोश्व अन्योऽन्याऽविनाभूतत्वाऽऽविभीवनाय ' जे महानिज्ञरे ' इत्यादि-प्रत्याऽऽवर्तनम्-इत्येको प्रश्नः. तथा महावेदनस्य च, अल्पनेदनस्य च मध्ये स श्रेयान् यः प्रशस्तनिर्जराकः-कल्याणानुबन्धनिर्जर इत्येष च द्वितीयः प्रश्नः. प्रश्नता च काकुपाठाद् अवगम्या. दृहन्त ' इत्याद्यत्तरम्, इह च प्रथमप्रश्नस्य उत्तरे महोपसर्गकाले भगवान् महावीरो ज्ञातम्, द्वितीयस्याऽपि (स) महावीर एव -उपसर्गाऽनुपसर्गाऽवस्थायाम् इति. ' यो महावेदनः स महानिर्जरः ' इति यदुक्तं तत्र व्यभिचारं शङ्कमान आहः—' छाहि ' इत्यादि. ' दुखोयतराएं ' ति दुष्करतरघावनप्रक्रियम्. ' दुवामतराएं ' ति दुर्वाम्यतरकं दुस्याज्यतरकलङ्कम्, ' दुप्परिकम्मतराएं ' ि. कष्टकर्तव्यतेजोजनन-भङ्गकरणादिप्रतिक्रियम्-अनेन च विशेषणत्रयेणाऽ। दुर्विशोध्यम्-इत्युक्तम्, ' गाढीकयाइं ' ति आत्मप्रदेशैः सह गाढबदानि-सनसूत्रगाढबद्धसूचीकलापवत्, ' चिक्कणीकयाई ' ति सूक्ष्मकर्मस्कन्यानां सरसतया परस्परं गाढसंबन्धकरणतो दुर्भेदीकृतानि—तथाविधमृत्पिण्डवत् , 'सिलिडीकयाइं 'ति निधत्तानि सूत्रबद्धाऽग्नितप्तलोहशलाकाकलापवत् , 'सिलिडीकयाई ' अनुभूतिव्यतिरिक्तोपायान्तरेण क्षपितुम् अशक्यानि-निकाचितानि इत्पर्थः—निशेषणचतुष्टयेनाऽपि एतेन दुर्विशोध्यानि भवन्ति— इत्युक्तं भवति. एवं च ' एवामेव ' इत्यादि उपनयवावयं सुघटनं स्यात्-यतश्च तानि दुर्विशोध्यानि स्युः, ततः ' संपगाढं ' इत्यादि. ' नो महापज्जवसाणा भवंति ' ति अनेन महानिर्जराया अभावस्य निर्वाणाऽभावस्थां फलमुक्तमः—इति नाऽप्रस्तुतत्त्रम् इत्याऽऽशङ्कनीयम् इति. तदेवं ' यो महावेदनः स महानिर्जरः ' इति विशिष्टजीवाऽपेक्षम् अवगन्तन्यम् , न पुनर्ने(रकादिनिज्धकर्मजीवाऽ)क्षाम् यद्वि ंयो महानिर्जरः स महावेदनः ' इत्युक्तं तद्पि प्रायिकम् , यतो भत्रति अयोगी महानिर्जरः, महावेदेतस्तु भजनया-इति. 'अहिंगराणि ' ति अधिकरणी यत्र छोहकारा अयोघनेन छोहानि कुष्टयन्ति, 'आउडेमाणे ' ति आकुष्टयन् , 'स्रेहेणं ' ति अयोजनघातप्रभावेण ध्वनिना, पुरुषहुंकृतिरूपेण वाः ' घोसेणं ' ति तस्यैवाऽनुनादेन, ' परंपराचाएणं ' ति परंपरा निरन्तरता, तत्प्रधानो चातर । इनं परंपराचातस्तेन-उपर्युपरिचातेन इसर्थ:. ' अहाबायरे ' ति स्यूलप्रकारान्. ' एवामेव ' इत्याद्यपनये, 'गाढीकयाइं ' इत्यादि वेशेषग-चतुषकेण दुष्परिशाटनीयानि भवन्ति -इत्युक्तं भवति. 'तुम्बोयतराए ' इत्यादि अनेन सुविशोध्यं भवति -इत्युक्तं त्यात्. 'अहावायराइं '

१. मूरुच्छायाः-भवन्ति, भगवन्! तत्र यत् तद् वस्त्रं खर्धनरागाकं तद् वस्त्रं सुवाततस्त्रं वैव, सुवाम्पतरकं वैव, सुविद्यमे । स्क वेव, एवमेव गातम । श्रमणानां निर्श्रन्थानाम् यथावादराणि कमाणि शिथिलीकृतानि, निष्ठितानि कृताि, वि।रिणामितानि क्षित्रमेव विश्वस्तानि भवन्ति यावतिकां ताविकामि वेदनां वेदयमाना महानिर्जराः, महापर्यवसाना भवन्ति, तद् यथा नाम कोऽपि पुरुषः शुरुकं तृणहस्तकं जाततेजसि प्रक्षिपेत् , तद् नू । गैतिम ! स शुष्कः तृणहस्तको जाततेजिस प्रक्षिप्तः सन् क्षिप्रमेव मसमसाऽऽप्यते ? हन्त, मसमसाऽऽप्यते. एवमेव गैतिम ! धनणानां निर्मन्थानाम यथावादराणि कर्माणि, यावत्=महापर्ववसाना भवन्ति. तद् यथा नाम कोऽपि पुरुवस्तित अयस्कवाले उद्कविन्दुम्, यावत्-हन्त, विध्वंयम् आगच्छति. एवमेव गैतिम! श्रमणानां निर्श्रन्थानाम् , यावत्-महापर्थवसाना भवन्ति. तत् तेनाऽर्थेन ये महावेदनास्ते महानिर्जसाः, यावत्-निर्जसा(य) कः-अनुक 33

ति स्थूलतरस्कन्यानि असार, णि-इसर्थः, 'सिडिलीकयाइं ' ति श्रधीकृतानि मन्दिनपाकीकृतानि, 'निडियाइं कडाइं ' ति निस्सत्ता-कानि विक्तितानि 'विप्परिणामियाइं 'ति विपरिणामं नीतानि स्थितिघात-रसघातादिभि:-तःनि च क्षित्रमेत्र विध्यस्तानि भवन्ति, एभिश्व विशेषणै: सुविशोध्यानि भयन्ति-इत्युक्तं स्यात् , ततश्च ' जावतियं ' इत्यादि.

प्रायिक. कथन पण प्रायिक आणवुं. कारण के, अयोगिकेवली मोटी निर्जरावाळो तो होय छे पण ते मोटी वेदनावाळो भजनाए होय छ-चोक्कस नथी होतो-परण. अधिकरणी-' एरण ' कहेवाय-तेने [' आउडेमाणे ' ति] आकुट्टन करतो-टीपतो, [' सद्देणं ' ति] लोढानो घण गारवाथी थता शब्दवेड

२. ['से णूणं भंते ! जे महावेदणे ' इत्यादि.] उपसर्ग बंगरे द्वारा जेने विशेष पीडा उपजी होय ते महावेदन-मोटी वेदनावाळो -महावेदना अने महा- कहेवाय अने जेनां कर्मनो क्षय विशेष प्रकारे थयो होय ते महानिर्जर-मोटी निर्जरावाळो-कहेवाय, ए बन्नेनुं अन्योन्य अविनामूलपणुं प्रकट करवा निर्जराः माटे अर्थात् महावेदना होय त्यां महानिर्जरा होय ? अने महानिर्जरा होय त्यां महावेदना होय ?-ए हकीकतने जणाववा सारु सूत्रकारे [' जे महानिजर ' इत्यादि] सूत्रनं पुनरुवारण कर्युं छे-ए एक प्रश्न थयो, तथा महावेदनावाळो अने अल्प वेदनावाळो ए बेनी वर्चे जे प्रशस्त-कत्याणना अनुबंबवाळी-निर्जरावाळो छे ते उत्तम कहेवाय १-ए बीजो प्रश्त छे, ए प्रश्तनी प्रश्तता काकुवाठथी जाणवानी छे. ' हस्त ' भगवंत महावीर. इत्यादि उत्तर सूत्र है. जे समये भगवंत महावीरेन मोटां मोटां कथी पड्यां ते समयना भगवंत महावीर, अहीं प्रथम प्रश्नना उत्तरमां उदाहरण -रूप छे. अने बीजा प्रश्नना उत्तरमां पण ते ज भगवंत, उपसर्गवाळी अने उपसर्ग विनानी अवस्थामां उदाहरणरूप छे. जे महावदनावाळो छे ते महानिर्जरावाळो छे, ए ज कह्युं छे, ते संबंधे ' ए कथन बराबर छे के नहि ? ' ए जातनी शंका आणीने सूत्रकार कहे छे के, [' छट्टी ' दुनींत. इत्यादि] [' दुद्धोयतराए ' ति] जेनी घोवानी प्रक्रिया दुष्कर होय अर्थात् जेने घोतां-साफ- करतां-बहु मुश्केली आवती होय ते ' दुर्धीततर ' दुर्भम. कहेवाम, ['दुवामतराए 'त्ति] जेनी उपरना डाघाओ महाकटे नीकळी शक्ते ते 'दुर्वाम्यतर ' कहेवाय, ['दुप्परिक्रम्मतराए 'ति] जेने चळकतुं ड प्रतिकर्ग. करतां अने जेमां वित्रामण करतां घणो ज प्रयास करवो पडे ते 'दुष्प्रतिकर्मतर 'कहेवाय. अहीं आ त्रणे विशेषणो वस्त्रने लगतां छे अने तेथी एम जाणी शकाय छे के, जे बस्ननां ए विशेषणों छे ते मेलामां मेछं-मसोता करतां पण मेछं-दाढ जेवुं मेछं-होवुं जोईए अर्थात् ते दुर्विशोध्य होवुं गाड. जोईए. [' गाढीकयाइं ' ति] शणना स्तर्थी-स्तळीथी-गाड-ख्व मजबूत-बांधेल सोयना समूहनी पेठे आत्माना प्रदेशीनी साथे गाड बांधेलां, चिकण. [' चिक्कणीक्याइं ' ति] जम चीकाशने लीचे माटीनो पिंडो दुर्भेंच थाय छे तेम सूक्ष्म कर्मस्कंधोना रसनी साथ परस्पर गाढ संबंध करवाथी जे कर्मों दुर्मेंद्र थयां छे ते, ' चिक्कणां कर्यों 'एम कहेवाय, ['सिलिट्टीकयाई ' ति] श्लिष्ट कर्यो अर्थात् सूत्रानी दोरीवती मजबूत बांधीने आगमां स्थिष्ट. तपावेली छोढानी सळीओ जैम परस्वर चोंटी जाय छे-कोई रीते नोखी थई शकती नथी तेम जे कमी ए रीते परस्पर एकमेक थई गयां होय-कोई रीते नोखां न पड़ी शकतां होय तेओ निधत्त कर्मी-शिष्ट करेलां कर्मी-कहेवाय. अने जे कर्मी अनुभव्यां सिवाय बीजा कोई उपायशी खपानी निकाचित. शकाय एवां न होय निकाचित होय-ते ' खिलीसूत ' कहेवाय. अहीं आ चारे विशेषणो कर्मने लगतां छे अने तेथी एम जाणी शकाय छे के, जे कर्मनां ए विशेषणों छे ते कर्मी, ए मेलामां मेला वस्त्रनी पेठे दुार्निशोध्य छे-अने ए प्रमाणे [' एवामेन '] इत्यादि वाक्य सुंघट थाय छे. ए कर्मी, भारे दुर्विशोध्य होवाथी अत्यंत वेदनानां कारण थाय छे अने ए ज हकीकतने जणाने छे के, ['संपगाढं ' इत्यादि.] [' नो महापज्जनसाणा भवंति ' ति] अर्थात् संप्रगाढ वेदनाने अनुभवे छे पण महापर्यवसानवाळा थता नथी। शं० — अहीं शासकार वेदना अने निर्जरानी हकीकत समाधान. कंहेंवा मांडी छे तेमां वचे ' महापर्यवसानवाळा थता नथी ' एवं अपस्तुत कहेवानुं शुं कारण ? समा० — ' महापर्यवसानवाळा थता नथी ' ए कथन काई अःस्तुत नथी. कारण के, जेम वेदना अने निर्जरानो परस्पर कार्य-कारण भाव छे तेम निर्जरा अने महापर्यवसाननो पण परस्पर कार्य कारण भाव छे माटे ज मूळमां कह्युं के, जेओं मोटी निर्जरावाळा नथी तेओ मोटा पर्यवसानवाळा एण नधी-ए रीते, ए कथन कांइ अप्रस्तुत नथी. बळी, अहीं जे कचुं छे के, 'जे मोटी वेदनावाळो होय ते मोटी निर्जरावाळो होय 'ए कथन कोइ एक विशिष्ट जीवनी अपेक्षाए जाणवुं, पण नैरियक वंगरे क्लिष्टकर्मवाळा जीवोनी अपेक्षाए न जाणवुं. ए ज रीते जे कहाँ छे के, ' जे महानिर्जरावाळो होय ते महावेदनावाळो होय ' ते

दुल्परिशाटनीय. उपनय माटे छे. [' गाढीकयाइं '] इत्यादि चार विशेषणीने मूकीने एम जणाव्युं छे के, ते नैरियकोनां पापकर्मी, दुष्परिशाटनीय — जेओनो सुभौत. नाश महामुशीबते थह रुके एवां-छे ['सुद्रोयतराए ' इत्यादि.] आ सुत्रद्वारा एम जणाव्युं छे के, ते वस्र, सुविशोध्य छे एटले सरलताथी थयाव दर. साफ थइ शके एवं छे. [' अहाबायराइं ' ति] स्थूलतर स्कंबरूप -- असार -- पुद्रलो, [' सिढिकीकयाइं ' ति] रूथ-मंद विपाकवाळां-कर्यो छे, दिथल-निष्टित- ['निट्ठिआई कडाई '] सत्ता रहित कर्यों छे, ['विपरिणामिआई 'ति] स्थितिवातथी अने रसघातथी एटले ए कर्मोनी स्थितिनो अने रसनो घात

अर्थात् ते मोटी वेदनावाळो होय पण अने न पण होय. ['अहिगराणें 'ति] जेना उपर छहारो, लोढाना घणथी लोढाने कूटे-टीपे-ते

अथवा टीपनार पुरुषना होंकारारूप शब्दवंडे, [' घोसेणं ' ति] अनुनादवंडे—तेनी ज पाछळ थता पडघारूप शब्दवंडे, [' परंपराघाएणं ' ति] प्रधानपणे निरंतरतावाळा धातवडे -- उपरा उपर घातवडे. ['अहानायरे 'ति] स्थूल प्रकारनां पुद्रलोने. [' एवामेव ' इत्यादि] वाक्य तो

विविधिणामित. करीने तेओने विपरिणाम वाळां कर्यों छे, अने तेवां थएलां ते कर्मो शीघ न विध्यस्त थाय छे, ए विशेषणीथी एम सूचव्युं के, तेओ (ते कर्मों). सुविशोध्य छे-जेनां कर्मो एवां सुविशोध्य छे तेवा महानुभावो जेटली तेटली पण वेदनाने भोगवता महानिर्जरावौळा अने महार्र्यवसानवाळा थाय छे-ए ज हकीकतने जणाववा [' जावइयं ' इत्यादि] सूत्र कहां छे.

जीवो अने करणो.

५. प०-कीतिविहे णं भंते ! करणे पवत्ते ?

५. प्र०—हे भगवन् ! करणों केटला प्रकारनां कहां छे ? ५. उ० — हे गौतम ! करणो चार प्रकारनां कह्यां छे, ते जेमके, मनकरण, वचनकरण, कायकरण, अने कर्मकरण.

५. उ०-गोयमा ! चउन्तिहे करणे पत्रते, तं जहा:-मणकरणे, यंइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे.

१. मूलच्छायाः —कतिबिधानि भगवन् करणानि प्रज्ञसानि ? गातम चतुर्विधानि करणानि प्रज्ञसानि, तद्यथाः -मनस्करणम्, वचस्करणम्, कायकरणम्, कर्मकरणम् :--भनु ०

६. प्र० -- णेर्ड्याणं भंते ! कातिविहे करणे पत्रते ?

६. उ०—गोयमा ! चउित्रहे पत्रते, तं जहाः:-मणकरगे, व्हकरणे, कायकरणे, कम्मकरणें; पंचिदियाणं सन्त्रेसिं चउित्रहे करणे पण्णत्ते. एगिदियाणं दुविहे:-कायकरणे य, कम्मकरणे य. विगलैदियाणं तिविहे:-वहकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे.

७. प्र०—नेरइया णं भंते ! किं करणओं असायं ,वेयणं वेयंति, अकरणओं असायं वेयणं वेदेंति ?

७. उ०-गोयमा ! नेरइया णं करणश्रो असायं वेयणं वेयति, नो अकरणश्रो असायं वेयणं वेयंति.

८. प०-से नेणहेणं ?

८. उ०—गोयमा! नेर्रायाणं चडिनहे करणे पत्रते, तं जहा:-मणकरणे, वयकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे; इचेएणं चडिनहेणं असुभेणं करणेणं नेरइया करणओ असायं वेयणं वेयंति, नो अकरणओ; से तेणहेणं.

९. प्र०--असुरकुमारा णं किं करणओ, अकरणओ !

९. उ०-गोयमा ! करणओ, नो अकरणओ.

१०. प्र०--से केणहेणं ?

१०. उ० — गोयमा ! असुर हुमाराणं च उन्विहे करणे पत्रते, तं जहाः-मणकरणे, वयकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे, इच्चेएणं सुभेणं करणेणं असुरकुमारा णं करणत्रो सायं वेयणं वेयंति, नो अकरणओ; एवं जाव-धणियकुमाराणं.

११. प्र०-पुढवीकाइयाणं एव।मेव पुच्छा १

११. उ०-- णवरं:-इचेएणं सुभा-ऽसुभेणं करणेणं पुढवि-काइया करणओ वेमायाए वेयणं वेयांति, नो अकरणओ. ्६. प्र०— हे भगवृन् ! नैरियकोने केटला प्रकारनां करणो कहां छे !

६. उ०—हे गौतम! नैरियकोने चार जातनां करणो कहां छे, ते जेमके, मनकरण, वचनकरण, कायकरण अने कर्मकरण. सर्व पंचेन्द्रिय जीवोने ए चारे जातनां करणो छे, एकेंद्रिय जीवोने वे जातनां करण छे ते जेमके, एक कायकरण अने बीजुं कर्मकरण; विकलेन्द्रियोने वचनकरण, कायकरण अने कर्मकरण ए त्रण करण होय छे.

७. प्र०—हे भगवन् ! हां नैरियको करणथी अशातावेदनाने वेदे छे के अकरणयी अशातावेदनाने वेदे छे !

७. उ०—हे गौतम! नैरियको करणधी अज्ञातावेदनाने वेदे छे पण अकरणधी-करण विना-अज्ञाता-दुःखरून-वेदनाने नथी अनुभवता.

८. प्र- (हे भगवन्!) ते शा हेतुथी ?

८. उ० — हे गौतम ! नैरियकोने चार प्रकारनं करण कहुं छे, ते जैमके, मनकरण, वचनकरण, कायकरण अने कर्मकरण, ए चार प्रकारना अञ्चम करणो होवाथी नैरियको करण द्वारा अशातावेदनाने अनुभवे छे पण करण विना अशातावेदनाने अनुभवे हो एम कहुं छे.

९. प्र०—(हे भगवन् !) शुं असुरकुमारो करणधी के अकरणधी शाता-सुखरूप-वेदनाने अनुभने छे !

९. उ०-हे गौतम ! करणधी, अकरणथी नहि.

१०. प्र०-(हे भगवन्!) ते शा हेतुथी ?

१०. उ०—हे गौतम ! असुरकुमारोने चार प्रकारनां करण कहां छे, ते जेमके, मनकरण, वचनकरण, कायकरण अने कर्मकरण; ए शुभ करणो होवाथी असुरकुमारो करण द्वारा सुखरूप वेदनाने अनुभवे छे पण करण विना अनुभवता नथी-ए प्रमाणे यावत् स्तनितकुमार सुधीना भुवनपतिमाटे समजवुं.

११. प्र०--पृथिवीकायिक जीवो माटे पण ए प्रमाणे ज प्रश्न करवो.

११. उ०—विशेष ए के-ए शुभाशुभ करण होवाथी पृथिवीकायिक जीवो करण द्वारा विमात्रा वडे-विविध प्रकारे अर्थात्- कदाच सुखरूप अने कदाच दु:खरूप वेदनाने अनुभवे छे पण करण विना अनुभवता नथी.

^{9.} मूलच्छायाः—नैरियकाणां भगवन्! कितिवधानि करणानि प्रज्ञप्तानि ? गातम! चतुनिधानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथाः—मनस्करणम्, वचस्करणम्, कायकरणम्, कर्मकरणम्, प्रवेन्द्रियाणां प्रवेदिश्वाणां प्रविधम् :—कायकरणं च, कर्मकरणं च. विकलेन्द्रियाणां प्रिविधम् :—कायकरणम्, कायकरणम्, कर्मकरणम्, नैरियकां भगवन्! किं करणतोऽसातां वेदनां वेदयन्ति, अकरणतोऽसातां वेदनां वेदयन्ति ? गातम! नैरियकाणां चतुर्विधानि करणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथाः—मनस्करणम्, वायकरणम्, कायकरणम्, कर्मकरणम्, इत्येतेन चतुर्विधनाऽश्चमेन करणेन नैरियकाणां चतुर्विधानि करणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथाः—मनस्करणम्, कायकरणम्, कर्मकरणम्, इत्येतेन चतुर्विधनाऽश्चमेन करणेन नैरियकाः करणतोऽसातां वेदनां वेदयन्ति, नोऽकरणतः, तत् तेनार्थेन ? गातम! असुरकुमाराणां चतुर्विधानि करणानि प्रज्ञपानि, तद्यथाः—मनस्करणम्, वचस्करणम्, कायकरणम्, कर्मकरणम्, इत्येतेन शुभेन करणेन असुरकुमाराः करणतः सातां वेदनां वेदयन्ति, नोऽकरणतः; एवं यावत्—स्तनितकुमाराणाम्, प्रथ्वीकायिकानाम् एवमेष धच्छा ? नवरम्:—इत्येतेन शुभाऽशुमेन करणेन प्रथिनी—कायकाः करणतो विमात्रया वेदनां वेदयन्ति, नोऽकरणतः—अनु०

— औरातियसरीरा सन्त्रे सुमाऽसुमेणं वेमायाए, देवा सुभेणं सायं.

— औदारिक शरीरवाळा सर्व जीवो शुभाशुभ करणद्वारा विभात्राए वेदनाने अनुभवे छे, देवो शुभ करणद्वारा सुखरूप वेदनाने अनुभवे छे.

- ३. अनन्तरं वेदना उत्ता, सा च करणतो भवतीति करणसूत्रम्:— कम्मकरणं शति कर्मविषयं करणं जीववीर्यः बन्धन—संक्रमादिनिमित्तभूतं कर्मकरणम्, 'वेमायाए शत्ति विविधमात्रया कदाचित् साताम्, कदाचिद् असाताम् इसर्थः.
- ३. हमणा वेदना संबंधे विचार कर्यों, ते वेदना करणथी थाय छे माटे हवे 'करण 'नो विचार करवा माटे आ सूत्र कहे छे:-['कम्म-कर्मकरण. करणं 'ति] कर्मविषयक करण एटले कर्मनां बंधन, संक्रमण वगेरेमां निमित्तभूत जीवनुं जे वीर्य ते. ['वेमायाए 'ति] विविध मात्रावहे-हिमात्रा. विचित्र प्रकारे-अर्थात् कोइ वखत सुखने अने कोइ वखत दुःखने.

वेदना अने निर्जरानी सहचरता.

१२. प्र० — जीवा णं भंते ! किं महावेदणा महानिज्ञरा, महावेदणा अप्पनिज्ञरा. अप्पवेदणा महानिज्ञरा, अप्पवेषणा अप्पनिज्ञरा ?

१२. उ०—गोयमा ! अत्थेगतिया जीवा महावेयणा महा-निज्ञरा, अत्थेगतिया जीवा महावेयणा अपनिज्ञरा, अत्थेगतिया जीवा अप्यवेदणा महानिज्ञरा, अत्थेगतिया जीवा अप्यवेयणा अप्यनिज्ञरा.

१३. प्र०-से केणहेणं ?

? रे. उ०—गोयमा ! पिडमापिडवन्नए अणगारे महावेयणे महाणिज्ञरे, छिट्टि-सत्तमासु पुढवीसु नेरइया महावेदणा अप्पनिज्ञरा, सेलोसि पाडिवन्नए अणगारे अप्पवेयणे महानिज्ञरे, अणुत्तरोतवाइया देवा अप्पवेयणा अप्पनिज्ञरा.

--सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति.

--महावेदणे य वत्थे कदम-खंजणकए य अहिकरणी, तणहत्थे य कवले करण-महावेदणा जीवा.

--सेवं मंते !, सेवं मंते ! ति.

१२. प्र०—हे भगवन् ! र्ग्यं जीवो महावेदनावाळा अने महानिर्जरावाळा छे ! महावेदनावाळा अने अल्पनिर्जरावाळा छे ! अल्पवेदनावाळा अने महानिर्जरावाळा छे ! के अल्पवेदनावाळा अने अल्पनिर्जरावाळा छे !

१२. उ०—हे गौतम! केटलक जीवो महावेदनावाळा अने महानिर्जरावाळा छे, केटलक जीवो महावेदनावाळा अने अल्पनिर्ज-रावाळा छे, केटलक जीवो अल्पवेदनावाळा अने महानिर्जरावाळा छे अने केटला जीवो अल्पवेदनावाळा अने अल्पनिर्जराव ळा छे.

१३. प्र०—(हे मगवन्!) ते शा हेतुथी ?

१३. उ०—हे गौतम! जेणे प्रतिमाने प्राप्त करी छे एवो अर्थात् प्रतिमाधारी साधु महावेदनावाळो अने महानिर्जरवाळो छे, छट्टी अने सातमी पृथिवीमां रहेनारा नैरियको मोटी वेदनावाळा अने अल्पनिर्जरावाळो छे, शैलेशी प्राप्त अनगार अल्पवेदनावाळो अने मोटी निर्जरावाळो छे अने अनुत्तरीपपातिक देवो अल्पवेदनावाळा बळा अने अल्पनिर्जरावाळा छे.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे.

—संप्रहगाथा कहे छे-महावेदना, कर्दमधी अने खंजनधी करेखं-रंगेखं-वस्त्र, अधिकरणी एरण, तृणनी पूळो, छोढानो गोळो, करण अने महावेदनावाळा जीबो.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ते ए प्रमाणे छ (एम कही यावत्-विहरे छे.)

अगवंत-अज्ञस्रहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते छहसये पढमो उदेतो सम्मत्तो.

४. ' महावेदणे ' इत्यादि. संप्रह्माथा गताथी..

भगवरसुधर्मखामिप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पष्टशते प्रथम् उद्देशके श्रीअभगदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

(महावेदणे '—इत्यादि.] अहीं जणावेली संग्रहनाथानो अर्थ स्पष्ट के.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजल्भारिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्ती । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्योः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

9. मूलच्छायाः — औदारिकशरीराः सर्वे ग्रुभाऽग्रुमेन विमान्नयाः देवाः शुमेन सातम्. २. जीवा भगवन् ! कि महावेदनाः – महानिर्जराः, महावेदनाः – अल्पवेदनाः – महानिर्जराः, अल्पवेदनाः – अल्पवेदनाः – अल्पवेदनाः – अल्पवेदनाः – अल्पवेदनाः – अल्पवेदनाः – अल्पवेदनाः । अल्पवेदनाः । अल्पवेदनाः अल्पवेदनाः अल्पवेदनाः । अल

संबद्धार्था.

शतक ६.-उदेशक २.

राजगृह,-प्रज्ञापनानी आहार-उदेशक,-विहार.-

---रौयगिहं नगरं जान-एवं वयासी:-आहारुईसओ जो पत्रवणाए सो सन्दों नेयन्त्रों.

-- सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति.

—राजगृहनगर, यावत् ए प्रमाणे बोल्या-आहार उदेशक, जे ' प्रज्ञापना ' सूत्रमां कहाो छे ते बधो अहि जाणवी.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, (एम कही यावत् विचरे छे.)

भंगवंत-अज्ञप्रदम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुत्ते छट्टसये बीओ उद्देशी सम्मत्तो.

आहारपदमां आवेला अधिकारोनो विषयवार अनुक्रम—
" सचिती-ऽऽहारद्वी-केवैति-कि वैं।ऽवि-सन्वती चेव,
किर्तिमां-सँव्वे खल्ज-परिणामे चेव बोद्धक्वे.
एिंदियसरीरें।री-लोमाहै।री-तहेव मणमैक्सो,
एतेसि तु पदाणं विभावणाः होति कातव्वाः"

आ आहार-परना ए प्रथम उद्देशकमां कुछ अग्यार अधिकारो-विषयो -विषे चर्चा करेली छे अने ते अग्यारेनो क्रमवार परिचय आ प्रमाणे छे:—

"१ ला अधिकारमां 'पृथिवी वगेरेना जीवो, जे पदार्थने खाय छे ते सचित्त छे, अचित्त छे के बन्ने जातनो छे ?' ए विषे विचार कर्यो छे. र जा अधिकारमां आहारना अभिलाषी जीवोनो हेवाल आप्यो छे. ३ जा अधिकारमां 'क्या जीवने केटला केटला बखते आहारनी जरुर पडे छे' ए विषेनी विगत आपेली छे. ४ था अधिकारमां ' आहार माटे कई कई चीजने वापरवामां आवे छे ?' ए विषेनी समजण आपेली छे. ५ मा अधिकारमां ' आहार करनारो प्राणी पोताना आखा शरीर द्वारा आहार करें छे के कोइ बीजी रीते ? ' इखादि प्रश्नोना सविस्तर खुलासा आपेला छे. ६ हा अधिकारमां खावा माटे लीधेलां पुदूलोनो केटलामी भाग खवाय छे १ ए प्रश्नने लगती चर्चा करेली छे. ७ मा अधिकारमां 'खावा माटे में। हामां मुकेलां बधां पुदूरो खवाय छे के केटलांक पड़ी पण जाय छे ? ए विषेनो खुलासो आपेलो छे. ८ मा अधिकारमां 'खापेली चीजोना केवा केवा परिणामी थाय छे ' ए इकीकत जणावेली छे. ९ मा अधि-कारमां ' जे जीवो एकेंद्रियादि जीवोनां शरीरोने खाय छे ' तेने समतु विवेचन छे. १० मा अधिकारमां लोमाहार-रोमाहार-ने लगती समजण सूचवेळी छे. ११ मा अधिकारमां मनद्वारा द्वसि पामता एवा मनोमक्षी देनोने लगती-खास समजना जेवी हकीकत जणावेली हे,"

१. मूलच्छायाः—राजगृहं नगरं यावत्-एवम् अवादीत्ः—आहारोहेशको यः प्रशापनार्यां स सर्वे। झातव्यः, तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः—अनु०

^{9.} आ अहीं साक्षी तरीके जणावेलो आहार-उद्देशक, प्रज्ञापना-सूत्रना २८ मा आहार-पदमां प्रथम आवेलो छे. एमां जीव मात्रना आहारने रुगती घणी विविध हकीकत सबिस्तर आपेली छे. ते अहीं विशेष उपयोगी होवाशी संक्षेपमां आ प्रमाणे जणावीए छीए:—

अनन्तरोद्देशके ये एते सवेदना जीवा उक्तास्त आहारका अपि भवन्ति—इति—आहारोद्देशकः, स च प्रज्ञापनायाम् इव दृश्यः, एवं चाऽसौः—'' नेरइया णं भंते ! किं सचित्ताहारा, अचित्ताहारा, मीसाहारा श गोयमा ! नो सचित्ताहारा, अचित्ताहारा, नो मीसाहारा '' इत्यादि.

भगवत्सुधर्मसामित्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे षष्ठशते दितीय उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविश्चितं विवरणं समाप्तम्.

नैरियको अने आहारः-

प्र०-- '' नेरइया णं भंते ! किं सचिताहारा ? अचिताहारा ? मीसाहारा ?

उ०-गोयमा ! नो सचित्ताहारा, अचित्ताहारा, नो मीसाहारा.

प्र- नेरइया णं भंते ! आहारही ?

उ॰---हंता, आहारट्टी.

प्र--नेरइयाणं भंते ! केवतिकालस्स आहारहे समुप्पज्ञति ?

उ॰—गोयमा ! नेरइयाणं दुविहे आहारे पण्णते, तं-जहा-धार्भोग्रिके व्वतिए य, अणाभोगनिव्वत्तिते य. तत्थ णं जे से अणाभोगनिव्वत्तिते – से णं अणुसमयंमविरहिते आहारहे समुष्पज्ञते, तत्थ णं जे से आमोगनिव्वतिते – से णं असंख्जिसमतिए – अंतोमुहत्तिते आहारहे समुष्पज्जति.

प्र-नेरइया णं भते ! किमाहार आहारिति !

उ०—गोयमा ! दञ्बतो अणंत्पदेशियाति, खेतओ असंखेळपदेशोगाइति, कालतो अण्णयरिट्ड्याति, भावंओ वण्णमतिति, गंधमंताई,
रसगंताई, फासमंताई—जाई भावतो वण्णमताई ताई × एगवण्णाई पि,
पंचवण्णाई पि—कालवण्णाई पि, सिक्तलाई पि—एगगुणकालाई पि,
दमगुणकालाई पि, अणंतगुणकालाई पि जाव—सुक्तिलाई, एवं गंधतोऽिव,
रसतोऽिव. जाई फासमंताई ताई नो एगफासाई, नो दुफासाई, नो
तिफासाई, चउफासाई जाव अष्ठफासाई—कवलडाई पि, जाव—लुक्लाई
पि—एगगुणकवलडाई पि, जाव—अणंतगुणकवलडाई पि—एवं अद्र
वि फासा भाणितव्वाः ताई पुट्ठाई आहारिते, नो अपुदलाई—जाव नियमा
छिईसि. ओसण्णं कारणं पहुच काल—नीलाति, दुव्भिगंधाति, तित्तरसकडुयाई, कवलड—गुध्य—सीय—लुक्लाई—तेसि पोराणे विण्णागे,
भंधगुणे, रसगुणे, फासगुणे विपरिणामहता—परिविदंसदत्ता अण्णे अपुटवे
वण्णमुणे, गंधगुणे, रसगुणे, फासगुणे उप्पाइता आयसरीरखेलोगाडे
पोगले सव्वप्पणयाए आहार आहारिते.

हे भगवन् ! नैरियको शुं सिचत्तनो आहार करे छे, अवित्तनो आहार करे छे के ए बन्ने जातनो आहार करे छे ?

हे गौतम । नैरियको सचित्त ो के सचित्त-अचितनो आहार करता नथी, किंतु तेओ मात्र अचित्तनो आहार करे छे.

हे भगवन् ! शुं नैरियको आहारना अर्थी छे ?

(है गीतम !) हा, तेओ आहारना अर्ज छे.

हे भगवन्। तेओने केटले वखते आहारनो अभिलाप उत्पन्न थाय छे ?

्रहे गीतमः किरियकोनी आहार वे प्रकारनो होय छे, ते जेम के; एक जाणता थती आहार अने बीजो अंजाणता थती आहार ते बैमां जे आहार—अंजाणता थाय छे ते जो, ते ओने निरंतर होय छे अर्थात् नैर्यिको अंजाणतां तो निरंतर खाधा ज करे छे अने जें आहार—जाणता थाय छे तेनो अभिलाष तेओने असंख्य समयवाळा अंग्येंहर्त पछी पेदा थाय छे अर्थात् एकवार ज्ञानपूर्वक—जाणता—आहार कर्या पछी बीजी बार तेनो अभिलाष नैरियकोने, असंख्य समयवाळ अंत्येंहर्त बीला पछी पेदा थाय छे.

हे भगवन् ! नैरियको केवां प्रकारनां पुद्रलोनो आहार करे छे ?

हे गीतम ! नैरियको जे जातनां शुद्रलोनो आहार करे छे, ते शुद्रलोनुं खरूप आ प्रमाण छे:-ए पुरुलो अनंत प्रदेश (परमाणु) वाटां होय छे, ए पुरलो एवां लांबी पहोटां होय छे के, एओए समावाने माटे आकाशना असंस्य प्रदेशी रीकेला होय छ अने ए पुद्रली एक समयथी मांडी गमे तेटला वखत मुधी स्थाथी रहेनारां होय छे-तथा वर्णवाळां, गंधवाळ!, रसवाळां अने स्पर्शवाळां होय छे-जेओ वर्णवाळां छ तेओ एक, बे, त्रण, चार के पांचे वर्णवाळां होय छे-काळां अने यावत्-घोळां होय छे—काळां पण एकगणां काळां, बनणां काळां, त्रगणां काळां यावत्—दसग्णां काळां अने छेवट काळामां काळां—अनंतगणां काळां होय छे यावत्—ए ज प्रकारे अने एटलां ज लीखां, पीळां, लाक अने धोळां पण होय छे. ए ज प्रकारे लंधे पण अने रसे पण पूर्वा ज होय छे —ए पुरलो एक ज स्वर्शनाळां, बे ज स्वर्शनाळां के भण ज स्वर्शनाळां नथी होतां-पण चार, शंच, छ, सात के आठ स्वर्शवाळां होय छे--ककेश, कोमळ, हिळवां, भारे, ठंडां, उनां, ॡखां अने चीकणां होय छै—-एवां पण ते एकींगणां कर्कश अने यावत् अनंतगणां कर्कश होय छ अने ए ज रीते एवां कोमळ दियोरे पण समजी लेवानां छे. जे पुदूरतीने तेओ (नैरयिको) खावामां वापरे छे ते बधां, खानार नैरयिकने अंडकेलां ज होय छे अर्थात् तेना आत्मप्रदेशोनी लगोलंग पहेलां होय छे-जे पुरुष्टे एवां न होय अने दूर पडेलां होय तेने, तेओ खाबामां वाएरता नथी. ए जातनां पुरलोने तेओ छए दिशामांथी मेळवी शके छे. घणे भारो तो नै। यिको, जे पुद्रलोने खाय छे ते बधां रंगे काळां अने नीलां, दुर्गेधवाळां, रसे तीखां अने कडवां, स्पर्शे कर्तता, भारे, टाढां अने लूखां होय छे — नैरिंगिको, तेओना एटले ते पुद्रलोमां रहेला—जूना वर्णगुणोनो, गंध-उणोनो, रसगुणोनो अने स्पर्शेशणोनो निपरिणाम करे छे अने परिविध्वंस करें छे तथा ते जुना गुणोने बदले बीजा अपूर्व वर्णगुणोने, गंधगुणोने, रसगुणोने अने स्पर्शगुणोने पेदा करे छे अने तेम करी तेओ-नैरियको-पोताना आखा शरीर द्वारा पोताना आत्मप्रदेशनी लगोलय रहेलां ते पुरलोनो भाइार करे छे.

आगळना उद्देशकमां वेदनावाळा जीवो कथा छे, ते जीवो आहार करनाय पण होय माटे आ बीजा आहार-उद्देशकने आहारना आहार. विवेचन माटे जणाव्यो छे, ते 'प्रजापना 'ना आहार-उदेशकनी पेठे जाणवी. तेमां ते आ प्रमाणे छे: —"हे भगवन् ! शुं नैरियको सचित्तना प्रशादनानी आहार आहारी छे, अचित्तना आहारी छे के मिश्रना-ए बन्नेना-आहारी छे ? हे गौतम ! नरियको सचितना आहारी नथी, मिश्रआहारी नथी, उदेशक. पण अचित्तना आहारी छे " इत्यादि.

प्र- नेरइया णं भंते ! सब्दओ आहारेंति ? सब्दओ परिणामंति, सब्दओ जसहंति, सब्दओ नीसपंति; अभिक्खणं आहारेंति, अभिक्खणं परिणामंति, अभिवखणं ऊससंति, अभिवखणं नीससंति, आह्च आहारैंति, आह्च परिणामेंति, आह्च ऊर्स्सते, आहच नीससंति ?

उ॰-इंता, गोयमा ! णेरइया सन्वती आहारेंति, एवं तं चेव जाव आहम नीससंति.

प्र०-नेरइया ण भंते ! जे पोरगले आहारताए मिण्हंति, ते णं तेसिं पेरगलाणं, सेयालंसि कतिभागं अ हारेंति, कतिभागं आसाएंति ?

उ०-गोयमा ! असंखेजितिभागं आहारेति, अणंतभागं अस्सापंति.

प्रo-नेरइया णं भंते ! जे पोम्पके आहारताते गिण्हंति, ते किं सब्बे भाहारें ते, नो सब्वे आहारेंति ?

उ---गोयमा । ते सब्वे अपरिसेसए आहारेंति.

प्र०--नेरइया णं भंते ! जे पीरमला आहारताए गिण्हंति, ते णं तेसिं पोश्यला कीसत्ताए सुन्नो भुज्जो परिणामेंति ?

ड॰—गोयमा ! सोतिंदियत्ताते जाब फासिंदियताते अणिट्ठताते, अकंतत्ताए, अमणुण्यताए × × भुज्जो भुज्जो परिणामंति.

असुरकुमारो विगेरे देवो अने आहार:----एवं असुरकुमारा जाव वेमाणिया.

प्र०-असुरकुमारा णं भेते । आहारट्टी १

उ॰-- इंता, आहा द्वी,

--एवं जहा नेरइयाणं तहा असुरकुमाराण वि भागितव्वं जाव-तेसि भुजो भुजो परिणमंति. तत्य यं जे से आमोगनिव्यत्तिते से णं जहणोपं चउर स्मत्तस्य, उहोतेणं सातिरेगवाससहस्यस्य आहारद्वे समुप्रकाद, ओ-सण्णं कारणं पडुन वण्णतो हालिइ-सुक्तिलाति, गंधतो सुविभगंधाति, रसती अंबिल-महुराति, फासओ मजय-छहुय-निद्धु-ण्हाति. तेसिं पोराणे बण्णगुणे जाद फार्निदियत्ताते जाद × इच्छियत्ताते ×× परिणमंति, सेसं जहा नेरइ-याणं. एवं जाव थणियकुमाराणं. नवरं-आभोमनिव्यतिते उक्कोसेणं दिवसपुहु वस्त आह है समु । जाति. वाणमंतरा जहा नामकुमारा. एवं जोतिसिया वि, नवरं -आभोवनिव्यक्तिते जह० दिवसपुहत्तस्स, उ॰ दिवसपुहुत्तस्स आहारहे समुष्यज्ञाइ. एवं वेमाणिया वि. नवरं-आभोगनिव्यक्तिए जद्द० दिवसपुहुत्तस्य, उ० तेरीसाए वाससहस्याणं आहारदठे समुणजति. सेसं जहा असु कुमाराणं जाव एतोसे मुक्ती मुखी परिणमंति.

हे भगवन् ! छु नैरयिको सर्वतः—पोताना आखा शरीर द्वारा—आहार करे छे ! आला शरीर द्वारा परिणमाने छे, ए ज रीते सर्वतः श्वास-निश्वास छे छे, वार्रवार आहार करे छे, वार्रवार परिणमावे छे, वार्रवार श्वास निश्वात हे हे, आहल-कदाच-आहार है है, कदाच परिणमाने छ अने कदाच श्वास निश्वास है छे ?

हे गौतम ! हा, नैरियको सर्वतः आहार छे छे-ए प्रमाणे ते बर्यु कदेवुं यानत्-आहत्य-कदाच-श्वास निश्वास हे छे.

हे भगवन् ! नैरियको जे पुरलोने आहारपणे ले छे (आहारपणे लीधा पर्छः) ते पुद्रलोना क़ेटला भागनो तेओ आदार करे छे अने केटला भा-गनो मात्र अःखाद छे छे ?

हे गातम । ए पुत्रलोना अअंख्येय भागनी तेओ आहार करे छे अने एना अनंत भागनो मात्र आस्वाद छे छे.

हे भगवन् ! नैरियको जे पुत्रलोने आहारपणे हे छे — हां ते बर्धानी आहार करे छ के ते बधांनी आहार नथी करता ?

हे गौतम ! तेओ ते वधांय नो आहार करी जाय छे — एकेने वाकी राखता नथी.

हे भगवन् ! नैरियको जे पुद्रलोने आहारपणे ले छे-ते पुद्रलोने, तेओ क्या क्या प्रकारे वार्रवार परिणमावे छे?

हे गातम ! तेओ, ते पुदूलोने श्रोत्रइंदियपणे यावत्—स्पर्शइंदियपणे अनिष्ठवणे, अकांतवणे अने अमनोक्षवणे—वारंवार परिणमावे छे.

-ए प्रमाणे असुरकुमारोथी मांडी यावत्-वैमानिको सुधी पण जाणी सेवं.

हे भगवन्! असुरकुमारी आहारना अर्थी छे?

हा, तेओ आहारना अधी छे.

—ए प्रमाणे जैस नैरियको विषे कहुं छे तेस असुरकुमारो संबंधे पण जाण इं यावत्-तेओए खाधेलां पुद्गा वारंवार परिणाम पामे छे तेओनी ने आहार आभोगनिर्वेतित (इच्छापूरेक थतो) रेय छ तेनो अभिलाप तेओने, एकवार आहार क्या पछो ओछामां ओछा पूरा एक दिवस (६० घडी) पछी थाय छ अने वधारेमां वधारे एक इजार वरस उपरांत पण केटरो ह काळ वीत्या पछी थाय छे. विशेषे करीने तेओना आहारमां आवतां पुद्रलो वर्णे पीळां अने घोळां ोय छे, गंधे सुगंधी होय छे, रसे खाटां अने मधुरां होय छे अने स्वर्शे कीनळ, हरूवां, चीक्षणां अने उष्ण होय छे-ते पुद्रलोना जुना वर्णगुणोनो ध्वंस करीने यावत्—तेओ लीघेल आहारने स्पर्श्इंदियपणे यावत्-इच्छितपणे परिणमाने छे. बाकी बधुं नैरियकोनी े पेठे जाणतुं. ए प्रभाणे यावत्-स्तनितकुमारो सुनी जाणतुं. विशेष ए के, हैओने अभोगनिवैतित अहारनो अभेळाप, एकवार अम्या पछी वधारेमां वधारे ने दिवसथी नव दिवस जेटली काळ वीला पछी एटले ए पछीना समये उपजे छे. जेम नागकुमारी विषे कहां तेम नानव्यंतरी विषे पण समजडुं अने ए रीते ज्योतिषिको संबंधे पण जाणबुं, विशेष ए के, तेओने आभोगनिर्वर्तित आहारनो अभिलाव, ओछामां ओछो अने वधारेमां वधारे बे दिवसथी नव दिवस जेटलो काळ बीला पछी थाय छे. ए ज प्रमाणे वैमानिको विषेपण समजर्ड. विशेष ए के, तेओने आभोगनिवीर्तित आहारनो अभिलाप, एकवार जम्या पछी ओछामां ओछो बेबी नव दिवस पछी अने वधारेमां यधारे तेत्रीश इजार वर्ष पछी (तेओने खावानी वृत्ति) थाय छे. बाकी वर्ध असुरकुमारोनी पेठे जाणतुं यावत्–ते खाधेलो आदार वारंवार परिणाम पामे छे.

(आ इकीकतने डंकी करवा माटे ह्वे एक कोठो आपवामां आवे छे-जे सामेना प्राकृत पाठनो शब्दशः असुवाद छे):—

सोहम्मे आभोगनिन्वतिते ज० दिवसपुहत्तस्स, उक्को० दोण्हं वाससहस्माणं आहारहे स०. ईसाणे ज॰ दिवसपु॰ सातिरेगस्स, उ० सातिरेगं दोण्हं वाससहस्ताणं. सणंकुमाराणं ज० दोण्हं वाससहस्ताणं, उ० सत्तप्टं वाससदृस्याणं. माहिन्दे ज० दोण्डं वाससदृस्याणं सातिरेगाणं, उ० सत्तर्वं वाससहस्साणं सातिरेगाणं. बंभलीए ज० सत्तर्वं वाससह-ह्याणं, उ० दसण्हं वाससहरू. लंतए ज० दसण्हं वाससहरू, उ० चउरसण्हं वाससह०. महामुक्ते ज० चडदसण्हं वासस०, उ० सत्तरसण्हं बासस०. सहस्सारे ज॰ सत्तरसण्हं वासस०, उ० अर्ठारसण्डं वाससह०. आणए ज॰ अद्वारसण्हं वासस॰, उ॰ एमूणवीसाए वाससहस्साणं. पाणए ज॰ एगूणवीसाए वाससहस्साणं, उ० वीसाए वाससहर. आरणे ज॰ वीसाए वाससहर, उकोर एक बीसाए चासपहर. अचुए जर एक बीसाए बाबीसाए बाससहर हिड्डिमहिट्ठिमगे-उक्को∘ वाससह॰, विज्ञागाणं ज॰ बाबीपाए, उ० तेवीपाए. (एवं सन्दरथ सहस्साणि भाणियव्वाणि x) हिद्दिरममज्ज्ञिमगाणं ज० तेवीसाए, उ० चउत्रीसाए. हैंदिमउवरिमाणं ज॰ चउर्कसाए, उ० पणवीसाए. मज्झिमहेद्रिमागं ज० पणावीसाए, उ० छव्दीसाए. मज्झिन-मज्झिमाणं ज० छव्दीसाए, उ० सताबीसाए. मज्झिम-उविमाणं ४० सत्ताबीसाए, उ० अद्वाबीसाए ंखबरिमहेद्दिमाण् ज॰ अद्रावीसाए, उ॰ एगूणतीसाए. उत्र**रम-**मज्झिमाण् जि एगूणतीसाए, उ॰ तीसाए. उनरिम-उनरिमाणं जि तीसाए, उ० ्रंपमतीसाएः विजय-वेजयत्त-जयंत-अपराजियाणं ज० एगतीसाए, उ० तेत्तीसाए. स्टबहुगतिद्धदेवाणं अजहुण्यमणुक्रोसेणं तेत्तीसाए वाससहस्साण आहारहे समुप्पज्ञति.

	<u></u>		
₹तर्गः	आभोगनिर्वर्तित आहार नो ओछामां आंटो समयः	आभोगनिर्वतित आ हारनो वधारेमां वधारे समयः	
सौधर्म.	बेबी नव दिवस पछी.	बे हजार वर्ष पछी.	
ईशान.	वेथी नव दिवस करतां वधारे समय पछी.	बे हजार वर्ष करतां वधारे समय पछी.	
सनःकुमार.	बे हजार वर्ष ५छी.	सात हजार वर्ष पछी.	
माहेंद्र-	बे हजार वर्ष करतां व धारे बखत पछी.	सात इजार वर्ष करतां वधारे वखत पछी.	
व्रह्मलोक.	सात हजार वर्ष पछी.	दश हजार वर्ष पछी.	
लांतक.	दश इजार वर्ष पछी.	नेवाद हजार वर्ष पछी.	
महाशुक.	चाद हजार वर्ष पछी.	सत्तर हजार वर्ष पछी.	
सहस्रार.	सत्तर हजार वर्ष पछी.	अढार हजार वर्ष पछी.	
आनत.	अढार हजार वर्ष पछी.	ओगणीश हजार वर्ष पछी.	
्राणत.	ओगणीश हजारवर्ष पछी.	वीश हजार पर्ष पछी.	
आरण्य.	वीश हजार वर्ष पछी.	एकवीश हजार वर्षे पछी.	
अच्युत .	एकवीश हजार वर्ष पछी.	वाबीश हजार वर्ष पछी.	
तह्न नीचेना प्रवेयक.	बावीश हजार वर्ष पछी.	त्रेवीश हजार वर्ष पर्छा.	
नीचेना अने वचला प्रैवेयक.	त्रेवीश हजार वर्ष पछी.	चोवीश हजार वर्षे पछी.	
नीचेना अने उपरना भैनेयक	चोवीश हजार वर्ष पछी.	पच्चीश हजार वर्षे पछी.	
वचला अने नीचेना भैवेसक.	पच्चीश हजार वर्ष पछी.	छम्बीस हजार वर्ष पछी.	
वचला वचला घैवेयक.	छव्वीश हजार वर्ष पछी.	सत्ताबीश हजार वर्षे पछी.	
वचला अने उपरना प्रैवेयक.	सत्तावीश हजार वर्ष प छी ।	अख्यानीश हजार वर्षे पछीः	

उपरना अने नीचेना प्रवेयक.	अट्यावीश हजार वर्ष पछी.	ओयणत्रीश हजार वर्ष पछी.
उारमा अने वचला प्रवेयक.	ओगणत्रीश हजार वर्ष पछी.	त्रीश हजार वर्ष पछी.
उपर उपरना भैवेयक.	त्रीश हजार वर्ष पछी.	एकत्रीश हजार वर्ष पछी-
विजय, वैजयंत, जयंत अने अपराजित.	एकत्रीश हजार वर्षे पछी.	े. तेत्रीश्च इजार वर्ष पछीः
सर्वार्थसिद.	तेत्रीश हजार वर्ष पछी	तंत्रीश हजार वर्ष पछी.

(एकवार जम्या पछी स्वर्गमां रहेनाराओने ओछामां भोछे जे दखी आहारनो अभिलाष थाय छ अने वधारेमां वधारे जे वखते (जेटलो बसत वीखा पछी) आहारनो अभिलाय थाय छे ते उपरि-निर्दिष्ट कोटा द्वारा सुस्पष्ट जणाइ शके तेम छे.)

पृथ्वी, पाणी, अप्ति, वायु, वनस्पति, कीट, पतंग, पशु विगेरे तथा मनुष्य अने आहारः-

—ओरालियसरीरा जाव मण्सा सचित्ताहारा वि, अचित्ताहारा वि, मीसा-हारा वि.

प्र०-पुढवीकाइया ण भंते ! आहारही ?

उ०—हंता, आहारट्टी.

प्र०-पुढवीकाइयाणं भंते ! केवतिकालस्स आहारहे समुज्यकति ?

उ॰--गोयमा ! अणुसमयं अविरहिते आहारद्ठे समुष्पज्ञह.

प्र०-पुढविकाइया णं भंते ! कि आहारं आहारेंति !

उ०--- एवं जहा नेरइयाणं जाव---

प्र- ताई कतिदिसे आहारेंति ?

उ०-गोयमा ! विव्वाघातेण छि६सि, वाधायं पहुच सिय तिदिसिं, सिय च उदिसिं, सिय पंचिदसिं. नवरं-ओसन्नकारणं न भण्णति. वण्णओ काल-नील-लोहित-हालिइ-सुक्किष्ठाति, गंधतो सुन्मिगंध-दुन्भिगंधाति, रसतो तित्तरस-कडुयरस--कसायरस-अंबिल-महुराई, फासतो कवखडफास-मडय-गुरुय-लहुय-सीत-उण्ह-णिद्ध-छुक्खाइं-तेसि पाराणे वण्णगुणे-से तेओ जे अणुओने खावा माटे सेळवे छे ते, वर्णे काळां, नीलां, लाल, पीळां जहा नेरइयाणं जाव-आहच नीससंति.

प्र- पुढविकाइया णं भंते ! जे पोश्मले आहारताते गिण्हंति, तेसि भंते! पोरगलाणं सेयालंसि कतिभागं आहारेति, कतिभागं आसाएति ? उ०-गोयमा! असंखेजइभागं आहारेति, अर्णतभागं आसाएंति.

प्र--पुढविकाइया णं भंते! जे पोरगले आहारताते गिण्हति ते कि ्रमृब्दे आहारेंति, नो सब्दे आहारेंति ?

उ०-जहा नेरइया तहेव.

प्र- पुढविकाइया णं भंते ! जे पे। गले आहारताते गिण्हंति ते णं वेसि पुग्गला कीसत्ताए भुजो भुजो परिणमंति ?

उ॰-गोयमा ! फासिंदियवेमायताते भुज्जो भुज्जो परिणमंति, एवं भाव--वणक्षकाह्या.

-- आदारिक शरीरने घारण करनारा प्राणिओ यावत्-मनुष्यो ते बधा स्चित्त, अचित्त अने मिश्र आहारवाळा पण छे.

हे भगवन् ! पृथ्वीकायिको आहारना अर्थी छे ?

हा, तेओ आहारना अर्थी छे.

हे भगवन् । प्रथिवीकायिकोने केटलो केटलो वस्रत गया पछी आहारनो भभिलाष थाय छे ?

हे गीतम 1 तेओने निरंतर ज आहारनो अभिलाय थया करे छे.

हे भगवन् ! ध्थिवीकायिको शुं आहारने आहरे छे ?

(हे गातम!) जेम नैरियको संबंधे कह्यु तेम ए पृथिवीकायिको विधे ंपण समजी लेवानुं छे.

(है भगवन् !) तेओ ते आहारनां अणुओने कड् कड् दिशामांथी लड्ने आहरे छे ?

है गातम! जो कांइ व्यवधान जेइंन होय तो तेओ, छ ए दिशामांथी आहारनां अणुओ मेळवे छे अने जो कांइ व्यवधान जेवुं होय तो कदाच त्रण दिशामांथी, कदाच चार दिशामांधी अने कदाच पांच दिशामांधी आहारनां अणुओ मेळवे छे. विशेष ए के, अहीं 'घणुं करीने' एम न कहेतुं. अने घोळां होय छे, गंधे सारां अने नरसां होय छे, रसे तीखां, कडवां, कषायलां, खाटां अने मधुर होय हो, स्पर्शे खडवचडां, सुवाळां, भारे, हळवां, ठंडां, उनां, चीकणां अने लखां होय छे-तेओ, ते अणुओना जूना गुणोने फेरवी नाखे छे-इखादि बधी हकीकत नैरियकोनी पेठे समजी लैवानी छे यावत् कदाच निश्वास ले छे.

हे भगवन् । ए प्रथिवीकायिको, जे अणुओने आहाररूपे प्रहे छे तैमांना केटला भागने तेओ खाय छे केटला भागने तेओ चाले छे ?

हे गीतम ! तेमांना असंख्येय भागने तेओ खाय छे अने अनंत भागने तेओ चाखे छे.

हे भगवन् ! तेओ जे अणुओने आहाररूपे है छे तो हुं ते बधःने तेओ खाइ जाय छे ? के बधांने नथी खाइ जता ?

(हे गौतम!) जेस नैरियको विषे कणुं तेम आ दृथिवीकाथिको विषे . पण समजी लेवानुं छे.

हे भगवन्। ए पथिवीकायिको, आहाररूपे छिषेछां ते अणुओने क्या क्या रूपे वारंबार परिणमावे छे ?

हे गाँतम ! तेओ, ते आहरेलां अणुओने स्पर्श-इंद्रियना अनेक प्रकारना आकारमां परिणमावे छे. ए प्रमाणे यावत्-वनस्पतिकायिको विषे पण समजवानुं छे.

प्र०-बेइंदिया णं भेते ! आहारट्ठी ?

ड०-इंता, आहारद्धी.

प्र• — बेइंदियाणं भंते ! केवतिकालस्स आहारट्ठे समुष्पज्ञाति ?

उ॰—जहा नेरइयाणं, नवरं—तत्थ णं जे से आभोगनिव्वत्तिते से णं असंख्जिसमद्दए अंतोमुहुत्तिए नेमायाए आहारद्देठ समुप्पजनति. सेसं जहा पुढिनिकाइयाणं जान-आहच नीससंति. नवरं-नियमा छिद्सिं

प्रo — बेइंदिया णं भंते! जे पोरगले आहारताते गिण्हंति, ते णं तेसिं पुरगलाणं सियालंसि कतिभागं आहारेति ? कतिभागं आसाएंति ?

उ॰-एवं जहा नेरइयाणं.

प्रo—बेइंदियाणं सते! जे पोग्यला आहारताए गिण्हंति ते कि सब्वे आहारेंति, णो सब्वे आहारेंति ?

उ॰—गोयमा! बेइंदियाणं दुविधे आहारे सम्मत्ते, तं जहाः— सोमाहारे य, पक्खेबाहारे य. जे पोग्गले लोमाहारताए पिण्हंति, ते सन्त्रे अपिसेसे आहारेति, जे पोग्गले पक्खेबाहारताए गेण्हंति, तेसि असंखेज-तिभागं आहारेति, अणेगाइ च ण भागसहस्याइ अफासाइज्जमाणाणं अणासाइज्जमाणाणं विद्धंसमागच्छंति. ×××

प्रo-बेइंदियाणं भंते ! जे पोरगला आहारसाते पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! जिडिमंदियत्ताए, फासिंदियव्रेमायताए तेसि भुक्को भुक्को परिणमंति. एवं जाव-चडरिंदियाः नवरं-णेगाई च णं भागसहस्साई सणाघाइज्ञमाणाई, अणापाइज्जमाणाई, अफासाइज्ञमाणाई विदंसमान्यन्छति. × × ×

प्र- तेइंदियाणं भंते ! जे पोरंगला पुच्छा ?

जि॰—गोयमा । ते णं पोम्पला चाणिदिय-जि॰भिदिय-फासिदियवे॰ मायत्ताए तेसि भुजो भुज्जो परिणमंतिः

—चउरिंदियाणं चित्रखंदिय-घाणिदिय-जिन्मिरिय-फासिंदियनेमायसाए तेसि भुज्जो भुज्जो भरणमंति. सेसं जहा तेईदियाणं.

—पंचिदियतिरिक्खजोणिया जहा तेईदिया. नवरं —तता णं जे से आभीयनिष्वित्तिते से णं जहण्णेणं अंगेनुहुत्तस्य, उक्कोर्सणं छह्नमत्तस्य आहारद्वे संमुप्पज्जति.

प्र•-पंचिदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! ने पोग्गला आहारसाए० पुच्छा ?

उ०-गोयमा ! सोतिदिय० x (जाव) फासिदियचेमायत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति.

-- मण्सा एवं चेव, नवरं-आभोगनिव्यक्तिते जह० अंतोमुहुत्तस्स, उक्को० अहमभत्तस्स आहारहे समुख्यज्ञतिः हे भगवन् ! बेरंद्रियवाळा जीवो आहारना अथा छे ?

हा, तेओ आहारना अर्थी छे.

हे भगवन् ! ए वेइंदियवाळा जीवोने केटलो केटलो बखत गया पछी आहारनो अभिलाप थाय छे ?

—ए विषे तो जेम नैरियकोने कह्युं तेम समजवानुं छे. विशेष ए के, ते वे इंदियवश्राओनो जे आहार आभो निर्वितित छे ने ने अभिकाप तेओने असंख्यसमयवाळा अंतर्मुह्रों विविध रीते थया करे छे. बाकी बधुं पृथिवी-काश्रिकोनी पेठे समजवानुं छे यावत्-तेओ (बेइंदियो) आहस्य निश्वास छे छे. विशेष ए के, आ बेइंदियवाळा जीवो, छ ए दिशामांथी अणुओने मेळवी शके छे.

हे भगवन् ! वे इंद्रेयवाळा जीवो जे अणुओने आहाररूपे छे छे तेओनो केटलो भाग तेओ खाय छे अने केटलो भाग तेओ चाखे छे ?

—ए संबंधमां जेम नैरियको विषे कह्युं तेम वेईदियो विषे पण सम-जवातुं छे.

हे भगवन्! वेइंदिय जीवो, जे अणुओने आहाररूपे मेळवे छे तो छुं ते वधाने तेशो खाइ जाय छे, के वधाने नथी खाइ जता ?

है गीतम ! वेइंदियनीबोनो आहार वे प्रकारनी जणावे छे, ते जैस के रोमाहार अने प्रक्षेपाहार—(रोमवडे छेवातो आहार ते रोमाहार अने कोळिये कोळिये छेवानो आहार ते प्रक्षेपाहार) जे अणुओने रोमाहार रूपे तेओ मेळवे छे ते वयांने तेओ खाइ जाय छे अने जे अणुओ प्रक्षेपाहार रूपे मेळवेळां होय छे तेमांनो असंख्यमान खवाय छे अने घणा हजारो मानो स्पर्शाया विना ज अने आखादाया विना ज नाश पामी जाय छे.

हे भगवन्! आहाररूपे लीधेलां अणुओने ए वे इंद्रियो क्या क्या प्रकारे परिणमावे छे ?

हे गौतम! तेओ बे-इंद्रियो-खाधेकां अणुओने जीमपणे अने अनेक रीते स्पर्श दियपणे बारंबार परिणमाये छे. ए प्रमाणे यावत्-चार इंद्रियबाळा जीवो सुधी समजी केवानुं छे. विशेष ए के, तेओना-चा देद्रियबाळाना-खायामां आवतां अणुशीना घणा हजार भागो संघाया विना, चखाया विना अने स्पर्शाया विना ज नारा पानी जाय छे.

है भगवन् । त्रण शंदियवाळा जीवो, जे अणुओने खावामां हे छे-तेनो परिणाम केवो थाय छे ?

हे गैतिम! तेओने ए खापेलां पुहलो प्राणशंदियपणे, जीभपणे अने अनेक रीते स्पर्श-शंदेयपणे वारंवार परिणमे छे.

— चार इंदियबाळ:ने ते खाधेलां अणुओ अंखपणे, घ्राणपणे, जीमपणे अने अनेक प्रकारे स्पर्श इंदियपणे नारंबार परिणमे छे-ए विषे बाकी बधुं त्रण इंदियदाळा जीवोनी पेठे समजवं.

— जेम त्रण शहरववाळा जीनो दिषे कहां छे तेम पंचेदियतिर्यचयो-निको दिषे पण समजी छेतानुं छे. विशेष एं के, तेओनो जे आमोगनिर्वितित साहार होय छे, एनो अभिटाप तेओने ओछामां ओछ अंतर्महूर्त नीत्या पछी थाय छे अने वधारेमां वधारे वे दिवस पछी थाय छे अर्थात् एक बार खाधा पछी ओछामां ओछुं एक अंतर्महूर्त गया पछी अने वधारेमां वधारे वे दिवस वीत्या पछी ए पंचेदिय तिर्थेचोने खावानी यृत्ति थाय छे.

हे भगवन् ! जे अणुओने ए पैचेंद्रिय तिर्यंचीए खाधां होय छे तेनो जीं परिणाम थाय छ ?

हे गौतम ! तेओने, ते अणुओ श्रोत्रपणे अने यावत् अनेक रीते स्पर्श-इंदियपणे (अर्थात् पांचे इंदियपणे) वारंवार परिणमे छे.

— मनुष्यो विषे पण ए ज प्रमाणे जाणवं. विशेष ए के, तेओने, (मनुष्योने) आभोगनिवंदित आहारनो अभिरुष ओछामां ओछुं एक अंतर्भुहृतं गया पछी अने वधारेमां वधारे त्रण दिवस पछी यांय छे अधीत् एक वार जम्या पछी मनुष्योने ओछामां ओछुं एक अंतर्भुहृतं पछी अने वधारेमां वधारे त्रण वित्र पंतर्भुहृतं पछी अने वधारेमां वधारे त्रण दिवस पछी खावानी वृत्ति थाय छे.

नरविक विगेरे अने एकेंद्रियादिनां शरीरो.

प्रo-नेरइया ण भते ! कि एगिदियसरीराई आहारेंति जाव पंेंदिय-सरीराई आहारेंति ?

उ०—गोयमा ! पुन्वभावपण्णवणं पहुच एगिदियसरीराई पि आहारैति जाव पंचिदिय . पहुष्पण्णभावपण्णवणं पहुच नियमा पंचिदियसरीराति भा . एवं जाव थणियकुमारा.

प्र॰--पुढविकाइयाणं पुच्छा ?

उ०-गोयमा ! पुन्तभावपण्यवणं पहुच एवं चेव, पहुष्यण्यभावपण्य-वणं पहुच नियमा एगिदियसरीराति. वेहदिया पुन्तभावपण्यवणं पहुच एवं चेव. पहुष्पण्यभावपण्यवणं प० नियमा वेहदियाणं सरीराति आ॰. एवं जाव चहिरियां ताव पुन्तभावपण्यवणं पहुच एवं. पहुष्पण्यभाव-पण्यवणं पहुच नियमा जस्स जित हेदियाई-तहेदियाहं सरीराहं आहारेति. सेसं जहा नेरह्या जाव वेमाणिया. हे भगवन् ! छुं नैरियको एकर्रहियवाळा जीवोनां शरीरो खाय छे यावत-गांवरहियवाळा जीवोनां शरीरो खाय छे ?

हे ौतम ! पूर्वभावप्रझापनानी अधिकाए अर्थात् पूर्वभवनी अपेक्षाए तेओ-नैरियको, एकंदियवाळा जीवोनां शरीरोने पण खाय छे अने यावत्—पांचदंदियवाळा जीवोनां शरीरोने पण खाय छे. बळी, वर्तमान भावनी अपेक्षाए एउछे नैरियकदशानी अपेक्षाए तो तेओ पांचर्रदियवाळा जीवोनां शरीरो ज खाय छे. ए प्रमाणे यावत्—स्तनितकुमारो सुधी समजी छेवानुं छे.

— पृथिवीकायिको संबंधे पण पूर्वेनो प्रदन करवानो छे.

हे गीतम! प्रिथिनिकायिकोनी पूर्व दशानी अपेक्षाए तो तेओ नैरियकोनी पेटे समजवाना छे अने वर्तमान दशानी अपेक्षाए तो तेओ एकंदियवाळा जीवोगं शरीरोने ज खाग छे ए प्रमाणे यावत चारंदियवाळा जीवो सुधी समजवातुं छे अपात बे, त्रण अने चार दियवाळा जीवो, पूर्वदशानी अपेक्षाए नरियकोनी पेटे समजवाना छे अने वर्तमान दशानी अपेक्षाए वरियकोनी पेटे समजवाना छे अने वर्तमान दशानी अपेक्षाए वे इन्द्रियवाळा जीवोनं शरीरोने खाय छे, त्रण देदियवाळा जीवोनं शरीरोने खाय छे अने चार देदियवाळा जीवो, चार देदियवाळा जीवोनां शरीरोने खाय छे—जे जीव जेटली देदियवाळा जीवो, चार देदियवाळा जीवोनां शरीरोने खाय छे—जे जीव जेटली देदियोनो धणी होय, ते, तेटली देदियवाळा जीवोनां शरीरोने खाय छे—वाकी वधुं नैरियकोनी पेटे समजवानुं छे अने ते प्रमाणे यावत्—वैमानिको सुधी जाणवानुं छे.

रोमाहार, प्रक्षेपाहार, ओजआहार अने मन-आहार:---

प्र० — नेरइया ण भंते । किं लोमाहारा, पक्खेबाहारा ? ड॰ — गोयमा ! लोमाहारा, नो पक्खेबाहारा. एवं एगिदिया, सन्वदेवा च भाणितन्वा. वेहंदिया जाव मणुपा लोमाहारा वि, पक्खेबाहारा वि.

प्र--नेरइया ण भंते ! किं ओयाहारा, मणभक्खी ?

उ०—गोयमा! ओयाहारा, णो मण्यवसी. एवं सब्वे ओरालियसरीरा वि. देवा सब्वे वि जान वेंमाणिया ओयाहारा वि, मण्यवित वि. तथा णं जे ते मण्यवित देवा, तेसि णं इच्छामणे समुप्पज्जति—' इच्छामो णं मण्यवस्यणं करित्तए, तए णं तेहिं देवेहिं एवं मणसीकते समाणे खिप्पामेव जे पोग्यला इहा, कंता जाव मणामा ते, तेसि भवखणताए परिणमंति. से जहा नाम ए सीया पोग्यला सीयं पप्प, सीयं चेव अतिवित्ताणं विद्वति, उसिणा वा पोग्यला उसिणं पप्प उसिणं चेव अतिवहसाणं चिद्वति—एवामेव तेहिं देवेहिं मणभवसीकए समाणे से इच्छामणे खिप्पामेव अवेति. " है भगवन् ! हुं नैरियको रोमाहार करनारा छे के प्रक्षेपाहार करनारा छे? है गातम् ! तेओ, रोमाहार करनारा छे, प्रक्षेपाहार करनारा नथी. ए प्रमाणे एक रहियनाळा जीनो अने बधा देनो विषे पण समज्ञ : बेर्हियन बाळा जीनोथी मांडी मनुष्य पर्यतना प्राणिओं रोमाहार करनारा छे अने प्रक्षेपाहार करनारा पण छे.

हे भगवन् ! शुं नैरियको ओजआहार (जे आहार आखा शरीर द्वारा यह शके ते ओजआहार) करनारा छे के मनोमक्षी छे ?

हे गौतम ! तेओ ओजभाहार करनारा छे-पण मनोभसी नथी. ए प्रमाणे बघा औदारिक शरीरधारी प्राणिओ विषे समजवानं छे. वैमानिक सुधीना बधा देवो पण ओजआहार करनारा छे अने मनोभक्षी पण छे जेओ मनोभक्षी देवो छे तेओं में 'अमे मनोभक्षण करव ने इच्छं ए छीए' ए प्रकारनं इच्छ मन पे राथाय छे अने ए मन पेदा थतं के तुरत ज जे अणुओ ते देवोने इष्ट, कांत यावत्—मन गमतां होय ते बधां, तेओना (ते देवोना) भक्षणक्षे आवे छे-परिणमे छे. जेम के, शांत पुहलो शांत पदार्थने पामीने अधिक उष्ण थाय छे ए ज प्रमाणे ते देवो इच्छा मनद्वारा इच्छित अणुओने मेळवीने विशेष प्रसन्न थाय छे अने ए रीते मनोभक्षण कथा पछी तुरत ज ते इच्छामन चाल्युं जाय छे अर्थात् देवो तृप्त थह जाय छे एटले पछी तेओने खावानी वृत्ति रहेती नवी. "——(प्रकायना—ए० ४९८— ५९९—॥०)

आ उपरांत ए आहारपदमां एक बीजो उद्देशक पण छे अने तेमां पण अनेक हकीकतो जणावेली छे-ते—(ए० ५११-५२५-स०) सुधीमां छे-विशेष विस्तारना भयथी तेने अहीं जणाव्यो नथी. इने 'आहार 'ना अधिकारने लगतो एक कोठो आपीए छीए, जेथी आहार संबंधी उपर जणावेली बंधी बाबतो तहन स्पष्ट थह जाय:—

जीवना प्रकार—	क्यो आहार क्यारे ?		
एक इंद्रियशाळा जीवो—	अपर्याप्त दशामां ओज आहार. पर्याप्त दशामां रोम आहार. (अपर्याप्त दशा एटले ज्यां सुधी शरीरनी प्रेपूरी रचना न थइ होय त्यां सुधीनो समय.)		
वे इंद्रियवाळा जीनो —	अपर्याप्त दशामां ओज आहार. पर्याप्त दशामां रोमाहार अने प्रक्षेपाहार.		
त्रणः इंद्रियंबाळा जीवो—			
चार दंदियबाळा जीवी—	72		
पांच इंद्रियवाळापशु, पक्षी अने जल व रो	\$ 2.		
मनुष्य ो —	>)		
नैरियको—	अपर्याप्त दशामां भोजआहार, पर्याप्त दशामां रोमाहार.		
देवो	अपर्याप्त दशामां ओजआहार. पर्याप्त दशामां रोमाहार अने मनें।भक्षण. (मनोभक्षण एटले मन द्वारा ज इष्ट अने भक्ष्य अणुओ मेळनें। भक्षण करवुं.)		

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे अवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाद्वेतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति शान्सोः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चात्रमुख्यः॥

शतक ६.-उद्देशक ३.

बहुकर्म - वरु - पुद्रल - प्रयोग - दिससा - पदिक - करेंस्थित - सी - संवत - सन्वर्त है - संबी - भव्य - दर्शन - प्योप - - भाषक - परित्त - शान - योग - उपयोग -आहारक.-सक्ष्म.-चरम.-बंध.-अल्पबहुत्व.-हे भगवन्। महाकर्मवाळाने सर्वतः पुद्रको चोंटे ? सर्वतः पुद्रकोनी चय थाय ? उपचय थाय ? निरंतर पुद्रलो भोटे ? यावत्-निरंतर पुद्रलोनो उपध्य थाय ? अने एनो आत्मा दूरूपणे, अशुनपणे अने अनिष्टपणे बारंबार परिणमें ? हा.-तेनो हेतु.-अहत, धीत असे तन्त्रीहृत (ताजा) वस्त्रनुं उदाहरण -अल्पकर्मवाळने सर्वतः पुद्रलो भेदाय १ यावत्-परिविध्वंस पामे १ अने पनो आत्मा सुरूपपणे, शुमपणे अने इष्टर्गे वारंबार परिणमे ? हा.-तेनो हेतु.-जिक्कत, पङ्कित, मलिन अने रजव ठा पण पाणीथी धोत्राठा वस्त्र नो दाखलो.-वस्त्र अने पुद्रचोनो उपचय.-प्रयोग.-विह्नसा.-जीव अने कर्मोंनो उपचय.-ए उपचय प्रयोगसा, पण विह्नसाए नहि -मनप्रयोग-व वनप्रयोग-कायप्रयोग.- व पंचेद्रियोने ए त्रणे ध्योग.-पृथिवी साबत् बनस्पतिने एक (काय) प्रयोग.-विकलेंद्रियोने वे प्रयोग.-दचननयोग अने कायप्रयोग.-देनीने वर्णे प्रयोग --वस्नने लगती पुद्रकोपच्य सादि-सांत १ सादि-अनंत १ अनादि-सांत १ के अनादि-अनंत १-ए तो सादि-सांत. ए ज प्रकारे जीवोने लगता पुद्रकोपवय विषे ष्ट्रच्छा.-ई योष्यवंयक्रनो कर्मपुद्रकोपचय सादि-सांत.-भव्यनो अनादि-सांत.-अभव्यनो अनादि-अनंत -को कर्मपुद्रको।चय सादि-अनंत नधी.-इं ्ख सादि-सांत है !-सादि-अनंत है !-अनादि-सांत है !-अनादि-अनंत है !-वस्त्र तो सादि-सांत है :-ए प्रमार्ग जीव विषे पुष्छा,-नैर्यिक-तिर्यंच-मनुष्य अने देवे सादि-सांत.-िस्रो सादि-अनंत.-भन्यो अनादि-सांत.-अभन्यो अनादि-अनंत.-कर्मप्रकृति के.ही १-आठ-झानांवर्णाय-दर्शनादरणीय यावर-अंतर य.-ए आटेनी अवाधाकाळसहित बंधस्थिति.-ए कर्नो स्त्री बांधे ? पुरुष बांधे ? के नपुसक बांधे ?.-ए त्रणे बांधे.-जे स्त्री, पुरुष के नपुंसक न इोय ते ए कमों बांचे अने न बांचे.-आयुष्यकर्मने स्ती-पुरुष–के नपुंसक बांचे १-बांचे अने न पण बांचे.-संयत–असंयत⊷अने संयतासंयतवर्त्क ए कर्मवंथने लगता प्रश्नो,-ए ज प्रमाणे सम्यन्दृष्टि-मिथ्यादृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टि-संशी-असंशी-दोसंशीनेअसंशी-मवसिद्धिय-अभवसिद्धिय-नोमवसिद्धितनोअभवसिद्धित-चक्षुर्दर्शनी-अचक्षुर्दर्शनी-अवधिदर्शनी-केव्छदर्शनी--पर्याप्त-अपूर्याप्त--नोपर्याप्तनोअ।याप्त--भाषद--अमायक–परित्त–अपरित्त–नोपरित्तनोअपरित्त–मतिङानी–धृतशानी–अविवशानी–मनःपर्यायशानी–केवलशानी–मृतिअशानी-शुतअङानी≁–अविधअशानी (विभंगी)---मनोयोगी--वचोयोगी--काययोगी-अयोगी--' कारोपयोगी--निराकारोपयोगी -आहारक-अनाहारय---६६म--वादर---नोस्क्ष्मनोदादर---चरम-अचरम ए बधाने उदेशीने कर्मबंधने लगतो विचार,-र्खावेदक-पुरुषवेदक-नपुंसकवेदक अने-अवेदक जीवोनी अस्पवहुरा-हे भगवन् ! ते प प्रमाणे.--

बैहुकम्म वत्थेत्योग्गल पयोगसा वीससा य सादीए, कम्मद्वितित्थि-संजय-सम्मदिद्वी य सनी य. भविए दंसण-पज्जत्त-भासअ-परिते नाण-जोगे य, उषओगा-ऽऽहारग-सुहुम-चरिम-वंधे य अप्प-बहुं. बहुकर्म, बह्नमां पुद्रलो प्रयोगधी अने खामाविक रीते, आदिस-हित, कर्मस्थिति, स्त्री, संयत, सम्यग्दष्टि, संज्ञी, मध्य, दर्शन, पर्यात, भाषक, परित्त, ज्ञान, योग, उपयोग, आहारक, सूर्म, च्रम, बंध अने अल्पबहुत्व; आटला विषयो आ उद्देशामां कहेवाशे.

१. अनन्तरोद्देशके पुद्रला आहारतश्चिन्तिताः, इह तु बन्धादितः-इखेवसम्बन्धस्य तृतीयोदेशकस्य आदी अर्थसंप्रहगाधाद्यम्।* बहुकम्म-' इत्यादि. ' बहुकम्म ' ति महाकर्मणः सर्वतः पुद्रला बध्यन्ते इत्यादि वाच्यम् । ' वत्थे पोगाला पयोगसा वीससा म '

[्] मूलच्छायाः—बहुकमे वस्ने पुद्रसाः प्रयोगतो विस्नसातश्च सादिकः, कमिलाति-स्नी-संयत-सम्यग्द्रष्टिश्च संग्नी च. भविको दर्शन-पर्यास-भाषक-परीतो ज्ञात-योगी च, उपयोगा-ऽऽहारक-सूक्ष्म-बन्धवा-ऽल्प-बहुलेम्:—अनु०

ति यथा बस्ने पुद्गलाः प्रयोगतो विस्नसातश्च चीयन्ते, किम् एवं जीवानामिष वाच्यम् १ 'सादीए 'ति बस्नस्य सादिः पुद्गलचयः, एवं किं जीवानामिष असी १ इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं च बाच्यम् , 'कम्माद्विह 'ति कर्मस्थितिर्वाच्या, 'इत्थि 'ति किं स्त्री, पुरुषादिर्वा कर्म बन्नाति १ इति वाच्यम् , 'संजय 'ति किं संयतादिः १ 'सम्मादिष्टि 'ति किं सम्यग्दष्ट्यादिः १ एवं संज्ञी, भव्यः, दर्शनी, पर्याप्तकः, मापकः, परीतः, ज्ञानी, योगी, उपयोगी, आहारकः, सूक्षः, चरमः; 'बंधे य'ति एतान् आश्रित्य बन्धो वाच्यः । अप्य- बहुं 'ति एव।मेव स्त्रीप्रमृतीनां कर्मबन्धकानां परस्परेण अरुग—बहुता वाच्या इति.

१. आगळना उद्देशकमां आहारने अपेक्षीने पुद्रलोनो विचार कर्यों छे अने अहीं तो बंधादिने अपेक्षीने पुद्रलो चिंतदवानां छे-ए प्रमाणेना व्हानमें. संबंधवाळा आ त्रीजा उद्देशकमां, शरुआतमां ने अर्थसंग्रह गाथा छेः ['बहुकम्म' हत्यादि] तेमां ['बहुकम्म' ति] एटले मोटा वस्त. कर्मवाळाने सर्वेप्रकारे पुद्रलो बंधाय, इत्यादि कहेवुं, ['वर्ष्य पोग्गळा प्रयोगसा वीससा य'ति] जेम वस्त्रमां प्रयोगद्वारा या स्वाभाविक रीते सादि. पुद्रलो एकटां थाय छे, शुं एवी रीते जीवोने पण थाय छे १ ए कहेवुं, ['सादीए 'ति] जेम वस्त्रमां एकटां थतां पुद्रलो सादि-आदिवाळां वर्मास्थित. छे, ए प्रमाणे शुं जीवोने पण पुद्रलसंग्रह आदिवाजो छे १ इत्यादि प्रश्न अगे उत्तर कहेवा, ['कम्बिट्ट 'ति] कर्मगी स्थिति कहेवी, स्वा, संबन, सम्य- ['इत्थि 'ति] शुं स्वी, पुरुष वगेरे कर्मबंध करे १ इत्यादि कहेवुं, ['संजय' ति] शुं संयत वगेरे, ['सम्मिद्दिट्ट ति] शुं म्हिं, संकी, भन्य सम्यम्हिंष्ट वगेरे, ए प्रमाणे संकी, भन्य, दर्शनी, पर्याप्त, भाषक, परित्त, ज्ञानी, योगी, (योगी एटले शरीरादिकृत योग-चेष्टा-वाळो) दिगेरे. उत्योगी, आहारक, सक्ष्म, चरम ए बधाने आश्रीने ['बंधे य'ति] बंध कहेवी, ['अप्पबहुं 'ति] ए बधा स्वी वगेरे कर्मबंधकोनुं परस्पर अस्पबहुत्व. अस्पबहुत्व कहेवुं.

वस्त्रना उदाहरण साथे महाकर्म अने अल्पकर्म.

१. प्रव—से णूणं भंते! महाकम्मस्स, महाकिरियस्स, महासवस्स, महावेयणस्स सन्वओ पोग्गला बज्झति, सन्वओ पोग्गला विज्ञांति, सन्वओ पोग्गला उविज्ञांति, सया समियं च णं तस्स आया द्रूवचाए, दुवण्णचाए, दुगंधचाए, दूरसचाए, दुफासचाए; अणिङ्गचाए, अकंत-अप्पिय असुभ-अमणुन-अमणामचाए, अणिङ्ग्यिचाए, अन्वाभिन्यचाए, अहचाए-नो उडूचाए, दुवलचाए-नो सहचाए मुज्ञो गुज्ञो परिणमांति ?

- १. उ०---हंता, गोयमा ! महाकम्मस्स तं चेय.
- २. प्र०--से केणड्डेणं ?
- २. उ०—गोयमा ! से जहा नामए वर्थस्स अहयस्स वा, भोयस्स या, तंतुग्गयस्स वा आणुपुट्वीए परिभुज्जमाणस्स सव्वओ पोग्गला बज्झति, सव्वओ पोग्गला चिज्ञंति, जाव-परिणमंति; से तेणद्वेणं

१. प्र० —हे भगवन्! ते नक्की छे के, महाकर्मवाळाने, महाकियावाळाने महाआश्रववाळाने अने महावेदनावाळाने सर्वथी सर्व दिशाओथी—सर्व प्रकारे—पुद्रलोनो बंध धाय ? सर्वथी पुद्रलोनो चय धाय ? हनेशा निरंतर पुद्रलोनो बंध धाय, हमेशा निरंतर पुद्रलोनो चय धाय के हमेशा निरंतर पुद्रलोनो चय धाय के हमेशा निरंतर पुद्रलोनो उपचय धाय ? अने तेनो आत्मा, हमेशा निरंतर दूरूपपणे, दुर्वणपणे, दुर्गधपणे, दूरसपणे, दुःर्स्मशपणे, अनिष्टपणे, अकांतपणे, अमनोइपणे, अमनामपणे—मनथी संभारी पण न शकाय ए श्वितिए, अनीन्सितपणे—प्राप्त करवाने अनिष्ठितपणे, अमिध्यतपणे—जे स्थितिने प्राप्त करवाने अमिष्ठतपणे, अमिध्यतपणे—जे स्थितिने प्राप्त करवाने अमुख्यणे वारंवार परिणमे छे ?

- १. उ० हा, गौतम ! महाकर्मवाटा माटे ते ज प्रमाणे छे.
- २. प्र०-(हे भगवन्!) ते शा हेतुथी ?
- २. उ० हे गौतम! जेम कोइ अहत-अक्षत-अपरिभुक्तनिह वापरेछं-अधोतुं, धौत-धोतुं-वापरीने पण धोरछं अने शाळ उपरथी हमणों ताजुं ज उतरेछं वस्त्र होय, ते वस्त्र ज्यारे कमे कमे वपराशमां आवे त्यारे तेने सर्व बाजुएथी पुद्रलो बंधाय छे-लागे छे, सर्व बाजुएथी पुद्रलोनो चय थाय छे यावत् कालान्तरे ते वस्त्र, मसोता जेवुं मेछं अने दुर्गंधी तरीके परिणमें छे, ते हेतुथी महाकर्मबाळाने उपर प्रमाणे कह्युं छे.

१. मूलच्छायाः—तद् नूने भगवम् ! महाकर्मणः, महाकियस्य, महास्वस्य, महावेदनस्य सर्वतः पुद्गला बध्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाश्वीयन्ते, सर्वतः पुद्गला वध्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाश्वीयन्ते, सर्वा समितं पुद्गलाश्वीयन्ते, सरा समितं पुद्गलाश्वीयन्ते, सरा समितं पुद्गलाश्वीयन्ते, सरा समितं पुद्गलाश्वीयन्ते, सरा समितं च तस्याऽज्ञमा दूर्वणतया, दुर्गन्यतया, दुरस्तयया, दुरस्तयया, अनिष्यत्तया, अनिष्यत्तया, अनिष्यत्तया, अनिष्यत्तया, अनिष्यत्तया, अनिष्यत्या नो स्वत्या भूयो भूयः परिणमन्ति ? हन्त, गौतम ! महाकर्मणस्त्रचेवः तत् केनाऽर्थन ? गौतम ! तद् यथा नाम वस्रस्य अहतस्य वा, पौतस्य वा, तन्त्रोद्भतस्य वा, भानुपृथ्या परिभुज्यमानस्य सर्वतः पुद्गलाः वध्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाश्वीयन्ते यावत्—परिणमन्ति; तत् तेनाऽर्थनः—अनु•

३. प्र०--से गूर्ण भंते ! अपाऽऽसवस्त, अप्यकम्मस्स, अप्पिक्तिरियस्स, अप्पवेदणस्स सन्वओ पोग्गला भिजाति, संन्वओ पोंगला छिजंति, सध्वओ पोंगला विद्वंसति, सध्वओ पोंगला परिविर्द्धसंति; सथा समियं पोग्गला भिजांति, सन्त्रओ पोग्गला छिजांति, विद्रस्संति, परिविद्यस्संति, सया समियं च णं तस्स आया सुरूवत्ताए पसत्यं नेयव्वं, जाव-सुद्दृत्ताए-गो दृवस्वत्ताए मुज्जो भुज्जो परिणमंति ?

- ३. ७० हंता, गोयमा ! जाव-परिणमंति.
- ४. प्रo—से केणहेणं ?
- ४. उ०-गोयमा ! से जहा, नामए वत्यस्स जिल्लयस्स वा, पंकियस्स वा, मइहियस्स वा, रइहियस्स वा आणुपुर्वीए परिकामिजमाणस्स सुद्धेणं वारिणा घोव्नेमाणस्स सव्वओ पोरगला भिजांति, जाव-परिणमांति, से तेणहेणं.

३. प्र०—हे भगवन् ! ते नक्ती छे के, अल्पआश्रववाळाने, अल्पकर्मवाळाने, अल्पिकयावाळाने अने अल्पवेदनावाळाने सर्वधी पुद्रलें। भेदाय छे ? सर्वथी पुद्रलें। छेदाय छे ? सर्वथी पुद्रलें। विध्यंस पामे छे ? सर्वथी पुद्रले। समस्तपणे नाश पामे छे ? हमेशा निरंतर पुद्रले। मेदाय छे ? सर्वथी पुद्रले। छेदाय छे ? विष्वंस पामे छे ? समस्तपणे नाश पामे छे ? अने तेनो आत्मा हमेशा निरंतर सुरू-पपणे-पूर्वना सूत्रमां जे अप्रशस्त कह्युं हतुं ते अहीं प्रशस्त जाणवुं यावत्-सुखपणे, दुःखपणे नहि-वारंवार परिणमे छे ?

- ₹. उ०---हा गौतम, ! यावत्-परिणमे छे.
- ४. प्र०— (हे भगवन् !) ते ज्ञा हेत्थी ?
- उ०—हे गौतम ! जेम कोइ जलित—जल्लवाळं—मेलं. पंससहित मेलसहित अने रजसहित वस्त्र होय, अने ते वस्त्र -अमे अमे-शुद्ध थतुं होय, शुद्ध पाणीथी धोवातुं होय तो तेने लागेला पुहलो सर्वथी भेदाय यावत् परिणाम पामे, ते हेतुथी अल्पिक्रयावाळा माटे पूर्व प्रमाणे कहां छे.

२- तत्र बहुकर्मद्वारे ' महाकम्मस्स ' इत्यादि. महाकर्मणः स्थित्याचपेक्षया, महाक्रियस्य अलघुकायिक्यादिकियस्य, महाश्रवस्य बृहन्मिध्याखादिकर्मबन्धहेतुकस्य, महावेदनस्य महापीडस्य, सर्वतः सर्वासु दिक्षु, सर्वान् वा जीवप्रदेशान् आश्रित्य-बध्यन्ते आसंकद्यनतः, चीयन्ते बन्धनतः, उपचीयन्ते निषेकरचनतः; अथवा बध्यन्ते बन्धनतः, चीयन्ते निधत्ततः, उपचीयन्ते निकाचनतः; 'सया समियं ' ति सदा सर्वदा, सदात्वं च व्यवहारतोऽसातत्येऽपि स्याद् इत्यत आहः—' समितं ' सततम् , 'तस्स आय 'ति यस्य जीवस्य पुद्रछ। बध्यन्ते तस्याऽऽत्मा बाह्यात्मा शरीरम् इत्यर्थः, 'आणिष्टत्ताए 'त्ति इच्छायाः अविषयतयां, 'अकंतत्ताए 'त्ति अमुन्दरतया, 'आपियत्ताए ' त्ति अप्रेमहेतुतया, ' असुभत्ताए ' ति अमङ्गलतया इत्यर्थः, 'अमणुकताए' ति ' न मनसा-भावतः-सुन्दरोऽयम् ' इति अमनोज्ञस्तद्भा-वस्तता-तया, 'अमणामत्ताए' ति न मनसाऽम्यते गम्यते संस्मरणतोऽमनोऽम्यः, तङ्कावस्तत्ता-तया-प्राप्तुमवाञ्छितावेन, ' अणिन्छियत्ताए ' ति अनीष्सिततया प्राप्तुमनभिवाञ्छितत्वेन, ' अभिन्झियत्ताए ' ति भिध्या छोमः, सा संजाता यत्र स भिध्यतः, न भिध्यतोऽभिध्यतः, तद्भावस्तत्ता-तया, 'अहत्ताए 'ति अधन्यतया, 'नो उड्डत्ताए 'ति न मुख्यतया. 'अहयस्स 'ति अपरिभुक्तस्य, ' घोयस्स व ' ति परिभुज्याऽपि प्रक्षालितस्य, ' तंतुग्गयस्स व ' ति तन्त्रात् तुरी-वेमादेरपनीतमात्रस्य ' वज्झंति ' इसादिना पदत्रयेण इह वस्त्रस्य, पुद्रलानां च यथोत्तरं संबन्धप्रकर्ष उक्तः, ' भिजाति ' ति प्राक्तनसंबन्धविशेषसागात् , ' विद्रंसांति ' त्ति ततोऽधःपातात् , 'परिविद्धस्सांति' ति निःशेषतया पातात् . 'जिल्लयस्स' ति जिल्लितस्य यान लगन (अनलगत) धर्मीपेतमल्युक्तस्य, ' पंकियस्स ' ति आईमओपेतस्य, ' मइल्लियस्स ' ति कठिनमलयुक्तस्य, ' रइल्लियस्स ' रजोयुक्तस्य, ' परिकम्मिज्जमाणस्स ' ति कियमाणशोधनार्थोपक्रमस्य.

२. तेमां प्रथमना बहुकर्मद्वारमां [महाकम्मस्स ' इत्यादि.] स्थिति वेगेरेनी अपेक्षाए मोटा कर्मवाळाने अर्थात् मोटी स्थिति, रस अने महाकर्म. प्रदेशवाळा कर्मवाळाने, जेनी ' कायिकी ' वेगरे कियाओ नानी नगी तेने-मोटी कियाबाळाने, महाश्रववाळाने एटले कर्मबंधना मोटा हेतुरूप मिध्यात्वादिवाळाने, मोटी पीडावाळाने सर्व दिशाओमांथी अथवा सर्व जीवप्रदेशोने आश्री (कर्मनां अणुओ) संकलनथी बंचाय छे, बंधनथी चय थाय छे अने निषक-दलिकक्षेप-करवाथी उपचय थाय छे अथवा, बंधनथी बंधाय छे, निधत्त करवाथी चय थाय छे अने निकाचन करवाथी उपचय थाय छे, [' सया सिमयं 'ति] सदा एटले हमेशा, निरंतरता न होय त्यां एण कोइक बार व्यवहार-लोकरूढि थी ' सदा ' कहेवाय छ माटे कहे छे के, ['समितं']-संतत-निरंतर, ['तस्स आय'त्ति] जे जीवने पुद्गतो बंधाय छे ते जीवनी बाह्यात्मा-शरीर ['अणिट्ठत्ताए' त्ति] अनिष्टपणे एटले इच्छांना अविषयपणे, ['अकंतत्ताए 'त्ति] असुंदरपणे, ['अपियत्ताए 'ति] अप्रियपणे, ['असुभत्ताए 'ति] अशुभपणे-अमंगल्यपणे, [' अमणुन्नत्ताए ' ति] अमनोज्ञपणे अर्थात् जे, मनने एटले भावथी ' आ संदर् छे एम न लागे ' ते अमनीज्ञ अने

महाकिय-प्रहाशक. महावेदन. निषेक. आत्मा. अनिष्टादियणे.

१. मूलच्छायाः —तद् नूनं भगवन् ! अल्पाश्रवस्य, अल्पकर्मणः, अल्पकियस्य, अल्पवेदनस्य सर्वतः पुदूला भिधन्ते, सर्वतः पुदूलाश्छियन्ते, सर्वतः पुरला विध्वस्यन्ते सर्वतः पुरलाः परिविध्वस्यन्ते; सदा समितं पुरला भिद्यन्ते, सर्वतः पुरलाश्कियन्ते, विध्वस्यन्ते, परिविध्वस्यन्ते; सदा समितं च तस्याऽऽत्मा सुरूपतया, प्रशस्तं ज्ञातव्यम् , यावत्-सुवतया-नो दुःखतया भूयो भूयः परिणमन्ति ? हन्त, गातम ! यावत्-परिणमन्ति. तत् केनाऽथंन ? गौतम । तद् यथा ? नाम वस्रस जिल्लस्य वा, पिक्कतस्य वा, मलिनस्य वा, रजस्वतो वा, आनुपूर्वा परिवर्ण्यमाणस्य शुद्धेन वारिणा धाव्यमानस्य सर्वतः पुद्रला भिद्यन्ते, यावत्-परिणमन्ति, तत् तेनाऽथंनः-अनु०

अमनाम. तेपणुं एटले अमनोज्ञता, ते पणे, ['अमणामत्ताए' ति] मनद्वारा संभारतां एण जे न रुचे ते अमनोऽम्य कहेवाय, तेपणुं ते अमनोऽम्यता अने तेपणे अर्थात् मनथी असंस्मरणीयपणे—पामवाने अवांछितपणे, ['अणिन्छियत्ताए'ति] अनीप्सितपणे—पामवानी अभिवांछाथी रहितपणे, अभिध्यित. ['अभिन्छियत्ताए'ति] भिध्या एटले लोभ, ज्यां लोभ होय ते भिध्यित कहेवाय अने तेथी उल्लुं ते अभिध्यत, तेपणे एटले जे प्राप्त करवाने लोभ पण न थाय तेपणे, ['अहत्ताए'ति] जधन्यपणे, ['नो उच्चताए'ति] अमुख्यपणे. ['अहयस्स'ति] निह भोगवेलुं—निह तम्नोद्भन. वापण्डे—अधोतुं, ['धोयस्स व'ति] भोगवीने—वापरीने पण धोएलुं, ['तंतुग्गयस्स'ति] तंत्र—तुरी, बेमा वगेरे रूप सांचा—थी ताजुं ज दूर करेलुं—उतारेलुं. ['बज्बंति 'हत्यादि] त्रण पदवंड अहिं वस्त्रना अने पुद्रलोना उत्तरोत्तर संबंधनी अधिकता कही छे. ['भिज्ञंति 'ति] विध्वसादि. प्रथमना एकप्रकारना संबंधने त्यजवाथी, ['विद्वंसंति 'ति] तथी—आत्माथी—नीचे पड्याथी, ['परिविद्धस्संति 'ति] समस्तपणे—बधां य अहित. पुद्रलोना—पड्याथी, ['अहिंयस्स 'ति] जबुं अने लागवुं एवा प्रकारना मलयुक्त, ['पंकियस्स 'ति] भीना मेलथी युक्त, ['महिंखअस्स 'परिकर्यमाण. ति] कठण मेल सहित, ['रहिंख्यस्स 'ति] रज सहित अने ['परिक्रिमज्ञमाणस्स 'ति] जेने साक करवानो आरंभ शरु छे तेवुं वस्त्र जेम चोक्खुं थई आय छे तेम अल्पिकयादियुक्त आत्मा पण चोक्खो थई जाय छे.

वस्त्र अने जीव तथा पुद्रलोपचय अने कर्म.

५. प्रo—वैत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचये किं पयोगसा वीससा ?

५. ड०-गोयमा । पञ्जोगसा वि, वीससा वि.

५. प्र०—हे भगवन् ! वस्त्रने जे पुद्रहोनो उपचय थाय छे ते शुं प्रयोगथी-पुरुष प्रयत्नथी-थाय छे के स्वाभाविक रीते थाय छे !

५. उ०—हे गौतम! प्रयोगथी थाय छे अने खाभाविक रीते पण थाय छे.

६. प्र० - जहा णं भंते ! वरथस्स णं पोग्गलोवचए पयोगसा

६. प्र०--हे भगवन्! जेम वस्त्रने प्रयोगधी अने स्त्राभावि क

" कतमे च भिक्खने ! चित्तस्स उपिक्करेसा ?

अभिज्ञा, विसमलोभो चित्तस्स उपिकलेसो, व्यापादो, कोघो, उपनाहो मक्खो, पद्मसो, इस्सा, मच्छरियं, माया, साठेटयं, धंभो, सारभो, मानो, अतिमानो, मदो पमादो—चित्तस्स उपिकलेसो.

धीबुद्धघोषजीनो अर्थः ---

" अभिज्ञा-विसमलोभो "—" सक्भंडे छन्दराणो अभिज्ञा, परभंडे विसमलोभो. अथवा युत्तपत्तहाने छन्दराणो अभिज्ञा, अयुत्तापत्तहाने विसमलोभो."

" है भिक्षुओ ! चित्तना उपक्लेश केंटला छे ?

अभिध्या, विषमलोभ-ए चित्तनो उपक्लेश छे-ए ज रीते व्यापाद-हिंसा, कोध, उपनाह, स्रक्ष, पळाश, ईर्ध्या, मारसर्थ, माया, शठता, स्तंभ, संरंभ, मान, अतिमान, मद अने प्रमाद—ए बधा चित्तना उपक्लेश छे "-म॰ प्र०२६, स्रत —७ (रा०)

" पोताना भांड (पात्र विगेरे उपकरण) मां छंदराग ते अभिध्या अने बीजाना भांडमां छंदराग ते विषमलोग अथवा युक्त पात्र स्थानमां छंदराग ते अभिध्या अने अयुक्त अपात्र स्थानमां छंदराग ते विषमलोभ "

─म० ए० २३८ (रा०)

अहीं पण आ श्रीबुद्धघोषजीनो अर्थ घणी संदर रीते घटी शके तेम छे,

३. अहीं मूळमां 'जल' (जल्लियस्स) शब्दनी प्रयोग थएली छे तेनी अर्थ मेल थाय छे. एवं। ज शब्द-प्रयोग मिल्झम-निकायमां पण आ प्रमाणे मळी आने छे:—

" न्। इदं भिक्खवे ! संघाडिकस्स संघाटिधारणमत्तेन सामञ्जं वदामि. (एवं) अचेलकस्स अचेलकमत्तेन, रजोजलिकस्स रजोजलिकमत्तेन" इत्यादि. "हे भिक्षुओं ! संघाटिक कांड्र मात्र संघाटी धारण करवाथी ज श्रमण थड्ड शकतो नथी. अचेलक मात्र अचेलक रहेवाथी अने रजोजिहिक (मेलो) मात्र मेलने लीचे पण कांड्र श्रमण थड्ड शकतो नथी-एम हुं कडुं लुं " इल्लाहि—म० ए० १९० (रा०)

१. मूलकायाः — वस्रस्य भगवन् ! पुद्रलोपचयः कि प्रयोगेण, विस्तस्या ? गातम ! प्रयोगेणाऽपि, विस्तस्याऽपि. यथा भगवन् ! वस्रस्य पुद्रलोपचयः प्रयोगेणः — अतुः

[%] अहीं मूळमां भणाम (अमणामत्ताए) शब्दनी प्रयोग थएलो छे. " मनसा अन्यते गन्यते " (मनोडम्यः) (टीकाकार) अर्थात् मनने गमे ते मनोडम्य एटले सुंदर अने जे तेतुं निह ते अमनोडम्य अर्थात् असंदर, आ 'मणाम ' शब्दनी जेटली समानता 'मनोडम्य ' शब्द साथे छे ते करतां विशेष समानता 'मनाप ' शब्द साथे होइ शके छे. 'मनाप ' शब्दनो प्रयोग पालीप्रंथोमां 'सुंदर ' अर्थमां ज थएलो छे:---

[&]quot; अम्हाकं पि सहधम्मिका पिया मनापा "-म० पृ० ४७ सू० ११ (रा०)

[&]quot; अभिकंतवण्णा—अभिरूपच्छवि, मनापवण्णा "-म० १० २४८ बुद्ध० (रा०)

र. अहीं मूळमां 'अभिज्झियताए ' एवो पाठ छे अने तेनो अर्थ करतां टीकाकारश्री जणावे छे के, "भिध्या लोभः, सा संजाता यत्र स भिध्यतः—न भिध्यतः—अभिध्यतः—तद्भावस्तत्ता—तया " अर्थात् " महाश्रववालाने जे पुद्रलो चोटे छे तेनो परिणाम अभिध्यपणे—ने पुद्रलोने लेवा कोइने लोभ पण न थाय एवा खराबरूपे–थाय छे " तारपर्य ए छे के, महाश्रववालाने जे कर्म-ुद्रलो ोटे छे ते एवां अनिष्ठ होय छे के, जेने मेळववानो कोइ लोभ पण न राखे. जेम अहीं मूळमां 'अभिज्झियत्ताएं प्रयोग वारायो छे तेम श्रीबुद्धना सन्निटकना 'मिज्झिम-निकाय 'नामना संथमां पण 'अभिज्झा 'शब्द वपराएलो छे. त्यां तेन लगतो पाठ अने तेनो श्रीबुद्धवीय आचार्यजीए करेलो अर्थ आ प्रमाणे छे:—(मूळपाठ—)

तिं, वीससा वि-तहा णं जीवाणं कम्मोवनए कि पयोगसा, रीते पुद्रहोनो उपचय थाय छे तेम जीवोने जे कर्मपुद्रहोनो उपचय वीससा ?

६. उ०--गोयमा ! पयोगसा, नो वीससा.

७. प्रo—से केणहेणं ?

७. उ० - गोयमा ! जीवाणं तिविहे पयोगे पत्रते, तं जहा:-मणपयोगे, वइषयोगे, कायपयोगे; इचेएणं तिविहेणं पयोगेणं जीवाणं कम्मोवचये पयोगसा, नो वीससा; एवं सच्ये सें पंचिदियाणं तिविहे पयोगे भाणियव्वे. पुढवीकाइयाणं एगविहेणं पओगेणं, एवं जाव-वणस्सइकाइयाणं. विगलेंदियाणं दुविहे पयोभे पत्र ते, तं जहा:-वइपयोगे, कायपयोगे यः; इंचेएणं दुनि-हेणं पयोगेणं व.म्मोवचए पयोगसा, नो वीससा, से तेणहेणं जाव-नो वीससा, एवं जस्स जो पओगो, जाय-वेमाणियाणं.

८. प्र० - बरथस्त णं भंते ! पोग्गलोवचये कि साईए सपज्जवसिए, सादीए अपज्जवसिए, अणाइए सपज्जवसिए, अणा-.इए अपज्जवसिए ?

८. उ०—गोयमा ! वत्थस्त णं पोग्गलोवचए साइए सपज्जविसए, नो साइए अपज्जविसए, नो अणाइए सपज्जविसए, नो अणाइए अपज्ञवसिए.

९. प्रo — जहां णं मंते ! वत्थस्स योग्गलोवचए साइए रुपज्जवसिए, नो साइए अपज्जवसिए, नो अणाइए सरज्जवसिए, नो अणाइए अपज्जवसिए; तहा णं जीवाणं कम्मोवचए पुच्छा ?

९. उ०-गोयमा ! अत्थेगइयाणं जीवाणं कम्मोवचए साइए सपज्जवासिए, अत्थेगतियाणं अणाइए सपज्जवासिए, अत्थे-गइयाणं अणाइए अपज्ञवसिए, नो चेव णं जीवाणं कम्मोवचए साइए अपज्जवसिए.

थाय छे ते हु प्रयोगथी अने स्वामः विक रीते, ए बने कारणथी

६. उर--हे गौतम ! जीवोने जे कर्मनो उपचय थाय छे ते प्रयोगधी थाय छे पण स्वाभाविक रीते थतो नथी.

७. प्र०--(हे भगवन्) ते शा हेतुथीं ?

७. उ. -- हे गौतम जिवोने त्रण प्रकारना प्रयोगो कह्या छे, ते जेमके, मनप्रयोग, व्चनप्रयोग, अने कायप्रयोग, ए त्रण प्रकारना प्रयोगवडे जीवोने कर्मन्त्रे उपचय थाय छे, माटे जीवोने कर्मनो उपचप प्रयोगथी थाय छे पण स्वामाविक रीते थतो नथी; ए प्रमाणे बधा पंचेंदियोने त्रण प्रकारनो प्रयोग कहेवो, पृथिवीकाः िकोने एक प्रकारनो प्रयोग कहेवो, ए प्रमाणे यावत-वनस्पतिका-यिको सुधी जाणबुं, विकलंदिय जीनोने वे प्रकारनो प्रयोग कहा। छे, ते जेमके, बचनप्रयोग अने कायप्रयोग, ए वे प्रकारना प्रयोगवडे तेओने कर्मनो उपचय थाय छे माटे तेओने प्रयोगधी कर्मोपचय थाय छे पण खामाविक रीते कर्मोपचय थतो नथी, ते हेतुथी एम कह्यं के, यावत् स्वामाविक रीते कर्मीपचय थतो नथी, ए प्रमाणे जे जीवने जे प्रयोग होय ते कहेवो अने ते प्रमाणे यावत्-वैमाने क सुधी कहेवं.

८. प्र०-हे भगवन् ! वस्त्रने जे पुद्रहोनो उपचयं थयो छे, ते झुं सादि सांत छे ? सादि अनंत छे ? अनादि सांत छे के अनादि अनंत छे ?

८. उ० — हे गौतम ! वस्त्रने जे पुरलोनो उपचय थयो छे, ते सादि सांत छे पण सादि अपर्यवसित-अनंत-नथी, तेम ज अनादि सांत नधी अने अनादि अनंत नधी.

९. प्र०-हे भगवन् ! जेम बस्ननो पुद्रलोपचय सादि सांत छे पण सादि अनंत, अनादि सांत के अनादि अनंत नथी तैन जीवोना कर्मोपचय माटे पण पृच्छा-प्रश्न-करवी अर्थात् जीत्रोनो कर्मीपचय पण शुं सादि सांत छे ? सादि अनंत छे, अनादि सांत छे के अनादि अनंत छे ?

🔧 ९, उ०—हे गौतम ! केटलाक जीवोनो कर्मोपचय सादि सांत छे, केटलाक जीवोनो कर्मोपचय अनादि सांत छे अने केटलाक जीवोनो कर्मोपचय अनादि अनंत छे. पण जीवोनो कर्मोन पचय सादि अपर्धवसित-अनंत-नथी.

१. मूलच्छ याः — अपि विस्तसयाऽपि, तथा जीवानां कर्मोपचयः कि प्रयोगेम, दिशसया ? गौतम ! प्रयोगेम, न विश्वसया. तत् केनाऽर्थेन ? मातम । जीवानां त्रिविधः प्रयोगः प्रइप्तः, तदायाः-मनःप्रयोगः, वचःप्रयोगः, कायप्रयोगः; इखनेन त्रिविधेन प्रयोगेण जीवानां कर्मापवयः प्रयोगेण, न विस्तसया; एवं सर्वेषां पत्नेन्द्रियःणां त्रिविधः प्रयोगो भणितव्यः. पृथियौकायिकानाम्, एकविधेन प्रयोगेण, एवं यावत्-वनस्पतिकायिकानाम्, विकल्छे-न्द्रियाणां द्विविधः प्रकीतः प्रक्षप्तः, तद्यथाः-वचःप्रयोगः, कायप्रयोगधः; इत्यनेन द्विविधन प्रयोगेण, कर्ने।पचयः प्रयोगेण, न विस्त्या, तत् तेनाऽर्धेन यावत्–नो दिससया, एवं यस्य यः प्रयोगः, यावत्∸वैमानिकानाम्, बस्रस्य भगवन् । पुद्रशेपचयः किं सादिकः सपर्यवसितः, सादिकोऽपर्यवसितः, अनादिकः सपर्यवसितः, अनादिकोऽपर्यवसितः १ गौतम । वस्रस्य पुद्रलोपचयः सादिकः सपर्यवसितः, नो सादिकोऽपर्यवसितः, नो अनादिकः सपर्यवसितः, नोऽनादिकोऽपर्यवसितः यथा भगदन् ! वस्रस्य पुरुषोपचयः सादिकः सपर्यवसितः, नो सादिकोऽपर्यवसितः, नोऽनादिकः सपर्यवसितः, नोऽना-दिकोऽपर्यवसितः; तथा जीवानां कमें।पचये पृच्छा ? गैतम ! अस्त्वेकेषां जीवानां कर्मोपचयः सादिकः सपर्यवसितः, अस्त्येकेषाम् अनादिकः सपर्य-वसितः, अस्त्येकेषाम् अनादिकः अपर्यवसितः, नो चैव जीवानां कर्मोपचयः सादिकोऽपयवसितः--अनु०

१०. प्र०—से नेपहेणं ?

१०. उ० - गोयमा ! इरियावहियबंधयस्त कम्मोवचए से तेणद्वेणं गोयमा !

१०. प्र०—(हे भगवन् !) ते शा हेत्यी ?

१०. उ० - हे गौतम! ऐर्यापथना बंधकनो कर्मोपचंप सादि साइए सपवज्जवसिए, भविसिद्धियस्स कम्मोवचए अणाइए सांत छे, भवसिद्धिक जीवनो कर्मोपचय अनादि सांत े, अभवसि-सपज्जवसिए, अभवसिद्धियस्त कम्मोयचए अणाइए अप्रज्ञवसिए; द्धिकनो कर्मोपचय अनादि अनंत छे, ते हेतुथी हे गीतम । तेम कहां छे.

२. वस्त्र-इत्यादिद्वारे 'पयोगसा वीससा य' ति छान्दसःवात् प्रयोगेण पुरुपव्यापारेण, विश्रसतया स्वभावेन इति. र जीवाणं कम्मोवचए पओगसा, णो वीसस ' ति प्रयोगेण एव, अन्यथाऽयोगस्याऽपि बन्यप्रसङ्गः. सादिद्वारेः-' इरियावहियवंघयरस ' इत्यादि. ईर्यापथो गमनमार्गस्तत्र भत्रम् ऐर्यापयिकं केवलयोगप्रययं कर्म इत्यर्यः, तद्बन्यकस्य अवशान्त्रमोहस्य, क्षोणमोहस्य, सयौगि-केविलिनश्च इत्पर्धः, ऐपीपिथिककर्मणो हि अवद्भपूर्वस्य बन्धनात् सादित्वम् , अयोग्यवस्थायाम् , श्रेणिप्रतिपाते वाऽबन्धनात सपर्यवसितत्वम्.

प्रयोग-विश्वसः. जीशोनी कर्मीपचय. दोग विनाना. **ऐ**र्य:पश्चिक द.में.

धेर्यापधिक वर्मना सःदिपणा अने सांतपणानी िशेष समजण.

३. 'वस्त ' इत्यादि द्वारमां जणावे छे के, ['पयोगैसा वीससा य 'ति] प्रयोग एटले पुरुषनी व्यापार, ते वडे अने विससा एटले स्वमाव, ते वडे-['जीवाणं कम्मोवचए पओगसा, णो वीसस 'ति] जीवोने कर्मोपचय प्रयोगथी ज थाय छै, अन्यथा-जो एम न मानीए तो जे योग विनाना छे-प्रयोग रहित छे-तेओने एग कर्मनो उपचय थवो जोइए, एण तेम थतुं नथी माटै कर्मीपचय प्रयोगथी थाय छे, ए संयुक्तिक्त छे. सादिद्वारमां [' इरियावहियनंध्यस्स ' इत्यादि.] ईर्यापथ एटले गमनमार्ग, ते द्वारा थयेलुं ते ऐर्यापथिक अर्थात् जेमां केवल शरीरादियोग ज हेतु छे एवं कर्म, तेनो बांधनार ऐर्यापथिकवंधक कहेवाय. उपशांतमोह, क्षीणमोह अने स्योगिकेवलिने ऐर्यापथिक कर्म संभवी शके छे. कोइ बार पूर्वे एवं कर्म बांधेलुं न होबाने लीघे तेनी नवी ज बंध थाय छे अने तेथी ज तेनुं सादिएणुं छे अने अयोगिअवस्थामां अथवा श्रेणिथी प्रतिपात थाय त्यारे ते कर्मनो वंघ न थतो होवाथी ते तुं सांतपणुं छे. [तात्पर्य ए के, ईर्या-पथ=ईर्या एटछे गति करबी अने पथ एटछे मार्ग अधीत् ईर्यापथ एटले गमनमार्ग-जे कर्म मात्र हालवा चालवाथी ज बंघाय-जेना बंघमां बीजो कोई कषाय तो हेतु न ज होय-तेनुं नाम ' ऐर्यापथिक कर्म ' कहेवाय. जैनशास्त्रनी शैलीयी जाणी शकाय छे के, ' कर्मबंघ ' ना मुख्य वे हेतु छः-एक तो कोवादिकषाय अने बीजो शारीरिक अने वाचिक विगेरे प्रवृत्ति, जे जीवोना कषायो तद्दन उपशम्यां नथीं वा क्षीण थया नथीं तैंओ जे जे कमीने बांचे छे-ते बधी तेओनो वंध काषायिक के कषायजन्य कहेवाय. कषायवाळा जीवीना कषायी कांइ निरंतर प्रकटरूप नथी होता तो एण ए कषायी तहुन उपशान्त वा क्षीण न होवाधी तेओनी बधी प्रवृत्तिओ-रुखवुं, बोरुबुं, वांचवुं विगेरे क्रियाओ-के, जेमां प्रकटरीते कारणस्प कोइ कुषाय जणाती न होय तो पण कापायिक ज कहेवाय अने जे जीवोना कषायो तहन उपशमी गंया छे वा क्षीण धई गया छे ते जीवोनी चेध-चालयुं विगरे किया-काषायिक न कहेवाय, किंतु शरीरजन्य के वाणीजन्य ज कहेवाय. अहीं ने ऐर्यापथिक किया जणावी छे ते, एवा उपशान्त मोह गुणस्थानके वर्तनारा वा क्षीणमोह गुणस्थानके वर्तनारा जीवोने ज संभवी शके छे-कारण के, तेवा ज जीवों मात्र तद्दन कवायरहित्यणे ए जातनो एटले केवळ शरीरजन्य के वाणीजन्य कर्म-बंध करी शके छे. अहीं ज मूळमां जणाव्युं छ के, कर्मबंध, सादि अने सपर्यवसित पण होय छे, ते आवा केवळ शरीरजन्य के वाणीजन्य थता कर्मेबन्धने आश्रीने समजवार्त छे. जो के, जीव अने कर्मना संबंधनी सादिता घटी शकती नथी तो पण-उपर्युक्त प्रकारनो एटले जेमां कषायनी हेतुतानो जरा गंध एण नथी एवो-केंबळ शरीरजन्य के वाणीजन्य कर्मनंध तो एक ज वार-अमुक स्थितिए थतो होवाथी ए, जरूर साधि-आदिवाळो-कहेवाय अने ज्यारे एवो पण कर्मबंध बंध पडे एटले आत्मानी अकियदशानी अपेक्षाए एवा बंधनो अंत आवतो होवाथी ए. सपर्यवसित एटले अंतवाळो एण कहेवाय.]

वस्र अने जीवनो सादि-सांततानो विचार.

११. प्र०-वैरथे णं भंते ! किं साइए सपज्जवसिए, चउभंगो?

११. प्र० — हे भगवन्! शुं वस्त्र सादि सांत छे ! पूर्व प्रमाणे अहीं चारे भागामां प्रश्न कहेंबों.

११. उ०-गोयमा ! वत्थे साइए सपज्जवासिए, अवसेसा तित्रि वि पडिसेहेर्यन्वा.

११. उ०-हे गौतम ! वस्त्र सादि छे अने सात छे, बाकी त्रणे भांगानी वस्त्रमां प्रतिषेध करवी.

१२, प्र०-जहा णं भंते ! वस्थे साइए सपजवसिए, नो

१२. प्र०-हे भगवन् ! जेम वस्त्र सादि सात छे पण सादि साइए अपजनिसए, णो अणाइए सपजनिसए, णो अणाइए अनंत नथी, अनिदि सांत नथी अने अनादि अनंत नथी तेंम

मूळच्छायाः—तत् केनार्थेन? गौतम! ऐयापिकवन्धकस्य कर्मापचयः सादिकः सपर्यवसितः, भवसिद्धिकस्य कर्मापचयोऽनादिकः सपर्यवसितः. अभवसिद्धिकस्य कर्मीपचयोऽनादिकोऽपर्यवसितः; तत् तेनाऽर्थेन गौतम [:-अनु०

१. व्याकरणना नियमानुसार तो 'पयोगेण ' यदं जोइए पण छांदस होनाथी-आर्ष है।वाथी-' पयोगसा ' थयुं छे: अशिअभय०

१. मूलच्छायाः--वस्त्रं भगवन् ! कि सादिकम्-सपर्यवसितम् , चतुर्भेद्ध ? गौतम ! वस्त्रं सादिकं सपूर्यवसितम् , अवशेषास्त्रयोऽपि प्रतिवेधयितव्याः. यथा भगवन् । वस्त्रं सादिकं सपर्यविस्तम् , नो सादिकम् अपर्यवसितम् , नोऽनादिकं सपर्यवसितम् , नोऽनादिकम्:-अमु०

अपज्जवासिए तहा णं जीवा णं कि साइया सपज्जवसिया चउभंगो - जीवो शुं सादि सांत छ ! अहिं पूर्वेना चारे भांगा व ही तेमां प्रस्त पुच्छा ?

१२. उ०-गोयमा ! अत्थेगइया साइया सपज्जवासिया, चत्तारि वि भाणियव्वा.

१३. प्र० -- से वेलहेणं ?

१३. उ० — गोयमा ! नेरतिय-तिरिक्खनोणिय-मण्स्स-देवा गतिरागतिं पड्च साइया सपज्जविसया, सिद्धा (सिद्ध) गतिं देवो गति आगतिने अपेक्षी सादि अने सांत छे, सिद्धगतिने पडुच साइया अपज्जवसिया, भवसिद्धिया लिख पहुच अणाइया अपैक्षी सिद्धी सादि अनंत छे, भवसिद्धिको लिबने अपैक्षी अनादि सपज्जवसिया, अभवसिद्धिया संसारं पहुच अणाइया अपञ्जवसिया; सांत छे अने अभवसिद्धिको संसारने अपेक्षी अनादि अनंत छे, ते से तेणद्वेणं.

वस्त्री.

?२. उ० - हे गौतम! केटलाक जीवो सादि सांत छे, ए प्रमाणे चारे भांगा कहेवा.

१३. प्र०—(हे भगवन् !) ते शा हेतुथी ?

१३. उ० -- हे गौतम ! नैरियको, तिर्यंचयोनिको, मनुष्यो अने हेत्थी तेम कहां छे.

- श. ' गतिरागतिं पडुच ' ति नरकादिगतौ गननमाश्रित्य सादयः, आगमनमाश्रित्य सपर्यवसिता इत्यर्थः. ' सिद्धा (सिद्ध) गई पड्च साईया अपज्ञवासिय ' त्ति. इह आक्षेप-परिहारी एवम्:---
 - '' साई अपज्जवसिया सिदा न य नाम तीयकालिम, आसि कयाइ वि सुण्णा सिदी सिदेते.''
 - '' सब्बं साइ सरीरं न य नामाऽऽदिमय देहसब्भावो, कालाऽगाइत्तणओ जहा व राइं-दियाईगं. ''
- '' सन्त्रों साई सिद्धों न यादिमों विज्ञह तहा तं च, सिद्धी सिद्धा य संया निदिद्धा रोहपुण्छाए '' ति. "तं च" ति तच सिद्धाऽनादित्वमिष्यते, यतः-" सिदी सिदा य" इसादि-इति. 'भवसिदिया लदि' इसादि. भवसिदिकानां भव्यत्वल्धिः सिद्धलेऽपैति-इति कृत्वाऽनादिः, सपर्यवसिता च इति,
- ৪. ['गतिरागतिं पहुच 'ति] नरकादि गतिमां थता गमनने आश्री सादि अने त्यांथी थता आगमनने आश्री सांत 🕉 ['सिद्धा गति-आगति. (सिद्ध) गई पहुच साईया अपज्जवसिय ' ति] सिद्धो सिद्धगतिने आश्री सादि अने अनंत छे, अहीं आक्षेप अने परिहार आ प्रमाणे जाणवाः--" सिद्धोंने सादि अने अनंत कहा छे, परंतु भूतकाळमां कोइ वस्तते पण सिद्धना जीवोथी शून्य-रहित-सिद्धि न हती, एम सिद्धांतमां कहां छे " अर्थात् आ गाथाथी एम अक्षिप थाय छे के, सिद्धो सादि अने अनंत केम होइ शके? कारण के, भूतकाळे कोइ वस्तते पण सिद्धोधी शून्य सिद्धि रही नथी, एम सिद्धांतमां कह्युं छे, अर्थात् जो कोइ एवो पण वखत होय के, जे वखते सिद्धि, सिद्धोधी रहित होय तो एम गानी पण शकाय के, ते वखते सिद्धो नवा आध्या माटे तेओ सादि अने अनंत कहेवाय, पण तेम तो नथी माटे सिद्धो सादि अनंत छे, ए केम सिद्ध थइ शके ? ते आक्षेपना उत्तरमां कहे छे के, " कालना अनादिपणाने लीघे कोइ एवो पण आदिन-सांधी प्रथम-देहनो सद्भाव नधी तो पण सर्व शरीर सादि हिस्त होवानुं छे ए उदाहरण प्रमाणे अथवा जेन रात्रि दिवसो थाय छे ए प्रमाणे " " सर्व सिद्ध सादि छे पण कोइ सिद्ध एवो नथी जे आदिन-सौथी प्रथम-होय, माटे सिद्धोनुं अनादिपणुं छे अने तेथी रोहैक अनगारना प्रश्नोमां सिद्धि अने सिद्धो सदा (अनादि) निर्देश्या छे " अर्थात् जेम काल रोहक अनगार-अनादि छे, अने ते काळ कोइ वखत शरीरोधी या रात्रि दिवसीथी रहित हतो एम बन्धुं नथी तेथी तेमां सौधी प्रथम क्या शरीरनो वा क्या अहोरात्रनो सद्भाव होय ते जाणी शकातुं नथी तो पण उत्पत्तिने आश्री वधा शरीरो सादि छे तथा वधा रात्रि दिवसो सादि छे एम मानदामां रात्रि दिवसो अने आबे छे. तेम जो के, सिद्धि कोइ बखत सिद्धोधी रहित नथी तेथी क्यो सिद्ध साँथी प्रथम छ ते कळातुं नथी तो पण उत्पत्तिन आश्री पूर्व उदाहरण श्ररीरो. प्रमाणे सिद्धोने सादि अने अनंत कहा। छे. " तं च " एटले ते-सिद्धोनुं अनादिएणुं इष्ट छे, कारण के, सिद्धि अने सिद्धोने सदा (अवस्थित) कहा। छे. ['भविसिद्धिया ठार्द्धि ' इत्यादि.] भवसिद्धिक जीवोने मध्यत्व लब्धि होय छे, अने एओनी ए लब्धि सिद्धपणुं पाम्या पछी नाश**्पामे छे मा**दे ते भवसिद्धिकोने अनादि अने सांत कहा छे.

सिंबो सादि शी रीते

कर्म अने तेनी स्थिति.

१४. प्र०—हे भगवन् ! केटली कर्म-प्रकृतिओ कही छे ! १४. प्रo-काति णं भंते ! कम्मप्पगडीओ पनताओ ? १४. उ० — गोयमा! अह कम्मप्पगडीओ पत्रता, तं जहाः - १४. उ० — हे गौतम! आठ कर्म प्रकृतिओ कही छे, ते

१. मूलच्छायाः—अपर्यवसितं तथा जीवाः कि सादिकाः सपर्यवसिताः, चतुर्भकः-पृच्छा १ गातम ! अस्येककाः सादिकाः सपर्यवसिताः, चत्वारोऽपि भणितव्याः तत् केबाऽर्थेन ? गोतम ! नैर्थिक-तिर्थेग्योनिक-मनुष्य-देवा मति-आ तीं प्रतीख सादिकाः सपर्यवसिनाः, विकाः (सिक्र) गति प्रतीख सादिका अपर्यवितिताः, भवतिद्विका लिन्धं प्रतील अनादिकाः ६पर्यवितिताः, अभवतिदिकाः संसारं प्रतीलाइगादिका अपरेवितिताः; तत् तेनाऽर्थेन.: -- अनु ०

१. प्र० छायाः—सादयः—अपर्यवसिताः सिद्धा न च नामाऽतीतकाले, आसीत् कदाचिदिष सून्या सिद्धः सिद्धः सिद्धान्ते. सर्व सादि शरीरं न च नामाऽऽदिमकः देहसद्भावः, कालाऽनादिःवाद् यथा वा रात्रिदिवादीनाम्. सर्वः सादिः सिद्धः न चादिमो विद्यते तथा तश्च, सिद्धिः सिद्धाश्व सदा १. जुओ भगवती प्र० खं० (पृ० १६७):—अनु० निर्दिष्टा रोहपुच्छायाम् :—अनु •

१. मूलच्छायाः—कति भगवन् । कर्मप्रकृतयः प्रज्ञसाः १ भैतम । अष्ट कर्मप्रकृतयः प्रज्ञसाः, तद्यथाः—अनु०

णाणावरणिज्ञं, दरिसणावराणिज्ञं, जाव-अंतराइयं.

१५. प्र०---णाणावरणिज्जस्स णं मंते ! कम्मस्स केवतियं कालं बंधद्विती पण्णत्ता ?

१५. उ०-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ, तिचि य वाससहस्साइं अवाहा, अवाहू-णिया कम्मिट्टीत-कम्मिनसेओ, एवं दरिसणावरणिज्ञं पि, वेय-णिञ्जं जहचं दो समया, उक्कोसेणं जहा णाणावरणिञ्जं, मोहणिञ्जं जहण्मेणं अंतोमुहुत्तं, उद्योतेणं सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ, सत्त य वाससहस्साणि (अवाहा) अबाहूणिया कम्मद्विती-कम्मनिसेओ, पुच्वकोडितिभागमं भहियाणि कम्पद्विती-कम्मनिसेओ, नाम-गोयाणं जहण्णेणं अद्व मुहुताः, उक्कोत्तेणं वीतं सागरीवमकोडाः कोडीओ, दोण्गि य वाससहस्साणि अवाहा, अवाहूणिया कम्म-द्विती-कम्मिनसेओ, अंतराइयं जहा णाणावराणिज्जं:

जेमके, ज्ञानायरणीय, दर्शनायरणीय यावत् अंतराय.

१.५. प्र० — हे भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्मनी बंधस्थिति केटला काळ सुधी कही छे ?

१५. उ० —हे गौतम ! जघन्यथी अंतर्भृहूर्त अने उत्क्रष्टथी त्रीश सागरोपम कोडाकोडी, अने त्रण हजार वरस अवाधा काळ, ते अबाध काळ जेटली जगी कर्मक्षिति-कर्मनिषेत-जाणवी, ए प्रमाणे दर्शनावर भीय कर्म परत्वे पण जाणवुं. वेदनीय कर्म जधन्ये वे सैमयनी स्थितिवाळुं अने उत्झ्छे जेम झनावरणीय कर्म कर्गु छे तेम जाणबुं. मोहनीय कर्म जधन्ये अन्तर्भृहूर्तनी स्थितिय छुं अने आउगं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोत्रमाणि उत्कृष्टे ७० सागरोतम को अकोडी स्थितिवाळुं छे भने सात हजार वरस तेनो अयाचा काळ छे अर्थात् कर्नस्थिति-कर्मनिवेक-काळ, ते अवाधा कळथी ऊगो जागवो. (हे गौतम!) आयुष्य कर्मुनी स्थिति जघ-ये अन्तर्मुहूर्व छे अने उत्कृष्टे पूर्व कोटिना त्रिभागयी अविक तेत्रीश सागरोपम कर्मस्थिति-कर्मनिषेक-छे. नामकर्मनो अने गोत्रक्रमंनो जवन्य काळ आठ अन्तर्मुहूर्त अने उरक्रष्ट काळ वीरा सागरोपम छे तथा बे हजार बरस अज्ञाधा काळ छे, ते अवाया काळथी ऊणी कर्मस्थिति, -कर्मानेषेक-जाणवी. जेम ज्ञाना-वरणीय कर्म कह्यं तेम अंतराय कर्म समजवुं,

५ कर्मस्थितिद्वारे '' तिनि य वाससहस्साइं अबाहा-अबाहाऊणिया कम्माद्विति-कम्मनिसेगो '' ति ' बाधू छोडने ' बाधते इति बाधा-कर्मणः उदयः, न बाधा अवाधा-कर्मणो बन्वस्य, उदयस्य चाऽन्तरम्-अवाधया उक्तवक्षणया ऊतिका अवाधो नेका कर्मिः ति:-कर्माऽयस्थानकाल उक्तलक्षणः कर्माचेपेको भवति, तत्र कर्मनिपेको नाम कर्मदलिकस्याऽनुमयनार्थो रचनाविश्वेयः; तत्र च · प्रथमसमये बहुकं निषिञ्चति, द्वितीयसमये विशेपहीनम् , तृतीयसमये विशेपहीनम् एवं यावद् उत्कृष्टस्थितिकं कर्मदलिकं तावद् विशेषहीनं निविञ्चति. तथा चोक्तम्:-'' मोर्नूण सगमबाहं पडमाई । द्विईड बहुयरं दब्नं, रोसे विसेसहणिं जा उक्रोसं ति सब्वासिं ''

" दरेक कर्म वंथाया पछो-ते ते कर्मनो उद्य आवतां-एउछे ते ते कर्मनी अवाधा-समय प्री थया पछी अधीत् कर्मने अनुसद करवाना प्रथम समायी मांडीने, ते बंबाएला कमेंनां दळियामांथी वेरी शकाय एयां-वेदवाने योग्य एवां दळियां शेनी रचना-निषेक-थाय छ-उदयना प्राम समये तेनां बहुतर-घगां बचारे-दळिबांओनी निषेक बाय हे अने खार पछीना समयोमां विशेषहीन विशेषहीत कर्मे दिळशांशोनी निधे ह थया करे छे-ते निषेक ठेठ लां सुबी थया करे छ ज्यां सुबी ए वंबाएलुं वर्म आत्मानी साथे टकवानुं होय अर्थात ए बंधाएल कर्मनी स्थिति जेटली निर्माएली होय-ए स्थितिना छेक छेला समय सुधी ए जातनुं निवेचन धया

मृत्रच्छायाः—झानावरणीयम् , दर्शनाऽऽवरणीयम् , यावत्-अन्तरायिकम् , झानावरणीयस्य भगवन् ! कसीगः कियन्तं कालं वन्यस्थितिः प्रज्ञसा ? गौतम ! जघन्येनाऽन्तर्गृहूर्तम् , उत्कृष्टेन जिंशत्सागरोपमकोटा तेथ्यः, त्रंणि च वपंतहसाणि अवाधा, अवाधोनिका कर्मस्थितिः-कर्मानेपेकः, एवं दर्शनावरणीयमपि, वेदनीयं जघन्यं द्वौं समयौ, उत्कृष्टेन यथा ज्ञानावरणीयम्, सोहनीयं जघन्येनाइन्तर्मुहूर्तन्, उत्कृष्टेन सप्ततिसागरीरगर-कोटीकोट्यः, सप्त च वर्षसद्क्षाणि (अवाधा) अवाधोनिका कमैस्थितिः-कमैनिपकः, आयुष्कं जघन्येनाऽन्तर्मुहूर्तम् , उन्कृटेन त्रविश्वितत्सागरोपमाणि पूर्वकोटीत्रिभागाभ्यधिकानि कर्मस्थिति:-कर्मनिषेकः, नाम-पोत्रयोः अधन्येनाऽष्ट मुहूर्तानि, उक्त्रष्टेन विंगतिसानसे मिकोटीकोट्यः, द्वे च वर्षसङ्खे अवाधा अवाधोनिका वर्मस्थितिः -कर्मनिषेकः, अन्तराधिकं यथा झानावरणे यम्: --अनु ०

९. वेदनीयनी अहीं जणावेली ओछामां ओछी स्थिति, कपायरहित आत्माओने ज होय छे अने सक्रपाय आता ओने तो ते, ओछामां ओछु बार मुहूर्त सुरी चोटी रहेछं होय छे. २. आयुष्यने लगती अवाधानो काळ पूर्वधोटीना त्रिमाग जेटलो समजवानो छे. ३. आ शब्दनी विशेष स्पष्टना थाय त माटे आ सूत्रनी ज टीका उपर एक समिस्तर टिंप्पण आपेल छे:—अनु०

१. प्र० छायाः— मुक्तवा खकामबाधां प्रथमायां स्थितं बहुतरं द्व्यम्, शेषे विशेषहीतं यावद् उत्कृष्टमिति सर्वेषाम् ः—अतु०

२. श्रीटीकाकारजीए जणावेली आ गाथा श्रीकिवरामांऽऽचार्यकृत कमेशकृतिमां निवेकप्ररूपणाना प्रसंगमां ८३ मी छे. तेनी टीका, करतां श्रीयशोविजयनी महाराजे आ प्रमाणे जणाव्यं छे:---

[&]quot; सर्वेस्मित्रपि कमेणि यध्यगाने खखम् अवावाकालं मुक्तवा तद् कर्ष्वं दलिकनिक्षेपं करोति. तत्र प्रथमायां स्थिता समयलक्षाणायां चहुतरं द्रेट्यं—कर्मदलिकं निषिञ्चति. इतः प्रथमस्थितेः—ऊर्ध्वं द्वितीयादिस्थितिषु समय-समयप्रमाणासु विशेषहीनं विशेषहीनं कर्मदलिकं निषिश्चति-एवं च तावद् वाच्यं यावत् तत्तत्समयवध्यमानकमणाम् उत्कृष्टाः स्थितः —चत्म-समय इसर्थः. एव च अवाघां मुत्तवा दलिकनिषेकविधिः-आयुर्वेजेकमेणां क्षेयः, आयुषस्तु प्रथमसमयाद् आरम्य दलिकरचना प्रवर्तते. प्रथमसमय एव आयुषः प्रभूतद्षिकनिषेकः, दितीयादि–समयेषु तु यथोत्तरं विशेवहीनो यानचरमसमय इति पश्चसंप्रहोक्तम्-इति दृष्टव्यम् ."

्इदमुक्तं भवति:-बद्धमनि ज्ञानावरणं कर्म त्रीणि विस्तिहस्रतीय यावद्वेद्यमानम् आस्ते, तत्रातकरूतोऽनुभवकालस्तस्य, स च वर्षसहस्त्रत्रयन्यू निर्ह्मशस्त्रागरोपमकोटीकोटीपान इति. अन्ये त्वाहुः— ' अवाधाकालो वर्षसहस्रवयमानः, वाधाकालश्च सामरोपमकोटी-

> करे हे. आ प्रकारनो दलिक-निषेचवनो प्रसंग मात्र आयुष्य कर्म सिवाय बीजां व कीनां-सात कर्मा संबंधे ज समजवानो छे. आयुष्य माटे पण ए प्रसंग नथी एम नथी, पण तेमां तो ज्यारथी आयुष्य बंधाय त्यारथी ज ए किया शरूथइ जाय छे. एटले कमीनिपेक माटे एमां अवाधाकाळने पूरो थवानी जहर रहेती नथी अर्थात् जो के, आयुष्यनो अवाधाकाळ तो होय छे, परंतु ए प्रसंगे अवाधाकाळने वर्जवागी जहर रहेती नथी. वात ए छे के, आयुष्य-बंधना पहेले क्षणे ज एनां वेदा दिळपांओनुं निपेचन रह थइ जाय छे-प्रथम समयमां जं आयुष्यनां घगां दिळियां जोनी विषेक थइ जाय छे अने खार पछीथी ते ठेंड छेहा समय सुबी आयुष्यकां द्ळियांओं विशेषहीन विशेषहीन निषचायां करे छ-पंच उंप्रहमां पण आ हकीकतने जणायेली समज्जानी छे, "-- क्रमेप्र० पृ० ८० (भा०)

आ 'दळियानां विचरन 'नी इकीकत जरा विशेष स्पष्ट थाय एवा हेतुथी ज ए विषे जे कांइ हकी कत पंचसंप्रदमां जणावेकी छे-तेने पण अहीं

संक्षेपमां जणाववामां आवे छेः---

" भोड़े सयरी कोडाकोडीओ वीस नाम-गोयाण, तीसि-पराण चउण्हं तेत्तीसयराई आउस्स "- ११

" मोरे मोहनीये-मोहनीयस्य कर्मण उत्कृष्टा स्थितिः सप्तितिसागरीपम-कोटीकोट्यः. इह दिया स्थितिः, तदाथा-कर्मह्पतावस्थानलक्षणा, अनुमवन योग्या च. तत्र कर्महपतावस्थानलक्षणाम् - एव स्थितिम् - अधिकृत्य उरक्रष्टत् , जघन्यं वा प्रमाणम्÷-अभिवातुम्— इष्टम्—अवसन्तव्यन्, अनुभवधोग्या पुन: अव धाकालहीना. येवां च कमें गां यापयः सागरीपम-कोटीकोट्य:--रेषां तावन्ति वर्षततानि अगायाकालः तया च वश्यति-—' एवड्याऽबाह् वाससया '—१६. तेन मोइनीयस्य ब्रह्म्छा स्थितिः सप्ततिसागरोपमकोटीकेट्य —इति तस्य सप्ततिर्वर्षग्रताने अवाधाकालः. तथाहि-तद् मोहनीयम्-उत्कृष्टिश्यतिकं वदं सर् सप्त तेवर्षशतानि यावद् न कदाचिदपि स्वोदयतो जीवस्य ब.धामुरपादयति-अवाधाकालहीनश्र वर्म : लिकनिषेतः . किमुक्तं भवति ?-पप्ततिवर्षशतप्रवःणेषु समयेषु मध्ये न वेराद्लिकनिञ्चेषं करोति, किंतु तत कर्ष्यम् इति. तथा नाम-भोत्रको-उक्टा रिवति:-विरातिः सागरोऽमको तैकोट्यः, द्वे वर्षे ग्रहसे अवाधा, अज्ञायाकालहीनश्च कमें रिलेकनिषेकः. तथा इतरेषां चतुर्णाम्-इ:नाचरण-दर्शनावरण वेदनीय-अन्तरायाणां त्रिंशत् सागरो समकोटीकोव्यः उत्कृष्टा रिथतिः, त्रीणि वर्षसहसाणि अयाया-सवाधाकारुहीनथ वर्भदेखिकानिषेकः. आयुप उत्कृष्टा रिथतिः -- नत्राञ्चितदतराणि -- सागरीपमाणि पूर्वकोदि-त्रिमागाम्यभिकानि---पूर्व होटि त्रिमागः-- अवाधा--अवाधा रालहीनश्च क्रमेंदलिफनिषेकः "

" गोत्तमकसाइ तणुवा ठिई वेवणियस्य बारस मुहुत्ता, अद्धर नाम-गोदाण, सेसयाणं मुहुत्तंतो." १२

" इह द्विधा वेदनीवस्य जघन्या स्थितिः प्राप्यते, तदाया-सकषागाणाम् , अक्षायाणां च. तत्र अक्षपायि में मुत्तवा शेषाणां क्षपायिणां वेदनीय प्र तस्वी-जघन्या स्थितिः द्वादश मुहूर्नाः, अन्तर्गुहूर्नम् अवाधा-अवाधाका-लहीनथ वर्मद्लिकनिषेकः. नार-पोत्रशेः प्रत्यंकं अग्रै सुहूर्ता कथन्या स्थितिः, अन्तर्मृहूर्तम् अवाधा-अवाधाकालहीनधः वर्भरिकिनिपेकः. तथा शेपाणां ज्ञानावरण—दर्शनावरण—अन्तराय-मोहनीच—आयुपां जघन्या स्थितिः—मुहूर्तान्तः-अन्तर्भुहूर्तम्-अत्रापि अन्तर्मृहूर्तम्-अयाधा-नवरम्—तद् रुष्टुतरमदसेयम् – अवाधावालहीनश कर्मदलि : निरेकः "

" मोहनी ७० कोडाकोडी सामनेतम, नान-गोत्रनी २० कोडाकोडी सागरोपम, बीजां चार्मी ३० कोडाओडी सागरोपम अने आयुष्यनी तेत्रीश सागरोपमः "

" कर्मनी स्थितिना वे प्रकार छेः एक तो कर्मरूपे रहेवं ओ बीजी अनुभव योग्य कर्मक्षे रहेवुं. जे भहीं चधारेनां बधारे के थे छ मां ओडी कम-िह्यतिनी हद जगावैली छे ते-कर्मरूपे रहेवानी स्थितिने अंगे समजवी, अने ए कमें ज्यारथी अनुमववामां अत्वे खारनी स्थितिने अनु-भवयोग्प कर्मरूपे रहेगारी स्थिति ज्ञापत्री अर्थात् कर्मनी कूठ स्थितिनांथी तेना अनुदयनो बखत-अवाबाकाल-बाद करतां जे स्थिति शेष रहे तेने अनुगवयोग्य कर्मरूपे रहेनारी स्थिति समजवी. जे कर्मे री स्थिति जेटलां कोडाकोडी सागरीयमनी होय तेटलां सो वर्ष ते, अनुभवमां अव्या सिराय आत्मा पासे एक अकिनिस्कर जैते थईने पड्यूं रहे हे. उदाहरण तरीके जेग, मोहनीय कमेंनी ७० कोडाकोडी सामरोपुमनी उक्तर स्थिति छे - तो ते ७० सो वर्ष सुधी अर्थात् ७००० वर्ष सुची तो मात्र पक्षं ज रहे छे एटले के कोई भी ही आत्माण, नगा मोहनीय कर्मनी भोटानां मोटी हरवाळी बंध कर्यो होय अने तंबी प्रखर बंध कर्या पछी तुरत ज कांइ ते बंध, ए आत्माने छाम हानि करी शकतो नथी. पण बंध कथीना क्षणंथी ते ७००० वर्ष सुरी हो ए वंश्रने लगडां अणुओ एक सूतेला अज-गरनी जैम मात्र पड़्यां ज रहे छे अने एटलो बखत पसार थया पछा तु≀त ज ते ७००० वर्ष पहेलां करेलो मे ह∽वंब, ए बंध करनार मोही आत्नाने पोतानुं विष चडावना गांडे छे. तात्पर्य ए छे के, ७००० वर्ष वीखा पछी ए बांधेलां मोहने लगतां अणुओमांबी, समसे सबये अनुक प्रमाणवाळा अणुओ पोतानुं फरु आपता जाय छे-पण खार पहेलां- ००० वर्ष पहेलां-ए अणुओमां एक पण अणु पोतानुं फळ अनुभव वी शकतो नथी-अर्थात् ए पडेलां मोहनां अणुओ अल्लाने कर्यु पोतानुं व रू देखा ी शकतां नथी, जेटला वखत सुती ए अगुओ अस्माने भोतानुं निम च गवी शक्तां नथी ते वखतने शास्त्रकारीए 'अगधाकाळ 'ना नामधी जणावेळी है- जे काळमां आत्माने बाधा न थती हो। ते अवाधाकाळ-ए नाम पण बराबर छे. ज्यां सुत्री वर्मी ए अवाधःकाळ होप त्यां सुत्री एक पण अणु (दक्षिक) अनुनवाती नथी ए उद्देपयोग्य अणुओनी रचताने श हा हारोए वर्म दलि निषेक अथवा कर्मे तेवे ह 'कमानिसेओ ' शब्दथी संबोधेली छे — जे वे कमेंनी जैटलो अब धःकाल होय ते बाद करतां वाकी रहेता क्रम-स्थितिना तहन छेदट सुर्वाना समयने 'कमैनिषेक 'शब्दथी ओळखवानो छे. सामेना उ सना दरेक कर्मनो वचारेमां वचारे अने ओछामां ओछो अवाधाकाळ तथा कर्मनिषेककाळ—वाधाकाळ—जणावेलो हे. ते आ प्रमाणे हेः-

कोटीत्रिंशलक्षण:-तद्द्वितीयमपि च कर्मस्थितिकाल:-स चाऽबाधाकालवर्जितः कर्मनिषेककालो भवति. " एवम् अन्यकर्मस्विष अबाधाकालो व्याख्येयः, नवरम्:-आयुषि त्रयस्त्रिंशस्तागरोपमाणि निषकः, पूर्वकोटीत्रिभागश्च अबाधाकाल इति. ' वेयाणिज्यं जहत्ते गं दो समय ' ति केवलयोगप्रस्रयबन्धाऽपेक्षया वेदनीयं द्विसमयस्थितिकं भवति:-एकत्र बध्यते, द्वितीये वेद्यते. यच उच्यते:- " वेयणियस्स जहन्ना वारसः, नाम-गोयाण अह मुहत्तं " ति तत् सक्षषायस्थितिबन्धम् आश्रिस इति वेदितव्यम् इति.

५. कर्मस्थितिना द्वारमां ['तिन्नि य वाससहस्साइं अबाहा-अबाहाऊणिया कम्मिट्टिति-कम्मिनसेगो 'ति] 'लोडन 'अर्थमां वर्तता विश्वाध-काळ. 'बाधु धातु उपरथी 'बाधा 'शब्द बने छे, बाधा एटले कर्मनो उदय, बाधा निह् ते अबाधा अर्थात् ज्यारथी कर्मनो बंध थयो त्यारथी ज्यां सुधी कर्मनो उदये थाय त्यां सुधीना काळने एटले के कर्मनो बंध अने उदय ए वे वचना अंतरकाळने अवाधा कहे छे, ते पूर्वीक्त स्वरूपवाळा अवाधाकाळथी ऊणी कर्मस्थिति-कर्मनो अवस्थानकाळ छे अर्थात् जे कर्मस्थितिनो काळ बीश सागरीपम कोडाकोडी दर्शाच्यो छे ते, ऋण हजार

कर्मनुं नाम.	वधा रेमां वधा रे रिथतिन	ओछामा ओछी स्थित	वधारेमां वधारे अबाधाकाळ.	ओक्रामां ओछो भवाषाकाळ.	वधारेमां वधारे बाधाकाळ- कर्मनिषेक.	ओछामां ओछो बाधाकाळ-कर्मनियेक.
मोइनीय.	७० कोडाकोडी सागरोपम,	† अंतर्मुहुर्ते .	७००० वर्ष.	अंतम्रेह्ती.	७००० वर्षे ओछां ७० को० सागरोपम.	ां अंतर्मुहूर्ते ओछ अंतर्मुहूर्त
ज्ञानावर्ण .	३∙ कोडाकोडी सागरोपम	. ,,,	ै. ३००० वर्षे.	23	३००० वर्षे ओछां ३० को० सामसेपम.	33
दर्शनावरण.	,,	n	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	"	,,	,,
कषायवाळा आ स्माए गांधेळ वेदनीय. *	ρ	बार मुहूते.	, ,	,,		अंतमुहूर्ते ओछां ११ मुहूर्त
अंतराय.	"	અંતર્શકૂર્ત.	21	,,	73	अंतर्मुहूर्ते ओछु अंत मुंहूर्त.
नाम.	२० कोडाकोडी सागरोपम.	आठ सुहूर्तः	२००० वर्ष.	,,	२००० वर्षे ओछां २० को० सागरोपम	अंतर्मुहूर्ने ओछां सात सुहूर्त
गोत्र.	44	79	,,	,,,	19	,,
आयुष्य.	३३ सायरोपम उपरांत पूर्व कोटित्रिभागः	अंतर्भुह्र्ती.	पूर्वकोटित्रिभागः	***	पूर्वकोटि त्रिभागे ओछां फक्त ३३ सागरोपम.	अंतर्भृह्तें अेखें अंतर्भृहृते.

^{*} उपर जणावेलां ए आठे कमोंमां वेदनीय सिवायना सात करें।ने बांधनारा आत्माओ कषायिलम ज होय छे लारे वेदनीय कर्मने बांधनारो आत्माओ कषायिलम ज होय छे एम कांद्र नथी— ए तो अकषायी पण होय अर्थात् कषायों के अकषायी ए बने प्रकारना आत्माओ वेदनीय कर्मने बांधी शके छे तो अहीं जे वेदनीयकर्म विषे जणावेलुं छे ते वेदनीय, कषायी आत्माए बांधेलुं ज गणवानुं छे. अकषायी आत्माए बांधेला वेदनीयने लगती आ वधी हकीकत तो श्रीभगवतीजीना मृळपाठमां अने टीकामां ज टीकाकारश्रीए जणावी दीधी छे:—अनु०

[ौ] अंतर्भृहूर्तनां प्रमाणा-मापो-अनेक जातनां छे माटे ज अहीं एक सरखा अंतर्भृहूर्त शब्दवडे पण जुदां जुदां अंतर्भृहूर्ता समजवानां छे— (पंचसंप्रह—पृ० १७६—(गा० ३१—३२ भा० आ०):—अनु०

t. प्र० छायाः-वेदनीयस्य जवन्या द्वादश, नाम-गोत्राणां अष्ट सुदूर्तानिः-अनु०

बरसना अवाधा काळथी ऊणो जाणवी अने अवाधाकाळथी ऊणो पूर्वीक्तखरूपवाळो दर्मनो अवस्थान काळ-कॅमीनेपेक काळ कहेवाय छे, अनुमय करवा माटे-भोगववा माटे-कर्मनां दळियांनी एक प्रकारनी रचना ते कर्मनिषेठ कहेवाय, अने त्यां प्रयम समयमां घर् निविचे-रचे अने बीजा समयमां विशेष हीन करे, बीजा समयमां विशेष हीन करे ए प्रमाण जेटली उत्कृट स्थितिवाळुं कर्मनुं दळियुं होय तेन -तेटळुं विशेष हीन बनाबे. तेम ज कह्युं छे के '' पोतानी अवाधाने मूकीने प्रथम स्थितिमां-प्रथम समये- घणुं द्रव्य रचे छे अने बाकीना समयोमां (तेटलुं) विशेष हीन करे छे के, ते यावत् कमेपकृतिनी गाथा. (जेटलुं) उत्कृष्ट (होय) ए प्रमाण सर्व कर्म कृतिओ माटे जाणतुं '' आतुं तार र्य आ छे के, बाधेलुं पण ज्ञानावरणीय कर्म त्रण हजार वरस सुधी ज्ञानावरण हो वाधा अवेद्य रहे छे, तथी ते त्रण हजार वरस ऊगो अनुभव-काळ थयो अर्थात् तेनो-ज्ञानावरणीय कर्मनो अनुभवकाळ त्रण हजार वरस ऊगो त्रीश सागरोपम कोडाकोडी थयो, बीजाओ तो कहे छे के, ' त्रण हजार वरसनो अवाधा काळ अने त्रीज कोडाकोडी सागरोपम स्वरूप बाधा काळ ते बन्ने काळ कंमिस्थिति, काळ कहेयाय अने तेमांथी अत्रायां काळने वर्जतां काढी नाखतां-जेटली काळ आवे ते कर्मनिपेक काळ कहेवाय '' ए प्रमाणे बीजां कर्मोमां पण अवायां काळती व्यास्या करवी, विशेष ए छे के, आयुष्यकर्ममां तेत्रीश सागरोपम निषेक काळ छे अने पूर्वकोटीनो त्रिमाग काळ अवायाकाळ छे. [' वयाणेजं जहजेणं दो समय ' ति] वेदनीय कर्मनो जघन्यं काळ वे समयनो छे एटले जे वेदनीय कर्मना बंधमां तद्दन कषाय हित स्थितिए ज्यारे फक्त शरीरादि योग (योग-चेष्टा) ज निमित्तभूत होय एवा वेदनीयना बंधनी अपेक्षाए वेदनीय वेदनीय. कर्म वे समयनी स्थितिवाळुं छे, एक समये बंधाय अने बीजे समये वेदाय. वळी, जे कहेवाय छे के " जघन्ये बार अंतर्मुहूर्त वेदनीयनी स्थित छे अने आठ अंतर्मुहूर्त नाम तथा गोत्रनी जधन्य स्थिति छे " ते सकवाय बंधनी स्थितिनी अवेक्षाए जाणबुं.

अक्षाय-वंध. सक्ष'य-वंध,

कर्मने बांधनारा.

१६. प्र०---णीणावरणिज्ञे णं भंते ! कस्मे कि इत्थी बंधई. पुरिसो बंधइ, नपुंसओ बंधई; णोइतथीं-णौपुरिस-नोनपुंसओ बंधइ ?

१६. उ०-गोयमा ! इत्थी वि बंधइ, पुरिसो वि बंधई, नपुंसओ वि वेधइ; मोइत्थी-नोंपुरिस-नोनपुंसओ सिय बेधइ, ¹सैर्स नो बंधइ; एवं आउगवजाओ सत्त कम्मणगडीओ.

१७. प्र०-आउगं णं भंते ! कम्मं किं इत्थीं बंधइ, पुरिसो वंधइ, नपुंसओ वंधइ, पुच्छा !

१७. उ० - गोयमा ! इत्यी सिय वंधइ, सिय नो वंधइ, एवं तिन्नि वि भाषियव्याः मोइत्थी-नोपुरिस-नोनपंसओ न बंघइ.

१८. प्र० - णाणायरणिज्जं णं भंते ! कम्मं कि संजए बंधइ, अस्तंजए, संजयाऽमंजए बंधइ: नोसंजय-नोअसंजय-नोसंजयासंजए यंघाते ?

१८. उ०--गोयमा ! संजए सिय बंधइ, सिय नो बंधइ; अस्संजए बंधइ, संजयासंजए वि बंधितः नोसंजय-नोअस्संजय-नोसंजयासंजये ण बंधतिः, एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगे हेड्डिला तिण्णि भयणाए, उवरिले ण वंधइ.

१६. प्र० — हे भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्युं स्त्री बांधे ! पुरुष बांने ? के नपुंसक बांधे ? वा नोस्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसक एटले जे स्त्री, पुरुष के नपुंसक न होय एवी जीव बांधे?

१६. उ०--हे गौतम ! स्त्री पण बांधे, पुरुष पण बांधे, अने नपुंसक पण बांधे. पण जे नोस्नी-नोपुरुष-नोनपुंसक होप ते कदाच बांधे अने कदाच न बांध; ए प्रमाणें आयुष्यने वर्जीने सातें कर्म प्रकृतिओं माटें जाणवं.

१७. प्र०- भगवन् ! आयुष्यकर्म ह्यं स्त्री बांधे ? पुरुष बांधे ? के नपुंसक बांधे ? ए प्रमाणे पूर्ववत् प्रक्त करवो.

१७. उ०-हे गौतम! स्त्री बांधे अने न पण बांधे. ए प्रमाणे त्रणे माटे-बीजा व माटे-पण जाणवुं अने जे नो-स्त्री नोपुरुष-नोनपुंसक होय ते तो आयुष्यकर्म न बांधे.

१८. प्र०—हे भगवन्! ज्ञानावरणीय कर्म छु संयत बांबे ? असंयत बांधे ? को संयतासंयत बांधे ? वा जे नो-संयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत होय ते वांधे ?

१८. उ०-हे गौतम! कदाच संयत बांधे, कदाच न बांधे; असंयत बांधे अने संयतासंयत पण बांधे, पण जे नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत होय ते तो न बांधे. ए प्रमाणे आयुष्यने वर्जीने साते कर्म प्रकृतिओ माटे जाणवं, आयुष्यकर्मना संबंधमां नीचेना त्रण-संयत, असंयत अने संयतासंयत माटे भजना-वडे जाणवं-बांधे अने न बांधे एम जाणवं अने उपरनो नोसंयत-नो असंयत-नोसंयतासंयत-अर्थात् सिद्ध-न बांधे.

९. मूलच्छायाः - इत्नावरणीयं भगवन् । कमें कि स्त्री बध्नाति, पुरुषो बध्नाति, नपुंतको बध्नाति; नोस्री-नोपुरुष-नोनपुंतको बध्नाति ! गौतमां स्त्री अपि बध्नाति, पुरुषोऽपि बध्नाति, नपुंसकोऽपि बध्नाति; नोस्त्री—नोपुरुष—नोनपुंसकः स्याद् बध्नाति, स्याद् नो बध्नाति; एवम् आयुक्तवर्जाः सप्त कर्मश्रकृतयः. आयुक्तं भगवन् । कर्म कि स्त्री बध्नाति, पुरुषो वध्नाति, नपुंसको बध्नाति, पुच्छाः । गौतम । स्त्री स्याद् वध्नाति, स्थाद् नो बध्नाति, एवं त्रयोऽपि भणितव्याः; नोस्नी-नोपुरुष-नोनपुंसको न बध्नाति. ज्ञान वरणीयं भगवन्! कुर्म कि संयती बध्नाति, असंयतः, संयताऽसंयतो बध्नाति; नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयतो बध्नाति ! गीतम ! संयतः स्माद् ब्ध्नाति, स्माद् न बध्नाति; असंयतो बध्नाति, संगतासंगतोऽपि बध्नातिः नोसंगत-नोअसंगत-नोसंगतासंगतो न बध्नातिः एवम् अगुब्कवर्जाः सप्ताऽपि, आयुब्कम् अधस्तनःस्रशे भजनगा, **उ**परितनो न बध्नातिः-अनु०

· १९. प्रo — णैाणावरणिञ्जं णं भंते ! कम्मं किं सम्मदिही बंधइ, मिच्छिदिष्टी बंधइ, सम्मामिच्छिदिही बंधइ ?

. १९. उ०—गोयमा ! सम्मदिही सिय बंधइ, सिय नो वंधरः, मिच्छदिर्द्धी वंधरः, सम्मामिच्छदिर्द्धी वंधरः, एवं आउग-वञ्जाओ सत्त वि, आउए हेडिला दो भयणाए, सम्मामिच्छदिई। न वंधइ.

२०. प्०--णाणावरणिञ्जं कि सन्नी बंधइ, असनी बंधइ; नोसनी-नोअसनी बंधइ ?

२०. उ०--गोयमा ! सनी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ; उवरिल्ले भयणाए, आउनं होहिला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ.

२१. प्र०--णाणावरणिज्जं कम्मं किं भवसिद्धिए बंधइ, अभवसिद्धिए वंधइ, नेाभवसिद्धिअ-नोअभवसिद्धिए वंधइ ?

२१. उ०-गोयमा ! भवसिद्धिए भयणाए, अभवसिद्धिए बंधइ; नोभनसिद्धिअ-नोअभवसिद्धिए न बंधइ, एवं आउग-वज्जाओ सत्त वि, आउगं हे दिहा दो भयणाए, उवारिले न बंधइ.

२२. प्र०--णाणावराणिञ्जं कम्मं किं चवखुदंसणी, अचक्खु-दंसणी, ओहिदंसणी, केवलदंसणी ?

२२. उ०-गोयमा । होईला तिण्णि भयणाए, उनिरिल्ले न बंधइं, एवं वेदणिज्ञवज्ञाओं सत्त विं, वेयणिज्जं हेट्टिला तित्रि बंधाति, केवलदंसणी भयणाए.

१९. प्र०-हे भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म छुं सम्य ग्रष्टि बांचे ? मिथ्यादृष्टि बांचे के सम्यग्मिथ्यादृष्टि दांचे ?

१९. उ० - हे गौतम! सम्यम्दि कदाच बांधे अने कदाच न बांधे, मिध्यादृष्टि बांधे अने सम्यग्मिध्यादृष्टि पण बांधे. ए प्रमाणे आयुष्य सित्रायनी साते कर्म प्रकृतिओ माटे जाणवुं, आयुष्यमां नीचेना वे सम्यरदृष्टि अवे मिथ्यादृष्टि भजनावडे-कदाच न बांघे अने कदाच बांचे अने सम्पर्गमध्यादृष्टि (तो सम्पर्गमध्या-दृष्टिनी दशामां) न बांधे.

२०. प्र०— हे भगवन्! ज्ञानावरणीय कर्म ह्यु संज्ञी जीव बांधें ? असंज्ञी जीव बाधे ? के नोसंज्ञी अने नोअसंज्ञी बांधे ?

२०. उ० — हे गौतम ! संज्ञी कदाच बांवे अने कदाच न असची वंपर्; नोसची-नोअसची न वंधर्, एवं वेयिणिज्जा SSउन वांचे, असंज्ञी वांचे अने नोसंज्ञीनोअसंज्ञी जीव न वांचे. ए प्रमाणे वज्जाओं छ कम्मप्पगडीओ, वेयणिज्जं हेहिला दो बंधांत, वेदनीय अने आयुष्य वजीने छ कर्मप्रकृतिओ माटे जाणवुं अने वेदनीयने नीचेना वे संज्ञी अने असंज्ञी बंधे अने उपरनो नोसं-क्षीनोअसंक्षी भजनायडे-कदाच बांधे अने .कदाच न बांधे अने आयुष्यने नीचेनां वे भजनाए बांधे अने उपरनो न बांधे,

> २१. प्र० — हे भगवन् ! शुं भवसिद्धिक ज्ञानावरणीय कर्म बांवे ?, अभवसिद्धिक ज्ञानावरणीय कर्म बांघे ? के नोभव-सिद्धिक अने नोअभवसिद्धिक ज्ञानावरण कर्म बांघे ?

> २१. उ० — हे गौतम! भवसिद्धिक भजनाए बांधे एटले कदाच बांधे अने कदाच न बांधे, अभवसिद्धिक ज्ञानावरण कर्म बांधे अने नोभविसिद्धिक अने नोअभविसिद्धिक न बांधे, ए प्रमाणे आयुष्य सिवायनी साते कर्मप्रकृतिको माटे जाणवुं, आयुष्य कर्मने नीचेना बे-भवसिद्धिक-भव्य-अने अभवसिद्धिक-अभव्य, ते भजनाए बांधे-ऋदाच बांधे अने न पण बांधे अने 'उपरनी-नोभवसिद्धिक अने नोअभवसिद्धिक एटले भव्य नहि तेम अभव्य नहि अर्थात् सिद्ध, ते न बांधे.

> २२. प्र० - हे भगवन् ! शु चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी, अयधिदर्शनी अने केवलदर्शनी ज्ञानावरण कर्म बांधे ?

> २२. उ० - हे गाँतम ! हेठळना त्रण-चक्षुर्दर्शनी, अचक्षु-र्दर्शनी अने अवधिदर्शनी ए त्रण भजनाए बांवे एटले कदाच बांधे अने कदाच न बांधे, तथा उपरनी-केवलदर्शनी-ते न बांध, ए प्रमाणे वेदनीय सिवायनी साते कमर्फ्छतिओ माटे जाणवुं, वेदनीयक्रमने नीचेना त्रण बांधे छे अने केवलदर्शनी कदाच बांधे अने कदाच न बांधे.

१. मूलच्छायाः---ज्ञानावरणीयं भगवन्! कर्म किं सम्यग्द्दष्टिर्वध्नाति, मिथ्याद्दष्टिर्वध्नाति, सम्यग्निथ्याद्दृष्टिर्वध्नाति ? गौतम ! सम्यग्दृष्टिः स्माद् बध्नाति, स्माद् न बध्नाति; मिध्यादृष्टिर्बध्नाति, सम्यग्मिध्यादृष्टिर्बध्नाति; एवम् आयुष्कवर्त्ताः सप्ताऽपि, आयुष्कम् अवस्तना द्वा भजनया, ैसम्बरमिथ्याद्दष्टिने बध्नाति. ज्ञानावरणीयं कि संशी बध्नाति, असंशी बध्नाति; नोसंशी-नोऽयंशी बध्नाति ! गातम ! संज्ञी स्याद् बध्नाति, स्याद् न ं बध्नाति, असंबी बध्नाति; भोसंबी-नोऽसंबी न बध्नाति, एवं वेदनीया-ऽऽयुष्कवर्जाः षद कर्मअकृतयः, वेदनीयम् अश्वस्तना दे। वस्तीतः, उपरितनो भर्जनया, आयुष्क अधस्तनी द्वा भजनया, उपरितनी न बध्नाति. झानावरणीयं कर्म कि भवसिद्धिको बध्नाति, अभवसिद्धिको बध्नाति; नोभवसिद्धिक-ं नोअभवसिद्धिको वध्नाति ? गीतम ! भवसिद्धिको अजनया, अभवसिद्धिको ब्झाति, नोभवसिद्धिक—नोडभवसिद्धिको न ब्झाति, एवम् आयुष्कवर्जाः सप्ताइपि, आयुष्कंम् अधस्तना द्वा मजनया, उपरितनो न बझाति. ज्ञानावरणीयं कर्म कि चक्षुर्दर्शनी, अवध्वदर्शनी, अवधिदर्शनी, केवलदर्शनी ? गातम ! . अधस्तनास्त्रयो मजनया, उपरितनो न बधाति, एवं वेदनीयवर्जाः सप्तांऽपि, वेदनीयम् अधस्तनाक्षयो बधान्ति, केवलदर्शनी मजनयाः-अनुकर

२२ प्राप्त मान्याणिकां क्रमं कि पञ्जताओ वृंप्र_{ाः} अ-पञ्जताओ वंधइ, नोपञ्जतप-नोअपञ्जतए वंधइ ?

२३. उ० — गोयमा । पञ्जतए भयणाए, अपञ्जताए वंधाः, नोपञ्जत्तय नोअपञ्जताए न वधुः: एवं आउम् ञ्जाओ, आउमा हिंदिसा दो भयणाए, उनस्क्षे न वंधः

२४. प्र० — णाणावरणं कि भासए बंधइ, अभासए० १

२४. उ०—गोयमा ! दो वि भयणाए, एवं वेदणिज्ञ-बज्जाओ सत्त् वि. वेदणिजं भासए बंघइं, अभासए भंयणाए.

२५. प्र॰—णाणावराणिकां किं परित्ते बंधइ, अपरित्ते बंधइ, नोपरित्त-नोअपरित्ते बंधइ !

रें ५. उ०—गोयमा ! परित्ते भयणाए, अपिरते बंधइ, नोपिरत्त नोअपिरते न वंधइ; एवं आउगवजाओ सत्त कम्मण-गडीओ, आउयं परित्तो नि, अपिरत्तओ नि भयगाए, नोपिरतः नोअपिरत्तो न बंधइ.

२६. प्र०--णाणावरणिजं कम्मं किं आभिणिवोहियणाणी बंधइ, सुयणाणी, ओहिणाणी, मणपज्जवनाणी, केवलणाणी० ?

२६. उ०--गोयमा ! हेडिला चत्तारि भयगाए, केवलः णाणी न वंघर, एवं वेयणिजवजाओ सत्त वि, वेयणिजं हेडिला चत्रारि बंधांते, केवलणाणी भयणाए.

२७. प्र०--णाणावरणिज्ञं किं मइअवाणी बंधइ, सुयअ-नाणि बंधइ, विभंगअनाणि बंधइ ?

२७. ड०--गोयमा! आउगवजाओ सत्त वि वंधीते, आउगं भयणाए. ार्गारे हैं। प्रश्निक है। स्थानक है। यो प्रश्नीत का तावरणीय कर्म बांधे ? आर्थात क जीय ज्ञानुस्यपूर्विक कर्म होते ? क्लिक्ट्रोस्श्रीत् अते हो स्पर्शात जीत ज्ञानावरण कर्म बांधे ?

२.३. इत चह आतम श्रिक्षंस होत स्मानग्र जानावरप्रिष्ठ कर्म बांचे, अपर्याप्त जीव ज्ञानावरण कमे बांचे अने न्योप्राध्य तथा नोअपर्याप्त एटले सिद्ध जीव ज्ञानावरणीय कर्म न बांचे, ए प्रमाणे आयुष्यने वर्नीने साते कर्मप्रकृतिओ माटे जाणवं अने अयुष्यने नीचेना बे नपर्याप्त अने अपर्याप्त -भजनाए बांधे, अने उपरनो—नोपर्याप्त तथा नो अपर्याप्त -सिद्ध न बांधे.

२४. प्र०—हे भगवन् ! छुं भाषक जीव ज्ञानावरण कर्भ बांधे ! के अभाषक बांधे !

२४. उ० — है गौतम ! बन्ने-भाषक अने अभाषक ए बने-जीव झानावरण कर्म भजनाए बांते, ए प्रमाणे वेदनीय वृजीने साते कर्भप्रकृतिओ माटे जाणवुं अने वेदनीय कर्म भाषक बांधे तथा अभाषक वेदनीय कर्मने भजनाए बांधे.

२५. प्र० — हे भगवन् ! शुं परित्त एक शरीरवाळो एक जीव, ज्ञानावरण कर्म बांधे ? अपरित्त जीव ज्ञानावरण कर्म बांधे ? के नोपरित्त तथा नोअपरित्त जीव ज्ञानावरण कर्म बांधे ?

२५. उ० — हे गैतम! परित्त जीव, भजनाए ज्ञानांवर्ग कर्म बांधे, अपरित्त जीव ज्ञानांवरण कर्म बांधे अने नौ ।रित्त तथा नोअपरित्त एटले सिद्ध जीव न बांधे, ए प्रमाणे आयुष्पने वर्जीने साते कर्मप्रकृतिओ माटे जाणवं, अने परित्त तथा अपरित्त ए बन्ने पण आयुष्प कर्मने भजनाए बांधे छे अने नौपरित्त तथा नोअपरित्त बांधतो नथी.

२६. प्र०—हे भगवन् ! शुं आभिनिबेशिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी अविश्वानी, मनःपर्यवज्ञानी के केवल्ज्ञानी ज्ञानावरण कर्म बांधे ?

२६. उ०—हे गीतम ! हेठळना चार एउले मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी अने मनःपर्यवज्ञानी ए चार भजनाए बांधे छे अने केन्नल्ज्ञानी बांधती नथी, ए प्रमाण वेदनीयने वजीन बाकीनी सात कर्मप्रकृतिओं माटे जाणी लेनुं अने वेदनीय कर्मन हेठळना चार बांधे छे अने केन्नल्ज्ञानी भजनाए बांधे छे.

२७. ४० — है भगवन् ! शुं मृतिअज्ञानी, श्रुतअज्ञानी अने विभंगज्ञानी ज्ञानावरणीय कर्म बांधे !

२७. उ--हे गौतम! आयुष्यने वर्जीने साते कर्भ प्रकृतिओ बांधे अने आयुष्यने भजनाए बांधे.

^{9.} मूलच्छायाः—हानावरणीयं वर्म कि पर्याप्तको बध्नाति, अपर्याप्तको बध्नाति, नो र्याप्तकने ना अप्रथाप्तको वध्नाति । गातम । पर्याप्तको भजनया, अपर्याप्तको बध्नाति, नोपर्याप्तक —नोऽपर्य प्तको न बध्नाति; एउम् अप्युष्कवर्जाः, आयुष्कम् अध्यस्तै। द्वे। भजनया, उ।रितनो न बध्नाति, ह्वानायरणं कि भावको बध्नाति, अभावको भजनया, एवं नेद्रनी रवर्जाः सप्ताऽति, नेद्रनी । भजनया, अपरीतो बध्नाति, अभावको भजनया, क्वानावरणीयं कि परीतो बध्नाति, अपरीतो बद्वाति, नोपरीत—नोअपरी । बध्नाति । गीतम । परी । भजनया, अपरीतो बध्नाति, नोपरीत नोऽपरीतो न बध्नाति; एवम् आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मपकृतयः, आयुष्कं परीतोऽपि, अपरीतोऽपि भजनया, नोपरीत—नोऽपरितो न बध्नाति, ह्वानावरणीयम् कर्म किम् आभिनिवीधिकज्ञानी बध्नाति, श्रुतङ्कानी, अवधिक्वानी, मनःपर्यविक्वानी, केवलक्वानी । गीतम । अध्यस्तनाश्चलारो अध्यस्तनाश्चलारो । बध्नाति, श्रुतङ्कानी न बध्नाति, ए विद्वनीयवर्जाः सप्ताऽपि, वेदनीयम् अधस्तनाश्चलारो बध्नाति, केवलक्वानी भजनया, ह्वानावरणीयं कि मद्यक्वानी बध्नाति, श्रुतङ्कानी बध्नाति, अताऽङ्कानी बध्नाति, अताऽङ्कानी बध्नाति, अताऽङ्कानी बध्नाति, अत्राञ्चानी बध्नाति, अताऽङ्कानी बध्नाति, अत्राज्ञानी वध्नाति, अत्राज्ञानी, अत

२८. प्र०--णॉणानरणिजं ।कें मणजोगी वंघइ, वयजोगी वंघइ, कायजोगी वंघइ, अजोगी बंघइ ?

२८. उ०—गोयमा ! हो द्विला ति नि भयणाए, अजोगी न वंघइ; एवं वेयणिज्ञवज्ञाओ, वेयणिजं हे द्विला वंघांते, अजोगी न बंधइ.

े २९. प्र०--णाणावरणिञ्जं किं सागारोवडत्ते वंधह, अणा-गारोव उत्ते बंधह ?

२९. उ०-गोयमा ! अहुसु व भयणाए.

३०. प्रo—णाणायरणिज्जं कि आहारए बंधइ, अणाहारए बंधइ ?

३०. उ० — गोयमा ! दो नि भयणाए, एवं नेयणिज्जाऽऽ-उगवज्जाणं छण्हं, वेयणिज्जं आहारए, बंधइ, अणाहारए भय-णाए. आउए आहारएं भयणाए, अणाहारए न बंधइ.

२१: प्र०; णाणावराणिजं किं सुहुमे, बादरे बंधइ, नोसुहुम-नोबादरे बंधइ ?

३१. ७० —गोयमा ! सुहुमे वंधइ, बादरे भयणाए; नोसुहुम-नोधादरे न बंधइ; एवं आउगवजाओ सत्त वि, आउए सुहुमें, बांयरे भयणाए ति; नोसुहुम-नोबियरे न वंधइ.

रे २. प्र०--णाणावरणिजं कि चरिमे, अंचरिमे बंधइ १

३२. ड०-गोयमा ! अह नि भयणाए.

२८. प्र०—हे भगवन् ! शुं मनयोगी, वचनयोगी, काययोगी अने अयोगी ज्ञानावरणीय कर्म बांधे !

२१. उ० — हे गौतम ! हेठळना त्रण-मनयोगी, वचनयोगी अने कामयोगी, ए त्रण-भजनाए झानावरण कर्म बांधे अने अयोगी झानावरणने न बांधे, ए प्रमाणे वेदनीय सिवायनी साते कर्मप्रकृतिओ माटे जाणवुं अने वेदनीय कर्मने हेठळना त्रण बांधे अने अयोगी न बांधे.

२९. प्र०—हे भगवन्! शुं साकार उपयोगवाळी के अनाकार उपयोगवाळो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ?

२९. उ० — हे गौतम! आठे कर्म प्रक्वातीओ भजना ए बांधे.

३०. प्र०—हे मगवन् ! शुं आहारक के अनाहारक जीव ज्ञानावरणीय कर्मने वांधे ?

३०. ३० — हे गौतम ! बने पण भजनाए बांघे, ए प्रमागे वेदनीय अने आयुष्य सिवायनी छ कर्म प्रकृति माटे जाणवुं, अने वेदनीय कर्म, आहारक जीव बांघे तथा अनाहारक जीव भजनाए बांधे तथा अनाहारक जीव भजनाए बांधे तथा अनाहारक जीव न बांधे.

३१. प्र०—हे भगवन्! शुं सूक्ष्म जीव, बादर जीव के नोसूक्ष्म-नोबादर जीव ज्ञानावरण कर्मने बांधे ?

३१. उ० —हे गौतम! स्दम जीव बांधे, बादर जीव भजनाए बांधे अने नोस्दम—नोबादर जीव न बांधे; ए प्रमाणे अध्युष्यने म्कीने साते वर्भ प्रकृतिओ माटे पण जाणवुं अने आयुष्यकर्भने सूदम जीव अने बादर जीव, ए बन्ने भजनाए बांधे छे, तथा नोस्दम—नोबादर जीव—सिखना जीव—नथी वांधता.

३२. प्र०—हे भगवन् ! शुं चरम जीव के अचरम जीव ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ?

३२. उ०--हे गौतम ! ए बने जीव आठे कर्मप्रकृतिओने भजनाए बांधे.

६. स्नीद्वारे:- णाणावराणिकां णं मेते ! कम्मं किं इत्थी बंधइ ? ' इत्यादि प्रश्नः. तत्र न स्त्री, न पुरुषः, न नपुंसको वेदोदयरिहतः, स चाऽनिवृत्तिबादरसंपरायप्रभृतिगुणस्थानकवर्ती भवति, तत्र चाऽनिवृत्तिबादरसंपराय-सूक्ष्मसंपरायौ ज्ञानावरणीयस्य बन्धकौ सप्तविध-पड्विधवन्धकत्वात् . उपञ्चान्तमोहादिस्तु अवन्धकः- एकविधवन्धकत्वात् , अत उक्तमः-स्याद् बन्धाति, स्यात्र बन्धाति. अवन्धकाले तु न बन्धाति अवन्धकाले गं मेते ! ' इत्यादि-प्रश्नः तत्र स्थादित्रयमायः स्याद् बभाति, स्थान बभाति-वन्धकाले बन्धाति, अवन्धकाले तु न बन्धाति इति-आयुषः सक्षुदेव एकत्र भवे बन्धात् . निवृत्तस्यादिवेदस्तु न बन्धाति-निवृत्तिबादरसंपरायादिगुणस्थानकेषु आयुर्बन्धस्य व्यवन्धिनत्वात् . संयतद्वारे:- 'णाणावरणिष्कं ' इत्यादि . संयतः आद्यसंयमचतुष्टयवृत्तिर्ज्ञानावरणं वन्धाति, यथाद्वयातसंयमसंयतस्तु उपशान्तमोहादिने बभाति अत उक्तमः- 'संजवे सिय ' इत्यादि असंयतो स्थियादष्ट्यादिः, संयतासंयतस्तु देशविरतः-तौ च बभ्रतः

१. मूलच्छायाः —कानावरणीयं कि मनोयोगी बध्नाति, बचोयोगी बध्नाति, काययोगी बध्नाति, अयोगी बध्नाति । गीतम! अध्यतनाश्चयो मजनया, अयोगी न बध्नाति, एवं वेदनीयवर्जाः, वेदनीयम् अध्यतना बध्निति, अयोगी न बध्नाति. क्षानावरणीयं कि साक्षारीपयुक्तो बध्नाति, अनाकारीपयुक्ती बध्नाति । गीतम! अध्यतनाश्चयो मजनया, एवं वेदनीया- प्रत्युष्कवर्जानां घण्णाम् , वेदनीयम् आहारको बध्नाति. अनाऽऽहारको भजनयाः आयुष्कम् आहारको भजनया, अनाहारको न बध्नाति. क्षानावरणीयं कि सूक्ष्मः, नादरो बध्नाति, नोसूक्षम-नोबादरो वध्नाति । गीतम! सूक्ष्मो बध्नाति, बादरो भजनयाः नोसूक्षम-नोबादरो न बध्नाति । स्वायुष्कवर्जाः सप्ताऽपि, आयुष्कं सूक्ष्मः, बादरो भजनया इतिः नोस्क्ष्म-नोबादरो न बध्नाति । क्षानावरणीयं कि वरमः, अयुरमो बध्नाति । गीतमः । अञ्चरपि भजनयाः सप्ताऽपि, आयुष्कं सूक्ष्मः, बादरो भजनया इतिः नोस्क्ष्म-नोबादरो न बध्नाति । क्षानावरणीयं कि वरमः, अयुरमो बध्नाति । गीतमः। अष्टाऽपि भजनयाः—अतु

निषिद्धसंयमादिभावस्तु सिद्धः, स च न बध्नाति-हेल्वभावाद् इसर्थः. ' आउगे हे हिला ति वि भयगाएं ' ति. संयतः, असंयतः, संयतासंयतश्च आयुर्बन्यकाले बन्नाति, अन्यदा तु न इति भजनया इत्युक्तम् . ' जयारिक्षे न बंधह ' ति संयतादिषु उपरितनः सिद्धः, स चाऽऽयुर्न बन्नाति. सम्पम्दृष्टिद्वारे:- ' सम्पादृष्टी सिय वंबह ' ति सम्पम्दृष्टिवीतरागः, तदितस्थ स्यंत् ; तत्र वीतरागो ज्ञानुत्रर्ग न बध्नाति-एकविधयन्वकत्वात् ; इतस्थ बध्नाति इति स्याद् इत्युक्तम् . मिथ्यादृष्टि-मिश्रदृष्टी तु बध्नीत एव इति. ' आउए है। हेला दो भयणाए ' ति सम्यग्दछि-मिध्यादछी आयुः स्याद् बन्नीतः, स्यान्न बन्नीत इत्यर्थः. तथाहिः-सम्यग्दछिरपूर्वकरणादिरायुर्न बन्नाति, इतरस्तु आयुर्वन्धकाले तद् बध्नाति, अन्यदा तु न बच्नाति. इसेवं मिथ्यादृष्टिर्पि, मिश्रदृष्टिस्तुं आयुर्ने बध्नाति एवं -तद्वन्वाऽध्यंवसाय-स्थानाऽभावादिति, संशिद्वारे:- 'सनी सिय बंधइ ' ति संज्ञी मनःपर्यः तियुक्तः, स च यदि वीतरागस्तद्वा ज्ञानाऽऽवरंगं न बच्नाति, यदि पुनरितरस्तदा बन्नाति; ततः 'स्याद् ' इत्युक्तम् . 'असत्री बंधइ ' ति मनःपर्याप्तिविकलो बन्नात्येव. 'नोसत्री-नोअसात्रि ' ति केवली, सिद्ध न बन्नाति-हेल्वभावात् . 'वेयिनिज्जं होड्डेहा दो यंपेति 'त्ति -संज्ञी, असंज्ञी च वेदनीयं बन्नीतः, अयोगि-सिद्धवर्जानां तद्वत्य रत्यात् . ' उवारिले भयणाए ' ति उपरितनो नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी, स च सपोगा-ऽयोगकेवली, सिदश्र. तत्र यदा सथोगकेवली तदा वेदनीयं बध्नाति, यदि पुनस्थोगिकेवली, सिद्धो वा तदा न बध्मति, अतो भजनया इत्युक्तम् . " आउगं हे*डिला दो भयणाए* ' ति संज्ञी, असंज्ञी चाऽऽगुः स्याद् बध्नी :-अन्तर्मुहूर्तमेव तद्भवनात्. " उवरिले न वंबह " ति केवली, सिद्धशाऽऽयुर्ने बध्नातीति. भवसिद्धिकद्वारे-अ भगानिद्धः भगगाए ! ति भवसिद्धिको यो वीतरागः-स न बध्नानि ज्ञानांवरणम् , तदन्यस्तु बध्नाति-इति भजनया इत्युक्तम् . ' नोगवासिद्धिअ - नोअभवसिद्धिए ' ति सिद्रः - स च न बध्नाति, ' आउयं हें। हेला दो भवणाए ' त्ति भव्यः, अभव्यश्च आयुर्वन्धकाले बन्नीतः, अन्यदा तु न बन्नीत इत्यक्ती भजनया इत्युक्तम् . ' उवारिले न बंधइ ' ति सिद्धो न बन्नाति-इत्पर्थः. दर्शनद्वारे:-' हें हिला तिनि भयणाए ? ति चक्षु-रवक्षु-रविध-र्शनेनो यदि छग्रस्थवीतरागास्तदा न ज्ञानावरणं बधन्ति-वेदनीयस्यैव बन्धकावात् तेपाम् , सरामास्तु बन्नन्ति, अतौ भजनया इत्युक्तम् . ' उविरिल्ले न बंघइ ' ति केवलदर्शनी भवस्थः, किह्नो वा न बन्नाति-हैलभावाद् इत्यर्थः. ' वेयाणिज्जं हेड्डिला तिभि बंधिते ' ति आपास्त्रपो दर्शनिन:- छग्रस्थ-वीतरागाः, सरागाश्च वेदनीयं वध्नत्येयः ' केवलदंसणी भवणाए ' ति केवलदर्शनी सपोगी केवली बध्नाति, अयोगी केवली, सिद्धश्च वेदनीयं न बध्नातीति भजनया इत्युक्तम् . पर्याप्तकद्वारे:--' पञ्जत्तए भयणाए ' ति पर्याप्तको बीतरागः, सरामश्च स्थात् , तत्र वीतरामो झानावरणं न बन्नाति, सरामस्तु बन्नानि, ततो भजनया इत्युक्तम् . ' नेतपञ्जतय-नोअपञ्जतप् न बंध्रह ' ति सिद्धो न बभातीत्वर्धः, ' आउगं होद्देला दो भयणाए ' ति पर्याप्तका-अपर्योप्तको आयुस्तद्वन्धकाले बज्जीतः, अयहा न इति भजना, 'जवरिष्टे न ' इति सिद्धो न बध्नाति इत्यर्थः. भाषकद्वारे 'दो नि भयणाए ' ति भाषकी भाषात्रन्धिनान् , तदन्यस्तु अभापकः तत्र भाषको वीतरागो ज्ञानावरणीयं न बानाति, सरागस्तु बन्नाति, अभाषकस्तु अयोगी, सिद्धध न बानाति, पृथिव्य द्याः, विष्रहगसाऽऽपन्नाश्च वध्दन्तीति-'दो वि भयणाए ' इत्युक्तम् . 'वेयणिज्जं भासए बंधइ ' ति सयोग्यवसानस्याऽधि भाप हस्य सदेदनीपव-न्धकत्वात. 'अभासए भयणाएं कि अभावकातु अयोगी, सिद्धश्च न बध्नाति. पृथिव्यादिकस्तु बध्नातीति भजना. परीतद्वारे:- पितत्ते भयणाएं ' ति परीतः प्रत्येकशरीरः, अल्पसंसारो वा–स च वीतरागोऽपि स्यात् , न चाऽसौ ज्ञानावरणीयं बद्नाति, सरागपरीतस्तु बन्नातीःति भजना. 'अपरित्ते बंधक् ' ति आपितः साधारणकायः, अनन्तसंसारो वा-स च बन्नाति. ' नोपारित्त-नो अपरित्ते न बंबक् ' ति सिद्धों न बन्नातीसर्थः. 'आउयं परित्तों वि, अपरित्तों वि भयणाए'ति प्रसेकश्रीरादिरायुर्वन्ध हाले एव आपुर्वश्रातीति, नतु सर्बदा-ततो भजना इति. सिद्धस्तु न ब ासेव इसत आहः-'नोपरित्त-' इत्यदि. ज्ञानद्वारेः-' हो द्विला च जारे भवणाए 'ति अभिनेवोधिकः क्रानिप्रभृतयश्वत्यारो क्रानिनों क्रानावरणीयं वीतरागाऽवस्थायां न बन्नान्ते, सरागाऽवस्थायां तु बन्नन्तीति भजनाः 'वेयाणेऽजं हे। द्विष्टा चत्तारि वि बंधंति'ति वीतरागाणामि। छद्मस्थानां वेदनीयस्य बन्धकतात् , 'केयळगाणी भयणाए ' ति सयोगिकेवलिनां वेदनीयस्य बन्धनात् , अयोगिनाम् , सिद्धानां चाडवन्धनाद् भजना इति. योगद्वारे:- हिंद्विला ते । भयणाए 'ति मनो-वाक् -काययोगिनो ये उपशान्तमोह-क्षीणमोह-सथोगिकेविटनस्ते ज्ञानावरणं न बर्ित, तदन्ये तु बन्नन्तीति भजना. 'अजोगी न बंधइ 'ति अयोगी अयोगिकेविटी, सिद्धश्च न बन्नाति इसर्थः. ' वेयणिकां हे दिल्ला वंधंि 'ति मनोयोग्यादयो बन्निति, संयोगानां वेदनीयस्य बन्धाःस्वात् . ' अजोगी ण वंधर् ' क्ति अयोगिनः सर्वकर्मणाम् अबन्धकत्वाद् इति. उपयोगद्वारेः-' अहसु वि भयगाए ' ति साकारा-ऽनाकरी उपयोगौ सयोगानाम् , अयोगानां च स्याताम्-तत्र उपयोगद्वयेऽि सयोगा झानात्ररणादिप्रकृतीर्यथायोगं वध्नन्ति, अयोगास्तु न-इति भजना इति आहारक-हारे:-'दो वि भयणाए' ति आहारको वीतरागोऽपि भवति, न चाऽसौ झानावरणं बध्नाति, सरागस्तु स बध्नातीति आहारको भजनया बन्दाति. तथा अनाहारकः केवली, विप्रहगलाऽऽपनश्च स्थात् –तत्र केवली न बन्नाति, इतरस्तु बन्नातीति—अनाहारकोऽपि भजनया इति. ' वेयणिजं आहारए बंधइ ' ति अयोगिवजीनां सर्वेत्रां वेदनीयस्य बन्धकत्वात् . ' अणाहारए भयणाए ' ति अनाहारको विष्रहराखांऽऽपन्नः, समुद्धातगतकेवली च बन्नाति, अयोगी, िद्धश्च न बन्नाति इति भजनाः : आउए आहारए भयणाए ! ति आयुर्बन्धकाले एवाइऽयुषी वन्धनात् , अन्यदा त्वबन्धनाद् भजनाः इति. ' अणाहारए ण वधेह ' ति विप्रहगतिग्रतानामपि

आंयुष्कस्याऽवन्धकत्वादिति. सूक्षमद्वारे 'बायरे भयणाएं के वीतरागवादराणां ज्ञानावरणस्याऽबन्धकरवात् , सरागवादराणां च बन्धकत्वाद् भजना इति, निद्गस्य पुनरबन्धकावाद् आहः- ' नोसुहुम-'इसादि, ' आउए सुहुमे, वायरे भयणाए ' ति वन्धकाले बन्धनात्, अन्यदा खबन्धनाद् भजना इति. चरमद्वारे:- ' अह ति भयणाए ' ति इह यस्य चरमी भी भविष्यतीति स चरमः, त्यस्य तु नाऽसौ भविष्यति सोऽचरमः, सिद्धश्वाऽचरमः, चरमभगाऽभावात् , तत्र चरमो यथायोगम् अष्टाऽपि बन्नाति, अयोगित्वे तु न इत्येवं भजना, अचरमस्तु संसारी अष्टाऽपि बध्नाति सिद्धस्तु न इत्येवमत्राऽपि भवना इति.

न स्त्री-न पुरुष-न-नपुंसक.

न संबत्न असंबत न संवतासंयत.

नो संशी- ो असंशी.

नो भवतिद्विक-नो अभःसिद्धिकः

केवनदर्शनी.

् ६. स्त्रीद्वारमां [. ' णाणावरणिजं णं भंते ! कम्मं किं इत्थी बंघइ? ' इत्यादि] प्रश्न छे. तेमां, वेदना उदय विनानो एटछे जे जीव शरीरे करीने कदाच स्त्री, पुरुष के नपुंसक होय परंतु स्त्रीत्व, पुरुषत्व के नपुंसकत्वने लगता विकार (वेद) विवानो होय ते न स्त्री, न पुरुष अने न नपुंसक कहेवाय अने ते, अनिवृत्तिवादरसंपरायादि गुणस्थानकमां होय छे अने तेमां अनिवृत्तिवादरसंपराय अने सुक्षासंतरायने ज्ञानावरणीयना यंवक कहा है. कारण के, ते सप्तविध कर्मना के षड्विधकर्मना बंधक है अने उपशांतमोहादि गुणस्थानकवाळो ते न स्त्री, न पुरुष अने न न गुंसकरूप महात्मा तो तेनो अवंधक छे, कारण के. ते एकविध कर्मनो बंधक छे माँट ज कर्युं छे के, कराच बाबे अने कराच न बांधे. [आउमे ल मंते ! ' अ बुष्य. इत्यादि] प्रश्न हैं, तेमां स्त्री वंगरे ए त्रणे जीवो आंबुष्य बांधे अने न बांधे एटले आयुष्य-तंधकाले बांधे अने ज्यारे आयुष्यनी बंधकाल न होय त्योरे न बांधे, कारण के, एक भवमां आयुष्य एक ज बार बंधाय छे. अने जे स्यादिवेंद रहित छे ते तो बांधती नथी, कारण के, नियुत्तिवादरसंपराय वेगेरे गुणस्थानकोमां आयुष्य-बंधनो व्यवच्छेद थाय छे. संयतद्वारमां ['णाणावरणिजं 'इत्यादि.] प्रथमना चार संयममां-सामाविक, छेदो-पस्थापनीय, परिहारविशुद्धि अने सूक्ष्मसंपराय संयममां रहेनारो संयत जीव, ज्ञानावरण ब घे छे अने यथारूयात संयममां रहेनारो संयत तो उपशांत मोहादिवाळो होवाथी बांघतो नथी माटे कखं छे के, ['संजए सिय ' इत्यादि.] अर्थात् संयत कदाच बांधे अने कदाच न बांधे. असंयत एटले मिध्यादृष्टि बगेरे अने संयतासंयत एटले तो देशविरत, ते बन्ने बांधे. जेने संयमादि भाव निषद्ध छे अर्थात् जे संयत नथीं, असंयत नथी अने संयतासंयत पण नथी तेवी तो सिद्ध छे ते न बांधे, कारण के, तेने कर्म वंधननो कोई हेतु होती नथी. [' आउगे हेद्विछा तिज्ञि अयणाए ' चि] सयत, असंयत अगे संयतासंयत, आयुष्यबंधकालमां-आयुष्य बांधवानी वेत्राए-आयुष्यने बांधे, अन्यदा-ते सिवायना काळमां-न बांधे, माटे तेओने आयुष्यनो वंध भजनाएं कस्तो छे. [' उबरिहें न वंधई 'ति] संयतादिमां उपरितन सिद्ध छे अने ते आयुष्य बांधतो नशी. सम्यग्दृष्टिना द्वारमां [' सम्मिदिही सिय बंधइ ' त्ति] सम्यग्दृष्टि, वीतराग पण होय अने तेथी भिन्न-सराग-पण होय, ते बमां वीतराग सम्यग्दृष्टि, ज्ञानावरण बांधतो नथी, कारण के, ते एकविध कर्मनो वंधक छे, अने सराग सम्यादृष्टि तो ज्ञानावरण बांधे, माटे कहां छे के, सम्यादृष्टि, मिथ्य दृष्टि मिश्रदृष्टि, ज्ञानावरण कदाच बांघे अने कदाच न बांघे. मिथ्यादृष्टि अने मिश्रदृष्टि ते बन्ने तो बांघे ज. [' आउए हृष्टिहा दो भयणाए ' ति] सम्यग्दृष्टि अने मिथ्यादृष्टि कदाच आयुष्य वांधे अने कदाच न बांधे, जम के, अपूर्वकर्णादि सम्यग्दृष्टि आयुष्य न बांधे अने बीमो तो एटले तथी भिन्न सम्यग्दृष्टि, · आयुष्यना बंधकाळे आयुष्य बांधे अने अन्यदा तो न बांधे अने मिथ्याँहैष्टि पण ए प्रमाणे एटले आयुर्वेधकाळे आयुष्य बांधे अने अन्यदा न संविद्य र. बांधे तथा मिश्रदृष्टि तो आयुष्य बांधे ज नहि-कारण के, ते मिश्रदृष्टिने, आयुष्य बंधिक अध्यासाय स्थाननो अभाव छे. संज्ञिद्वारमां [' सन्नी संता सिय वंधइ ' ति] मनःपर्याप्तिवाळी-संज्ञी-जीव, ते जो वीतराग होय तो ज्ञानावरण न बांधे अने जो तदितर-सराग-होय तो बांधे, तेथी ज ' सात्-कदाचित् ' एम कह्युं छे. ['असन्नी वंधइ' ति] मनःपर्याप्ति विनानो असंज्ञी जीव झानावरण बांधे ज. [' नोसन्नी-नोअसन्नि ' ति]

संशी पण नहि अने असंशी पण नहि एवो केवली या सिद्ध होय अने ते न बांधे, कारण के, तेने बंधननां कारणो नथी. [' वेयांजाजं हेहिला दो वंधति 'ति] संज्ञी अने असंज्ञी ए बन्ने वेदनीयने बांधे छे, कारण के, अयोगी अने निद्ध-ए बन्ने सिवायना देनेक जीवो वेदनीयना वंधक होय छे. [' उवरिले भयणाए ' ति] उपरनो एटले संज्ञी नहि अने असंज्ञी नहि अर्थात् सयोगिकेवली, अयोगिकेवली अने सिद्ध, ते वणमां जो सयोगि-केवली होय तो वेदनीय बांघे, जो वळी अयोगिकेवली अने सिद्ध होय तो न बांधे माटे ! मजनाए बांधे ' एम कहा छे. [' आउमं हेहिला दो भयणाए ' ति] संज्ञी अने असंज्ञी कदाच आयुष्य बांधे, कारण के, अन्तर्मुहूर्तमां ज आयुष्यनुं बंधन थाय छे(१). [' उवरिक्षे न बंधह ' ति]

्टपरना एक्टरे केवली अने सिद्ध, ए बन्ने आयुष्य न बांधे. भवसिद्धिकद्वारमां [' भवसिद्धिए भयणाए ' ति] जो भवसिद्धिक वीतराग होय तो ेते ज्ञानावरण न बांधे अने तदन्य-छद्मस्थ-होय तो ते छद्मस्थ-भव्य बांधे माटे 'भजनाए बांधे ' एम कहुं छे. ['नोभवसिद्धिश-नो-अभवितादिए ' वि] भवितिद्विक नहि अने अभवितिद्विक नहि ते जिद्ध, अने ते न बांधे [' आउयं हेट्टिला दो भवणाए ' ति] भव्य अने अभव्य, आयुष्य-वंघ काळे आयुष्य बांधे अने बीज काळे तो न बांधे, माटे ' भजनाए बांधे ' एम ककुं छे. [' उवरिक्के न बंधइ ' ति] सिद्ध नथी

बांधतो. दर्शनद्वारमां [' हेट्ठिला तिन्नि यं भयणाए ' ति] चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी अने अविवर्द्शनी ए बधा जो छदास्थ वीतराग होय तो ज्ञानावरण नथी वांधता, कारण के, तेओ वेदनीयना अ बंधक होय छे, जो तेओ सराग होय तो वांचे छे, माटे कह्युं छे के, ' मजनाए बांधे छें ' [' उन्नरिष्ठे न बंधइ ' ति] भवमां रहेलो केनलदर्शनी अने सिद्ध ते बन्ने नथी बांधता, कारण के, तेओने कर्म बंधना हेतुओ होता नथी. [' वैयणिक्न हेिह्हा तिक्नि बंधंति ' ति] प्रथम त्रण दर्शनवाळा छदास्य वीतरागी अने सरागी, तेओ वेदनीय वांघे ज छे. [' केवलंद-

सिणी भयणाए ' ति] केवलदर्शनदाळो सयोगी केवली बांघे छे अने अयोगिकेवळी अने सिद्ध वेदनीय कर्म नथी बांयता, माटे ' भजनाए बाँधे छे ' एम कचुं छे. पर्याप्तक द्वारमां [' पज्जत्तए भयणाए ' ति] वीतराग अने सराग ए बन्ने पर्याप्त होय छे. तेमां वीतराग पर्याप्त ज्ञान:वरण नोपर्य प्रनो अप्यांप्त, न बांधे अने सराग पर्याप्त तो बांधे माटे कह्युं छे के, 'भजनाए बांधे.' ['नोपज्ञातय-नोअपज्ञात्तए, न बंध्इ 'ति] नोपर्याप्त अने नो-

अपर्याप्त एटले सिद्ध न बांधे. [' आउम हेहिला दो भयणाए ' ति] पर्याप्त अने अपर्याप्त ए बन्ने आयुष्यना बंधकाळे आयुष्य बांधे अने अन्यदा न बांधे, माटे भजना कही छे. [' उपरिक्षे न ' इति] खिद्ध न बांधे. भाषकद्वारमां [' दो नि भगणाए ' ति] भाषाठिधवाळो ते भाषक अने तेथी अन्य ते तो अभाषक, ते बेमां वीतराम भाषक ज्ञानावरणीय न बांधे, अने सराम भाषक तो बांधे अने अभाषक ते तो अयोगी

विमहगति. अने सिद्ध ते बन्ने न बांधे तथा विमहगतिने प्राप्त एवा अभाषक पृथिवी बंगरेना जीवो बांधे माटे ['दो वि भयणाए '] 'बन्ने भजनाए बांधे र

ए प्रमाणे कह्युं छे. [' वेयणिज्जं भासए बंबह ' ति] भाषक जीव वेदनीय बांधे छे. कारण के, सयोगिना अवसानवाळो पण भाषक सद्वादनीयन बांधे छे ['अभाराए भयणाए ' ति] अयोगी अने सिद्ध ए बन्ने अभाषक होय छे, अने तेओ बांचता नथी तथा पृथिनी वगेरे अभाषक तो बांघे छे माटे ए प्रमाण भजना छे. परितद्वारमां ['परिते भयणाए 'ति] परीत एटले एक शरीरवाळी जीव अथवा अंदर संसारवाळी जीव ते वीतराग पण होय अने तेवो परीत वीतराग, ज्ञानावरणीय कर्म बांचतो नथी अने सराग परीत तो बांधे छे-ए प्रमाग भजना छे. [' अपरित्ते बंधइ ' ति] अपरित्त एटळे साधारणकाय अर्थात् जे जीव अनंतजीवो साथे एक शरीरमां रहेतो होय ते अववा अनंत संसंह्याळो ते अपरित्त-ते बन्ने बांधे छे. [' नोपरित-नोअपरिते न बंधइ ' ति] परित नहिःतेन अपरितः नहि अर्थात् .सिद्ध बांधतो नथी. [' आउयं परित्तो नि, अ।रित्तो वि भयणाष् 'ति] प्रत्येक शरीरादि जीव आयुष्यना बंधकाळे ज आयुष्य बांधे छे पण सर्वदा नथी बांधतो माटे ' भजना ' कही छे-सिद्ध तो बांधे ज नहि, माटे कर्ं छे के, [' नोपरित:-' इ.सादि] ज्ञानद्वारणं [' हेडिला चतारि भयणाए ' ति] आभिनि गेथिफ ज्ञानी व्हे ते चार ज्ञानीओ वीतरामावस्थामां ज्ञानावरणीयने बांघता नथी अने तेना ते ज चर ज्ञानीओ सरामावस्थामां तो ज्ञान.व णीय कर्मने बांघे छे, ए प्रमाण भजना है, [' वेयणिजं हेद्विला चत्तारि वि बंधित ' ति] हेळ्ळना चारे पण वेदनीयने बांधे हैं, कारण के, छदास्थ वीतराणो पूण वेदनीयना बंधक छै. [' केवलणाणी भयणाए ' ति] केवलज्ञाती भजनाए बांधे छे, करण के, सयोगिकेवळी वेदनीयना बंधक छे अने अयोगिकेवळी तथा ि हो वेदनीयना अवधक छे माटे भजना कही छे. योगद्वारमां [' हेट्विहा तिष्णि भयगाए ' ति] मन, वचन अने काययोगिओ, अओ उपशांतमोह गुण-स्थानके गाठा अने क्षीयभोह सुमस्थानक राळा सयोगिके रिल मो छे ते को ज्ञाना रूण बांब रा ने यी अने तर्नय तो बांधे छे, माँट तेमां भजना कही छे, ['अजोगी न बंधइ 'ति] अथोगी एटेंड अयोगि हेवळी अने सिद्ध बांधता नथी. ['वेयणिजं हेडिला बंधांते 'ति] मनोयोगी वंगेरे बांधे छे, कारण के सयोग जीवो वेदनीयना वंधक छे, [' अजोगी ण बंधइ ' ति] अयोगी बांबता नवी, कारण के, अयोगी सर्व कर्गोना अवंधक छे. उपयोग-द्वारमां [' अह ु वि भयणाए ' ति] सयोग अने अयोग, ए बन्नेने साकार अने अनाकार उपयोग होय हे, ते बन्ने उपयोगनां पण सयोग जीवो ह्मानावरणादि प्रकृतिओंने यथायोग बांचे छे अने अयोगजीवो तो नथी शांचता, एम मजना कही छे. आहारकद्वारमां [' दो वि मयणाए ' ति] वीतराग पण आहारक होय छे अने ए ज्ञानावरण बांघतो नथी, सराग आहारक तो बांधे छे, ए प्रमाणे आहारक भजनावडे ांवे छे, तथा अनाहारक केवली अने विम्रहगतिने प्राप्त जीव ए बन्ने अनाहास्क होय छे-तेमां केवली न बांधे अने बीजो तो बांधे छे, ए प्रमाणे अनाहास्क पण सजनावडे बांधे छे, ['वेयणिजं आहारए बंधर' ति] आहारकजीव, वेदनीय बंधे छे, कारण के, अयोगी सिशयना दरेक जीवो वेदनीयना अंधक छे. ['अणाहा-रए भयणाए ' ति] विग्रहगतिने प्राप्त जीव, समुद्धात प्राप्त केवली, अयोगी अने सिद्ध ए बधा अनाहा क होय छे, तेमां विग्रहगति प्राप्त जीव अने समुद्धातमत केवळी, ए को वेदनीयने कांवे छे अने अयोगी अने सिद्ध नथी बांधता-ए प्रमाणे भजना छे. [' आउए आहारए भयणाए ' ित] कारण के, आयुष्यना बंधकाळ मं ज आयुष्य बंधाय छे अने बीजा काळे तो तेनुं बंधन थतुं नथी, माटे मजना छे- [' अणाहारए ण बंधह ' ित्त] अनाहारक शंधतो नथी, कारण के, निम्रह् गतिने प्राप्त जीवो गण आयुष्यना अश्वक छे. सूक्ष्मद्वारमां [' शर्थर भयणा रू ' ति] वीतराग सक्ष्मद्वार. .बादरो, ज्ञानावरणना अरंधक छे अने सराग बादरो ज्ञानावरणना बंधक छे माटे भवना कही छे बळी, सिद्ध तो अरंधक होवाथी कहे छे के, ['ने सहुम-' इत्यादि]['आउए सहुमे, रायरे भय गए 'ति] कारण के, बंबकाळे बंधाय छे अने कीने काळे तो नधी बंधातु माटे भजना कही <mark>छे, चरमद्वारमां ['अह वि भयगा र्'त्ति] जेनो चरम</mark>-छेहो-पत्र थवानो छे तेने अहिं चरम कहेवें, अने जेनो छेटो भव थवानो चरमदार. वधी एटले जे चरम जेवो नथी तेने अचरम कहेवो तथा चिद्धने अचरम कहेवो, कारण के, सिद्धन हवे–सिद्ध थया पछी-छेहो भव नथी तेमां अच म. जरम जीव यथायोग आठे कर्म प्रकृतिओने पण बांधे छे अनं चमरजीवतुं अयोगिपणुं होय अर्थात् जो चरम जीव अयोगी होय तो नथी बांधतो ए प्रमाणे भजना छे, अचरम जो संसारी लहए एटले अभव्य लहुए तो ते अचरम आठे पण कर्म-प्रकृतिओने गाँ। छे अने जो अचरम एटले a' सिद्ध ' लइए तो ते कोई कर्म-प्रकृतिने नथी बांधतो -ए प्रमाणे अहीं पण भजना जाणवी.

नोपरित्त-भोअपरित,

ज्ञानद्रग्र, मःयादि चार शान-

अ । सार उपयोग.

वेदकोनुं अल्पबहुत्व.

🤻 रे. प्र० — ऐएसि णं मंते ! धीनाणं इत्थिवेयमाणं, पुरिस-वेयमाणं, नपुंसमवेयमाणं, अवेयमाण य कपरे कपरेहिंतो ?

२ रे. उ० - गोयमा ! सच्चत्थोवा जीवा पुरिसवेयमा, ्इस्थिवेयमाः संखेज्जमुणा, अवेदमा अर्णतमुणा, नरुंसमवेयमा अणंतगुणा. .

- एएसिं सन्वेसि पदाणं अष्य-बहुगाइं उचारेगन्वाइं, जाव-सम्बत्योवा जीवा अचरिमा, चरिमा अंगतगुणा.

३३ प्र०--हे भगवन् ! स्त्रीवेदक, पुरुषवेदक, नपुंतकवेदक अने अनेदक, ए बधा जीबोमां क्या क्या जीब, कोना कोनाथी अहा, बहु, तुस्य अने विशेषाधिक छै ?

३३ उ०--हे गीतम ! सीथी थोडा पुरुपनेदक जीवो छे, तेनाथी संस्थेयगुण स्त्रीवेदक छे, अवेदक अनंत गुण छे अने नपुंसक्षेत्रदेक अनंतगुण छे.

-- ए बधा पदोनां अहपबहुत्वो कहेवां यावत् साथी थोडा अचरम जीयो छे अने चरम जीयो अनंतगुण छे.

र. मूलच्छायाः एतेर्पा भगवन् ! जीवानां स्रोवेद हानाम् , पुरुष रेदका पाम् , नर्वसक्षेद हानाम् , अवेद हानां च कतरे कतरेश्यः ! गीतम ! 🤻 रितोका जीवा पुरुषवेदकाः, स्रोवेदधाः संख्येयगुणाः, अवेदहा अनन्तगुणाः, नपुमकवेदका अनन्तगुणाः, एतेषां सर्वेषां पदानाम् अल्य- बहुलकानि उचारियतव्यानि, यावत्-सर्दस्त का जीवा अचरमाः, चरमा अनन्तगुणाः--अहु०

www.jainelibrary.org

- सेवं . मंते !, सेवं मंते ! ति.

—हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे (एम कही यावत् विचरे छे.)

भगवंत-अज्ञ सुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते छहसये तह्ओ उदेसे सम्मत्तो.

७. अथ अल्प-बहुत्वद्वारम्: —तत्र ' इत्थिवयमा संस्तेजगुण ' ति यतो देव-नर-तिर्यक्पुरुषेन्यसत्स्त्रियः क्रमेण द्वात्रिंशत् — सप्तिविश्वति—त्रिस्पा संस्तेजगुण ' ति अनिश्विश्वदरसंपरायादयः, सिद्धाश्व अवेदाः, अतस्ते-अनन्तत्वात् स्त्रिवेदेन्योऽनन्तगुणा भवन्ति. ' नयुंसगवेयमा अणंतगुण ' ति अनन्तकायिकानां सिद्धेन्योऽनन्तगुणा भवन्ति. ' नयुंसगवेयमा अणंतगुण ' ति अनन्तकायिकानां सिद्धेन्योऽनन्तगुणानामिह गणनादिति. ' एएसिं सव्वेसिं ' इत्यादि. ९तेषां पूर्वोक्तानां संयतादीनां चरमान्तानां चुर्द्शानां द्वाराणां तद् तमेदा-ऽपेक्षया अल्प-बहुत्वम् उचारियतव्यम् , तद्यथाः —'' एएसि णं भंते ! संजयाणं, अतंज्ञयाणं, संजयासंजयाणं, नोसंजय-नोअसंजय-नोअसंजय नोसंजया वा, बहुया वा, तुह्रा वा विसेक्षाः ! गोयना ! सव्वत्योवा संजया, संजयासंजया असंसे-जगुणा, नोसंजय-नोअसंजय-नोसंजया अणंतगुणा, असंजया अणंतगुणा। '' इत्यादि प्रज्ञापनाऽनुनारेण वाध्यम् —यावदर-मायल्प-बहुत्वम्, एतदेवाऽऽहः—' जात्र—सव्वत्योवा जीवा अचरिमा ' इत्यादि. अत्र अचरमा अभव्याः चरमाश्च ये भव्याश्वरमं भवं प्रात्यन्ति—सेत्स्यन्ति इत्यर्थः. ते चाऽचरमेम्पोऽनन्तगुणाः, यस्माद् अमव्यस्यः सिद्धाः अनन्तगुणा भणिताः; यावन्तश्च सिद्धास्तावन्त एव चरमाः, यसाद् यावन्तः सिद्धाः अतीताद्वायां तावन्त एव सेत्स्वन्ति अनागताद्वायाम् इति.

भगवत्सुअमैद्यामिप्रणीते श्रीभगवतीस्त्रे वहशते वृतीय उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिति विवरणं समाप्तम्.

अस्प-बहुत्त.

७३ हवे अल्प-बहुत्तद्वार कहे छे, तेमां [' हित्यिवेयगा संखेजगुण ' ति] स्रावेदको संस्थेय गुण छे, कारण के, देव, मनुष्य अने तिर्यच-प्रश्चे करतां स्वां क्षे के स्प पुरुषो करतां क्रमधंड स्वीओ, वशीर वधारे वशीरागणी, सत्तावीरा वधारे सत्तावीरागणी अने त्रण वधारे छे अने तिर्यची करतां तिर्वेव सीओतिर्यचणीओ जणगणी अने वशीर वधारे छे, मनुष्यो करतां मनुष्णीओ सत्यावीरागणी अने सत्यावीरा वधारे छे अने तिर्यची करतां तिर्वेव सीओतिर्यचणीओ जणगणी अने वशार वधारे छे. [' अवेदगा अणंतगुण 'ति] अतिवृत्तिवादरसंपरावादिगुमध्वानकराळा वगेरे जीवो अने सिद्धो, अनेदक. तेओ अवेदक छे अने ते बधा अनंत होवाधी स्विवेदवाळाओ करतां अनंतगुण याय छे. [' नपुंसगवेयगा अणंतगुग 'ति] नपुंसक वेदवाळाओ अनंतगुण छे, कारण के, आ स्थळे सिद्धो करतां अनंतकाधिक (जेओ ववा नपुंसक छे) जीवो अनंतगुणा गण्या छे. [' पप्रिंस सब्बेसिं ' इत्यादि] पूर्वोक्त ए बधाओचुं एटले संयतथी मांडीने चरम सुधीना चांद द्वारोचुं अल्य बहुत्व, तद्रत मेदोनी अपेक्षाए कहेवुं जोहए, ते जेमके —'' हे भगवन् ! संयतो, असंयतो, संयतासंयतो अने नोसंयत-नोसंयतातंत्रतो, ए बधाओमां क्या क्या कोना कोनाधी थोडा छे ? बहु छे ? तुत्य छे ? के विरोधाधिक छे ? हे गौतम ! संयतो सांधी थोडा छे, संयतासंयतो, असंस्यताण छे, नोसंयत-नोसंयतासंयतो अनंतगुण छे अने असंयतो एथी ए अनंतगुण छे " इत्यादि प्रश्चापनाने अनुसारे चरमादिना अल्प बहुत्व सुधी सर्व अहि कहेवुं, ए ज कहे छे, [' जाय सम्बत्धोमां जीवा अचरिमा ' इत्यादि.] आहि अचरम करतां अनंतगुण के, कारण के अभव्यो करतां सिद्धो अनंतगुणा कह्या छे अने जेटला सिद्धो छे तेटला ज चरम जीवो छे, कारण के, जेटला भून काळे सिद्ध थया छे—तेटला ज भविष्यत्काळे पण सिद्ध थयो.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सङ्गुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शानयोः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

१. मूलच्छायाः— तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः—असु०

^{9.} आ हकीकत श्रीजीवाजीवासियमसूत्र-द्वितीय प्रतिपत्ति (१०८७) मां तथा प्रज्ञापना सूत्र-अल्पबहुत्वपद (पूर्व १२४) मां सचा प्रज्ञापना सूत्र-अल्पबहुत्वपद (पृ० १६४) मां अने पंचसंप्रह्-गा० ६५-६८ (भा० पृ० ८२-८४-८५) मां मळे छे:—अनु० २ प्रज्ञापना सूत्रना त्रीजा अल्यबहुत्वपदमां आ वधी हकीकत आवेजी छे (पृ० ११३-१४३) - अनु०

शतक ६-उद्देशक ४.

- १. प्रo— नीवे णं भंते ! कालादेसेणं ।कें सपएसे, अपएसे ?
- ?. ड०-गोयमा ! नियमा सपएसे.
- २. प्र०—नेरइए णं भंते ! कालादेसेणं ।की सप्रसे अपर्से ?
- २. उ०—गोयमा ! सिय रापएसें, सिय अपएसे; एवं जाय— सिद्धे.
- रै. प्र०— जीवा णं भंते ! कालादेसेणं कि सपएसा, अप-एसा ?
 - ₹. उ०—गोयमा ! नियमा सपएसा.

- १. प्र०—हे भगवन् ! शुं जीव कालादेशवडे-कालनी अपेक्षाए-सप्रदेश के के अप्रदेश ?
- १. उ० हे गौतम । जीव नियमा-चोकंस-सप्रदेश छे. ए प्रमाणे यावत् सिद्ध सुधीना जीव माटे जाणवुं.
- २. प्र⁰—है भगवन्! नैरियक जीव कालांदेशथी सप्रदेश छे के अप्रदेश छे ?
- े रे. उ० हे गौतम ! ए कदाच सप्रदेश छे अने कदाच अप्रदेश छे.
- २. प्र०—हे भगवन्! छुं जीवो कालादेशथी सप्रदेश छे के अप्रदेश छे !
 - ३. उ० हे गौतम ! चोकस, जीवो सप्रदेश छे.

र. मूलच्छायाः—जीतो भगवन् ! कंलांटेशेन कि सप्रदेशः, अप्रदेशः ? गोतम ! नियमात् सप्रदेशः नैरिएको भगवन् ! कालांटेशेन कि सप्रदेशः, अप्रदेशः ? गोतम ! स्थान् सप्रदेशः, स्याद् अप्रदेशः एवं यावत्-सिद्धः. जीवा भगवन् ! काल.देशेन कि सप्रदेशः, अप्रदेशः ? गोतम ! नियमातः सप्रदेशः—अनु०

४. ४० — नेरैइया णं भंते ! कालादेसेणं किं सपएसा, अप९सा ?

४. उ०--गीयमा ! सन्ये वि ताव होज्जा सपएसा, अहवा सपएसा य-अपएसे य, अहवा सपएरा य-अपएसा य; एवं जाव-थणियकुमारा.

५. प्र०--पुरुविकाइया णं भंते ! किं सगापा, अपएसा ?

५. ड०--गोयमा ! सपएर वि, अपएसा वि; एवं जाव-वणस्सङ्काङ्यो.

--सेसा जहा नेरइया तहा, जाव-सिद्धाः आहारमाणं जीव-एनिद्यवाची तियभंगी. अणाहारगाणं जीवाणं एगिदिय-वजा छन्भंगा एवं भागियव्वाः-१ सपएसा वा, २ अपएसा वा, रे अहवा सपएसे य अपएसे य, ४ अहवा सपएसे य अपएसा य, ५ अहवा सपएसा य अपएसे य, ६ अहवा सपएसा य अपएसा यः सिद्धेहिं तियभंगोः भविसिद्ध्या, अभविसिद्धिया जहा ओहिया. णोमवितिद्विय-णोअभवसिद्धिय-जीवसिद्धेहिं तियभंगो. सची।हें जीवाइओ तियमंगो. असची हें एगिंदियवजो तियमंगो. नेरइय-देव-मणुए.ह छन्भंगो. मोसचि-नोअसन्नि-जीवमणुयसि-बाहि तियभंगो. सलेसा जहा ओहिया. कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काउलेस्सा जहा आहारओ, नवरं:-जस्स आदिथ एयाओ. तेउलेस्साए जीवाइओ तियभंगो, नवरं:-पुढविकाइएसु, आउ-वणस्पर्इसु छन्भंगा. पम्हलेस्स सुक्षलेस्साए जीवाइओ तियभंगी. अलेसेहि जीव-सिद्धेहि तियभंगो. मणुएसु छन्भंगा. सम्मदिहीहि जीवाइओ तियभंगो. िगलिदिएसु छन्गंगा. मिन्छिदिही।हें एगि-दिययज्ञो तियमंगो. सम्मानिच्छदिङ्गोहि छन्मंगा. संत्रएहि जीवा-इओ दियमंगो. असंजएहिं एिंदियवजी तियमंगो ति. संजयासं-जएहि तियभंगो जीवाईओ. नोसंजय-नोअसंजय नोसंजयासंजय-जीव-धिद्धोहि तियभंगो. सकसाईहि जीवाइओ तियभंगो. एगि.दएस् अभंगकं, कोहकसाइहिं जीव-एगिदि वज्जो तियभंगो. देवेहिं छन्भंगा. माण-कसाई-मायाकसाई जीव-एिदियवजी तियभंगी. . नेरहय-देवेहिं छन्भंगा. लोभकसाईहि डोव-एगिंदियवज्ञो तियमंगो.

४. प्र० — हे भगवन् ! शुं नैरियक जीवो कालादेशवडे सप्रदेश छे के अप्रदेश छे ?

8. उ० — हे गौतम! ए नैरियकोमां १ बना य पण सप्रदेश होय, २ केंटलाक सप्रदेश अने एकाद अप्रदेश अने ३ केंटलाक सप्रदेश तथा केंटलाक अप्रदेश; ए प्रमाणे यावत् स्तनित्कुमार सुधीना जीनो माटे जाणवुं.

५. प्र०—है भगवन् ! शुं पृथिवीकायिकजीत्रो सप्रदेश छे के अप्रदेश छे ?

५. उ० -- हे गीतम ! तेओ सप्रदेश पण छे अने अप्रदेश पण छे, ए प्रमाणे यावत् वनस्पतिकायिक सुधीना जीवो माटे जाणवुं.

---जेम नैरियक जीवो कह्या तेम सिद्ध सुधीना बाकीना बधा जीवो माटे जाणवुं. जीव अने एकेन्द्रिय वर्जीने वाकीना आहारक जीवो माटे त्रण भागा जाणवा, अने अनाहारक जीवो माटे एकेन्द्रिय वर्जीने छ भांगा आ प्रमाणे ज.णवा-१ केटलाकं सप्रदेश होय, २ केटलाक अप्रदेश होय, ३ अंथवा कोइ सप्रदेश होय अने कोई अप्रदेश होय, ४ कोई सप्रदेश होय अने केटलाक अपरेश होय, ५ केटलाक सप्रदेश होय अने कोई अप्रदेश होय अने ६ केटलाक सप्रदेश होय तथा केटलाक अप्रदेश होय. सिद्धोने माटे त्रण मांगा जाणवा जेम औधिक-सामान्य-जीवो कहा। तेम भवसि। देक-भव्य-अने अभवसिद्धिक-अभव्य-जीवो जाणवा. नोमवसिद्धिक तथा नोअभवसिद्धिक जीव, सिद्धोमां त्रण मांगा जाणवा, संज्ञिओमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा, असंज्ञिओमां एकेन्द्रियवर्जीने त्रण भांगा जाणवा. नैरियक, देव अने मनुष्योमां छ भांगा जाणवा. नोसंक्षी तथा नोअसंबी जीव, मनुष्य अने भिद्धोमां त्रण भांगा जाणवा, जेम सामान्य जीवो कह्या, तेम सलेश्य-लेश्यावाळा-जीवो जाणवा. जेम आहारक जीव कह्यो तेम कृष्यलेश्याबाळा, मीललेश्याबाळा अने कापोतलेश्याबाळा जीवो जाणवा, विशेष ए के, जेने जे छेश्या होय तेने ते छेश्या कहेवी. तेजोल्डेस्यामां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा, विशेष ए के, पृथिवीकायिकोमां, अन्कायिकोमां अने वनस्पतिकायिकोमां छ भागा जाणवा, पद्मलेश्यामां अने शुक्ललेश्यामां जीवादिक त्रण मांगा जाणवा, अलेश्योमां-जीव अने सिद्धोमां त्रण मांगा जाणवा

१. मूलच्छायाः—नैरियकाः भगवन् ! कालादेशेन कि सप्रदेशाः, अप्रदेशाः ? गीतम ! सर्वेऽपि तावद् भवेषुः सप्रदेशाः, अथवा सप्रदेशाश्च अप्रदेशः इत्या अप्रदेशः इत्या अप्रदेशः श्वां सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाः वात् वावत् नवस्यतिकायिकाः श्वेषा यथा नैरियकास्त्रथा, यावत् निद्धाः आहारकाणां जीव-केन्द्रियवक्षित्रभ्रह्मः अयवा सप्रदेशश्च अप्रदेशाश्च क्षित्र महर्माः अप्रतिश्च क्षित्र महर्माः अप्रतिश्च वात् अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च क्षित्र महर्माः अप्रतिश्च अप्रतिश्च क्षित्र महरः विद्य विद्य क्षित्र महरः सम्यामिष्यादृष्ठ वाद्म महरः स्वरति क्षित्र महरः स्वराय क्षित्र महरः स्वराय विद्य क्षित्र महरः स्वराय कष्य विद्य विद्य स्वराय क्षित्र महरः स्वराय विद्य क्षित्र महरः स्वराय कष्य विद्य क्षित्र महरः स्वराय विद्य क्षित्र महरः स्वराय कष्य विद्य क्षित्र महरः स्वराय विद्य क्षित्र महरः स्वराय विद्य क्षित्र महरः स्वराय कष्य विद्य क्षित्र सहरः स्वराय कष्य विद्य कष्य कष्य विद्य

नेरैइएसु छन्भंगा. अकसाई-जीव-मणु९हिं, सिद्देहिं तियभंगो. ओहियणाणे, आमिणिबोहियणाणे, सुयगाणे जीवाइओ तियमंगो. विगलिदिएहिं छुमंगा. ओहिणाणे मण-केवलणाणे जीवाइओ तियभंगो. ओहिए अन्नाणे, मइअन्नाणे, सुयअन्नाणे, एगिंदि-यवज्जो तियमंगो. विभंगनाणे जीवाइओ तियमंगो. सुजोगी जहा ओहिओ, मणजोगी, व्यजोगी, कायजोगी जीवाइओ तियगंगी, नवरं:-कायजोगी एगिंदिया, तेसु अमंगयं. अजोगी जहा सागारोवउत्त-अणागारोवउत्तेहिं जीव-एगिदियवजो तियभंगों. सुवेयगा य जहा सकताई. इत्थिवेयग-पुरिसवेयग-नपुंसगवेयगेसु जीवाइओ तियभंगो, नवरं:-नपुंसगवेदे एगिदिएस् अमंगयं. अवेयगा जहा अकसाई, सुसरीरी जहा ओहिओ. ओ.रालिय-वेजन्यिसरीराणं जीव-एगिंदियवज्जो तियमगो, आहा-रगसरीरे जीव-मणुएस छन्मंगा, तेयग-कम्मगाणं जहा ओहिया. असरीरोहिं जीव-सिद्धोहिं तियमंगो. आहारपज्नतीए, सरीरपज्रतीए इंदियपज्जतीए, आणपाणपज्जतीए जीव-एगिंदिययजो तियभंगो. भासा-मणपज्जतीए जहा सची, आहार-अगज्जतीए जहा अणा-हारगा, सरीर-अपज्जतीए, इंदिय-अपज्जतीए, आणपाण-अपज्जतीए जीव-एगिंदियवजो तियभंगो, नेरइय-देव-मणुएहिं छन्भंगा,भासा-मणअपज्ततीए जीवाइओ तियभंगो, णेरइय-देव-मणुएहिं छब्भंगा.

अने अलेश्य मनुष्योमां छ भांगा जाणवा. सम्यग्दछिओमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा, विकलेन्द्रियोमां छ भांगा जाणवा, मिध्यादृष्टि-ओमां एकेन्द्रिय वर्जीने त्रण भांगा जाणवा. सम्परमध्यादृष्टिओ्गां छ भांगा जःणवा. संयत जीवोमां जीवादिक त्रण भांगा जःणवा. असंयतोमां एकेन्द्रियम जीने त्रण भांगा जाणवा. संयतासंयतोमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा. नोसंयत नोअसंयत अने नोसंय-तासंपतोमां-जीव सिद्धोमां-त्रण भागा जाणवा. सक्त्रायोमां-कषाययाळाओमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा, अने सकपाय एकेंद्रियोशं अभंगक-त्रण भांगा नथी पण एक भांगी-छे, क्रोध क्यायिओमां जीय अने एकेन्द्रिय वर्जी त्रण भांगा जाणवा. देवीवां छ भागा, मानकषायबाळमां, मायाकषायबाळामां जीव अो एकेन्द्रिय वर्जीने त्रण भांगा जाणवा. नैरियक अने देवोमां छ भांगा जाणवा. स्टोम कवायवाळामां जीव अने एकेंद्रिय वर्जीने त्रण भागा जाणवा. नैस्यिकोशां छ भागा जाणवा. अक्षायिमां जीन, मनुज अने सिद्धोगां त्रण भागा जाणवा. औषिक ज्ञानमां, आभिनिबोधिक-ज्ञानमां, श्रुतज्ञानमां, जीबादिक त्रण भांगा जाणवा. विकलेंद्रियोमां छ मांगा जाणवा. अवधिज्ञानमां, मनःपर्यवज्ञानमां अने केवलज्ञानमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा. भौधिक अज्ञानमां, मत्अज्ञानमां अने श्रुत अज्ञानमां एकेंद्रिय व नीने त्रण भागा जाणवा. विभंगज्ञानमां जीवादिक त्रण भागाः जागवा, जेम औषिक कह्यो तेम सयोगी जाणवो, मनयोगी, वचनयोगी अने काययोगिमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा, विशेष ए के, एकेंद्रिय जीवो काययोगवाळां छे अने तेओमां अभंगक-जाजा भागा नथी-पण एक भागी-छे. जैम अलेड्यो कह्या तेम अयोगि-जीवो जाणवा. साकार उपयोगवाळामां अने अनाकार उपयोग वाळामां जीव तथा एकेंद्रिय वर्जीने त्रण भागा जाणवा, जेम सवेदक-वेंदबाळा-जीवो सकपायी-कषायभाळा-कह्या तेम जाणवा स्त्रीवेदक, पुरुषवेदक अने नपुंसकवेदकोंजां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा, विशेष ए के, नपुंसक वेदमां एकेंद्रियो माटे अभंग ह-जाजा भांगा नथी-पण एक भांगो छे. जेम अक्षपायी-कंपायरहित जीवो कह्या तेम अवेदक-वेदविनाना-जीवो जाणवा जेम औषिक-सामान्य-जीव कह्या तेंम सशरीरी-शरीरवाळा-जीवो जाणवा. औदारिक अने वैक्रिय शरीरवाळा माटे जीव तथा एकेंद्रिय वर्जीने त्रण मांगा जाणवा. आहारक शरीरमां जीव अने

१. मूळच्छायाः-नैरियकेषु षड् भहाः अक्ष यि- जीव-मनुजेषु, सिद्धेषु त्रिक्भहः अधिकहाने, आभिनेबोधिकहाने, श्रुतहाने जीवादिकिल्दभहः विकलेन्द्रियेषु षड् भङ्गाः अवधिहाने, मनः-केवल्हाने जीवादिकिल्दभहः औषिकेऽहाने, मयहाने, श्रुताऽहाने एकेन्द्रियवर्जील भहः विभह्नहाने जीवादिकिल्दिक्षक्षकः स्योगी यथा अधिकः, मोयोगिने, वचोयोगिने, काययोगिने जीवादिकिल्दक्षकः, नवरम्-काययोगिन एकेन्द्रियालेषु अभहकम् अयोगिनो यथाऽलेद्याः साकारोपयुक्ता-ऽनाकारोपयुक्तेषु जीदेकेन्द्रियवर्जील्दभङ्गः सनेदक्षाय यथा सक्षायिणः लीवेदक-पुरुषोदक-नर्भकनेदकेषु जीवादिकिल्दिक्षक्षकः, नवरमः नर्भकवेदे एकेन्द्रियो अभङ्गकम् अवदेकां यथाऽक्षायिणः, सशरीरी यथा औधिकः, आदारिक-विक्रयशरीरेषु जीवेकेन्द्रियवर्जिल्दक्षकः, नवरमः नर्भकवेदे एकेन्द्रियो अभङ्गकम् अवदेकां यथाऽक्षायिणः, सशरीरी यथा औधिकः, आदारिक-विक्रयशरीरेषु जीवेकेन्द्रियवर्जिल्दक्षकः, आहारक्शरीरे जीव-मनुजेषु षड् भहाः, तेजस-कामेका (णा) नां यथाधिकाः, अशरीरेषु जीव-सिद्धेषु त्रिक्भह्गः आहारपर्यासौ, शिवेरपर्यासौ, शिवेरपर्यासौ अधिकः अवदेशिल्दक्षकः, भाषा-मनः। येति यथा संजी, आहारअपर्यासौ यथाऽनाहार स्वाः शरीराऽपर्यासा, इन्द्रियाऽपर्यासौ, आन्नप्राणाऽपर्यासौ जीवेन्द्रियवर्जील्दक्षकः, नरियक-देव मनुजेषु षड् भङ्गाः भाषा-मनेऽपर्यासौ जीवेरिकिल्दक्षकः, नरियक-देव मनुजेषु षड् भङ्गाः भाषा-मनेऽपर्यासौ जीवेरिकिल्दकः, नरियक-देव मनुजेषु षड् भङ्गाः भाषा-मनेऽपर्यासौ जीवेरिकिल्दकः, नरियक-देव मनुजेषु षड् भङ्गाः भाषा-मनेऽपर्यासौ जीवेरिकिल्दकः, नरियक-देव मनुजेषु षड् भङ्गाः भाषा-मनेऽपर्यासौ

मनुष्यमां छ भांगा जाणवा. जेम औष्टिक कह्या तेम तैजस अने कार्मण (शरीरवाळा जीवो) जाणवा. अशरीरी—जीव अने सिद्ध माटे त्रण भांगा जाणवा. आहारपर्याप्तिमां, शरीर-पर्याप्तिमां, इंद्रियपर्याप्तिमां अने आनप्राणपर्याप्तिमां जीत अने एकेंद्रिय वर्जी त्रण भांगा जाणवा. जेम संज्ञी जीवो कह्या तेम भाषा अने मनःपर्याप्ति संबंधे जाणवुं. जेम अनाहारक जीवो कह्या तेम आहार पर्याप्ति विनाना जीवो विषे समजवुं. शरीरनी अपर्याप्तिमां, इंद्रियनी अपर्याप्तिमां अने आणप्राणनी अपर्याप्तिमां जीव अने एकेंद्रिय वर्जी त्रण भांगा जाणवा. नैरियक, देव अने मनुष्योमां छ भांगा जाणवा. भाषानी अपर्याप्तिमां अने मननी अपर्याप्तिमां जीवादिक त्रण भांगा जाणवा. नैरियक, देव अने मनुष्योमां छ भांगा जाणवा.

संगहरगाहाः-सपएसा-आहारग-भविय-सन्त्रि-लेसा-दिद्वि-संजय-कसाए, णाणे जोगु-वओगे वेदे य सरीर-पजन्ती. —संग्रह गार्था आ प्रमाणे छे: - सप्रदेशो, आहारक, भव्य, संबी, छेर्या, दृष्टि, संयत, कपाय, ज्ञान, योग, उपयोग, वेद, शरीर अने पर्याति ए द्वारो छे.

१. अनन्तरोदेशके जीवो निरूपितः, अथ चतुर्थोदेशकेऽपि तमेव भङ्गयन्तरेण निरूपपन्नाहः—' जीवे णं ' इत्यादि. 'कालादेसेणं 'ति कालप्रकारेण—कालम् आश्रिखेटार्थः. 'सपएसे 'ति सविभागः, 'नियमा सपएसे 'ति अनादित्वेन जीवस्य अनन्तसमयस्थितिकत्वात् सप्रदेशता, यो हि एकसमयस्थितिः सोऽप्रदेशः, द्वगदिसमयस्थितिस्तु सप्रदेशः, इह चाऽनया गाथयां भावना कार्या--'' जो जस्त पढमसमए वट्टइ भावस्त सो उ अपएसो, अण्गाम्म वट्टमाणो कालाएसेण सपएसो. " नारकस्तु यः प्रथमसमयोत्पन्नः सोऽप्रदेशः, द्वयादिसमयोत्पन्नः पुनः सप्रदेशः; अत उक्तमः—' सिय सप्पएसे, सिय अप्पएसे ' एव ताबद् एकत्वेन जीवादिः सिद्धाऽवसानः पड्विशि दिण्डकः कालतः सप्रदेशस्वादिना चिन्तितः, अधाऽयमेव तथैव पृथक्तेन चिन्त्यते:— ' संबंधि वि ताय होज्या सपएंस 'ति उपपातिवरहकाछेऽसंख्यातानां पूर्वोतनां भावात् सर्वेऽपि सप्रदेशा भवेयुः, तथा पूर्वोत्पनीतु मध्ये यदा एकोऽप्यन्यो नारक उत्पद्यते तदा तस्य प्रथमसमयोत्पनलेनाऽप्रदेशस्वात् , रोपाणां च ह्यादिसमयोत्पनत्वेन सप्रदेशत्वाद् उच्यतेः— ं सप्पएसा य, अपएसे य[े] ति. एवं यदा बहुव उत्पद्यमानाः भवन्ति तदोच्यतेः—'सप्पएसा य, अपएसा ये ति उत्पद्यन्ते च एकदा एकादयो नारकाः, यदाहः—" ऐगो व दो व तिन्ति व संखमसंखा च एगसमएणं, उववज्नते वह्या उव्वहंता वि एमेव. " ' प्ढविकाइया णं ' इत्यादि. एकेन्द्रियाणां पूर्वोत्पन्नानाम् , उत्रद्यमानानां च बहूनां सद्भावात् ' सपएसा वि , अप्पएसा वि ! इत्युच्यते. ' सेसा जहा नेरइया ' इत्यादि. यथा नारका अभिकापत्रयेणोक्तास्तथा शेषा द्वीन्द्रियादयः विद्धाऽवसानः वाच्याः, सर्वेपाम् एषां विरहसंभगद् एकाशुल्पत्तंश्चेति. एवम् आहारका-ऽनाहारकशब्दविशेषितौ एकल-पृथक्लदण्डकौ अध्येगौ, अध्ययनक्रमश्चाऽयम्---' आहारए ण भंते ! जीवे कालाएसेणं किं संपएसे, अंपएसे ? गोयमा ! सिय सपएसे, सिय अपएसे. ' इत्यादि—स्विधा बाच्यः. तत्र यदा विष्रहे, केवलिसमुद्धाते वाडनाहारको भूत्वा, पुनराहारकाव प्रतिपद्यते तदा तत्प्रथमसमयेऽप्रदेशः, द्वितीयादिषु तु सप्रदेशः; इत्यत उच्यतेः—' सिय सपएसे, सिय अपएसे ' ति एवमेक्तवे सर्वेष्विप सादिभावेषु, अनादिभावेषु तु ' नियमा सपएसे ' ति वाच्यम्. पृथक्तवदण्डके तु एवमभिलापो दश्यः—' आहारया णं मंते ! जीवा कालाएसेणं किं सपएसा, अपएसा ? गोयमा ! संपएसा वि, अपएसा वि ' ति तत्र बहूनाम् आहारकत्वेनात्रस्थितानां भावात् सप्रदेशत्वम्, तथा बहूनां विग्रहगतेरनन्तरं प्रथमसमये आहारकत्वसंभवाद् अप्रदेशत्वमप्याहारकाणां लम्यते इति ' सप्रदेशा अपि, अप्रदेशा अपि ' इत्युक्तम्, एवं पृथिव्यादयोऽपि अध्येयाः, नारकादयः पुनर्विकल्पत्रयेण वाच्याः, तद्यथाः—' आहारया णं भंते 1 नेरइया णं कि सपएसा, अपएसा ? गोयमा ! सब्वे वि ताव होज सपएसा, अहवा सपएसा य अपएसे य, अहवा सपएसा य अपएसा य भे ति. एतदेवाह:-- अहारगाणं जीव-एगिंदियवज्ञो तियमंगो ' जीवपदम्, एकेन्द्रियपदपञ्चकं च वर्जियत्वा, त्रिकरूपो भङ्गान्तिकभङ्गो भङ्गकत्रवं वाध्यम् इत्पर्थः, सिद्धपदं त्विह न वाच्यम्, तेषाम् अनाहारकत्थात्; अनाहारकदण्डकद्वयमपि एवम् अनुपरणीयम्, तत्राऽनाहारको विप्रहगत्याऽऽपनः, समुद्घातकेवली, अयोगी सिद्धो वा स्मात् , स चाऽनाहास्कत्वप्रथमसम्येऽप्रदेशः, द्वितीयादिषु तु सप्रदेशः तेन ' स्यात् सप्रदेशः '

१. मूलच्छायाः -- संप्रह्ताथाः -सप्रदेशा आहारक - भव्य -संज्ञि-लेश्या -हष्टि-संयत-द्रवायः, ज्ञानं योगो-पयोगै। वेदश्च शरीः -'वंशित -- अनु०

१. प्र॰ छाः—यो यस्य प्रथमसमये वर्तते मावस्य स तु अप्रदेशः, अन्यत्मिन् वर्तमानः कालादेशेन सप्रदेशः. २. एको वा द्वी वा त्रीणि वा संस्थमसंस्था च एकसमयेन उपपद्यमानाः—एतावन्तः उद्वर्तमाना अपि एवमेनः—अनुः

इसाचुच्यते. पृथक्लदण्डके विशेषमाहः-' अणाहारगाणं ' इसादि. जीशन् , एकेन्द्रियांश्च वर्जयन्तीति-जीनै-केन्द्रियवर्जातान् वर्जियित्वा इत्यर्थः. जीवपदे, एकेन्द्रियपदे च ' सपएसा य, अपएसा य ' इत्येवंरूप एक एव भङ्गकः-बहूनां विष्रहग यापनानां सप्रदेशानाम्, अप्रदेशानां च लाभातः नारकादीनाम्, द्वीन्द्रियादीनां च स्तोक्तराणाम् उत्पादस्तत्र च एक-द्वयादीनाम् अनाहारकाणां भावात् षड्भिङ्गितासम्भवः-तत्र ह्रौ बहुवचनान्तौ, अन्ये तु चतारः-एकवचन-बहुवचनतंयोगात् , केवलैकवचनभङ्गकौ इह न स्तः-पृथक्त्वस्याऽधिकृत्त्वादिति. ' सिद्धेहिं तियमंशो ' ति सप्रदेशपदस्य बहुवचनान्तस्यैव संभवात्. ' भवसिद्धीय, अभवसिद्धीय जहा ओहिय ' ति अयमर्थ:-- औधि दण्डकवद् एतेषां प्रत्येकं दण्डकद्वयम् , तत्र च मच्योऽभव्यो वा जीवो नियमात् सप्रदेशः , नारका-दिस्तु सप्रदेशः, अप्रदेशो वाः, बहुबस्तु जीवाः सप्रदेशा एव, नारकाद्यास्तु त्रिभङ्गवन्तः. एकेन्द्रियाः पुनः सप्रदेशाश्च, अप्रदेशाश्च इस्रेकभङ्गा एवेति. सिद्धपदं तु न वाच्यम्, तिद्धानां भया-ऽभव्यविशेषणाऽनुपपतेरिति. तथा ' नोमवसिद्धिय-नोअभगसिद्धिय ' त्ति एतद्विशेषगं जीवादिदण्डकद्वयम् अध्येयम् , तत्र चाऽभिछापः-' . नोमगितिर्द्धय-नोअभवासिद्धिए णं भेते ! जीवे सपएसे, अपएसे १ १ इत्यादि. एवं पृथक्षवदण्डकोऽपि. केवलमिह जीवपदम् , सिद्धपदं च इति द्वयमेव-नारकादिपदानां ' नोभव्य-नोऽभव्या विशेषणस्याऽनुःपत्तेरितिः इह च पृथक्तवदण्डके पूर्वोक्तं भद्गकत्रयमनुसर्तव्यम् , अतः एवाऽऽहः-' जीवे सिखेहिं तियमंगो ' ति संज्ञिषु यो दण्डको तयोर्द्वितीयदण्डके जीवादिपदेषु भङ्गकत्रयं भवति, इसत आहः- सिनिहि १ इसादि. तत्र संज्ञिनो जीवाः कालतः ' सप्रदेशाः ' भवन्ति चिरोत्पन्नानपेक्ष्य, लल्पाद्विरहाऽनन्तरं च एकस्योत्पतौ तत्पाथमो ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशश्च ' इति स्यात्, बहुनाम् उत्पत्तिप्राथम्ये तु ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इति स्यात्-तदेवं भङ्गत्रयमिति, एवं सर्वपदेषुः, केत्ररुमेतयोर्दण्डक्योः एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिय-सिद्धपदानि न वाच्यानि, तेषु संज्ञिविशेषणस्याऽतंभवाद् इति. 'असणीहि ' इत्यादि. अयमर्थः-असंज्ञिषु असंज्ञिनिषये द्वितीयदण्डके पृथिन्यादिपदानि वर्जियत्या भङ्गकत्रयं प्राम् दर्शितमेव वाच्यम्, पृथिनगदिपरेषु हि 'सप्रदेशाश्व अप्रदेशाश्च ^१ इत्येक एव, सदा बहूनाम् उत्पत्त्या तेषाम् अप्रदेशत्व-वहु वस्याऽपि संभवात्. नैर्धिकादीनां च व्यन्तरान्तानां संज्ञिनामपि असंज्ञित्वम्-असंज्ञिम्यः उत्पादाद् भूतभावतयाऽवसेयम् , तथा नैरियकादिषु असंज्ञित्वस्य कादाचित्कत्वेन एकःव-बहुत्वरांभवात् यब् भङ्गा भवन्ति, ते च दर्शिता एव-एतदेवाऽऽहः—' नेरइय-देव-मणुए ' इत्यादि. ज्योतिष्काः, वैमानिकाः, सिद्रास्तु न वाच्याः, तेपाम् असंज्ञित्यस्याऽसंभवात्. तथा ' नोसंज्ञि नोऽसंज्ञि '-विशेषणदण्डकयोर्द्धितीयदण्डके जीव-मनु न-सिद्धपदेषु, उक्तारूपं भङ्गकत्रयं भवति, तेषु बहूनाम् अवस्थितानां लाभात्, उत्पद्यमानानां च एकादीनां संभवाद्-इति. एतयोश्च दण्डकयो-जीव-मनुव-सिद्धपदानि एव भवन्ति-नारकादिपदानां ' नोसंज्ञि-नोऽसंज्ञि ' इति विशेषणस्याऽघटनाद्-इति. सल्टेश्यदण्डकद्वये औधिकरण्डकवद् जीव--नारकादयो वाच्याः. सलेश्यतायां जीवत्ववद् अनादित्वेन विशेषाऽनुत्पादकत्वात् केवलं सिद्धपदं नाऽधीयते, सिद्धानाम् अलेश्यत्वादिति. कृष्णलेश्याः, नीललेश्याः, कापोतलेश्याश्च जीव--नार्कादयः प्रत्येकं दण्डकद्वयेनाऽऽहारकजीवादिवद् उपयुज्य वाच्याः, केवलं यस्य जीव-नारकादेरेताः सन्ति स एव वाच्यः, एतदेवाऽऽहः-' कण्हलेस्सा ' इत्यादि. एताश्च ज्योतिष्क-वैमानिकानां न भवन्ति, सिद्धानां तु सर्वा न भवन्ति इति. तेजोलेइयाद्वितीयदण्डके जीवादिपदेषु त एव त्रयो भङ्गाः. पृथिव्य-प्-वनस्पतिषु पून. पङ् भङ्गाः-यत एतेषु तेजोलेक्या एकादयो देवाः पूर्वोत्पन्नाः, उत्पद्यमानाश्च लम्यन्ते इति हेतोः सप्रदेशानाम् अप्रदेशानां च एकत्य--बहुःवसंभव इति—एतदेवाऽऽहः-' तेउलेस्साएं इसादि. इह नारक-तेजो-वायु-विकलेन्द्रिय-सिद्भपदानि न वाच्यानि, तेजोलेश्याया अभावाद् – इति. पद्मलेश्या – शुक्ललेश्ययोद्धितीयदण्डके जीवादिषु पदेषु त एव त्रधो - भङ्गकाः, एतदेवाऽऽहः — ' पम्हलेंस्सा ' इत्यादि. इह च पश्चेन्द्रियतिर्थम्-मनुष्य-वैमानिकपदान्येव वाच्यानि, अन्येषु एतयोरभावाद्-इति, अलेक्यदण्डक्यो-जीव-मनुष्य-सिद्धपदानि एवो व्यन्ते, अन्येषाम् अछेइयत्वस्याऽसंभवात्-तत्र च जीव-सिद्धयोर्भङ्गकत्रयं तदेव. मनुष्येषु तु पड् भङ्गाः, अर्थे इयतां प्रतिपन्नानाम्, प्रतिपद्यमानानां च एकादीनां मनुष्याणां संभवेन सप्रदेशस्त्रे, अप्रदेशस्त्रे च एकत्व-बहुत्वसंभवाद् इति-इदमेत्राऽऽहः-' अलेसोहि ' इत्यादि. सम्यग्दष्टिदण्डकयोः सम्यग्दर्शनप्रतिपत्तिप्रथनसमयेऽप्रदेशत्वम् , द्वितीयादिषु तु सपदेशत्वम् ; तत्र द्वितीयदण्डके जीवादिपदेषु त्रयो भङ्गास्तथैव, विकलेन्द्रियेषु तु षट् , यतस्तेषु सासादनसम्बन्दष्टय एकादयः पूर्वेत्पनाः, उत्तदा-मानाश्च लम्यन्ते-अतः सप्रदेशत्वा-ऽप्रदेशत्वयोरेकत्व - बहुत्वसंभव इति. एतदेवाऽऽहः - ' सम्माईडी हें ' इत्यादि. इह एकेन्द्रियपरानि न वाच्यानि—तेषु सम्यग्दर्शनाऽभावादिति. ' मिन्छिईहीहिं ' इलादि. मिध्यादिष्टिदितीयदण्डके जीवादिपदेषु त्रथी भङ्गाः—मिध्यात्वे प्रतिपनाः बहवः, सम्यक्तभंशे तत् प्रतिपद्यमानाश्चेकाद्यः संभवन्ति इति कृत्वा. एकेन्द्रियपदेषु पुनः ' सप्रदेशाश्च अपदेशाश्च ' इत्येक एव—तेष्यवस्थितानाम् , उत्पद्यमानानां च बहूनानेव सावाद् इति. इह च सिद्धाः न वाच्याः तेषां मिथ्यात्वाऽभावादिति. सम्यगमिथ्यादृष्टि— बहुत्वदण्डके ' सम्मामिच्छिदिद्वीहिं छन्भंगा ' अयमर्थ:-सम्ममिध्यादृष्टित्वं प्रतिपन्नकाः, प्रतिपन्नमानाश्च एकाद्योऽपि छम्यन्ते-इत्यतस्तेषु षड् मङ्गा भवन्ति इति, इह च एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिय-सिखपदानि न वाच्यानि, असंभवाद् इति. ' संजप्हिं ' इत्यादि. संयतेषु संयतशब्दविशेषितेषु जीवादिपदेषु त्रिकमङ्गाः-संयमं प्रतिपन्नानां बहूनाम् , प्रतिपद्यमानानां च एकादीनां भावात् , इह च जीवपद-मनुत्र्यपदे एव बाच्ये, अन्यत्र संयतःबाऽभावाद् इति. असंयतद्वितीयदण्डके ' असंज एहिं ' इत्यादि. इह असंयतःबं प्रतिपन्नानां

बहूनाम् , संयतत्वादिप्रतिपातेन तत् प्रतिपद्यमानानां च एकादीनां भावाद् भङ्गकत्रयम् , एकेन्द्रियाणां तु पूर्वोक्तयुक्त्या ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इस्वेक एव भङ्ग इति. इह सिद्धपदं नाडभ्येयम्-असंभवाद् इति. संयतासंयतबहुत्वदण्डके ' संजयासंजएहिं ' इयादि. इह देशविर्ति प्रतिपनानां बहूनाम् , संयमाद् असंयमाद् वा निवृत्य तां प्रतिपद्यमानानां च एकादीनां भाषाद् भङ्गगकत्रयसंभवः, इह च जीवपञ्चेन्द्रियतिर्यम्-मनुष्यपदानि एवाऽध्येयानि, तदन्यत्र संयतासंयतस्यःऽभावादिति. ' नोसंजए ' इत्यादौ सैव भावना, नवरमः-इह जीव-सिद्धपदे एव वाच्ये, अत एवोक्तमः-' जीव-सिद्धोहें तियमंगो ' ति ' सकसाईहिं जीवाईओ तियमंगो ' ति अयमर्थः-सक्षायाणां सदाऽवस्थितत्वात् ते 'सप्रदेशाः ' इत्येको भङ्गः, तथोपशमश्रेणीतः प्रव्यवमानत्वे सक्षायत्वं प्रतिपद्यमाना एकादयो लम्यन्ते, ततश्च ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशश्च, ' तथा ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इत्यपरभङ्गकद्वयमिति. नारकादिषु प्रतीतमेव मङ्गकत्रयम्, ' एगिदिएसु अमंगयं ' ति भङ्गकानाम्-अभावोऽभङ्गकम् , ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इत्येक एव विकल्प इत्यर्थः, बहूनाम् अवस्थितानाम्, उत्पद्यमानानां च तेषु लाभादिति, इह च सिद्धपदं नाडम्येयम्, अक्षपायित्वात् . एवं क्रोधादिदण्डकेष्वपि-' कोहकसाईहिं जीवे-गिंदियवजो तियभंगो ' ति अयमर्थः-क्रोधकपाय-द्वितीयदण्डके जीवपदे, पृथिव्यादिपदेषु च ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्व' इत्येक एव भद्भः, शेषेषु तु त्रयः. ननु सक्तवायिजीवपदवत् कथिमह भङ्गत्रयं न छम्यते ! उच्यते:-इह मान-माया -छोभेम्यो निवृत्ताः क्रोधं प्रतिपद्यमाना बहव एव स्थयन्ते-प्रस्थेकं तद्राशीनामनन्तत्वाद्, न तु एकादयः-यथा उपशमश्रेणीतः प्रच्यवमानाः सक्षायित्वं प्रतिपत्तार इति. ' देवे।हॅं छन्मंग ' ति देवपदेषु त्रयोदशस्विप षड् भङ्गाः, तेषु क्रोघोदयवतामस्यत्वेन एकत्वे, बहुत्वे च सप्रदेशा-ऽप्रदेशत्वयोः संभवादिति. मानकषायि-मायाकषः विद्वितीयदण्डके ' नेरइय-देवेहिं छन्भंग ' ति नारकाणाम् , देवानां च मध्येऽल्पा एव मान-मायोदयवन्तो भवन्ति-इति पूर्वोक्तन्यायात् षद् भङ्गा भवन्ति-इति. ' लोहकसाई।हें जीवेगिदियवज्ञो तियभंगो ' ति एतस्य क्रोधसूत्रवद् भावना. ' नेरइएहिं छन्भंग ' ति नारकाणां लोमोदयवताम् अन्यत्व त् पूर्वीकाः षड् भङ्गा भवन्ति-इति. आह च:-'' कै।हे माणे माया बोधव्या सुरगणे।हें छन्भंगा, माणे माया लोभे नेरइएहिं पि छन्नंग'. '' देवा लोभप्रचुराः, नारकाः कोधप्रचुरा इति. अक्तपायिद्वितीयदण्डके जीव-मनुष्य-सिद्धपदेषु मक्कत्रयम् , अन्येषाम् असंभवात् , एतदेवाऽऽहः- ' अकताई ' इत्यादि. ' ओहियणाणे, आभिनिबोहियणाणे, सुयणाणे जीवाईओ तियभंगो ' ति औषि मज्ञानं मत्यादिभिरविशेषितम् , तत्र मति— श्रुतज्ञानयोश्च बहुत्वदण्डेक जीवादिपदेषुत्रयो मङ्गाः पूर्वीक्ता भवन्ति. तत्र औधिकज्ञानि-मति-श्रु ज्ञानिनां सदाऽवस्थित्वेन सप्रदेशानां भावात् ं सप्रदेशाः' इत्येकः. तथा मिथ्याज्ञानाद् मत्यादिज्ञानमात्रम् , मत्यज्ञानाद् मतिज्ञानम् , श्रुताऽज्ञानाच श्रुतज्ञानं प्रतिषद्यमानामाम् एकादीनां लामात् ' सप्रदेशश्व अप्रदेशाश्व ' तथा ' सप्रदेशाश्व अप्रदेशाश्व ' इति ह्रौ, एवं त्रयमिति. ' विगलिंदिएहिं छन्मंग ' सि ह्रि-त्रि – चतुरिन्द्रियेषु सासादनसम्यक्त्वसंभवेन आभिनिबोधिकादिज्ञानिनाम् एकादीनां संभवात् त एव षड् भङ्गाः. इह च यथायोगं पृथिव्याद्यः, सिद्धाश्च न वाच्याः, असंभवात् इति . एवम् अवध्यादिषु अपि भङ्गत्रयभावना, केवलम्-अवधिदण्डकयोरेकेन्द्रिय-विकलेन्द्रयाः. सिद्धाश्च न वाच्याः, मनःपर्यायदण्डकयोस्तु जीवाः, मनुष्याश्च वाच्याः, केवलदण्डकयोस्तु जीव-मनुष्य-सिद्धा याच्याः. अत एव वाचनाऽन्तरे दृश्यते—' विष्णेयं जस्स जं अस्थि ' ति. ' ओहिए अन्नाणे ' इत्यादि. सामान्येऽज्ञाने-मसज्ञानादिभिरविशेषिते, मत्यज्ञाने, श्रुताज्ञाने च जीवादिषु त्रिमक्की भवति-एते हि सदाऽवस्थितत्वात् 'सप्रदेशाः ' इत्येकः, यदा तु तदन्ये ज्ञानं विमुच्य मत्यज्ञानादितया परिणमन्ति तदा एकादिसंभवेन ' सप्रदेशाश्व अप्रदेशश्व ' इत्यादि भङ्गकद्वयम् , इत्येवं भङ्गकत्रवामिति. पृथिव्यादिषु तु ' सप्रदेशाश्व अप्रदेशाश्व ' इत्येक एव इत्यत आह:- ' एगिंदियवज्ञो तियभंगो ' ति इह च त्रयेऽपि सिद्धा न वाच्याः, विभन्ने तु जीवािषु भङ्गत्रयम् , तद्भावना च मत्यज्ञानादिवत् , केवलमिह एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रियाः, सिद्धाश्च न वाच्या इति. 'सजोई जहा ओहिय ' त्ति सयोगी जीवादिदण्डकद्वयेऽपि तथा वाच्यो आधिको जीवादिः, स च एवमः-सारोगी जीवो नियमात् सप्रदेशः, नारकादिस्तु सप्रदेशः, अप्रदेशो वा, बहवस्तु जीवाः सप्रदेशा एव, नारकाद्यास्तु विभक्कवन्तः, एकेन्द्रियाः पुनस्तृतीयभक्कवन्त इति. इह सिद्धपदं न ऽध्येयम् . ' मणजोई ' इत्यादि. मनोयोगिनो योगत्रयवन्तः - संज्ञिन इत्यर्थः, वाग्योगिन एकेन्द्रियवर्जाः, काययोगिनस्तु सर्वेऽप्येकेन्द्रि-यादयः-एतेषु च जीवादिषु त्रिविधो भङ्गः, तद्भावना चः-मनोयोग्यादीनामवास्थितत्वे प्रथमः, अमनोयोगित्वादित्यागाच मनोयोगित्वाद्य-स्पादेनाऽप्रदेशव्यलामेऽन्यमङ्गकद्वयमिति. नवरम्:-काययोगिनो ये एकेन्द्रियास्तेषु अमङ्गकम्-' सप्रदेशाः अप्रदेशाश्च ' इस्वेक एव भङ्गक इत्यर्थः. एतेषु च योगत्रयदण्डकेषु जीवादिपदानि यथासंभवम् अध्ययानि, सिद्धपदं च न वाच्यम् इति. 'अजोगी जहा अलेस ' ति दण्डकद्वयेऽपि अलेश्यसमवक्तव्यत्वात् तेषाम् , ततो द्वितीयदण्डके अयोगिषु जीव-सिद्धपदयोर्भङ्गकत्रयम् , मनुष्येषु च षर्भङ्गी इति. 'सागार ' इत्यादि. साकारोपयुक्तेषु, अनाकारोपयुक्तेषु च नारकादिषु त्रयो मङ्गाः, जीवपदे पृथिव्यादिपदेषु 'सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इत्येक एव. तत्र चाऽन्यतरोपयोगाद् अन्यतरगमने प्रथमे-तरसमयेषु अप्रदेशत्व-सप्रदेशत्वे भावनीये; सिद्धानां त्वेकसमयो-पयोगित्वेऽपि साकारस्य, इतरस्य चोपयोगस्याऽसकृत् प्राप्या सप्रदेशस्वम् , सकृत् प्राप्या चाऽप्रदेशस्वम् अवसेयम् ; एवं चाऽसकृद्वाप्तसाः कारोपयोगान् बहून।ऽऽश्रिस ' सप्रदेशाः ' इस्रेको भङ्गः, तानेव, सक्रदवातसाकारोपयोगं च एकमाश्रिस द्वितीयः, तथा तानेव, सक्दवाप्तसाकारोपयोगांश्व बहून् अधिकृत्य तृतीयः; अनाकारोपयोगे तु असकृत्प्राप्ताऽनाकारोपयोगान् आश्रित्य प्रथमः, तानेव,

१. प्र॰ छाः - कोषे माने मायायां बोद्धव्याः सुरगणैः यह भड़ाः, माने मायायां लोसे तैरियकंरिप यद भड़ाः - अनु०

सक्रत्प्राताऽनाकारोपयोगं चैकम् आश्रिस द्वितीयः, उभयेषामपि एकत्वे तृतींथ इति. ' सवेयगा य जहा सकसाइ ' ति सवेदानामान जीवादिपदेषु भङ्गकत्रयभावात् एकेन्द्रियेषु चैकभङ्गकसङ्गायात् , इह च वेदप्रतिपन्नान् बहून् , श्रेणिभ्रंशे च वेदं प्रतिपद्यमानकःन् एकादीनपेक्ष्य भद्गकत्रयं भावनीयम्:-' *इत्थिवियमा* ' इत्यादि. इह वेदाद् वेदान्तरसंक्रान्तौ प्रथमे समयेऽप्रदेशत्वम् , इतेरषु च सप्रदेशस्यम् अवगम्य मङ्गकत्रयं पूर्ववद् याच्यम् . न नुंसक्रवेददण्डकयोस्तु एकेन्द्रियेषु एको मन्तकः - सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इस्वेवंस्त्यः प्रागुक्तयुक्तरेवेति. स्त्रीदण्डक पुरुषदण्डकेषु देव-पञ्चत्द्रियतिर्यम्-मनुष्यपदान्येव, नपुंसकदण्डकयोस्तु वाच्यानिः सिद्धपदं च सर्वेष्विप न वाच्यमिति. ' अवेयगा जहा अकसाइ ' ति जीव-मनुष्य-सिद्धपदेषु भङ्गकत्रयम् अकषाथिवद् वाच्यमित्यर्थः. ' ससरीरी जहा ओ।हिओ ' ति औ।विकदण्डकवत् सशरीरिदण्डकयोर्जीवपदे सप्रदेशता एव वाच्या, अनादित्वात् सशरीरत्वस्य; नारकादिषु तु बहुत्वे भङ्गकत्रयम् . एकेन्द्रियेषु तृतीयभङ्ग इति. ' ओरालिय-वेजिय-सरीराणं जीवे-गिदियवज्ञो तिमंगों ' ति औदारिकादिशरीरसत्त्रेषु, जीवपदे, एकेन्द्रियपदेषु च बहुत्वे तृतीयमङ्ग एव, बहुनां तेषु प्रतिपन्नानाम् , प्रतिपचमानानां चाऽनुक्षणं छाभात् , शेषेषु मङ्गकत्रयम् . बहूनां तेषु प्रतिपन्नानाम् , तथा औदारिक-वैक्रियत्यागेन औदारिकम् , विकियं च प्रतिपद्यमानानःम् एकादीनां छःभात् . इह औदारिकदण्डकयोर्नारकाः, देवाश्च न वाच्याः; वैक्रियदण्डकयोस्तु प्राधिव्य-प्-तेजो -वनस्पति—विकलेन्द्रिया न वाच्यः. यश्च वैक्रियदण्डके एकेन्द्रियपदे तृतीयभङ्गोऽभिधीयते सत्रायूनामसंख्यातानां प्रतिसमगं वैक्रियकरण-माश्रिस, तथा यद्याप पञ्चेन्द्रियतिर्पञ्चो मनुष्याश्च वैक्रियङ्गिमन्तोऽस्ये, तथापि भङ्गकत्रयवचनसामध्यीद् बहुनां वैक्रियाऽयस्थानसंसवः, तथैकादीनां तत् प्रतिपद्यमानता च अवसेया. 'आहारगा र इत्यादि. आहारकशरीरे जीव-मनुष्ययोः पड् मङ्ग हाः पूर्विका एव, आहारकशरीरिणाम् अरु।त्वात्-शेषजीवानां तु तन संभवतीति. ' तेयगा ' इत्यादि. तैजस-कार्मणशरीरे समाधित्य जीवादयस्त्रया वाच्याः यथा औधिकाः-ते एव, तत्र च जीवाः सप्रदेशा एव वाच्याः; अनःदित्वात् तैजसादिसंधोगस्य, नारकादयस्तु त्रिमङ्गाः, एकेन्द्रियास्तु तृतीयभङ्गाः. एतेषु च शरीरादिदण्डकेषु सिद्धपदं नाऽय्येयम् इति. ' असरिरा ' इत्यादि. अशरीरेषु जीवादिषु सप्रदेश-तादित्वेन वक्तव्येषु जीव-सिद्धपदयोः पूर्वोक्ता त्रिमङ्गी वाच्या, अन्यत्र अशरीरत्वस्याऽभावत्व् इति. ' आहारपजाचीए ' इत्यादि. इह च जीवपदे, पृथिच्यादिपदेषु च बहूनाम् आहारादिपयीतीः प्रतिपन्नानां तदपर्यातित्यागेनाऽऽहारपर्यादिभिः पर्यातिमातं गच्छतां च बहुनामेव लाभात् ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ' इत्येक एव भङ्गः, शेषेषु तु त्रयो भङ्गा इति. ' माता-मण-' इत्यादि. इह मापा-मनसोः पर्यातिः - भाषा-- मनः पर्यातिः , भाषा-- मनः पर्याप्योख्योस्तु बहुश्रुताऽभिगतेन केनाऽपि कारणेन एकत्वं विवाक्षितम् , ततश्च तया पर्याप्तका यथा संज्ञिनस्तथा सप्रदेशादितया वाच्याः, सर्वपदेषु भङ्गकत्रपमित्यर्थः. पञ्चेन्द्रियपदान्येव चेह वाच्यानि. पर्याप्तीनां च इदं सरूपमाहु:-येन करणेन मुक्तमाहारं खलम् , रसं च कर्तुं समर्थो भवति तस्य कर गस्य निष्पत्तिराहारपर्यातिः, करणम् , शक्तिरिति पर्यायौः तथा शरीरपर्यातिनीम येन करणेन औदारिक-वैक्रिया-ऽऽहारकाणां शरीराणां योग्यानि द्रव्याणि गृहीत्वा औदारिकादिभावेन परिणमयति, तस्य करणस्य निर्धृतिः शरीरपर्याप्तिरिति. तथा येन करणेन एकादीनाम् इन्द्रयाणां प्रायोग्यानि द्रव्याणि गृहीत्वा आत्मीयान् विषयान् इत्तुं समर्थी भवति, तस्य करणस्य निर्दृतिरिरिन्द्रियप्योप्तिः. तथा येन करणेनाऽऽन-प्राणप्रायोग्यानि द्रव्याणि अवलम्ब्य अवलम्ब्य अन-प्राणतया निःस्रष्टुं समर्थो भवति, तस्य करणस्य निर्वृतिः-आन-प्राणपर्यक्तिरितिः तथा येन करणेन स यादिभाषायाः प्रायोग्यानि द्रव्याणि अवलम्ब्याऽवलम्बय चतुर्विधमाषया परिणमय्य भाषानिसर्जनसमर्थो भवति, तस्य करणस्य निष्पति-र्भाषापर्यातिः तथा येन करणेन चतुर्विधमनोयोग्यानि द्रव्याणि गृहीत्वा मननसमर्थी भवति, तस्य करणस्य निष्पतिर्मनःपर्यातिरिति. 'आहारअपज्जतीए ' इत्यादि. इह जीवपदे, पृथिव्यादिपदेषु च 'सप्रदेशाश्व अप्रदेशाश्व' इत्येक एव भङ्गकः-अनवरतं विप्रहगतिमता-म ऽऽहाराऽपर्याप्तिमतां बहूनां छाभात्, शेषेषु च षड् भङ्गाः पूर्वोक्ता एवं —आहारापर्याप्तिमतामल्पत्व.त्. ' सरीरअपज्यतिए ' इत्यादिः इह जीनेषु, एकेन्द्रियेषु, च एक एव मङ्गः, अन्यत्र तु त्रयम् - सरीराद्यपर्यातिकानां काळतः सप्रदेशानां सदैव लाभात् , अप्रदेशानां च कदाचिद् एकादीनां च लामात् . नारक-देव-मनुष्येषु च षड् ^{९व} इते. ' भासा ' इत्य,दि. भाषा-मनोऽपर्यस्या अपर्यातकान्ते येपां जातितो भाषा-मनोपोरयत्वे सति तदसिद्धिः-ते च पश्चेन्द्रिया एव, यदि पुनर्भाषा-मनसोरभावगात्रेण तदपर्याप्तका अभविष्यंस्तदा एकेन्द्रिया अपि तेऽभविष्यंस्ततश्च जीवपदे तृतीय एव भङ्गः स्यात्, उच्यो चः-' जीवाइओ तियमंगो 'ति तत्र जीवेषु, पञ्चन्द्रियतियक्ष च बहूनां तदपर्याप्तें प्रतिपन्नानाम् , प्रतिपद्मनानानां चैकादीनां लाभात् पूर्वोक्तमेव भक्कत्रयम् . 'नेरइय-देव मणुएसु छन्मंग ' ति नैरियकादिषु मनोऽपर्यातकानाम् अल्पतरत्वेन सप्रदेशा-ऽप्रदेशानाम् एकादीनां लाभात् त एव षड् मङ्गाः. एषु च पर्याप्य -पर्यातिदण्डकेषु सिद्धपदं नाऽध्येयम्-असंभवाद्-इति. पूर्वोक्तद्वाराणां संप्रह्माधाः- सपएसा 'इत्यादि. 'सपएस ' ति कालतो जीवाः सप्रदेशाः, इतरे च एकाव-बहुःवास्यामुक्ताः. ' आहारग ' ति आहारकाः, अनाहारकाश्च तथैव. ' मिथ्य ' ति मय्याः, अमय्याः, उभयनिषेघाश्च तथैव. ' साचि ' ति संज्ञिनः, असंज्ञिनः, द्वयनिषेधवन्तश्च तथैव. ' लेस ' ि सलेश्याः -कृष्णादिलेश्याः, अलेश्यश्च तथैव. ' दिष्टि ' ति द्य दृष्टि:-सम्यग्दृष्यादिका, तद्रम्तस्यथेय. 'संजय 'ति संयताः, असंयताः, मिश्राः, त्रयनिपेधिनश्च तथैव. 'कसाइ 'ति कषाविणः क्रोधादिमन्तः, अकषायाश्च तथैव. ' नाणे ' ति ज्ञानिनः आमिनिकोधिकादिज्ञानिनः, अज्ञानिनो मलज्ञानादिमन्तश्च तथैव.

' जोग ' त्ति संयोगाः-मन-आदियोगिनः, अयोगिनश्च तथैव. ' उवओगे ' ति साकारा-ऽनाकारोपयोगास्तथैव. 'वेदे ' ति संवेदाः-स्त्रीवेदादिमन्तः, अवेदःश्व तथैव. ' ससरीर ' ति सशरीरा औदारिकादिमन्तः, अशरीराश्व तथैव. ' पजत 'ति आहारादिपर्यातिमन्तः, तदपर्याप्तिकाश्व तथैवोक्ता इति.

छन्धीर-दंडक.

१. आगळना उद्देशकर्मा जीवनुं निरूपण कर्युं छे. अने हुवे आ चोथा उद्देशकर्मा पण ते ज जीवने बीजे प्रकारे निरूपता [' जीवे णं ' इत्यादि] सूत्र कहे छे. ['काठादेसेणं ' ति] काठना प्रकार वर्ड, काठने आश्रीने अर्थात् काठनी अर्थाए, ['सपएसे ' ति] विभाग सप्रदेश. सहितः ['नियमा सपएसे 'ति] अनादिपणाने लीधे जीवनी अनंत समयनी स्थिति होवाथी तेने (जीवने) सप्रदेशपणुं छे—जे एक समयनी स्थितिवाळो होय ते काळनी अपेक्षाए अप्रदेश छे अने जे एकथी वधारे एटले बे वगरे समयनी स्थितिवाळो होय तो ते कालनी गाया. अपेक्षाए सप्रदेश छे. आहें आ गाथावडे मावना करवी अर्थात् सप्रदेश अने अप्रदेशनुं खरूप आ गाथाने अनुसार जाणवुः " जे जीव प्रथम समये जे भावमां वर्ततो होय ते जीव अप्रदेश कहेवाय अने प्रथम सिवायना समयमां—बीजा, त्रीजा वगेरे समयमां—वर्ततो ते ज जीव कालादेशबंडे सपदेश कहेवाय '' जे नैरियक जीवने उत्पन्न थयां प्रथम (एक) ज सन्य थयो छे--ते कालादेशबंडे अप्रदेश कहेवाय अने वळी प्रथम पछीना बे बगेरे समयमां वर्ततो ते ज नैरियक जीव, कालादेशवडे सप्रदेश कहेवाय, माटे कर्नु छे के, [' सिय सप्पएसे, सिय अप्पर्स '] एटले कोइ सप्रदेश होय अने कोइ अप्रदेश होय ए प्रमाणे जीवथी मांडीने सिद्ध सुधीना छव्वीश दंडकमां आवता दरेक जीव माटे एक संख्याने आश्री—एक वचनथी—कालनी अपेक्षाए सप्रदेशत्यादिभावे विचार कर्यो, हवे तेम ज, ए ज छव्वीश दंडक परत्वे पृथक्त्यभावे बहुत्व. —बहुपणे—विचार करीए छीए: [' सब्वे वि ताव होजा सपएस ' ति] उपपात-उत्पत्ति-ना विरह काळमां पूर्वोत्पन्न जीवोनी संस्या, असंख्यात होवाथी बधा पण सप्रदेश होय, तथा पूर्वात्पन्न नैरियकोमां ज्यारे बीजो एक पण नैरियक उत्पन्न थाय त्यारे प्रथम समयना उत्पन्न पाने नैरिक. टाइने तेनुं अप्रदेशपणुं होवाधी ते अप्रदेश कहेवाय अने ते सिवायना बाकीना नैरियक्रोनुं वे बेगरे समयमां--पेठा समय पछी । समयोमां--हयातपणुं होवाथी तेओना सप्रदेशपणाने लहने तेओ सप्रदेश कहेवाय, माटे कहेवाय छे के, ['सप्पर्सा य, अपएसे 'य ति] केटलाक सप्रदेश अने एकाद अप्रदेश. ए प्रमाणे ज्यारे धणा जीवो उत्पद्यमान होय त्यारे एम कहेवाय के ['सप्पएसा य अपएसा य 'ति] एटले केटलाक सपदेश के अने केटलाक अप्रदेश के, अने एक काळे एकादि नैरियको उत्पन्न पण थाय के, कहां के के " एक, बे, जण, संख्याता अने पृथिवी. असंख्याता जीवो एक समयमां उत्पन्न थाय छे अने एटला ए ज प्रमाणे उद्धतें छे-मरे छे. "['पुढविक्काइया णं ' इत्यादि.] पूर्वोत्पन्न अने उत्पद्यमान एकेंद्रियो घणा होवाथी [' सपएसा वि, अप्पएसा वि '] एटले ' केटलाक सप्रदेश छे अने केटलाक अप्रदेश छे ' एम कहेवाय छे. वेइंद्रियादि, ['सेसा जहा नेरदया ' इत्यादि.] जे प्रमाणे त्रण अभिलामधी नैरियको कहा ते प्रमाणे बाकीना वेइंद्रिय वगेरे सिद्ध सुधीना जीवो जाणवा, हारक-अनाहारक, कारण के ए बधाने विरहनो संभव होवाथी एओनी एकादिनी (एक, बे, त्रण, चार वर्गरेनी) उत्पत्ति छे- ए प्रमाणे आहारक अने अनाहारक शब्दथी विशेषित थएला जीवोना एकवचनथी एक, अने बहुवचनथी एक ए प्रमाणे वे दंडक कहेवा, कहेवानी क्रम आ प्रमाणे छे:- हे भगवन ! जां आहारक जीव कालादेशथी सप्रदेश छे के अप्रदेश छे ? हे गौतम ! कदाच सप्रदेश छे अने कदाच अप्रदेश छे ' इत्यादि-ते कम पोतानी बुद्धि अनुसार कहेवो, तेमां जे जीव ज्यारे विग्रहमां अथवा केविल -समुद्धातमां अनाहारक थर्डन फरीथी आहारकपण् प्राप्त करे त्यारे आहारकपणाना प्रथम समयमां वर्ततो ते जीव अप्रदेश कहेवाय अने बीजा क्योरे समयमां तो वर्ततो ते आहारक जीव सप्रदेश कहेवाय माटे कहेवाय छे के, [' सिय सपएसे, सिय अपएसे ' ति] एटले कदाच कोइ सप्रदेश अने कोइ अप्रदेश. ए प्रमाण वधा यपण आदिवाळा भावोमां-पदार्थोमां, -एकवचनमां जाणी छेवुं अने अनादिवाळा भानोमां तो ['नियमा सपएसे 'ति] एटछे 'चोक्कस सप्रदेश छे ' एम समजी हेवुं. बहुवचनवाळा दंडकमां तो आ प्रमाणे अभिलाप जाणवो:-' हे भगवन् ! शुं आहारक जीवो कालादेशथी सप्रदेश छे के अप्रदेश छे १ हे गौतम ! सप्रदेश पण छे अने अप्रदेश पण छे, कारण के, ते आहारकरणामां रहेला घणा जीवो होवाथी तेओनुं सप्रदेशपणुं छे तथा घणाओने विग्रहगति पछी तरत ज प्रथम समयमां आहारकपणानो संभव होवाथी तेओनुं अपदेशपणुं पण छे-ए प्रमाणे आहारक जीवोमां सप्रदेशपणुं अने अप्रदेशपणुं-ए बन्ने लामें छे माटे ज 'सप्रदेशो पण अने अप्रदेशो पण 'एम कह्युं छे, ए प्रमाण पृथिवी चंगरे पण कहेवा अने नारकादि तो वळी त्रण विकल्पवडे कहेवा, ते जेमके; ' हे मगवन् ! शुं आहारक नैरियको (कालादेशथी) सप्रदेश छे के अप्रदेश छे १ हे गौतम ! बवा पण १ सप्रदेश होय, अथवा २ केटलाक सप्रदेश होय अने एकाद अप्रदेश होय ३ अने केटलाक सप्रदेश होय तथा केटलाक अप्रदेश होय, ए ज वातनें कहे छे:--ি आहारमाणं जीव-एगिंदियवजो तियभंगो ' । एटले एक जीवपदने अने एकेंद्रियनां पांच पदने वर्जीने त्रण मांगा कहेवा, आ स्थळे ' सिद्धपद ' तो न कहेवुं, कारण के, तेओ (सिद्धो) अनाहारक ज छे, ए प्रमाणे अनाहारक जीवोने लगता पण (एकत्वनो एक अने बहुत्वनो एक एम) वे दंडक अनुसरवा, तेमां विम्रहगतिने प्राप्त जीव, समुद्धातगत केवली, अयोगी अने सिद्ध-ए वधा अनाहारक छे, अने तेओ वधा अनाहारकपणाना प्रथम समये वर्तता होय तो अप्रदेश कहेवाय अने वीजा वगेरे समयमां वर्तता होय तो सप्रदेश कहेवाय, माटे कहां छे के, 'कदाच सप्रदेश होय ' वर्गरे. बहुपणाना दंडकमां विशेषता कहे छे के, [' अणाहारगाणं ' इत्यादि.] जीवोने अने एकेन्द्रियोने वर्जे ते ' जीवकेन्द्रिय वर्ज ' कहेवाय- तेओने वर्जीने, जीवपदमां अने एकेन्द्रियपदमां [' सपएसा य अपएसा य '] एटले 'केटलाक सप्रदेशो अने केटलाक अप्रदेशो ' -एं प्रमाणे एक ज सांगी थरो, कारण के, ते बन्ने पदमां विश्रहगतिने प्राप्त एवा अनेक सप्रदेश जीशे अने अनेक अप्रदेश जीशे छामे छै. नैरियक वमेरेनो तथा वेइंद्रिय वमेरेनो थोडाओनो उत्पाद थाय छे अने तेमां एक, बे वमेरे अनाहारको होवाथी छ मंगो थवानो संभव छे, ते छ भागामां बे भीगा तो बहुबचनांत छे अने बीजा चार भांगा तो एकबचन अने बहुबचनना संयोगथी थया छे, आ ठेकाणे केवल एकवचनना वे भांगा नधी. कारण के, अहिं बहुपणानी अधिकार छे. ['सिदंहिं तियमंगी 'ति] एटले सिद्धीमां त्रण मांगा थाय, कारण के, तेमां सप्रेदश पद

१. सप्रदेशो (१). अप्रदेशो (२). २. सप्रदेश अप्रदेश (३). सप्रदेश अप्रदेशो (४). सप्रदेशो अप्रदेशो (५). सप्रदेशो अप्रदेशो (६):-अस्ट

बहुवचनवाळुं ज संभवे छे. [' भवतिद्धीय अभवतिद्धीय जहा आहिय ' ति] आ वाक्यनी अर्थ आ प्रमाणे छे:-भवतिद्धिक अने अभवतिद्धिक अन्य-१४००४. -एओना प्रत्येकना वे दंडक छे-ते औषिक-सामान्य जीव-ना दंडक ही पेठे जाणवा, अने तेमां भव्य अने अभव्य जीव चेक्कस सप्रदेश छे अने नैरियकादि जीव तो सप्रदेश अथवा अप्रदेश छे, घणा जीवो तो सप्रदेश ज होय छे, नैरियकादि जीवो तो वण भांगावाळा छे, अने वळी, एकेन्द्रिय जीवो ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाणे एक ज भांगावाळा छे, आहें भव्य अने अभव्यना प्रकरणमां ' सिद्धपद ' न कहेतुं, कारण के, सिद्धोमां ' भव्य ' अने ' अभव्य ' ए बन्ने विशेषणोनी उपपत्ति धती नथी अर्थात् सिद्धां, भव्य के अभव्य कहेवाता नथी, तथा [' नोभवसिद्धिय - नोभव्य-नोअभव्य. नोअभवसिद्धिय 'ति] अर्थात् 'भव्य नहि 'अने ' अभव्य नहि 'एवा विशेषणवाळा जीवादिक ने दंडक कहेवा-तेने लगतो अभिलाप आ प्रमाणे छे:- हे भगवन ! नोभवसिद्धिक जीव अने नोअभवसिद्धिक जीव सप्रदेश छे के अप्रदेश छे ३ ७ इत्यादि. ए प्रमाणे पृथक्त्व - इत्पणानो -दंडक पण कहेंचो, मात्र आहें जीवपद अने सिद्धपद, ए पद ज कहेगां, कारण के, नैरियकादिन 'नोभन्य ' के 'नोअभन्य ' ए विशवणनी अनुपपत्ति छे एटले ए वे विशेषण नैरियकादिने लागी शकतां नथी, अने पृथक्तवदंडकमां पूर्वोक्त त्रण भींगा अनुसरवा, माटे ज कहां छे के, [' जीवसिद्धिहिं तियमंगो ' ति.] संजिओमां जे वे दंडक छे तेमां बीजा दंडकमां जीवादिपदोमां त्रण भागा थाय छे माटे कह्यू छे के, ['सिन्निहि ' संबी. इत्यादि.] तेमां चिरोत्पन्नोनी-लांबा काळथी उत्पन्न थएलानी-अपेशाए संज्ञिजीयो कालथी 'सप्रदेशो 'छे अने उत्पाद विरहनी पछी ज ज्यते एक जीवनी उत्पत्ति थाय त्यारे तेना प्रथमपणामां 'सप्रदेशो अने अप्रदेश 'ए प्रमागे कहेवाय तथा ज्यारे घणाओनी उत्पत्तिनुं प्रथमपणुं हे य त्यारे तो ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' एम कहेवाय, ते ए प्रमाणे जण मांगा जागवा, ए प्रमाणे बधा पदोमां जागवुं. मात्र ए व दंडकमां एकेंद्रिय, विकर्लेंद्रिय अने सिद्ध पदो न कहेवां, कारण कें, तेओमां 'संज्ञी 'ए विशेषणमो असंभव छे ['असन्नीहि ' इत्यदि] आ वाक्यनो अर्थ आ छै:-असंज्ञिओमां एटले पृथिव्यादिपदोने वर्जीने असंज्ञिओ परत्वे बीजा दंडकमां प्रथम दर्शावेला ज त्रण भांगा जाणवा अने पृथिव्यादिपदोमां ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाणे एक ज भांगो जाणवो, कारण के, ते पृथिवीकायादिमां हमेशा घणा जीवोनी उत्पत्ति होवाथी तेओना अप्रदेश-पणानुं बहुत्व पण संभवे छे. नैरियकोथी मांडी ब्यंतर सुधीना संज्ञी जीवोनुं पण असंज्ञीपणुं जाणवुं, कारण के अनेक असंज्ञिओ पण मरण पामीने नैरियकादि व्यंतर सुधीना जीवोगां उत्पन्न थाय छे माट भूतभावनी अपेक्षाए-भूतकाळे ' असंज्ञी हता ' ते अपेक्षाए-नैरियकादि व्यंतरांत जीवो, भूतभाव. जेओ संज्ञी छे तो पण असंज्ञी जाणवा, तथा नैरियकादिमां असंज्ञिपणु कादाचित्क होवाधी एकपणानो अने बहुपणानो संभव छे माटे छ भांगा थाय छे अने ते छ भांगा दर्शांट्या ज छे, ए ज कहे छे के, [' नेरइअ-देव-मणुए '-इत्यादि.] आ असंजिशकरणमां ज्योतिष्क, वैमानिक अने सिद्धों न कहेवा, कारण के, तेओने असंशिषणानो संभव नथी तथा ' नोसंशी ' अने ' नोअसंशी ' विशेषणवाळा व दंडकमां बहुत्वरूप बीजा दंडकमां जीव, मनुष्य अने सिद्धपदमां उक्तरूप-प्रथमनी जेवा-त्रण भांगा थाय छे, कारण के, तेओमां घणा अवस्थिती लाभे छे अने उत्पद्यमान एकादिनो तेओमां संभव छे, ए वे दंडकमां जीव, मनुष्य अने सिद्धपदो ज कहेवां, कारण के नैरियकादिपदोने 'नोसंज्ञी 'अने 'नोअसंज्ञी ' ए बन्ने विशेषणो घटतां नथी. सलेश्य-लेश्यावाळा-ना वे दंडकमां जीव अने नैरियको औधिक-सामान्य-दंडकनी पेठे कहेवा, कारण के, जीवस्वपणानी केश्या. पेठे संहेश्यपणुं पण अनादिनुं ज हे-तेयी ए बन्नेमां कोइ प्रकारनी विशेषता जणाती नथी, मात्र राहेद्य अधिकारमां सिद्धाद न कहेतुं, कारण के, तेओ-सिद्धो-छेश्या विनाना छे. कृष्णलेश्यायाळा, नीललेश्यायाळा अने कापोतलेश्यायाळा जीवो अने नैरियकोना-प्रस्येकना वे दंडक आहारक जीवादिनी पेठे उपयोग पूर्वक-सावधानता पूर्वक-कहेवा, मात्र जैन-ज जीव, नरियकादिने-ए टेश्या-कृष्णादि टेश्या-होय ते ज अहिं कहेवी, ए ज कहे छे:-['कुण्हलेस्सा' इत्यादि.] ए कृष्णादि-लेस्याओ, ज्योतिष्कोन अने वैमानकोने नथी होती अने सिद्धोने तो त बधीमांनी कोइ एण लेख्या नथी ज होती. तंजोछेश्याना वीजा दंडकमां जीवादिपदोमां ते ज वण भांगा कहेवा, अने बळी पृथिवी, जल अने वनस्पतिओमां छ भांगा कहेवा, कारण के, ते पृथिबी बंगरेमां तेजोलेस्यावाळा एकादि देवो, जेओ पूर्वोत्पन्न होय छे, तेम उत्पद्यमान होय छे, तेओ लामे छे, माटे सप्रदेशे ने अने अप्रदेशोतुं एकपणुं अने बहुपणुं संमये छे, ए ज कहे छे:-['तेउलेस्साए 'इत्यादि.] आ स्थळे-तेजोलेस्याना प्रकरणमां नेरियक, तेज-अमि,-बायु, विकछेन्द्रिय अने सिद्ध, एटलां पदो न कहेवां, कारण के, एओने तेजोलेस्या नथी होती अने पद्मलेस्याना तथा शुक्ललेस्याना बीजा दंडकमां जीवादिपदोमां ते ज जल भांगा कहेवा, ए ज कहे छे:-['पहालेस्सा ' इत्यादि.] वळी, आ पदालेस्याना अने शुक्ललेस्याना प्रकरणमां पंचेंद्रियतिर्यंच, मतुष्य अने वैमानिकपदो ज कहेवां, कारण के, बीजाओमां ते वे टेश्याओ नथी होती, अलेश्य-टेश्यारहित-जीवना एकत्य अने अने बहुत्वरूए वे दंडकमां जीव, मनुष्य अने सिद्ध पदो ज कहेवां, कारण कें, बीजाओने लेश्यारहितपणानो संमव नथी, अने तेमां जीव अने सिद्धना ते ज त्रण भांगा जाणवा, मनुष्योमां तो छ भांगा जाणवा, कारण के, अलेश्यपणाने प्रतिपद्म-पामला-अने अलेश्यपणाने प्रतिपद्ममान-पामता-एकादि मनुष्योनो संभव होवाथी सप्रदेश-णामां अने अप्रदेशपणामां एकत्वनो अने बहुत्वनो संभव छे-आ ज वातने कहे छे:-['अरुसेहि ' इत्यादि.] सम्यग्दष्टिना व दंडकमां, सम्यग्दर्शननी प्राप्तिना प्रथम समये अप्रदेशपणुं छे अने पछीना वीजा वेगेरे समयोगां सप्रदेशपणुं छे, तेमां बीजा दंडकमां जीवादिपदोनां तथेंत-पूर्वोक्तानुसार-त्रण सांमा जाणवा अने विकर्टेद्रियोमां तो छ भांगा जाणवा, कारण के, ते विकर्टेद्रियोनां पूर्वीत्पन्न अने उत्पद्यमान एकादि सासादनहम्यग्दृष्टिओं लाभ छे माट सप्रदेशत्वमां अने अप्रदेशत्वमां एकत्वनो अने बहुत्वनो समय छे. ए ज कहे कें:-['सम्मदिहीहिं 'इत्यादि.] आ सम्यग्दृष्टिहारमां एकेंद्रिय पदो न कहेवां, कारण के, तेओमां सम्यग्दर्शन नथी होतुं. ['मिच्छिदिहीहिं ' इत्यादि.] मिथ्यादृष्टिना बीजा दंडकमां जीवादि पदोमां त्रण भांगा कहेवा, कारण के, मिथ्यात्वने प्रतिपन्न वणा छे अने सम्यत्क्वणी अष्ट यया पछी मिथ्यात्वने प्रतिपद्यमान एकादि जीवो संभवे छे-एम करीने त्रण मांगा जाणवाः अने वळी, अहीं मिथ्यादृष्टिना अधिकारमां एकेन्द्रियपदोमां 'सप्रदेशो अने अप्रदेशों ' ए प्रमाणे एक ज भांगों छे, कारण के, ते एकेंद्रियोगां अविश्वितों अने उत्पद्यमानों घणा होय छे, अहिं सिद्धों न कहेत्रा, कारण के, तेओन मिध्यात्व नथी होतुं. सम्यामिध्यादृष्टिना बहुगणाना दंडकमां ['सम्मामिच्छिदिद्वीहिं छन्मंगा '] ए सूत्र छे अने एनो अर्थ आ छः - सम्यामिध्यादृष्टि. सम्यामिथ्यादृष्टिपणाने पामेला अने पामता एकादि जीवो पण लाभे छे, माट तेओमां छ भांगा छे. अहिं एटले सम्यामिथ्यादृष्टिद्वारमां एकेंद्रियो, विकलेंद्रियो अने सिद्धो न कहेवा, कारण के, तेओमां सम्यामिध्यादृष्टिपणानो असंभव छे. [' संजद्हिं ' इत्यादि.] संयतोमां एटछे संयतशब्दधी संयतः

१. सप्रदेशो (१). सप्रदेशो अप्रदेश (२). सप्रदेशो अप्रदेशो (३):--अड्-

विशेषित थएला जीवादिपदोमां त्रण भांगा जाणवा, कारण के, संयमने पामेला घणा होय छे अने संयमने पामता एकादि जीवो होय छे, अने अहिं संयतद्वारमां जीवपद अने मनुष्यपद, ए बे ज कहेवां, कारण के, बीजे स्थळे संयतपणानी अभाव छे. असंयतना बीजा दंडकमां ['असंजएहिं ' इत्यादि.] अहिं असंयतपणाने पामेला घणा होय छे अने संयतत्वादिथी पड्या पछी ते असंयतपणाने पामता एकादि जीवो होय छे माटे तेमां वण भांगा जाणवा, अने पूर्वोक्त युक्तिवडे एकेंद्रियोने लगतो तो 'सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाणे एक ज मांगो छे, अहिं असंयतद्वारमां 'सिद्ध ' संयतासंयत. पद न कहें छुं, कारण के, सिद्धोने असंयत्पणुं संभवतुं नथी। संयतासंयतना बहुत्वदंडकमां [' संजयासंजएहिं ' इत्यादि।] अहिं देशविरतिन पामेला घणा होय छे, अने संयमधी वा असंयमधी निवर्ती ते देशविरतिने पामता एकादि जीवो होय छे माटे त्रण भांगानी संभन्न छे, अने अहिं संयता-संयतद्वारमां जीव, पंचेंद्रियतिर्येच अने मनुष्य पदो ज कहेवां, कारण के, ते त्रण पदो सिवाय बीजे स्थळे संयतासंयतपणुं संभवतुं नथी. ['नोसंजए ' -इत्यादि] सूत्रमां ते ज भावना करवी, विशेष ए के, अहिं 'जीव 'अने 'सिद्ध ' ए वे पद ज कहेवां, गाटे ज कबं छे के, ['जीव-सिडेहिं नो संयतादि. तियभंगो ' ति.] [' सकसाईहिं जीवाईओ तियभंगो ' ति] आ वाक्यनो अर्थ आ छे:-सकषायो-कषायवालाओ-हमेशा अवस्थित होवाथी तेओं 'सप्रदेशों ' होय छे, एम एक मांगो थयो, तथा उपग्रमश्रेणिश्री पडता होवाश्री सकषायपणाने पामता एकादि जीवो लागे छे माटे 'सप्रदेशों अने अपदेश 'तथा 'सपदेशो अने अपदेशो ' ए प्रमाणे बीजा बे भांगा जाणवा, नैरियकादिमां त्रण भांगा छे, ते प्रतीत ज छे [' एगिंदिएस अभंगयं 'ति] घणा भांगाओनो अभाव ते अभंगक अर्थात् एकेंद्रियोगां ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाणे एक ज विकल्प-मांगो-थाय छ, कारण के, ते एकेंद्रियोमां घणा अवस्थितो अने घणा उत्पद्यमानी लाभे छे. अहिं-कषायिद्वारमां- ' सिद्ध 'पद न कहेवुं, कारण के, सिद्धो कषाय रहित है, ए प्रमाणे क्रोधादि दंडकोमां पण [' कोहकसाईहिं जीवे-मिंदियवज्ञो तियमंगो ' ति] आ वाक्यनो अर्थ आ हे:- क्रोध कथायना बीजा दंडकमां जीवपदमां अने पृथिवी वेगेरे पदोमां ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाणे एक ज भांगो छे अने बाकीनाओमां तो त्रण भांगा छे. शं०-जेम उपर सक्तवायी जीवपदमां हमणां त्रण मांगा कहा छे तेम ज अहीं पण-क्रोधकषायिमां-त्रण मांगा न कहेतां ' सप्रदेशों अने अपदेशों १ एवो एक ज मांगो ह्या माटे कहारे ? समा०-सकषायी जीवपदमां तो उपशमश्रेणीथी पडता एकादि जीवो संभवे छे, पण अहीं क्रोध कपायिना अधिकारमां तो तेम संभवतुं नथी. किंतु अहीं मान, माया अने छोमथी निवर्तेला अने कोधने पामता जीवो घणा ज लामे छे, कारण के, ते प्रत्येके, क्रोध कषायिओनी राशी अनंत छे.-ए प्रकारे अहीं एकादिनी संभव न होवाथी सकषायीनी पेठे त्रण भांगा न थई शके. ∫ 'देवेहिं छन्में 'ति | देवपदोमां तेरे दंडकोमां पण छ भागा कहेवा, कारण के, तेओमां क्रोधना उदयवाळाओनुं अल्पपणुं होबाधी एकपणाने अने बहुपणाने लड़ने सप्रदेशत्व अने अप्रदेशत्व नो संभव छे. मानकषायवाळाना अने मायाकषायवाळाना बीजा दंडकमां ['नरइअ-देवेहिं छब्संग 'ति] अर्थात् नैरियकोमां अने देवोमां मानना अने मायाना उद्यवाळा थोडा ज होय छे माटे पूर्वोक्त न्यायथी तेमां छ भांगा थाय छे. ['छोहक-साईहिं जीवेगिंदियवजो तियभंगो ' ति] आ सूत्रनी भावना क्रोधसूत्रनी पेठे करवी. [' नेरइएहिं छव्मंग ' ति] लोभना उदयवाळा नैरियको अलप होवाधी पूर्वोक्त छ भांगा थाय छे, कह्युं छे के, '' क्रोधमां, मानमां अने मायामां देवगणना छ भांगा जाणवा तथा मानमां, मायामां अने लोभी देवो अने होभमां नैरियकोना छ भांगा जाणवा. " देवोने होम घणो छे अने नैरियकोने क्रोध घणो छे. अकषायिना बीजा दंहकमां जीव, मनुष्य अने कोधी नारको. हिद्धपदमां त्रण भांगा जाणवा, कारण के, बीजा भांगाओनो असंभव छे, ए ज कहे छे, ['अकसाई ' इत्यादि.] ['ओहियणाणे आभि-आधिक शान. निनोहियणाणे सुयणाणे जीवाईओ तियमंगो ' ति] मत्यादिना भेदथी अविशेषित ज्ञान ते आधिक ज्ञान, तेमां, तथा मतिज्ञानमां अने श्रुतज्ञानमां बहुत्व दंडक संबंधे जीवादिपदोने लगता पूर्वोक्त त्रण भांगा थाय छे, तेमां औधिकज्ञानिओ, मतिज्ञानिओ, अने श्रुतज्ञानिओ सदा अवस्थित होवाथी तेओ सप्रदेशों है, माटे ' सप्रदेशों , ए प्रमाणे एक भांगो थयो तथा मिथ्याज्ञानथी निवर्तता अने मात्र मत्यादिज्ञानने पामता तथा मति अज्ञानथी निवर्तता अने मतिज्ञानने पामता अने श्रुत अज्ञानथी निवर्तता अने श्रुतज्ञानने पामता एकादि जीवो लाभे छे, माटे 'सप्रदेशो अने अप्रदेश, 'तथा 'सप्रदेशो अने अप्रदेशो, 'ए प्रमाणे वे भांगा थाय छे, ए प्रमाणे प्रथमनो एक तथा आ वे स्ळी त्रण भांगा जाणवा. ['विगिलिदिएहिं छन्भंग ' ति] बेइंद्रियमां, तेइंद्रियमां अने चउरिंद्रियमां सासादनसम्यक्त्व होवाथी आभिनिबोधिकादि ज्ञानवाळा एकादि जीवो संभवे छे माटे ते ज छ भांगा जाणवा, अहिं यथायोग पृथिव्यादि जीवो अने सिद्धो न कहेवा कारण के, तेओनो असंभव छे, ए प्रमाण अवधि वर्गरेमां पण त्रण भांगानी भावना करवी, मात्र अवधि इनिना बन्ने दंडकमां एकेंद्रियो, विकलेंद्रियो अने सिद्धो न कहेवा. मनःपर्याय ज्ञानना बन्ने दंडकमां तो जीवो अने मनुष्यो कहेवा अने केवलज्ञानना बन्ने दंडकमां तो जीवो, मनुष्यो अने सिद्धो कहेवा, माटे ज बीजी वाचनामां आ प्रमाण देखाय छे के, ' विण्णेयं जस्स जं अधि ' ति एटले जे ज्ञान जैने होय ते तेने जाणवुं. [' ओहिए अन्नाणे ' इत्यादि.] मति वंगरे अज्ञानथी अविशेषित सामान्य अज्ञानमां, मति अज्ञानमां अने श्रुत अज्ञानमां जीवादिपदोमां त्रिनंगी थाय छे, एओ सदा अवस्थित होवाथी ' सप्रदेशो ' ए प्रमाण प्रथम भंग थाय छे, ज्यारे तो ए अवस्थित सियायना बीजा जीवो ज्ञानने मुकीने मतिअज्ञानादिएणे परिणमे छे त्यारे तेओमां एकादिनो संभव होवाथी ' सप्रदेशो अने अप्रदेश ' इत्यादि बीजा वे भांगा जाणवा अने ए प्रमाणे त्रण भांगा जाणवा, पृथिवी वगेरेमां तो ' सप्रदेशों अने अप्रदेशों 'ए प्रमाणे एक ज भांगो धाय छे, माटे ज कहे छे के, ['एगिंदियवजो तियभंगों ' ति.] अहिं त्रणे अज्ञानमां सिद्धो न कहेवा, विभंगमां तो जीवादिपदोमां वण भांगा जाणवा अने तेनी भावना मतिअज्ञानादिनी पेठे जाणवी, मात्र अहिं एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय अने सिद्धों न कहेवा. [' सजोई जहा ओहिय ' ति] जेम औविक जीवादि कहा तेम जीवादिने लगता बन्ने दंडकमां एण सयोगी कहेवी, ते आ प्रमाणे छे:— संयोगी जीव चोक्कस सप्रदेश छे, नैरियकादि तो सप्रदेश पण छे अने अप्रदेश पण छे, घणा जीवो तो सप्रदेश ज छे अने नैरियकादि जीवो तो त्रण भांगावाळा छे. वळी, एकेंद्रियादि जीवो श्रीजा भांगावाळा छे, अहिं 'सिद्ध ' पद न कहेवुं, [' मणजोई ' इत्यादि.] मनोयोगी एटले त्रण योगवाळा अर्थात् संशिजीयो, वचनयोगी एटले एकेंद्रियोने वर्जीने बाकीना जीवो अने काययोगी एटले बधा य पण एकेंद्रियादि जीवो, ए जीवादिकमां त्रिविध मंग छे, तेनी भावना आ प्रमाण छे:— मनोयोगिओ वगरेनुं अवस्थितपणुं होय त्यारे प्रथम भांगो जाणवो अने अमनोयोग्यादिषणुं त्यजी मनोयोग्यादिषणे उत्पाद होवाथी अप्रदेशपणाना लाभने लड्डेन बीजा वे भांगा जाणवा, विशेष ए के, जे काययोगी

Jain Education International

For Private & Personal Use Only

एकेंद्रियों छे, तेओमां अभंगक एडले घणा भांगा निह पण 'सप्रदेशों अने अप्रदेशों १ प्रमाणे एक ज भांगी जाणवी, ए घणे योगना दंखकीमां

www.jainelibrary.org

यथासंभव जीवादिवदी कहेवां अने सिद्ध पद न कहेवुं. ['अजोगी जहा अठेस ' ति] ते अयोगिओनी वक्तव्यता अलेक्योनी-लेक्यारहित जीबोनी-समान होबाधी बन्ने दंडकमां अयोगीनी वक्तत्यता अटेरयनी पेठे जाणवी, तेथी बीजा दंडकमां अयोगिओमां जीव अने सिद्ध पदमां वण भागा कहेवा, अने अयोगी मनुष्योमां छ मांा कहेता. [' सामार-' इत्यादि.] सामार उपयोगवाळा अने अनाकार उपयोगवाळा नैरियका- अपयोग दिमां त्रण मांगा जाणवा, जीवपदमां अने पृथिय्यादि पदोमां 'सप्रदेशो अने अपदेशो ' ए प्रमाण एक ज भांगो जाणवो अने तेओमां, बेमांथी कोइ उपयोगयी कोइ उपयोगमां जतां प्रथमतर समयोमां अपदेशत्वनी अने सप्रदेशत्वनी भावना करवी. सिद्धोने तो एकसमयोपयोगिपणुं हे तो पण साकार उपयोगनी अने इतर-निराकार-उपयोगनी वारंवार प्राप्ति होवाथी सप्रदेशपणुं अने एकवार प्राप्ति होवाथी अप्रदेशपणुं जाणवुं, अने ए प्रमाणे साकार उपयोगने वारंबार प्राप्त एवा चणा सिद्धोने आश्री ' सप्रदेशो ' ए प्रमाणे एक गांगो जाणवी, अने तेओने ज तथा एकवार साकार साकार, उपयोगने प्राप्त एवा एक सिद्धन आश्री बीतो भांगो जाणवी, तथा तेओने ज अने एकवार साकार उपयोग प्राप्त एवा घणा सिद्धोने आश्रीने त्रीजी भांगो जाणको. अनाकार उपयोगमां तो वारंवार अनाकार उपयोगने प्राप्त एवा घणाने आश्री प्रथम मांगो जाणवो, अने तेओने ज तथा एकवार अनाकार. अनाकार उपयोग प्राप्त एवा एक सिद्ध जीवने आश्री बीजो भांगी जाणवी अने वन्नेना पण एटले अनाकार उपयोगने एकवार प्राप्त अने वार्वार प्राप्त ए बच्चेना पण अनेकरणामां शीओं भांगो जाणवी. ['सर्वेयगा य जहा सकसाइ ' ति] जेम सकषायो कहा तम सर्वेदको पण जाणवा; हेद. कारण के, बेदबाळाओने पण जीवादिपदमां त्रण मांगा थाय छे अने एकेंद्रियोमां एक मांगी थाय छे तेम अहिं वेदने पामेला घणाने तथा श्रेणिथी अंश थया बाद बेदने पामता एकादि जीवोने अपेक्षी त्रण मांगा जाणवा. [' इत्थीवेयग '-इत्यादि.] वळी, आहीं ज्यार एक वेदशी बीजा वेदमां स्त्री वेद वगेरे. संक्रमण थाय त्यारे प्रथम समये अप्रदेशण्णुं अने बीजा समयोमां सप्रदेशपणुं समजी पूर्वेनी पेठे जण भांगा कहेवा, नपुंसकवेदना बन्ने दंडकमां तो म्केंद्रियोमां ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रकारनो एक ज भांगो पूर्वोक्तयुक्तिथी जाणवी. स्वीदंडकमां अने पुरुष दंडकमां देव, पंचेद्रियतिर्येच अने मनुष्य पदो ज कहेवां अने नपुंसकदंडकमां तो देवोने वर्जीने बीजां पदो कहेवां, अने 'सिद्ध 'पद तो सर्व वेदमां पण न कहेवुं. ['अवेयमा अवेद. जहां अकसाइ ' ति] जीव, मनुष्य अने सिद्ध, ए श्रणे पदोमां अवेदकताने आश्रीने अकषायिनी पेठे त्रण भांगा वहेवा, [' ससरीरी जहा अरीर. ओहिओ ' ति] अधिकदंडकनी पेठे सशरीरीना बन्ने दंडकमां जीवपदमां सप्रदेशपणु ज कहेवुं. कारण के, सशरीरपणु अनादि छे, अने नैरिय-कादिमां तो सशरीरपणानुं बहुत्व होवाधी त्रण मांगा कहेवा अने एकेन्द्रियोमां तो त्रीजो मांगो कहेवो. ['ओरालिअ-वेडव्यिअसरीराणं जीवे~ औदारिक वगेरे गिंदियवजो तिभगो ' ति] औदारिकादिशरीरी एटले औदारिकदारीरवाळा अने वैकियशरीरवाळा जीवोमां जीवपदमां अने एक्रेंद्रियपदोमां बहुत्वने लइने त्रीजो एक ज भागो थाय छे, कारण के, जीवपदुनां अने एकेंद्रियपदोमां अनुक्षण एटले क्षणे प्रतिप्रज्ञो अने प्रतिपद्मानो घणा लाम छ अने बाकीनामां त्रण भागा थाय छे, कारण के, बाकीना ते जीवीमां प्रतिपत्ती घणा मळे छे. तथा औदारिकने अने वैकियने छोडी दह (बीजा) औदारिकने अने वैकियने पामता एकादि जीवो मळे छे. अहिं औदारिकना बन्ने दंडकमां नैरियको अने देवो न कहेवा अने वैक्तियना बन्ने दंडकमां तो पृथिवी, पाणी, तेज, वनस्पति अने विकलेंद्रियो न कहेवा अने वळी वैकियदंडकमां एकेंद्रियपदमां जे त्रीजो भांगो कह्यो छे ते, असं-स्यात वायुओनी प्रतिक्षणे यती वैकियकियाने अपेक्षीने कहा। छे, तथा पंचेदियतिर्द्वची अने मनुष्यो, जो के वैकियलन्धिवाजा थोडा छे तो पण तेओमां जे जण भांमा कहा छे, तेन लइने तेओ-पंचेंद्रियतियेची अने मनुष्यो-जीजी संख्यामां वैक्रियावस्थावाळा होवा जोइए एम संभवे छे तथा ते पंचेद्रियतिर्यंची अने मनुष्योमां एकादि जीवोने तेनी (वैक्रियशरीरनी) प्रतिपद्यमानता जाणवीः [' आहार्य '-इत्यादिः] आहारक शरीरने आश्री जीवमां अने मनुष्योमां पूर्वीक्त ज छ भांगा जाणवा, कारण के, आहारकशरीरवाळा थांडा छे अने वाकीना जीवोने ते आहारकशरीर संभवतं नथी. [' तेयग '- इत्यादि.] जम औषिक कला छ तेवी रीते तीजस अने कार्मण शरीरने आश्री जीवादि कहेवा, अने तेमां ते औषिक जीयों ज सप्रदेशों ज कहेवा, कारण के, तैजसादिशरीरनों संयोग अनादि छे, अने नारकादि तो घण मांगावाळा कहेवा तथा एकंद्रियोमां त्रीजो मांगी कहेबो अने आ सशरीरादिदंडकोमां सिद्ध पद न कहेबुँ [' असरीर '-इत्यादि] सप्रदेशत्वादिपण कहेबाने योग्य अशरीर जीवादिमां अशरीर जीवपदमां अने सिद्धपदमां पूर्वोक्त त्रिमंगी कहेवी, कारण के, जीव अने सिद्ध सिवाय बीजे स्थळे अशरीरपणुं संभवतुं नथी. [' आहारपज्जत्तीए ' इत्यादि.] अने अहिं जीवपदमां तथा पृथिव्यादिपदोमां आहारादिपर्याप्तिने पामेला घणा जीवो छे तथा तेनी (आहारादिनी) अपर्याप्तिने त्यजी आहारादिपर्याप्तिवडे पर्याप्तिभावने पामता पण घणा ज जीवो मळे छे माटे ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाण एक ज मांगो जाणवो अने बाकीना जीवीमां तो त्रेण भांगा आणवा. [' भासा-मण '-इत्यादि.] भाषानी अने मननी जे पर्याप्ति ते अहिं भाषामनःपर्याप्ति कहेवाय, जो के भाषानी अने मननी, एम वे पर्याप्तिओं छे तो पण बहुशुतोने संमत कोइ पण कारणने छड्ने ते बन्नेने अहीं एक जेवी विवक्षेली छे अर्थात् ते वे पर्या-विओने अहीं एक रूप गणेली छे, ते भाषा-मननी पर्याधियं पर्याप्त जीयों जैम संज्ञी जीनो कहा तेम सप्रदेशादिएणे कहेवा, बधा पदोमां त्रण भंग कहेवा अने अहिं पंचेंद्रिय पदो ज कहेवां. आ स्थळे पर्याप्तिओमुं खरूप आ प्रमाणे समजवानुं छे: —आत्मा जे करण-साधन-द्वारा भुक्त-खाधळा-आहारनी खुळ अने रस करवा समर्थ थाय छ ते करणनी निण्यत्ति ते आहारपर्याप्ति कहेवाय. करण अने शक्ति, ए बन्ने पर्याय शब्दो छे एटले तुर्य अर्थवाळा है, तथा जीव जे करण द्वारा औदारिकशरीरने, दैकियशरीरने अने आहारकशरीरने योग्य द्रव्यो (अणुओ) ग्रहण करी ते गृहीत द्रव्योने औदारिकादि मावे परिणमाने छे ते करणनी निष्पत्ति ते शरीरपर्याप्ति, तथा आत्मा जे करण द्वारा स्पर्शादि इंद्रियोने योग्य द्रव्यो महण करीने पोताना विषयोने जाणवा समर्थ थाय छे ते करणनी निष्पत्ति ते इंद्रियपर्याप्ति, तथा, जे करण द्वारा आनुप्राण योग्य द्रव्योने अवलंबी, अवलंबी ते द्रव्योने आनप्राणपण बहार काढवा समर्थ थाय ते करणनी निष्पत्ति ते आनप्राणपर्याप्ति, तथा जे करण द्वारा सत्यादिभाषाने योग्य द्रव्योने अवलंबी, अवलंबी ते द्रायोने चार प्रकारनी भाषामां परिणमाबी भाषा निसर्जनमां समर्थ थाय ते करणनी निष्यति ते भाषापर्याप्ति, तथा, जे करणद्वारा चार प्रकारना मनने योग्य द्रव्यो ग्रहण करी आत्मा मनन करवामां समर्थ थाय ते करणनी निष्पत्ति ते मनःपर्याप्ति. [' आहारअपजात्तीए ' इत्यादि,] आहारादिनी अपर्याप्ति. अहिं जीवपदमां अने पृथिव्यादिपदोमां ' सप्रदेशो अने अप्रदेशो ' ए प्रमाण एक ज भांगी कहेवी, कारण के, आहारपर्याप्ति विनाना विब्रहगतिवाळा घणा जीवी निरंतर मळे छ अने बाकीना जीवोमां पूर्वोक्त ते ज छ भागा कहेवा, कारण के बाकीनाओमां आहारपर्याप्ति विनाना थोडा जीवो होय छे. [' सरीरअपज्यतीए ' इत्यादि,] अहिं जीयोमां अने एकेंद्रियोमां एक ज मांगी कहवी अने वीजे हो एडले जीव अने एकेंद्रिय सिवायना

आहारादि पर्वाप्ति.

पर्य विओनुं खरूप.

अपर्शंस.

नैर्यिक-देव- गतुःय.

बाहारक-मध्य अने संशी वगेरे.

जीवोंमां तो त्रण भांगा कहेवा, कारण के, शरीरादिथी अपर्याप्त जीवो कालनी अवेक्षाए हमेशा ज सप्रदेशो मळे छे अने अप्रदेशो कदाचित् एकादि मळे छे, नैरियक देव अने मनुष्योमां छ भांगा ज जाणवा. [' भारत-इत्यादि.] भाषानी अने मन री अपर्याप्तिथी अपर्याप्त ते जीवो कहेवाय के, जे जीवोने जन्मधी माधानी अने मननी योग्यता होय तो पण तेनी असिद्धि होय, अने तेवा तो पंचेंद्रियो ज छे, जो बळी, जेओने माधापर्याप्तिनो अने मनःपर्याप्तिनो मात्र अभाव होय तेओ भाषानी अने मननी अपर्याप्तिथी अप्रीप्त कहेबाता होय तो देमां एकेंद्रियो पण होवा जोइए अे जो एकेंद्रियो होय तो जीवदमां त्रीजो ज भांगो थवो जोइए, पण तेम नथी, कारण के मूळकार कहे छ के, [' जीवाइओ तियमंगो ' ति] एटले जीवादिक त्रण भांगा कहेवा, अर्थात् तालर्य ए के, जे जीवोने जन्मथी मापानी अने मनती योभ्या होय एण तेनी असिद्ध होय ते ज जीवो अहीं भाषानी अने मनती अपर्याप्तिथी अपर्याप्त कहेवा-तेमां जीवोनां अने पंचेद्रियतिर्थेचोनां तेती (भाषानी अने मननी) अपर्याप्तिने पानेला घणा मळे छे अने तेनी अपर्याप्तिने पामता एकादि मळे छे माटे तेमां पूर्वोक्त ज त्रण भांगा जाणवा. [' ने इश्र-देव-मणुएसु छव्भग ' ति] नैरिय-कादिमां मनअपर्याप्तकोनी अल्पतरता होवाथी तेओ एकादि सप्रदेशो अने अपदेशो मळे छे माटे तेमां ते ज छ भांगा जाणवा. आ पर्योदिना अने अपर्याप्तिना दंडकोमां सिद्धपद न कहेवुं, कारण के, त्यां तेनी असंभव छे. पूर्वोक्त द्वारोनी संग्रहराधा कहे छे अर्थात् आ प्रकरणमां आवेळा विषयोनी यादीने दुंकामां जगावे छे.-[' सपएसा '- इत्यादि.] [' सपएस ति'] आ प्रकरणमां कालनी अपेक्षाए अने एकत्व तथा बहुत्वने आश्रीने जीवोनी सप्रदेशता अने अप्रदेशता कहीं छे. तथा [' आहारग ' ति] ते ज रीते आहारक अने अनाहारक कहा छे, भव्यो, अभव्यो अने उभय निषेधवाळा एटले भन्य नहि तेम अनव्य नहि एवा जीवी पण ते ज प्रकारे जगाव्या है, संज्ञी, असंज्ञी अने बन्ने निषेधवाळा एटले संज्ञी नहि तेम असंज्ञी नहि एवा जीवोने पण ए रीते ज समजाव्या छे, [' लेस ' ति] लेक्याबाळा-कृष्णादिलेक्या वाळा ६ अने अलेक्या-लेक्या विनाना जीवोन दृष्ट. पण पूर्वनी पेठे कहा। छे, [' दिहि ' ति] हम् एटले दृष्टि ते सम्यग्दृष्टि वगेरे-अने ते बाळा ३ एटले सम्यग्दृष्टिवाळा-वगेरे पण पूर्व प्रमाणे कहा। संयत. छै, [' संजय ' ति] संयतो, असंयतो, संयतासंयतो अने त्रणे निषधवाळा एटले संयत नहि, असंयत नहि अने संयतासंयत नहि-एवाने पण क्याय. पूर्व प्रकारे प्ररूप्या छे. [' कसाइ ' ति] क ायवाळा-क्रोधादिवाळा ४ अने अकषाय-कवाय रहित-जीवोने पण कालांद्राची अपेक्षाए विचार्या शान. छे. [' नाणे ' त्ति] ज्ञानवाळा -आमिनिवोधिकादिज्ञानवाळा ५ अने अज्ञानवाळा-मतिअज्ञानादिवाळा-अविांन पण ते ज रीते घटाच्या छे. योग-उपयेग ['जोग 'त्ति] योगवाळा-मन वमेरे योगवाळा ३ अने अयोगिओने पण पूर्वोत्ता रीते सूचव्या छ, [' उवओगे 'ति] साकार अने अनाकार वेद. उपयोगवाळा २ जीवोने पण ए ज रीते संबोध्या छे, ['वेदे ' ति] वेदवाळा-श्ली वगरे वेदवाळा ३ अने वेद विनाना जीवोने पूर्ववत् जणाच्या इरीर-पर्वाप्त. छे, [' समरीर ' ति] शरीरवाळा-औदारिकादि शरीखाळा ५ तथा शरीर विनाना जीवोने अने हेवट [' पज्जत ' ति] आहार बगेरेनी पर्याप्ति-बाळा ५ अने तेनी अपर्याप्तिवाळा ५ जीवोने पण कालादेशनी अपेक्षाए पूर्वनी ज पेठे समजाव्या छे.

प्रत्याख्यान अने आयुष्य.

६. ४०—जीवै। णं मंते ! किं पचनलाणी, अपचनलाणी पचनखाणापचनखाणी ?

६. उ० - गोयमा ! जीवा पचवखाणी वि, अपचवखाणी वि, पचक्लाणापचक्लाणी वि.

७. प्र०—सञ्बजीवाणं एवं पुच्छा ?

७. उ०--गोयमा ! नेरइया अपचक्साणी जाव-चउ-रिंदिया, सेसा दो पिडसेह्रेयञ्चाः, पंचिदियातिरिक्खजोणिया णो पचक्लाणी, अपचक्लाणी वि, पचक्लाणापचक्लाणी वि: मण्सा तिण्णि वि, सेसा जहा-नेरइया.

८. प्र० — जीवा णं भंते ! किं पचक्खाणं जाणंति, अपच-पखाणं जाणंति, पचक्लाणापचक्लाणं जाणंति ?

६. प्र० -- हे भगवन् ! शुं जीवो प्रत्यत्वानी छे ! अप्रत्या-ह्यानी छे ? के प्रसाह्यानाप्रसाह्यानी है ?

६. उ०--हे गौतम ! जीवो प्रसाख्यानी पग छे, अप्रसा-ह्यानी पण छे अने प्रत्याख्यानाप्रत्यास्यानी पण छे.

७. प्र०--ए प्रमाणे बधा जीवो माटे प्रश्न करवो ?

७. उ० - हे गौतम ! नैरियको अप्रसाख्यांनी छु, ए प्रमाणे यावत् च अरिदिय सुधीना जीवो अप्रलाख्यानी कहेवा अर्थात् तेओने माटे वाकीना बे-प्रखाल्यानी अने प्रखाल्यानाप्रखाल्यानी-भांगा प्रतिषध्या, पंचेंद्रियतिर्यंचयोनिको प्रसाख्यानी नथी पण अप्रसा-ख्यानी छे अने प्रसाख्यानाप्रसाख्यानी छे अने मनुष्योने त्रणे भांगा होय छे तथा बाकीना जीवो, जेम नैरियको कहा तेम कहेबा.

८. प्र० — हे भगवन् ! शुं जीवो प्रत्याख्यानने जाने छे ! अप्रसास्यानने जाणे छे ! के प्रसास्यानाप्रसास्यानने जाणे छे !

१. मूलच्छायाः—जीवा भगवन् ! कि प्रत्याख्यानिनः, अप्रत्याख्यानिनः, प्रत्याख्यानाऽप्रत्याख्यानिनः रे गैतम ! जीवाः प्रत्याख्यानिनोऽपि, अप्रत्याः स्यानिनोऽपि, प्रलाख्यानाऽप्रलाख्यानिने'ऽपि. सर्वजीवानाम् एवं पृच्छा १ मीतम ! नैरियकाः अप्रलाख्यानिनः, यावत्-चतुरिन्दियाः; शेषा द्वी प्रतिषेधः बित्रवा, पन्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः नो प्रलाख्यानिनः, अप्रलाख्यानिनोऽपि, प्रलाख्यानाऽप्रलाख्यानिनोऽपि; मनुष्याख्रयोऽ पे, शेवा यथा नैर्ययकाः शीवा भगपन् । कि प्रसास्यानं जानन्ति, अप्रसास्यानं जानन्ति, प्रसादवानाऽप्रसाद्यानं जानन्तिः-अनु०

- ८. उ०— गीयमा ! जे पंचिदिया ते तिथि वि जाणति, अवसेसा पचक्याणं न जाणति.
- ९. प्र० जीवा णं भंते ! किं पचवखाणं कुट्वांति, अपच-क्खाणं कुट्वांति, पचक्खाणापचक्खाणं कुट्वांति !
 - ९. उ०--जहा-ओहियो तहा कुष्यणा.
- १०. प्र० जीवा णं मंते ! कि पचक्लाणनिव्यत्तियाउया, अपचक्लाणिव्वत्तियाउया, पचक्लाणःपचक्लाणनिव्यत्तियाउया?
- १०. उ०—गोयमा । जीवा य, वेमाणिया य पचक्खाणणिः विवासिया-(उया), तिचि विः अवसेसा अपचक्खाणणिव्वत्तियाज्या. वि

पचन्नसंगणं जाणइ, कुव्वइ, तिन्नेच आउनिव्यत्ती. सपएसुदेसम्मि य एमेए दंडगा चउरो.

--सेवं भंते !, सेवं भंते ति.

- ८. उ०—हे गौतम ! जे पंचेंद्रियो छे ते त्रोने पण जाणे छ, बाकीना जीवो प्रसाख्यानने जाणता नथी। (अप्रसाख्यानने जाणता नथी। (अप्रसाख्यानने जाणता नथी।)
- ९. प्र०—हे भगवन् ! शुं जीवो प्रसाख्यानने करे छे ? अप्रसाख्यानने करे छे ? के प्रसाख्यानाप्रसाख्यानने करे छे ?
- ९. उ०—हे गौतम! जैम औषिक दंडक कह्यो तेम प्रत्या-एयाननी किया-प्रत्याख्याननुं करवुं पण जाणी लेवुं.
- १०. प्र०—हे भगवन् ! युं जीवो प्रसाख्यानथी निर्वर्तित आयुष्यवाळा छे एटले युं जीवोतुं आयुष्य प्रसाख्यानथी बंधाय छे? अप्रसाख्यानथी बंधाय छे? अप्रसाख्यानथी बंधाय छे? के प्रसाख्यानाप्रसाख्यानथी बंधाय छे? १०. ४०. ४०.—हे मितम ! जीवो अने वैमानिको प्रसाख्यानथी निर्वर्तित आयुष्यवाळा छे, त्रणे पण छे—अप्रसाख्यानथी निर्वर्तित आयुष्यवाळा छे अने प्रस्याख्यानाप्रस्याल्यानथी निर्वर्तित आयुष्यवाळा छे अने बाकीना अप्रस्याख्यानथी निर्वर्तित आयुष्यवाळा छे.
- संप्रह्माथा कहे छे: प्रत्याख्यान, प्रत्याख्यानने जाणे, (प्रत्याख्यानने) करे, त्रणेने (जाणे अने करें) आयुष्यनी निवृत्ति, सप्रदेश उद्देशकमां ए प्रमाणे ए चार दंडको छे.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे (एम कही यावत् विहरे छे.)

भगवंत-अज्ज सहस्मसामियणीए सिरीभगवईसुते ब्हसये चल्यो उदेसी सम्मत्तो.

२. जीवाऽधिकारादेव आहः—' जीवा णं ' इत्यादि. ' पचक्लाणि ' ति सर्वविरताः, ' अपचक्साणि ' ति अविरताः, पदक्लाणाऽपचक्लाणि ' ति देशविरता इति. ' सेसा दो पाडिसेहेयच्य ' ति प्रत्याख्यान-देशप्रत्याख्याने प्रतिषेधनीये, अविरत्याद् नार कादीनाम्—इति. प्रत्याख्यानं च तज्ज्ञानं सित स्यादिति ज्ञानसूत्रम्ः—तत्र च ' जे पंचिंदिया ते तिण्णि वि ' । ति नारकादयः, दण्डकोक्तपञ्चेन्द्रियः समनस्कलात् सम्यग्दिष्टते सित ज्ञपरेज्ञया प्रत्याख्यानादित्रयं जानन्ति—इति. ' अवसेसा ' इत्यादि. एकेन्द्रिय—विकलेन्द्रियाः प्रत्याख्यानादित्रयं न जानन्ति—अमनस्कलाद् इति. कृतं च प्रत्याख्यानं भवतीति तत्करणसूत्रम्. प्रत्याख्यानम् आयुः विन्धहेतुरिंप भवति इत्यायुरसूत्रमः—तत्र च ' जीवा य ' इत्यादि. जीवपदे जीवाः प्रत्याख्यानादित्रयनिबद्धाऽऽयुष्काः वाच्याः, वैमानि-कपदे च वैमानिका अपि एवम् प्रत्याख्यानादित्रयवतां तेषूत्यादात् ' अवसेस ' ति नारकादयोऽप्रत्याख्यानिर्वताऽऽयुषः—यतस्तेषु तत्वेनाऽविरता एवोत्यवत्ते इति. उक्तार्थसंग्रहगाथःः—' पचक्लाणं ' इत्यादि. ' प्रत्याख्यानम् ' इत्येतदर्थ एको दण्डकः, एवम् अन्ये त्रयः.

भगवरसुधर्मस्वामित्रणीते श्रीभगवसीसूत्रे षष्ठशते चतुर्थे उद्देशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्,

रे. जीवनो अधिकार चाळतो होवाथी ज ['जीवा णं'] इत्यादि सूत्र कहे छे, ['पश्चवखाणि'ति] प्रत्याख्यानी एटळे प्रत्यान प्रत्याख्यानी. एट्यानवाळा अर्थात् सर्व विरतो, ['अपचक्खाणि'ति] अप्रत्याख्यानी एटळे अविरतो-विरति विनाना, ['पश्चवखाणा-ऽपञ्चक्खाणि'ति] अत्रत्याख्यानी अने प्रत्याख्यानाप्रह्माख्यानी एटळे कोई अंशे प्रत्याख्यानथाळा अने कोई अंशे प्रत्याख्यान विनाना अर्थत् देशविरितिवाळा ['रेसा दो पडिसेहे- व्यख्यानाप्रस्थाख्यानी. यद्य 'ति] प्रत्याख्यान अने देश प्रत्याख्यान, ए बेनो निषेध करवो, कारण के, नरियकादि अविरत-विरति विनाना-होवाथी तेने प्रत्याख्यान अविरत नरियको.

^{9.} मूडच्छायाः — गै.तम । ये पठवेन्द्रियास्ते त्रीण्यऽपि जानन्ति, अवशेषाः प्रत्याख्यानं न जानन्ति, जीवा भगवन् । कि प्रत्याख्यान कुर्वन्ति, अप्रत्याख्यानं कुर्वन्ति, प्रत्याख्यानाऽप्रत्याख्यानं कुर्वन्ति, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, अप्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, अप्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्याननिर्विर्तितायुक्ताः, प्रत्याख्यानं जानाति, करोति, त्रीण्येत आयुर्निर्श्ताः, सप्रदेशोद्देशे च एवमेते दण्डकाश्वरवारः, तदेनं भगवन् !, दिवं भगवन् ! इतिः—अनुव

समनस्क. अमनस्क, प्रत्यः ख्यान अने आयुष्य.

संग्रह्माथा,

प्रत्याख्यानज्ञानस्त्र. अने देश प्रत्याख्याननी संभव नथी. प्रत्याख्यान त्यारे ज वह शके ज्यारे तेनुं-प्रत्याख्याननुं-ज्ञान होय, माटे हुये प्रत्याख्यानना ज्ञाननुं सूत्र कहे छे, अने तेमां ['जे पंचिदिया ते तिण्णि वि 'ति] नैरियकादि अने दंडकमां कहेला पंचेदियो समनस्क-मनसाहित-होवार्था सम्यग्दाष्टिपणुं होय तो शपश्चिवडे प्रस्वाख्यानादि त्रणने जाणे छे अने [' अवसेसा ' इत्यादि.] बार्काना एकेंद्रियो अने विकलेंद्रियो अमनस्क प्रत्यास्थानकरणमूत्र होवाथी प्रत्यास्थानादि त्रणने जाणता नथी. प्रत्यास्थान त्यारे ज थाय ज्यारे ते कर्यु होय, ते माटे हवे तत्करण-प्रत्यास्थान-करण-सूत्र कर्ह्य छे. तथा प्रत्याख्यान, आयुष्यना बंधमां कारण पण छे माटे प्रत्याख्यान-करण सूत्र पछी आयुष्यनुं सूत्र कहे छे, अने ते आयुष्यना सूत्रमां ['जीवा य ' इत्यादि.] जीवपदमां जीवो प्रत्याख्यानादि त्रण वडे निबद्ध आयुष्य वाळा कहेवा अने वैमानिकपदमां वैमानिको पण ए प्रमाणे कहेवा, कारण के, प्रत्याख्यानादि त्रणवाळाओनो वैमानिकोमां उत्पाद—उत्पत्ति—छे. ['अवसेस 'त्ति] नैरियकादि अप्रत्याख्याल्यानर्था बद्ध आयुष्यवाळा छे, कारण के, खरी रीते नैरायिकोमां अविरतो-विराति रहित जीवो-ज उत्पन्न थाय छे, हवे उपर कहेल अर्थनी संग्रह गाथा कहें छे, ['पचक्लाणं' इत्यादि.] प्रत्याख्यानने माटे एक दंडक छे, ए प्रमाणे बीजा पण त्रण एटले कूल चार दंडक समजवा.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिळजळचरिते क्षाएभारे भवेऽस्मिन् द्वावी यः सङ्गुणानां परकृतिकरणाह्रेतजीवी तपस्ती । अस्माकं वीरवीरोऽतुगतनरवरो वाहको दान्ति-शान्योः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चामुमुख्यः ॥

शतक ६.-उदेशक ५.

तमस्काय ए शुं पृथिवी कहेवाय -पाणी कहेवाय -पाणी कहेवाय -तेनुं कारण?-तमस्काय अने पाणीनी समानस्वभावता.-तमस्कायनी शरूआत क्यांथी?-इनी समाप्ति क्यों?-अरुपोदय समुद्रथी--एनी शरूआत.-ब्रह्मलोकमां एनी समाप्ति.- तंमरकायनो आक र केवो .-नीचे रामप तरना मूलनी जेवो अने उपर कुकडाना पांजरा जेसो.-- तमस्कापनोः यिष्कंभ अने परिक्षेप वेटको ?- तमस्कायना वे प्रकार-संख्येययोजन विस्तृत अने ससंख्येययोजन विस्तृत.--तमस्काय कराउं भेष्टी छ ?--इन्नि गतिबाळो देव छ मास सुधी चारुतां पण धना पःरने न पशेंची इन्नि --एवडी मोडो.-तमस्कायमां वर, हाट, गाम के संतिवेद्यो छं --ना.-तमस्कायमां मो ा मेघो संस्वेदे छे ? संमूळे छे ?-वरसे छे ?-हा.-ते देव-करे ? अग्रुर करे ? के नाग करे ?-४णे पण क्रे.-तमस्कायमां बादर स्तनित अने बादर विवृत् छें?-हा-देवष्टत छे.-तमस्कायमां बादर पृथिवी अने बादर अग्नि छे?-ना-विश्वइगतिने अप्राप्त सिवाय.-तमस्कायमां सूर्य-चंद्र विगेरे छे?-ना-तेनी पडखे छे.-तमस्कायमां सूर्यादिनी प्रभा छे १-ना-अर्थात ए प्रभा छे पण तमस्कायरूपे परिणमेकी छे.--तमस्कायनो वर्ण केतो १-क छे.-काळा मां काळो-वधारेमां वधारे काळो-तमस्काय भवंकर छे.-एथी देवो एण क्षोम-भय-एमी.-तमस्कायनां नाम केटलांर-तर-तम.-तमस्काय,-अंधक र.-महाधकार.-लोकांधकार.-लोकतमिस्र.-देवांधकार.-देवतमिल -देवारण्य -देवव्यूड.-देवपरिध.-देवप्रतिक्षोभ.-अरुणोदय(क) समुद्र,-तमस्कःय रोनो परिणाम छे ? - पृथिवीनो १ पाणीनो १ के जीव वा पुरुल नो १-ए पाणीनो परिणाम छे-जीव अने पुरुलनो परिणाम छे-पृथ्वीनो परिणाम नथी.-तमस्कायमां जीव मात्र अनेकवार पेदा थएला छे-एण बादर पृथ्वीपण अने वादर अग्निपणे नहि,-कृष्णराजिओ केटली कही छे ?-प्रार.-ए आठे वयां छे ?-सनाकुमार अने माहेंद्रकरपनी उपर अने नीचे-ब्रह्मरोकना अरिष्ट किमानना पाथडामां.-एनो आकार अखाडानी जेनो समचोरस छे.-पूर्वमां बे-पश्चिममां बे-दक्षिणमां बे अने उत्तरमां बे–ए बधी परस्पर स्पर्रेली छे.-एना आयाम अने विष्कंम विषे विचार.-एनी मोटाई विषे प्रश्न.-ए कुण्णराजिओमां यर वमेरे छे के निह? इसादि वधो तम'कायनी जेवो ज विचार,-विशेषमां-देव करे-कृष्णराजिकां आठ नाम-कृष्णराजि.-मेधराजि,-मधा,-म घवती,-वातपश्घ-वातप्रतिक्षीभा,-देवपरिया.-देवेप्रतिक्षोमा.-ए कृष्णराजि पृथिवीनो परिणाम छे-पाणीनो परिणाम नथी.-एमां बादर पाणीपेंग- वादर अधिपणे अने वादर वनस्प ≩पने जीवो उत्पन्न थता नथी.-बाकी बीजे कोइ पण प्रक रे उत्पन्न थएला छे.-ए कुणाराजिओना आठ अवकाशांतरोमां लोकांतिक विमानो-अर्चा-अर्चिमाठी-वैरीचन-प्रभंकर-चंद्राभ-स्यांभ-शुकास-सुप्रतिष्ठाभ-ए अठि विमानोनी वचे रिष्टाभ विमान नवसुं,-ए विमानोने लगती बीजी हकीकत,-आठ लोकांतिक देवी-सारस्वत-आदिल-वरुण-गर्दतीय-तुषित-आन्यावाध-आग्नेय-वरिष्ठ-ए आठे देवीने रुगती सविस्तर हकीन त.-ए आे विमानी होनी उपर प्रतिष्ठित हैं?-वायु उपर.-जीवाभिगम.-वधा जीवो, ए विमानोमां पण उरपन्न थएला छे-मात्र देवपणे नहि.-लोकांतिकनी स्थिति.-अह सागरे।पम.-लोकांतिक विमानोथी लोकनो छेडो केटलो छेटो ?-असंख्येय योजन.--

्र प्र-ार्कीमयं मंते ! 'तमुकाए 'ति पञ्चति, किं पुद्रवी तमुकाए ग्री पञ्चति, आउ तमुकाए ग्री पञ्चति ! १. प्र०— हे भगवन् । आ तमस्ताय शुं कहेवाय ? शुं पृथिवी तमस्ताय ए प्रमाणे कहेवाय ? शुं पाणी तमस्ताय ए प्रमाणे कहेवाय ?

१. उ०--गोयमा । नो पुढवि तमुकाए ।ति पव्युचति, आउ तमुकाए ति पञ्जुचति.

?. उ०—हे गौतम ! प्रथिवी, 'तमस्काय ' ए प्रमाणे न कहेवाय, पण पाणी, 'तमस्काय ' ए प्रमाणे कहेवाय.

[ा] मूलच्छायाः—किम् अयं भगवन् । तमस्काय इति प्रोच्यते, किं पृथिवी तमस्काय इति प्रोच्यते, आपः तमस्काय इति प्रोच्यते व गीतम ! नो पृथिवी तमस्काय इति प्रोच्यते, आपः तमस्काय इति प्रोच्यतेः—अतुः

- २. प्र० -- से केणहेणं ?
- २. उ०--गोयमा ! पुढाविकाए णं अरथेगइए सुभे देसं पकासेइ, अत्थेगइए देसं नो पकासेइ-से तेणहेणं.
 - ३. ४०-तमुकाए णं मंते ! काहीं समुद्धिए, काहीं सीनिद्धिए !
- २. उ० गोयमा ! जंबूदीवस्स दीवस्स बहिया तिरिय-मसंखेजे दीव-समुद्दे वीईवइत्ता, अरुणवरस्स दीवस्स बाहिरि-हाओ वेइयंताओ अरुणोदयं समुदं बायालीसं जोयणसहस्साणि ओगाहित्ता उवरिल्लाओ जलंताओ एगपएसियाए सेढीए-एत्थ णं तमुकाए समुद्विए. सत्तरस-एक्स्यीसे जोयणसए उड्डूं उपाइता तः पच्छा तिरियं पवित्थरमाणे, पवित्थरमाणे सोहम्मी-साण-सनिविद्धिए.
 - ४. प्र०—तमुकाए णं भते ! किसंडिए पचते ?
- ४. उ०--गोयमा ! अहे महागमूलसंठिए, उापिं नुबुड-पंजरगसंठिए पत्रते.
- ५. प्र०-तमुकाए णं मंते ! केवतियं विक्संभेणं, केवितयं परिक्खवेणं पत्रत्ते ?
- ्५. उ० —गोयमा ! दुनिहे पत्रत्ते, तं जहाः-संखेजनित्थडे य, असंखेजिबिस्थडे य; तस्य णं जे से संखेजिबिस्थडे से णं संखेजाइं जोयणसहस्साइं विक्लभेणं, असंखेजाइं जोयणसहस्साइं परिक्लेवेणं पत्रत्ते; तत्य णं जे से असंखिजावित्थडे से णं असंखे जाइं जोयणसहस्साइं विक्लंभेणं, असंखेजाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेणं पत्रत्ते.
 - ६. प्र०-तमुकाए णं भंते ! केमहालए पनते ?
- ६. उ० गोयमा ! अयं णं जंबुहीवे दीवे सन्वदीव-समु-

- २. प्र०—(भगवन्!) ते शा हेतुथी ?
- २. उ०-हे गौतम ! केटलोक पृथिवीकाय एवो शुभ छे, जे देशने-भागने-प्रवाशित करे छे अने केटलोक पृथिवीकाय एवो छे, जे देशने प्रकाशित नथी करतो, ते हेतुथी पूर्वोक्त प्रमाण कहेवाय.
- ३. प्र०--हे भगवन् ! तश्स्काय क्यां समुत्थित छे-क्यांथी शरू छे-अने क्यां संनिष्ठित छे-क्यां तेनो अंत छे ?
- ३. उ॰—हे मौतम ! जंबुद्वीप नामना द्वीपनी बहार तिरछे असंख्य द्वीप समुद्रीने उद्धंऱ्या पछी। अरुणवर द्वीप। आवे छे, ते हीपनी बहारनी वेदिकाना अंतथी अरुणोदय समुद्रने ४२ हजार योजन अवगाहीए त्यारे उपनितन जलांत आने छे, ते उपरितन जळांतथी एक प्रदेशनी श्रेणीए-अहीं तमस्याय समुत्यित छे, ते सांशी समुत्थित थइ १७२१ योजन उंचो जइ त्यांथी पाछो सणंकुमार-माहिंदे चत्तारि वि कप्पे आधिरत्ता, णं उडूं, पि य णं "तिरछो-विस्तार पामतो विस्तार पामतो सौधर्म, ईशान, सनत्कुभार बंभलोगे कपे रिइनियाणगत्थडं संपत्ते-एत्थ णं तमुकाए ण अने माहेंद्र ए चारे कल्योने पण आच्छादीने उंचे पण ब्रह्मलोक कल्पमां रिष्ठविमाननाः पाथडाः सुधी संप्रात-पहोंच्यो - छे अने त्यां ः तमस्काय संनिविष्ट छे.
 - 8. प्रo—हे भगवन् ! तमस्काय किसंस्थित छे एटले तम-स्कायनुं संस्थान-आकार-केवुं कह्युं छे.
 - उ०—हे गौतम!तमस्याय, नीचे, मलक्षम्ल-कोडीआना नीचेना भाग-ना आकारवाळी कह्यो छे अने उपर, कुकडाना पांज-राना जेवा आकारवाळी कह्यो छे.
 - ५. प्र०—हे भगवन् ! तमस्काय विष्कंभवडे केटलो कहा छे अने परिक्षेपवडे केटलो कह्यो छे ?
 - ५. उ० हे गौतम ! तमस्का। वे प्रकारनो कहा छे: एक तो संख्येय विस्तृत अने बीजो असंख्येय विस्तृत, तेमां जे ते संख्येय विस्तृत छे ते विष्कंभ वडें संस्थेय योजन सहस्र कहा छे अने परिक्षेपवडे असंख्येय योजन सहस्र कह्यों छे अने तेमां जे ते असंख्येय विस्तृत छे ते असंख्येय योजन सहस्र विष्कंभ बडे कह्यों छे अने असंख्येय योजन सहस्र परिक्षेप वडे कह्यों छे.
 - ६. प्र॰ —हे भगवन् ! तमस्ताय केटलो मोटो कह्यो छे ?
- ६. उ०- हे गौतम! सर्वद्वीप अने समुद्रोनी सर्वाभ्यंतर आ हाणं सध्यब्मंतराए, जाय-परिवसेवेणं पचत्ते. देवे णं महिड्डीए, जंबुद्वीय नामनो द्वीप यावत् परिक्षेप वडे कह्यो छे-कोइ मोटी

१. मूलच्छायाः —तत् केनाऽर्थेन ! गौतम ! पृथिवीकायोऽस्त्येककः शुभः देशं प्रकाशयति, अस्येकको देशं को प्रकाशयति, तत् तेनाऽर्थेन. तमस्कायो भगवन् ! कुतः समुत्थितः, कुत्र संनिष्ठितः ! गौतम ! जम्बूदीपस्य द्वीपस्य बहिः तिर्येगसंख्येयान् द्वीप-समुद्र न् व्यतिव्रज्य, अस्पवरस्य द्वीपस्य बाह्याद् वेदिकान्ताद् अरुणोदयं समुदं द्वाचरवारिशद् योजनसङ्खाणि अवगाद्य उपरितनाद् जलान्ताद् एकप्रदेशिकया श्रेण्या-अत्र तमस्कायः समुत्थितः, सप्तदशै-कविंशतिर्थोजनशतानि कथ्वम् उत्पद्य ततः पश्चात् तिर्यक् प्रविस्तरन्, प्रविस्तरन् सौघमें-शान-सनत्कुमार-माहेन्द्रान् चतुरोऽपि कल्पान् आवृत्य कथ्वेमपि च ब्रह्मलोके कल्पे रिष्टविमानप्रसादं संवासः-अत्र तमस्यायः संनिविष्टः. तमस्यायो भगवन् ! विसंध्यितः प्रकृतः ! गौतम् । अधो मलकमूल इंस्थितः, उपि कुर्कुटपिकरक इंस्थितः प्रक्षसः. तमस्कायो भगवन् ! किय न् विष्करभेण, कियान् परिक्षेपेण प्रव्रप्तः ! गीतम ! द्विविधः प्रज्ञप्तः, तदाथा--संख्येयविस्तृतक्ष, असंख्येयविस्तृतक्षः, तत्र यः स संख्येयविस्तृतः स संख्येयानि योजनसहस्राणि विष्कृम्भेग, असंख्येयानि योजनसहस्राणि परिक्षेपेण प्रज्ञसः; तत्र यः सोऽसंख्येयविस्तृत; सोऽसंख्येयानि योजनसहस्राणि विष्वम्भेण, असंख्येयानि योजनसहस्राणि परिक्षेपेण प्रज्ञातः. तमस्कायो भगवन् । किंमद्वालयः प्रज्ञातः ! गौतम ! अयं जम्बूदीयो द्वीयः सर्वेद्वीय-समुद्राणां सर्वोऽस्यन्तरकः, यायत्-परिक्षेचेम प्रह्मः, देवो मद्यर्थिकः--अञ्च०

जीव-महाणुमावे इणामेव, इणामेव ति कटुं केवलकर्षं जंबूदीवं ऋद्भिक्छो यावत् महानुभाव देव 'आ चाल्यो 'एम करीने त्रण दीवं तिहिं अच्छरानिवाएहिं तिसत्तखुतो अणुपरिविटिता णं हव्यं चपटी वागतां एकवीशवार ते संपूर्ण बंबूद्रीपने फरीने शीव्र आवे, वीईनयमाणे बीइनयमाणे जाय-एकारं वा, दुपाहं वा, तियाहं षा; उद्योसेणं छम्मासे वीईवइज्ञा, अत्थेगतियं तमुकायं वीईवइज्जा, अत्थेगतियं नो तमुकायं वीतियएज्ञा एमशालए णं गोयमा ! तमुकाए पन्नते.

- ७. ४० -- अत्थि णं मंते ! तमुकाए गेहा इ वा, गेहावणा इ या ?
 - ७. उ०-णो तिणहे समहे.
- ८. प्र०-अत्थि णं भंते ! तमुकाए गामा इ वा, जाव-सिनिनेसा इ वा ?
 - ८. उ०---णो तिणहे समहे.
- ९. प्र० अदिथ णं भंते ! तमुकाए उराला बलाह्या संसेयंति, सम्मुच्छंति, वासं वासति १
 - ९. उ०---हंता, अस्यि.
- **१०. प्र०**—तं भंते ! किं देवो प्रकरित, असुरी पकरेति, नागो पकरेति ?
- १०. उ०-गोयमा ! देवो वि पकरेति, असुरो वि पकरेति, णागो वि पकरेति.
- ११. प्र०-अस्थि णं मंते ! तमुकाए बादरे यणियसहै, बादरे विज्ञुए ?
 - ११. उ०--हंता. अस्थि.
 - १२, प्र०—तं भंते ! किं देवो पकरेति ० १
 - १२. ड०—तिनि वि करें।ते.
- १३. प्र०-अस्थि णं भंते ! तमुकाए बादरे पुढविकाए, बादरे अगणिकाए ?
 - १२. उ०-णो तिणहे समद्वे-षण्णस्य विग्गहगतिसभावत्रएणं
- १४. प्रच-अस्थि णं भंते ! तमुकाए चंदिम-सूरिय-गहगण-णवस्वत्त-तारारूवा ?
 - १४. उ०--णो तिणहें समहे-पल्यिस्त ओ पुण (अरिथ).

आगन्छिजा, से णं देवे ताए उक्किइ ए, तुरियाए, जाय-देवगईए ते देव तेनी उन्क्रेप्ट अने त्वरावाळी यावत् देवगतिवडे जती जती यावत् एक दिवस, वे दिवस या त्रण दिवस चाले अने वधारेमां वयारे छ महीना चाले तो कोइ एक तमस्काय सुघी पहोंचे अने कोइ एक तमस्काय सुधी न पहोंचे, हे गौतम ! एटलो मोटो तमस्त्राय वह्यो छे.

- ७. प्र० —हे मगवन् ! तगस्तावनां घर छे के गृहापण छे ?
- ७. उ०—(हे गौतम!) ते अर्थ समर्थ नधी.
- ८. प्र० -- हे भगवन् ! तमस्कायमां गाम छे के यावत् संनिवशो छे ?
 - ८. ड०--(हे गौतम) ते अर्थ समर्थ नथी.
- ९. प्र० हे भगवन् ! तमस्कायमां उदार मोटा मेघ संस्वेद पामे छे ? संमूर्जे छे ? अने वर्षण वरसे छे ?
 - ९. उ०-(हे गौतम !) हा, तेम छे.
- १०. प्र० हे भगवन् ! शुं तेने देव करे छे ! अनुर करे छे ? के नाग करे छे ?
- १०. उ०-- हे गौतम ! देव पण करे छे , असुर पण करे छे, अने नाग पण करे छे.
- ११. प्रo हे भगवन् ! तमस्कायमां बादर स्तानितशब्द छे? अने बादर विजळी छे ?
 - **११. उ०—हा,** छे.
- १२. प्र० हे भगवन् ! शुं तेने देव या अमुर या नाग
 - १२. उ०-(हे गौतम !) त्रणे पण करे छे.
- १३. प्र०-हे भगवन् । तमस्कायमां बादर पृथिवीकाय छे ? अने बादर अग्निकाय छे ?
- १२. ट०—(हे गौतम!) ते अर्थ समर्थ नथी, अने आ जे निषेच छे ते विम्नह गतिसमापन सिवाय समजवो अर्थात् विमहगति समापन बादर पृथिवी अने अग्नि होइ शके छे.
- १४. प्र०---हे भगवन् ! तमस्कायमां चंद्रं, सूर्वं, प्रह्मण, नक्षत्र अने तारारूपो छे ?
- १४. उ०-(हे गौतम!) ते अर्थ समर्थ नथी, पण ते चंदा-दि, तमस्कायनी पडखे छे.

१. मूरुच्छायाः —यावत्-महासुभाव इदमेवम् इदमेवम्-इति कृत्वा केवरुवतं जम्बूद्वीपं द्वीपं तिसुनिश्चप्युटिकाभिक्तिसकृत्वः असुप्रदेश हो प्रम् आगच्छति, स देवस्तया अत्कृष्ट्या, त्वरितया, यावत् देवमया व्यतित्रवन्, व्यतित्रवन् यावतः एछई वा, द्वयः वा, त्र्यहं वा, अकृष्टं षण्मासान् व्यतिमजेत, अस्येककं तमस्कायं व्यतिमजेत्, अस्त्येककं नो तमस्कायं व्यतिमजेत् इयद्महालयो गंतम ! तमस्कायः प्रद्वप्तः अस्ति . भगवन् ! तमस्काथे मेहाने वा, मेहारणा चा ? नो अथमर्थः समर्थः अस्ति भगवन् ! तमस्काथे प्रामा इति वा, यावत्—सन्नियेशा इति वा ! सो अयमर्थः समर्थः. अस्ति भगवन् । तमस्काय उदारा बलाइकाः संस्विद्यत्ति, संमूर्च्छन्ति, वर्षा वर्षति ? इन्त, अस्ति. तं भगवन् ! कि देवः प्रकरोति; असुरः प्रकरोति, नागः प्रकरोति १ गौतम । देवोऽपि प्रकरोति, असुरोऽपि प्रकरोति, नागोऽपि प्रकरोति. अस्ति भगवन् ! तमस्काये बादर स्तनितशब्दः बादरा वियुत् ? हन्त, अस्ति, तं भगवन् ! कि देवः प्रकरोति । त्र नेऽपि कुर्वन्ति. अस्ति भगवन् ! तमस्काये बादरः पृथिवीकायः, बादरोऽग्निकायः ?, नो अयमर्थः समर्थः-नान्यत्र विष्रह्गतिसमाऽऽपन्नकेन. अस्ति भगवन् । तमस्काये चन्द्र-पर्थ-ष्रह्गग-नक्षत्र-ताराह्याः ! नो अवस्र्यः समर्थः परिपार्थेतस्तु (परीतस्य द्व) प्रमः (सहित)ः—शत्रु ।

१५. प्र०-अत्थि णं भंते ! तमुकाए चंदाभा ति वा, सूराभा ति वा ?

१५. उ०-णो तिणंडे समडे-कादूसाणिया पुण सा.

१६. प्र० - तमुकाए ण भंते । केरिसए वचएणं पचते ?

१६. उ०-गोयमा ! काले कालावभासे, गंभीर-लोमहरिस जणणे, भीमे, उत्तासणए, परमिकण्हे वण्णे पत्रते. देवे णं अर ने गतिए जे णं तप्पढमयाए पासिता णं ख़ुभाप्ज्ञा. अहे णं अभिसमागच्छेजा, तओ पच्छा सीहं सीहं, तुरियं तुरियं ख़िप्पमिव वीतीवएजा.

१७. प्र०-तमुकायस्त णं भंते ! कृति नामधेजा पन्नत्ताः?

१७. उ०—गोयमा ! तेरस न्।संघेजा पश्चा, तं जहा:-तमे ति वा, तमुकाए ति वा, अंधृकारे इ वा, महांघकारे इ वा, लोगंघकारे इ वा, लोगतिमसे इ वा, देवंधकारे इ वा, देवतिमसे इ वा, देवरण्णे इ चा, देवबूहे इ वा, देवफालिहे इ वा, देव-पडिक्सोमे इ वा, अरुणोदए इ वा समुद्दे-

् १८. प्र०—तमुकाए णं संते ! किं मुद्धविपरिणामे, आउप-रिणामे, जीवपरिणामे, पारगलपरिणामे ?

१८. उ०—गोयमा ! नो पुढविपरिणामे, आउपरिणामे वि, जीवपरिणामे वि, पोरगलपरिणामे वि.

१९. प्र०—तमुकाए ण मंते ! सच्ने पाणा, भूया, जीवा सत्ता पुढवीकाइयत्ताए, जान-तसकाइयत्ताए उपयत्रपुच्ना ?

१९. उ० — हंता, गोयमा ! असति, अदुवा अणंतक्खुत्तोः णो चेव णं बादरपुढविकाइयत्ताए, बादरअगणिकाइयत्ताए वा. १५. प्र०—हे भगवन् तमस्कायमां चंद्रनी प्रभा के सूर्यनी प्रभा होय छे ?

१५. उ० —(हे गौतम !)ते अर्थ समर्थ नथी, कारण के, ते प्रभा तमस्कायमां छे पण कादूषणिका-पौताना आत्माने दूषित करनारी-छे.

१६. प्र०—हे भगवन् । तमस्काय वर्णथी केवो कह्यो छे अर्थात् तमस्कायनो वर्ण केवो कह्यो छे ?

१६. उ०-हे गौतम ! वर्णवडे तमस्काय काळो, काळी कांतिवाचो, गंभीर, रुंबाटा उमां करनार, भीम, उत्कंपनी हेतु अने परमकृष्ण कह्यों छे, अने ते तमस्कायने जोड़ने, जोतां वार ज केटलाक देव पण क्षीम पासे, अने क़द्राच कोड़ देव तमस्कायमां प्रवेश करे तो पटी शरीरनी त्वराथी अने मननी त्वराथी जलदी ते तमस्कायने उल्लंघी जाय.

१७. प्र०-- हे भगवन् । तमस्कायनां नामघेय-नामो-केटलां कर्षां छे ?

१७. उ०—हे गौतम! तमस्कायनां तेर नाम कहां छे, ते जेमके; १ तम्, २ तमस्काय, ३ अंधकार, १ महांधकार, ५ लोकांधकार, ६ लोकांधकार, ६ लोकांधकार, ६ लोकांधकार, ८ देवतमिल, ९ देवारण्य, १० देवल्यूह, ११ देवपरिच, १२ देवप्रतिक्षीम अने १३ अरुणोदक समुद्र.

१८. प्र० — हे भगवन् ! तमस्काय शुं पृथिवीनो परिणाम छे ! पाणीनो परिणाम छे ! जीवनो परिणाम छे ! के पुद्रलंडो परि-णाम छे !

१८. उ०—हे गौतम । तमस्काय पृथिवीनो परिणाम नथी, पाणीनो पण परिणाम छे, जीवनो पण परिणाम छे अने पुदूरतनो पण परिणाम छे.

१९. प्र०—हे भगवन् ! तमस्कायमां सर्व प्राणो, भूतो, जीवो अने सत्त्वो पृथिवीकाथिकपणे यावत् त्रसकायिकपणे उप-पनपूर्व-पूर्वे-पहेळां-उपज्यां छे !

१९. उ०—हे गौतम हा, अने कवार अथवा अनंतवार पूर्वे उत्पन्न थया छे पण बादर पृथिवीकायिकपणे अने बादर अग्नि-कायिकपणे नथी थया.

१. अनन्तरोदेशके सप्रदेशा जीवा उक्ताः, अथ सप्रदेशमेव तमस्कायादिकं प्रतिपादिवतुं पश्चमोदेशकुमाहः—' किमियं '

१. मूलच्छायाः—अस्ति भगवन्! तमस्काये चन्द्राभेति वा, स्यामिति वा ! नो अयमर्थः समर्थः - काद्षणिका पुनः सा. तमस्कायो भगवन्! कीहराको वर्णकेन प्रज्ञासः १ गैतम । कालः, कालःवभासः, गम्भीर-रोगहर्षजननः, भीमः, उत्ज्ञासनकः, परमकुष्णो वर्णः (गे) प्रज्ञासः देवोऽस्त्येकको यस्तत्र्यमत्या दृष्ठा शुम्येत् (स्कुम्नीयात्), अयाऽभिसमागच्छेत्, ततः पथात् शीघ्रं शीघ्रम्, स्वरितं स्वरितं विप्रमेव व्यतिवजेत्. तमस्कायस्य भगवन्। कति नामयेवानि प्रज्ञतानि ! गौतम ! त्रयोदश नामयेवानि प्रज्ञतानि, तदाथाः—तम इति वा, त्मस्काय इति वा, अन्यकार इति वा, महान्धकार इति वा, लोकान्धकार इति वा, लोकतमिलम् इति वा, देवार्ण्यम् इति वा, देवत्यव्याम् इति वा, देवपिष्णामः, जीवपरिणामः, जीवपरिणामः, जीवपरिणामः, जीवपरिणामः, जीवपरिणामः, जीवपरिणामः, प्रत्रत्वामः । गौतम ! को प्रायनीपरिणामः, कप्परिणामोऽपि, जीवपरिणामोऽपि, पुद्रलपरिणामोऽपि, तमस्काये भगवन् । सर्वे प्राणाः भूताः जीवाः सत्ताः पृथ्वितायिकतया, यावत्–त्रसकायिकतया अपपन्नपूर्वाः १ इन्त, गौतम ! असकृत्, अथवाऽनन्तकृत्वः, नो चैव बादरप्रियविद्यायकतया, खादरप्रियविद्यायकतया, वादरप्रियविद्यायकतया अपपन्नपूर्वाः १ इन्त, गौतम ! असकृत्, अथवाऽनन्तकृत्वः, नो चैव बादरप्रियविद्यायकतया, खादरप्रियविद्यायकतया वाः—अतु०

इत्योदि. 'तमुकाए' ति तमसां तमिश्रपुद्रिकानां काकी राशिस्तमस्कायः, स च नियत एव इह स्कन्धः कश्चिद् विविक्षितः; स च तादशः पृथ्वीरजस्रात्थो वा स्यात् , उदकरजस्काभो वा, न तु अन्यः; तदन्यस्य अतादशल द् इति-पृथिव्य-व्विषयसंदेहाद् आहः-' किं पुढवी ' इत्यादि—व्यक्तम् . ' पुडवीकाए णं ' इत्यादि. पृथितीकायोऽस्येककः कश्चित् शुभो भास्तरः, यः किंविधः १ इत्याहः— देशं विवक्षितक्षेत्रस्य प्रकाशयति—भास्वरत्यात , मण्यादिवत्. तथाऽस्त्येककः पृथिवीकायो देशं पृथिवीकायाऽन्तरं प्रकाङ्यमपि न प्रका-शयति—अभास्त्रस्थात् , अ योपलवत् . नैवं पुनरकायः, तस्य सर्वस्याऽध्यप्रकाशकत्वात् ; ततश्च तमस्कायस्य सर्वथेवाऽप्रकाशकत्वाद् अध्याः यपरिणामता एव. ' एगपएसियाए ' ति एक एव च-न द्वधादयः, उत्तरा-ऽधर्यं प्रति-प्रदेशो यस्यां सा तथा तथा-समभित्तितया इत्पर्थः, न च वाच्यम् ५कप्रदेशप्रमाणया इति, असंख्यातप्रदेशवगाहस्वभावत्वेन जीवानां तस्यां जीवाऽवगाहाऽमावः सङ्गात् , तमस्ता-यस्य च स्तिबुक्ताऽऽकाराऽध्कायिकजीभागकत्यात् , बाहत्यमानस्य च प्रतिपादयिष्यमाणत्यात् इति, ' एत्य णं ' ति प्रज्ञापकाऽऽहरूयः लिखितस्याऽन्णोदसमुद्रादेरधिकरणतोपदर्शन र्थमुत्तवान् . 'अहं ' इत्यादि . अधः—अधस्ताद् मलक्रमूलसंस्थितः—शराबदुध्नसंस्थानः -समज्ञान्तस्योपरि सप्तदशयोजनशतानि, एकविंशत्यधिकानि यावद् वलयसंस्थानत्वात्. स्थापनाः 'केवइयं विक्लंभेणं' ति विस्तारेणः क्वचिद् 'आयाम-विक्संभेणं ' ति दृश्यते, तत्र च आयाम उच्त्वम् इति. 'संसेज्ञिवित्थडे ' इत्यादि. संल्यातयोजनिवस्तृतः. आदित आरम्य ऊर्ष्वं संस्थेययोजनानि यावत् , ततोऽसंख्यातयोजनविस्तृतः उपरि तस्य विस्तारगामित्वेन उक्तस्वात् . ' असंखेजाइं जोयणसहस्साइं परिक्लेवेणं ' ति संख्यातयोजनविस्तृतत्तेऽपि तमस्यायस्य अंख्यिःततमद्वीपपरिक्षेपतो बृहत्तस्याम् परिक्षे ।स्य असंख्यान तयोजनसहस्रप्रमाणत्वम् . आन्तर-बंहिःपरिक्षेपविभ गस्तु नोक्तः, उभ पत्याऽपि असंख्याततया तुल्यत्वाद् इति. १ देवे णं १ इत्यादि, अथ किमिदंपर्यमिदं देवस्य महध्योदिकं विशेषणम्? इत्थाहः-' जाव-इणामेव ' इत्यादि. इह यावच्छ=इ ऐदंपर्यार्थः, यतो देवस्य महद्भर्यादिविशेषणानि गमनसामर्थ्यप्रक्षेप्रतिपादनार्ऽभप्रायेणैव प्रतिपादितानिः 'इणामेव इणामेव' ति कहु' इदं गमनमेवम् अतिशीवावाऽऽ-वेदकचप्पुटिकारूपहस्तव्यापारोपदर्शनपरम् , अनुखागऽश्रवणं च प्राक्त त्वात् . द्विर्वचनं शीव्रत्वाऽतिशयोपदर्शनपरम् . 'इतिः' उपव्रदर्शनार्थः, कृत्वा विधाय-इति. ' केवलकप्पं ' ति केवलज्ञानकर्पं परिपूर्णम् इत्यर्थः. वृद्धन्याख्या तु ''केवलः संपूर्णः, कर्पते इति कस्पः, स्पतार्थ-करणसमधी वस्तुरूप इति यावत्-केवलक्षासौ कल्पश्चेति केवलकल्पस्तम् . '' ' तिहिं अन्छरानिव्वापहिं ' ति तिसृभिश्चणुटिका-भिरिसर्थः. ' तिसत्तसुत्तो ' ति त्रिगुणाः सप्त, त्रिसप्तवारान्-त्रिसप्तकृत्व-ए विश्वतिवारान् इत्यर्थः. 'हव्यं' ति शीत्रम् , 'अत्थेगइयं ' इत्यादि. संस्थातयोजनमानं व्यतिवजेत्, इतरं तु न इति. ' उराला बलाहय ' ति महान्तो मेघः, ' संसेयंति ' ति संस्विधन्ति तजनकपुद्रलक्ष्मेहसंप्रया, संमूर्च्छन्ति तत्पुद्रलमीलमात् तदाकारतया उत्पत्तेः. ' तं भंते ! ' त्ति तत् संस्वेदनम् , संमूर्च्छनम् , वर्षणं च. ' बायरे विज्यारे ' ति इह न बादरतेजस्कायिका मन्तव्याः, इहैवं तेषां निषेत्स्यमाणत्वात्, किं तु देवप्रभावजनिताः भाखगः पुद्गलास्ते इति. ' णण्णत्थ विरगहगइसमावण्णएणं ' ति न इति योऽयं निषधो बादरपृथिवी-तेजसो:-सोऽन्यत्र विप्रहगतिसमापन्नत्वाद्-विप्रह-गत्मा एवं बांदरें ते भवतः. पृथिवी हि बादरा रत्नप्रभाद्यासु अष्टासु पृथिवीषु, गिरि-विमानेषु; तेजगतु मनुजक्षत्र एवेति, तृतीया चेह पंश्चम्यर्थे प्राकृतत्वाद् इति. ' पेलियरस ओ पुण अस्थि ' ति परिपार्श्वतः पुनः सन्ति तमस्कायस्य चन्द्रादय इत्सर्थः. ' क दूसणिया पुण सा इ ' त्ति ननु तत्पार्श्वतश्चन्द्रादीनां सङ्कात्रात् तत्प्रभाऽपि तत्राऽस्ति ? सत्यम् , केवळं व.म् आत्मानं दूषपति—तमस्कायपरिणामेन परिणमनात्, दूरणा सैत्र दूषणिका, दीर्घता च प्राकृतत्वात् , अतः सती अध्यसी असतीति. 'काले ' ति कृष्णः, 'कालोगासे ' ति कालोऽपि कश्चित् कुतोऽपि कालो नाऽवभासते, इत्यत आहः-कालाऽवभासः, कालदीप्तिर्वा. ' गंभी र-लोमहरिसंजणणे ' ति गम्भीर-थासौ भीषणत्वात्-रोमहर्षजननश्चेति.-गम्भोररोपहर्षजननः. जनकत्वे हेतुमाहः-' भीमे ' ति भीमः, ' उत्तासणए' ति उत्कम्पहेतुः, निगमयन्नाह:- परम ' इत्यादि. यत एवम् अतं एवाँह:- 'देंबे विं णं' इयादि. ' तप्पडमयाए ' ति दर्शनप्रथमतायाम् , ' ख्माएज ' ति स्कुम्नीय त्–क्षुम्येत्, 'अहे णं ' इत्यादि, अथैनं तमस्कायमगिसभागच्छेत् प्रविशेत् , ततो भयात् 'सीहं सीहं ' ति कायग-तेरतिवेगेन, ' तुरिय तुरियं ' ति मनोगतेरतियेगात् , किमुक्तं भवति-क्षिप्रभेव. ' वीइवएका ' ति व्यतिव्रकेद् इति. ' तम इ ति वा ' इत्यादि, तम:-अन्ध । ररूपत्व द् इति एतत्, ' वा ' विकल्यार्थः तमरकाय इति वा-अन्ध धरराशिरूपत्वात्, अन्धकारम्-इति बा तमोरूपायात् , महान्धकारम्-इति वा महातमोरूपायात् , छोकान्धकारम्-इति वा छोकमध्ये तथाविधस्य अन्यस्य अन्धकारस्य अभावात् , एवं छोकतिर्मिश्रम् इति वा, देवान्धकारम्-इति वा-देवानामपि तत्र उद्योताऽभावेन अन्धकारात्मकत्वात् , एवं देव--तमिश्रम्-इति वा, देवाऽरण्यम्-इति वा- बलवद्देवभयाद् नश्यतां देवानां तथाविधाऽरण्यमिव शरणभूतत्वात्. देवन्यूह इति वा-देवानां दुर्भेदत्वाद् ब्यूह इव चक्रादिब्यूह इव देवब्यूह:. देवपरिघ इति वा-देवानां भयोत्पादकत्वेन मनोविधातहेतुत्वात्. देवप्रतिक्षोम इति वा-तार्ोमहेतुत्वात् , करणोदक इति वा समुद्र:-अरुणोदकसमुद्रं जलविकारत्वादिति. पूर्वे पृथिव्यादेस्तमस्कायशब्दवाच्यता पृष्टः, अथ पृथव्य-प्कारपर्यायताम् , पृथव्य-प्कायौ च जीव-पुद्गेत्ररूपाविति तत्पर्यायतां च प्रश्लानशहः-' तमुकाए णं ' इत्यादि. बादरवायु-वनस्पतयः, त्रसाश्च तत्र उत्पद्यन्ते—अष्काये तदुःपत्तिसंभवात् , नतु इतरे-अखस्थानत्वात् , अत उक्तम्:-' नो चेव णं ' इत्यादि.

१. स्थापना अनुवादे दर्शियध्यते:- अनुवं

१. आगळना उद्देशकमां सपदेश जीवो कहाा, ह्वे सप्रदेश एवा ज तमस्कायादिकने कहेवा पंचम उद्देशक कहे छै:--['किमिरं ' इत्यादि.] तमस्काय. ['तमुद्भाए 'ति] तमस-तमिस-अधकार-पुद्रलोनो काय एटले राशि ते तमस्काय, अहिं ते तमस्कायनो अमुक ज के इ स्कंध विवक्षित है, अने तेवों ते स्कंध, पृथ्वीरजनों स्कंध होय के पाणिनी रजनों सकंध होय, पत्र बीजों तो न होय, कारण के, पृथ्वीनी अने पाणीनी रजना स्कंध सिवाय बीजो स्कंध तादृश-तमस्कायनी जैवो-नथी होतो, माट तमस्कायना खरूप संबंधे पृथित्री अने जल विषयक संदेह थतो होवाथी कहे हैं: [' किं पुढवी ' लावि.] ते व्यक्त छे. ['पुढवीकाए णं ' इत्यादि.] कोइ एक शुभ-माखर -दीप्तिवाळी-पृथिवीकाय छ-जे भाखर होवाथी अमुक क्षेत्रना भागने मणि वगेरेनी पेठे प्रकाशित करे छे, तथा कोइ एक एवा पृथिवीकाय छे के, जे अमास्वर होवाथी प्रकाश्य-प्रकाशी शकाय-तेवा-वीजा पृथिवीकायने पण अंच पत्थरनी पेठे प्रकाशतो नथी अने अपकाय-पाणी-तो एवो नथी, कारण के, ते बधी जातनो पण अपकाय तमन्त्र य अने पाणीनी अप्रकाशक छे, तथा आ तमस्काय पण अप्रकाशक छे -ए रीते अप्काय अने तमस्काय ए बन्नेनो एक सरखो-मळतो-स्त्रभाव होवाथी तमस्कायना परिणामी कारण तरीके अध्काय ज होइ शके छे अधीत् तमस्कान ए, अध्कायमी परिणाम ज छे. [' एनप्रएसियाए ' ति] वे, त्रण वेगेरे नहि पण उपर अने हेठळ जेमां एक ज (सरखा ?) प्रदेश छ ते 'एकप्रदेशिका श्रेणी' कहेवाय, ते श्रेणिवड एटले समिसित्तिपणे. अहीं ' एकप्रदेशिका श्रेणी ' नो अर्थ ' समित्ति ले ' करवो, किंतु ' एक प्रदेशिका श्रेणी ' एटले ' प्रमाणे करीने एक प्रदेशवाळी श्रेणी ' एवो अर्थ न करवो. कारण

^{जरुजीव}. के, 'प्रमाणे करीने एक प्रदेशवाळी श्रेणी ' एवो अर्थ अहीं तमस्कायनी श्रेणीने घटी सके तेम नधी—तमस्काय स्तिबुकाकारे जल जीवरूप छे अन जीबोने पोतानी स्थिति माटे असंस्थात प्रदेशोने रोकवा पडे छे एथी जो अहीं तमस्क यनी श्रेणिने 'प्रमाणे करीने एक प्रदेशवाळी श्रेणी ' मानवामां आये तो ए घणी ज दुंकी होवाथी एमां ए जलजीयो शी रीते रही शके ? तण तमस्कायनी विस्तीर्भताना संबंधमां पण हुवे पछी कहेवावानुं छे-एम ए बन्ने निमित्तोने ठइने अहीं 'प्रमाण करीने एकप्रदेशवाळी क्षेणी ' अर्थ वटी शक्ते ज नहि. [' एत्थ णं ' ति] प्रज्ञापकना आलेख्यमां आळखेला एटले जणावनारे चितरेला चित्रमां जणाता अरूणसमुद्रादिनुं अधिकरणपणुं दर्शाववा ' एत्थ ' एटले ' अत्र '-अहीं एम कहां छे. ['अहे ' इत्यादि.] नीचे मलकमूळ संस्थित छे एटले तमस्कायनो नीचेनो अकार शराय--बुध्ननी जेनो के, कारण के, समजलांतनी उपर १७२१ योजन सुधी ते त्मस्काय बलय संस्थाने छे. तेनी स्थानना-आकृति-आ प्रमाणे छे:---

['केवइयं विक्लंभेण 'ति] विष्कंम एटले विस्तार, ते बडे, कोइ प्रतिन' ['आयाम-विक्लंभेण 'ति] एवो पाठ देखाय छे, तेमां 'आयामं ' एटले 'उंचाइ ' समजवी ['संखेजवित्यडे ' इत्यादि.] संख्यात योजन विस्तारवाळो अर्थात् तमस्कःयनो विस्तारः शरुआतथी मांडी उंचे संस्थेय योजन सुवी तो ए संस्थेय योजन विस्तारशको छे अने त्यार बाद असंस्थेय योजन विस्तार बाळो है, कारण के, उपर, ते तमस्कायने विस्तारमांभिपणे कस्रो है. [' असंखेळाई जोयणव्हस्ताई परिक्लेबेणं ' ति] जो के, पिक्षेप. तमस्कायमुं विस्तृतवणुं संख्यात योजन छे तो पण ते तगस्कायने असंख्याततम द्वीपनो परिश्चेप होवाथी तेनी बृहत्तरता छे माटे



ज तेना परिक्षेपनुं प्रमाण असंख्यात योजन सहस्र कह्युं छे, अने अंदरना अने बहारना परिक्षेपनो विमागं तो कह्यो नथी, कारण के, असंस्थानपणाने तइने वड़ो परिक्षेपमुं पण तुरुयपणुं छे. [' देवे णं 'इत्यादिः] हवे देवट' आ महर्षिक वेगेरे विशेषणो अहीं शा धसंगे कक्षां छे? तो कहे छे के, ['जाब इणामेव ' इत्यादि.] अहि ' यावत् ' शब्द ' ऐदर्ध ' अर्धवःको छे अर्थात् ' अमुकथी अमुक सुधी ' ना भावने ए, शब्द सूचये छे. कारण के, गमनसामध्यंनी प्रकर्ष जणाववाना अभिष्रायधी ज देवन ए 'महर्घिक' वंगरे विशेषणी कह्यां छे. [इंगीमेव इजामेव ति बहु '] ए वाक्य, ' आ गमन जा प्रमाण छे ' अर्थात् ' आ चाल्यो ज ' ए प्रमाण अतिशीव्रवर्ण जणावनार चप्टीरूप हाथनी कियाने दर्शाववा कहूं छे. ' आ चाल्यो जैं' एंग करींने, ['केबर्लकप्पं ' ति] केबलकरप एटले केवलज्ञानसमान अर्थात् परिपूर्ण, युद्धव्याख्या प्रमाणे तो 'केबल केवलकल्प. कण ' शब्दनो आ प्रमाणे अर्थ थाय है:-" केवल एटले संपूर्ण अने कल्प एटले सकार्य करवामां समर्थ वस्तुरूप, अर्थात् केवलकहा एटले **दृद्धःय!**ख्या. संपूर्ण-समर्थ-तेने, '' [' हि हैं अच्छरानिध्याएहिं ' ति] वण चपटीओ वहे, [' तिसत्तखुत्तो ' ति] वण गणा सात ते विसप्त एटले एकवी-श्चार, [' हव्वं ' ति] शीव्र. [' अत्थेगद्यं ' इत्यादि-] संख्यात योजन प्रमाण तमस्काय सुधी पहींचे, अने इतर-बीजा-असंख्यात योजन प्रमाण-तमस्यायः सुधी तोःन पहींचेः ['उगला बलाइय'ति] भोटा मेघी, ['संसेयंति 'ति] संखेद पामे छै एटले तज्जनक पुद्रलीना स्नेहनी संपत्तिथी संपूर्के छे, कारण के, मेघनां पुद्रहो मळवाथी तेनी तदाकारपण उत्पत्ति थाय छे. ['तं मंत !'ति.] ते संस्वेदन-संमूर्छन-ने

अने वर्षणने. ['बायरे विज्जुयोर ' ति] अहिं 'बादर विद्युत् ' शब्दशी बादर तेजस्कायिको न समजवा, कारण के, अहिं ज तेओनो निषेध करवानो छे, १ण देवना प्रभावधी उत्पन्न थएलां ते मास्तर-दीप्तिवाळां-पुद्गलोने अहीं बादर तेजरूपे समजवानां छे, [' गण्णत्य विमाहगइ-समावर्णणएणं ' ति] अर्थात् ज्यां तमस्काय छे त्यां वादर पृथिवी अने बादर अग्नि-तेज-नथी होतां-ग्रादर पृथिवी तो रत्नप्रमादि आठ पृथिवी-तेज. ओमां, गिरिओमां अने विमानोमां ज होय छे तथा बादर अग्नि (तेज) मनुष्य-क्षेत्रमां ज होय छे माटे तगस्कायवाळा प्रदेशमां बादर पृथिवी

बादर पृथिवी अने

^{9.} खरी रीते तो 'इणमेव इणामेव किने बदले व्याकरणनी दृष्टिए 'इणामेव इणामेव ते खबुं जोइए-पण आ प्रयोगनी आर्षनाने लीधे 'एवं ' नो अहुखार छोपायो छे. तथा क्षीप्राणाना अतिक्रयने जणाववा 'इणामेव 'ए शब्दनी द्विभीव (बेवडो उचार) करेलो छे अने 'इति' शब्द 'उपप्रदर्शन'ना अर्थने सुचने छे:--धीअभय०

२. ' केवलकृषा ' सब्दनो अर्थ मिन्सिमनिकाय (बुद्धना सूत्र पिटक संबंधी) मंधमी आ प्रमाणे करेली छे:---

[&]quot; केवलकप्पं अनवसेखं समंततो. "

[&]quot; केवलकरूप एटले कांइ बाकी नहि—चारे बाजुनुं-बधुं, "

[&]quot; अ । रो अञ्चतरा देवता अभिकान्ताय रतिया अभिकातवण्या केवलकर्षं अन्धवनं ओमासेत्वा x तेनुपसंक्षमि, "

[&]quot; इवे अभिकांत वर्णवाळी कोइ एक देवता अभिकांत राचीमां केवल-कल्प (आखा) अंधवनने अवभासित करीने ते तरफ गई. "

[—]मिन्झिमनिकाय, वम्मीक सुत--२३ (रा॰पृ०१०१):अनु•

^{&#}x27; १. अहीं ' केवल ' अने कहर (करर) शब्दनी कर्मधारयसमास करवानी छै:--श्रीअभय •

[🔥] अर्ही पांचमी मिम्किना अर्थमां त्रीजी विभक्ति वपराएकी छे-एई झाएत आ मयोगई बाहुतपणुं छे:—श्रीअभय०

अने बादर अभिनी इयाती नेथी होती. पण जे बादर पृथिवी अने बादर अग्नि विग्रहगतिमां वर्तता होय छे तेओ ज त्यां-तमस्कायवाळा प्रदेशमां पण होड शके छे माटे ज अहीं ' विश्वहंगतिने शाम सिव युना ' अर्थात् ' विश्वहंगतिने अप्राप्त ' एवा बादर पृथिवी अने बादर तेजनी ह्यातीने निवेधेली छे. ['पलियस्त ओ पुण अध्यि 'ति] वळी, तमस्कायनी पडस्ते तो चंद्र वगेरे छें. ['कौदूसणिआ पुण सा 'इति | ते तमस्कायनी क दूषणिका, पड़खे चंद्र बगेरेनो सद्भाव होत्राथी तेओनी प्रमा पण तेमां छे-ए सत्य छे, पण मात्र ते प्रभा तमस्कायना परिणामे परिणमवाधी पोताना के एंटले आत्माने दृषित करे छे, माहे ते प्रभा-छे पण नहि जेवी छे. [* काठे ' ति] काळो, [' कालोभासे ' ति] बोह काळो पण पदार्थ कोइ कारणथी काल. काळो अवभारे नहि माटे कहे छे के, ते तमस्काय काळो छे अने कालो अवभारे छे अथवा काळी क तिवाळो छे, 🧗 गंभीरलोगहरिसचणके र ति] तथा गंभीर अने भयानक होवाथी ते तमस्काय, रोग हर्षनी जनक-हंबाडाने उभां करनार-छे हवे तमस्कायनी रोगहर्षजनकता अने भयान-कतानां कारणो कहे छैं: ['भीमे ' ति] ए तमस्काय भीष्म, [' उत्तासणए ' ति] अने उरकंपनो हेतु छे. छेवट उपसंहार करता कहे छे के, भीम. ['परम '-इत्यादि.] तमस्कायनं खरूप पूर्वोक्त प्रमाणे छें, माटे ज बहे छे के, ['देवे वि ण ' इत्यादि.] ['तप्पहमयाए ' ति] देव पण ए देव पण क्षोभ पामे. तमस्त्रायने जोतां वैत-जीतांवार-ज ['रोगाएज ' ति] क्षोम पार्म-[' अहे णं ' इत्यादि.] हवे कदाच ते देव, तमस्त्रायमां प्रवेश करे तो पण भयथी ['सीहं सीहं 'ति] कायगतिना अतिभेगधी अने ['तुरियं तुरियं 'ति] मनोगतिना अतिवेगधी अर्थात् जळरीथी ज ['बीइवइज्जं ' ति] तमस्कायने-व्यतिव्रजे-उछंघे-तमस्कायमांथी जलदी बहार नीक्क़ी जायः ['तैम इति वां' ईत्यादिः] अधकारस्य होवाथी वसः तमस्कायनुं 'तम ' ए १ नाम छे, अंधकारना ढगलारूप दोवादी 'तमस्काय ' ए बीजुं नाम छे, तमोरूप होवाधी 'अंधकार ' ए बीजुं नाम छे, महातमोरूप होताथी ' महांधकार ' ए चोधुँ नाम छे, लोकमां तथाप्रकारनो बीजो अंधकार न होताथी ' लोकांधकार ' ए पांचमुं नाम छे, ए प्रमाणे महांधकार-लोकांधकार. ' लोकतमिस ' ए छद्नुं नाम छे, त्यां उद्द्योत न होबाधी देवोने पण ए अधकाररूप होबाने लीधे ' देवांधकार ' ए सातमुं नाम छे, ए प्रमाणे ' देवतमिस्र ' ए आठमुं नाम छे, बरुवान् देवना भयथी भागता देवोने तथाविध जंगल जेवुं होवाने लीधे शरणभूत होवाधी ए तमस्कायनुं 'देवारण्य ' ए नवमुं नाम छे, ब्यूह एटले चकादिब्यूहनी पेठे देंथोने दुर्भेद होवाथी 'देवब्यूह ' ए एनं दशमुं नाम छे, देवीने मयनुं उत्पादक होह तेओना रामनमां विषातनुं कारण होवाथी ' देवपरिघ ' ए अग्यारमुं नाम छे, देवोते क्षोमनुं कारण होवाथी ' देवप्रतिक्षोम'' ए वारमुं नाम छे अने ए तमस्काय, अरुणोदक समुद्रना पाणिनो विकार होवाथी एनं ' अरुणोदक समुद्र ' ए तेरमुं नाम छे. पूर्वे पृथिव्यादि सँबंधे तमस्काय राव्दनं अरुणोदकसमुद्र बाच्यपणुं पूछ्युं अर्थात् ' पृथिवी ए तमस्काय कहेवाय ' इत्यादि पूछ्युं, हवे ते तमस्काय, क्या पदार्थनो परिणाम छे-छुं पृथिवीकाय-पृथिवी-नी परिणाम छे के अप्काय-पाणी-नो परिणाम छे वा पृथिवी अने पाणी-ए बन्ने जीव अने पुद्रत्यना परिणामरूप होवाथी ए तम काय, जीव अने परिणाम? पुद्रलमी परिणाम छे—ए विषे पूउतां—['तमुक्काए णं ' इत्यादि] सूत्र कहे छे. तें तमस्कायमां बादस्वायु, बादर वनसाति अने त्रसो उत्पन्न थाय छे, कारण के, बायुनी अने बनस्पतिनी उत्पत्ति अफायमां संभवे छे पण त्यां एटले तमस्कायमां बीजा जीवोनी उत्पत्ति संभवती नथी. कारण के, बीजाओनुं ते खस्थान नथी. माँटे ज कहां छे के, [' नो चेव ण इत्यादि.]

ऋष्णसन्तिओ.

२०. ४० - कई णं भंते ! कण्हराईओ पचता ?

२०. उ०-गोयमा ! अह कण्हराईओ पनताओ.

२१. प्र० — कहि णं भंते ! एयाओ अह कण्हराईओ पश्चताओ ?

२१. उ०--गोयमा ! जिप् सर्णकुमार-माहिदाणं कप्पाणं, हिट्ठि बंगलोए कप्पे (अ)रिट्ठे विमाणपत्थडे-एत्थ णं अवस्वाडगसम-चउरंससंठाणसंठियाओ अट्ट कण्हराईओ पत्रताओ, तं जहाः — पुरिक्षमेणं दो, पचास्थिमेणं दो, दाहिणेणं दो, उत्तरेणं दो; पुरिश्यमऽर्म्भतरा कण्हरीई दाहिण-याहिरं कण्हराइं पुद्वा, दाहिण-कण्हराती पुरारिथमबाहिरं व.ण्हराइं पुद्वा; दो पुराधिम-पचरिथमाओ राजि पश्चिमवाह्य कृष्णराजिने स्पर्शेली छे, पश्चिमाम्यंतर कृष्णराजि

२०. प्र०-हे भगवन् ! कृष्णराजिओ केटली कही छे !

२०. उ०—हे गौतम ! आठ ऋष्णराजिओ कहेली छे.

२१. प्र०—हे भगवन् ! ए आठ ऋष्णराजिओ क्यां आवेळी कही छे ?

२१. उ०--हे गौतम ! उपर सनःकुमार-माहेन्द्र कल्पमां अने-नीचे ब्रह्मलोक करपमां (अ)रिष्ट विमानना पाथडामां छे अर्थात् ए टेकाणे असाडानी पेठे समचतुरस्र-चोखंडे-संस्थाने संस्थित एवी आठ कृष्णराजिओ कहेली है, ते जेमंके; बै कृष्णराजि पूर्वेमां, बे कृष्णराजि पश्चिममां, वे कृष्णराजि दक्षिणमां अने वे कृष्णराजि उच्मंतरा कण्हराई पचास्थिम बाहिरं कण्हराई पुट्टा, पचास्थिम- , उत्तरमां, ए प्रमाणे आठ ऋष्णराजिओ कही छे. प्रीमांतर ऋष्ण-Sमांतरा कण्हराई उत्तरबाहिरं कण्हराइं पुष्टा, उत्तरमऽर्भातरा भाजि दक्षिणवाह्यं छप्णराजिने स्पर्शेकी छे, दक्षिणाभ्यंतर ऋष्ण-

लोकतमिल-देवांथवः र. दे तिमिस्न. देशरण्य-देव यूड. देवपरिष-देवप्रतिक्षोम् तमस्काय को नो तमस्कायमः जीवी.

৭. अहिं प्राकृत शैलीयी दीर्घ थयो छे एटले 'क'ने बदले 'का 'थयो छे अने 'दूषणा' शब्दधी खार्यमां 'क' प्रत्यय आद तथी 'दूषणिका' शब्द बन्यो छे:--श्रीअभय०

२. 'इति ' एटले ए अने ' वा ' एटले विकलाः-श्रीअभय०

१. मूलच्छायाः—कति भगवेन् ! कृष्णराजयः प्रवृत्ताः ? गोतम ! अष्ठ कृष्णराजयः प्रवृत्ताः. कृत्र भगवन् ! एता अष्ठ कृष्णराजयो प्रवृत्ताः ? गीतम ! उपरि सनत्क्रमार-माहेन्द्रयोः कल्पयेः, अधा बहालोके कल्पे रिष्टे विमानप्रसाटेऽत्राऽक्षपाटकसम्पत्तुरवर्तस्थानसंस्थिता अष्ट कृष्णराजयः प्रक्षसाः, तंद्यथाः-पीरस्त्येन हे, पश्चिमेन हें, दक्षिणेन हे, उत्तरेण हे; पौरस्त्याऽभ्यन्तरा कृष्णराजिः दक्षिणन स कृष्णराजि रष्ट्रष्टा, दक्षिणाऽभ्यन्तरा कृष्णराजिः पश्चिमवासां कृष्णराजि रुखा, पश्चिमाऽभ्यन्तरा कृष्णराजिः उत्तरबासां कृष्णराजि रुखा, उत्तराऽभ्यन्तरा कृष्णराजिः धौरस्यखासां कृष्णराजि स्रष्ठाः हे पौरसय-पश्चिमेः — अनु०

बाहिराओ कण्हराइओ छलंसाओ, दो उत्तर-दाहिणबाहि-राओ कण्हराईओ तंसाओ, दो पुरिश्यम -पचित्यमाओ अन्मितराओ कण्हराइओ च उरंसाओ, दो उत्तर-दाहिणाओ अन्मितराओ कण्हराइओ च उरंसाओ.

> -पुट्याऽतरा छलंसा तंसा पुण दाहिणुत्तरा बज्झा, अस्मितर चउरंम सच्या वि य कण्हरातीओ.

२२. प्र०—कण्हराईओ णं भंते ! केवातियं आयामेणं, केवइयं विवसंभेणं, केवातियं परिवसेवेणं पत्रता ?

२२. उ०—गोयमा! असंखेजाइं जोयणसहस्साइं आयामेणं, संखेजाइं जोयणसहस्साइं विक्खंमेणं, असंखेजाइं जोयणसहस्साइं परिक्लेयेणं पत्रचाओ.

२३. प्रत—कण्हराईओ णं मंते! केमहाित्याओ पत्रताओ ! २३. उ०—गोयमा! अयं णं जंबुदीवे दीवे, जाव-अद्धमासं वीईवएजा, अत्थेगइयं कण्हराई वीईवइजा, अत्थेगइयं कण्हराई णो वीईवएजा; एमहाित्याओ णं गोयमा! कण्हराईओ पत्रताओ.

२४. प०--अस्थि णं भंते !कण्हराईसु गेहा इ वा, गेहावणा इ वा ?

रेष्ठ. उ०--णो इणहे समहे.

२५. प्र०--अरिथ णं भंते ! कण्हराइसु गामा इ वा ? २५. उ०--णो तिणहे समहे.

२६. प्र०—अस्थि णं भंते ! कण्हराईणं उरालां बलाहया संसेयंति, सम्मुच्छाति, वासं वासंति ?

२६. उ०--हंता, अत्थि.

२७. प्र०--तं भंते ! किं देवो पकरेति, असुरो पकरेति, नागो पकरेति ? उत्तरबाह्य कृष्जराजिने स्पेशेली छे अने उत्तराम्यंतर कृष्णराजि पूर्वबाह्य कृष्णराजिने स्पेशेली छे, पूर्वनी अने पश्चिमनी वे बाह्य कृष्णराजिओ पढंशा छ खूणी छे, उत्तरनी अने दक्षिणनी वे बाह्य कृष्णराराजिओ प्रांसी-त्रिखूणी-छे, पूर्वनी अने पश्चिमनी वे अम्यंतर कृष्णराजिओ चटरंस चो स-चोखंडी छे अने उत्तरनी अने दक्षिणनी वे अम्यंतर कृष्णराजिओ पण चउरंस-चोखंडी छे. -(कृष्णराजिओना आकारोने छगती गाथा कहे छे:-) पूर्वनी अने पश्चिमनी कृष्णराजि छ खूणी छे, वळी, दक्षिणनी अने उत्तरनी बाह्य कृष्णराजि त्रिखूणी छे, अने बीजी बधी पण अम्यंतर कृष्णराजि चौरस छे.

२२. प्र०--हे भगवन् ! इध्यराजि, आयामवडे केटली कही छे! विष्यामवडे केटली कही छे अने परिक्षेपवडे केटली कही छे !

२२. उ०--हे गौतम ! कृष्णराजिओनो आयाम, असंख्येय योजन सहस्र छे, विष्कंभ, संख्येय योजन सहस्र छे अने परिक्षेप तो असंख्येय योजन सहस्र छे.

२३. प्र०—हे भगवन्! कृष्णराजिओ केटली मोटी कही है?
२३. उ० — हे गौतम! एक विपळ जेटला बखतमां पण कोई देव जंबूद्वीपने एकवीश बार फरी आवे अने एवी ज शीव्रतम गतिवडे जो लागलागट अडघो मास चालवानां आवे तो पण (ए देवथा) कोई कृष्णराजि सुधी पहोंचाय अने कोई कृष्णराजि सुधी न पहोंचाय अर्थात् हे गौतम! कृष्णराजि एटली मोटी कही छे.

२४. प्र०—हे भगवन् ! कृष्णराजिओमां गृहो अने गृहापणो छे ?

२४. ड०—(हे गौतम !) ९ अर्थ समर्थ नथी अर्थात् गृहो विगेरे नथी.

२५. प्र०-हे भगवन् ! कृष्णराजिओमां गामो वगेरे छे !

६५. उ०—(हे गौतम!) ए अर्थ समर्थ नथी अर्थात् नथी.

२६. प्र०--हे भगवन् ! ऋष्णराजिओमां मोटा मेघो संस्वेदे छे, संमूर्छे छे अने वरसाद वरसे छे !

२६. उ०—(हे गैंनम!) हा, छे अर्थात ए प्रमाणे-प्रश्वमां कह्या प्रमाणे-थाय छे.

२७. प्र०--हे भगवन् ! शुं तेने देव, असुर के नाग करे छे ?

१. मूज्यायाः — बाह्य कृष्णराजी वहसे, दे उत्तर — द्शिणवाह्य कृष्णराजी त्यक्षे, दे पौरस्य - पृथ्विमे आभ्यन्तिके कृष्णराजी चतुरले, दे उत्तर — दक्षिणे आभ्यन्तिरके कृष्णराजी चतुरले, दे उत्तर — दक्षिणे आभ्यन्तिरके कृष्णराजी चतुरले, दे उत्तर — दक्षिणे आभ्यन्तिरके कृष्णराजी चतुरले, दे उत्तर चिक्षणे आभ्यन्तिरके कृष्णराजी चतुरले, दे प्रत्ये प्रति प्रति विकास कृष्णराजया विकास कृष्णराजया विकास कृष्णराजया कृष्णराजया विकास कृष्णराजया कृष्णराजया विकास कृष्णराजया कृष्णराज्या कृष्णराजया कृष्णराज्या कृष्णर

२७. उ०--मीयमा ! देवी पकरेति, नी अमुरी, नी नागी 🐪 २७. उ०--ह गौतम ! देव करे छे, अमुर के नाग नथी पकरेइ.

२८. प्र> -- अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु बादरे थणियसदे ?

२८. उ०—जहा उराला तहा.

२९. प्र०-अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु वादरे आउकाए, बादरे अगाणिकाए, बादरे वणस्सइकाए ?

२९--उ०--णो तिणहे समहे, णण्णत्य विग्गहगतिसमा-वन्नएणं.

३०. प्रट--अरिय णं चंदिम-सूरिय-गहगग-नवस्वत्त-ताराह्या ?

३०. उ०-णो तिणहे समहे.

२१. प्र०-अत्थि णं कण्हराईणं चंदाभा ति वा, सूरामा ाती वा ?

६१. उ०—णो तिषद्वे समद्वे.

३२. ड० — हे गोयमा ! कालाओ, जाव,-खिणामेव वीतीवएजा.

३३. प्र०-कण्हराइओ णं मंते ! कतिनामधेजा पन्नता?

३३. उ०-गोयमा ! अहनामधेजा पचता, तं जहा:-कण्हराई वा, मेहराई वा, मघा इ वा, माघर्व्ह वा, वायफालिहा इ वा, वायपितक्लोभा इ वा, देवफालिहा इ वा, देवपितक्लोभा इ वा.

३४. प्र०-कण्हराइओं णं मंते ! किं पुढवीपरिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीवपरिणामाओ, पोग्गलपरिमाणाओ ?

३२. ७०—गोयमा ! पुढविपरिणामाओ, नो आउपरिणामाओ वि, जीवपारिणामाओ वि, पुरगलपरिणामाओं ी.

३५. प्र० - कण्हराईसु णं भंते ! सव्वे पाणा, भूगा जीवा, -सत्ता उनवण्णपुठवा ?

करतो.

२८. प्र०--हे भगवन् ! ऋष्णराजिओमां बादर स्तनित शब्दो

२८. ड०—(हे गीतम!) जेम मोटा मेघो कहा तेम जाणवुं.

२९ प्र०-हे भगवन् ! ऋष्णराजिओमां वादर अष्काय, बादर अग्निकाय अने बादर वनस्पतिकाय छे ?

२२. उ०--(हे गौतम !) ते अर्थ समर्थ नथी अने आ निषेध, विग्रहगति समापन्न जीव सिनाय बीजा जीवे माटे जाणवो.

् २०. प्र०--हे भगवन् ! ऋष्णराजिओमां चंद्र, सूर्य, प्रह्मण, नक्षत्र अने ताराओं छे ?

३०, उ०--(हे गौतम!) ते अर्थ समर्थ नथी.

३१. प्रo--हे भगवन् ! कृष्णराजिओमां चंद्रनी कांति छे ? सूर्वेनी कांति छे ?

- ३१: उ०--(हे गौतम !) ते अर्थ समर्थ नथी.

३२. प्र० — कण्हराईओ णं मंते ! केरिसियाओ वजेणं ३२. प्र० — हे भगवन्! कृष्णराजिओ वर्णवडे केवी कही

ं ३२. उ०--हे गौतम ! काळी यावत्-(तमस्कायनी पेठे भवंकर होवाथी देव पण एने) जलदी ज उल्लंघी जाय.

३३. प्र०—हे भगवन्! ऋष्णराजिनां केटलां नामधेय कसां छे ?

३३. उ०--हे गौतम ! ऋष्णराजिनां आठ नाम नह्यां छे. ते जेमके, ? कृष्णराजि, २ मेधराजि, ३ मधा, ४ माध्यती, ५ वातपरिया, ६ वातपरिक्षोभा, ७ देवपरिषा अने ८ देवपरि-क्षोमा.

३४. प्रo-- हे भगवन् ! युं कृष्णराजि पृथ्वीनो परिणाम छे ? जलनो परिणाम छे ? जीवनो परिणाम छे ? के पुद्रलनो परिणाम छे?

२४. उ०--हे गौतम ! कृष्णराजि पृथ्वीनो परीणाम छे पण जलनो परिणाम नथी. तथा जीवनो पग परिणाम छे अन पद्रवनी पण परिणाम छे.

३५. प्र०--हे भगवन् ! ऋष्णराजिमां सर्व प्राणी, भूती, जीवो अने सस्त्रो पूर्वे उत्पन ययेला छे ?

१. मूलच्छायाः — गातम I देवः प्रवरोति, नोडसुरः, नो नागः प्रवरोति. अस्ति भगवन्! कृष्णराजिषु बादरः स्तनितशब्दः? वधोदासास्तथा. अस्ति भगदन् ! कृष्णराजिषु बादरोऽप्कायः, बादरोऽप्निकायः, बादरो वनस्पतिकायः १ नो सदर्थः समर्थः, नान्यत्र विम्नदगतिसमाऽऽपन्नकेत. अस्ति चन्द्र सूर्य-प्रहरण- नक्षत्र-तागरूपाः ? नो तदर्थः समर्थः. अस्ति हृव्णराजिषु चन्द्राऽ८भेति वा, एशीभेति वा ? नो तदर्थः समर्थः, कृष्णराज्ञयो भगवन् ! कीट३पो वर्षेन प्रज्ञताः १ गीतम ! इत्पाः, यादत-क्षिप्रमेव व्यतिवजेत्. कृष्णराजयो भगदन् ! कतिनामधेयाः प्रज्ञताः ? गीतम ! अष्टनामधेया प्रज्ञताः, तदायाः कृणराजिबों, भेचराजिबों, भचा इति या, माघवतीति वा, बातपरिधा इति वा, बातपरिक्षोभा इति वा, देवपरिधा इति वा, देवपरिक्षोभा इति वा, कृष्णराजयो सरवन् ! कि पृथिवीपरिणासाः, अप्परिणासाः, जीवपरिणासाः, पुदूरुपरिणासाः ? गीतम । पृथिवीपरिणासाः, नोउपरिणासाः अपि, कीवपरिणामा अपि, शुद्रसपरिणामा अपि, दुश्णराजिषु भगवन् ! सम् प्राणाः, भूताः, जीवाः, सरवा ज्ययश्रपूर्वाः !-अनु०

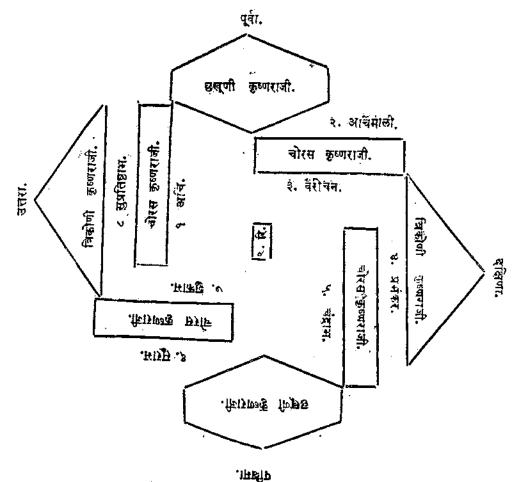
२५. उ०-हंता, गोयमा! असइं, अदुवा अणंतक्खुत्तो; नो चेव णं बादरआउकाइयत्ताए, बादरअगाणिकाइयत्ताए वा, बायरवण- थया छे, पण बादर अप्कायपणे, बादर अग्निकायपणे, अने बादर स्सईकाइयत्ताए वा.

३५. उ०--हे गौतम ! अनेकवार अथवा अनंतवार उत्पन्न वनस्पतिकायिकपणे उत्पन्न थया नथी.

२. तमस्कायसादृश्यात् कृष्णराजिप्रकरणम् . 'कण्हराइओ ' ति कृष्णवर्णपुद्रलरेखाः, 'हब्वं ' ति समम् , " किले " ति वृत्तिकारः प्राह. ' अक्लाडग '-इत्यादि. इह आखाटकः प्रेक्षास्थाने आसनविशेषटक्षणस्तासंस्थिताः, स्थापैना चेयम .- ' नो असरो ' इत्यादि. अप्तर-नागकुमाराणां तत्र गमनाऽसंभवाद् इति. ' कण्हराइ इ व ' ति पूर्ववत्, 'मेघराइ' इति वा कालमेघरेखातुल्यत्वात्, ' मघा इ वा ' तमिश्रतया षष्टनारकपृथ्वीतुल्यावात् , ' माँघर्वर्र इ वा ' तमिश्रतया एव सत्तमनारकपृथवीतु अस्वात् , ' वाय-फालिहा इ व ' ति वातोऽत्र वात्या तदत्-या तमिश्रवात्, परिषश्च दुर्ङङ्यतात् स (सा) वातपरिषः, 'वायगरिक्लोमा इ व' ति वातोऽत्राऽि वात्या तद्वत्-या तमिश्रत्वात् , परिक्षोभश्च परिक्षोभहेतुत्वात् सं '(ता) वातपरिक्षोभ इति. 'देवपालिहा इ व' ति देवानां परिचा इव अर्गछा इव दुर्लङ्ध्यत्वाद् देवपरिष इति. 'देवपालक्लोमा इ व ' ति देवानां परिक्षोमहेतुत्वाद् इति.

कृष्य स्वित

२. कृष्णराजि अने तमस्कायनुं साङ्कय होवाधी हवे कृष्णराजिनुं प्रकरण शरु थाय छे. [कण्हराहओं ! ति] कृष्णराजि एटले काळ अखाडो. पुद्रहोनी रेखा, [' ईंट्यं ' ति] साथे, वृत्तिकारे तो ' हव्य ' नो किउ-चोक्कस-एवो अर्ध कर्यो छे. [' अक्खाडग '-इत्यादि.] अहिं आखाटक स्थापना. एटले अखाडो अर्थात् नाटकाँदि जावाना स्थानमां एक प्रकारना आसनरूप, तेने संस्थाने ए कृष्णराजिओ संस्थित छे, तेनी स्थापना-आकृति-आ प्रमाणे छेः—



वातपरिवा

[' नो असरो ' इत्यादिः] त्यां-कृष्णराजिने ठेकाणे-असुरकुमारोनुं अने नागकुमारोनुं गमन संभवतुं नथी [' कण्हराइ इ व ' ति] कृष्णराजि मेवराजी-मधा. शब्दनो अर्थ पूर्वनी पंठे जाणवो, ['मेघराइ इति वा '] काळा मेचनी रेखानी तुल्य होवाथी 'मेघराजि 'ए माम छे, ['मधा इ वा '] माधवती. तमिस्रपणे छट्ठी नारक पृथ्वीनी तुल्य होवाथी 'मघान'ए नाम छे, ['माघवड इ वा '] तमिस्रपणे ज सप्तम नारक पृथ्वीतिलय होयाथी ' माघवती ' ए नाम छे, [' वायफलिह इ व ' ति] अहिं वात एउँ हे वाल्या-बातनो समूह—ए अर्थ जाणवो—जे कृष्णराजि बीयुना समूहनी पेठें घष्ट अंघकारवाळी छे अने दुर्लीच्यं होवाथी परिघनी पेठे छे ते. 'बातपरिघ' कहेबाय, ['बायपरिक्लोम' ति] अहिं पण बात एटले ' वात्या ' ए अर्थ करवो, जे कृष्णराजि, वायुना समूहनी पेठे गाढ अंधकारबाळी के अने परिक्षोभना हेतुगणार्थी परिक्षोभरूप छे ते बातपंरिक्षोभ दंबपरिधा-दंबपरेक्षोभाः कहेवाय, [' देवफिलहा इ व ' ति] दुर्लेध्यपणाथी ज कृष्णराजि देवोने परिध-अर्गला-भोगळ-नी पेठे छे ते 'देवपरिघ' कहेवाय अने ['देवप-लिक्खोमा इ व' ति] देवोने परिक्षोभाववामां हेतु होत्राथी ए वृष्णराजि ' देवपरिक्षोभ ' पण कहेवाय.

१. मूलच्छायाः-हन्तं, गौतम । असकृत् , अथवा अनन्तकृत्वः, नो चैव बादसायकृतया, बादसमिकायिकृतया वा, बादस्वनस्यतिकायिकृतया नाः-अनु०

र. स्थापना अनुवादे दर्शयिष्यते:-अनु०

लोकांतिक देवो.

---एैएसि णं अहण्हं कण्हराइंगं अहुसु उवासंतरेसु अह ले।गंति-ग्विमाणा पनता, तं जहा:-अची, अचिमाली, वहरोयणे पभं-करे, चंदामे, सूरामे, सुकामे, सुपइट्ठामे, मज्झे रिट्ठामे.

३६. प्र०--काह णं भंते ! अचि विमाणे पचता ? ३६. उ०--गोयमा ! उत्तर पुरत्विमेणं.

२७. प्र०--काह णं मंते ! अचिमाली विमाणे पत्रता ? २७. उ०--गोयमा ! पुरस्थिमेणं, एवं परिवाडीए नेयव्वं.

२८ प्र०--जाव-कहि एं मंते ! रिट्ठे विमाणे पण्यत्ते ? ३८. उ०--गोयमा ! बहुमज्ज्ञदेसमाए, एएसु णं अइसु लोगंतियविमाणेसुं भद्वाविहा लोगंतिया देवा परिवसीते, तं जहाः-सारस्ययमाइचा वण्हीवरुणाय गहतोया य, तुसिया आव्वाबाहा अग्गिच[ि] चेव रिट्टा य.

३९. ४० -- कहि णं भंते ! सारस्सया देवा परिवसीत ? ३९. उ०-गोयमा ! अचिमि विमाणे परिवसंति.

४०. प्र० — कहि णं भंते ! आइचा देवा परिवसंति ? ४०. उ० - गोयमा ! अजिमालिम्मि विमाणे, एवं नेयन्वं जहाऽऽणुपृच्यीए.

४१. प्र०--जाव-कहि ण भंते ! निहा देना परिवसनि ? : " ४१: प्र०-- हे भगवन् ! रिष्ट देवो क्यां रहे छे ?

४१. उ०-गोयमा ! रिहामि विमाणे

४२. प्र०-सारस्तयमाइचाणं भंते ! देवाणं कृति देवा, कति देवसया पण्णता ?

ं ४२. उ०-गोयमा ! सत्त देवा, सत्त देवसया परिवारो पत्रतो, वण्ही-वरुणाणं देवाणं चउदत देवा, चउदस देवसहस्सा पत्रताः; गहताय-तुसियाणं देवाणं सत्त देवा, सत्त देवसहस्सा परिवारी पत्रत्ती; अवसेसाणं नव देवा, नव देवसया पण्णत्ता.

—ए आठ कृष्णराजिओना आठ अवकाशान्तरमां आठ हो-कांतिक विमानों (आवेलां) वह्यां छे. ते जैमके; १ अर्ची, २ अर्चिमीली, ३ वैरोचन, ४ प्रमंतर, ५ चन्द्राम, ६ सूर्णम, ७ शुक्राम, आठमुं सुप्रतिष्टाम अने वचमां रिष्टाम विमान छे.

३६. प्रत—हे मगदन् ! अची विमान क्यां कह्युं छे ?

३६. उ०--हे गौतम ! उत्तरनी अने पूर्वनी बचे अची विमान कह्यं छे.

३७. प्र०-हे भगवन् ! अर्चिमाली विमान क्यां कह्युं छे ?

३७. उ०-हे गौतम ! पूर्वमां अचिमाली विमान कहां छे, ए प्रमाणे कमथी बधां .विमानो माटे जाणवुं यावत् —

३८. प्रायम् रिष्टविमान क्यां कह्यं छे ?

३८. उ० — हे गौतम ! बहुमध्यभागमां रिष्टविमान कह्यं छे, ए आठे छोकांतिक विमानोमां आठ जातना छोकांतिक देवो रहे छे, ते जेमके, १ सास्वत, २ आदित्य, ३ वहि, ४ वरुण, ५ गर्दतीय, ६ तुषित, ७ अव्याबाध, अने ८ आग्नेय तथा वचमां रिष्ट देव छे.

३९. प्र०- हे भगवन् ! सारस्वत देवो क्यां रहे छे ? २९. उ०-हे गैतम ! सारखत देवो अर्ची विगानमां रहे छे.

४०. प्र० —हे भगवन् ! आदिख देवो क्यां रहे छे ?

४०. उ० — हे गौतम ! आदित्य देवो अर्चिमालि विमानमां रहे छे. ए प्रमाणे यथानुपूर्वीए यायत्-रिष्ट विमान सुधी जाणवुं,

४१. उ० — हे गौतम ! रिष्ट देवो रिष्ट विमानमां रहे छे.

४२. प्र०-हे भगवन् । सारखत अने आदित्य, ए बे देवी-ं नो केटला देवो अने केटला देवना सेंकडाओ परिवार कहा। छे ? ं ४२. उ० - हे गौतम ! सात देवो अने देवना सात सेंकडाओ एटले सातसो देवो, सारखत अने आदिल देवोनो परिवार छे, वहिन अने वरुण ए वे देशोनो चौद देव अने चौद हजार देव परिवार व ह्यों छे, गर्दतीय अने तुषित ए बे देवीनी सात देव अने सात हजार देव परिवार कह्यों छे, अने बाकीना देवोनो नव देव अने नवसो देव परिवार व ह्यो छे. (परिवारनी संख्याने

१. मूलच्छायाः—एतासाम् अष्टानां कृष्णराजीनाम् अष्टसु अवकाशान्तरेषु अष्ट लोकान्तिकविमानानि प्रह्मप्ताने, तद्यथाः-अर्चिः, अर्चिमालिः, र्वेरोचनः, प्रभद्गरः, चन्द्रासः, सूर्यामः, शुक्रा(का)भः, सुप्रतिष्ठामः, मध्ये रिष्टामः. कुत्र भगवन् ! अर्तिः विमानं प्रज्ञसम् ? गीतम ! उत्तर-पीरस्रयेन, कुत्र भग्वन् ! अचिमालिविंसानं प्रश्नप्तम् ! गोतम ! पौरस्येन, एवं परिपाट्या ज्ञातन्यम्, यावत्-कुत्र भगवन् ! रिष्टं विमानं प्रज्ञप्त ! गौतम ! बहुमध्य-देशभागे, एनेषु अष्टमु लोकान्तिकविमानेषु अटविधाः लोकान्तिकाः देवाः परिवसन्ति, तद्यधाः-सारस्वना-ऽवित्या वह तो बरुणाश्रः गर्दतीयाश्र,तुविना अव्याबाधा आग्नेयाश्वेव रिष्टाश्च. कुत्र भगवन् ! सारखताः देवाः परिवसन्ति ! गौतम । अर्थिप विमाने परिवसन्ति. कुत्र भगवन् ! आदिला देवाः परिवसित ! गातम ! अचिमाली विमाने, एवं इःतन्यं यथाऽऽनुपूर्व्या. यावत्-कुत्र भगवन् ! रिष्टा देवाः परिवसित ! गातम ! रिष्टे विमाने. सारखताऽऽित्यानां भगवन् ! देवानां कति देवाः, कति देवशतानि प्रक्षप्तानि ! गौतम ! सप्त देवाः, सप्त देवशतानि परिवारः प्रश्नप्तः, विह-वर्षणानाः देवानां चतुर्दश देवाः, चतुर्दश देवसहस्राणि प्रश्मानि, गर्दतीय-तुषितानां देवानां सप्त देवाः, सप्त देवसहस्राणि परिवारः प्रश्माः अवशेषाणां नव् देवाः, नव देवशतानि प्रह्मानिः---अञ्च०

पर्देम-जुगलिम सत्तओ सयाणि बीयम्मि चउइससहस्सा, तहए-सत्तसहस्सा नव चेव सयाणि सेसेसु.

४३. प्र० — लोगंतिगविमाणा णं भंते ? किंपङ्डिया पण्णता ?

४३. उ०—गोयमा ! वाउपइहिया पण्पत्ता, एवं नेपव्यं विमाणाण पइहाणं, वाहुकुचत्तमेव संठाणं; बंभछोयवत्तव्यया नेयव्या, जहा जीवामिगमे देवुदेसए, जाव-हंता, गोयमा ! असति, अ-दुवा अणंतवरवृत्तोः; नो चेव णं देवत्ताए लोगंतियविमाणसु.

४४. ४०—लोगंतियविमाणेसु णं भंते ! केवइयं कालं ठिई पत्रता ?

४४. उ० - गोयमा ! अह सागरोवमाइं ठिती पत्रचा.

४५. प्र०— लोगातियाचिमाणेहितो णं भंते ! क्रेबतियँ अबा-हाए लोगते पत्रते ?

४५. उ० - गोयमा । असंखेजाइं जोयणसहस्साई अयाहाए लोगते म्यत्ते.

-सेवं भीते !, सेवं भीते हित

स्चवनारी गाथा कहे छै:) प्रथम युगलमां सातसोनो परिवार छे, बीजामां चौद हजारनो परिवार छे, त्रीजामां सात हजारनो परिवार छे अने बाकीनामां नवसोनो परिवार छे.

४३. प्र०—हे भगवन् ! लोकांतिक विमानो क्यां प्रतिष्ठित छे एटले लोकांतिक विमानो कोने आधारे छे ?

४३. उ० — हे गौतम ! छोत्रांतिक विमानो वायुप्रतिष्ठित छे, ए प्रमाणे विमानोनुं प्रतिष्ठान, विमानोनुं बाहुत्य, विमानोनी उंचाइ अने विमानोनुं संस्थान जेन ' जीवामिगम ' सूत्रपां देश उदेशकमां ब्रह्मछोकनी वक्तव्यता कही छे तेम अहिं जाणवुं यावत् —हा, गौतम! अहिं अनेकवार अथवा अनंतवार पूर्वे जीवो उत्पन्न थया छे, पण छोकांतिक विमानोमां देवपणे अनंतवार नथी उत्पन्न थया.

४४. प्र०—हे भगवन् ! छोकांतिक विमानोमां केटला व । उनी स्थिति कही छे ?

४४. उ०—हे गौतम ! लोकांतिक विमानोमां आठ सागरी-पमनी स्थिति कही छे.

४५. प्र०—हे भगवन् ! लोकांतिक विमानोधी केटले अंतरे लोकांत कह्यों छे ?

. ४५. उ० — हे गौतम! असंख्य हजार योजनने अंतरे छो-कांतिक विमानोधी छोकांत कहारे छे.

- हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, ते ए प्रमाणे छे. (एम कही यावत् विहरे छे.)

भगवंत-अर्प्त्यम्मसामिपणीए तिरीभगवईसते छ्डसये पंचमो उदेसी सम्मत्तो.

३. 'अइसु उनासंतरेसु ' ति इस्रोजन्तरम् अवकाशान्तरम् , तन्नाऽभ्यन्तरोत्तर-पूर्वयोरेकम् , पूर्वयोद्वितीयम् , अभ्यन्तर-पूर्वदिश्वणयोरत्तियम् , दक्षिणयोश्चर्तुर्धम् , अभ्यन्तरदक्षिण-पश्चिमयोः पश्चमम् , पश्चिमयोः पश्चम् , अभ्यन्तरपश्चिमो-कर्योः सप्तमम् , उत्तरयोरष्टमम् , 'होगंतिण्विमाण ' ति होकस्य ब्रह्महोकस्य अन्ते सगीपं भवानि हो क्षान्तिकानि, तानि च तानि विमानानि चेति समासः, होकान्तिका वा देवास्तेषां विमानानिति समासः इह चाऽवकाशान्तरयर्तिषु अष्टःसु आर्चःप्रमृतेषु विमानेषु वाच्येषु यत् कृष्णराजीनां अध्यमभागवर्ति रिष्टं विमानं नवमम् उक्तम् तद्धिमानप्रस्तायाद् अवसेयमः—''सारस्सयमाङ्चा वण्ही वरुणा य गइत्येया य, तुसिया अञ्चावाहा अग्निचा चेव रिष्टा यः" इह सारस्वताऽऽदिस्ययोः समुदितयोः स्त देवाः, सप्त च देवशतानि परिवारः—इसक्षराऽनुसारेणाऽवसीयते, एवम् उत्तरत्राऽपिः 'अवसेसाणं ' ति अव्यावधा—ऽऽरनेय- रिष्टानाम् ' एवं नेयव्यं ' ति पूर्वोक्तप्रभो—त्तराऽभिद्याने होकानितकविमानवक्तव्यताज्ञानं नेतव्यम् , तदेव पूर्वोक्तेन सह दर्शयितः—' विमाणाणं ' इत्यादि गाथार्धम् . तत्र विमानप्रतिष्ठानं दर्शितमेव, बाहस्यं तु विमानानां पृथिवीवाहत्यम् , तच पश्चिवेशतियांजनशतानि, उच्वतं तु सप्तयोजनशतानि; संस्थानं पुनरेषां नानाविधम् अनाऽऽविह्याप्रति , आविह्याप्रविष्टानि हि वृत्त—व्यस्त-चतुरस्तभेदात् विसंस्थानान्येव भवन्तीति. ' वंसलेश ' इत्यादिः , ब्रह्मकेके या विमानानाम् , देवानां च जीवाभिग्रभोत्रक्षात्र तत्रस्था सत्तेव्या अनुसर्तव्या, कियद् दूरम् ?

१. मूलच्छायाः—प्रथमयुगले सप्त शताति द्वितीये चतुर्दशसहस्राणि, तृतीये सप्तसहस्राणि नव चैव शतानि शेषेषु. लोकान्तिकविमान्ति भगवन् । किंप्रतिष्ठितानि प्रज्ञप्ताति ! गौतम ! बायुप्रतिष्ठितानि प्रज्ञप्ति , एवं ज्ञात्वयं विमानानां प्रतिष्ठानम्, बाहुल्येः च्रत्यमेव संस्थानम्; अह्यलोक- वक्तव्यता ज्ञात्वया, दथा जीवाप्रमिगमे देवोदेशके, यावत्—हन्त, गौतम ! असङ्गत् , अधवाऽनन्तक्रतः, नो चैव देवत्या लोकान्तिकविमानेषु क्षेत्रव्यानेषु भगवन् ! कियन्तं कार्यस्थितः प्रज्ञप्ता । अष्ट सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता लोकान्तिकविमानेप्रभे भगवन् ! कियस्याऽवाष्त्रया सोकान्तः प्रकृतः प्रवृत्तः । विष्यस्थितः प्रज्ञप्ता । अस्ति ।

इलाह:-' जाव र इलादि. सा चेवं लेशत:-'' लीवंतियविमाणा णं मंते ! कतिवचा पत्रता ? गोवमा ! तिवण्या-लाहिना, हालिहा, सुक्किल्लाः, एवं पभाए निचालीया, गंधेणं इष्टुगंधा, एवं इष्टुफासा, एवं सञ्चरयणामयाः, तेसु देवा समच उरंसा, अल्लमह-गवना, पम्हलेस्सा. लोयंतियिनिमाणेसु णं भंते ! सन्त्रे पाणा, भूआ, जीना, सत्ता; पुढानिकाइयत्ताए, आउकाइयत्ताए, तेउकाइयत्ताए, वाउकाइयत्ताए, वणस्सहकाइयत्ताए; देवताए, देविताए उववचपुच्या ? 'हन्त' इत्यादि लिखितमेव. '' ' केवइय ' ति छान्दसः यात् कियसा अबाधया अन्तरेण छोकान्तः प्रज्ञप्त इति.

भगवत्स्धर्मस्वामित्रणोते श्रीभगवतीस्त्रे व^{ष्ठ}शते पद्यम उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिरिविरचितं विवरणं समासम्

३. [' अट्ठसु उवासंतरेसु ' ति] बेनी वचलुं जे अवकाशान्तर तेमां एटले अभ्यंतर उत्तरनी अने पूर्वनी वचे एक विमान छे, बाह्य बन्ने अबकाशांतर. पूर्वनी वसे बीज़ं विमान छे, अभ्यंतर पूर्वनी अने दक्षिणनी वसे त्रीज़ं विमान छे, बाह्य बन्ने दक्षिणनी वसे चौथुं विमान छे, अभ्यंतर दक्षिणनी अने पश्चिमनी बच्चे पांचमुं विमान हे, बन्ने बाह्य पश्चिममां छहुं विमान हे, अध्यंतर पश्चिम अने उत्तरनी बच्चे सातमुं विमान हे अने बन्ने बान उत्तरमां आठमुं विमान छे. [' लोगंतियविमाण ' ति] लोक एटले बैह्मलोक, तेन अंते एटले समीपे जे भी रहे ते लोकांतिक कहेवाय अने लोकांतिकरूप जे विमानों ते लोकांतिक विमानों (ए प्रमाण समास करवों) कहेवाय, अथवा लोकांतिक ने देवों अने तेओना जे विमानों ते लोकान्तिक विमानो (ए प्रमाणे समास करवो) कहेवाय. अहिं अवकाशांतरमा रहेनारां 'अर्चि 'वंगेरे आठे विमानोनी हकीकत कहेवाना प्रसंगमां एण जे कृष्णराजिओना मध्यम-त्रचछे-भागे रहेनारं 'रिष्ट 'नामनुं नवमुं विमान जणान्युं छे ते फक्त विमानना प्रसावथी ज सगजवानुं छे. १ सारखत, २ आदित्य, ३ विह्न, ४ वरुण, ५ गद्दतीय, ६ तुरीय, ७ अव्यायाय, ८ आग्नेय अने नवमा रिष्ट, अहिं अक्षरीने अनुगार-लख्याने अनुसारे-एम जणाय छे के, सारखत देव अने आदित्य देव ए बज्ञे समुदित देवोनो सात देव अने सातसो देवो परिवार छ अर्थात् ए वज्ञे देवोनो भेगो परिवार एटलो हे, ए प्रमाणे आगळ पण जाणी लेवुं, [' अवसंसाणं ' ति] अव्यावाध देवनो, आग्नेय देवनो अने रिप्टेबनो प्रा परिवार जाणी हेवो. [' एवं नेयव्यं ' ति] ए प्रमाण पूर्वोक्त प्रश्नना अने उत्तरना अभिरुपिधी होकांतिक विमानोनी वक्तव्यतानुं इस कार्युः.

निमान,

स्रोक्तन्तिक.

स रखत दि देवो अने परिवार.

१. प्र॰ छाः -- लोकान्तिकविमाना भगवन् ! कतिवर्णाः प्रवृत्ताः ? गातम् ! त्रिवर्णाः -- लोहिताः, हारिद्राः, शुक्लाः; एवं प्रभया निलालोकाः, गन्धेन इष्टगन्धाः, एवम् इष्टस्पर्शः, एवं सर्वेरत्नमयाः; तेषु देवाः समचतुरस्ताः, आईनधूक्रवर्णाः, पद्मलेदयाः. लोकान्तिकविमानेषु भगवन् ! सर्वे प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः; पृथिवीकाथिकतया, अध्कायिकतया, तेजाःकायिकतया, वायुकाथिकतया, वनस्पतिकाथिकतया; देवतया, देवितया उपपन्नपुत्रीः १:-अनु०

१. आ उपरना आ टीकाना मूळ सूत्रमां देवोने लगती इसीकत आपेली हे. जैनसंप्रदायने अभिमत एवी-देवोने लगती धणी हक्षीकत आ सूत्रमां अनेक ठेकाणे आवी गई छे अने हवे पछी एण आवशे तो ए वधी हकीकतीनी साथै तूलना करवा साह जो वैदिक संप्रदायने समिमत एवी-देवोने लगती हकीकत आपवामां आये तो ठीक गणाय-एम मानीने अहीं श्रीपातंजलस्त्रमां आवेली ए देवानी हकीकत अक्षरशः जणावी दइए छीएः

[&]quot;ए पातालस्थाननी उपर भूओंक हे, भूओंकनी उपर भुवलोंक (अंतरिक्षलोक) हे. पृथ्वीमां जैम असंख्य जीवो रहे हे तेम ए अंतरिक्ष-लोकमां पण असंख्य जीवो रहे छे, भुवलींकनी उपर स्वलींक रहे छे; एने महेंद्रलोक पण कहे छे. एमां असंख्य उतमोत्तम प्राणिओ रहे छे ए १ महेंद्रलोकमां जे देव-जातिनो वासो छे तेना छ प्रकार छेः १ त्रिदश, २ अग्निष्वात्त, ३ याम्य, ४ तुषित, ५ अप-रिनिर्मितवरी अने ६ परिनिर्मितवरी. ए वधा देवा संकल्पसिद्ध सामर्थ्यवाळा, अणिमादि ऐश्वर्थ संपन्न, कहा पर्यंत आयुष्यवाळा अने ओपपादिक देहनाळा छ (ओपपादिकदेह एटले जे शरीर, माता पिताना संयोगवडे उत्पन्न थयुं नथी, किंतु पूर्वे करेला धर्मना प्रभावशी उत्पन्न थएठ छे) अर्थात् धर्मना तेजथी सुसंस्कृत अने पवित्र भातिक अणुओ द्वारा तेओनो देह बनेलो होय छे. ए देह, निर्मळ, लघु अने सृक्ष्मतम होय छे. एने मलिनदेहवाळा माणसो ओई शकता नथी. ए खर्लोकनी उपर २ महलींक छे, तेमां पांच प्रकारना देवो वास करे छेः १ कुमुद, ऋभव, ३ प्रतर्थन, ४ अवनाम अने ५ प्रचिताम. ए बधा महामृतवशी छे एटले एओने स्थृत तथा स्क्ममूती संपूर्ण-रूपे वश रहेलां होय छे. तेओ (ज्यारे तेनी) इच्छा करे छे, तेज काळे तेमने ए महामूतो ते ते पदार्थने हाजर करेछ अर्थात् एमनी अमीच इच्छाना प्रभावथी ए महाभूनो ने ते पदार्थने आकारे परिणाम पामे छे. तेओ आपको पेठे आहार करता नथी. संपय-बस्तुनुं ध्यान तथा परिदर्शन करीने ज तेओं इस तथा परिपुष्ट थाय छे. एमनुं आयुष्य हजार कल्य सुप्रीनुं छे. तेनी उपर ३ जन-लोक ' नामे ब्रह्मानो प्रथम लोक छे. ए लोकमां चार प्रकारनी देवचाति रहे छे: १ ब्रह्मपुरोहित, १ ब्रह्मकायिक, १ ब्रह्ममहाकार्यक अने ४ अमर. ए सघटा, महाभूत अने इंदियोने वश करीने अपार आनंदमां रहे छे. एमतुं आयुष्य वे हजार कलातुं छे. तेना उपर ४ 'तप' नामे ब्रद्यानो वीजो लोक छे. एमां त्रण प्रकारनी देव जाति रहे छेः १ आभाखर, २ महाभाखर, ३ सत्यमहाभाखर. महाभूतो इंद्रियो अने महत्-तत्त्व एटले मन; एमने वशीभूत छे. एमनुं आयुष्य चार हजार ऋत्यनुं छे. ए बधा ध्यानतृप्त अने अव्या-हतज्ञान संपन्न छे, सत्यलोकना विषय सिवायना अन्यलोकना सर्व विषयो तेमना जाणग्रामां छे. ए लोकनी उरर बद्धानी त्रीजो ५ सत्य-लोक छे. एमां चार प्रकारनी देवजाति रहें छे: १ अच्युत, २ शुद्धनिवास, ३ संखंभा अने ४ संज्ञासंज्ञी. केटलाक तेओने १ अकृत-भवनन्यास, २ खप्रतिष्ठ, ३ उपरिस्थ, अने ४ प्रधानवशी,-एवा नामधी पण ओळखे छे. एमनुं आयुष्य अने सामध्ये ब्रह्माना जेटछं छे -एओ दथा महाप्रलय पर्यंत जीवता रहे छे अने ब्रह्मानी पेठे नवी नवी सृष्टि करवामां समर्थ छे:- पातंजलयोगदर्शन, विभूतिपाद, सू० २६ (प्र-१७१-१७२-१७३ नयुरामसर्मा) [आ उल्लेखमां 'करा' शब्दनो प्रयोग नारंतार थएको छे तो तेनी समजण मादे जिज्ञासुओए मंसुस्यतिमानं मन्तंतरनं प्रकरण जोइ हेर्नु । :-अनुव

विमानोना आकार. जीवाभिगम. ते ज पूर्वोक्तनी साथ दर्शांबे छे के, [' विमाणाणं' इत्यादि] गाथार्थ-अडधी गाथा, तेमां विगाननुं प्रतिष्ठान दर्शाखुं ज छे अने बाह्स्य एटले विमानोनी पृथिवीनुं स्थूलपणुं तो दर्शाववानुं छे, ते बाह्स्य २५०० योजन छे अने तेनी उंचाइ तो ७०० योजन छे. वळी, एओ आविलकामां प्रविष्ट न होवाथी जुदा जुदा प्रकारना आकारे रहेलां छे अने जेओ आविलकामां प्रविष्ट होय तेओ तो गोळ, त्रिकोण के चतुष्कोण एवा आकारना भेदथी त्रण आकारवाळां ज होय छे. [' बंभलोए ' इत्यादि.] ब्रह्मलोकमां रहेनारां विमानो परत्वे अने देवो परत्वे ज वक्तत्यता ' जीवीभिगम ' सूत्रमां कही छे ते वक्तव्यता ते लोकांतिक देवोगां जाणवी-अनुसरवी, ते वक्तव्यता क्यां सुधी जाणवी ? तो कहें छे के, [' जाव ' इत्यादि.] काइक थोडी ते-वक्तव्यता-आ प्रमाणे छः-'' हे भगवन् ! लोकांतिक विमानोना केटला वर्णो कक्षा छे ? हे गीतम ! लोकांतिक विमानो त्रण वर्णो-वाळां कक्षा छे, लाल वर्णवाळां, हरिदा-हलदर-ना वर्णवाळां अने शुक्ल वर्णवाळां, ए प्रमाणे प्रभावडे नित्य आलोक-प्रकाश-वाळां छे, गंधवडे इष्ट गंधवाळां छे, ए प्रमाणे इष्ट स्पर्शवाळां, ए प्रमाणे सर्व रस्तमय ते तिमानो छे, ते विमानोमां देवो समचतुरससंस्थानवाळा, आई मधूक-लीला-महुडा-जेवा वर्णवाळा अने पद्मलेक्यां छे, हे भगवन् ! ते लोकांतिक विमानोमां सर्व प्राणो, भूनो, जीवा, अने सन्त्यो पूर्वे पृथिवीकायिकपणे, जलकायिकपणे, अधिकायिकपणे, यायुकायिकपणे अने वनसःतिकायिकपणं तथा देवपणे, देवीपणे पूर्वे उत्यन्न थयां छे ? '' ' हा ' इत्यादि तो मृळमां लखेलुं ज छे [' केवहेंथे ' ति] केटली अवाधावडे एटले केटला अंतरवडे लोकांत कक्षा छे.

होकांत केरही हेटो.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षारभारे भवेऽस्मिन् दायी यः संद्रुणानां परक्कृतिकरणाईतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शानयोः-ह्यात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चानुमुख्यः ॥

१. जुओ, जीवाजीवाभिगम स्त्र, बीजो वैमानिक उद्देशक १० ३९४ थी ४०६ (दे० ला०) तथा जुओ प्रशापना सूत्र, बीजुं स्थानपद, ब्रह्म-कोक-देवस्थान:धिकार-१० १०३ (आ० स०):-अनु०

२. ' केवइयं ' रूप आर्थ छे, कारण के, एने ' केवइयाए ' ने बदले मुकवामां आवेळ छे:--श्री अभय०

शतक ६.-उद्देशक ६.

वृथिवीओ केटली ?-सात.-अनुत्तर विमानो केटलां ?-पांच.-म रणांतिक समुद्धात.-रत्नप्रभामां उत्पन्न थवाने योग्य जीव, त्यां पहोंचीने ज आहार करे ?-शरीरने रने १-के जाक लां परीचीने करे अने वेटलाक लां पहों वी, त्यांथी पाछा फरी, फरी बार त्यां पहों बीने तेम करे.-ए रीते साते पृथिनी -असुर-कुमाराबासमां अने पृथिवीकांगावासमां उत्पन्न थवाने योग्य अवि विषे पण ए ज विचार.-मंदर पर्वत.-अंगुल,-बालाग्र.-लिक्षा,-यूका,-यवा-यावत् बोजनकोटि -ए रंते क्या पकेंद्रियो-वेदंद्रियो यादत् अनुत्तरदेवो.-हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे---

- ?. प्र०—कैति णं मंते ! पुढवीओ पचताओ ?
- १. उ०-गोयमा ! सत्त पुढवी पत्रता, तं नहाः-रयणप-भा, जाव-तमतमा; रयणप्यभाईणं आवासा भाणियव्वा, जाव- रत्नप्रभा यावत् तमतमाप्रभा, रत्नप्रभा वगेरे पृथ्वीथी शरु करी अहे सत्तमाए, एवं जे जित्तया अवासा ते भाणियव्वा.
 - २. ४०-- जाव-काते णं भंते ! अणुत्तरविमाणा पण्णत्ता ?
- २. उ०-गोयमा ! पंच अणुत्तरा पन्नता,तं जहाः-विजए, जाव/-सव्यहसिद्धे.

- १. प्रo-हे भगवन् ! पृथ्वीओ केटली कही छे ?
- ?. उ० हे गौतम ! सात पृथ्वीओ कही छे, ते जेमके, यावत् अधःसप्तमी पृथ्वी सुधीना जे पृथ्वीना जेटला आवासो होय यावत् तेटला कहेवा यावत्---
 - २. प्रo-हे भगवन् ! अनुत्तरविमानो केटलां कहां छे ?
- २. उ०-हे गौतम । पांच अनुत्तर विमानो कह्यां छे, ते जेभके, विजय यावत् सर्वार्थसिद्ध.
- १. व्याख्यातो विमानादिवक्तव्यताऽनुगतः पश्चमोदेशकः, अध षष्टस्तथाविध एव व्याख्यायते, तत्रः-'कइ णं ' इत्यादि स्त्रम्, इह पृथिच्यो नरकपृथिच्यः, ईषत्प्राग्भाराया अनिधकरिष्यमाणत्वात्. इह च पूर्वोक्तमपि यत् पृथिव्यादि उक्तम् , तत् तदपेक्षमारणान्तिक-समुत्र्वातवक्तव्यताऽभिधानार्थम्-इति न पुनक्कता.
- १. पंचम उद्देशकमां विमान वगेरेने लगती हकीकत कही छै हवे आ छद्वा उद्देशकमां पण ए ज जातनी हफीकत कहेवानी छै. आ उद्दे-ेशकनां ['कइ णं'] इत्यादि प्रथम सूत्र छे. अहीं (आ प्रकरणमां) 'पृथिवी ' शब्दमा अर्थ तरीके सात नैरयिक पृथिवीओ समजवानी छे. कारण के, आ स्थळे आठमी ईषत्पाग्भारा पृथिवीने लगती चर्चानो अधिकार नथी. आ पृथिवी संबंधी हकीवत समुद्धातीनी हकीवत साथे विदेश संबंध धराबे छे, अने आ पछीना प्रकरणमां समुद्धातीने लगती चर्चा करवानी छे माटे ज ए पृथिवीओ विषेनी चर्चाने—जे चर्चा आगळ आदी गइ छे तो पण-अहीं फरीवार चर्चवी पड़ी छे-तेमां पुनरुक्ति जेवुं कशुं नथी.

पृथि त

पुनरुक्ति नयी

१. मुक्टआयाः--कृति भगवन् । पृथिव्यः प्रकृताः ? गीतम ! सप्त पृथिव्यः प्रकृताः, तथ्याः-सनप्रभः, यावत्-तमस्तमाः, सनप्रभादीनाम् आवासाः भिणितव्याः, यावत्-अधः सप्तम्याः, एवं ये यावत्का आवासास्ते भिणितव्याः, यावत्-कति भगवन् अनुसरिविगानानि प्रइप्तानि ? गीतम ! पदाश्चलशाणि प्रहप्तानि, तद्याः-विजयम् , यावत्-सर्वायविद्रम्:-- अदुर्व

मारणांतिक समुद्घात अने जीवो.

- ३. प्र०-जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहए, स-मोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्यभाए पुढवीए तीसाए निरयावा-ससयसहस्सेसु अत्रयरंसि निरयानासांसि नेरइयत्ताए उनवज्ञित्तए, से णं भंते ! तत्थगए चेय आहारेज वा, परिणामेज वा, सरीरं वा बंधेज वा ?
- ३. उ०—गोयमा! अरथेगतिए तस्थगए चेव आहारेज्जवा, परिणामेजा वा, सरीरं वा वंधेज वा; अत्थेगितए तओ पिडिनिय-त्तति, ततो पडिनियत्तित्ता इहमागच्छइ, आगच्छित्ता दोचं पि मारणंतियसमुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ताः इमीसे रंयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु अण्णयरांसि निरयावासांसि नेरइयत्ताए उववाजित्ता ए, तओ पच्छा आहारेज वा, परिणामेज या, सरीरं वा वंधेजा, एवं जाव-अहे सत्तमा पुढवी.
- प्र०—जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुखाएणं समोहए जे भविए चउसद्वीए असुरकुमारावाससयसहस्सेसु अन्नयरंसि अस्रक्-माराघासंसि असुरकुमारचाए उपवज्जित्तए ?
 - ४. उ०-- जहा नेरइया तहा भाणियन्वा, जाव-थणियकुमारा.
- ५. प्र०-जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समीहए, समोहाणिता, जे भविए असंखेजेसु पुढविकाइंगावाससयसहस्सेसु, अन्नयरासि वा पुढाविकाइयावासांसि पुढाविकाइयत्ताए उववाज्जितए, से णं भंते ! मंदरस्स पव्ययस्स पुरिथमेणं केवइयं गच्छेजा, केवतियं पाउणिजा ?
 - ५. उ०—गोयमा ! लोयंतं गच्छेजा, लोयंतं पाउणिजा.
- ६. प्र०—से णं मंते ! तत्थगए चेव आहारेज वा, परि-णामेज वा, सरीरं वा वंधेजा ?
- ६. ड० गोयमा ! अत्थेगितए तत्थगए चेव आहारेज

- ३. प्र०-हे भगवन् ! जे जीव मारणांतिक समुद्धातथी समबहत थयो अने समबहत थइ आ रत्नप्रभा पृथ्वीना त्रीश लाख निरयावासमांना कोई पण एक निरयावासमां नैरयिकपणे उत्पन थवाने योग्य छे ते जीव हे भगवन् ! त्यां जइने ज आहार करे ? ते आहारने परिणगावे अने शरीरने बाधे ?
- र. उ० -- हे गौतम ! केटलाक जीव त्यां जइने ज आहार करे, परिणमाने अने शरीरने बाधे अने केटलाक जीन त्यांथी पाछा बळे छे, पाछा बळीने अहिं भावे छे अने अहिं आवी फरीबार मारणांतिक समुद्घात वडे समवहत थाय छे, समबहत थइ आ रत्नप्रभा पृथ्वीना त्रीश लाख निरयावासमांना कोइपण एक निरयावासमां नैरियकपणे उत्पन थाय छे अने त्यार पछी आहार करे छे, परिणमाने छे अने शरीरने बांधे छे, ए प्रमाने यावत् अध: - सप्तमी पृथ्वी सुधी जाणवुं.
- प्रं के हैं भगवन् ! मारणांतिक समुद्धातथी समबहत थएळो जे जीव असुरकुमारोना चोसठलाख आवासोमांना कोइएण एक असुरकुमारावासमा उत्पन्न थवाने थोग्य छे ते जीव हे भगवन् ! त्यां जइने ज आहार करें ? ते आहारने परिणमावे ? अने शरीरने
- ४. उ०---जेम नैरियको संबंधे कहां तेम असुरकुमारो माटे यावत् स्तनित्कुमारो सुधी कहेवुं,
- ५. प्र०-हे भगवन् । मारणांतिक समुद्धातवडे समबहत थइने जे जीव अ उंख्येय लाख पृथिवीकायना आवासमाना अन्य-तर पृथिवीकायना आवासमां पृथिवीकायिकपणे उत्पन्न थ्वाने योख छे ते जीव हे भगवन् ! मंदर पर्वतनी पूर्वे केटछं जाय ? अने केटछं प्राप्त करे ?
- ५. उ०—हे गौतम ! लोकांत सुधी जाय अने लोकांतने प्राप्त करे.
- ६. प्र० हे भगवन् ! ते त्यां जइने ज आहार करे ! पोर-णमाने १ अने शरीरने बांधे १
- ६. उ० हे गीतम निटलाक त्यां जड्ने ज ऑहार करे, षा, परिणामेज वा, सरीरं वा बंधेजा; अरथेगतिए तओ पाँड- परिणमाने अने शरीरने व घे-तैयार करे. अने केंद्रहाक त्यांथी

१. मूलच्छायाः - जीवो भगवन् ! मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहतः, समवहत्य यो भन्यः -अस्यां रत्नप्रभायां पृथिन्यां त्रिंशति निरयावासशतसद्द-क्षेषु अन्यतरिमन् निरयावासे नैरियकतया उपपत्तुम, स भगवन् ! तत्रगत एव आहरेद् वा ? परिणमयेद् वा, शरीरं वा बर्धनीयोद् वा ? गीतम ! अस्थेककः तत्रगत एव आहरेद् वा, परिण्मयेद् वा, शरीरं वा बध्मीयाद् वा; अस्त्येककः ततः प्रतिनिवर्तते, ततः प्रतिनिवृत्यं इह आगच्छति, आगित्यः " द्वितीयमपि मारणान्तिकसमुद्घातेन समबहन्ति, समबहत्व अस्यां रतनप्रभागां पृथ्यां त्रिंशति निरयावासशतसद्क्षेषु अन्यतर्रीसमन् निर्यावासे नैरियकतया उपया, ततः पश्चात् आहरेद् वा, परिणमयेद् वा, करीरं वा, बश्नीयाद्-एवं यावत्-अधः, सप्तमी पृथ्वी. जीवो भगवन् ! मारणान्तिः करामुद्धातेन समन्द्रतः—यो भव्यः चतुष्पष्टयाम् —असुरकुमारावासशतसदृत्नेषु अन्यतरस्मिन् असुरकुमारावासे असुरकुमान्त्रया उपयुक्तुम् है यथा नैर्शिकास्तथा भणितव्याः, यावत् स्तनितकुमाराः जीवो भगवन् 'मारणान्तिकसमुद्धातेन समवहतः, समवहत्य यो भव्यः-असंख्येषु पृथिवीकायिका-वासशतसहक्षेत्र अन्यतरस्मिन् वा प्रथिवीकायिकावासे प्रथिवीकायिकन्या उपपत्तम् , स भूगवन् ! मन्दरस्य पर्वतस्य प्रारस्येन क्युद्र ग्रूच्छेत् ? कियत शास्त्रयात ? गतम ! लोकोन्तं गच्छेत् , लोकान्तं प्राप्त्रयात् स अगवन् ! तत्रगतं एव आहरेद् वा, परिणमयेद् वा, शरीरं वा बनीयात् ? गतम । अस्त्येककः तन्नगत एव आहरेद् वा, परिणमयेद वा, शरीरं वा वध्नीयातः, अस्त्येककः ततः प्रतिः—अञ्चल

नियत्तव, पिंडिनियत्तित्ता इहं हव्यं आगच्छई, दोचं पि मारणंति-यसमुग्घाएगं समोहण्गइ, समोहणइत्ता मंदरस्स पव्ययस्स पुर-रिथमेणं अंगुलस्स असंसेज्जइभागमेतं वा, संसेज्जइभागमेतं वा, बालग्गं वा, बालग्गपुहुत्तं वा; एवं लिक्खं, जूयं जव-अंगुल जाव-जोयणकोदिं वा, जोयूगकोडाकोडिं वा, संसेजेसु था, असंसे केसु वा जोयणसहस्सेसु, लोगंते वा एगपएतियं सेहिं मोत्तूण असंसे-जोसु पुढिबिकाइयावाससयतहस्सेसु अवयरंसि पुढिबिकाइयावासंसि पुढिबिकाइयत्ताए उवबजेत्ता, तओ पच्छा आहारेज्ज वा, परिणा-मेज्ज वा, सरीरं वा वंधेज्जा; जहा पुरिश्वमेणं मंदरस्य पञ्चस्स आलावओ भणिओ, एवं दाहिणेणं, पच्चिमेणं, उत्तरेणं, उहे, अहे. जहा पुढिबिकाइया तहा एगिदियाणं सब्वेसिं एक्केक्स्स छ आलावगा भाणियन्या.

७. प्र० — जीवे णं भेते ! मारणंतियसमुग्वाएणं समोहणह, समोहणिता ने भविए असंरेवज्जेसु बेइंदियावाससयसहस्सेसु अन-यरांसे बेइंदियावासंसि बेइंदियत्ताए उत्रवाज्जित्तए, से णं भेते ! तत्थ-गए चेव ?

७. उ० - जहा नेरइया, एवं जाव-अणुत्तरीववाइया.

८. प्र० — जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्धाएणं समोहए, हमो-हाणित्ता, जे भविए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहारूएसु महाविमाणेसु अन्यरंसि अणुत्तरविमाणंसि अणुत्तरोववाइयदेवत्ताए उववज्जइ, से णं भंते ! तत्थगए चेव ?

८. उ०—तं चेव जाव-आहारेज्ज वा, पारेणामेज वा, सरीरं वा बंधेज्ज वा.

—सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति.

पाछा बळे छे अने पाछा बळी अहि शीघ आवे छ अने फरीबार मारणांतिक समुद्वातथी समबहत थाप छे, समबहत थइ मंदर-पर्वतनी पूर्व अंगुरनो असंख्य भूगमात्र, संख्येय मागमात्र, बालाप्र, बालाप्रपुचकत्व (बेथी नत्र वालाप्र) ए प्रमाणे लिक्षा, यूका, यव, अगुल यावत् क्रोडयोजन, कोडाकोडी योजन, संख्येय हजार योजन अने असंख्येय हजार योजने अथवा लोकांतमां एक प्रदेशिकश्रेणिने मूकीने असंख्येय लाख पृथिवीकायिकना आवासमाना कोइ पृथिवीकायना आवासमां पृथिवीकायपणे उत्तत्र थाय अने पछीं आहार केरें, परिणमात्र अने शरीरने बांधे. जेम मंदर पर्यतनी पूर्व दिशा परत्रे कह्यं अने अधोदिशा माटे पण जाणां. जेम पृथिवीकायिको माटे कह्यं तम सर्व एकेंद्रियो माटे एक एकना छ आलापक कहेवा.

७. प्र० हे भगवन् ! मारणांतिक समुद्धातथी समबहत थइ जे जीव असंख्येय छाल् वैइंद्रियोना आवासमांना कोइ एक वे-इंद्रियावासमां बेइंद्रियपणे उत्पन्न थवाने योग्य छे ते जीव, हे भगवन् ! त्यां जइने ज आहार करे ! तेने परिणमार्वे ! अने शरीरने तैयार करे !

७. उ०—(हे गौतम!) जेम नैरियको कह्या तेम बेइंद्रि-यथी मांडी अनुत्तरोपपातिक विमान सुधीना सर्व जीवो कहेवा.

८. प्र० — हे भगवन् ! मारणांतिक समुद्वातधी समवहत धइ जे जीव मोटामां मोटा महाविमानरूप पांच अगुत्तरविमानो-मांना कोइ एक अनुत्तरविमानमां अनुत्तरोपपातिक देवपणे उत्पन्न धनाने योग्य छे, ते जीव हे भगवन् ! त्यां जड्ने ज आहार करें ! परिशमावे अने शरीरने तैयार करें !

८. उ०—(हे गौतम!) ते ज कहेबुं यावत् आहार करे, अरिणपति अने शरीरने तैयार करे.

-- हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे. हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे.

भगवंत-अज्ञासुहम्मसामिपणीए सिरीभगवईसुते छहुसये छहु। उदेसो सम्मत्तो.

२. 'तरथगए चेव 'ति नरकाऽऽवासप्राप्त एव, ' आहारेज वा ' पुद्रलान् आदद्यात् , 'परिणामेज व ' ति तेषामेव खल-रसिवभागं कुर्यात् , 'सरीरं वा बंधेज व 'ति तैरेव शरीरं निष्पादयेत्. 'अस्थेगइए 'ति यस्तस्मिन्नेव समुद्धाते म्रियते, 'ततो पाडिनियत्त 'त्ति ततो नारकावासःत् , समुद्वःताद्वः; 'इहं आगच्छइ 'ति स्वशरीरे. 'केवइयं गच्छेज 'त्ति किथद् दूरं

१. मूलच्छायाः— निव्वतं, प्रतिनिवृत्त्य इह श्रीष्ठम् आगच्छति, द्वितीयमपे मारणान्तिकसमुद्ध तेन रामबहन्ति, सन्वद्ध मन्दरस्य पर्वत य परस्यम् अङ्गुल्या असंर येयभागमात्रं वा, संख्येभागमात्रं वा, वाल्यं वा, वाल्यं प्रकृष्ट्यं वा, एवं लिक्षाम्, यूका यत्र-अङ्गुलानि-यावत् योजनकोटि वा, योजनकोटाकोटि वा संख्येयेषु वा, असंस्थ्येषु वा योजनसहरूषु, लोकान्ते वा एकप्रदेशिकां वेणी मुन्तवा असंख्येयेषु पृथिवीकायिकावासकातसहरूषु अभ्यतरस्मिन् पृथिवीकायिकावासे पृथिवीकायिकतया उपपद्य, ततः पश्चाद् आहरेद् वा, परिणमयेद् वा, शारीरं वा वश्नीयाद्—पथा पैरस्थेन मन्दरस्य पर्वतस्य आलापको भणितः, एवं दक्षिणेन, पश्चिमेन, उत्तरेण, अर्थ्यम्, अधः यथा पृथिवीकायिकास्यण एकेन्द्रियाणां सर्वेषाम् एकेकस्य षद् आलापका भणितव्याः जीवो भगात् । मारणान्तिकसमुद्धातेन समवहत्य यो भव्यः—अस्ट्येष्यु द्विन्द्रियाणास्यतसहरूषु अन्यतरिमन् द्वीन्द्रियाचासे द्वीन्द्रियतया उपपत्तम्, स भगवन् । तत्रगत एव १ यथा वैरियकाः, एवं यावत्—अनुलग्णपातिकाः जीवो भगवन् । मारणान्तिकसमुद्धातेन समवहतः, समवहत्य यो भव्यः पश्चमु अनुत्तरेषु महात्महालयेषु महातिमानेषु अन्यतरिकान् अनुत्तरिकाने अनुत्तरिकाने अनुत्तरिकाने अनुत्तरिका उपपद्यते, रा भगवन् । द्विः—अनुक

गच्छेद् गमनम् आश्रिय, ' केवायं पाउणेज ' ति कियद् दृरं प्राप्तुयाद् अवस्थानमाश्रियः । अंगुलस्स असंखेजइभागमें तं वा ं इसादि. इह दितीया सप्तम्यथे द्रष्टव्या. 'अंगुलं ' इह यावत्करणादिदं दश्यम् – ' विहारिय वा, रयणि वा, कुच्छि वा, धणुं वा, कोसं वा, जोयणं वा, जोयणसर्यं वा, जोयणसहस्सं वा, जोयणसयसहस्सं वा इति. ' लोगंते व ' ति अत्र 'गत्वा' इति शेषः ततश्चाऽयमर्थः - उत्पादस्थानाऽनुसारेण अङ्गुलाऽसंख्येयभागमात्रादिके क्षेत्रे समुद्धाततो गत्वा, कथम् १ इसाहः - ' एगपएसियं सोहि मो तृण ' ति यद्यपि असंख्येयप्रदेशाऽवगाहस्वभावो जीवस्तथापि नैकप्रदेशश्रेणीवर्ती असंख्यप्रदेशाऽवगाहनेन मञ्छति, तथास्वभाव-त्वात्-इत्यतस्तां मुक्त्वा इत्युक्तमिति.

भगवस्युधर्मसामिप्रणीते भीभगवतीसूत्रे वष्ठवाते वष्ठ उद्दशके श्रीअभयदेवसूरिविरचितं विदरणं समासम्.

२. ['तत्थगए चेव'ति] त्यां गया पछी अर्थात् नरकावासने पाम्या पछी ज, ['आहारेज वा '] पहलीने महण करे, ['परिणामेंज व'ति] माहार अने परिणाम. ते महण करेळां पुद्रलोने ज पचावीने तेनो खळरूप अने रसरूप विभाग करे, ['सरीरं वा बंधेज व'ति '] ते पुद्रलोवेड ज शरीरंने तैयार करे-निष्पादे. ['अत्थेगईए 'ति] कोइ एक अर्थात् ते समुद्धातमां ज जे मरण पामे ते, ['ततो पिंडनियत्त'ति] ते नरकावासथी अथवा समुद्धातथी पाछा बळे छे, ['इह्मागच्छइ 'ति] आहि पोताना शरीरमां आवे छे. ['केवइयं गच्छेज 'ति] गमनने आश्रीने केटले दूर जाय, ['केवइयं पाउणेज्ज ' ति] अवस्थानने आश्रीने केटलुं दूर प्राप्त करे, ['अंगुलस्स असंखेज्जदभागमे तं वा 'इ शादि] अंगुलने, अहिं 'यावत् ' शब्द मुकेलो होवाथी आ प्रमाण जाणतुं :- "वेंतने, रिनने, कुक्षिने, धनुषने, कोशने, योजनने, सो योजनने, हजार योजनने, अने लाख योजनने " िलो-गंते व 'ति] लोकान्तमां जहने, अहीं 'जहने ' ए अध्याहार छे, तेथी आ जातनो अर्थ समजवानो छे:- उत्पाद स्थानने अनुसारे अंगुलना असं-ख्येयभागमात्रादिक क्षेत्रमां समुद्धात द्वारा जहने, केवी रीते ? तो कहे छे के, ['एगपएसिअं सेदिं मोतूण' ति] जो के, जीव असंस्थेय प्रदेशमां अवगाहवाना स्वभाववाळो छे तो पण ज्यारे ते एकप्रदेशनी श्रेणीमां वर्ततो होय छे त्यारे तो असंस्वप्रदेशावगाहन द्वारा तेनी गति नधी होती. कारण के, जीवनो एवो ज स्वभाव छे माटे ज अहीं 'एकप्रदेशनी श्रेणीने एटले विदिशाने गूकीने,' ए हकीकत जणावेली छे.

चेडारूपः समुद्रेऽखिङजङचरिते क्षारभारे भवेऽस्मिन् द्यायी यः सद्गुणानां परकृतिकरणाहैसजीनी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनस्वरो दाहको दान्ति-शान्योः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्कावसुखं मारहा चामुस्यः ॥

Jain Education International

१. प्र० च्छायाः — वितस्ति वा, रिनं वा, कुक्षि वा, धनुर्वा, कंशं वा, थोजनं वा, योजनशतं वा, योजनसङ्ख्रं वा, योजनशतः सहन्नं नाः-अनु०

अहीं सातमी विभक्तिना अथमां द्वितीया विभक्ति क्यराएली छे- तेम जाणवं:-श्रीअभय०

शतक ६.-उद्देशकः ७.

शालि-त्रोहि-गोधूम-यव-यवयव-ए धान्योनी योनिनो बीजोत्पत्तिकाळ केटलो ?-अन्तर्मृहृत -वधारेमां वधारे त्रण वरस.-व.लाय-मस्र-तल-मग-अडद-वाल-कळथी-चोळा-तुवेर-वणा-ए धान्योनी योनिनो बीजीत्यित्त काळ केटलो ?-३४ रेमां वधारे पांच बरस.-ए प्रमाणे अळसी-कुसुमक-कोद्रवा-कांग-बटी -राळ-कोर्सग-शण-सरसव अने मूळवीजनी योनि विषे प्रश्न-वेषारेमां वधारे सात वरस.-मुहूर्तना उच्छवास केटला ?-३७७.३-आ लिया-७ च्छवास–निःश्वास–प्राण–स्तोक–रुव–सुहूर्ते–अहोरात्र-पक्ष-मास–ऋतु–अयन–संदरेसर–युग–वर्षशतः – वर्षसहस्र–पूर्वशतसहस्र–पूर्वश्य-पूर्व-ब्रुटितांग– बुटित- अटटांग-अटट-अववांग-अवव-हृहूक.ग-हृहूक-उत्पर्णान-उत्पर-पद्मांग+पद्म-निलनांग-निश्नि-अर्थेनुपूरांग-अथनुपूर-अयुतांग-अयुत-प्रयुतांग -प्रयुत-नयुत्ग-नयुत-चूलिकांग-चूलिका-शीर्षप्रदेलिकांग-शीर्षप्रदेलिका-ए वधां काळनां प्रमाणोतुं स्वरूप.-पटओ ज गणितनो विषय.-औपमिककाळ-पस्योपम.—सागरोपम.=परमाणनुं स्वरूप.-उच्छउक्ष्णश्रक्षिणका-स्वरूणश्रक्षिणका-ऊर्धनेशु-त्रसरेणु-त्रसरेणु-त्राज्यस-लिक्षा-यूका-यवमध्य-अंगुळ-पाद---वितास्त-वेत-रत्नि-कुक्षि-दंड-धनुष्-युग-नातिका-अक्ष-मुसल-गव्यूत-योजन.-ए वधानु स्वरूप.-पत्यो।पमनु स्वरूप.-सागरोपमनु स्वरूप.-उत्सार्पेणी-अवस्तिपेणीनुं प्रमाण--सुवमसुवमाना भरतनुं स्वरूप- जीवाभिगम--हे भगवन्! ते ए प्रमाणे---

१. ४० — अहै भेते ! सालणिं, चीहीणं, गोघुमाणं, जवाणं, त्तानं, मालाउत्तानं, उाहिताष्टां, लित्तानं, पिहियानं, पुदियानं, छंछियाणं केवतियं कालं जोणी संचिद्वह 👯

१. उ०-गोयमा ! जहनेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तिवि संवच्छराइं, तेण परं जोणी पमिलायइ, नेण परं जोणी पविद्रंसइ, तेण परं बीये अवीये भवति, तेण परं जीणीवीच्छेदे पत्रत्ते समणाउसो !

१. प्र०-अह भंते ! कलाय-मसूर-तिल-मुग्ग-मास-निष्पाव-

१. प्र०—हवे हे भगवन्! शाली, ब्रीहि, गोधूम, यत्र अने जवजवाणं-एएसि णं घनाणं कोट्टाउत्ताणं, पलाउत्ताणं, मंचाउ- यवयन, ए बधां धान्यो कोठलामां होय, वांसडाना पाला-डाला-मा होय, मांचामां होय, मालमां होय, छाणथी उंछिप्त होय, लिप्त होय, ं ढांकेलां होय, माटी वगेरे वडे मुद्रित-महोरवाळां-चादेलां होय अने लांछित करेलां होय, तो तेओनी योनि-अंकुरनी उत्पत्तिमां हेतुभूत शक्ति—केटला काळ सुधी कायम रहे ?

> १. उ० — हे गौतम ! तेओनी योनि, ओछामां ओछुं अन्तर्मुहर्त सुधी कायम रहे अने वधारेमां वधारे त्रण वस्स सुधी कायम रहे. त्यार बाद ते योनि म्लान थाय छे, प्रविध्वंस पामे छे, पछी ते बीज अबीज थाय छे अने खार बाद हे श्रमण। युप्तन् ! ते योतिनो ब्युच्छेद थयो कहेवाय छे.

२. प्र० — हवे हे भगवन् ! कलाय, मसूर, तल, मग, अडद, **फुलस्थ-आलिसंदग-सत्तीण-पालिमंथगमाइणं-एएसि णं घनाणं** ? बाल, कळथी, एक जातना चोळा, तुत्रेर अने गोळ चणा-एओ बधां धान्यो पूर्वोक्त विशेषणवाळां होय तो ते धान्योनी योनि केटला काळ सुधी कायम रहे ?

१ मूंलच्छायाः-अध भगवम् ! शालीनाम् , बीहीणाम् , गोधूमानाम् , यवानाम् , यवयशानाम्-एतेषां धान्यानां कोष्ठागुप्तानाम् , पत्यागुप्तानाम् , मधाऽऽगुप्तानाम् मालागुप्तानाम्, अवलिप्तानाम्, लिप्तानाम्, पिहितानाम्, मुदितानाम्, लाञ्छतानां कियन्तं कालं योनिः संतिष्ठते ? गातम । जयन्येन अन्तर्भद्वर्तम्, उत्कृष्टेन त्रीणि संवरसराणि, ततः परं योनिः प्रम्लायति, ततः परं योनिः प्रविष्यंसते, ततः परं यीतम् अबीजं भवति, ततः परं योनिःयुज्छेदः प्रमुत्तः भ्रमणाऽऽयुष्मन् । अथ भगवन् । कराय-मासूर-तिल-मुद्र-माय-निष्पाव-कुकस्थ-आलिसंद्ग-यतीण-परिमन्यक-आधीनाम् एतेवां घान्यानाम् ? : अनु व

२. उ०--वैहा सालिणं तहा एयाणं पि,नवरं-पंच संवच्छ-राइं,सेसं तं चेव.

२. प्र०—अह मंते ! अयसि-कुसुंभग-कोइव-कंग्-वरग-रालग-कोदूसग-सण-सरिसव-मूलगवीयमाईगं-एएसि णं घनागं?

२. उ० -- एयाण वि तहेव, नवरं-सत्त संवच्छराई, सेसं तं चेव.

२. उ०—(हे गौतम!) जेम शालीओ माटे कहां तेम ए धान्योने माटे पण जाणवुं, विशेष ए के, पांच वरस जाणवां, बाकीनं ते ज प्रमाणे जाणवं.

३. प्र० - हवे हे भगवन् ! अल्सी, कुसुंभ, कोदवा, कांग, वरट-बंटी, एक प्रकारनी कांग, एक प्रकारना कोइवा, शण, सर-सव अने एक जातनां शाकनां बीआं-ए पूर्वीक्त विशेषणवाळां धान्योनी योनि केटला काळ सुधी साबीत रहे ?

२. उ० — (हे गौतम!) एओने माटे पण तेम ज जाणवुं, विशेष ए के, सात बरस जाणवां, वाकीनुं ते ज जाणवुं.

१. षष्ठोद्देशके जीववक्तन्यता उक्ता, सप्तमे तु जीवविशेषयोनिवक्तन्यतादिरर्थ उच्यते, तत्र चेदं सूत्रम्:-'अह मंते !' इत्यादि. 'सालीणं 'ति कलमादीनाम्, 'वीहीणं 'ति सामान्यतः, 'जवजवाणं 'ति यवविशेषाणाम् 'एतेसि णं 'इति उक्तवेन प्रसक्षाणाम्, 'कोट्टाउत्ताणं' ति कोष्टे कुरु ले, आगुतानि तत्त्रक्षेपणेन संरक्षितानि-केष्टागुतानि, तेष म्; 'पलाउत्ताणं' ति इह परेपा वंशादि-मया धान्याऽऽधारविशेषः, 'मंचाउत्ताणं मालाखताणं' इत्यन्न 'मञ्च-मालये।भेदः ' अनुङ्को होइ मंचो मालो य घरोयि होति. '' 'उक्तिचाणं' ति द्वारदेशे पिधानेन सह गोमयादिनाऽविख्तानाम्, 'छित्ताणं' ति सर्वतो गोमयादिना एव लिप्तानाम्, 'पिहियाणं' ति स्थगितानां तथाविधाऽऽच्छादनेन, 'मुहियाणं' ति मृत्तिकादिमुद्रावताम् , 'लंछियाणं' ति रेखादिक्वतलाञ्छनानाम्, 'जोणि ' ति अङ्करोत्पत्तिहेतुः. 'तेण परं' ति ततः परम्, 'पमिलायइ' ति प्रम्लायति-वर्णादिना हीपते, 'पविदंसइ' ति क्षीयते, एवं च बीजमबीजं भवति, उप्तमिप नाङ्कुरमुत्पादयति, किमुकं भवति ? 'तेण परं जोणीयोच्छेए पवचे 'ति. 'कलाय' ति कलायाः, ''वृत्त चनकाः " इस्पन्ये. 'मसूर' ति भिल्ङ्गाः, " चनिकका " इसन्ये. 'निपाव' ति वल्लाः, 'कुलत्य' ति चवलिकाऽऽकाराः चिपि-टिका भवन्ति, 'आलिसंटग' ति चवलकप्रकाराः, "चवलका एव" अन्ये. 'सईण' ति तुबरी, 'पालिसंथग' ति इत्तचनकाः, ''कालचनका'' इसन्ये. 'अयिसे' ति भङ्गी, 'कुसुंभ' ति लट्टा, 'यरग' ति वरहः, 'रालग' ति कङ्गृविशेषः, 'कोदूराग' ति कोदविशेषः, 'सण ' ति त्वक्षधाननाळो धान्यविशेषः, 'सरिसव ' ति सिद्धार्थकाः, 'मृलाबीय ' ति म्लकाबीजानि, शाकविशेष-बीजानि इत्यर्थ:

नाग.

१. छष्टा उद्देशकमां जीवनी वक्तव्यता कही छे, सातमा उद्देशकमां तो एक प्रकारना जीवनी योनिने लगती वक्तव्यता कहेवानी छे, तेमां आ सूत्र शालि बेगेरे घन्योनां है:-[' अह मते! ' इत्यादि.] [' सालीणं' ति] जेनी 'कलमी' वेगेरे अनेक जातो है एवा चोलानी, ['वीहीणं' ति] सामान्य प्रकारना बीहि-डांगर-नी, ['जवजवाणं'] एक प्रकारना यवोनी, ['एतेसि णं'ति] अर्थात् प्रत्यक्षरूप ए धान्योनी, ['कोट्टाउत्ताणं'ति] कोठलामां भरीने संघरेला ते घान्योनी, ['पछाउत्ताण ' ति] अहिं पट्य एटले बांसडा विगेरनुं एक प्रकारनुं घान्य राखवानुं पात्र-डालुं-समज्ञवुं, [' मंचा-उत्ताणं मालाउत्ताणं '] अहिं मंच अने मालना अर्थमां आ प्रमाणे मद है:- " कुड्य-भीत-विनानो होय ते भंच कहेवाय अने घर उपर होय ते माल कहेवाय. '' [' उल्लिसाणं ' ति] वारणाना भागमां ढांकणनी साथे छाण वरोरेथी अवलिप्त, [' लिसाणं ' ति] सर्व प्रकारे छाण वरोरेथी ज लिस-चांदेला, ['पिहियाणं 'ति] तेवा प्रकारना ढांकणाथी ढांकेला, ['मुद्दिआणं 'ति] माटी बगरेनी मुदा-महार-वाळा, ['लंलियाणं ' ति] रेखादि वडे करेळ ळांछनवाळा. ['जोणि 'ति] अंकुरनी उत्पत्तिमां हेतु ते योनि ['तेण परं 'ति] त्यार बाद, ['पमिळायइ 'ति] वर्णादिवडे हीन थाय छे, ['पविदंसइ ' ति] शीण थाय छे अने ए प्रमाणे बीज अबीज धाय छे एटछे वावेलुं वीज पण अंकुरने उत्पन्न करतुं नथी. शुं तात्वर्य कहां ? तो कहे के के, ['तेण परं जोणीबोच्छेए पन्नत्ते 'त्ति] त्यार बाद योनिनो विच्छेद कह्यो छे. ['कलाय ' ति] कलाय, वीजाओं कहें छे थे, " कलाय एटले गोळ चणा. " [' मसूर ' ति] गसूर-भिलंग, बीजाओं कहें छे के " मसूर एटले चनकिका " [' मि-पाव ' ति] निष्यःव एटले वाल, [' कुलस्य ' ति] चोळाना आकारवाळुं चपटुं धान्य-कळथी, [आलिसंदग ' ति] एक जातना चोळा, बीजाओं तो कहें छे के, '' आलिसंदग एटले चीळा ज '' [' सईण ' ति] तुवेर, ['पिलमधग ' ति] गीळ चणा, बीजाओं तो कहें छे के ''पिंहमंथग एटले काळा चणा ''['अयसि 'ति] अतसी-अलसी-मंगी, ['कुसुंम 'ति] लद्दा (१), ['वरग 'ति] बरद्द-वंटी, ' ['रालग'ति] एक जातनी कांग, ['कोदूसग'ति] एक जातना कोदवा, ['सण'ति] जेना नाळमां छालनी प्रधानता छे एवो एक प्रकारनो धान्य विशेष-शण-, ['सरिसव 'त्ति] सिद्धार्थक-सर्षप-सरसव, ['मूलाबीय 'त्ति] मूलकवीज एटले एक जातना

कलाय बगेरे धान्यो तां नाम अन मतांतर.

शाकनां बीआं.

^{9.} मूलच्छायाः--यथा शालीनां तथा एतेषामपि, नवरम्:-पश्च संवत्सराणि, शेषं तश्चेत्र, अथ भगवन् ! अत्रि-कुसुन्भक-कोद्रव-द हु न्यर्-राळक-कोद्रुषक-सण-सर्पप-मूलकबीज-आदीनाम् एतेषां धान्यानाम् ? एतेषामपि तथेव, नवरम्:—सप्त संबरसराणा, होर्प तभीना —० तु

१. प्रवर्णयाः-"अकुक्यो भवति मद्यः मालक्ष गृहोपरि भवति":-अनुव

गणनीय काळ.

- ४. प्र० ऐंगमेगस्स णं भंते ! मुहुत्तस्स केवतिया जसाः सदा वियाहिय' ?
- ४. उ०--गोयमा 1 असंखेजाणं समयाणं समुदयसिगिति-समागमेणं-सा एगा 'आवित्य' ति पवु वह, संखेजा आवित्या ऊसासो, संखेजा आवित्या निस्सासो-

'हहस्स अणवगल्लस्य निरुविकद्वस्स जंतुणो, एगं जसास—नीसासे एस पाणु ति वृच्चइः 'सत्त पाणूणि से थोवे, सत्त थोश्य से लवे, लवाणं सत्तहत्तरिए एस मृहुत्ते वियाहिए' 'ति सहस्सा सत्त सयाई, तेवत्तरिं च जसासा, एस मृहुत्ते। दिहो सन्तेहिं अणंतनाणीहें.

एएणं मुहुत्तपमाणेणं तीसमुहुत्तो अहोरत्तो, पत्ररस अहोरता पक्सो, दो पक्सा मासे, दो मासा उडू, तिनि य उडू अयणे, दो अयणे संवच्छरे, पंचसंवच्छरिए जुगे, वीसं जुगाइं वाससयं, दस वाससयाइं वाससहस्सं, सयं वाससहस्साणं वाससयसहस्सं, चडरासीइं वाससयसहस्साणि से एगे पुन्वंगे, चडरासीइं पुट्वंगा सयसहस्साइं से एगे पुन्वे; एवं तुडिअंगे, तुडिए; अडडंगे, अडडे; अववंगे, अववे; हूहूआंगे, हहूए; उप्पलंगे, उप्पले; पडमंगे पडमे; निल्णंगे, निल्णे; अत्थनिउरंगे, अस्थनिउरे; अतुअंगे, अतुए; पडअंगे, पडए य; नवुअंगे, नवुए य; चूलिअंगे, चूलिआ य; सीसपहेलिअंगे, सीसपहेलिया-एताव ताव गणिए, एताव ताव गणियस्स विसए; तेण परं डविंगए.

- ४. प्र०—हे भगवन् ! एक एक मुहूर्तना केटला उच्छ्वासादा कह्या छे !
- ४. ड०-हे गौतम! असंख्येय समयना समुदायनी समितिना समागनथी जेटलो काळ थाय ते एक आवलिका कहेवाय छे अने संरुपेय आवलिकानो एक उच्छ्वास, संरूपेय आवलिकानो एक नि:श्वास, 'तुष्ट, अनवकल्य-घडपण विनाना अने व्याधिरहित एक जंतुनो एक उच्ह्वास अने निःश्वास ते एक प्राण कहेवाय छे. ' 'सात प्राण ते स्तोक कहेवाय छे, सात स्तोक ते छव कहेवाय छे, सत्योतेर (७७) छत्र, ते एक मुहूर्त कहेत्राय छे,' ३७७३ ' उच्छवास, ए एक मुहूर्त, एम अनंतज्ञानिओए दीठुं छे. ' ए मुहूर्त प्रमाणे त्रीश मुहूर्तनो एक अहोरात्र थाय छे, पंदर अहोरात्रनो एक पक्ष थाय छे. वे पक्षनो एक मास थाय छे, वे मासनो एक ऋतु थाय छे, त्रण ऋतुनुं एक अयन थाय छे, वे अयननुं एक संवत्सर थाय छे, पांच संवत्सरनुं एक युग थाय छे, वीश युगनां १०० वरस थाय छे दशसी वरसनां एक हजार वर्ष थाय छे, सो हजार वर्षनां एकलाख वरस थाय छ चोराशी लाख वर्ष, ते एक पूर्वांग थाय छे, चोरासी लाख पूर्वांग, ते एक पूर्व थाय छ –ए प्रमाणे त्रुटितांग, त्रुटित, अङडांग, अङड, अववांग अवव, हुहुआंग, हुहूअ, उत्पर्वाग, उत्पर्व,पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनिउरांग, अर्थनिउर, अयुतांग, अयुत, प्रयुतांग प्रयुत, नयुतांग, नयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग अने शीर्षप्रहेलिका; अहिं सुधी गणित छे-अहिं सुधी गणितनो विषय छे अने त्यार बाद औपमिक एटले अमुक संख्यावडे नहि पण मात्र उपमावडे जे जणात्री-जाणी-शकाय एवो काळ छे.
- २. अनन्तरं स्थितिरुक्ता, अतः स्थितरेव विशेषाणां मुहूर्तादीनां स्वरूपाऽभिधानार्थम् आहः—' जसासद्वा वियाहिय' ति उच्छ्वासाद्वा उच्छ्वासाद्रमितकाळविशेषाः, व्याल्याता उक्ता भगवद्भिरिति. अत्रोत्तरम्:—' असंखेज ' इत्यादि. असंख्यातानां समयानां सम्बन्धिनो ये समुदाया वृन्दानि, तेषां याः समितयो मीलितानि, तासां यः समागमः संयोगः समुद्रयसमितिसमागमः; तेन यत् काळमानम्, 'भवति' इति गम्यते, सा एका आविलका इति प्रोच्यते, 'संखेजा आविलय' ति किळ षट् अ शद्धिकशतद्वयेनाऽऽविलकानां क्षुत्वकभवप्रहणं भवति, तानि च सप्तद्वशसातिरेकाणि उच्छ्वास—निःश्वासकाळे, एवं च संख्याता आविलका उच्छ्वासकाळो भवति. ' हइस्स ' इत्यादि. हष्टस्य तुष्टस्य, अनवकत्यस्य जरसाऽनिभमृतस्य, निरुपिक्छष्टस्य व्याधिना प्राक्, सांप्रतं चाऽनिभमृतस्य जन्तोर्भनुष्यादेरेकः—उच्छ्वासेन सह निःश्वासः उच्छ्वासिनःश्वासः 'यः' इति गम्यते, एषः प्राण इत्युच्यते. ' सत्त ' इत्यादि—गाथाः ' सत्त पाणूइं ' ति प्राकृतत्वात् सप्त प्राणा उच्छ्वास—निःश्वासः, 'ये ' इति गम्यते, 'स स्तोक इत्युच्यते ' इति वर्तते, एवं सप्त स्ताका ये स ठवः, छवानां सप्तसप्तत्वा एषोऽधिकतो मुहूर्ती व्याख्यात इति. ' तिषि सहस्ता ' गहा अस्या भावाथीऽयम्—सप्तिमिरुम्
- १. मूलच्छायाः एककस्य भगवन् ! मुहूर्तस्य कियन्तः उच्छ्याताद्वा व्याख्याताः ! गौतम ! असंस्येतानां समयानां समुद्रयसमितिसमागमेन सा एकाऽऽविका इति प्रोच्यते, संख्येया आविका उच्छवासः, संख्येया आविका निःश्वासः 'हण्याऽनवकल्यस्य निहा किष्ठा करतोः, एक उच्छवास— निःश्वास एव प्राण इत्युच्यते . 'सप्त प्राणाः स स्तोकः, सप्त स्तोकाः स लवः, लवानां सप्तसप्तिः—एव मुहूर्ते। व्याख्यातः 'त्रीणि सद्धाणि, सत् शतानि त्रिसप्तिश्वोच्छ्वासा एव मुहूर्ते। इष्टः सर्ववैः अनन्तद्वानिनिः ' एतेन सहूर्तप्रमाणेन त्रिश्वद्वसुहूर्ते। इष्टारात्रः, पश्चद्वरात्राः पक्षः, है। पक्षा मासः, देव मासा ऋतुः, त्रयश्च ऋतवोऽयनम्, हे अयने संवत्सरम् , पश्चसंवत्सरिको युगः, विश्वतिर्युगिनि वर्षशतम् , दश वर्षशतानि वर्षसद्भम्, शां वर्षशद्वाणां वर्षशतसहस्त्रम्, चतुः शांतिवर्षशतसहस्त्रम्, चतुः शांतिवर्षशतसहस्त्रम्, चतुः शांतिवर्षशतसहस्त्रम्, चतुः शांतिवर्षशतसहस्त्रम्, चतुः श्वताहम्, अटनम्, अववाहगम् , अववाहगम् , वहुकाहम् , उत्पराहम्, उत्पराहम्, उत्पराहम् , पद्मम्, निलनःहम् , निलनम् ; अर्थतिप्राहम्, अर्थनिप्रम् , अर्थनिप्रम् , अर्थनिप्रम् , अर्थनिप्रम् , न्तुनाहम् , न्युनाहम् । न्युनाहम् , न्युनाहम् , न्युनाहम् । न्युनाहम् , न्युनाहम् । न

आयलिका.

श्चलकान.

उच्छव(स.

च्छ्वासैः स्तोकः, स्तोकाश्व छवे सप्त, ततो छवः सप्तभिर्गुणितो जाता-एकोनपश्चाशत् , मुदूर्ते च सप्तसप्ततिर्छवा इति; सा एकोनपञ्चा-शता सुणिता इति जातं यथोक्तं मानमिति. ' एताव ताव गणियस्स विसए ' ति एतात्रान् शीर्षप्रहेलिकाप्रगेयराशिपरिमाणः ' तावत् ' इति क्रमार्थः. गणितविषयो गणितगोचरः-गणितप्रमेय इत्यर्थः. ' उथिमए ' ति उपमया निर्वृत्त औपिमिकः-उपमामन्तरेण यत् काल-प्रमाणम्-अनितशयना प्रहीतुं न शक्यते तदीपमिकमिति भावः.

२. आगळना प्रकरणमां धान्योनी योनिनी काळस्थिति कही छे, माटे हवे आ प्रकरणमां ए काळस्थितिस्वरूप मुहूर्वादिनुं स्वरूप कहेवा माटे कहें छे के, [' कसासदा वियाहिय ' ति] भगवंतीए कहेलुं छे के, उच्छवासादा एटले उच्छवासी द्वारा मपाएला एक प्रकारना काल विशेषो. अहिं उत्तर दर्शावे छे, [' असंखेज ' इत्यादि.] असंख्यात समयोना जे समूहो, तेनी ज समितिओ (मीलनो) अने तेओनो जे समागम-संयोग-ते 'समुद्रयसमितिसमागम' कहेवाय, ते वडे जे कालमान थायै ते एक आविलका कहेवाय, ['संखेजा आविलय' ति] आ चीकस छे के, २५६ आविलकाओनं एक क्षुलकभवप्रहण थाय छे, तेवां १७ थी वधारे क्षुलकभवप्रहणो एक उच्छ्वासनिःश्वासकाळमां थाय छे। एटले ए प्रमाणे भंख्याता आवितका ते एक उच्छवास काल कहेवाय. ['इट्टस्स' इत्यादि.] हुट एटल तुए, अनवकल्य एटले घडपणयी नहि गांजेला अने निरुप-क्षिष्ट एटले वर्तमानकाले अने पूर्वे पण व्याघि विनाना मनुष्यादिनो जे एक उच्छ्यासनिश्वास-अर्थात् उच्छ्यास साथेनो निश्वास ए 'प्राण ' कहेवाय छे, ['सत्त ' इत्यादि] गाया कहे छे, ['सत्त पाणूइं 'ति] सात प्राण एटले जे सात उच्छ्वासनिश्वास ते स्तोक कहेवीय छे, ए प्रमाणे जे सात स्तोक ते एक ठव, ७७ ठव ते, एक मुहूर्त छे-जे विषे आ प्रस्तुत चर्चा चाले छे. ['तिन्नि सहस्सा'] गाहा, आ गाथानो भावार्थ आ छे:--सात उच्छवासनो एक स्तोक थाय छे, एक लवमां सात स्तोक होय छे माट लवने सातगणी करवाथी एक लवना ओगणपचास उच्छवास थया अने एक मुहूर्तमां ७७ टव होय छे माटे ते सत्योतेर ठवनो ४९ उच्छवास साथे गुणाकार करवाथी गाथामां कहेलुं एक मुहूर्तना उच्छवासोनुं आ प्रमाण ३७७३-बरावर याय छे, ['एताव ताव गणियस्स विसए 'ति] अही जणावेली 'आवलिका 'थी मांडी तद्दन छेली काळसूचक संख्या ' शीर्षप्रहेलिका ' सुधीनो-एटले कमे करीने ए छेली संख्या सुधी ज गणितनो विषय छे-वघारेमां वधारे आंकडा मांडीने अहीं सुधी ज कार तुं प्रमाण गणी शकाय है अने त्यार पछीना काळ माटे आंकडातुं गणित काम नधी आवतुं, पण अमुक उपमाओ द्वारा ज ते पछीनी काळ मापी शकाय छे. [' उनमिए ' ति] टपनाथी जणाय ते औपमिक अर्थात् अतिशय ज्ञानी सिवायना साधारण लोको ने काल-प्रमाणने उपमा यिना न मही शके ते काल-प्रमाण ' औपमिक ' कहेवाय-ए तालर्थ छे.

उपमेच काळ-पल्योपम, सागरोपम.

५. प्र०— भे कि तं उनिष् !

५. उ०--जनामिए दुनिहे एचत्ते, तं जहा:-पारिओवमे य, सागरोवमे य.

६. ४० — से किं तं पिलेओवमे, से किं तं सागरोवमे १

ξ. **૩**ο---

' सरथेण सुतिवस्तेण वि छेत्तुं, भेतुं च जं किर न सकां, तं परमाणुं सिद्धा वयंति आइं पमाणाणं. '

५. प्र०-(हे भगवन्!) ते औपिमक शुं कहेवाय ? ५. उ०--(हे गौतम!) ते औपिमक बे प्रकारनुं कहुं छे,

ते जेमके, एक पत्योपम अने बीजं सागरोपम.

६. प्र० — (हे भगवन् !) पल्योपम ते शुं कहेवाय ? अने सागरोपम ते शुं कहेबाव ?

६. उ०---(रहे गौतम!) ' सुतीक्ष्ण शस्त्र वडे पण जेने छेदी, भेदी न ज शकाय, ते परम अणुने केवलिओ सर्व प्रमाणीनी आदिभूत प्रमाण कहे छे '. अनंत परमाणुओना समुदायनी समि-अणंताणं परमाणुपारेगलाणं समुद्यसमितिसमागमेणं सा एगा तिओना समागमवडे ते एक उच्छलक्षणश्चिष्टणका, श्रक्ष्णश्चिष्टणका, ओसण्हसण्हिया इ वा, सण्हसण्हिया इ वा, उड्डरेणू इ वा, ऊर्ध्वरेणु, त्रसरेणु, रथरेणु, वालाग्न, लिक्षा, यूका, यवमध्य अने तसरेणू इ वा, रहरेणु ति वा, वालग्गा इ वा, लिक्ला इ वा, अंगुल थाय छे: उपारे आठ उच्छलक्ष्मश्रक्षिणका मळे त्यारे ते एक जूश इ वा, जवमज्झे इ वा, अंगुले इ वा; अह उस्सण्हसः श्रक्षणश्रिष्णिका थाय, आठ श्रक्षणश्रिष्णिका मळे त्यारे ते एक ण्हियाओं सा एमा सण्हसण्हिया, अ**इ** सण्हसण्हियाओं मा एमा ऊर्ध्वरेणु; आठ ऊर्ध्वरेणु मळे लारे ते एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणु उडुरेणू, अइ उडुरेणूओं सा एगा तसरेणू, अइ तसरेणूओं सा मळे त्यारे ते एक रथरेणु अने आठ रथरेणु मळे त्यारे ते देवकुरुना एमा रहरेणू, अंड रहरेणूओं से एमें देवकुर-उत्तरकुरमाणं अने उत्तरकुरुना मनुष्योनुं एक व लाग्न थाय छे. ए प्रमाणे देवकु-मणुस्साणं वालग्गे; एवं हरिवास-रम्मग-हेगवय-एरचवयाणं, रुना अने उत्तरकुरुना मनुष्यनां आठ वालाप्र ते हरिवर्षना अने पुच्चिवदेहाणं मणूसाणं अङ्ग विङ्गा सा एगा लिवसा, अङ्गि स्म्यकना मनुष्यनी एक वालाप्र, हरिवर्षना अने सम्यकना मनुष्यना

१ अहीं थाय' अने ' जे ' ए बन्ने अर्थ अध्योहाँरगम्य छे. २. 'कहेवाय छे ' ए अर्थ, आ गाथाना आगळना भागनां आवेलो छे, अने तेने अहीं पण घटाववानो है:--श्री अभय०--

९. मूलच्छायाः — अथ कि तद् औप्रसिकम् श औप्रमिकं द्विविधं प्रज्ञप्तम् , तद्येथा -- प्रयोगमं च सागरीयमं च. अथ कि तत् पर्योगमम्, तत् किं तत् सःगरीपमम् ? 'शक्षण सुतीईणेनाऽपि छेतुम्, भेतुं च यं किलं न शक्ताः,तं परमाणुं सिद्धा वदन्ति आदि प्रमाणानाम्,' अनन्तानां परमाणु-पुंद्रलानां समुदयसमितिसमागमेन सा एका उत्रक्षक्षश्रका इति वा श्वक्षणकिति वा, अर्बरेणः इति वा, त्रसरेणः इति वा, रथरेणुः इति वा, वालामम् इति वा, लिक्षा इति वा, यूका इति वा, यवमध्यम् इति वा, अङ्गल इति वा; अष्ट उत्रेळक्णश्राह्णकाः सा एका कद्मकिष्यका, अष्ट कद्मकिष्यकाः सा एका अर्वरेणुः, अष्ट अर्वरेणयः सा एका त्रसरेणुः, अष्ट त्रसरेणयः सा एका रथरेणः, अष्ट रथरेणवः सा एकं देवकुर-उत्तरकुरुकानां मनुष्याणां वालाऽप्रम्; एवं इरिवर्ष-रम्यक-हेमवत-ऐरवतकानाम्, प्वैविदेहानां स्वुच्याणाम् अष्ठ वासाऽप्राणि सेका तिसा, अष्ठः--अव्

वा, धणू इ वा, जूए इ वा, नालिया इ वा, अवले इ वा, चत्तारि गाउयाई जोयणं; एएणं जोयणप्पमागेणं जे पहे जोयणं आयाम-विवसंनेणं, जोयणं उड्डं उचत्तेणं, तं तिओणं सविसेसं परिस्येणं-से णं एगाहिय-बेहिय-तंहिया, उन्होसं सत्तरत्तथ-रूढाणं संमहे, संगिचिए, भारेए वालग्गकोडीणं; ते णं वालग्गे नो अग्गी दहेजा, नो वाउ हरेजा; नो कुरथेजा, नो परिवि-दंसेजा, नो पूतिचाए हव्वं आगच्छेजा; तंओ णं वाससए, वाससए एगमेगं वालग्गं अवहाय जावतिएणं कालेणं से पहें स्त्रीणे, निरए, निम्मले, निद्वीए, निहोंचे, अवह छे, विसुद्धे भवइ से तं पछिओवमे.

गाहा:-' एएसि पहाणं कोडाकोडीणं हवेज दसगुणिया, तं सागरोवमस्स उ एकस्स गवे परिमाणं.

एएणं सागरोवमपमाणेणं चत्तारि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमसुसमा, तिनि सागरीयमकोंडाकोडीओ कालो सुसमा, दें। साग-रोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमदुसमा, एगसागरोयमकोडाकोडी, बायालीसाए वाससहस्सेहिं जाणियां कालो दुसमसुसमा; एकावीसं वाससहस्साई काली दुसमा, एक्विस वाससहस्साई काली दुस-मदुसमा, पुणरवि उस्सिष्णिणीए एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दुसमदुसमा, एकवीसं वाससहस्साईं, जान-चत्तारि सागरींपम-कोडाकोडी कलो सुसमसुसमा; दस सागरोपमकोडाकोडीओ कालो ओस्।प्पणी, दस सागरोपमंकोडाकोडीओ कालो उस्स-प्पिणी; वीसं सागरोपमकोडाकोडीओ अवसप्पिणी, उ(व) रसिपणी यः

लिक्लाओं सा एगा जूया, अह जूयाओं से एगे जवमेज्यों, अह आठ वालाप्र ते हैमवतना अने ऐरवतना मनुष्यनो एक वालाप्र जनमङ्माओं से एगे अंगुले; एएर्ण अंगुलपमाणेणं छ अंगुलाणि। अने हैमवतना अने ऐरवतना मनुष्यनां आठ वालाग्र ते पूर्वविदेहना पादो, बारस अंगुलाइं विहत्यी, चउवीसं अंगुलाइं रयणी, मनुष्यनो एक बालाप्र, पूर्वविदेहना मनुष्योनां आठ वालाप्र ते अस्यालीसं अंगुलाइं कुच्छी, छच इति अंगुलाणि से एगे दंडे इ एक लिखा, आठ लिखा ते एक यूका ते एक यूका ते एक यवमध्य अ.ठ यवमध्य ते एक अंगुल, ए अंगुलना प्रमाणे छ अंगुलनी मुसले ति या; एएणं धणुष्पमाणेणं दो धणुंसहस्साइं गाउर्यं, एक पाद, बार अंगुलनी एक वितरित-वेत-चोवीश अंगुलनी एक रहिन-हाथ-अडतालीश अंगुलनी एक कुक्षि, छन्नु अंगुलनी एकं दंड, धनुष्, युग, नालिका, अक्ष अथवा मुसल याय, ए धनुष्ना प्रमाणे वे हजार धनुष्यनी एक गाउ थाय, चार गाउनुं एक थोजन थाय, ए योजनना प्रमाण जे पर र, आयाम वडे अने विष्कंभवडे एक योजन होयं, उंचाइमां एक योजन होय अन जेनो परिधि सविशेष त्रिगुण-त्रण योजन-होय, ते पल्यमां एक दिवसना उगेला, वे दिवसना उगेला, त्रण दिवसना उगेला अने ववारेमां वधारे सात रातना उगेला कोडो बालाप्री काँठा सुधी भर्या होय, संनिचित कर्या होय, खूब भर्या होय अने ते वालाग्री एवी रीते भर्या हीय के जैने अभि न बाळे, वायु न हरे, जेओ कोहाइ न जाय, नाश न पामें अने जेओ कोइ दिवस सडे नहिं, त्यार बाद ते प्रकारे बालापना भरेला ते पच्यमांथी सो सो वरसे एक एक वालाप्रने काढवा मं आवे, एवी रीते ज्यारे-बेटले काळे -ते पहप क्षीण थाय, निरज थाय, निर्मेख थाय, निष्ठित थाय, निर्देप थाय, अपहत थाय अने विशुद्ध थाय खारे ते काळ पल्योपम काळ कहेंबाय. सागरोपकतुं प्रमाण दशीववा माथा कहे छेः ' एवा कोटांकोटी पस्त्रोपमने ज्यारे दसगणा करीए त्यारे ते काळनुं प्रमाण, एक सामरीयन धाय छ.' ए सागरीयन प्रमाणे चार कोडाकोडि सागरोपम काळ ते एक सुषमसुषमा कहेवाय, त्रण कोडाकोडि सागरीपमं काळ ते एक सुषमा कहेवाय, वे कोडाकोडि सागरोपम काळ ते एक सुपमदु:पमा कहेवाय, जेमां बेंताळीश हजार वरस ऊर्णा छे एवी एक की डाकीडि सागरोपम काळ ते एक दुषमसुषमा कहेवाय, एकवीश हजार वरस काळ ते दु:पमा कहेवायं, एकवीश हजार वरस काळ ते दु:पमदु:पमा कहेंबाय, वळी पण उत्सर्पिणीमां एकवीश हजार वरस काळ ते दु:वमदु:वमा कहेवाय, एकवीशह जार वरस यावत् चार कोडाकोंडी सागरोपम काल ते सुवमसुवमा, दस कोडाकोडी सागरोपम काळ

र. मूलच्छायाः-लिक्षाः सैका युका, अष्ट युकाः सर्व यवमध्यम् , अष्ट यवमध्यानि सैकोऽबुलः; अनेन अर्बुलप्रमाणेन पद्दुलानि पादः, द्वादश अङ्गलानि वितस्तिः, चतुर्विशतिरहुकानि रिनः, अष्टाचरवारिशद् अव्यलानिकुक्षिः, पण्णवितरव्यलानि स एको दण्ड इति वा, धतुः इति वा, युगम् इति वा, नालिका इति वा, अक्ष इति वा, मुसलमिति वा, अनेन धनुष्प्रमाणेन दे धनुःसद्देशे गन्युतम्-क्रीशः, चलारे। गर्व्युताः-क्रीशा योजनम् ; अनेन योजनप्रमाणेन यः परयो कोजनम् आवार-विष्वम्मेण, दोजनम् उद्धे उचरवेन तत् हिगुणं सविशेषं परित्येण स एकाऽहिक-द्रवाहिकाणाम् , उत्कर्षतः सप्तरा-त्रप्रहडानां संसृष्टः, संविचितः, सतौ बालाप्रकोटी भः; ताति बालाप्रति नोडिविदेहेत् , नो बायुः इरेत् , नो कुथ्येयुः, नो परिविद्यंसेरन् , नो प्रतितया शीधम् आगच्छेयुः; तृतो वर्षशते, वर्षशते एवैकं वालाइप्रम् अपद्वाय यावता कालेन स पस्यः क्षीणः, नीरलाः, निर्मलः, निष्ठितः, निर्देषः, अपवृतः, विशुद्धे भवति स तद् पत्योपमम् गथाः-'एतेषां पत्यानां कोटीकोटीनां भवेद् दश्गुणिता, तत् सागरोपमस्य त्येकस्य भवेत् परिमाणम्,' अनेन सागरोप-मश्रमाणेन चतस्रः सामरोपमकोटीबोट्यः कालः सुषमसुषमा, तिमः सामरोपमकोटीबं व्यः कालः सुपमा, द्वे स.म.रोपमकोटीबोट्यो कालः सुष्मसुषमा, एकसागरोपुमकोटीछोटी, द्वाचावारिशता वर्षसहक्षेक्रना-कालो दुःषमसुषमा; एकविंकतिर्वर्षसहस्राणि कालो दुःषमा, एकविंशतिर्वर्षसहस्राणि कालो दुःषमदुःषमा, पुनरपि उत्सर्पिण्याम् एकविर तिवैषेसद्दसाणि कालः दुःषमदुःषमा; एकविशतिवैषेसद्दसाणि, यावत-चतन्नः सांगरीपमकोटीकोट्यः कालः सुवमसुवमा: दश सामरोपमकोटीकोट्याः कालोइकसर्पिणी, देश सामरोपमकोटीकोट्याः काल उत्सापिणी, विश्वतिः सामरोपमकोटीकोट्याइवसापिणी इस्स्पिणो **यः**---अनु०

ते अवसर्पिणीकाळ, दस कोडाकोडी सागरोपम काळ ते उत्सर्पिणी काळ अने वीश कोडाकोडि सागरोपम काळ ते अवस-र्षिणी-उत्सर्पिणी काळ.

३. अथ पत्योपमादिप्ररूपणाय परमाण्यादिस्वरूपमभिधित्सुराहः— सत्थेण ' इत्यादि. ' छेतुं ' इति खड्गादिना दिधाकतुर्भ, ' मेतुं ' सूच्यादिना सच्छिदं कर्तुम् , 'वा ' विकल्पे, ' किछ ' इति ' लक्षणमैवाऽस्येदममिधीयते; न पुनस्तं कोऽपि छेतुम् , भेतुं बाऽऽरभते ' इसर्थसंसूचनार्थः. 'सिख' ति ज्ञानसिद्धाः केवलिन इसर्थः, नतु सिद्धाः सिद्धिं गताः-तेषां वदनस्याऽसंभवादिति. आदिं प्रथमं प्रमाणानां वस्यमाणोत्स्रक्षणश्रक्षिणकादीनामिति. यद्यपि च नैश्वयिकपरमाणोरपि इदमेव तक्षणम् , तथापीह प्रमाणाऽधिकाराद् व्यावंहारिकंपरमाणुटक्षणमिदम् अवसेयम्, अथ प्रमाणान्तर्हक्षणमाहः--' अणंताणं ' इत्यादि. अनन्तानां व्यावहारिकपरमाणुपुद्रलानां समुद्या द्वयादिसमुद्याः, तेषां समितयो मीलितानि, तासां समागमः परिणामवशाद् एकीभवनं समुद्रयसमितिसमनगमः, तेन ९ या परिमाणमात्रा ' इति गम्यते; सा एका अत्यन्तं सहणा अङ्गक्षरणा सैव स्वरूणश्रद्धिणका; उत् प्रावल्यनः स्वरूगश्रद्धिणका-उत्स्वद्धणः रुक्षिणका. 'इतिः ' उपदर्शने, 'वा ' समुचये, एते च उत्रुक्षणस्विश्वकाद्योऽङ्गुलान्ता दश प्रमाणमेदा यथोत्तरमष्ट्रगुणाः सन्तोऽपि प्रत्येकम् अनन्तपरमाणुःवं न व्यभिचरन्ति इत्यत् इक्तम् - उस्तण्हसण्हिया इ वा १ इत्यादिः । सण्हसाण्हिय । ज्ञि प्राक्तनप्रमाणा-डपेक्षयाऽष्ट्रगुणत्वात् , कर्ष्यरेण्यपेक्षया तु अष्टभागत्वात् ' स्वद्गास्र देणका ' इत्युच्यते . ' बहुरेणु ' ति कर्ष्या –ऽघ –िर्तापक् वलन-घर्मीपलम्यो रेणुः ऊर्ध्वरेणुः. 'तसरेणु ' ति त्रस्यति पौरस्य।दिवायुप्रेरितो गच्छति यो रेणुः स त्रसरेणुः. ' रहरेणु ' ति रथगमनो-त्सातो रेणू रथरेणुः. वालाप्र-लिक्षादयः प्रतीताः. ' रयाणि ' ति हस्तः, ' नालिय ' ति यष्टिविशेषः, ' अवस्वे ' ति शकटाऽत्रयत्र-विशेषः. 'तं तिज्णं साविसेसं परिरएणं ' ति तयोजनं त्रिगुणं सविशेषम् वृत्तपरिधेः किञ्चिन्यूनषड्भागाऽधिकत्रिगुणत्वात्. 'से णं एकाहिय-वेहिय-तेहिय-' ति षष्ठीवहुवचनलोपाद् एकाहिक-द्वशहिक-त्र्याहिकाणाम्, ' उक्रोस ' ति उत्कर्वतः सप्तरात्रप्ररूढानां भृतो बालाप्रकोटीनामिति, तत्र एकाहिक्यो मुण्डिते शिरसि एकेमाऽह्ना यात्रत्यो भवन्तीति, एवं शेषास्त्रपि भावना कार्या. कथंभूतः ? इत्याह:-संमृष्टः आकर्णमृतः, संनिचितः प्रचयविशेषानिबिडम्, किं बहुना १ ९वंमृतोऽसौ येन 'ते णं ' ति तानि वालाप्राणि, ' नो कुरथेज ' ति न कुथ्येयुः प्रचयविशेषात् -शुषिराऽभावात् -वायोरसंभवाच नाऽसारतां गन्छेयुरित्यर्थः, अत एव ' नो परिविद्धं-सेज ' ति न परिविध्वसेरन्, कति सपरिशाटमपि अङ्गीहत्य न विध्वसं गच्छेयुः. अत एव च ' नो पूइताए हव्यमागच्छेज ' ति न पूर्तितया न पूर्तिभावं कदाश्चिदागच्छेयुः. ' तओ णं ' ति तेभ्यो वालाग्रेभ्यः ' एगमेगं वालग्गं अवहाय ' ति एकैकं वालाग्रमप-नीय (ते)-कालो मीयते इति शेषः, तत्रश्च 'जावतिएणं ' इत्यादिः, यावता कालेन स पत्यः, 'लीणे ' ति वालाप्राप धर्षणात् क्षयमुपगतः, आकृष्ट्यान्यकोष्टागारवत्, तथा ' नीरए ' ति निर्मतरजःकल्पस्क्ष्मवालाप्रः, अपकृष्ट्यान्यरजःकोप्ठागारवत्, तथा ' निम्मले ' ति विगतम्लब स्पस्कमत्त्वालाग्रः, प्रमाजनिकात्रमुण्डकोष्ठागास्वत्, तथा ' निष्टिय ' ति अपनेयद्व्याऽपनयनमाश्रिस निष्ठां गतः, विशिष्टप्रयत्नप्रमार्जितकोष्ठागारवत्. तथा 'निहुव 'ति अत्यन्तसंक्षेपात् तन्मयतां गतः बालाग्रापहाराद् अपनीतिभित्त्यादिन गतधान्यलेपकोष्ठागारवत्. अथ कस्माद् निर्लेपःः इत्यत आहः-'अवहडे 'त्ति निःशेषवालाग्रलेपाऽपहारात्, अत एव 'विसुद्धे 'त्ति रजोमलकलपत्रालाप्रविगमकतसुद्भवाऽपेक्षया लेपकलपत्रालाग्राऽपहरणेन विशेषतः सुद्धो विशुद्धः. एकार्थाश्च एते शब्दाः. व्यावहारिकं चेदमद्भापल्योपमम् . इदमेव यदाऽसंख्येयखण्डी.कृत-एकैकवालाप्रभृतपल्याद् वर्षशते, वर्षशते खण्डशोऽपोद्धारः क्रियते तदा सूक्षमम्-उच्यते, समये समयेऽपोद्धारे तु द्विधा एव उद्धारपत्योपमं भवति; तथा तैरेव वालाग्रेथें स्ट्रष्टाः प्रदेशास्तेषां प्रतिसभयाऽपोद्धारे यः कालः तद् व्यावहारिकं क्षेत्रपत्योपमम्, यः पुनस्तैरेवाऽसंख्येयखण्डीकृतैः स्पृष्टाऽस्पृष्टानां तथेवोपोद्धारे कालस्तत् सूक्ष्मं क्षेत्रपत्योपमम्, एवं सागरोपममपि विजेति.

परमन्युः

३. हवे ते-उपमाथी ज जाणी शकाय तेवा पख्योपमादि-काळनुं प्ररूपण करवानुं छे, ते माटे प्रथमोपयोगी परमाणु बगेरेनुं खरूप छे. तो तेने कहेवाने मूळकार कहे छे के, [' सत्थेर्ण ' इत्यादि.] खड़ वगेरे शस्त्रद्वारा छेदया-बे दुकड़ा करवा अथवा सीय वगेरे द्वारा छिद्रवाळुं करवा. ['सिद्ध ' ति] अहीं सिद्ध एटले ज्ञानसिद्ध केवलिओ समजवा, पण मुक्तिप्राप्त सिद्धों न लेवा, कारण के, तेओने मुख होवानो असंभव होवाधी ंतेओ बोले छे 'एम न कहेंबाय तात्पर्य ए के, जे 'अणु 'गमे तेवा पाणीबाळा शस्त्रथी पण छेदी के भेदी न शकाय ते 'अणु 'ने केवली पुरुषो ' परमाणु ' कहे छे अने आ च परमाणु, बीजां बधां प्रमाणोमां-उच्छलक्ष्णश्लक्षिका वेगरे प्रमाणोमां-जे बधां अहीं हवे पछी कहेवानां छे-आदि प्रमाण छे अर्थात् सर्व प्रमाणोमां आदि प्रमाण आ परमाणु ज छे. जो के, नैश्रयिक परमाणुनुं पण आ ज रुक्षण छे, तो पण आहिं प्रमाणनी अधिकार होवाथी आ-कहेलुं-एक्षण व्यावहारिक परमाणुनु समजनुं. हवे बीजां प्रमाणीनुं लक्षण कहे छे, ['अणंताणं ' इत्यादि.] अनंत हक्षणश्राक्षित्रका, व्यायहारिक परमाणु पुद्रहोना समुदायो-द्वायादि (अनेक) समुदायो, तेनी समितिओ (मीलन), ते समितिओनो परिणामवश त् यमासन (एकीभवन) ते समुद्रयसमितिसमागम, ते बढ़े जे परिमाणमात्रा थाय ते एक अत्यंत श्रष्टण एवी श्रद्धणश्रद्धिणका कहेवायः अने उत् एउछे प्रबस्ता

१. 'परमाणुने छेद्वा वा मेदवा काइ पण आरंभतो नथी, पण आ प्रमाणे तेनुं खरूप ज कहेवाय छे 'ए अर्थने सूचववा गाथामां 'किल ' शब्दनी प्रयोग करेली है. २. 'परिमाणमात्रा 'ए बार्च भध्याहार्गम छे. १. 'अध्याक्षरणा 'शब्दने खार्यमां 'क ' अलग आववाधी ' अध्यक्षि क्षित्रका ' शब्द बने छे:--शीअम्य०

अर्थात् जे स्रक्षास्रक्षिणका प्रबळतावाळी होय ते ' उच्छलक्ष्णस्रक्षिणका 'एम कहेवाय, ए उच्छलक्ष्णस्रक्षिणकाथी मांडी अंगुल सुधीना प्रमाणना जे उच्छलक्ष्मस्रक्षिणका. द्ध भेदी छे ते उत्तरीत्तर आठगुणा थया सता पण तेमां प्रत्यक्रमां—एक एकमां—अनंतपरमाणुपगु व्यभिचरतुं नथी एटले तेमां अनंतपरमाणुपणुं कायप रहे छे, माटे कर्च छे के, [' उस्मण्हसण्हिया इ वा ' इत्सादि.] ['सण्हसण्हिय ' ति] पूर्वना प्रमाणनी अवेकाए आठगुणी होबाथी अने ऊर्घरेणुनी अवेक्षाए तो आठमा भागरूप होवाधी ते ' सक्ष्मकक्षिमका ' ए प्रमाण कहवाय छे, [' उद्दृरेणु ' ति] उंचे, नीच अने तीरछे चलन (चालवा) रूप धर्मधी जे रेणु उपलभाय-जणाय-भोळलाय-ते 'कश्वरेणु 'ए प्रमाण केंद्रवाय, ['तसरेणु ' ति] पूर्वादि दिशाना बाबुनी ब्रेरणाधी के रेणु बंस-गति कर ते 'बर्मरेणु 'कंडवाय, ['रहरेणु 'क्ति] स्थनी गतिथी उखडेळी-उडेळी-के रेणु ते 'स्थरणु ' कहेबाय. वालाग्र अने लिक्षा-लीख-वंगेर प्रतीत छे. ['रयणि 'ति] रति एटेठ हाथ, ['नालिय 'ति] एक प्रकारनी लाकडी-नाळ, ्र अक्ले ' सि] अक्ष-एक प्रकारनी गाडानी अवयवः [' तं तिउणं सविसेसं परिरएणं ' ति] ते योजन, विशेषं सहित त्रिगुण, कारण के, वृत्त परिधि कांडक न्यून छ मागाधिक त्रिगुण छे. [' से ण एकाहिअ-बहिअ-तेहिअ ति '] एक दिवसना उगेला, बे दिवसना उगेला अने त्रण दिवसना उगेला अने [' उक्कोस ' ति] वधारेमां वधारे सात रातना उगेला क्रोडो वाळाग्रमागोथी भरेलो, स प्रमाणे वाक्य संबंध छे. तेमां ं ऐकाहिकी '-' एक दिवसे उगेली वाळकोटी '-एटले माथुं मुंडाव्या पछी जेटला (कोडो) वाळो एक दिवसे उगेला होय ते ऐकाहिकी वालकोटि कहेवाय, ए प्रमाण बाकीनामां एण भावना करवी ते पत्य केवो छे ? तो कहे छ के, संमृष्ट एटेले आकर्णभूत-कांठो कांठ भरेलो, संनिचित एटले एकप्रकारना प्रचयथी निविड-खीचोखीच, वधारे हुं १ ए पत्य एवी रीते भरंलो छे, जेबी ['ते णं ' ति] ते वालाग्रो, ृ ' नो कुरंथज ' ति] कोहाय नहि एटले एक प्रकारना प्रचयथी छिद्रना अभावन लहने तेमां बायुना संचारनो असभव होवाची ते बाळाहो असारपणाने पामतां नथी माटे ज [' नो परिविद्धसेज्य ' ति] परिविध्वंसने पण पामतां नथी एटेले के तेमांनो थोडो भाग पण सहतो नथी. तेथो विध्वंस नथी पामतां माटे ज [' नो पूइत्ताए हव्यमागच्छेज ' ति] कदाचित पूतिभावने पामता नथी . [' तओ णं ' ति] ते भरेळां बाळायो-मांथी ['एगमेंगं वालगं अवहाय 'ति] एक एक वालना अब्र भागने दूर करी (काढी) 'कौलने मान थाय हे ' अने तेथी ['जायितएणं ' इत्यादि.] जटला काले ते परया [' खीणे ' ति] जेमांथी अनाज काढी लीधुं हे तेवा कोठारनी पेठे वालना अमभागना काढवाथी क्षीण थाप, तथा [' नीरए ' ति] जेमांथी धान्यनी रज काढी लीघी छे तेवा कोठारनी पेठे रज समान सूक्ष्म वालाग्री काढी लीघां पछी जे पत्य ज्यारे निरज थाय, तथा [' निम्मले ' ति] सावरणीथी साफ करेल कोठारनी पेठे ने परुय ज्योरे मल समान सुक्ष्मतर वालाग्रथी रहित थाय तथा ['निट्रिय ' त्ति] दूर करवा योग्य द्रव्यना अपनयनने आश्री जे पत्य, ज्यारे विशिष्ट प्रयत्नथी प्रमातित कोठारनी पेठे निष्ठान पामेटो थाय, तथा [' निछ्य ' ति] श्रीत वेगेरेमां रहेला धानयना लेपने जे कोठारमांथी अपगत करों है तेवा कोठारनी पेठे, अखंत संक्षेत्र होवाथी तन्मयताने-वालाग्रमयताने-पामेला पत्यमांथी वालामनुं अपहरण करवाथी ए पत्य ज्यारे निर्लेप थाय, निर्लेप शाथी थाय ? तो कहे छ के, [' अयह है ' ति] समस्त बालामोना लेपने दूर करवायी ते पत्य निर्लेप थाय-अपहत कहेवाय अने अपहत होवाथी ज ['विसुद्धे ति] रजना मेल समान वालागना विगमधी थयेल शुद्धपणानी अपेक्षाए लेप समान बालामना दूर करवाथी विशेष शुद्ध ते विशुद्ध, अथवा ए बघा पल्यनां विशेषणो सरला अर्धवाळां क्हेंहवां. आ अद्धापत्योपम व्यावहारिक पत्योपम छे. ज्यारे असंख्येय दुकडावाळा वाळना अग्रभागोथी भरेळा ते पत्यमांथी सो सो वरंत संडधी --एक खंड खंड करीने-अपोद्धार कराय त्यारे आ ज पत्योपम सुक्ष्म पत्योपम कहेव य, अने जो समये साये अपोद्धार करे तो बन्ने प्रकार ज उद्धार पत्योपम कहेवाय, तथा ते वालाग्रोनी साथे ज स्परीला जे प्रदेशो होय, तओना प्रतिसमय अपोद्धारमां जे काल लागे ते व्यावहारिक क्षेत्र-पत्योपम कहेवाय. वळी, ते ज असंस्थ दुकडावाळा वालायो साथ स्पर्शेला क्रने अस्परीला ब्रदेशोना ते प्रमाण ज अपोद्धारमां जे काल लागे ते सूक्ष्म क्षेत्रपत्योपम कहेवायः ए प्रमाण सागरोपम पण जाणतुंः

सुषमसुषमानुं भरतः

७. प्रव में बूदीने णं मंते ! दीने इमीसे उस्सापिणीए सुसमसुसमाए समाए उत्तमद्वपत्ताए, भरहस्त वासस्त केरिसिए आ अवसर्पिणीमां-सुपमसुषमा काळमां भारत वर्षना केवा आकार आगारभावपडायोरे होत्था ?

७. उ०-गोयमा ! बहुसमरमणिको भूमिभागे होस्था, से जहा नामए आलिंगपुश्खरे ति वा; एवं उत्तरवुरुवत्तव्वया नेयव्वा .जात्र-आसर्वाते, सर्वाते; तीसे णं समाए भारहे वासे तत्थ तत्थ-देसे देसे, तहिं तहिं बहवे उराला कुदाला, जाव-कुस-विकुसिनुद्धरुवलमूला, जाय-छन्धिहा मणुस्सा अणुसाज्जित्या. तं जहाः—पम्हगंथा, मियगंथा, अममा, तेयंत्रली, सहा, सणिचारा.

७. प्र०--हे भगवन् ! जंबूद्रीप नामना द्वीपमां उत्तमार्थ प्राप्त भावप्रस्वतार-आकारोना अने पदार्थीना आविर्भावी-हता?

 ७. उ०—हे गौतम! भूमिमाग बहुसम होवाथी रमणीय हतो, ते जेम के, आलिंगपुष्कर-मुरजना मुखनुं पुट-होय तेरो भारत वर्षनो भूमिभाग हतो, ए प्रमाणे अहिं भारत वर्ष परत्वे ं उत्तरक्षुरुनी वक्तव्यता जाणवीः पावत्-बेसे छे, सुवे छे, ते काळमां भारत वर्षमां ते ते देशोमां त्यां त्यां स्थळे घगा मोटा उदालका यावत् कुश अने विकुशधी विशुद्ध वृक्षम् लो यावत् छ प्रकारना माणसो हता, ते जैम के, १ पद्म समान गंबवाळा, २ वस्तूरी . समान गंधवाळा, ३ ममत्य विनाना, ४ तेजस्वी अने रूपाळा,

अध्वरेणु. त्रसरेगु, रित-न जिना.

निर्मल, निष्ठित -निर्रुप,

१. आ बाक्य, षष्ठीचा बहुवचनवाळुं छे, किंतु अहीं षष्ठीनुं बहुवचन लोपाएळुं छे. २. आ माब, अध्यादारगम्य छे:---श्री अभय०

१. मूलच्छायाः—अम्बूरीपे भगवन् ! द्वीपे अस्याम् असर्पिण्यां सुवमसुवमायां समायाम् उतनार्थप्राक्षायाम्, भारतस्य वर्षस्य कीदशः आकार-नाव-प्रत्यवतारोऽभवत् १ गै तम । बहुसमरमणीयो भूमिमागेऽभवत् , तद्यया नाम आलिङ्गपुष्कर इति वाः एवम् उतरक्र वतन्यता हातव्या, यावत् आसी-दिन्त, शेरंते; तस्यां समायां भारते वर्षे तत्र तत्र देशे देशे, तत्र तत्र वहव उदाराः कृदालाः यावत्-कश-विकुशविशुद्धहृक्षमूलानि, यावत्-पर्विधा ततुष्या अञ्चलकारतः, तद्ययाः-पद्मानथयः, वृत्तनथयः, अर्ममाः, तेजस्तिनः, सद्दाः, वनिद्यारिणः-अञ्च०

. ५ सहनशील तथा ६ शैनश्वारी—उतावळ विनाना—ए प्रमाणे छ प्रकारना मनुष्यो हता.

— सेवं भंते ! , सेवं भंते ! ति.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे (एम कही यावत् विहरे छे).

भगवंत-अञ्च्छइम्मसामिपणीए सिरीभगवईयुत्ते छ्हसये सत्तमो उदेसो सम्मत्तो.

४. कालाऽधिकाराद् इदमाहः-' जंबूहीवे णं ' इत्यादि. ' उत्तमद्वपत्ताए ' ति उत्तमांसतत्कालाऽपेक्षया उत्कृष्टान् अर्थान् – आयुष्कादीन् प्राप्ता उत्तमार्थप्राप्ता, उत्तमकाष्ठां प्राप्ता वा प्रकृष्टाऽवस्थां गता-तस्याम्, ' आगारमावपडोगारे ' वि आकार्स्य आकृतेभीवाः पर्यायाः, अथवा आकाराथ भावाथ आकार-भावाः, तेषां प्रत्यवतारोऽवतरणम् - अविभीवः - आकार-भावप्रस्वतारः. ' यहुसमरमणिजे ' ति बहुसमोऽखन्तसमः, अत एव रमणीयो यः सः तथा. ' आल्लिगपुक्तरे ' ति आलिङ्गपुक्तरं मुरजमुख्युटम्, लाघवाय सूत्रनिर्दिशनाहः-'एवं^१ इंसादिः उत्तरकुरवक्तव्यता च जीवाऽभिगमोक्ता एवं दश्याः-''मुरंगपुनखरे इ वा सरतले इ वा" सरस्तलं सर एव, 'करतले इ वा' करतलं कर एवं'' इत्यादि-एवं भूमिसमतायाः, भूमिभागगततृण-मणीनां वर्णपञ्चकस्य, सुर्भिगन्धस्य, मृदुस्पर्शस्य, शुमशन्दस्य, वाप्यादीनाम्, वाप्यादानुगतोत्पातपर्वतादीनाम्, उत्पातपर्वतादाश्वितानां हंसाऽऽसनादीनाम्, छतागृहादीनाम्, शिलापद्दकादिनां च वर्णको वाच्यः. तदन्ते च एतद् इश्यमः-" तत्थ णं बहवे भारिया मणुस्सा, मणुस्सीओ य आसयंति, सयंति, चिंद्वति, निसीयंति, तुयदंति " इत्यादि. 'तत्थ तत्थ ' इत्यादि. तत्र तत्र भारतस्य खण्डे खण्डे, देशे देशे-खण्डांसे खण्डांसे, 'तिहिं 'ति देशस्यांशे देशस्यांशे उदालकादयो दक्षविशेषाः, यावत्करणात्:— कयमाला नद्टमाला ' इत्यादि दृश्यम्.' कुस— विकुसाविसुङ्कवसमूल ' ति कुशाः दर्भाः, विकुशा वस्वजादयस्तृणविशेषास्तै।विश्चाद्यानि तदपेतानि दृक्षमूळानि-तद्योभागा येषां ते तथा. यावत्-करणाद् '' मूलमन्तो, कन्द्मन्तो '' इत्यादि दश्यम्. 'अणुसाजित्य 'त्ति अनुवक्तवन्तः पूर्वकालात् कालान्तरमनुवृत्तः वन्तः, 'पम्हगंघ' ति प्रमसमगन्धयः, 'मियगंघ' ति मृगमदगन्धयः, 'अमम' ति ममकाररहिताः, 'तेय-ताले 'ति तेजश्च, तलं च रूपं येषामस्ति ते तेजस्तलिनः. 'सह 'ति सहिष्णवः समर्थः, 'सणिचारे 'ति शनैर्मन्दम् उत्सुकत्वाऽभावात् चरन्तीत्येवंशीलाः शनैश्वारिणः.

भगवत्सुधर्मस्वामित्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे पष्टशते सप्तम उद्देशके श्रीअभयदेवस्रिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

४. कालनो अधिकार चालतो होवाथी हवे आ बात कहे छे:-['जंबूदीवे णं ' इत्यादि.] [' उत्तमहुपसाए ' ति] ते कालनी अपेक्षाने लइने आयुष्क वर्गरे उत्तम अथोने पामेली ते उत्तमार्थ-प्राप्त कहेवाय अथवा उत्तम अवस्थाने पामेली ते उत्तमकाष्टा प्राप्त कहेवाय, तेमां ['आगार-भावपहोसार ' ति] आकार एटले आकृति, तेना ने भावो एटले पर्यायो ते आकारभाव, अधश, आकारो अने भावो ते आकारभाव, तेओनो जे प्रत्यवतार एटले आविभीव ते आकारमावप्रत्यवतार कहेवाय, ['बहुसमरमणिजे ' ति] वणो सम माटे ज रमणीय जे भूमिभाग ते बहुसम-रमणीय मूमिमाग कहेवाय, ['आर्लिंगपुक्लरे ' ति] आर्लिंगपुक्कर एटेल मुरजनुं-तबलानुं-सुखपुट, टाववने माटे विशेष न जणावतां बीजा सूत्रनी भलामण करतां कहे छे के, ['एवं 'इत्यादि.] उत्तृष्कुरुनी वृक्तव्यता, जीवीभिगम सुत्रमां कहेली छे, ते अही आ प्रमाणे जाणवी:--'' मृदंगनुं पुष्कर, सरतल एटल सरोवरनुं तल अथवा सरोवर ज, करतल एटले हाथनुं तळीयुं-हाथ ज, ए प्रमाणे भूमिना समपणानुं, भूमिभागमां रहेला तृण अने मणिओना पांच वर्णेनुं, सुरमिन्धनुं, कोमळ स्पर्शनुं, सारा शब्दनुं, बाव वरेगरेनुं, वाव वरेगरेमां अनुगत उत्पातपर्वतादिनुं, उत्पातपर्व-तादिने आश्रित हंसासनादितुं, छतागृहादिनुं अने शिलापंहकादिनुं वर्णन कहेतुं. अने त्यांना-जीवाभिगमना-ते वर्णननी अंते आ अर्थ देखाय छः-'' तेमां घणा मनुष्यो अने गनुषणीओ बेरो छे, उंघे छे, रहे छे, निषींदे छे अने सुबे छे, इत्यादिः ['तत्थ तत्थ ' इत्यादिः] भारतना ते ते खंडमां, देश देशमां, ['तिहें 'ति] देशना अंश अंशमां एक प्रकारना उदालक वगेरे बुक्षो हता. ' यावत् ' करवाशी [' कयमाला, नष्टमााला ' इत्यादि] समजवुं, [' कुस-विकुसविसुद्धरुवस्वमूल ' ति] कुश-डाम, विकुश एटले वस्वज दगरे एक प्रकारनां तृणो, जे भरतभूमिनां वृक्षमुली – (वृक्षमृहो- वृक्षना नीचहा भागो)–ए कुश, विकुराथी रहित छे अर्थात् विशुद्ध है। ' यावत् ' करवाथी ' मूहवाळा अने कांदावाळा ' इत्यादि जाण इं. ['अणुसिजित्थ 'ति] अनुसक्त थएला छे एटले पूर्वकाळथी बीजा काळे अनुवर्तेला छ, ['प्रम्हगंघ 'ति] पद्म समान गंधवाळा, मनुष्योचा प्रकार. [' सियगंध ' ति] करत्री समान गंधवाळा, ['अमम 'ति] ममत्व विनाना, ['तेय-ति ' ति] जेओ तेज वाळा अने तळ एरेळ रूपवाळा छे अर्थात् जेओ तेजस्वी अने रूपाळा छे, ['सह 'त्ति] जेओ सहनशीळ-समर्थ-छे, ['सणिचारे 'ति] अने उतावळ न होवाथी जेओ धीमे धीमे चारुवाना सभाववाळा अर्थात् गजगतिनी जेम गति करनारा छे.

> बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचरिते क्षार्भारे भवेऽसिन् दायी यः सङ्गणानां परकृतिकरणाङ्केतजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्योः-द्यात् श्रीवीरदेवः सकल्शिवसुखं मारहा चात्रमुख्यः॥

मूमिभागनं वर्णन.

पक्षसंधि वरेहरे

१. मूलच्छायाः—तदेवं भगवन् ! तदेवं भगवन् ! इतिः--अनुः

१. जुओ जीवाजीवाभिगंग पञ्च, नींनी प्रतिपत्ति-उत्तर-कुर्द्गर्गंस (ए०-१६२ थी २८४-दे० सा०):-अगु०

शतक ६.-उदेशक ८.

पृथिवीओ केटर्जा १-आठ.-रत्नप्रभानी नीचे गृह-स म वगेरे छे १-ना.-त्यां उदार बलाइक अने स्तानितशब्द छे १-हा.-तेने देव-असुर के नाग करे.-त्यां बादर अफ्रिकाय छे १-विसहगति सिवाय नथी.-त्यां चन्द्र के चन्द्र वगेरेनी कान्ति छे १-ना.-ए ज प्रकारना प्रश्नोत्तरो वधी नरको संवधे-त्रीजीमां नाग न करे.- न करे.-चोधीमां अने ते पछीनी वर्धामां एकलो देव ज करे-एवा ज प्रश्नो सौधमाँ दि देव जोको संवधे.-उत्तरो पण प्या ज.-विशेषमां मात्र-न ग न करे.- सनत्कुमारादि स्वगोमां देव ज करे.-संप्रहगाया - आयुष्यना वंधना प्रकार केटला १-छ.-छएनां नाम.-ए प्रमाण यावत् वैमानिको,-जोवी संवधे वधिवयक प्रश्नो अने उत्तरे.-चवण समुद्र संवधी विचार,-जीवाभिगम,-असंख्यदीप समुद्रो-एनां नामो केंवां होय १-वे जेटलां शुभ नाभो होय ते वधां द्वीप-समुद्रोनां जाणवां.-विहार.-

- १. प्रo-कैंइ णं भंते ! पुढवीओ पत्रत्ताओ ?
- १. उ०--गोयमा ! अट्ट पुढवीओ पनताओ, तं जहाः-रयणपमा, जाव-ईसीपन्भाराः
- २. प्रo अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणपमाए पुढवीए अहे गेहा ति वा, गेहावणा इ वा ?
 - २. उ०-गोयमा । णो तिणहे समहे.
- ३. प्र०—अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणपभाए अहे गामा इ वा, जाव-सात्रिवेसा इ वा ?
 - ३. ७०---णो इणहे समहे.
- ४. प्र०—अत्थि णं भंते ! इमीस रयणप्यभाए पुढवीए अहे उराला बलाह्या संसेयति, संमुच्छंति, वःसं वासंति ?
- ४. उ०—हंना, अस्थि. तिचि वि पकरोति, देवो वि पकरोति, असुरो वि पकरेति, नागो वि पकरेति.
- ५. प्र०—अध्य णं भंते ! इमीसे स्यणप्यभाइ- पुढवीए बादरे थणियतदे ?
 - ५. उ०-हंता अत्थि, तिनि नि पकराति.

- १. प्र०— हे भगवन् ! केटली पृथिवीओ कही छे ?
- १. उ०-हे गौतम! आठ पृथितीओ कही छे, ते जेमके, रानप्रभा यावत् ईमत्प्राग्भारा.
- २- प्र०—हे भगवन्! आ रत्नप्रभा पृथिवीनी नीचे गृहो के गृहापणो छे ?
 - र. उ० हे गौतम ! ते अर्थ समर्थ मथी.
- ३. प्रo—हे भगवन् ! आ रत्नप्रभा पृथिवीनी नीचे प्रामो यावत् संनिवेशो छे ?
 - ३. उ०--(हे गौतम!) ते अर्थ समर्थ नथी.
- 8. प्रo—हे भगवन् ! आ रत्नप्रभा पृथितीनी नीचे मोटा मेघो संस्वेदे छे, सम्मूर्छे छे, वरसाद वरसे छे ?
- थ. ट०--हा, वरसे छे, ते वरसादने त्रणे पण करे छे-डेन पण करे छे, अमुर पण करे छे, नाग पण करे छे.
 - ५, प्रयम् हे भगवन् । आ रत्नप्रभा पृथिवीमां बादर स्तानित शब्दो छे ?
 - ५. उ०—(हे गौतम!) हा, छे, ते शब्दने त्रणे पण करे छे.

१.मूलच्छायाः—कित भगवन् ! पृथिव्यः प्रझ्ताः ! गीतम ! अष्ट पृथिव्यः प्रझन्ताः, तद्यथाः—त्नप्रभा, यावत्-ईपरप्राग्भासः अस्ति भगवन् ! अस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्या अधो गेहा इति वा, गेहापणा इति वा ! गीतम ! न तद्र्यः संपैधः अस्ति भगवन् ! अस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्या अधः उदारा यलाई गः संस्वयन्ति, समूच्छेन्ति, वा यावत्—संनिवेशा इति वा ! न प्रमूप्यः समयेः अस्ति अस्ति अस्याः रत्नप्रभायाः पृथिव्या अधः उदारा यलाई गः संस्वयन्ति, समूच्छेन्ति, वर्षीः वर्षन्ति ! इन्त, अस्ति, त्रीण्यपि प्रकुर्वन्ति, देयोऽपि प्रकृति, असुरोऽपि प्रकरोति, नागोःपि प्रकृति अस्ति भगवन् ! अस्याः रत्नप्रमाप्राः पृथिव्या वादरः स्तिवत्रवदः ! इन्त, अस्ति, त्रीण्यपि प्रकुर्वन्तिः—अनु०

६, प्र०--अत्थि णं मंते ! इमीसे रयणपमाए पुढवीए अहे बादरे अगणिकाए ?

६. उ०-गोयमा ! णो इणहे समहे, नन्नत्थ विग्गहगाति-समावनएणं.

७. प्र० — अत्थि णं भेते ! इमीसे रयणप्यभाए अहे चंदिम, जाव-तारारूवा ?

७. उ०—णो तिणहे समहे.

८. प्र०--मित्थ णं भंते ! इमीसे रयणप्यभाए पुढशीए चंदामा ति वा, सूरामा ति वा?

८. उ०-णो इणहे समहे, एवं दोचाए पुढवीए माणियव्यं, एवं तचाए वि भाणियन्वं, नवरं-देवो वि पकरेति, असुरो वि पकरेति, णो णागो पकरेति. चउत्थीए वि एवं, नवरं-देवो एको पकरेति, नो असुरो, नो नागो पकरेति, एवं हेडिलासु सन्वासु देवो एको वि पकरेति.

९. प०--अस्थि णं भंते ! सोहम्मी-साणाणं कपाणं अहे गेहा इ वा, गेहावणा इ बा ?

९. उ०-नो इणहे समहे.

१०. प्र० -- अस्थि णं भंते ! उराला बलाहया ?

१०. उ० - हंता, अरिथ. देवो पुकरोति, असुरो वि पुकरेइ, नो नाओ पकरेइ, एवं थिनयसहे वि.

११. प्र० — आरिथ णं मंते ! बादरे पुढवीकाए, बादरे अगणिकाए ?

११. उ०-णो इणहे समद्वे, नण्णत्य विग्गहगतिसमवा-भएगं.

१२. प्र०-अत्थिणं भंते ! चंदिम-०?

१२. उ०-णो तिणहे समहे.

१२. प्र० — अत्थि णं भंते ! गामा इ ना !

१३. उ०-णो तिणहे समहे.

१४. प्रज - अरिथ णं भंते ! चंदाभा ति० वा ?

१४. उ० - गोयमा ! णो तिणहे समहे, एवं सणंकुमार-माहिंदेसु, नवरं-देवो एगो पकरेति; एवं बंभलोए वि, एवं त्कुमार अने माहेंद्र देवलो तमां जाणवुं, विशेष ए के, त्यां एकलो

६. प्र--हे भगवन्! आ रानप्रभा पृथिवीमां नीचे बादर अग्निकाय छे ?

६. उ० — हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नथी, अने ए निषेध विग्रहगतिसमापनक जीनो सिनाय बीजा जीनो परत्वे जाणनो.

७. प्र० हे भगवन् ! आ रत्नप्रभा पृथिवीमां नीचे चंद्र यावत् तारारूपो छे ?

७. उ०—(हे गौतम !) ए अर्थ समर्थ नथी.

८. प्र० — हे भगवन् ! आ रत्नप्रभा पृथिवीमां नीचे चंद्रामा, सूर्याभा वगेरे छे?

८. उ०-(हे गौतम!) ए अर्थ समर्थ नथी, ए प्रमागे बीजी पृथियीमां कहेवुं, ए प्रमाणे त्रीजीमां पण कहेबुं, विशेष ए के, त्रीजी पृथिवीभां देव पण करे, असुर पण करे अने नाग न करे. चोथी पृथिकीमां पग एम ज कहेतुं. विशेष ए के, त्यां एकछो देव करे पण असुरकुमार के नागकुमार-कोइ न करे, ए प्रमाणे बधी नीचेनी पृथिवीओमां एकलो देव करे छे.

९. प्र० — हे भगवन् ! सौधर्मकल्पनी अने ईशानकल्पनी नीचे गृहो, गृहापणो छे?

९. उ०—(हे गौतम!) ते अर्थ समर्थ नधी.

१०. प्र० — हे भगवन् ! सौधर्म कल्पनी अने ईशान कल्पनी नीचे मोटा मेघो छे ?

१०. उ० - (हा, गौतम!) मोटा मेघो छे, अने ते मेघोने देव करे, असुर पण करे, पण नाम न करे, ए प्रमाणे स्तनित शब्द परत्वे पण जाणवं.

११. प्र० - हे भगवन्! त्यां बादर पृथिवीकाय के बादर अग्निकाय छे ?

११. उ० -- (हे गौतम!) ए अर्थ समर्थ नथी अने आ निषेध विष्रहगतिसमापनक सिवायना बीजा माटे जाणवी.

१२. प्रत--हे भगवन् ! त्यां चंद्र बगेरे छे ?

१२ उ०—(हे गौतम!) आ अर्थ समर्थ नथी.

१३. प्र०-हे भगवन्! त्यां ग्रामादि छे?

१३. उ०-(हे गौतम!) ए अर्थ समर्थ नथी.

१४. प्रo-भगवन् ! त्यां चंद्रनी प्रकाश वगेरे छे ?

१४. उ०-हे गौतन ! ए अर्थ सन्ध नथी, ए प्रमाणे सन-

१. मूलच्छायाः—अस्ति भगवन् ! अस्याः रानप्रभायाः प्रथिव्या अधी वादरोऽप्रिकायः १ गीतम ! नाऽयमर्थः समर्थः, नाऽन्यत्र विम्रहगतिसमा-पप्रकेत. अस्ति भगवन् । अस्याः रहनप्रभाया अधवन्द्रमाः, यावत् ताराह्नपाः १ न तद्र्यः समर्थः. अस्ति भगवन् । अस्याः रहनप्रभायाः पृथिव्याः अन्दाभा इति वा, सूर्योभा इति वा ? नायम् अर्थः समर्थः, एवं द्वितीयायाः पृथिव्या भणितव्यम् ; एवं तृतीयाया अपे भणितव्यम् , नवरम्:-देवोऽपि प्रकरोति, असुरोऽपि प्रकरोति, न नागः प्रकरोति; चतुर्थ्या अप्येवम् , नवरम्:-देव एकः प्रकरोति, नाऽसुरः, न नागः प्रकरोति; एवमधस्तनासु सर्वासु देवं एकोडपि प्रकरोति, अस्ति भगवन् । कीधर्मेशानयोः कल्प्योरधी गेहा इति वा, गेहापणा इति वा ? नाडयमर्थः समर्थः, अस्ति भगवन् ! उदारा बलाहकाः १ हन्त, आस्ति, देवः प्रकरोति, अधुरोऽपि प्रकरोति, न नागः प्रकरोति, एवं स्तनितशब्देऽपि. अस्ति भगवन् ! बादरः पृथिवीकायः, बादरोऽप्रिकायः १ नाऽयमर्थः समर्थः, अन्यत्र विषद्गितिसमापन्नकेन. अस्ति भगवन् । चन्द्रमाः १ न तदर्थः समर्थः. अस्ति भगवन् ! प्रामा इति वा १ न तदर्थः समर्थः. अस्ति भगवन् । चन्द्राभा दृति वा? गौतम! न तद्धः समर्थः, एवं सनरकुमार-माहेन्य्योः, नवरम्ः-देव एकः प्रकरोतिः एवं ह्माकोदेडाये, एवस्--लहर

वंभलोगस्स उवरिं सब्वेहिं देवो पकरेति; पुन्छियन्वो य बायरे देव करे छे, ए प्रमाणे ब्रह्मलोकमां पण जाणवुं, ए प्रमाणे ब्रह्मलोकनी आउकाए, बायरे अगणिकाए, वायरे वणस्सइकाए; अनं तं चेव. उपर सर्वस्थळे देव करे छे तथा बधे ठेकाणे बादर अप्काय, बादर अग्निकाय अने वादर वनस्पतिकाय संबंधे प्रश्न करवी, बीज़ं ते ज प्रमाणे छे-पूर्व प्रमाणे छे.

गाहाः---

· तम्काए कप्पपणए अगणि-पुढवी य अगणि पुढवीसु, 'आऊ तेऊ वणस्सई कप्पृवरिमकण्हराईस्.

गाथा:-तमस्कायमां अने पांच कल्पमां अग्नि अने पृथिवी संबंधे प्रश्न, पृथिवीओमां अग्नि संबंधे प्रश्न अने पांच कल्पनी उपर रहेलां स्थानोमां तथा कृष्णराजिमां अप्काय, तेजस्काय अने वनस्पतिकाय संबंधे प्रश्न करवो.

१. सप्तमोदेशके भारतस्य खरूपम् उक्तम्, अष्टमे तु पृथिवीनां तदुच्यते, तत्र चाऽऽदिसूत्रम् :- ' कइ णं ' इत्यादि. ' वादरे अगाणिकाए ' इत्यादि. ननु यथा बादराग्नेर्मनुष्यक्षेत्रे एव तद्भावाद् निषेध इहोच्यते, एवं बादरपृथिवीकायस्याऽपि निषेधो वाच्यः स्यात्, पृथिव्यादिष्वेव स्वस्थानेषु तस्य भावादिति? सत्यम् , किंतु नेह यद् यत्र नास्ति तत्र सर्वे निषिध्यते मनुष्यादिवत् , विचित्रस्वात् सूत्रगतेः, अतोऽसतोऽपीह पृथिवीकायस्य न निषेध उक्तः, अष्काय-वायु-वनस्पतीनां त्विह धनोदध्यादिभावेन भाषाद् निषेधाऽभावः सुगम प्वेति. 'नो नाओ ' ति नागकुमारस्य तृतीयायाः पृथिव्या अधोगमनं नास्ति-इत्यत एवाऽनुमीयते. 'नो असुरो, नो नागो ' ति इहाऽपि अत एव वचनाचतुर्थ्योदीनामघोऽसुरकुमार-नागकुमारयोर्गमनं नास्ति-इत्यनुमीयते. सौधर्मे-शानयोस्तु अघोऽसुरो गन्छित चमरवत्, न नागकुमारोऽशक्तत्वात्, अत एवाहः- ' देवो पकरेइ ' इत्यादि. इह च बादरपृथिवी-तेजसोनिषेध: सुगम एव, अस्व-स्थानत्वात्. तथाऽप्काय-वायु-वनस्पतीनामनिषेघोऽपि सुगम एव, एतयोरुदविप्रतिष्ठितत्वेन वनस्पतिसंभवात् , वायोध सर्वत्र भावादितिः ' ९वं सणंकुमार-माहिंदेसु ' ति इहाऽतिदेशतो बादराऽप्-बनस्पतीनां संभवोऽनुमीयते, स च तमस्कायसद्भावतोऽवसेय इति. ' एवं वंगलायस्य उविरं सव्वेहिं ति अन्युतं यावदित्यर्थः, परतो देवस्याऽपि गमो नास्तीति न तत्कृतवलाहकादेभावः. 'प्रच्छियव्वो य' ति बादरोऽष्कायः, अग्निकायः, वनस्पतिकायश्च प्रष्टव्यः, 'अत्रं तं चेव'।चि वचनात्-निषेधश्च, यतोऽनेन विशेषीक्ताद् अन्यत् सर्वं पूर्वोक्तमेव वाष्यमिति स्चितम्. तथा प्रैवेयकादि-ईषत्प्रान्भारान्तेषु पूर्वोक्तं सर्वं गेहादिकम् अधिकृतवाचनायाम् अनुक्तमपि निषेधतोऽध्येयमिति. अथ पृथिव्यादयो ये यत्राऽध्येतव्यास्तान् सूत्रसंग्रहगाथयाऽऽहः-'तमुकाए गाहा.' 'तमुकाए' ति तमस्कायप्रकरणे प्रागुक्ते, 'कथ्यपणए' त्ति अनन्तरोक्तसीधमीदिदेवलोकपञ्चके 'अगणि-पुढवी य' ति अग्निकाय-पृथिवीकायी अध्येतत्यी. 'अस्थि णं मंते ! वादरे पुढविकाएं, बादरे अगणिकाए ? नो इणड्डे समड्डे, नण्णत्य विभगहगतिसमावत्रएणं ' इसनेनाऽभिलापेन. तथा 'अगाणि ' ति अग्निकायोऽध्येतव्यः, 'पढवीस' ति रत्नप्रभादिप्रधिवीसुत्रेषुः 'अरिथ णं भंते ! इमीसे रयणप्यभाए पृहवीए अहे बादरे अगणिकाए ?' इसाद्यभिलापेन इति, तथा 'आउ-तेउ-वणस्सइ 'ति अप्काय-तेजो-वनस्पतयोऽध्येतच्याः. 'अत्थि ण 'भंते ! बादरे आउकाए, बायरे तेउकाए, बायरे वणस्सइकाए १ णो इणहे समहे र इलादिनाऽभिलापेन, केषु १ इलाह:- विष्पुवरिमि र ति कल्पपञ्चकोपरितनकल्पस्त्रेषु, तथा ' फ़ण्हराईसु ' ति प्रागुक्ते कृष्णराजीसूत्रे इति, इह च त्रक्षळोकोपरितनस्थानानाम् अध्येयोऽप्-वन्स्पतिनिवेधः, स-यानि अप्-वायु-प्रतिष्ठितानि तेषामघः आनन्तर्येण वायोरेव भावात् , आकाशप्रतिष्ठितानामाश्रास्यैव भावाद्—अवगन्तव्यः, अप्नेग्तु अखस्थानादिति.

१. आगळ आवेला सातमा उद्देशकमां भारत-वर्षनुं स्वरूप जणावेलुं छे, हवे आ शरु थता आठमा उद्देशकमां पृथिवीओनुं स्वरूप कहैवावानं छे. अहीं [' कइ णं '] इत्यादि-आदि सूत्र छे. [' बायरे अगणिकाए ' इत्यादि.] शं०-वादर अग्निकाय, मनुष्य क्षेत्रमां ज छे-बीज क्यांय नथी, तेथी ज अहीं रत्नप्रभानी नीचे तेनी हयातीने निषेधेली छे, तेम अहीं यादर पृथिवीकायनी हयातीने पण निषेधवी जोइए,

पृथिविओ.

[ै]१. मूलच्छायाः—अद्यालोकस्योपरि सर्वैः (सर्वत्र) देवः प्रकरोतिः प्रष्टव्यथ बादरोऽण्कायः, बादरोऽप्रिकायः, बादरो वनसातिकायः; अन्यत् तचैव. गाथा:-' तमस्कायः कल्पपश्चकेटमि-पृथिवी चांडमिः पृथिवीयु, आपस्तेजो वनस्पतिः कल्पोपरिमकृष्णराजीयुः-अनु०

^{2.} आ उदेशकमां जे सात पृथिवीओनो अधिकार छे ते साते नरक-पृथिवीओ छे. ते नरक पृथिवीओमां केवां केवां दु:खे। सहवानां हे।य छे. ए विषेतुं सविस्तर वर्णन 'सूत्रकृतांग 'सूत्रना पांचमा अध्ययन-'निरयविभक्ति' मां करवामां आव्युं छे. अने 'तत्त्वार्थे सूत्रना त्रीजा अध्यायमां पण ए विषे जणाववामां आवेछं छे. 'तस्वार्ध' सूत्रवाळी इकीकत संक्षिप्त होवाथी जैवीने तेवी अहीं उतारी लइए छीए:

[&]quot; रस्तप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, समःप्रभा अने महातमः (तमस्तमः) प्रभा-ए, सात नरकना सात नाम छे. पैली नरक करतो बीजी नरक अधिक विस्तारवाळी छे अने ए रीते उत्तरोत्तर ए साते नरको अधिकाधिक विस्तारवाळी छे. गहन मीचुं आकाश छे, ते उपर घनवात-एक प्रकारनी घट वायु रहेले छे, एनी उपर घनजड-एक प्रकारने जामी मएलं-घट-पाणी रहेलें छे अने एनी उपर ए साते नरको रहेली छे.ं (जूओ भ० प्र० खं० १० १७०) पहेली नरक पथ्वीनी जाड़ाइ (दळ) एक लाख एंशी हजार योजननी छे. वीजीनी जाडाइ एक लाख बत्रीक हजार योजननी छे अने ए प्रमाणे त्रीजीनी एक लाख अट्टावीश हजार, चोथीनी एक लाख वीश हजार, वांत्रमीनी एक छाख अदार इजार, छट्टीनी एक लाख सोळ इजार अने सातमीनी जाबाइ एक लाख आठ हजार योजननी छे॰ पेली पृथ्वीमां १३ प्रतर, बीजीमां

कारण के, ए बादर पृथिवीकाय पण त्यां रत्नप्रभानी नीचे नथी-ए तो पृथिव्यादिरूप पोताना स्वस्थानमां ज छे-एम छतां अहीं बादर अग्नि-समाधान. कायनी पेठे बादर पृथिवीकायनो पण निषेध केम कर्यो नथी ? समा०-सूत्रनी एवी शैली नथी के, ज्यां जे जे बधुं न होय ते ते सर्वनी नामवार यादी करीने ते बधानो निषेध करवो-रत्नप्रभानी नीचे मनुष्यो पण नधी अने ए रीते आपणा तीरछा ठोकमां रहेनारा घणा जीवो अने भावो ंस्थां नथी, तो पण तें बधानों कांइ अहीं नामवार निषेध कर्यों नथी, कारण के, सूत्रनी शैली, गति या संकलना विचित्र प्रकारनी छे **माटे** ज रत्नप्रभानी नीचे मनुष्योनी गरहाजरीनी ज जेम बादर पृथिवीनी पण गेरहाजरी छे, छतां ए विषे अहीं कांइ कहेवामां आव्युं नथी अने अहीं-रत्नप्रभा पृथिवीमां–' घनोद्धि ' बगेरे जलमय माबो छे तेथी ज त्यां अप्काय−पाणी–नी वायु, (पवन) नी अने वनस्पतिनी हयाती होय-ए भाग-असर. हकीकत न कहेवा छतां समजाय तेवी सुगम ज छे ि नो नाओं 'ति े आ उहेखथी एम कळाय छे के, नागकुमार, त्रीजी नरकप्रथिवीथी वधारे आगळ जह शकता निह होय- ['नो असुरो, नो नागो' ति] अहीं पण आपेला आ पाठ उपरथी एवं तरी आवे छे के, चोथी नरक पृथिवीथी वधारे नीचे असुरकुमारनुं अने नागकुभारनुं गमन नहि धइ शकतुं होय. सौधर्मनी अने ईशाननी नीचे तो चमरनी वेठे असुरकुमार जाय छे अने अशक्त होवाधी नागकुमार जतो नथी माटे ज कहे छे: ['देवो पकरेइ ' इत्यादि.] अहीं बादर पृथिवीक य अने बादर अग्नि-पृथिती बगेरे. कायनुं स्वस्थान नथी एटले उत्पत्तिस्थान नथी माटे ज ते बन्नेनो-बादर पृथिवीकायनो अने बादर तेउकायनो-अहीं जे निषेध दर्शाव्यो हे ते सुगम ज छे. तथा अष्कायनो, वायुकायनो अने वनस्पतिकायनो जे अनिषेध दर्शाव्यो छे ते पण सुगम ज छे, कारण के, सौधर्म अने ईशान -तो उद्धिप्रतिष्ठित होवाथी-उद्धिन आधारे रहेला होवाथी-त्यां अप्काय अने वनस्पतिकाय संभवे छे तथा वायु तो बधे ठेकाणे होय छे माटे ते त्यां पण होय ज. [' एवं सणंकुमार-माहिंदेसु ' ति] ' ए प्रमाणे एटले पूर्वे कह्या प्रमाणे सनत् कुमार अने माहेंद्रमां पण जाणवुं ' ए जातनी भलामण करेली होवाथी एम अटकळी शकाय छे के, पूर्वनी पेठे ज अहीं पण-एटले सनस्कुमार अने माहेंद्रमां पण, बादर अप्कायनो अने बादर वनस्पतिकायनो संभव छे अने ते, त्यां तमस्कायनी हवाती होवाधी सुसंगत पण धइ शके छे. [' एवं बंभलोयस्स उविरें सब्वेहिं ' ति] ए प्रमाण ब्रह्मलोकनी उपर सर्वत्र एटले ठेठ अच्युत-स्वर्ग सुधी समजवुं. अच्युत पछी तो आगळ देव पण जइ शकतो नथी, माटे ज तेणे करेला मेघ वगरेनी त्यां विद्यमानता पण नथी. [' पुच्छियव्यो ' ति] बादर अध्काय, बादर अध्निकाय अने बादर वनस्पतिकाय संबंधे प्रश्न करवी, ['अन्न तं चेव ' ति] ' बाकी बधुं ते ज प्रमाणे छे ' एम कहेवाथी आ प्रमाणे जाणी शकाय छ के, पूर्व जेनो जेनो निषेध करवामां अ ब्यो छ, तेनो अहीं पण निषेध समजवों अने अहीं जे विशेष हकीकत कही छे, ते सिवायनी बधी हकीकत पण पूर्वनी पेठे समजी लेबी. तथा अधिकृत वाचना द्वारा मैवेयकथी मांडी ईषत्याग्मारा पृथिवी सुधीमां, पूर्वोक्त सर्व गृहादिकतं निषेधन नथी कर्युं, तो पण तेने (गृहादिने) अहीं निषेधेलुं ज समजी लेवं. हवे पृथिवी वगेरे भावोनी ज्यां ज्यां हयाती जणाववानी छे-ते हकोकतने सूचववा संप्रहगाथा कहे छेः ['तमुक्काए 'गाहा.] ['तमुक्काए 'ति] प्रथम कहेवाएठा तमस्कायना प्रकरणमां [' कप्पपणए ' ति] अने हमणां कहेला सीधर्मादि पांच देवलोकोमां [' अगणि-पुढवी य' ति] अमिकाय अने पृथिवीकाय संबंधे आ प्रमाणे प्रश्न करवोः " हे भगवन् ! बाद्र पृथिवीकाय अने बाद्र अग्निकाय छे ? (हे गीतम !) आ अर्थ समर्थ नधी अने आ निषेध, विशहगतिसमापन्नक सिवायना बादर पृथिवीकाय अने बादर अग्निकाय माटे जाणवी. " " हे भगवन् ! आं रहंतप्रभा पृथिवीमां नीचे वादर अग्निकाय छे ? '' इत्यादि अग्निलाप बडे ['अगणि 'ति] अग्निकाय विष [' 'पुढवीसु 'ति] रत्नप्रभा बगेरे पृथिवीओना स्त्रोमां प्रश्न करवो. तथा " हे भगवन् ! बादर अफाय, बादर तेजकाय अने बादर वनस्पतिकाय छे ? (हे गौतम !) आ अर्थ समर्थ नथी "

९९, त्रीजीमां ९, चोशीमां ७, पांचमीमां ५, छट्टीमां ३ अने सातमीमां एक प्रतर छे. ए सातेमां मळीने कुळ ४९ प्रतरी छ तथा पैळी पृथ्वीमां त्रीश लाख नरकावासो (नारिक्ञओने रहेवानां ठेकाणां) छे, बीजीमां पचीश लाख, त्रीजीमां पत्रर लाख, चोथीमां दस लाख, पांचमीमां त्रण लाख, छद्रीमां ९९९९ अने सातमीमां पांच नरकावास छे-ए बधा मळीने कूल ८४०००० नरकावासी थाय छे. उपरना प्रथम प्रतरनुं नाम 'सीमंतक' अने छेळा प्रतरनुं नाम 'अप्रतिष्ठान' छे. पहेली बे नरकमां रहेनारा जीवोनी 'कापोत्त' लेरया हाय छे, जीजीमां रहेनाराओनी 'कापोत्त' तथा 'नील' लेखा है।य छे, चोथीमां 'नील', पांचमीमां 'नील' तथा कृष्ण अने छट्टी, सातमीमां कृष्ण लेखा है।य छे-नीचे नीचेनी पृथ्वीओमां ए लेश्याओं वधारे संक्रिष्ट होय है. जे जीवी पहेली नरकमां पट्या होय तेओना शरीरनी उंचाइ जा। धनुष अने छ आंगळ छे अने त्यार पछीनी नरकमां कमे कमे एथी बमणी बमणी उंचाइ होय छे. पहेलेथी त्रण नरक सुधी उष्ण वेदना, चोथीमां उष्ण अने शीत, पांचमीमां शीत अने उष्ण अने छट्टी, सातमीमां शीत वेदना होय छे-ए वेदनाओ पण नीचे नीचेनी पृथ्वीओमां बधारेने वधारे तीव डोय छे. ए नरकमां रहेला जीवोने अवधिज्ञान अथवा विभंगज्ञान होय छे. पहेलेथी त्रण नरक सुवीनी ए नरकोमां, संसारस्य कोटवच्छ के फोजदारनी पेठे शिक्षा करनारा जुदा होय छे अने बाकीनी बीजी वधीमां तो त्यां तो ता जो ने जो पोतानी में छे एटले पर-स्पर लडीने ज शिक्षाने उसी करे छे. पहेली नरकमां रहेला जीवोनुं वधारेमां वधारे आयुष्य एक' सांगरीयमनुं (सागरीयम माटे जूओ भ. बी. खं. पूर्व ३२२-३२५) होय छे, बीजीमां त्रण सागरोपमनुं, त्रीजीमां सात सागरोपमनुं, चोशीमां दश सागरोपमनुं, पांचमीमां सत्तर सागरोपमनुं, छहोमां बावीस सामरोपमर्नु अने सातमीमां तेत्रीश सागरोपमनुं क्धारेमां क्धारे आयुष्य छे. असंशी जीवो जो नरके जवाना होय तो पहेली नरकमां जाय, ए ज प्रमाणे भुजपरिसर्थे। (नोळिया वगेरे) बीजी नरक सुधी, पक्षिओ श्रीजी नरक सुधी, सिंहो चोथी नरक सुधी, उरपरिसर्थे। (नाम वगेरे) पांचमी नरक सुधी, कीओ ६ ही नरक सुधी अने मनुष्यो सातभी नरक सुधी जइ शके छे अर्थात् ए ए जीवोमां पापनी प्रकृष्टमां प्रकृष्ट परिणाम ते ते नरक सुबी पहोंचवा जेटलो होइ शके छे. नरकमांथी पाछा आवेला केटलाक तिर्शेच के मनुष्य थाय छे, पण फरीने तुरत ज पाछा नरकमां जता नथी. नरक-मांथी नीकळेला केटलाक मनुष्य थएला तीर्थंकर पण याय छे, पहेली नरकथी नीकळेलो जीव मुक्तिने पण मेळवी शके छे, बीजी चार नरकथी नीकळेलो जीव मात्र संयमने लाभी शके हे, हट्टीथी नीकळेलो जीव देश-संयमने मेळवी शके हे अने सातमीथी नीकळेलो जीव मात्र सम्यक्रवने पामी शके हे अर्थात् ए ए नरकमांथी नीकळ्या पछी प्राप्त थती तरतनी जींदगीमां ए ए जीवो एटलो एटलो ज विकास करी शके छे:--जुओ, तरवार्थसञ्ज अध्याय त्रीजी, सूत्र १-२-३-४-५ अने ६ (मेसाणा)

जेम उपर सात नरकीनां नामी जणाव्यां छे ते रीते निह तो बीजी रीते महार्षि पतंजिलजीए पण चीद भुवनीनी व्याख्या करतां आ सात महा-पाताळो जणाव्यां छेः "१ पाताळ, २ रसातळ, २ सहातळ, ४ तळातळ, ५ स्तुतळ, ६ वितळ अने अतळ " जुओ, पातंजलगोगदर्शन, विभूतिपाद-सू॰ २६ (नशुराम पार्मा) := द्वान इत्यार्दि अभिलार्ष वडे [' आऊ तेऊ वणस्सह ' ति] अप्काय, तेजस्काय अने वनस्पतिकाय ए बधा क्रिह्या, प्रयां क्रहेचा ? तो क्रिहे छे के, अप्काय कारेनी हयाती [' कण्डुराईसु ' ति] पहेलां कहेवाएला कृष्णसजिना सूत्रमां, अने अहीं ब्रह्मलोकनी उपरनां, स्थानोमां पाणी अने वनस्पतिनो निषेध जाणयो, कारण के, जे स्थानो पाणीने अने वायुने आयारे—आधारे—सहेलां छे तेओनी नीचे लागलो ज वायु छे अने जे स्थानो आकाराने आधारे रहेलां छे ते स्थानोनी नीचे पाष्ट्र आकार्य छे मूटे त्यां पाणी, अने वनस्पति संभवतां नथी तथा त्यां लाग अभिन पण नथी-होतो, कारण के, अग्वितं पोतानुं तो त्यां स्थान नथी.

आयुष्यनो बन्ध.

१५. प्र०-कैइविहे णं भंते ! आउयवंधए पन्नते ?

१५. उ०—गोयमा! छन्त्रिहे आउयवधे पनते, तं जहाः— जातिनामनिहत्ताउए, गतिनामनिहत्ताउए, छितिनामनिहत्ताउए, ओगाहणानामनिहत्ताउए, पएतनामनिहत्ताउए, अणुभागनाम-निहत्ताउए; दंखओ जाव-वेमाणियाणं.

१६. प्र०—जीवा णं मंते ! किं जाईनामनिहत्ता, जाव-अणुभागनामनिहत्ता ?

१६. उ० — गोयमा ! जातिनामनिहत्ता वि, जाव-अणुमा-गनामनिहत्ता वि; दंडओ जाव-वेमाणियाणं.

१७. प्र०—जीवा णं भेते ! किं जातिनामनिहत्ताउँया, जाव-अणुभागनामनिहत्ताउँया ?

१७. उ० — गोयमा ! जाइनामनिहत्ताउया वि, जाव-अणुभागनामनिहत्ताउया वि; दंडओ जाव-वेमाणियाणं; एवं एए दुवालस दंडग भाणियन्या.

१८.प्र०—जीना णं भंते। किं १ जातिनामिनहत्ता,२ जाइनाम-निहत्ताउया; जीना णं भंते! किं ३ जाइनामिन उत्ता, ४ जातिनाम-निउत्ताउया; ५ जाइगोय-निहत्ता, ६ जाइगोयनिहत्ताज्या; ७ जाति-गोयनिउत्ता, ८ जाइगोयनिउत्ताउया; ९ जाइणाम गोयनिहत्ता, १० जाइगामगोयनिहत्ताज्या; ११ जाइनामगोयनिउत्ता, जीना णं भंते! किं १२ जाइनामगोयनिउत्ताज्या; जाय-अणुभागनाम-गोयनिजताज्या ?

१८. उ०-—गोयमा ! जाइनामगोयित्रज्ञाउया वि, जाव--अणुभागनामगोयनिउचाउया वि; दंडओ जाव -वेमाणियाणं. १ १. प्र०—हे भगवन्! आयुष्यनो बंध केटला प्रकारनो कहा छे ?

१५. उ०—हे गौतम! आयुष्यनो वंध छ प्रकारनो व हो छे, ते जेमके, १ जातिनामनिधतायु, २ गतिनामनिधत्त यु, ३ स्थितिनामनिधत्तायु, ५ प्रदेशनाम-निधत्तायु अने ६ अनुभागनामनिधत्तायु, यावत् वैभानिको सुधी दंडक कहेनो.

१६. प्र०—हे भगवन् ! शुं जीवो जातिनामनिधत्त छे यावत् अनुभागनामनिधत्त छे !

१६. उ० — हे गौतम! जातिनामनिधत्त पण छे यावत् अ-नुभागनामनिधत्त पण छे, आ दंडक यावत् वैमानिक सुधी कहेवो.

१७. प्र०—है भगवन् ! हुं जीवो जातिनःमनिधत्तायुव छे यादत् अनुभागनामनिधतायुप छे ?

१७. उ० हे गौतम! जातिनामनिषतायुव पण छे यावत् अनुभागनामनिषतायुष पण छे, आ दंडक यावत् वैमानिको सुधी कहेवो, ए बार दंडक आ प्रमाणे कहेवा:—

१८. प्र०—हे भगवन्! जीवो शुं १ जानिनामनिवत्त छ, २ जातिनामनिधत्तायुष्क छे, ३ जातिनामनियुक्त छे, ४ जातिनामनियुक्त छे, ४ जातिनामनियुक्त छे, ४ जातिनामनियुक्त छे, ६ जातिगोत्रनिधक्त छे ६ जातिगोत्रनिधक्त छे, ६ जातिगोत्रनियुक्तायुष्क छे, ९ जातिनामगोत्रनिधत्तायुष्क छे, ९ जातिनामगोत्रनिधत्तायुष्क छे, ११ जातिनामगोत्रनियुक्त छे के १२ जातिनामगोत्रनियुक्तायुष्क छे यावत्-अनुभागनामगोत्रनियुक्तायुष्क छे?

१८. उ० — गौतम ! जातिनामगोत्रनियुक्तायुष्क पण छे, यावत् अनुम गनामगोत्रनियुक्तायुष्क पण छे, यावत् वैमानिक सुधी दंडक कहेवो.

१. मूलच्छायाः कितिविधी भगान् ! आयुर्वन्यकः प्रज्ञाः ? गौतम ! वहवित्र आयुर्वन्यः प्रज्ञाः, तद्यथाः जातिनामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्तापुः, अवगान्तामनिधत्ताः, अपि, यावत् अनुभागनामनिधत्तः, अपि, यावत् अनुभागनामनिधत्तः, श्रीतम ! आतिनामनिधत्तापुः अपि, यावत् अनुभागनामनिधत्तः, प्रत्य ! कातिनामनिधत्तः प्रयुष्कः अपि, यावत् अनुभागनामनिधत्तः प्रवृष्कः अपि; दण्डको यावत् वैमानिकानः मः , एवम् एते द्वादश्च दण्यकः भणितव्याः, जीवा भगान् । कि जातिनामनिधत्तः, जातिनामनियुक्तः । जातिनामनेवियुक्तः । अपि, यावत्-अनुभगननामनेवियुक्तः । अपि । वावत्-वियान्तः । वावत्-वयान्तः । वावत्वयः । ववत्वयः । ववत्

२. अनन्तरं बादराप्कायादयोऽभिहिताः, ते चाऽऽयुर्बन्धे सति भवन्ति-इत्यायुर्बन्धसूत्रम्, तत्रः- जातिनामनिहत्ताउए ' ति ज.ति:-एकेन्द्रियजात्यादिः पश्चधा, सैव ' नाम ' इति नामकर्मण उत्तरपञ्चतिविशेषः, जीवपरिणामो वा; तेन सह निधत्तं निषिक्तं वद् अखुस्तजातिनामनिधत्ताऽऽयुः; निषेक्षश्च कर्मपुद्गलानां प्रतिसमयमनुमवनार्थं रचना-इति. ' गातिनामनिधताउए ' ति गतिनीरकादिका चतुर्घा, शेषं तथैव. ' विश्नामानिधत्ताउए ' ति स्थितिरिति यत् स्थातव्यं ववचिद् विवक्षितभवे जीवेन, आयुःकर्मणा वाः सैव नामः--परिणामो धर्मः स्थितिनामः, तेन विशिष्टं निधत्तं यदाऽऽयुद्छिकरूपं तत् स्थितिनामनिधत्ताऽयुः अथवा इह सूत्रे जातिनाम गतिनामाऽ-वगाहनानामप्रहणाजाति-गत्य-वगाहनानां प्रकृतिमात्रभुत्तम् . स्थिति-प्रदेशा उनुमागनामप्रहणात् तु तासामेव स्थित्यादय उक्तः, ते च जात्यादिनामसंबन्धित्वाद् नामकर्मरूपा एव-इति नामशब्दः सर्वत्र कमीथी घटते इति-स्थितिरूपं नामकर्म स्थितिनाम; तेन सह निवत्तं यद् आयुस्तत् स्थितिनामनिधत्ताऽऽयुरिति. ' ओणाहणानामानिहत्ताउए ' ति अवगाहते यस्यां जीतः सा अवगाहना-शरीरम् औदारिकादि, तस्या नाम औदारिकादिश्वरीरनामकर्म-इत्यवगाहनानाम, अत्रगाहनारूपो या नामः परिणामोऽनगाहनानामः, तेन सह यनिधत्तमायुस्तद् अवगाहनानामनिधत्तायु: ' पएसनामनिघत्ताउए' ति प्रदेशानाम् आयु:कर्मद्रव्याणां नामः तथाविधा परिणतिः प्रदेशनामः, प्रदेशरू रे बा नाम-वर्मविशेष: इत्यर्थ:-प्रदेशनाम; तेन सह निधत्तमायु:-तत् प्रदेशनामनिधत्तायुः इति. 'अणुमागनामनिधताउए' ति अनुभागः आयुर्द-व्याणामेव विपातः-तलक्षण एव नामः परिणामः अनुभागनामः, अनुभागरूपं वा नामकर्म अनुभागनाम, तेन सह निधत्तं यद् आयुस्तदनुभा-मनामनिधत्तायुरिति. अथ किमर्थ जात्यादिनामकर्मणा अग्युर्विशेष्यते ? उच्यते:-अन्युष्कस्य प्राधानगेपदर्शनार्थम्, यसान्द् नारकाच युरुदये सति जात्यादिनामकर्मणामुद्यो भवति, नारकादिभवीपप्राहकं चाऽऽग्ररेच. यस्मादुक्तमिहैयः-'नेरइर् णं भंते! नेरइएसु उववज्जइ, अनेरइए नेरइयेसु उवनज्जह १ गोयमा ! नेरइए नेरइएसु उवनज्जह, नो अनेरइए नेरइएसु उवनज्जह र सि. ९तदुक्तं भवतिः—नारकाऽऽयुःप्रथमः समयसंवेदन एव नारका उच्चन्ते, तत्सहचारिणां च पर्वन्दियजालादिनामकर्मणामप्युदय इति. इह चाऽऽयुर्वेन्धस्य षड्विधिले उपक्षिते यद् आयुषः पङ्विधित्वम् उक्तम् , तदाऽऽयुषो बन्धाऽव्यक्तिरेकाद्-बद्धस्यैव चाऽऽयुर्व्यपदेशविषपत्वादिति. ' दंडओ ' ति ' नेरह्याणं मंते ? कर्रावहे आउयबन्धे पत्रते ! ? इत्यादिवैमानिकान्तश्चतुर्विशतिदण्डको वाच्यः, अत एवाहः—'जाव-वेमाणियाणं ति. अथ क्षमीविशेषाऽधिकारात् तद्विशेषितानां जीवादिपदानां द्वादश दण्डकानाहः-' जीवा णं भते' इत्यादि. ' जातिनामानिहत्त ' ति जातिनाम निधत्तं निषिक्तम् , विशिष्टबन्धं वा कृतं यैस्ते जातिनामनिधताः. एतं गतिनामनिधताः. यायत् - करणात् ' ठितिनामनिहत्ता, ओगाहणानामनिहत्ता, पएसनामनिहत्ता, अणुभागनामनिहत्ता ' इति दश्यम् , व्याख्या तथैत्र, नवरम्:— जात्मदिनाम्नां या स्थितिः, ये च प्रदेशःः, यथाऽनुमागस्तत् स्थित्वादिनाम---अवगाहनानाम---शरीरनाम--इति अयमेको दण्डको वैमानिकान्तः, तथा ' जातिनामानिहत्ताज्य ' ति जातिनाम्ना सह निधत्तनायुर्वैस्ते जातिनामनिधत्ताऽऽयुपः, एवमन्यान्यपि एदानि; अवमन्दो दण्डक:. 'एवमेते दुवालसदंडग ' ति अमुना प्रकारेण द्वादश दण्डका भवन्ति, तत्र द्वौ आद्यौ द्शितावि संख्यापूरणार्थे पुनर्दर्शवातिः — जातिनामनिषसा १ इत्यादिरेकाः, ' ज इन.मानिषसाउया १ इत्यादि द्वितीयः, ' जीवा णं भंते ! किं जाइनःमनिउत्ता ' इत्यादिस्तृतीयः, तत्र जातिनाम नियुक्तं नितरां युक्तं संबद्धं निकाचितम्, वेदने वा नियुक्तं यैस्ते जातिनामनियुक्ताः, एवमन्यान्यपि. ' *जाइनामनिजताजया* ' इत्यादिश्वतुर्थः, तत्र जातिनाम्ना सह नियुक्तं निकाचितम् , वेदियतुमारम्थं वा आर्युर्वेस्ते तथा, एवमन्यान्यवि. 'जाइगोयनिहत्ता ' इत्यादिः पश्चमः, तत्र जातिः-एकेन्द्रियादिकाया, यदुचितं गोत्रम्, नीचैगीत्रादि तज्जितिगोत्रम्; तिन्यतं यैस्ते जातिगोत्रनिधताः; एवमन्यान्यपि. ' जाइगोयानिहत्ताउया ' इत्यादिः पष्टः, तत्र जातिगोत्रेण सह निधत्तमायुर्देस्ते जातिगोत्रनिधत्ताऽऽयुपः, एवमन्यान्यति. 'जाइगोयानिजता ' इसादिः सत्तमः, तत्र जातिगोत्रं नियुक्तं यैस्ते तथा; एवमन्यान्यपि. 'जाइगोयनिउत्ताउया ' इत्यादिरष्टमः, तत्र जातिगोत्रेण सह नियुक्तमायुर्येस्ते तथा; एवमन्यान्यि. ' जातिनामगोयानिहत्ता ' इत्यादिनेवमः, तत्र जातिनाम, गोत्रं च निधतं यैस्ते तथाः एवमन्यान्यिः ' जीवा णं मंते ' कि आइनाम-गोयानिहत्ताउया ? ' इत्यादिर्देशमः, तत्र जातिनाम्ना, गोत्रेण च सह निधत्तमार्युर्वस्ते तथः; एवमन्यान्यपि. ' जाइनामगोयानिडता ' इस दिरेकादद्याः, तत्र जातिनाम, गोत्रं च नियुक्तं दैस्ते तथा; एवमन्यान्थिः ' जीवा णं मंते ! किं जाइनाम गोयानि उत्ताखया ' इसादिद्वादशः, तत्र जातिनाम्ना, गोत्रेण च सह नियुक्तमायुर्वेस्ते तथा, एत्रमन्यान्यपि. इह च जात्यादिनाम-गोत्रशेः, अञ्चपश्च भवोपप्राहे प्राधान्यस्यापनार्थं यथायोगं जीवा विशेषिताः; वाचानान्तरे आधा एवाऽशै दण्डका द्दयन्ते इति.

२. हमणां बादर अध्काय वगेरे कहा, तेओ, आयुष्यनो बंध थाय त्यारे ज होई शके छे माटे हवे आयुष्यना बंध संबंधी सुत्र कहे छे, तेमां जाति. ['जाइ—नामनिहत्ताउए 'त्ति] जाति एटले एकेंद्रियादि पांच प्रकारनी जाति, तेस्त्र ज जे ['नाम 'इति] नाम ते जातिनाम, जातिनाम, जातिनाम, ए नामकर्मनी एक प्रकारनी उत्तर प्रकृति छे अथवा एक प्रकारनो जीवनो परिणाम छे, तेनी साथे निवत्त—निविक्त- निवेकने—प्राप्त- जे आयु ते 'जातिनामनिधत्तायु ' कहेवाय अने शतिसमये अनुभववा माटे कर्म पुद्रलोनी च रचना ते निवेक कहेवाय. ['गइनामनिधत्ताउए 'ति] गति एटले नैश्यिक बगेरे चार प्रकारनी गति, बाकीनी व्युत्पत्ति पूर्वनी पेटे ज जाणवी. ['टिइनामनिधताउए 'ति] कोइ पण एक थिवक्षित- सिशति. अगुक्त-भवमां जीवनुं रहेवुं वा कर्मवेड रहेवुं ते रिथति कहेवाय, तेस्त्य वे नाम—एटले परिणाम—वर्ग- तद्विशिष्ट—ते सहित—वे दलिकस्प निधत्त आयु ते स्थितिनामनिधत्तायु कहेवाय, अथवा आ सूचमां जाति नामनुं, गति नामनुं, अने अवगाहना नामनुं ग्रहण करवाथी जातिनीं, गतिनी

१. जूओ भगवती सूत्र, खंड वी ने (पूर २७५—२७८):-अद्भुर

अने अवगाहनानी मात्र प्रकृति कही है अने स्थितिनुं, प्रदेशनुं तथा अनुमागनुं प्रहण होवाथी तेओनी ज स्थिति यंगरे कही छे, ते स्थिति वंगरे जालादिनामनी संबंधी होवाथी नाम-कर्मरूप ज कहेवाय माटे बधे स्थळे कर्म अर्थशाळी ' नाम ' राज्द घटे हो, तेथी स्थितिरूप नाम कर्म ते स्थितिनाम, तेनी साथे निधत्त ने आयु ते स्थितिनाम निधत्तायु कहेवायः [' ओगाइणानामनिइताउ ' ति] नेमां जीव अवगाहे ते अवगाहना अवगाइना. एटले औदारिक वंगरे शरीर, तेनुं नाम एटले (ते औदारिकादि शरीर नाम कर्म-) ते अवमाहना नाम अथवा अवगाहनारूप जे नाम एटले परिणाम ते अवगाहनानाम, तेनी साथे जै निधत्त आयु ते अवगाहनानाम निधत्तायुः [' पर्सनामनिधत्ताउए ' ति] प्रदेशोनुं एटले आयुष्कर्मना प्रदेश. द्रध्योनं तेवा प्रकारनं जे नाम-परिणमन ते प्रदेशनाम अथवा प्रदेशरूप जे एक प्रकारनं नामकर्म ते प्रदेशनाम, तेनी साथे निधत्त जे आयु ते प्रदेशनामनिश्वत्तायुः ['अणुभागनामनिश्वताउए 'ति] अनुभाग एटले आसुष्कर्मनाः द्रव्योरो विशक, तेरूप ज जे नाम एटले परिणाम ते अनुसन्। अनुभागनाम अथवा अनुभागरूप जे नामकर्भ ते अनुभागनाम, तेनी साथे निषत्त जे आयु ते। अनुभागनामनिष्ठतायु, शं०-आयुष्यने जात्यादिनाम। शंकाः कर्मवेडे द्या माटे विशेषित करो हो १ स्ना०-आयुक्कनी प्रधानता दर्शात्रया माटे ज अहीं आयुप्ते विशेष्य राखीए छीए अने जात्यादि नामने समाधान. तेना विशेषण रूपे वापरीए छीए, अहीं आयुष्यनी प्रधानता दर्शापत्रानुं कारण ए छे के, नारकादि आयुष्नो उदय ध.य. त्यारे ज जात्यादि नामकर्मीनो उद्य थाय छे अने एकछं आयुकर्प ज नैरिकादिना भवनु उपग्राहक होय छे, आ ज हकीकतने आ प्रयेगां आगळ आ प्रकार जणोबली छे। '' हे भगवन् ! नैरियक, नैरियकोमां उपजे छे ? के अनैरियक नैरियकोमां उपजे छे ? हे गौतम ! जे नैरियक होय ते ज नैरियकोगां करियक. उपने छे पण अनैरियिक, नैरियकमां उपजतो नथी. '' आउं तालर्य आ छे के, नैरियक संबंधी आयुष्यन संवेदबाना प्रथम सभये ज संवेदन करनारा ते ते जीवो-जेजो हुज नरकने पंथे पडेला छे-नरियको कहेवाय छे, अंग ए संवेदन समय ते नैरियक आयुष्यना सहचर पंचित्रिय जात्यादि नामकर्मीनो पण उदय धइ जाय है, अहीं मूळमां प्रश्नकारे आयुष्ना बंघना छ प्रकार संबंध पूछत्र है तो पण उत्तरकार जे आयुष्ना छ प्रकार कहा। आयुष्न अने तनी बंध छे, तेनुं कारण मात्र ए ज के, आयुष अने बंध ए बन्ने बचे अध्यतिरेक-अमेद-छे एटंड ए वे वचे अहीं भेदमावने करूपी नथी अने बंधा छे होय तो ज ' आयुष् ' ए प्रमाणे व्यवहार थतो होवाथी ' आयुष् ' शब्दना भावनी साथे ज ' बंध ' नो पण भाव भळलो छे. [' दंडओ ' ति] " हे भगवन् ! नेरियकोने केटलापकारनो आयुषबंध कछो छे ? '' ए रीते नैरियकथी मांडी येमानिक सुधी चोत्रीश दंडक कहेवाना छे, माटे ज चोबीश दंडक. कहें छे के, ['आव बेमाणियाणं' ति] अहीं एक प्रकारना कर्मनी अधिकार होवाधी ते कर्मधी विशेषित थएला जीवादिपदोना बार दंडकोने बार दंडकः हवे कहे छे:-['जीवा र्ण भंते ' इत्यादि.] ['जातिनामनिहत 'ति] जिओए जातिनाम निषिक्त कर्युं छे या विशिष्ट बंधबाळुं कर्ट्स छे ते ⁴ जातिनामनिधत्त ⁷ कहेवाय, ए प्रमाणे गतिनामनिधत्त, यावत् करवाथी ⁴ रिथतिनामनिधत्त, अवगाहनानामनिधत्त, प्रदेशनामनिधत् अने अनुभागनामनिधत ' एटलुं अधिक जाणवुं अने तेनी व्याख्या पण तेम ज जाणवी, विशेष ए के, जात्यादि नामोनी जे स्थिति, जे प्रदेशो तथा जे अनुमान ते स्थित्यादिनामः अवसाहनानाम अने सरीरनाम, आ एक दंडक वैमानिको सुत्री जाणवो, तथा ['जातिनामनिहत्ताउय ' चि 🗍 प्रथमः जेओए जातिनाम साथे आयुने निधर्त कर्यु छे ते जातिनामनिधक्तायुष कहेबाय, ए प्रमाणे भीजां परो पण जाणी टेवां, आ बीजो दंडकर [' एव-मेते दवालस दंडम ' ति] आ प्रकारे ए बार दंडक थाय छे, तेमा प्रथमना वे दंडक दर्शाच्या छे तो पण संख्यापूर्ति माटे तेने फरीथी पण अहीं दुर्शावे छे: [' जातिनामनियत्ता ' इत्यादिः] एक दंडक, [' जाइनामनिधचाउया ' इत्यादि] बीजो, ' हे भगवन् ! जीवो छु जातिनाम-नियुक्त आयुषवाळा छे १ ' इत्यादि त्रीजो, जातिनामनियुक्त एउले जेलोए जातिनामने नियुक्त-संबद्ध-फर्यु- छे, निकाचित कर्यु छे अथवा हरीय. बेदबामां नियोज्युं के ते ' जातिनामनियुक्त '–ए प्रमाणे बीजां ६दो एण जाणवां, [' जाइनामनिउत्ताउया ' इत्यादि] चोघो, तेमां जेओए चलुक जातिनामनी साथे आयु न संबद्ध कर्यु छे, निकासित कर्यु छे अथवा बेदवु शरु कर्यु छ ते ' जातिनामनियुक्तायु ' कहेवाय, ए प्रमाग थीजां प्रग पदो जाणी लेयां [' जाइनोथनिहत्ता ' इत्यादि] पांचरो, तेमां जाति एरले एकेंद्रियादिकायने लगती जाति अने नोत्र एरले ते एकेंद्रियादि पचग-जातिने उचित नीच गोत्र वंगरे; ते जाति अने गोत्र जेओए निधत्त कर्युं छे ते ' जातिगोत्रनिधत्त ' वहंदाय, ए प्रमाण बीजां १ण पदो जाणी लेबां. [' जाइमोयनिइचाउया ' इत्यादि] छट्टो, तेमां, जातिगोत्रनी साथे जेओए आयुने निधत्त कर्ये छे ते ' जातिगोत्रनिपचायुष ' बहेदाय, एम अन्यपदो पण जाणवां. ['जाइगोयनिउला 'इत्यादि] सातमो, तेमां जेओए जाति अने गोत्रने नियुक्त कर्युं छ तेओ ' जातिगोवनियुक्त ' कहेवाय, ए प्रमाण बीजां पण पदो जाणी ठेवां. ['जाइगोयनिउत्ताउया ' इत्यादि] आठगो, तेमां जंजोए जाति अने गोत्रनी साथे आयुपन अप्टन. नियुक्त कर्युं छे ते ' जातिगोत्रनियुक्तायुष ' केह्वाय, एम बीजां पण पदो जाणवां. [' जाइनामगोयनिहत्ता ' इत्यादि] नदमो, तेमां भेञोए 🗝 नवन. जातिनाम अने गोत्रने निधत्त वर्षु छ ते 'जातिनामगोत्रनियत्त 'कहेबाय, 'ए प्रमाणे बीजां पण पदो जाणी छेवां 'हें भगवन् ! छुं जीवो जातिनामगोत्रनिधत्तायु छ १ ' इत्यादि द् हो, तेमां वेओए जातिनाम अने मोत्रनी साथे आयुने निधत्त कर्युं छ तेओ 'जातिनामगोत्र- दशमः निधत्तायुष ' कहंत्राय, ए प्रमाणे बीजां एण जाणवां. ['जाइनामगोयनिउत्ता ' इत्यादि] अग्यारमो, तेमां जेओए जातिनाम अने गोत्रने पदादशतमः निवक्त कर्युं छे ते ' जार्दिनामगोत्रनियुक्त ' कहेशय, ए अमाण वीजां एण जाणवां, ' हे भगवन् ! जीवो ज्ञुं जादिनामगोत्रनियुक्तायुष्क हे?' इत्यादि बारमी दंडक, तेमां जेजीए जातिनाम अने गोत्रनी साथ आदुष्कने नियुक्त कर्यु छे तेओ जातिनामगोत्रनियुक्तावुष्क ' कहेवाय, दादरुतम. ए प्रमाणे बीजां पण जाणवां, अहिं जात्यादि, नामनुं अने मोत्रनुं तथा आसुम्बनुं; भवना उपग्रहमां प्रधानवणुं जणावना माटे यथायोग बीबोने विशेषित कर्या छे. बीजी वाचनामां तो एथमना आउ दंडको ज देखाय छे.

लवण समुद्र-

१९. प्र०—है वर्ण ण भंते ! समुद्दे कि उमिओदए, पत्थ- १९. प्र०—हे भगवन् ! जुं लवणसमुद्र उच्छळता पाणी वाळो छे, समजळवाळो छे, क्षुच्घपाणीवाळो छे के अशुच्धपाणी होदए; खुभियजले, अलुभियजले ? वाळी छे ?

बीजी दाचनाः

र. जुओ भगवतीसूत्र, एंड बीजो (ए॰ १३३—१३४): अनु०

१. पूलच्छायाः--लवणो भगवन् ! समुद्रः किष् उच्छिनोदकः, प्रस्तुतोदकः क्षुच्यजलः, अक्षुच्यजलः-अनुव

१२. उ०—गीयमा! लवणे णं समुद्दे उसिओदए, नो पत्थ-होदए; खुभियजले नो अखुभियजले; एतो आढतं नहा जीवा-भिगमे; नाव-से तेण गोयमा! बाहिरिया णं दीव-समुद्दा पुत्रा, पुत्रप्यमाणा, बोल्डमाणा, बोस्डमाणा, समभरधन्ताए विद्वंति; संठाणओ एगविहंविहाणा, वित्थारओ अणेगविहिविहाणा; दुगुणा, दुगुणप्यमाणाओ, जाव-असि तिरियलोए असंखेजा दीव-समुद्दा सयंभूरमणपञ्चवसाणा पत्रता समणाउसो!

२०. प्र०-दीव-समुद्दा णं भंते ! केवातिया नामधेज्ञेहिं पत्रता ?

२०. उ॰—गोयमा! जावतिया लोए सुभा नामा, सुभा रूवा, सुभा गंधा, सुभा रसा, सुभा फासा एवतिया णं दीव-समुद्दा नामधेजोहिं पत्रत्ता; एवं नेयव्वा सुभा नामा, उद्धारो, परिणामो सव्वजीवाणं.

-सेवं भंते !, सेवं भंते ! ति

१९. उ०—हे गौतम! लवणसमुद्र उच्छळता पाणीवाळी छे पण समजळवाळो नथी अने क्षुच्यपाणिवाळो छे पण अक्षुच्य पाणी वाळो नथी, अहिंथी शरु करी जेम जीवामिगम सूत्रमां कड्डं छे तेम जाणवुं यावत् ते हेतुथी हे गौतम! बहारना समुद्रो पूर्ण, पूर्णप्रमाणवाळा, वोल्ड्टता, छल्कता अने समभर घटपणे रहे छे, संस्थानथा एक प्रकारना खरूपवाळा छे, विस्तारथी अनेक प्रकारना खरूपवाळा छे, विस्तारथी अनेक प्रकारना खरूपवाळा छे, दिसुण, दिगुण प्रमाण यावत् आ तिर्थरलोकमां असंख्येय द्वीप समुद्रो, स्वयंभूरमण समुद्रना अवसान—छेडा—वाळा, हे अमणायुष्यम् ! कह्या छे.

२०. प्र०—हे भगवन् ! द्वीपोनां अने समुद्रोनां केटलां नाम-धेय कह्यां छे ?

२०. ८०—हे गौतम! छोकमां जेटलां शुभ नाम, शुभ रूप, शुभ गंत्र, शुभ रस अने शुभ स्पर्श छे एटल, द्वापीनां अने समुद्रोनां नाम कह्यां छे, ए प्रमाणे शुभ नामो जाणवां, उद्धार जाणवो, परिणाम जाणवो अने सर्व जीवोनो द्वीपोमां अने समुद्रोमां उत्पाद जाणवो.

—हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन् ! ते ए प्रमाणे छे (एम कही यावत् विचरे छे.)

भगवंत-अज्ञसहस्मसामिपणीए सिरीभगवईसुले छहसये अहुमो उदेसो सम्मलो.

३. पूर्व जीवा; स्वधर्मतः प्रह्मिताः, अथ ज्यणसमुद्रं स्वध्मेत एव प्रह्मप्यम्नाहः— 'ल्वणे णं ' इसादि. ' जिस्सओदण् ? ति उच्छितोदकः उध्यै बृद्धिगतज्ञः, तृबृद्धिश्व साधिकषोडशयोजनसहस्राणि. ' पत्यक्षोदण् ' ति प्रस्तृतोदकः—समजल इस्पर्थः ' सुभियजले ' ति वेठावशात् , वेठा च महापातालकल्झगतवायुक्षोभितिः. 'एतो आढतं ' इसादि. इतः स्मादात्व्यम्, त्र्वया जीवाभिगमे तथाऽध्येतव्यम्. त्रेवदमः ' जहा णं भंते ! लवणसमुद्दे ज्ञासिओदण्, नो पत्यक्षोदण्; सुभियजले, नो असुभियजले; तहा णं वाहिरगा समुद्दा कि जिस्सओदगा ? गोयमा ! वाहिरगा समुद्दा नो जिस्सओदण्, प्रथायि णं भंते ! लवणसमुद्दे वहवे उराला वलाह्या संसेपंति, संमुच्छाति, वासं वासाति ? हंता, अत्थि. जहा णं भंते ! लवणे समुद्दे वहवे उराला वलाह्या संसेपंति, संमुच्छाति, वासं वासाति ? हंता, अत्थि. जहा णं भंते ! लवणे समुद्दे वहवे उराला वलाह्या संसेपंति, संमुच्छाति, वासं वासाति ? हंता, अत्थि. जहा णं भंते ! लवणे समुद्दे वहवे उराला, तहा णं वाहिरसु वि लमुद्देसु जराला ? णां इणद्वे समद्वे. से केणद्वेणं मंते ! एवं बुच्चः-वाहिरगा णं समुद्दा पुचा, जाव—घडताए चिद्वाति ? गोयमा ! वाहिरएषु णं समुद्देसु वहवे उदराजोणीया जीवा य, पे।गणला य जदगत्ताए वक्कमंति, विजक्रमंति चयाति, उववज्ञांति ? शेर्य तु लिखितमेवास्ते, व्यक्तं वेदमिति . संठाणओ ' इत्यादि . एवेन विध्वा प्रकारेण चक्रवाललक्ष्योन विधानं सम्हप्तय करंगं येपां ते एकविविविधानाः, विस्तारतोऽने किविधिविधानाः; कुतः? इत्यादः — 'दुगुण' इत्यादि . इत्य यादत्रस्तरणाद् इदं दश्यम् ' पिविश्वरमाणा पवित्यरमाणा चहुजपल-पजम-सुमुय-नालिण-सुमग-सोगिधिय-पुंदरीय-महापुंदरीय-सयपत्त-सहस्यपत्त-केसर-पृत्तोवद्या ' उत्पादीनं केदरैः, पुक्तेथापेता इसर्थः ' उत्पादमाणविद्य' ति . 'सुमा नाम ' ति स्विक्त-श्रीक्तादिने, 'सुमा रस्वरं ति शुक्ल-पीतादीने, देवादीनि वा. 'सुमा गंध ' ति सुर्गिगन्धमेदाः, गन्धवन्तो वा कर्युरादयः. 'सुमा नाम ' ति एवमिति द्वीप —

१. मूलच्छायाः— गौतम ! छवणः समुद्र उच्छितोदकः, न प्रस्तृतोदकः, शुङ्धज्ञछः, न अशुःधज्ञछः; इत आरङ्भम् यथा जीवाभिगमे, यावत् –तत् तेन गौतम ! वाछा दीप-समुद्राः पूर्णाः, पूर्णप्रमाणाः, व्यवलोट्यमानाः, विकासमानाः, समभ घटतया तिष्ठन्तिः, संस्थानत एकविधविधानाः, विस्तारतोऽनेकविधविधानाः; दिगुणाः, द्विगणप्रमाणाः, यावत्—अरिमन् तिर्यग्छोके असंस्थेया द्वीप-समुद्राः स्वयंभूरमणपर्थवसानाः प्रइप्ताः श्रमणायुष्मन् ! द्वीप-समुद्राः मगवन् ! कियन्तो नामधेयैः प्रइप्ताः ? गौतम ! यावग्ति लोके श्रुभानि नामानि, श्रुभानि स्वाणि, श्रुभा गन्धाः, श्रुभा रसाः, श्रुभा रसाः, श्रुभाः स्पर्वाः—एतावन्तो द्वीप-समुद्रा नामधेयैः प्रइप्ताः; एवं झातव्यानि श्रुभानि नामानि, उद्धारः, परिणामः सर्वजीवानाम् सदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! हितः—शद्यः

समुद्राडभिघायकतया नेतव्यानि शुभनामानि पूर्वोक्तानि. तथा ' उदारो ' ति द्वीप-समुद्रेषु उद्धारो नेतव्यः. स च एवम्:--दीव-समुद्दा णं भंते ! केवइया उद्धारसमएणं पत्रत्ता ? गोयमा !जावइया अड्डाइजाणं उद्धारसागरीयमाणं उद्धारसमया, एवइया दीव-समुद्दा उद्धारसमएणं पत्रता. 'येन एकैकेन समयेन एकैकं बालाग्रमुद्भियतेऽसौ उद्धारसमयः, अतस्तेन. तथा 'परिणामो 'ासे परिणामो नेतव्यः द्वीप-समुद्रेष्ठ, स च एउम्:-' दीव-समुद्दा णं भंते । भिं पुढविपरिणामा, आउपरिणामा, जीवपरिणामा, पोग्गलपरिणामा? गोयमा ! पुढिविपरिणामा वि. ' इत्यादि. तथा ' सन्वजीवाणं ' ति सर्वजीवानां द्वीप-समुद्रेषु उत्पादो नेतत्यः, स चैवम्:-दीव-समुद्देमु णं भंते ! सन्त्रे पाणा, मूआ, जीआ, सत्ता पुढाविकाइयत्ताए, जाव-तसकाइयत्ताए उववचपुट्या ? हंता, गोयमा ! असइं, अदुवा अणंतखुत्तो ' त्ति.

भगवरमुधर्मखामिप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे षष्ठशते अष्टम उद्देशके श्रीअभवदेवसूरिवरचितं विवरणं समाप्तम्,

३. पूर्वे जीबोनुं प्ररूपण स्वधर्मधी-पोताना धर्मथी-कर्यु छे, हवे ए स्वधर्मथी ज छवण समुद्रने प्ररूपता कहे छे: [' छवणे णं ' इत्यादि.] छवण समुद्रनुं [' उस्तिओदए ' ति] उच्छितोदक—ऊर्घ्व युद्धिपाप्त पाणीयाळो-छलकतो, ते लवण समुद्रनी जलयुद्धि अधिकता साथे १६००० योजन छे. उच्छळतुं पाणी. ['पत्थडोदए' ति] प्रस्तृतोदक—समजलवाळो, ['सुभिअजले' ति] वेला-वेळ-ना आववाथी लवण समुद्र शुरूपपाणीवाळो हे. अने तेमां ए वेळ तो महापाताळकलशमां रहेला वायुना क्षोभथी आवे छे. ['एतो आढत्तं 'इत्यादि.] आ सूत्रथी मांडीने जम ' जीवाँभिगम ' सूत्रमां जीवाशियम. कक्षुं हे तेम ते जाणतुं, ते आ है:-हे भगवन् ! जेम लवण समुद्र उद्यवता उदकवाळी हे पण समजल नथी अने क्षुत्रधजलवाळी हे पण अक्षुब्ध-जळवाळो नथी तेम बहारना समुद्रो शुं उच्छळता जळवाळा छे ? समजळ्वाळा छे ?; क्षुव्थपाणीवाळा छे ? के अक्षुव्य पाणीवाळा छे ?, हे गौतम ! बहारना समुद्रो उच्छळता वाणीवाळा नथी पण समजळवाळा छे अने क्षुव्यजळवाळा नथी पण अक्षुव्यजलवाळा छे. पूर्ण, पृष्वप्रमाण, बोलप्टमान, बोसप्टमान अने समभर घटपणे रहे छे. हे भगवन् ! लवण समुद्रमां घणा मोटा मेघो संस्वेदे छे, संमूछें छे अने वर्षण वर्षे छ ३, हा, (गौतम !) तेम थाय छे; हे भगवन् ! जेम छवण समुद्रमां घणा मोटा मेघो छे तेम बहारना समुद्रोमां पण मोटा मेघो छे १, (हे गौतम !) आ बहारना समुद्रो. अर्थ समर्थ नथी, हे भगवन ! तं क्या हतुथी एम कही छो के, बहारना समुद्रो पूर्व यावत् समभर घटपण रहे छे ?, हे गौतम ! बाहिरना समुद्रोमां घणा उदकयोनिक जीवो अने पुद्रलो उदकपणे अपक्रम है, व्युक्तम है, च्यवे है, अने उत्पन्न थाय है " बाकीनुं तो लखेलुं ज है, अने आ बधुं स्पष्ट छे. ['संठाणओ 'इत्यादि.] जेओनुं स्वरूप-विधान-एक चक्रवारुरूपे छे ते 'एकविधविधान 'कहेवाय, ए समुद्रो विस्तारथी चक्रवारू. अनेक प्रकारना स्वरूपवाळा छे, शाथी छे ? तो कहे छे के: [' दुगुण-इत्यादि.] अहिं यावत्-शब्द मूकवाथी अधिक पाठ आ प्रमाणे जाणवी:- द्विगुण-'' ए समुद्रो प्रविस्तरता प्रविस्तरता छे, घणां उत्पल, पम्न, कुमुद, निलन, सुंदर अने सुगंधिवाळा पुंडरीक महापुंडरीक, शतपत्र अने सहस्रपत्रना केसरोवडे अन फुहोबेडे उपनेत छे अर्थात् उत्पर्टादिना केसरोवडे अने फुहोबेडे ते समुद्रो युक्त छे, ['उब्मासमाणवीइय' ति] अर्थात् ए समुद्रोना तरंगो-वीचिओ--अवभासमान छे, ['सुमा नाम 'ति] खिलक अने श्रीवत्स वगेरे सुंदर शब्दो, ['सुमा रूव 'ति] शुक्क अने शुभ नाम-रूप, पीत बंगेरे सुंदर रूपना सूचक शब्दो, अथवा देवादिना सुंदर रूप वाचक शब्दो, [' सुभा गंघ ' ति] सुर्राम-सारा गंधना वाचक शब्दो अथवा सारा गंधवाळा कपृर बेगेरे पदार्थोना वाचक शब्दो [' सुमा रस ' ति] मधुर-गळ्यो-बेगेरे रसना सूचक शब्दो अथवा साकर बेगेरे रसवाळा र्पदार्थीना वासक शब्दो, ['सुभा फास 'त्ति] अने मृदु-पोचो-वंगरे स्पर्शीना सूचक शब्दो अथवा मृदु स्पर्शवाळा नवनीत वंगेरे पदार्थीना वाचक शब्दो समुद्रोनां नाम तरीके वपराय छे अर्थात् संसारमां जेटलां सारां सारां नामो छे ते बघांनी उपयोग समुद्रोनां नाम तरीके थाय छे. ['एवं नेयव्वा सुभा नाम 'त्ति] ए प्रमाणे ए वधां पूर्वोक्त शुभ नामोने द्वीपनां अने समुद्रनां वाचकपणे जाणवां तथा, ['उद्धारो 'त्ति] उद्धार. द्वीपोमां अने समुद्रोमां उद्धार लेवो-कहेवो,-ते उद्धार आ प्रमाणे लेः-हे भगवन्! द्वीपो अने समुद्रो ब्द्वार समयवंड केटला कक्षा छे?, हे गौतम! अड्डी उद्धार सागरोपमना जेटला उद्धारसमयो थाय एटला द्वीपो अने समुद्रो उद्धार समयवंडे कह्या छे. " जे एक एक समये एक एक वाळनो अग्रभाग उद्धराय-बहार कढाय ते समय उद्धार समय कहेवाय, ते वडे, तथा, ['परिणामो 'त्ति] द्वीपोमां अने समुद्रोमां परिणाम जाणवो, परिणाम. ते आ प्रमाणे छे:-'' हे भगवन् ! द्वीपो अने समुद्रो छुं पृथिवीना परिणामवाळा छे ? पाणीना परिणामवाळा छे ? जीवना परिणामवाळा छे ? के पुद्रलना परिणामवाळा छे ? हे गौतम । पृथिवीना परिणामवाळा पण छे, इत्यादि, तथा ['सव्यजीवाणं' ति] द्वीपोमां अने समुद्रोमां सर्वजीवोनो उत्पाद कहेवो, ते आ प्रमाणे छः-" हे भगवन् ! द्वीपोमां अने समुद्रोमां सर्व प्राणो, भूतो, सत्त्वो अने जीवो पृथिवीकायिकपणे यावत्- उत्पाद. त्रसकाविकपणे पूर्वे उत्पन्न थएटा छे ? हा, गौतम ! अनेकवार अथवा अनंतवार उत्पन्न थएटा छे. "

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलच्चिरेते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दावी यः सद्गुणानां परक्रतिकरणाद्वैत्रजीवी तपस्वी । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो बाहको दान्ति-शान्त्योः-द्वात् श्रीवीरदेवः सकलशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

शतक ६-उद्देशक ९.

हानावरणीय कमें बांधतां साथे बीजी केटली कमें प्रकृति बंधाय ? सात-आठ के छ.-बंधोदेशक-प्रकापना.-महिंधक देव दहार मां पुद्रलोने लीधा सिवाय विकुर्वण करे ?-ना.-बहारनां पुद्रलोने लहने विकुर्वण करे.-इहगत-तत्रगत-अन्वत्रगत पुद्रलोमांना तत्रगत पुद्रलोने लहने विकुर्वण. एक वर्ण अने अनेक रूपना चार विकल्प.- देव, काळा पुद्रलने नीच रूपे वा नीलपुद्रलने काळ रूपे परिणत हरे ?-पुद्रलोगे लहने तेने परिणाम करे -ए रीते गंध-रस अने स्पर्शनी पण परिणामांतर.-वर्णना १० विकल्प.-गंधना १० अने स्पर्शना चार विकल्प.-अविशुद्ध लेश्यावाळा देव असमबहन आत्मा द्वारा अविशुद्ध लेश्यावाळा देवने, देवीने के बेमांना कोह एकने जाणे ?-ना.-ए त्रणे पदना बार विकल्प.-आदमां न जाणे अने छेछा चारमां जाणे.--

- १. प्र०— जीवे णं भंते! णाणावराणि कम्मं बंधमाणे कति कम्मप्गडीओ बंधति?
- ?. उ०-गोयमा ! सत्तिवहबंधए वा, अङ्गविहबंधए वा, छन्विहबंधए वा; बंधुदेसो पत्रवणाए नेयन्वो.
- १. प्र०—हे भगवन् । ज्ञानावरणीय कर्मने बांधतो जीव केटली कर्म प्रकृतिओने बांधे छे ?
- १. उ०—हे गौतम! सात प्रकारे बांघे छे, आठ प्रकारे बांघे छे अने छ प्रकारे पण बांघे छे, अहि 'प्रज्ञापना ' उपांगमां कहेलो बंध उदेशक जाणवो.
- १. 'द्वीपादिषु जीत्राः पृथिन्यादित्वेन उत्पन्नपूर्ताः '-इत्यष्टमोदेशके उक्तम्, नवमे तु उत्पादस्य कर्मबन्धपूर्वकत्वाद् असात्रेव प्रकृष्यते-इत्येवंसंबन्धस्याऽस्य इदमादिस्त्रम्ः-' जीवे णं ' इत्यादि. ' सत्तिवहबंधए ' ति आयुर्वन्धकाले, ' अहिवहबंधए ' ति आयुर्वन्धकाले, ' अहिवहबंधए ' ति आयुर्वन्धकाले, ' छिवहबंधए ' ति सूक्ष्मसंपरायाऽवस्थायां मोहा-ऽऽयुषोरबन्धकत्वात्. ' बंधुदेसो ' इत्यादि. बन्धोदेशकः प्रज्ञाप-नायाः संबन्धी चतुर्विशतितमपदात्मकोऽत्र स्थाने नेतन्योऽध्येतन्यः, स चायमः-' नेरईए णं मंते ! णाणावरणिक्नं कम्मं बंधमाणे कइ कम्मप्पगडीओ बंधइ श गोयमा ! अहिवहबंधगे वा, सत्तिवहबंधगे वा, एवं जाव-वेपाणिए, नवरं-मणुस्ते जहा जीवे. ' इत्यादि.
- १. 'जीवो द्वीपोमां अने समुद्रोमां पृथिव्यादिपणे पूर्वे उत्पन्न थएला छे ' ए हकीकत आगळना आठमा उद्देशकमां जणावी छे. जीवो जे जूदे जूदे रूपे भिन्न भिन्न गतिमां उपन्या करे छे तेनुं कारण तो तेओए करेलो कर्मबंध छे, बाटे हवे आ नवमा उद्देशकमां ए कर्मबंध संबंधे निरूपण करवानुं छे. आ उद्देशकनुं आदि सूत्र आ छे:—[' जीवे णं ' इत्यादि.] ['सत्तविह्वंधए 'ति] ज्यारे आयुष्यनो बंधकाळ न होय त्यारे सात प्रकारे कर्मने बांधे छे, [' छिव्वह्वंधए 'ति] आयुष्यना बंधकाळमां आठ प्रकारे कर्मने बांधे छे, [' छिव्वह्वंधए 'ति] सूक्ष्मसंपराय गुणस्थानकनी अवस्थामां मोहनीयकर्मने अने आयुष कर्मने बांधतो न होनाधी छ प्रकारे कर्मने बांधे छे. [' वंधुदेसो ' इत्यादि.] आ बधोदेशक ' श्रीप्रज्ञापना ' सूत्रना चोनीशमा पदमां आवेलो छे, ते आखाने अहीं सनजवाने छे अने तेनो दुक्सार आ प्रमाण छे:—'' हे भगवन् । ज्ञानावरणीय कर्मने बांधतो नैश्विक केटली कर्मप्रकृतिओने बांधे छे १ हे गीतम ! आठ प्रकारे कर्मने बांधे छे वा सात प्रकारे कर्मने बांधे छे, ए ग्रमाणे यावत् वैमानिक सुधी जाणवुं, विशेष ए के, जैम जीवो माटे कह्युं तेम मनुष्यो माटे जाणवुं '' इत्यादि.

कर्मकेष. सप्तविषकंष. अष्टविष अने षड्विष वंष.

प्रजापना.

^{ै.} मूलच्छायाः—जीवो भगवन् ! ज्ञानावरणीयं कर्म विद्यनम् कति कर्मप्रकृतीः वध्नाति ? गौतम ! सप्तविद्यमम्बको वा, अष्टविधवन्धको वा, षष्ट्विधवन्धको वा; बन्धोहेशः प्रज्ञापनायाः ज्ञातव्यः—अनु०

१. प्र० छायाः — नैरियको भगवन् । ज्ञानावरणीयं कर्म वध्नन् कति कर्मप्रकृतीर्वध्नाति ? गौतम ! अष्टविधवन्धको वा, सप्तविधवन्त्रको वा, एवं यावत्-वैमानिकः, नवरम्-मनुष्यो यथा जीवः — अनु०

१. आ बंधोदेशक, प्रज्ञापना सूत्रमां ५० ४९१-४९४ सुधीमां (स०) आवेलो छे:--अनु०

महर्द्धिक देव अने विकुर्वण.

- २. प्र०-- ^१देवे णं भंते ! महिड्डीए, जाव-महाणुभागे बाहि-रए पोग्गला अपरियाइत्ता पम् एगवनं, एगरूवं विजन्तित्तए !
 - २. उ०-गोयमा ! णो तिणहे समहे.
 - ३. प्र०-देवे णं भंते ! बाहिरए पोग्गले परियाइता पभू ?
 - ३. उ०—हंता, पभू.
- ४. प्र०—से णं भंते ! किं इहगए पोग्गले परियाइता वि-उन्नति, तत्थगए पोग्गले परियाइता विकुन्वति, अन्नत्थगए पोग्गले परियाइता विजन्नति !
- 8. उ०—गोयमा! नो इह् गए पोग्गले परियाइत्ता विउ-व्वति, तत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वति, नो अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विडव्यति; एवं एएणं गमेणं जाव-एगवनं एगरूबं, एगवनं अणेगरूबं, अणेगवनं एगरूबं, अणेगवनं अणेग-रूषं-चडभंगो.
- ५. प्रo—देवे णं भंते ! महिड्डीए, जाव—महाणुभागे बा-हिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू कालगपोग्गलं नीलयपोग्गलत्ताए परिण.मेत्तए, नीलगदोग्गलं दा कालगपोग्गलताए परिणामेत्तए १
 - ५. उ० -- गोयमा ! णो तिणहे समहे. परियाइता पमू.
 - ६. प्र०--से णं भंते ! किं इहगए पोग्गले० ?
- ६. उ०—तं चेव, नवरं-परिणामेति ति भाणियव्वं; एवं कालगपोग्गलं लोहियपोग्गलत्ताए, एवं कालगएणं जाव— सुकिलं, एवं णीलएणं जाव—सुकिलं, एवं लोहियपोग्गलं सुकिलत्ताए, एवं हालिइएणं जाव-सुकिलं, तं एवं एयाए परिवा-डीए गंध रस-फास ०वक्खडफासपोग्गलं मजय-फासपोग्गलताए,

- २. ४० हे भगवन् ! महर्धिक यावत् महानुभागवाळो देव बहारनां पुद्रलोने प्रहण कर्यो सिवाय एकवर्णवाळा अने एक आकार बाळा स्वशरीर बगेरेनुं विकुर्वण करवा समर्थ छे !
 - २. उ० हे गौतम! आ अर्थ समर्थ नथी.
- ३. प्रo है भगवन्! ते देव बहारनां पुद्रलोने प्रहण करीने तेम करवा समर्थ छे?
 - ३- उ०—(हे गौतम!) हा, समर्थ छे.
- 8. प्र॰—हे भगवन्! ते देव शुं इहगत-अहिं रहेळां— पुद्रछोनुं प्रहण करीने विकुर्यण करे छे ? तत्रगत-त्यां (देवलोकमां) रहेळां—पुद्रलोनुं प्रहण करीने विकुर्यण करे छे ? के अन्यत्रगत— कोइ बीजे ठेकाणे रहेळां—पुद्रलोनुं प्रहण करीने विकुर्यण करे छे ?
- ४. उ०—हे गौतम! अहिं रहेलां पुद्गलोनुं प्रहण करीने विकुत्वर्ण करतो नथी अने बीजे ठेका में रहेलां पुद्गलोनुं प्रहण करीने विकुत्वर्ण करतो नथी पण त्यां देवलोकमां रहेलां पुद्गलोनुं प्रहण करीने विकुत्वर्ण करे छे. ए प्रमाणे ए गमवडे यावत् १ एकवर्णवाळा एक आकारने, २ एकवर्णवाळा अनेक आकारने, ३ अनेकवर्णवाळा एक आकारने, ३ अनेकवर्णवाळा अनेक आकारने विकुर्वित करवा शक्त छे—ए प्रमाणे चार भांगा जाणवा.
- ५. प्र०—हे भगवन्! महर्धिक यावत् नहानुभागवाळो देव बहारनां पुद्रछोने प्रहण कर्या सिवाय काळा पुद्रछने नीलपुद्रलपणे परिणमाववा अने नील.पुद्रछने काळापुद्रलपणे परिणमाववा समर्थ छे!
- ५. उ०—हे गौतम! ए अर्थ समर्थ नथी, पण पुद्रलोनुं प्रहण करीने तेम करवा समर्थ छे.
- ६. प्र०—हे भगवन् ! शुं ते देव इहगतादिपुद्रलोने ग्रहण करीने तेन करवा समर्थ छे ?
- ६. उ०—(हे गौतम!) पूर्व प्रमाणे ते ज समजतुं, विशेष ए के 'विकुर्वे छे' ने बदले 'परिणमाने छे' एम कहेतुं, ए प्रमाणे काळा पुद्गलने लालपुद्गलपणे, ए प्रमाणे काळापुद्गलनी साथे यावत् शुक्र, ए प्रमाणे लालपुद्गलने यावत् शुक्रपणे, ए प्रमाणे हारिद्रपुद्गल साथे यावत् शुक्रपणे, ए प्रमाणे हारिद्रपुद्गल साथे यावत् शुक्रपणे, ए प्रमाणे हारिद्रपुद्गल साथे यावत् शुक्रणे, ते ए

www.jainelibrary.org

१. मूलच्छायाः—देवो भगवन ! महर्षिकः, यावत्-महानुभागो बाह्यान् पुद्रलान् अपर्यादाय प्रभुरेकवर्णम् , एकरूपं विकुर्वितुम् ? गोतम ! न तद्धः समर्थः देवो भगवन ! बाह्यान् पुद्रलान् पर्यादाय प्रभुः हन्त, प्रभुः स भगवन् ! किम् इहण्तान् पुद्रलान् पर्यादाय विकुर्विति, तत्रगतान् पुद्रलान् पर्यादाय विकुर्विति, अन्यत्रगतान् पुद्रलान् पर्यादाय विकुर्विति, अन्यत्रगतान् पुद्रलान् पर्यादाय विकुर्विति, तत्रगतान् पुद्रलान् पर्यादाय विकुर्विति, व अन्यत्रगतान् पुद्रलान् पर्यादाय विकुर्वितिः एवम् एतेन गमेन यावत्-एकवर्णम् एकरूपम्, एकवर्णम् अनेकरूपम् , अनेकवर्णम् एकरूपम्, एकवर्णम् अनेकरूपम् , चतुर्भक्षः देवो भगवन् ! महर्षिकः, यावत् महानुभागो बाह्यान् पुद्रलान् अपर्यादाय प्रभुः कालकपुद्रलं नीलकपुद्रलतया परिणमितितुम् , नीलकपुद्रलं वा कालकपुद्रलतया परिणमितितुम् , नीलकपुद्रलं वा कालकपुद्रलतया परिणमितितुम् । स्विक्ष्याद्रलं चावत्—शुक्रम्, एवं नीलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं लेहितपुद्रलतया, एवं कालकक्षेत्र यावत्—शुक्रम्, एवं नीलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं लेहितपुद्रलं यावत्-शुक्रम्, एवं नीलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं लेहितपुद्रलं यावत्-शुक्रम्, एवं नीलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं लेहितपुद्रलं यावत्-शुक्रम्, एवं निलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं नीलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं लेहितपुद्रलं यावत्-शुक्रत्या, एवं हारिद्रकेण यावत्—शुक्रम्, एवं नीलकेन यावत्—शुक्रम्, एवं लेहितपुद्रलं यावत्-शुक्रम्। एवं हारिद्रकेण यावत्—शुक्रम्, वदेवम् अनया परिपाव्या गन्धन् । स्य-स्वर्गिवद्रलं मृतुक्रस्पर्रपुद्रलत्याः—अनु०

ऐवं दो दो गरुवलहुय–सीयउत्तिण–णिखलुक्खवच ई सव्वत्थ प्रमाणे ए ऋमवड़े गंघ, रस अने स्पर्श संबंधे समजवुं यावत् कर्कश्च-

परिणामेइ. आलावमा दो दो-पोग्मले अपरियाइत्ता, परियाइता. स्पर्शवाळा, कोमळ स्पर्शवाळा पुद्रलपणे (परिणमाने.) ए प्रमाणे बे वे विरुद्ध गुणोने-गुरुक अने लघुक, शीत अने उप्म, स्निग्ध अने रूक्ष-वर्णादिने सर्वत्र 'परिणमावे ' छे. परिणमावे छे ए क्रियाना अहीं बबे आलापक कहेवाः एक तो, पुद्रलोनं प्रहण करीने परिणमाने छे, अने बीजो पुद्रलोनुं प्रहण नहि करीने नथी परिणमावतो.

२. जीवाऽधिकाराद् देवजीवमधिक्तत्याह:-'देवे णं' इत्यादि. 'एगवचं' ति कालादि—एकवर्णम्, एकरूपम्-एकविधाऽऽकारं स्वशरीरादि. ' इहगए ' ति प्रज्ञापकाऽपेक्षया इहगतान् प्रज्ञापकप्रसक्षा-ऽऽसनक्षेत्रस्थितान् इसर्थः. ' तत्थगए ' ति देवः किल प्रायो देवस्थान एव वर्तते इति-तत्र गतान् देवलोकादिगतान् ; 'अण्णत्थगए ' चि प्रज्ञापकक्षेत्रात् , देवस्थानाचाऽपरत्र स्थितान् ; तत्र च खस्थान एव प्रायो विकुर्वते, यतः कृतोत्तरवैक्तियरूप एव प्रायोऽन्यत्र गच्छतीति ' नो इहगतान् पुद्रलान् पर्यादाय ' इत्या-चुक्तमिति. ' कालयं पोग्गलं नीलपोग्गलत्ताए ' इत्यादी काल-नील-लोहित-हारिद्र--गुक्कलक्षणानां पश्चानां वर्णानां दश द्विकसंयोगसूत्राणि अध्येयानि. ' एवं एयाए परिवाडीए गंध-रस-फास-' ति इह सुरिभ-दूरिमलक्ष गगन्धद्रयस्य एकमेव, तिक्त-कटु कवाया ऽम्ल-मधुर-रसङक्षणानां पश्चानां रसानां दश दिकसंयोगसूत्राणि अध्येयानि, अष्टानां च स्पर्शानां चत्वारि सूत्राणि-परस्परविरुद्धेन कर्कश-मुद्दादिना द्वयेन एकैकसूत्रनिष्पादनादु इति.

२. जीवनो अधिकार चालतो होवाथी देवना जीवने ज उद्देशीने कहे छेः ['देवे णं' इत्यादिः] ['एगवन्नं'ति]'काळो 'वगेरे अनेक वर्णों छे तेमांना कोइ एक वर्णवाळुं, एक रूप-एक प्रकारना आकारवाळुं-पोतानुं शरीर वर्गेरे. [' इहमए ' ति] प्रध्न करनारनी अपेश्राए इहगत-प्रश्न करनारने प्रत्यक्ष एवा नजीकना क्षेत्रमां रहेलां-पुद्रलोने, ['तत्थगए 'ति] जाजे मागे देवो देवस्थानमां ज रहे छे माटे देवलोक वगेरेमां रहेलां 9ुद्रलोने, [' अण्णत्थगए ' ति] प्रज्ञापकतुं क्षेत्र अने देवतुं स्थान, ए वे स्थानोथी बीजे स्थाने रहेलां पृद्रलोने. देवो जाजे भागे पोताना स्थानमां ज विकुर्वणा करे छे, कारण के, जेणे उत्तरवैक्रिय रूप कर्युं छे एवो ज देव घणुं करीने बीजे स्थाने जाय छे, माटे एम वःसं छे के, 'अहिं रहेलां पुद्रलोनुं ग्रहण करीने विकुर्वण न करी शके. '['कालयं पोग्गलं नीलपोग्गलसाए ' इत्या दे.] आ सुत्रमां काल, नील, पुद्रलनो परिणाग. लोहित, हारिद्र अन शुक्क खरूप पांच वर्णोनां द्विक संयोगवाळां दर्श सूत्रो कहेवां. [' एवं एवाए परिवाडीए गंध-रस-कास-' ति] आह सुर्शम अने दुरिम सरूप वे गर्धेनुं एक ज सूत्र छे, तिक्त, कटु, कषाय, अम्ल अने मधुर रसरूप पाँच रसोनां द्विकसंयोगनां द्वी सूत्रो कहेवां, आठ गंधसूत-१-रसपूत १० स्पर्शीनां चार सूत्रों कहेवां, कारण के, परस्पर विरुद्ध कर्कश अने मृदु वगेरे वे स्पर्शों वडे एक एक सूत्रनुं निष्पादन थाय छे अर्थात् वे स्पर्शनु स्पर्शसूत्र-४. एक सूत्र थतुं होवाथी आठ स्पर्शनां चीर सूत्र थाय छे.

१. मूलच्छायाः--- एवं द्वौ दे।-गुरुकलमुक-शीतोष्ण-स्निग्धरूक्षवणं।दीन् सर्वत्र परिणमयति, आलापका द्वै। दे।-पुद्रलान् अपर्यादाय, पर्यादाय:--अमु०

```
१. पांच वर्णना दस विकल्प आ प्रमाणे छे:
```

काळाने नील हपे. ६ नीलने हारिष्र रूपे. लोहित ,, . शुक्त ,, . हारिद्र ". . स्रोहितने हारि**द्र** रूपे. হুক্ত "• গুঙ্গ " • ५ नीलने लोहित रूपे. हारिद्रने शुक्त रूपे.

२. बे गंधनो एक विकल्पः

१ सुगंधने दुर्गधरूपे अथवा दुर्गधने सुगंधरूपे.

३. पांच रसना दस विकल्पः

तिकाने कटुरूपे. ६ कटुने अम्ल रूपे. कषाय ,, . _क्षधुर _क्र कषायने अम्ल रूपे. अस्ल ,, . मधुर ,, . ٩ ,, मधुर ". क्षश्य रूपे. अम्सने मधुर हुपै. कटुने

आठ स्पर्शना चार विकल्पः

१ गुरुने लघुरूपे. लबुने यह रूपे. शीतने उष्णरूपे. अथवा उद्याने शीत हपे. स्निम्धने रूक्षरूपे. रूक्षने स्निग्ध हुपे. कर्वशने कौमळ रूपे. कोमळने कर्कश इपे:—अनु०

देव जाणे अने जूए.

७. प्र० -- औदसुद्धलेसे णं भंते ! देवे असम्मोहएणं अप्या-णएणं अविसुद्धलेसं देवं, देविं, अवयरं जाणति, पासति १

७. उ०-णो तिणहे समहे; एवं २ असुद्धलेसे असम्मोह-एणं अप्याणेणं विसुद्धलेसं देवं, ३ अविसुद्धलेसे सम्मोहएगं अ-अप्पाणेणं अविसुद्धलेसे देवं, ६ अविसुद्धलेसा समोहया-ऽसम्मो-हएणं विसुद्धलेसं देवं, ७ विसुद्धलेसे असम्मोहएणं अविसुद्धलेसे देवं, ८ विसुद्धलेसे असम्मोहेणं विसुद्धलेसं देवं.

८. प्र०—९ विसुद्धलेसे णं भंते ! देवे समोहएणं अवि-सुद्धलेसं देवं जाणइ १

८. उ०---हंता, जाणइ.

९. प्र०-एवं १० विसुद्धलेसे समोहएणं निसुद्धलेसं देवं जाणइ ?

९. उ०--हता, जाणइ.

१०. ४०--११ विसुद्धलेसं समोहयाऽसमोहएणं अविसुद्ध-लेसं देवं ? १२ विसुद्धलेसे समोहयाऽसमोहएणं विसुद्धलेसं देवं?

१०. ७०—एवं हे हिल्लएहिं अद्वाहें न जाणड़, न पासइ; उवरिक्षएहिं चउाहें जाणइ, पासइ.

--सेवं भीते !, सेवं भीते ! ति.

७. प्र०—हे भगवन्! अविशुद्ध लेश्यावाळो देव अनुपयुक्त आत्मावडे अविशुद्ध लेश्यावाळा देवने, वा देवीने, वा अन्यतरने-ते बेमांना एकने-जाणे छे १ जूए छे १

ਾ ७. ૩०—(हे गौतम !) ए अर्थ समर्थ नथी. ए प्रमाणे २ अशुद्र लेश्यात्राळो देव अनुपयुक्त आत्मावडे विशुद्ध लेश्यावाळा णाणेणं अविसुद्धलेसं देवं, ४ अविसुद्धलेसे देवे सम्मोहएणं देवने, देवीने, वा अन्यतरने जाणे, जूए ? ३ अविशुद्धलेश्यावाळी अपाणेणं विसुद्धलेसं देवं, ५ अविसुद्धलेसे समोहया-ऽसम्मोहप- देव उपयुक्त आत्मावडे अविशुद्ध लेक्पावाळा देवने इत्यादि, ४ अविशुद्ध लेक्यावाळो देव उपयुक्त आत्मावडे विशुद्ध लेक्यावाळा देवने इत्यादि, ५ अविशुद्ध लेश्यावाळो देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मानडे अविशुद्ध लेश्याबाळा देवने इत्यादि, ६ अविशुद्ध लेश्याबाळो उपयुक्तानुपयुक्त आत्माबंडे विशुद्ध लेश्याबाळा देवने इत्यादि, ७ विशुद्ध लेश्यात्राळो अनुपयुक्त आत्मावडे अविशुद्ध लेश्यावाळा देवने इत्यादि, ८ विशुद्ध लेश्यावाळो अनुपयुक्त आत्मावडे विशुद्ध हेश्यावाळा देवने इत्यादि.

> ८. प्र०—हे भगवन् ! विशुद्ध लेश्यावाळो देव उपयुक्त आत्मावडे अविशुद्ध लेक्यावाळा देव बगेरेने जाणे ?

८. ४०--(हे गौतम !) हा, जाणे..

९. प्र०-ए प्रमाणे, (हे भगवन्!) १० विशुद्ध लेखा-वाळो देव उपयुक्त भारमावडे विशुद्ध लेश्यावाळा देव बगेरेने जाणे ?

९. उ०--(हे गौतम !) हा, जाणे.

१०. प्र०—११ विशुद्ध लेश्यावाळो, देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मावडें अविशुद्ध है स्थावाळा देव वगेरेने इत्यादि, तथा १२ विशुद्ध छेर्यावाळो देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मावडे विशुद्ध लेक्यावाळा देव व**गेरे**ने जाणे ? जूए ?

१०. उ०-ए प्रमाणे नीचला आठ एटले शरुआतना आठ भांगा वडे जाणे नहि, अने जूए नहि अने उपरना चार एटले पाछळना चार भांगा वडे जाणे अने जूए.

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे (एम कही यावत् विहरे छे.)

भगवंत-अज्बसहम्मसानिपणीए सिरीभगवईसुते छहसये नवमो उदेसो सम्मत्तो.

१. मूळच्छायाः—अविशुद्धलेदयो भगवत् । देवोऽसमबह्तेनाऽऽत्मनाऽविशुद्धलेदयं देवम् , देवीम् , अन्यतरं जानाति, पर्यति १ न तदर्थः समर्थः, एवम् अञ्चढ्रियोऽसमवहतेनाऽऽःमना विशुद्धलेर्यं देवम्, अविशुद्धलेर्यः समवहतेनाऽऽत्मनाऽविशुद्धलेर्यं देवम्, अविशुद्धलेर्यो देवः समवहतेनाऽऽत्मना विशुद्ध छेरयं देवम , अविशुद्ध छेरयः समबहता-८८मवहतेनाऽ तमना अधिशुद्ध छेर्यं देवम् , अविशुद्ध छेरयः समबहता-८समबहतेन विशुद्ध छेर्यं देवम् , विशुद्ध हेरथोऽसमबहतेन।ऽऽत्मन।ऽविशुद्ध छेरथं देवम् , विशुद्ध छेरयोऽसमबहतेन (आत्मना) विशुद्ध छेरथं देवम् . विशुद्ध छेरयो भगवत् । देवः समबहतेन (आत्मना) अविशुद्ध छेरयं देवं जानाति ? इन्त, जानाति. एवम्—विशुद्ध छेरयो देवः समवहतेन (आत्मना) विशुद्ध छेरयं देवं जानाति ? इन्त, जानाति. विशुद्धछेरयः समवहताऽसमवहतेन (आत्मना) अविशुद्धछेरयं देवम् १ वि^{शु}द्धछेरयः समवहता-ऽसमवहतेन विशुद्धछेरयं देवम् १ एवम् अधस्तनैरष्टिर्मिन जानाति, न पश्यति; उपरितनेश्रतुःभिंजीनाति, पश्यति. तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इतिः—अनु०

३. देवाधिकाराद् इदमाहः—' अविसुद्ध-' इत्यादि. ' अविसुद्धलेसे णं ' ति अविशुद्धलेखो विभङ्गज्ञानी देवः, ' असम्मोहएणं अपाणेणं ' ति अनुपयुक्तेन आत्मना, इहाऽविशुद्धलेश्यः, असमबहताऽऽत्मा देवः, अविशुद्धलेश्यं देवादिकम्-इत्यस्य पदत्रयस्य द्वादश विकल्पा भवन्ति, तद्यथाः—'अविसुद्धलेसे णं देवे असम्मोहएणं अप्याणएणं अविसुद्धलेस्सं देवं जाणइ, पासइ ? णो इणडे समड्ठे ' इसेको विकल्पः. ' अविसुद्धलेसे असम्मोहएणं विसुद्धलेसं देवं १ णो इणहे समद्वे ' इति द्वितीयः. ' अविसुद्धलेसे समोहएणं आविसुबलेसं देवं १ णो इणहे समहे 'ित्त तृतीयः. 'अविसुबलेसे सम्मोहएणं विसुबलेसं देवं १ नो इणहे समहे 'ित्त चतुर्थः. ' आविसुद्धलेसे सम्मोहया-ऽसम्मोहएणं अप्पाणेणं सविसुद्धलेसं देवं १ णो इणहे समद्वे १ ति पश्चमः. अविसुद्धलेसे सम्मोहया-Sसंमोहेणं विसुद्धलेसं देवं १ णो इणड्डे समड्डे ' ति षष्ठः. विसुद्धलेसे असम्मोहएणं अपाणेणं अविसुद्धलेसं देवं १ नो इणड्डे समट्ठे ' त्ति सप्तमः. ' विसुद्धलेसे असम्मोहएणं विसुद्धलेस्सं देवं ? णो इणहे समद्वे ' त्ति अष्टमः. एतैरप्टभिर्विकल्पैने जानाति, तत्र षिक्भिर्मिध्यादृष्टित्वात्, द्वाभ्यां तु अनुपयुक्तत्वाद् इति. 'विसुद्धलेसे सम्मोहएणं अविसुद्धलेसं देवं चाणइ ? हंता, जाणइ ' इति नवमः. 'विसुद्धलेसे सम्मोहएणं विसुद्धलेसं देवं जाणइ ? इंता, जांणइ ' इति दश्यमः. ' विसुद्धलेसे समोहया-ऽसंमोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेसं देवं जाणइ ? हंता, जाणइ ' ति एकादशः. ' विसुद्धलेसे समोहया-ऽसमोहएणं अप्पाणेणं विसुद्धलेसं देवं जाणइ ? हंता, जाणइ ' चि द्वादशः. एभिः पुनश्चतुः भिविकल्पैः सम्यग्दिष्टित्वाद् उपयुक्ता-ऽनुपयुक्तत्वाच जानाति, उपयो-गा-ऽनुपयोगपक्षे उपयोगांऽशस्य सम्यम्ज्ञानहेतुःवादिति. एतदेवाहः---' एवं हेडिलोहि ' इत्यादि. वाचमान्तरे हु सर्वमेवेदं साक्षाद् हङ्यते इति.

भगवासुभर्मेखामिप्रणीते श्रीभगवतीसूत्रे षष्ठशते नवम उद्देशके श्रीक्षभयदेवसूरिविरचितं विवरणं समाप्तम्.

३. देवनो अधिकार होवाथी हवे आ सूत्र कहे छे: ['अविसुद्ध-' इत्यादि.] ['अविसुद्धलेसे णं 'ति] विशुद्ध लेखा विनानो विभंग ज्ञानी देव, [' असम्मोहएणं अप्पाणेणं ' ति] अनुपयुक्त आत्मावडे, अहिं १ अविशुद्धछेश्य, २ असम्बह्तात्मा देव अने ३ अविशुद्धछेश्य देवादिक, ए त्रण पदना बार विकल्प थाय छे, ते जैमके; १ अविशुद्धलेख्यावाळी देव अनुपयुक्त आत्मावडे अविशुद्धलेख्यावाळा देवन, देवीने बार विकल्प. वा नेमांथी कोइने जाणे ? जूए ? ए अर्थ समर्थ नथी-ए एक विकल्प थयो, अविश्रद्धलेख्यावाळो अनुपयुक्त आत्मावडे विश्रद्धलेख्यावाळा देवने देवीने वा बेमांथी कोइने जाणे ? जूए ? ए अर्थ समर्थ नथी-ए प्रमाणे बीजो विकल्प, अविद्युद्धलेख्यावाळो उपयक्त आत्मावडे अविद्युद्धलेख्यावाळा देव वगेरेने जाणे ? जूए ? ए अर्थ समर्थ नथी-ए त्रीजो विकल्प, अविशुद्धेलस्यावाळो उपयुक्त आत्मावद्धे विशुद्धलेखावाळा देव वगेरेने जाणे ? जूए १ ए अर्थ समर्थ नथी-ए चोथो विकल्प थयो, अविशुद्धेलेश्यावाळो उपयुक्तानुपयुक्त आत्मावडे अविशुद्धेलेश्यावाळा देव वगेरेने जाणे १ जूए १ ए अर्थ समर्थ नथी, ए पांचमो विकल्प थयो, अविशुद्धलेश्यावाळो उपयुक्ताऽनुपयुक्त आत्मावडे विशुद्धलेश्यावाळा देव वगेरेने जाणे १ जूए १ ए अर्थ समर्थ नथी-ए छट्टो विकल्प थयो, विशुद्धलेखावाळो अनुपयुक्त आत्मावडे अविशुद्धलेखावाळा देव वगेरेने ज.णे १ जूए १ ए अर्थ समर्थ नथी-ए प्रमाणे सातमो विकल्प थयो, विशुद्धलेश्यावाळो अनुपयुक्त आत्मावडे विशुद्धलेश्यावाळा देव वगेरेने जाणे ? जूए ? आ अर्थ समर्थ नधी-ए आउमो विकल्प थयो आ आउ विकल्पोवडे जाणतो नधी, कारण के, ते आठ विकल्पोमांना छ विकल्पोमां आवता देवनुं निथ्यादिशपुं छ मिथ्यादृष्टि. अने बाकीना छेखा वे विकल्पमां आवता देवनुं अनुपशुक्तपणुं छे. विशुद्धलेश्यावाळो उपयुक्त आत्मावडे अविशुद्धलेश्यावाळा देव वगेरेने जाणे १ जूए १ हा, जाणे, जूए-ए नवमो विकल्प, विशुद्धलेखावाळो उपयुक्त आत्मावडे विशुद्धलेखावाळा देव वगेरेने जाण जूए ? हा. जाले-ए दशमे। विकल्प. विशुद्धलेश्यावाळो उपयुक्तानुषयुक्त आत्मावडे अविशुद्धरेश्यावाळा देव वगेरेने जाणे ? जूए ? हा, जाणे-ए अग्यारमो विकल्प थयो अने विशुद्ध-**ठेश्याबाळो उपयुक्तानुपयुक्त आत्मावडे विशुद्धरुश्यादाळा देव वगेरेने जाणे ? जूए ? हा, जाणे-ए वारमो** विकल्प थयो. आ चार विकल्पोवडे जाणे, कारण के, आ चार विकल्पोमां जाणनारनुं सम्यग्दृष्टिपशुं छे: ए, उपबुक्तानुपशुक्त-एम वे प्रकारनो छे तथी ज हनो उपयोगांदा, एना सम्यग्ज्ञाननी प्रतीति करावे छे-उपयोग अने सम्यग्द्रान वचे परस्पर कार्य-कारणनी संबंध होवाथी ज ए उपयोग, सम्यग्द्राननुं एंबाण होइ सके छे. ए ज नातने कहे छे के, [' एवं हेट्डिखेहि ' इत्यादि.] बीजी वाचनामां तो आ बधो पाठ साक्षात् मूळमां ज देखाय छे.

उपवोगांश.

बीजी वाचना.

बेडारूपः समुद्रेऽखिलजलचिरिते क्षार्भारे भवेऽस्मिन् दायी यः सद्गुणामां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्ती । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो वाहको दान्ति-शानयोः-दचात् श्रीवीरदेवः सकटशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

१. टीकाकारश्रीना कहेवा प्रमाणे भहीं ३४० मा प्रष्ठ उपर जणावेलं मूळ-ते बीजी वाचनातुं होतुं जोईए:-अनु०

शतक ६.-उद्देशक १०.

अन्यती धेको -कोलास्थकमात्र,-निष्पावमात्र.-कलमम्।त्र.-माषमात्र.-मुद्रमात्र.-युकामात्र.-लिक्षामात्र.-भगगान् महाबीरनुं प्ररूपण.-देवनुं अने गंधनां सूद्मृतम पुद्रलोनुं उदाहरण.-जीव ए चैतन्य छे ? के चेतन्य ए जीव छे ?-बन्ने परस्पर एकरूप छे.- वैमानिको सुधी ए जातनो विचार-जीवे छे ए जीव छे ? के जीव छेते जीवे छं रे≕जीवे छेते तो जीव ज छे अने जीव तो जीवे पण अने न पण जीवे— प्राण धारण करे सिद्धजीव.-वैमानिको सुधी ए विचार.— र्नरियक अने भवसिद्धिक.-वथा जीवो एकांत दुःखने वेदे छै-एवो अन्यतीथिकमत.-भगवान् महावीरतुं प्रह्मपण-कोर जीवो प्यांत दुःखने, कोर एकांत सुखने अने कोह सुखदु:खमिश्र वेदनाने वेदे छे.-ते ते अशिनों नामश्राह निर्देश.-नरियक अने तनां आहारपुद्रलो.- ए प्रमाण यावत्-श्रेमानिक.-केवली आदानी-इंद्रियो-द्वारा जाण-जूए र-ना.-केवलिनुं अमित ज्ञान.-निर्वृत दर्शन -संग्रहगाथा -षष्ठ इतक समाप्त.

१. प्र. — अन्नुउत्थिया णं भंते ! एवं आइक्खांति, जाव-नो चिक्किया के इ सुहं या, दुहं वा; जाव-कोलिटियमायमिव, निप्पनमायमनि, कल(म)मायमनि, मासमायमनि, मुग्गमायमनि, जूयामायमवि, लिक्सामायमवि अभिनिवहेत्ता उवदंसित्तए-से कहमेयं भंते ! एवं ?

?. ड०--गोयमा ! जं नं ते अन्न उत्थिए एवं आइक्सइ, जाव-मिच्छं ते एवं आहिंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइनस्वामि, जाव-परूवेमि सब्दलोए वि य णं सन्वजविषणं णो चिक्किया, के ए सुहं वा, तं चेव, जाव- उवदंसित्तए.

२. प्र०—से केणहेणं ?

२. उ०--गोयमा ! अयं नं जंबुद्दीवे दीवे, जाव-विसेसा-हिया परिवसंवेण पत्रता; देवे ण महिडीए, जाव-महाणुभागे क्षेपवडे विशेषाधिक कहा छे, महर्षिक यात्रत् महानुभाववाळा देव एगं महं, सिवलेवणं, गंधसमुरगगं गहाय तं अवहालेति, तं एक, माटा, विलेपनवाले। गंधवाळा द्रव्यता डाबडे। लड्ने उघाडे अवदालेक्ता जाय-इणामेव कट्टु केवलकपं जनुद्दीवं दीवं ।तिहिं अने तेने उघाडी यावत् 'आ जाउं छुं 'एम कही संपूर्ण जनूदीपने

 प्र• प्र• है भगवन् ! अन्यतीर्थिका ए प्रमाणे कहे छे यावत् परूर्वोति जावतिया रायागिहे नयरे जीवा, एवइयाणं जीवाणं प्ररूपे छे, के राजगृहनगरमां जेंटला जीवा छे, एटला जीवाने काई बारना ठळीया जेटलुं पण, वाल जेटलुं पण, कलाय के चाला जेटलुं पण, अडद जेटलुं पण, मग जेटलुं पण,जू जेटलुं पण अने लीख जेटलुं पण सुख या दु:ल काढीने देखाडवा समर्थ नथी, हे भगवन् ! ए ते केवी रीते एम होई शकें?

> १. उ०-हे गै।तम! ते अन्यती. र्थको जे ए प्रमाणे कहे छे, यावत् प्ररूपे छे ते ए प्रमाणे मिथ्या, स्ताटुं कहे छे, हे गै।तम! हुं बळी आ प्रमाणे कहुं छुं यावत् प्ररूपुं छुं के सर्व छोकमां पण सर्व-जीवोने कोई सुख वा दुःख ते ज यावत् काढीने दुर्जाववा समर्थ नथी.

२. प्र०—(हे भगवन्!) ते शा हेतुथी?

रे. उ०-हे गैातम! आ जंबूदीप नामने। द्वीप यावत् परि-अच्छरानिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपंरियद्विता णं हव्यं आगच्छेजा, त्रण चपटीयडे २१ बार फरी शीघ्र पाछे। आवे, हे गोतम ! ते

[ं] १. मूलच्छायाः -अन्ययूथिका भगवन् ! एवम् आख्यान्ति, यावत्-प्ररूपयन्ति यावन्तो राजगृहे नगरे जीवाः, एतावतां जीवानां न शक्नुयात् कोऽपि सुखं वा, दुःखं वा; यावत्-कुवलःस्थिकमात्रमपि, निध्यावमात्रमपि, कलाय एकम)मात्रमपि, माषमात्रमपि, मसुद्रमात्रमपि, युकामात्रमपि, लिक्षामात्रमपि अभिनिर्वृत्य उपदर्शियतुम्-तत् कथमेतद् भगवन् ! एवम् १ गौतम ! यत् ते अन्ययृथिका एवम् आख्यान्ति, यावत्-मिथ्या ते एवम् आहुः, अहं पुनर्गीतम ! एथम् आख्यामि, यावत्-प्ररूपयामि सर्वे जोकेऽपि च सर्वे जीवानां न शक्तयात् , कोऽपि सुखं वा, ते ब्व, यावत्-उपदर्शयतुम्, तत् केनाऽथॅन १ गैतम ! अयं जम्बूदीपो द्वीपः, यावत्-विशेषाऽधिकः परिक्षेपेण प्रक्षप्तः; देवो महर्धिकः, यावत्-महानुभाग एकं महत् , सविलेपनम् , गन्धसमुद्गकं गृहीत्वा तम् अवदारयति, तम् अवदार्य, यावत्-इदमेवं कृरवा केवरुकल्पं जग्बूद्वीपं त्रिभिधपुटिकानिपातैस्निसप्तवारम् अनुपर्शस्य शीघ्रम् आगच्छेत्:--अनु०

से पूर्ण गोयमा। से केवलकप्ये जंबूहीवे दीवे तिहिं घाणपोग्गलेहिं संपूर्ण जंबूद्वीपनामना द्वीप, (ते देवनी आवी शीव्रगतिथी ऊडेलां) जाव-उवदंसेत्तए.

फुडे ! हंता, फुडे. चिक्किया णं गोयमा ! केयित तेसिं घाणपोन्मलाणं ते गंध पुद्गलोना स्पर्शवाळो थयो के निह ! हा, स्पर्शवाळो थयो, कोलिडिमायमि जाव-उवदांसित्तए ? णो तिणहे समहे. से तेणहे णं हे गीतम ! कोइ ते गंधपुद्गलोने बोरना ठळाया जेटलां पण यावत् दर्शाववा समर्थ छे ? ए अर्थ समर्थ नयी. ते हेतुयी सुखादिने पण यावत् दर्शाववा समर्थ नथी.

- ?. प्रागविशुद्धलेश्यस्य ज्ञानाऽभाव उक्तः, अथ दश्चमोद्देशकेऽपि तमेव दर्शयन् इदमाहः-' अन्नजरिथ-' इत्यादि. ' नो चिक्तिय ' त्ति न शक्तुयात , ' जाव-कोलिट्टियमायमिव ' ति आस्तां बहु, बहुतरं वा; यावत् कुवलाऽस्थिकमात्रमीप, तत्र कुवलास्थिकं बदरकुलकम्, 'निप्पाव' त्ति वहुः, 'कल' ति कलायः, 'जूय' ति यूका, 'अयं णं श्रह्मादि. दृष्टान्तोपनय एवमः -यथा गन्धपुद्रलानाम् अतिस्कालेनाऽमूर्तकल्पत्वात् कुवलास्थिकमात्रादिकं न दर्शयितुं शक्यते, एवं सर्व-जीवानां सुखस्य, द्रःखस्य चेति.
- १. आगळना नवमा उद्देशकमां अविशुद्धलेश्यावाळाने शाननी अभाव कह्यो छे, हवे आ दशम उद्देशकमां पण ते ज ज्ञानना अभावने हमती वातने दर्शावता आ-['अन्नउत्थि 'इत्यादि] सूत्र कहे छे, [' नो चिक्किय ' ति] शक्तिमान् न थाय, [' जाव कोलद्वियमायमिव ' ति] घणुं अथवा वधारे जाजुं रहो अर्थात् घणानी तो वात ज शी करवी पण यावत् कुनलास्थिक जटलुं पण, तेमां कुनलास्थिक एटले बोरनो ठळीयो. ['निष्पाव' ति] निष्पाव एटले वाल. ['कल' ति] कल एटले कलाय. ['जूय'ति] यूका एटले जू. ['अयं गं' इत्यादि.] दृष्टांतनो सार आ प्रमाणे हे के:-जेम अितसूक्ष्मपणान लीधे (गंधनां पुद्रलो) अमूर्त तुल्य होवाथी बोरना ठळीया वगरे जेटलां पण ते पुद्रलोने दर्शाववा कोइ शक्त नथी ए प्रमाणे सर्व जीवोने सुख अने दुःख दर्शाववा कोइ शक्त नथी.

कुबलास्पिक. निष्पाव-कश्य-युका. सार.

जीव.

३. प्रo-जीवे णं मंते ! जीवे, जीवे जीवे ?

३. उ०-- गोयमा ! जीवे, ताव नियमा जीवे, जीवे वि, नियमा जीवे.

४. प्र०—जीवे णं भंते ! नेरइए, नेरइए.जीवे ?

 उ०—गोयमा ! नेरइए ताव ।नियमा जीवे, जीवे पण सिय नेरइए, सिय अनेरईए.

५. प्र०--जीवे णं भंते ! असुरकुमारे, असुरकुमारे जीवे ?

५. ड०- गोयमा ! असुरकुमारे ताव नियमा जीवे, जीवे पुण सिय असुरकुमारे, सिय णो असुरकुमारे; एवं दंढओ भाण-यव्वी, जाव-वेमाणियाणं.

- ३. प्र०-हे भगवन् ! शुं जीव जीव (चैतन्य) छे ? के चैतन्य जीव छे ?
- ३. उ० हे गौतम ! जीव तो नियमे-चैतन्य-जीव छे अने जीव-चैतन्य-पण नियमे जीव छे.
- ४. प्र०-हे भगवन् ! जीव नैरियक छे ? के नैरियक जीव B) ?
- उ०—हे गौतम! नैरियक तो नियमे जीव छे अने जीव तो नैरियक पण होय तथा अनैरियक पण होय.
- ५. प्र०—हे भगवन् ! जीव असुरकुमार छे ? के असुर-कुमार जीव छे ?

५. उ०-हे गौतम ! असुरकुमार तो नियमे जीव छे अने जीव तो असुरकुमार पण होय तथा असुरकुमार न पण होय. ए प्रमाणे यावत् वमानिक सुधी दंडक कहेवी.

१ मूलच्छायाः - तद नूनं गातम ! स केदलकल्यो जम्बूदीयो द्वीपस्तैर्घाणपुद्रलेः स्पृष्टः १ इन्त, स्पृष्टः. शक्तुयात् गौतम! कश्चित् तैयां प्राणपुद्रलानां कुवलास्थिकमात्रमपि यावत्-उपदर्शयितुम् ? न तदर्थः समर्थः. तत् तेनाऽर्थेन यावत्-उपदर्शयितुम् :—अनु०

१. आ 'चिक्किया' इप, 'सिक्किया' तुं इपांतर छे. सूत्रोनी छेली चाचना वलभीपुर-वळा-(साराष्ट्र) मां थएली होवाथी ए संभव छे के, ए बाचनानी भाषा उपर, ए बरुभीनी वा तेनी आसपासना प्रदेशनी असर थाय, अने ए असरना परिणामे ज 'सक्किया' नुं 'चिक्किया' थयुं जणाय छे. वर्तमानमां पण वलभीपुर् अने तेनी आसपासना प्रदेशना रहेवासिओ 'स ' ने बदले 'च ' नो उचार करे छे:--अनु

९. मूलच्छायाः-जीवो भगवन् ! जीवः, जीवः, जीवः शितम ! जीवस्तावद् नियमाद् जीवः, जीवोऽपि, नियमाद् जीवः, जीवो भगवन् ! नैरयिकः, नैरयिको जीवः ? गौतम ! नैरयिकस्तावद् नियमाद् जीवः, जीवः पुनस्साद् नैरयिकः, स्याद् अनैरयिकः जीवो भगवन् । असुरकुमारः, अमुरकुमारो जीवः ? गौतम ! अमुरकुमारस्तावद् नियमाद् जीवः, जीवः पुनस्साद् अमुरकुमारः, स्याद् न अमुरकुमारः, एवं दण्डको भणितन्यः, यापत्-वैमानिकानाम्:---अनु•

६. प्रo — जीवति भंते ! जीवे, जीवे जीवति ?

६. उ०-गोयमा ! जीवति तात्र नियमा जीवे, जीवे पुण सिय जीवति, सिय नो जीवति.

७. प्र०-जीवति भंते ! नेरइए, नेरइए जीवति ?

. ७. ૩૦—गोयमा ! नेरइए ताव नियमा जीवति, जीवति पुण सिय नेरहए, सिय अनेरहए; एवं दंडओ णेयव्यो, जाव-वेमाणियाणं.

८. प्र०-भवसिद्धिए णं मंते ! नेरइए, नेरइए मवसिद्धिए?

८. उ०-गोयमा ! भवसिद्धिए सिय नेरइए, सिय अने-रइए; नेरहए वि य सिय भवसिर्द्धाए, सिय अभवसिद्धीए; एवं नैरियक पण होय तथा नैरियक भवसिद्धिक पण होय अने अभव-दंडओ, जाव-वेमाणियाणं.

इ. प्रo-हे भगवन्! जीवे-प्राणघारण करे-ते जीव कहेबाय ? के जीव होय ते प्राणधारण करे ?

६. उ०-हे गौतम ! प्राणधारण करे ते नियमे जीव कहेवाय अने जे जीव होय ते प्राणधारण करे पण खरो अने न पण करे.

७. प्र०--हे भगवन् ! प्राणधारण करे ते नैरियक कहेवाय ? के नैर्यिक होय ते प्राणधारण करे ?

७. उ० हे गौतम! नैरियक तो नियमे प्राण धारण करे अने प्राण धारण करनार तो नैरियक पण होय अने अनैरियक पण होय. ए प्रमाणे यावत् वैमानिक सुधी दंडक कहेवो.

८. प्र०-हे भगवन्! भवसिद्धिक नैरियक होय १ के नैर-यिक भवसिद्धिक हे।य ?

८. उ०-हे गौतम! भवसिद्धिक नैरियक पण होय अने अ-सिद्धिक पण होय. ए प्रमाणे यावत् वैमानिक सुधी दंडक कहेवो.

२. जीवाधिकाराद् एव इदमाह:-' जीवे णं मंते ! जीवे ! जीवे ! ' इह एकेन जीवशब्देन जीव एव गृह्यते, द्वितीयेन च चैतन्यमित्यतः प्रश्नः. उत्तरं पुनः जीव-चैतन्ययोः परस्परेणाऽविनाभूतत्वाद् जीवश्चैतन्यमेव, चैतन्यमपि जीव एव-इसेवमर्थम् अवगन्तव्यम्, नारकादिषु पदेषु पुनर्जीवत्यम् अव्यभिचारि, जीवेषु तु नारकादित्वं व्यभिचारि-इत्यत आहः-' जीवे णं मंते ! नेरइए ? ' इत्यादि. जीवाधिकारादृ एव आह:-' जीवति भंते ! जीवे, जीवे जीवइ ! ति जीवित प्राणान् धारपित यः स जीवः, उत यो जीवः स जीवति १ इति प्रश्नः. उत्तरं तु-यो जीवति स तावित्यमाजीवः. अजीवस्य आयुष्कर्माऽभावेन जीवत्वा(ना)ऽभावात् , जीवस्तु स्थाजीवति स्यान जीवति, सिद्धस्य जीवनाऽभावादिति. नारकादिस्तु नियमाजीवति—संसारिणः सर्वस्य प्राणधारणधर्मकवात्. जीवतीति पुनः स्यानःरकादिः, स्यादनारकादिरितिः, प्राणधारणस्य सर्वेषां सद्भावादितिः

२. जीवनो अधिकार चालु होवाथी ज आ सूत्र कहे छे: ['जीवे णं भंते जीवे ? जीवे जीवे ? '] अहिं वे वार जीव शब्दनो प्रयोग थयो छे, तेमां एक 'जीव 'शब्दथी जीव ज प्रह्मो अने बीजा 'जीव 'शब्दथी चैतन्यनुं ग्रहण करनुं, एम करवाथी 'जीव ए चैतन्य छे ?' जीव. के 'चैतन्य ए जीव छ ? ए जातनो प्रश्न थाय छे अने उत्तर तो आ प्रमाणे जामवानी छे के, जीव चैतन्यरूप ज छे अने चैतन्य पण जीव ज छे, कारण के, जीव अने चैतन्य परस्पर अविनाभूत-एक विना बीजुं न होइ शके-रही शके एवां-छे. नैरियक बगेरे पदोमां तो जीवत्व अव्य-भिचारि-कायम रहेनारुं-छे पण जीवीमां नैरियकादिपणुं व्यभिचारि-होय पण अने न पण होय एवं-छे माटे कहे छे, [' जीवे णं भंते ! नेरइए १' इत्यादिः] जीवनो अधिकार चालु होवाधी ज आ सूत्र काहे छे, [' जीवह मंते ! जीवे, जीवे जीवह १' ति] जे जीवे-प्राणीने घारण करे-ते जीव ? के ज जीव छ त प्राणोने धारण करे ? ए प्रमाण प्रश्न छे, उत्तर तो आ प्रमाण छ के, ज प्राणोने धारण करे ते नियम जीव कहेवाय, पण अजीव तो जीव न कहेवाय, कारण के, अजीवने आयुष्कर्म नथी होतुं तेथी ज ते प्राणतुं धारण नधी करतो अने जे जीव छ ते तो कदाच प्राणोने धारण करे अने कदाच प्राणीने धारण न करें, काम्य के, सिद्धपदप्राप्त ध्यक्ति पण जीव छे अने तेने जीवन-प्राणनुं धारण-नथी तथा नैर-यिकादिपद्माप्त व्यक्ति पण जीव छे अने ते नियमे प्राणनुं धारण करे छे, कारण के, सर्व संसारिओनो धर्म प्राण धारण करवानो छे. वळी, जे जीवे-प्राण धारण करे-ते नैरियकादि होय पण खरो अने न पण होय एटंड अनैरियकादि पण होय, कारण के सर्व जीवोने प्राण प्राणधारण. धारणनो सद्भाव छे.

अन्ययूथिको.

परूबेंति एवं सलु सब्वे पाणा, भूया, जीवा, सत्ता एगंतदुक्सं प्ररूपे छे के, ए प्रमाणे निश्चित छे के, सर्व प्राणा, भूतो, जीवा वेयणं वेयंति, से कहमेयं मंते ! एवं ?

९. प्र०-अन्न दिथया णं भंते ! एवं आइन खंति, जाय- ९. प्र०-हे भगवन्! अन्यतीर्थिको ए प्रमाणे कहे छे यावत् अने सत्त्रो एकांत दु ख़रूप वेदनाने वेदे छे, हे भगवन् ! ते ए एवी रीते केम होय?

१. मूलच्छाया:-जीवति भगवन् ! जीवः, जीवो जीवति ? गीतम ! जीवति तावद् नियमाद् जीवः, जीवः पुनस्साद् जीवति, स्याद् न जीवति. कीवति भगवम् । नैरियकः, नैरियको जीवति ? गौतम ! नैरियवस्तावद् नियमाद् जीवति, जीवति पुनस्स्याद् नैरियकः, स्याद् अनैरियकः, एवं दण्डको इतिव्यः, यादत्-वैमानिकानाम्, भवसिद्धिको भगवन् ! नैरियकः, नैरियको भवसिद्धिकः ? गोतम । भवसिद्धिकस्याद् नैरियकः, स्वाद् अनैरियकः, नैर्यिकोऽपि च स्याद् भवसिद्धिकः, स्याद् अभवसिद्धिकः, एवं दण्डकः, यावत्-वैमानिकानाम्, २. अन्ययूथिका भगवन् ! एवम् आख्यान्ति, यावत् -प्ररूपयन्ति-एवं ,खञ्ज सर्वे प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वा एकान्तदुःखां वेदनां वेदयन्ति, तत् कथमेतद् भगवन् । एवम् १ :-अनुव

९. उ०-मीयमा ! जं नं ते अन्तर्दाधया, जाव-मिच्छं वेयंति, आहच सायं; अत्थेगतिया पाणा, भूया, जीवा सत्ता एगंतसायं वेयणं वेयंति, आहच अस्सायं वेयणं वेयाति; अत्थे-गइया पाणा, भूया, जीवा, सत्ता वेमायाए वेयणं वेयंति, आहच सायमसायं.

१०. प्र०-से नेणहेण ह

? ०. उ० — गोयमा ! नेरहया एगंतदुनखं वेयणं वेयंति-अ।हच सायं, भवणवइ-वाणमंतर-जोइस-वेमाणिया एगंतसायं वेदणं वेयांि, अःहच असार्यः, पुढविकाइया, जाव-मणुस्सा वेमायाए वेयणं वेयंति, आहच सायमसायं-से तेणद्वेणं.

 उ०—हे गौतम ते अन्यतीर्थिका जे कांइ यावत् कहे छे ते एवं आहिंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्सामि, जाव— ते ए प्रमाणे मिध्या कहे छे, हे गौतम ! वळी, हुं आ प्रमाणे कहुं छुं परूरवेमि-अत्थेगइया पाणा, भूया, जीवा, सत्ता एगंतदुवसं वेयणं यावत् प्ररूपुं छुं के, केटलाक प्राणा, भूतो, जीवो अने सत्त्वो एकांत दुःसरूप वेदनाने वेदे छे अने कदाचित् सुखने वेदे छे, तथा केट-लाक प्राणा, भूता, जीवा अने सत्त्वी एकांत सुखरूप वेदनाने वेदे छे अने कदाचित् दु:खने वेदे छे, वळी, केटलाक प्राणा, भूतो, जीवो अने सत्त्वो विविध प्रकारे वेदनाने वेदे छे एटले छे कदाचित् सुखने अने कदाचित् दुःखने वेदे छे.

१०. प्र०--(हे भगवन् !) ते शा हेत्थी ?

 उ०─हे गौतम! नैरियको एकांत दुःखरूप वेदनाने वेदे छे अने कदाचित् सुखने वेदे छे, भवनपतिओ, बानव्यंतरो, ज्योतिष्को अने वैमानिको एकांत सुखरूप वेदनाने वेदे छे अने कदा-चित् दुःखने वेदे छे. पृथिवीकायथी मांडी यावत् मनुष्यो सुधीना जीवो विविधप्रकारे वेदनाने वेदे छे एटले कदाचित् सुखने अने दु:खने वेदे छे, ते हेतुथी पूर्वे ए प्रमाणे कहां छे.

- ३. जीवा ऽधिकारात् तद्रतामेव अन्यतीर्थिकवक्तव्यतामाहः-' अन्नजित्थया ' इत्यादि. ' आहच सायं ' ति कदाचित् सातां वेदनाम् , कथम् इति चेत् ? उच्यते:-" उववाएण व सायं नेरहओ देवकम्मुणा वा वि. " ' आहच असायं ' ति देवा आहनन-प्रियविप्रयोगादिषु असातां वेदनां वेदयन्तीति. 'वेमायाए 'त्ति विविधया मात्रया कदाचित् साताम्, कदाचिद् असाताम् इत्यर्थः.
- ३ हवे जीवनो अधिकार होवाधी ते जीव परस्वे ज अन्यतीर्थिकोनी वक्तव्यता कहे छे, ['अन्नउश्यिया 'इत्यादि-]['आहच सुखः सायं 'ति] कदाचित् सुखने-शाता वेदनाने, ए प्रभाणे केवी रीते छे ? तो कहे छे के, ''नैरियक जीव उपपातवडे-तीर्थकरना जन्मादि देवनो प्रयोग. ९संगन लीधे-तथा देवना प्रयोगद्वारा कदाचित् सुखने वेदे छे " ['आहच असायं ' ति] देवो परस्परना आहननमां अने प्रिय दुःस. यस्तुना वियोगादिमां असाता-दुःखरूप वेदनाने कदाचिद् वेदे छे, ['वेमायाए ' ति] विविधमात्राए एटले कोइ दिवस सुखने अने कोइ दिवस दुःखने वेदे छे.

नैरयिकादिनो आहार.

१८. प्र० — नेरेइया ! णं मंते ! जे पोरगले अत्तमायाए आ- ११. प्र० - हे भगवन् ! नैरियको आत्मद्वारा प्रहण करी पोग्गले अत्तमायाए आहारेति ?

११. उ०—गोयमा ! आयसरीरखेत्रोगाढे पोरगले अत्तमायाए आहारेंति, नो अर्णतरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति,

हाराति ते कि आयसरीरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहाराति, जे पुद्गलोने आहरे छे ते शुं आत्मशरीर क्षेत्रावगाढ पुद्गलोने अणंतरसंत्रोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेति; परंपरखेत्तोगाढे आत्मद्वाग प्रहण करी आहरे छे ? के अनंतरक्षेत्रावगाढ पुद्गलीने आत्मद्वारा प्रहण करी आहरे छे ? के परंपर क्षेत्रावगाढ पुद्गलाने आत्मद्वारा प्रहण करी आहरे छे?

११. उ० — हे गौतम! शात्मशरीर क्षेत्रावगाढ पुद्गले।ने आत्मद्वारा ग्रहण करी आहरे छे अने अनंतरक्षेत्रावगों पुर्वगलेले नो परंपरखेत्तोगाढे; जहा नेरइया तहा जाव-वेमाणियाणं दंखओ. आत्मद्वारा प्रहण करी आहरता नथी, तेम ज परंपर क्षेत्रावगाढ

- १. मूलच्छायाः गौतम ! यत् ते अन्ययृथिकाः, यावत्-मिथ्या ते एवम् आहुः, अहं पुनगौतम ! एवम् आह्यामि, यावत्-प्रहृपयामि-अस्येककाः प्राणाः, भूताः, जीवाः, सच्वा एकान्तदुःखां वेदनां वेदयन्ति-आहस्य स्ताम्, अस्येक्काः प्राणाः, भूताः, जीवाः, सन्या एकान्तसातां वेदनां वेदयन्ति-आह्ल असातं वेदनां, वेदयन्तिः, अस्त्येककाः प्राणाः, भूताः, जीनाः, सत्त्वा विमात्रया वेदनां वेदयन्ति आह्ल साता-इसात्मू. तत् केनाऽर्थेन ? गौतम ! नैरियका एकान्तदुःखां वेदनां वेदयन्ति, आहत्य सातम् , भवनपति-वानव्यन्तर-जोतिष्क-वैमानिका एकान्तसातां यदनां वेदयन्ति, आह्लाइसातम् ; पृथिवीकायिकाः, यावत् मनुष्या विमात्रया वेदनां वेदयन्ति, आह्ला साता-इसातम्-तत् तेनाऽर्थेनः-अनुक
 - १. प्र० छाया:- उपपातेन वा सातं नैरियको देवकर्मणा वाऽपि:-अनु०
- १. मूलच्छायाः—नैरियका भगवन् ! यान् पुद्रलान् आरमना आदाय आहरन्ति ते किम् आरमशरीगक्षेत्रावगाढान् पुद्रलान् आरमना आदाय आहरित, अनन्तरक्षेत्रावगाढान् पुद्गलान् आरमना आदाय आहरितः परंपराक्षेत्रावगाढान् पुद्गलानासना आदाय आहरित ? गीतम ! आत्मशरीरक्षेत्रावगाढान् पुद्रलान् आत्मना आदाय आहरन्ति, न अनन्तरक्षेत्रावगाढान् पुत्रलान् आत्मना आदाय आहरन्ति, न परंपराक्षेत्रावगाढान्: यथा नैरियकास्तथा यावत्-वैमानिकानां दण्डकः--अनुव

पुद्गलोने आत्मद्वारा प्रहण करी आहरता नथी. जेम ' नैरियको परत्वे कह्युं तेम यावत् वैमानिको सुधी दंडक कहेवो.

- ४. जीवाधिकाराद् एवेदमाह:-'नेरङ्या णं' इत्यादि. 'अत्तमायाए' ति आत्मनाऽऽदाय गृहीत्वा इत्यर्थः. 'आयसरीर-सैंतोगाढे' ति स्वशरीरक्षेत्रेऽवस्थितान् इत्यर्थः, 'अणंतरत्वेत्तोगाढे' ति आत्म-शरीरावगाहक्षेत्राऽपेक्षया यदनन्तरं क्षेत्रं तत्राऽव-गाढान् इत्यर्थः. 'परंपरत्वेत्तोगाढे' ति आत्मक्षेत्राद् यत्परं क्षेत्रं तत्रावगाढान् इत्यर्थः.
- ४. जीवनो अधिकार होनाथी ज आ सूत्र कहे छेः ['नेरइया णं' इत्यादिः]['अत्तमायाए' ति] आत्मद्वारा ग्रहण करीने. ['आयसरीरखेत्तोगाढें ' ति] आत्मद्वारा ग्रहण करीने. ['आयसरीरखेत्तोगाढें ' ति] आत्मद्वारा ग्रहण करीने. आत्मद्वारा श्रेत्रना स्थेत्रना ते परंपरक्षेत्र, तेमां अनंतरअने परंपरक्षेत्र. अवगाढ-रहेलां-पुद्रलोने.

केवली अने इंद्रियो.

१२. प्र०-केवैली णं भंते ! जायाणेहिं जाणति, पासति ?

१२. ड०-गोयमा ! नो तिणहे समहे.

१३. प्र०—से केणहेणं १

१२. उ०—गोयमा! केवली णं पुराश्यिमेणं मियं पि जाणइ, अभियं पि जाणइ, जाव-निन्युडे दंसणे केवालिस्स, से तेणडेणं. गाहा:—

' जीनाण य सुहं दुनसं जीवे जीवति तहेव भविया य, एगंतदुवसं वेयण-अत्तमायाय केवलीः'

—सेवं भते 1, सेवं भते ! ति.

१२. प्र०—हे भगवन्! केवलिओ इंद्रियोद्वारा जाणे? जूए ?

१२. उ•-- हे गौतम! ए अर्थ समर्थ नथी.

१३. प्र०-हे (भगवन्!) ते शा हेतुथी ?

१३. उ०—हे गौतम ! केवली पूर्वमां मितने पण जाणे अने अमितने पण जाणे यावत् केवलिनुं दर्शन निर्वृत छे, ते हेतुथी एम छे.

—गाथा:-जीवानुं सुख अने दुःख, जीव, जीवनुं प्राणधारण, तेम ज भव्यो, एकांत दुःखवेदना, असमद्वारा पुद्गलोनुं प्रहण अने केवली (आदला विषय संबंधे आ दशम उदेशामां विचार कर्यों छे.)

—हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे, हे भगवन्! ते ए प्रमाणे छे. (एम कही विहरे छे.)

भगवंत-अञ्चस्रहम्मसामिपणीए सिरीभगवईस्रते छहसये दसमा उदेसो सम्मत्तो

५. 'अत्तमायाए ' इत्युक्तम् , अत आदानसाधर्म्यात् 'केवली णं ' इत्यादि सूत्रम् , तत्र च ' आयाणेहिं ' ति इन्द्रियैः. दशमोदेशकार्थसंप्रहगाथाः—' जीवाण ' इत्यादि—गतार्था.

प्रतीस भेदं किल नालिकेरं षष्ठं शतं मन्मतिदन्तमिक, तथापि विद्वत्सभसिक्किलायां नियोज्य नीतं स्व-परोपयोगम्,

५. ['अत्तमायाए'] एटले 'आत्मद्वारा आदान-ग्रहण-करी 'एम कह्युं छे माटे आदानना साधर्म्यथी (केवलिना आदानने लगतुं)
['केवली णं 'हत्यादि] सूत्र कह्युं छे अने तेमां ['आयाणेहिं 'ति] आदान-इंद्रियो-वडे, ['जीवाण 'हत्यादि] गावा दशम उद्देशना केवली अने आदान. अर्थनी संग्राहिका छे अने ते गतार्थ छे.

शिलाए योजी जेम नालिएर खवाय होंशे तेम आकरूं आ, विद्वत्समारूप शिलाए योजी छट्टं विवेच्युं शत स्वान्यहेतुः

षष्ठ शतक समाप्त.

वेडारूपः समुद्रेऽखिछजळचरिते क्षारभारे भवेऽस्मिन् दायी यः सङ्गुणानां परकृतिकरणाद्वैतजीवी तपस्ती । अस्माकं वीरवीरोऽनुगतनरवरो नाहको दान्ति-शानयोः—द्यात् श्रीवीरदेवः सकटशिवसुखं मारहा चाप्तमुख्यः ॥

^{9.} मूलच्छायाः-केवली भगवन् ! आदानैः-आयतनैर्जानाति, पर्यति ? गौतम ! न तद्र्यः समर्थः. तत् केनाऽर्थेन ? गौतम ! केवली पौरस्त्येन मितमिप जानाति, अमितमिप जानाति, यावत्-निर्वृतं दर्शनं केवलिनः, तत् तेनाऽर्थेन. गाथाः-' जीवानां ' च सुखं दुःखं जीवो जीवति तथैव भव्याश्च एकानतदुःखं वेदनाऽऽरमना आदाय केवली '. तदेवं भगवन् !, तदेवं भगवन् ! इति.-अतु०